July to September 2020
E-Journal
Volume I, Issue XXXI

RNI No. – MPHIN/2013/60638
ISSN 2320-8767, E-ISSN 2394-3793
Impact Factor - 5.610 (2018)

Naveen Shodh Sansar

(An International Refereed/ Peer Review Research Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Narayan Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795, Vikas Nagar Extension 14/2, **NEEMUCH** (M.P.) 458441, (INDIA)
Mob. 09617239102, **Email** : nssresearchjournal@gmail.com, **Website** www.nssresearchjournal.com

Index/अनुक्रमणिका

01. Index/ अनुक्रमणिका 02

02. Regional Editor Board / Editorial Advisory Board 07/08

03. Referee Board 09

04. Spokesperson 11

05. Environmental Pollution- Its Effects On Life And Public Health - A Case Study Of Bhopal City Area , M.P. (Manisha Singh) 13

06. Risk Factors Associated With Diabetes Mellitus During COVID19 (Varsha Mathur, Dr. Divya Dubey) 16

07. A Study of Madhya Pradesh State Co-operative Marketing Federation (MARKFED) (Ms. Meenakshi Shrivastava, Dr. Basanti Mathew Merlin) 20

08. Bioactive Entrapment and Targeting Using Nanocarrier Technologies (Renuka Thakur, Dr. S.K. Udaipure) 23

09. A Study of Customer's Perception with respect to Life Insurance Services of State Bank of India Life Insurance In Ujjain Division (Jitendra Sharma) 27

10. The Role of Professional Ethics in Teacher Education (Asmita Bhattacharya) 30

11. Synthesis And Photocatalytic Activity of ZnO/$H_3PW_{12}O_{40}$ – Supported Mordenite Composite (Renuka Thakur, Dr. S.K. Udaipure) 34

12. Effect of *Pterocarpus marsupium* (Vijayasaar) on Lipid Profile and Diabetic Quality of Life in Recent onset Type1 Diabetes (Dr. Bharti Taldar, Dr. Rohitashv Choudhary, Dr. Ritvik Agrawal, Dr. R.P. Agrawal) 37

13. वर्तमान परिदृष्य में साहित्य का अवदान (डॉ. वन्दना अग्निहोत्री) 45

14. ग्रामीण महिला सशक्तिकरण एवं सूचना प्रौद्योगिकी (डॉ.पूजा तिवारी) 48

15. कोराना काल (कोविड-19) में मानव स्वास्थ्य पर धूम्रपान (स्मोकिंग) का प्रभाव (डॉ. बसंती जैन) 50

16. छत्तीसगढ़ के पारंपरिक लोक गीतों का सामाजिक संदर्भ (आदिवासी अंचल के तंत्र-मंत्र गीत) (एन.आर. साव, डॉ. (श्रीमती) बसंत नाग) 52

17. महिला सशक्तिकरण चुनौतियां और संभावनाएं (श्रीमती नीतिनिपुणा सक्सेना, श्रीमती ज्योति पांचाल मिस्त्री) 54

18. मीडिया और बाजारवाद (डॉ. सुनीता शुक्ला) 57

19. भारत में बढ़ती जनसंख्या एवं उसका आर्थिक प्रभाव (डॉ. ए. के. पाण्डेय) 58

20. जनजातियों का भौगोलिक विवरण (डॉ. डी.पी. शार्मे) 61

21. शिक्षा एवं शैक्षणिक पर्यावरण का सामाजिक पर्यावरण पर प्रभाव एक अध्ययन (अपराध के विशेष संदर्भ में) (डॉ. ओंकार सिंह मेहता) 63

22. मुगलकालीन आर्थिक परिवेश (डॉ. सुनीता शुक्ला) 66

23. कक्षा आठ के विद्यार्थियों की सृजनात्मकता एवं विभिन्न रूचियों का तुलनात्मक अध्ययन (आगरा जनपद के जगनेर शहर के सन्दर्भ में) (मनीष कुमार, डॉ. प्रमिला दुबे) 68

24. सत्ता हस्तान्तरण में 1857 की भूमिका (डॉ. कुन्दन कुमार) 74

25. मध्यकालीन बीकानेर राज्य में विवाह संस्कार के स्वरूप का विश्लेषणात्मक अध्ययन (शिवरतन सिंह यादव, अजय गोदारा) 76

26. यशपाल की कहानियों में चित्रित रूपाजीवा (दीपक सिंह) 78

27. भारत चीन सम्बन्धों का बदलता परिदृश्य (डॉ. श्रीकांत दुबे) 80

28. कोविड-19 के भावी सकारात्मक सामाजिक प्रभाव (डॉ. विभा वासुदेव) 83

29. भारत में लोकतन्त्र : सबल और दुर्बल पक्ष (डॉ. विनीता भालसे, डॉ.गिरधारीलाल भालसे) 85

30. ठाकुर प्रसाद सिंह के व्यक्ति व्यंजक निबन्ध-अवधारण एवं विश्लेषण (डॉ. हरि नारायण राम) 87

31. भारत में औद्योगिक विवाद: एक अध्ययन (डॉ. संदीप कुमार अग्रवाल) 89
32. उपरोक्त संरक्षण: जागरूकता की एक पहल (डॉ. विवेक कुमार मिश्र) 92
33. योग विज्ञान में रोजगार के अवसर (डॉ. जी. एल. मालवीय, डॉ. खुमेश सिंह ठाकुर) 95
34. लॉक डाउन और बढ़ती हुई घरेलू हिंसा (डॉ. फरहत मंसूरी) 98
35. नई शिक्षा नीति : प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा तथा वर्तमान परिदृश्य में चुनौतियाँ 100
(डॉ. आर.के. अरोरा, डॉ. अंजना पाटनवाला)
36. 'हो' भाषा लोक जीवन में साहित्य का अध्ययन (सेवित देवगम) 103
37. भारतीय समकालीन कला में न्यू मीडिया आर्ट (सूरज सोनी, डॉ. सुरेश शर्मा) 105
38. The Study on Speed and Agility Fitness Varrable Between Resiedential and Non 108
Residential School Players in the Madhya Pradesh (Punit Gupta, Dr. Jogendra Singh Khangharot, Dr. Hemant Pandey)
39. Yield, Growth and Development of Rapeseed Mustard and Other Field Crops With 111
Different Saline Water (Harish Kumar)
40. Ethnobotanical Investigation of some economic gums plants are used by Tribals of 114
Dhar district, Madhya Pradesh, India (Dr. Kamal Singh Alawa)
41. Khajuraho: A Socio Political story carved on Historical stones by Literary words 116
(Dr. Archana Kashyap, Prof. Ojaswee Shirole, Dr. Sehba Jafri, Dr. Veena Kurre)
42. GMO's Applications uses, advantages and dis-advantages (Sharad Kumar Singhariya) 120
43. मकान की समस्या (कुलदीप) 123
44. कला और संस्कृति (डॉ. मन्जू गर्ग) 125
45. वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में भ्रष्टाचार का प्रभाव (डॉ. रामजी वर्मा) 128
16. पद्माकर के काव्य में युग-बोध (डॉ. रंजना मिश्रा) 130
47. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के कार्यों से हो रहे ग्रामीण विकास का : एक विश्लेषण 133
(डॉ. संजय कुमार साकेत)
48. गांधीजी की शिक्षा नीति की प्रासंगिकता : वर्त्तमान परिप्रेक्ष्य में (डॉ. विद्या चौधरी) 135
49. कोविड-19 महामारी के कालखण्ड में, भारतीय न्यायपालिका की भूमिका का सहकारी संघवाद पर प्रभाव 138
(डॉ. विकास कुमार दीक्षित)
50. स्वच्छता का आर्थिक विकास पर प्रभाव : एक अध्ययन (इन्दौर शहर के विशेष संदर्भ में) 141
(डॉ. विवेक कुमार पटेल, डॉ. देवेन्द्र सिंह बागरी)
51. बिदेशिया की रंग परिकल्पना (अमित रंजन) 144
52. बैंकिग व्यवस्था एवं सहकारिता का जन्म (इंदूर परस्पर सहकारी बैंक, इन्दौर के संदर्भ में) 147
(निलेश सैनी, डॉ. एल.के. त्रिपाठी)
53. Economic impact of Foreign Direct Investment (FDI) on Indian Economy 154
(Dr. C.M. Tembhurnekar)
54. Charismatic Wild Animal : *Panthera tigris* (Dr. Farhana Ali, Dr. Imrana Siddiqui) 161
55. ग्रामीण क्षेत्र के किशोर एवं किशोरियों के स्वास्थ्य संबंधी समायोजन का अध्ययन 165
(कुक्षी तहसिल के संदर्भ में) (रेखा जामोद)
56. तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान - क्रियायोग (डॉ. सविता वशिष्ठ) 168
57. पश्चिमी निमाड़ (खरगोन जिला) में पर्यटन की संभाव्यता का केंद्र महेश्वर (डॉ. अशोक कुमार झा) 170
58. Study on Physico- Chemical Analysis of the River Ganga Water from up and down stream 173
at Kanpur (Yajuvendra Singh, Anand Sharma)
59. Synthesis, Characterization and Antimicrobial Properties of Some Bivalent Metal Complexes ... 176
with 2-hydroxy-1-naphthaldehyde derived Schiff Base (Rajiv Kumar Singh, Dr. Anand Sharma)
60. उत्तर प्रदेश में हरित क्रान्ति का पर्यावरण पर प्रभाव (डॉ. विकल कुमार) 180

61. निमाड़ अंचल के जनजातीय समाज का सांस्कृतिक एवं भाषाई अनुशीलन (डॉ. मनजीत अरोरा, प्रमिला सेनानी) 182
62. Perceptions Of Branch Managers Towards Credit Risk Management System In Public Sectors Banks In India (With Special Reference To Indore City) (Dr. Sanjay Sharma, Dr. Rekha Lakhotia) 184
63. चंद्रकांत देवताले की कविताओं में समकालीन यथार्थ (डॉ. मुकेश भार्गव) 187
64. धार जिले में ग्रामीण महिला साक्षरता का वितरण (प्रो.किरण मण्डलोई, डॉ.एम.एल.नाथ) 189
65. Studies on Incidence of Insecticides on Vegetables Grown inJaipur & Dausa Districts of Rajasthan (J. P. Singh, S. Mehra) 191
66. समकालीन साहित्यकारों के साथ मनोहर श्याम जोशी (प्रभात सिंह) 194
67. खरगोन जिलें में 'स्वास्थ्य सुविधाओं का वितरण' एक भौगोलिक अध्ययन (डॉ.आर.आर.आर्य) 196
68. Impact of Patient's Chronic Disease on Spouse (Paridhi Bansal) 200
69. मध्यप्रदेश में जनजातीयों का सामाजिक एवं आर्थिक विकास - एक अध्ययन (प्रो.श्रीमती प्रीति चौरे) 203
70. प्रेमचन्द की सामाजिक विचारधारा (शिप्रा वर्मा) 205
71. भारतीय ग्रामीण एंव नगरीय जातिगत संस्तरण मे परिवर्तन (डॉ. ऋतु श्रीवास्तव) 207
72. ग्रामीण विकास में जनकल्याणी योजनाओं का प्रभाव (डॉ. प्रीतम सिंह ठाकुर) 209
73. वर्तमान परिदृष्य में महिलाओं की स्थिति और दर्जा (डॉ. शिल्पी शर्मा) 212
74. भारत में महिलाओं की स्थिति एवं मानव अधिकार (डॉ. पल्लवी नंदी) 215
75. नारी अबला नहीं सबला है (सौ.मुल्ला जाहिदा असलम) 218
76. पर्यावरण संरक्षण एवं संवैधानिक प्रावधान (भारत की राजनीति के संदर्भ में) (डॉ. अभिजीत सिंह) 220
77. भारत में बसे पारसी समुदाय के धार्मिक सिद्धान्तों का अध्ययन (डॉ. आमोद शर्मा) 222
78. कृषि आधारित उद्योगों की संरचना (राजस्थान के विशेष संदर्भ में) (डॉ. शशि सांचिहर, डॉ. परस राम तेली) .. 224
79. अर्थव्यवस्था में ग्रामीण उद्यमी महिलाओं की सहभागिता (डॉ. ढालेश्वरी राणा) 227
80. Influence of Types of Hospital, Educational Qualification and their Interaction on Personality Factor Q_3 (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses (Dr. Anjali Pandey) 229
81. The Importance Role of Information Literacy for Library Readers in New Normal (Deepak Malviya, Prof. Kishor John) 231
82. खरगोन जिले में शिक्षा एवं जन स्वास्थ्य सुविधाओं की स्थिति का एक भौगोलिक अध्ययन (डॉ. सुरेश अवासे) . 235
83. The Future of school & College Education under National Education Policy 2020 (Mr. Bijay Kumar Yadav, Dr. Gurpreet Singh) 239
84. The Future of Legal Education under National Education Policy 2020 (Mr. Bijay Kumar Yadav, Dr. Gurpreet Singh) 242
85. 21वीं सदी में भारत-इजरायल संबंध: प्रमुख बाधाएँ (स्वाति शर्मा) 244
86. बालश्रम : बाल्यवस्था व बाल अधिकारों का हनन (उसमान आतिफ, अजरा बी) 250
87. Zn (micronutrient) Status of the Soil of Hoshangabad (Madhya Pradesh) (Priyanka Rai, Dr. S.K. Udaipure) 252
88. Need of Right To Education Act In India : A Study (Geetaben Ramjibhai Makwana) 254
89. हिन्दी पत्रकारिता का दायित्व एवं दशा का विश्लेषात्मक अध्ययन (डॉ. हेमन्त सिंह कंवर) 257
90. बिलासपुर जिले के बैग दुकानों का आर्थिक सर्वेक्षण (तहसील करगी रोड कोटा के संदर्भ में) (प्रिंस कुमार मिश्रा) 260
91. संगीत के पर्याय तानसेन (डॉ. शुक्ला ओझा) 264
92. अंग्रेजी दुर्भावना के शिकार भारतीय हस्तशिल्प उद्योग (डॉ. प्रवीण ओझा) 267
93. ग्वालियर में पर्यटन उद्योग के विकास हेतु सुझाव (डॉ. वसुधा अग्रवाल) 269
94. पुरुषो के शारीरिक विकास में मंगल ग्रह की भूमिका (अभिषेक आर्य) 271
95. Chemical Investigation of Catharanthus Roseus ANTI CANCEROUS THERAPIES (Dr. Sushama Singh Majhi) 272
96. प्राचीन भारतीय राज्य सम्बन्ध संचालन की प्रक्रिया में मण्डल सिद्धान्त का निरूपण (डॉ. जे. के. संत) 274

97. मुंशी प्रेमचंद की कहानियों में चित्रित दलित जीवन (डॉ. झेलम झेंडे) 277
98. Studies Conducted on Techniques for Mental and Constructive Skill Implied to Visually Handicapped and Hearing Impaired Child (Pooja Soni, Dr. Divya Dubey) 279
99. पेटेंट धारी के अधिकार एवं सीमाएं : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (डॉ. बी.पी. तिवारी, लोक नारायण मिश्रा) ... 282
100. ग्रामीण विकास प्रक्रिया में सहकारिता की भूमिका (सहकारिता से ग्रामीण जीवन में सामाजिक और आर्थिक विकास का राजस्थान के हनुमानगढ़ जिले के विशेष संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन)(क्रान्ति बंसल, डॉ. सतीष कुमार) 285
101. 1857 की क्रांति का स्वरूप व प्रकृति (सचिन जेतली) 287
102. Antidumping and Competition Law: A Critique (Aprajita Bhargava) 289
103. Analysis of GST as an Indirect Tax and it's Effect (Antim Banthiya) 293
104. डॉ. हेमन्त सिंह कंवर का छत्तीसगढ़ी साहित्य के संवर्द्धन में योगदान : एक अध्ययन (प्रिंस कुमार मिश्रा) 296
105. डॉ. राधाकृष्णन् का शिक्षा दर्शन : एक अध्ययन (शालिनी, डॉ. रामेन्द्र त्रिपाठी) 298
106. मनुस्मृति में जातिवादी धारणा (डॉ. पी.एस. बघेल) 302
107. Unlocking the Noble Corona Virus (Covid- 19) Lockdown: Work From Home and Its Effects on Workers (Dr. Vrushali Sohani) 304
108. Review and Redefine: Quality of Work Life for Higher Education (Abhay Shankar Mishra, Dr. Vijay Jain) 308
109. मध्य प्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त विकास निगम की वित्तीय योजनाओं का मूल्यांकन (डॉ. मलसिंह मोरी) 314
110. Corporate Social Responsibility in India (Dr. Jyoti Upadhyaya) 316
111. Impact of the Covid-19 epidemic on human life and environment - in the international scenario (Mrs. Rajwati Deepankar) 318
112. कानूनी सहायता क्लीनिक योजना (डॉ. एन.के. थापक, रतन सिंह तोमर) 321
113. भारतीय संविधान में मानवाधिकारों का समावेश - एक अध्ययन (मुकेश मिश्रा, डॉ. एम.के. साहू) 322
114. गाँधी चिन्तन में बुनियादी शिक्षा का सिद्धान्त (डॉ. गोपाल सिंह) 324
115. वैश्वीकरण या वि-वैश्वीकरण (डॉ. नेहा चौहान) 326
116. महिला श्रमिकों का आर्थिक अध्ययन (नरसिंहपुर जिले के विशेष संदर्भ में) (प्रीति जैन) 329
117. आधुनिक युग में विज्ञापन की भूमिका का अध्ययन (डॉ. प्रतिमा बनर्जी) 331
118. Child Labour in India (Mom Banerjee, Dr. B.K. Yadav) 334
119. Environment Degradation & Protection (Krishanu Ghosh, Dr. B.K. Yadav) 337
120. The Scope and Future of Cultivation of Groundnut in Rajasthan (Neeraj Kumar Yadav, Dr. Harish Kumar) 340
121. Groundwater Depletion & Solution (Shweta Yadav, Dr. Harish Kumar) 343
122. निमाड़ के सन्तों का वर्तमान समाज पर प्रभाव (डॉ. मधुसूदन चौबे) 346
123. Cinematic Adaptation of Indian English Fiction (Dr. Rajkumari Sudhir) 349
124. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में मुस्लिम पात्रों की चित्रण-कला : सामाजिक और ऐतिहासिक परिदृश्य में (धनीराम अहिरवार) 352
125. मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व के लक्ष्य एवं प्राप्तियों का तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. लक्ष्मीनारायण शर्मा) 355
126. भारत में कृषि विपणन (डॉ. पी. डी. ज्ञानानी) 358
127. Buddhism in the Major Poems of TS Eliot (Arvind Kumar Srivastava) 361
128. महाकाव्य साकेत: एक मौलिक चिंतन दृष्टि (डॉ. विजयजक्ष्मी पोद्दार) 364
129. The Danger for the Environment - Global Warming (Dr. Nilesh Gangwal) 366
130. Application and Challenge of Graph Coloring Approach for CPU Optimization (Anju Dave, Neelema Rai) 368
131. Marketing Practices in Post COVID-19 Era: A Guide For Marketing Managers (Dr. Mohammad Sajid, Jyoti Pachori) 371

132. संगीत संस्थानों का संगीत के विकास में योगदान (ऐतिहासिक मेवाड़ एवं उदयपुर शहर के संदर्भ में) 374
(डॉ. पामिल मोदी, बिन्दू जोशी)
133. कार्यालयीन उपकरणों के बेहतर उपयोग एवं प्रबंधन द्वारा बचतों को प्रोत्साहन (डॉ. आलोक कुमार यादव) 377
134. पत्रकारिता के पर्याय - श्री रामवृक्ष बेनीपुरी (डॉ. डी.पी. चन्द्रवंशी) 380
135. Effect of Yoga on Attention and Concentration in Primary School Students (6 To 10 Years) 382
(Chitra Subramanian, Dr. Samar Jeet Singh)
136. Existentialism in 20th Century Literature (Dr. Anand Kumar Jain) 388
137. गांधी जी की ग्राम स्वराज व उसकी प्रासंगिकता (डॉ. अलीमा शहनाज सिद्दीकी) 390
138. विज्ञान, अध्यात्म और साहित्य में घनिष्ठता (डॉ. तृष्णा शुक्ला) 391
139. भारत में विधवा अथवा एकल नारी के पुनर्वास हेतु प्रयास (डॉ. नीलिमा आर्य) 394
140. तुलसी की विनय-पत्रिका में मन का स्वरूप एवं उसका उन्नयन (डॉ. श्याम पाल मौर्य) 396
141. Impact of Liberalization on Indian Insurance Sector (Dr. Rajesh Shroff) 398
142. कमलेश्वर की उपन्यासों की वर्त्तमान संदर्भ में प्रासंगिकता (डॉ. जयराम त्रिपाठी) 401
143. Conservation of Forest Biodiversity : Need if the Hour (Dr. Jolly Garg, Anant Kumar Garg) 403
144. Create a Better World We Live In: Our Responsibilities 406
(Dr. Mani Bansal, Dr. Anuj Kumar Agarwal)
145. उदयपुर जिले में भूजल पुनर्भरण : गिर्वा खंड का एक भौगोलिक अध्ययन (प्रियंका आमेटा, डॉ. हेमेन्द्र शक्तावत) ... 409
146. On The CR-Structure and F-Structure Satisfying $F^5 - F = 0$ (Lakhan Singh) 411
147. Influence of Peer Group on Body Image of Girls: A Comparative Study on Urban/Rural, ... 413
Government/ Private, Undergraduate/ Postgraduate College Girls of Udaipur City ....
(Rashmi Manoj, Vinita Sharma)
148. Disaster Management of Earthquake in Special Reference to India (Dr. Saba Agwani) 416
149. नशे का बढ़ता हुआ प्रभाव और युवा : एक समाजशास्त्रीय अध्यन (हेमन्त कुमार मिश्रा) 418
150. भारतीय संस्कृति में मोक्ष तत्व की अवधारणा (उर्मिला मीना) 421
151. उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि का लिंग के सन्दर्भ में अध्ययन 425
(रामचन्द्र, डॉ. राजेन्द्र सिंह)
152. Meera's Unflinching Devotion for Lord Krishna (Dr. Deepika Sharma) 428
153. Labor Migration and Social Integration: Study the Experiences of Migrant Workers in India 430
(Dr. Sandhya Jaipal)
154. Education and Social Mobility in India (Dr. Anjali Jaipal) 433
155. आदिम जन जातियों की स्वातंत्र्य चेतना (डॉ. सुमन राठौड़) 436
156. Innovation Leadership: Transforming Influence Through Evolving Leadership Styles 439
(Dr. Shweta Tiwari)

Regional Editor Board - International & National

1. Dr. Manisha Thakur - Fulton College, Arizona State University, America.
2. Mr. Ashok Kumar - Employbility Operations Manager, Action Training Centre Ltd. London, U.K.
3. Ass. Prof. Beciu Silviu - Vice Dean (Management) Agriculture & Rural Development, UASVM, Bucharest, Romania.
4. Mr. Khgendra Prasad Subedi - Senior Psychologist, Public Service Commission, Central Office, Anamnagar, Kathmandu, Nepal.
5. Prof. Dr. G.C. Khimesara - Former Principal, Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) India
6. Prof. Dr. Pramod Kr. Raghav - Research Guide, Jyoti Vidhyapeeth Women University, Jaipur (Raj.) India
7. Prof. Dr. Anoop Vyas - Former Dean, Commerce, Devi Ahilya University, Indore (India) India
8. Prof. Dr. P.P. Pandey - Dean, Commerce, Avadesh Pratapsingh University, Rewa (M.P.) India
9. Prof. Dr. Sanjay Bhayani - HOD, Business Management Deptt., Saurashtra University, Rajkot (Guj.) India
10. Prof. Dr. Pratap Rao Kadam - HOD, Commerce, Govt. Girls PG College, Khandwa (M.P.) India
11. Prof. Dr. B.S. Jhare - Professor, Commerce Deptt., Shri Shivaji College, Akola (Mh.) India
12. Prof. Dr. Sanjay Khare - Prof., Sociology, Govt. Auto. Girls PG Excellence College, Sagar (M.P.) India
13. Prof. Dr. R.P. Upadhayay - Exam Controller, Govt. Kamlaraje Girls Auto. PG College, Gwalior (M.P.) India
14. Prof. Dr. Pradeep Kr. Sharma - Professor, Govt. Hamidia Arts & Commerce College, Bhopal (M.P.) India
15. Prof. Akhilesh Jadhav - Prof., Physics, Govt. J. Yoganandan Chattisgarh College, Raipur (C.G.) India
16. Prof. Dr. Kamal Jain - Prof., Commerce, Govt. PG College, Khargone (M.P.) India
17. Prof. Dr. D.L. Khadse - Prof., Commerce, Dhanvate National College, Nagpur (Maharastra) India
18. Prof. Dr.Vandna Jain - Prof., Hindi, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.) India
19. Prof. Dr. Hardayal Ahirwar - Prof.,Economics, Govt. PG College, Shahdol (M.P.) India
20. Prof. Dr. Sharda Trivedi - Retd. Professor, Home Science, Indore (M.P.) India
21. Prof. Dr. Usha Shrivastav - HOD, Hindi Deptt., Acharya Institute of Graduate Study, Soldevanali, Bengaluru (Karnataka) India
22. Prof. Dr. G. P. Dawre - Professor, Commerce, Govt. College, Badwah (M.P.) India
23. Prof. Dr. H.K. Chouarsiya - Prof., Botany, T.N.V. College, Bhagalpur (Bihar) India
24. Prof. Dr. Vivek Patel - Prof., Commerce, Govt. College, Kotma, Distt., Anooppur (M.P.) India
25. Prof. Dr. Dinesh Kr. Chaudhary - Prof., Commerce, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.) India
26. Prof. Dr. P.K. Mishra - Prof., Zoological, Govt. PG College, Betul (M.P.) India
27. Prof. Dr. Jitendra K. Sharma - Prof., Commerce, Maharishi Dayanand Uni. Centre, Palwal (Haryana) India
28. Prof. Dr. R. K. Gautam - Prof., Govt. Manjkuwar Bai Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.) India
29. Prof. Dr. Gayatri Vajpai - Professor, Hindi, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.) India
30. Prof. Dr. Avinash Shendare - HOD, Pragati Arts & Commerce College, Dombivali, Mumbai (Mh.) India
31. Prof. Dr. J.C. Mehta - Fr. HOD, Research Centre, Commerce, Devi Ahilya Uni., Indore (M.P.) India
32. Prof. Dr. B.S. Makkad - HOD, Research Centre Commerce, Vikram University, Ujjain (M.P.) India
33. Prof. Dr. P.P. Mishra - HOD, Maths, Chattrasal Govt. PG College, Panna (M.P.) India
34. Prof. Dr. Sunil Kumar Sikarwar - Professor, Chemistry, Govt. PG College, Jhabua (M.P.) India
35. Prof. Dr. K.L. Sahu - Professor, History, Govt. PG College, Narsinghpur (M.P.) India
36. Prof. Dr. Malini Johnson - Professor, Botany, Govt. PG College, Mahu (M.P.) India
37. Prof. Dr. Ravi Gaur - Asso. Professor, Mathematics, Gujarat University, Ahmedabad (Gujarat) India
38. Prof. Dr. Vishal Purohit - M.L.B. Govt. Girls PG College, Kila Miadan, Indore (M.P.) India

Editorial Advisory Board, INDIA

1. Prof. Dr. Narendra Shrivastav - Scientist , ISRO, Bengaluru (Karnataka) India
2. Prof. Dr. Aditya Lunawat - Director, Swami Vivekanand Career Guidance deptt. M.P. Higher Education, M.P. Govt., Bhopal (M.P.) India
3. Prof. Dr. Sanjay Jain - O.S.D., Additional Director Office, Bhopal (M.P.) India
4. Prof. Dr S.K. Joshi - Former Principal, Govt. Arts & Science College, Ratlam (M.P.) India
5. Prof. Dr. J.P.N. Pandey - Fr. Principal, Govt. Auto.Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.) India
6. Prof. Dr. Sumitra Waskel - Principal, Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.) India
7. Prof. Dr. P.R. Chandelkar - Principal, Govt. Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.) India
8. Prof. Dr. Mangal Mishra - Principal, Shri Cloth Market, Girls Commerce College, Indore (M.P.) India
9. Prof. Dr. R.K. Bhatt - Former Principal, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.) India
10. Prof. Dr. Ashok Verma - Former HOD, Commerce (Dean) Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
11. Prof. Dr. Rakesh Dhand - HOD, Student Welfare Deptt., Vikram University, Ujjain (M.P.) India
12. Prof. Dr. Anil Shivani - HOD, Commerce /Management, Govt. Hamidiya Arts And Commerce Degree College, Bhopal (M.P.) India
13. Prof. Dr. PadamSingh Patel - HOD, Commerce Deptt., Govt. College, Mahidpur (M.P.) India
14. Prof. Dr. Manju Dubey - HOD (Dean), Home Science Deptt. Jiwaji University, Gwalior (M.P.) India
15. Prof. Dr. A.K. Choudhary - Professor, Psychology, Govt. Meera Girls College, Udiapur (Raj.) India
16. Prof. Dr. T. M. Khan - Principal, Govt. College, Dhamnod, Distt. Dhar (M.P.) India
17. Prof. Dr. Pradeep Singh Rao - Principal, Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.) India
18. Prof. Dr. K.K. Shrivastava - Professor, Eco., Vijaya Raje Govt. Girls P.G. College, Gwalior (M.P.) India
19. Prof. Dr. Kanta Alawa - Professor, Pol. Sci., S.B.N.Govt. P.G. College, Badwani (M.P.) India
20. Prof. Dr. S.C. Jain - Professor, Commerce, Govt. P.G. College, Jhabua (M.P.) India
21. Prof. Dr. Kishan Yadav - Asso. Professor, Research Centre Bundelkhand College, Jhasi (U.P.) India
22. Prof. Dr. B.R. Nalwaya - Chairman,Commerce Deptt.,Vikram University, Ujjain (M.P.) India
23. Prof. Dr. Purshottam Gautam - Dean, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
24. Prof. Dr. Natwarlal Gupta - HOD, Commerce Deptt.,Devi Ahilya University, Indore (M.P.) India
25. Prof. Dr. S.C. Mehta - Former, Professor/HOD, Govt. Bhagat Singh P.G. College, Jaora (M.P.) India
26. Prof. Dr. A. K. Pandey - HOD, Economics Deptt., Govt. Girls College, Satna (M.P.)

****

Referee Board

Maths -	(1)	Prof. Dr. V.K. Gupta, Director Vedic Maths - Research Centre, Ujjain (M.P.)
Physics -	(1)	Prof. Dr. R.C. Dixit, Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. Neeraj Dubey, Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
Computer Science -	(1)	Prof. Dr. Umesh Kumar Singh, HOD, Computer Study Centre, Vikram University, Ujjain (M.P.)
Chemistry -	(1)	Prof. Dr. Manmeet Kaur Makkad, Govt. Kalidas Girls College,Ujjain (M.P.)
Botany -	(1)	Prof. Dr. Suchita Jain, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)
	(2)	Prof. Dr. Akhilesh Aayachi, Govt. Adarsh Science College, Jabalpur (M.P.)
Life Science -	(1)	Prof. Dr. Manjulata Sharma, M.S.J. Govt. College, Bharatpur (Raj.)
-	(2)	Prof. Dr. Amrita Khatri, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
Statitics -	(1)	Prof. Dr. Ramesh Pandya, Govt. Arts - Commerce College, Ratlam (M.P.)
Military Science -	(1)	Prof. Dr. Kailash Tyagi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
Biology -	(1)	Dr. Kanchan Dhingara, Govt. M.H. Home Science College, Jabalpur (M.P.)
Geology -	(1)	Prof. Dr. R.S. Raghuvanshi, Govt. Motilal Science College, Bhopal (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. Suyesh Kumar, Govt. Adarsh College, Gwalior (M.P.)
Medical Science -	(1)	Dr.H.G. Varudhkar, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.)
Microbiology Sci. -	(1)	Anurag D. Zaveri, Biocare Research (I) Pvt. Ltd., Ahmedabad (Gujarat)

***** Commerce *****

Commerece -	(1)	Prof. Dr. P.K. Jain, Govt. Hamidia College, Bhopal (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. Shailendra Bharal, Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
	(3)	Prof. Dr. Laxman Parwal, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
	(4)	Naresh Kumar, Assistant Professor,Sidharth Govt. College, Nadaun (H.P.)

***** Management *****

Management -	(1)	Prof. Dr. Anand Tiwari, Govt. Autonomus PG Girls Excellence College, Sagar (M.P.)
Human Resources -	(1)	Prof. Dr. Harwinder Soni, Pacific Business School, Udaipur (Raj.)
Business Administration -	(1)	Prof. Dr. Kapildev Sharma, Govt. Girls P.G. College, Kota (Raj.)

***** Law *****

Law -	(1)	Prof. Dr. S.N. Sharma, Principal, Govt. Madhav Law College, Ujjain (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. Narendra Kumar Jain, Principal, Shri Jawaharlal Nehru PG Law College, Mandsaur (M.P.)
	(3)	Prof. Lok Narayan Mishra, Govt. Law College, Rewa (M.P.)

***** Arts *****

Economics -	(1)	Prof. Dr. P.C. Ranka, Sri Sitaram Jaju Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. J.P. Mishra, Govt. Maharaja Autonomus College, Chhattarpur (M.P.)
	(3)	Prof. Dr. Anjana Jain, M.L.B. Govt. Girls P.G. College, Kila Maidan, Indore (M.P.)
	(4)	Prof. Rakesh Kumar Gupta, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)
Political Science -	(1)	Prof. Dr. Ravindra Sohoni, Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. Anil Jain, Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
	(3)	Prof. Dr. Sulekha Mishra, Mankuwar Bai Govt. Arts & Commerce College, Jabalpur (M.P.)
Philosophy -	(1)	Prof. Dr. Hemant Namdev, Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
Sociology -	(1)	Prof. Dr. Uma Lavania, Govt. Girls College, Bina (M.P.)
	(2)	Prof. Dr. H.L. Phulvare, Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)
	(3)	Prof. Dr. Indira Burman, Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)

Hindi	-	(1)	Prof. Dr. Vandana Agnihotri, Chairperson, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Kala Joshi , ABV Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Chanda Talera Jain, M.J.B. Govt. Girls P.G. College, Indore (M.P.)
		(4)	Prof. Dr. Amit Shukla, Govt. Thakur Ranmatsingh College, Rewa (M.P.)
		(5)	Prof. Dr. Anchal Shrivastava, Dr. C.V. Raman University, Kota, Bilaspur (C.G.)
English	-	(1)	Prof. Dr. Ajay Bhargava, Govt. College, Badnagar (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Manjari Agnihotri, Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
Sanskrit	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Srivastava, Govt. Autonomus Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Balkrishan Prajapati, Govt. P.G. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
History	-	(1)	Prof. Dr. Naveen Gidiyan, Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)
Geography	-	(1)	Prof. Dr. Rajendra Srivastava, Govt. College, Pipliya Mandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
		(2)	Prof. Kajol Moitra, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.)
Psychology	-	(1)	Prof. Dr. Kamna Verma, Principal, Govt. Rajmata Sindhiya Girls P.G. College, Chhindwara (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Saroj Kothari, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
Drawing	-	(1)	Prof. Dr. Alpana Upadhyay, Govt. Madhav Arts-Commerce-Law College. Ujjain (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Rekha Srivastava, Maharani Laxmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
		(3)	Prof. Dr. Yatindera Mahobe, Govt. Girls College, Narsinghpur (M.P.)
Music/Dance	-	(1)	Prof. Dr. Bhawana Grover (Kathak),Swami Vivekanand Subharti University, Meerut (U.P.)
		(2)	Prof. Dr. Sripad Aronkar, Rajmata Sindhiya Govt. Girls College, Chhindwara (M.P.)

***** Home Science *****

Diet/Nutrition Science	-	(1)	Prof.Dr. Pragati Desai, Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Madhu Goyal, Swami Keshavanand Home Science College, Bikaner (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Sandhya Verma, Govt. Arts & Commerce College, Raipur (Chhattisgarh)
Human Development	-	(1)	Prof. Dr. Meenakshi Mathur, HOD, Jainarayan Vyas University, Jodhpur (Raj.)
		(2)	Prof. Dr. Abha Tiwari, HOD, Research Centre, Rani Durgawati University, Jabalpur (M.P.)
Family Resource Management	-	(1)	Prof. Dr. Manju Sharma, Mata Jijabai Govt. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
		(2)	Prof. Dr. Namrata Arora, Vansthali Vidhyapeeth (Raj.)

***** Education *****

Education	-	(1)	Prof. Dr. Manorama Mathur, Mahindra College of Education, Bangluru (Karnataka)
		(2)	Prof. Dr. N.M.G. Mathur, Principal/Dean, Pacific EducationCollege, Udaipur (Raj.)
		(3)	Prof. Dr. Neena Aneja, Principal, A.S. College Of Education, Khanna (Punjab)
		(4)	Prof. Dr. Satish Gill, Shiv College of Education,Tigaon, Faridabad (Haryana)
		(5)	Prof. Dr. Mahesh Kumar Muchhal, Digambar Jain (P.G.) College, Baraut (U.P.)

***** Architecture *****

Architecture	-	(1)	Prof. Kiran P. Shindey, Principal,School of Architecture,IPS Academy, Indore (M.P.)

***** Physical Education *****

Physical Education	-	(1)	Prof. Dr. Joginder Singh, Physical Education, Pacific University, Udaipur (Raj.)
		(2)	Dr. Ramneek Jain, Associate Professor, Madhav University, Pindwara (Raj.)
		(3)	Dr. Seema Gurjar, Associate Professor, Pacific University, Udaipur (Raj.)

***** Library Science *****

Library Science	-	(1)	Dr. Anil Sirothia, Govt. Maharaja College, Chhattarpur (M.P.)

Spokesperson's

1.	Prof. Dr. Davendra Rathore	-	Govt. P.G. College, Neemuch (M.P.)
2.	Prof. Smt. Vijaya Wadhwa	-	Govt. Girls P.G. College, Neemuch (M.P.)
3.	Dr. Surendra Shaktawat	-	Gyanodaya Institute of Management - Technology, Neemuch (M.P.)
4.	Prof. Dr. Devilal Ahir	-	Govt. College, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
5.	Shri Ashish Dwivedi	-	Govt. College, Manasa, Distt. Neemuch (M.P.)
6.	Prof. Manoj Mahajan	-	Govt. College, Sonkach, Distt. Dewas (M.P.)
7.	Shri Umesh Sharma	-	Shree Sarvodaya Institute Of Professional Studies, Sarwaniya Maharaj, Jawad, Distt. Neemuch (M.P.)
8.	Prof. Dr. S.P. Panwar	-	Govt. P.G. College, Mandsaur (M.P.)
9.	Prof. Dr. Puralal Patidar	-	Govt. Girls College, Mandsaur (M.P.)
10.	Prof. Dr. Kshitij Purohit	-	Jain Arts, Commerce & Science College, Mandsaur (M.P.)
11.	Prof. Dr. N.K. Patidar	-	Govt. College, Pipliyamandi, Distt. Mandsaur (M.P.)
12.	Prof. Dr. Y.K. Mishra	-	Govt. Arts & Commerce College, Ratlam (M.P.)
13.	Prof. Dr. Suresh Kataria	-	Govt. Girls College, Ratlam (M.P.)
14.	Prof. Dr. Abhay Pathak	-	Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.)
15.	Prof. Dr. Malsingh Chouhan	-	Govt. College, Sailana, Distt. Ratlam (M.P.)
16.	Prof. Dr. Gendalal Chouhan	-	Govt. Vikram College, Khachrod, Distt. Ujjain (M.P.)
17.	Prof. Dr. Prabhakar Mishra	-	Govt. College, Mahidpur, Distt. Ujjain (M.P.)
18.	Prof. Dr. Prakash Kumar Jain	-	Govt. Madhav Arts, Commerce & Law College, Ujjain (M.P.)
19.	Prof. Dr. Kamla Chauhan	-	Govt. Kalidas Girls College, Ujjain (M.P.)
20.	Prof. Abha Dixit	-	Govt. Girls P.G. College, Ujjain (M.P.)
21.	Prof. Dr. Pankaj Maheshwari	-	Govt. College, Tarana, Distt. Ujjain (M.P.)
22.	Prof. Dr. D.C. Rathi	-	Swami Vivekanand Career Gudiance Deptt., Higher Education Deptt., M.P. Govt., Indore (M.P.)
23.	Prof. Dr. Anita Gagrade	-	Govt. Holkar Science College, Indore (M.P.)
24.	Prof. Dr. Sanjay Pandit	-	Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
25.	Prof.Dr. Rambabu Gupta	-	Govt. Arts & Commerce College, Indore (M.P.)
26.	Prof. Dr. Anjana Saxena	-	Govt. Maharani Laxmibai Girls P.G. College, Indore (M.P.)
27.	Prof. Dr. Sonali Nargunde	-	Journalism & Mass Comm .Research Centre, D.A.V.V., Indore (M.P.)
28.	Prof. Dr. Bharti Joshi	-	Life Education Department, Devi Ahilya University, Indore (M.P.)
29.	Prof. Dr. M.D. Somani	-	Govt. M.J.B. Girls P.G. College, Moti Tabela, Indore (M.P.)
30.	Prof. Dr. Priti Bhatt	-	Govt. N.S.P. Science College, Indore (M.P.)
31.	Prof. Dr. Sanjay Prasad	-	Govt. College, Sanwer, Distt. Indore (M.P.)
32.	Prof. Dr. Meena Matkar	-	Suganidevi Girls College, Indore (M.P.)
33.	Prof. Dr. Mohan Waskel	-	Govt. College, Thandla Distt. Jhabua (M.P.)
34.	Prof. Dr. Nitin Sahariya	-	Govt. College, Kotma Distt. Anooppur (M.P.)
35.	Prof. Dr. Manju Rajoriya	-	Govt. Girls College, Dewas (M.P.)
36.	Prof. Dr. Shahjad Qureshi	-	Govt. New Arts & Science College, Mundi, Distt. Khandwa (M.P.)
37.	Prof. Dr. Shail Bala Sanghi	-	Maharani Lakshmibai Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
38.	Prof. Dr. Praveen Ojha	-	Shri Bhagwat Sahay Govt. P.G. College, Gwalior (M.P.)
39.	Prof. Dr. Omprakash Sharma	-	Govt. P.G. College, Sheopur (M.P.)
40.	Prof. Dr. S.K. Shrivastava	-	Govt. Vijayaraje Girls P.G. College, Gwalior (M.P.)
41.	Prof. Dr. Anoop Moghe	-	Govt. Kamlaraje Girls P.G. College, Gwalior (M.P.)
42.	Prof. Dr. Hemlata Chouhan	-	Govt. College, Badnagar (M.P.)
43.	Prof. Dr. Maheshchandra Gupta	-	Govt. P.G. College, Khargone (M.P.)
44.	Prof. Dr. Mangla Thakur	-	Govt. P.G. College, Badhwah, Distt. Khargone (M.P.)
45.	Prof. Dr. K.R. Kumhekar	-	Govt College, Sanawad, Distt. Khargone(M.P.)

46. Prof. Dr. R.K. Yadav - Govt. Girls College, Khargone (M.P.)
47. Prof. Dr. Asha Sakhi Gupta - Govt. P.G. College, Badwani (M.P.)
48. Prof. Dr. Hemsingh Mandloi - Govt. P.G. College, Dhar (M.P.)
49. Prof. Dr. Prabha Pandey - Govt. P.G. College, Mehar, Distt. Satna (M.P.)
50. Prof. Dr. Rajesh Kumar - Govt. College, Amarpatan, Distt. Satna (M.P.)
51. Prof. Dr. Ravendra singh Patel - Govt. P.G. College, Satna (M.P.)
52. Prof. Dr. Manoharlal Gupta - Govt. P.G. College, Rajgarh, Biora (M.P.)
53. Prof. Dr. Madhusudan Prakash - Govt. College, Ganjbasauda, Distt. Vidisha (M.P.)
54. Prof. Dr. Yuwraj Shirvatava - Dr. C.V. Raman Univeristy, Bilaspur (C.G.)
55. Prof. Dr. Sunil Vajpai - Govt. Tilak P.G. College, Katni (M.P.)
56. Prof. Dr. B.S. Sisodiya - Govt. P.G. College, Dhar (M.P
57. Prof. Dr. Shashi Prabha Jain - Govt. P.G. College, Agar-Malwa (M.P.)
58. Prof. Dr. Niyaz Ansari - Govt. College, Sinhaval, Distt. Sidhi (M.P.)
59. Prof. Dr. ArjunSingh Baghel - Govt. College, Harda (M.P.)
60. Dr. Suresh Kumar Vimal - Govt. College, Bansadehi, Distt. Betul (M.P.)
61. Prof. Dr. Amar Chand Jain - Govt. Arts & Commerce College, Sagar (M.P.)
62. Prof. Dr. Rashmi Dubey - Govt. Autonomus Girls P.G. Excellence College, Sagar (M.P.)
63. Prof. Dr. A.K. Jain - Govt. P.G. College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
64. Prof. Dr. Sandhya Tikekar - Govt. Girls College, Bina, Distt. Sagar (M.P.)
65. Prof. Dr. Rajiv Sharma - Govt. Narmada P.G. College, Hoshangabad (M.P.)
66. Prof. Dr. Rashmi Srivastava - Govt. Home Science College, Hoshangabad (M.P.)
67. Prof. Dr. Laxmikant Chandela - Govt. Autonomus P.G. College, Chhindwara (M.P.)
68. Prof. Dr. Balram Singotiya - Govt. College, Saunsar, Distt. Chhindwara (M.P.)
69. Prof. Dr. Vimmi Bahel - Govt. College, Kalapipal, Distt. Shajapur (M.P.)
70. Prof. Aprajita Bhargava - R.D.Public School, Betul (M.P)
71. Prof. Dr. Meenu Gajala Khan - Govt. College, Maksi, Distt. Shajapaur (M.P.)
72. Prof. Dr. Pallavi Mishra - Govt. College, Mauganj Distt. Rewa (M.P.)
73. Prof. Dr. N.P. Sharma - Govt. College, Datia (M.P.)
74. Prof. Dr. Jaya Sharma - Govt. Girls College, Sehore (M.P.)
75. Prof. Dr. Sunil Somwanshi - Govt. College, Nepanagar, Distt. Burhanpur (M.P.)
76. Prof. Dr. Ishrat Khan - Govt. College, Raisen (M.P.)
77. Prof. Dr. Kamlesh Singh Negi - Govt. P.G. College, Sehore (M.P.)
78. Prof. Dr. Bhawana Thakur - Govt. College, Rehati, Distt. Sehore (M.P.)
79. Prof. Dr. Keshavmani Sharma - Pandit Balkrishan Sharma New Govt. College, Shajapur (M.P.)
80. Prof. Dr. Renu Rajesh - Govt. Nehru Leading College ,Ashok Nagar (M.P.)
81. Prof. Dr. Avinash Dubey - Govt. P.G. College, Khandwa (M.P.)
82. Prof. Dr. V.K. Dixit - Chhatrasal Govt. P.G. College, Panna (M.P.)
83. Prof. Dr. Ram Awdesh Sharma - M.J.S. Govt. P.G. College, Bhind (M.P.)
84. Prof. Dr. Manoj Kr. Agnihotri - Sarojini Naidu Govt. Girls P.G. College, Bhopal (M.P.)
85. Prof. Dr. Sameer Kr. Shukla - Govt. Chandra Vijay College, Dhindori (M.P.)
86. Prof. Dr. Anoop Parsai - Govt. J. Yoganand Chattisgarh P.G. College, Raipur (Chattisgarh)
87. Prof. Dr. Anil Kumar Jain - Vardhaman Mahavir Open University, Kota (Rajasthan)
88. Prof. Dr. Kavita Bhadiriya - Govt. Girls College, Barwani (M.P.)
89. Prof. Dr. Archana Vishith - Govt. Rajrishi College, Alwar (Rajasthan)
90. Prof. Dr. Kalpana Parikh - S.S.G. Parikh P.G. College, Udaipur (Rajasthan)
91. Prof. Dr. Gajendra Siroha - Pacific University, Udaipur (Rajasthan)
92. Prof. Dr. Krishna Pensia - Harish Anjana College, Chhotisadri, Distt. Pratapgarh (Rajasthan)
93. Prof. Dr. Pradeep Singh - Central University Haryana, Mahendragarh (Haryana)
94. Prof. Dr. Smriti Agarwal - Research Consultant, New Delhi

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

Environmental Pollution- Its Effects On Life And Public Health - A Case Study Of Bhopal City Area , M.P.

Manisha Singh*

Abstract - The Biosphere contains the Earths air, soil, water and living organisms considered as this layer of life and life supports and termed as natural environment. The significant problems in environmental health are toxic chemicals, biological agents and air pollution. World Health Organization (WHO) defined health as a state of complete physical,social, mental and not merely the absence of disease. Some of the notable examples are air pollution causes respiratory disease, heavy metals can cause neuro-toxicity and global climate change to spread infectious diseases.

The state capital known for its greenery, serenity and clean air, not so long ago is slipping not only on the air quality but water pollution as well. This paper discusses the natural environment and public health in general and area under study in and around Bhopal city in particular.

Introduction - The study area in and around Bhopal lies between latitude 23º 10' – 23º 22' N and longitude 77º 15' – 77º 30' E on the survey of India Toposheet Nos. 55- E/7 and 55 E/8 covering an area of about 550km2.Authors like Gorham, E. (1961), Hem, J.D. (1959), Mackenzie, F.T. and Garrels, R.M. (1965), Sillen, L.G. (1967), World J. Envir. Pollut. (2011), U.S. Salinity Laboratory Staff (1954) have pointed out that urbanization adversely affects the environment and human health.

The rapid rate of urbanization has put a tremendous pressure on the available land and water resources of Bhopal city area. Vast stretches of agricultural land surrounding the city are covered into residential, industrial and commercial land. This stride of civilization struggle of higher standards of living and explosion in population not only depleted the water resources but also degraded the quality of water as the waste water from the residential, commercial and industrial sectors is allowed to spread on ground surface without adequate treatment.

Authors like Singh, (2011,2013 and 2014), Singh and Gupta (2011),Singh et al.(2011) have pointed out that urbanization adversely affects the environment and human health. The quality of Surface and Sub-Surface Water gets polluted day by day due to domestic sewage, Industrial effluents, Run-off from agricultural fields etc. The waste water flow through unlined channels is finally let out into the surface water bodies like Upper lake, Kerwa dam etc and on to the topographic slopes from where they become the part of groundwater resources, there by affecting the quality of natural waters of the study area. This polluted water is causes of several water born diseases as observed in various parts of the city area. As the preventive measure the intake of untreated sewage in upper and lower lake should be immediately stopped to save it from further pollution.

Emissions from transport, aerosol use and radiation productions, the burning fossil fuels, forest fires, etc are the significant causes of air pollution. In order to avoid air pollution there is an urgent need to reduce and promote the use of renewable energies and harmful emissions. In Bhopal city area emissions from different transport is the main cause of air pollution, in a number of locations like Hamidia road, Hoshangabad road, Kolar road andLalghati area, air pollution is very high and sometimes it reaches upto dangerous level.

It is interesting to mention here that soil receives large quantities of hazardous wastes from different points gets polluted. Generally soil gets contaminated by use of fertilizers which consist of various elements like As, Pb,Cd etc. Different kinds of chemicals are used to control pests in the agricultural field. These pose a potential danger to the human health because eating of food contaminated with these chemicals may cause serious problems. As for Bhopal city is concerned a major air pollution accident took place on the night of December 2,1984, in Bhopal, in the Union Carbide Factory. In and around Bhopal city area deforestation took place due to urbanization which increased the soil erosion. Thus the soil is unable to support further any kind of vegetation as these activities make it barren.

Human and Environment - Pollution and Acid rain precipitation containing harmful amounts of oxides of nitrogen and oxygen. These acids fall to the Earth either as dry precipitation (gas and particulates) or wet precipitation (rain, snow, or fog).Some are carried by the wind, sometimes hundreds of miles. In the environment, acid rain damages forest, soil and water bodies to acidify, making

*Chemistry Department, Govt. Motilal VigyanMahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

the water unsuitable for fish and other wildlife. It also speeds the decay of statues, buildings, and sculptures, that are part of our national heritage. Haze is caused when sunlight encounters tiny particles in the air. Some haze-causing pollutants are directly emitted to the atmosphere by sources such as industrial facilities power plants, automobiles, trucks, and construction activities. Eutrophication is a condition in a water body where high concentrations of nutrients stimulate blooms of algae, it causes fish kills and loss of plant and animal diversity. Air emissions of nitrogen oxides from power plants, cars, trucks, and other sources contribute to the amount of nitrogen entering aquatic ecosystems. Although eutrophication is a natural process in the aging of lakes and some estuaries, human activities can greatly accelerate eutrophication by increasing the rate at which nutrients enter aquatic ecosystems.

Ozone depletion- Ozone is a gas that occurs both at ground-level and in the Earth's atmosphere, known as the stratosphere. At ground level, ozone is a pollutant that can harm human health. In the stratosphere ozone forms a layer that protects life on earth from the sun's harmful ultraviolet rays. Ozone is gradually being destroyed by man-made activities referred to as ozone-depleting substances, including Air emissions of nitrogen oxides from power plants, cars, trucks, and other sources contribute to the amount of nitrogen entering aquatic ecosystems. Chlorofluorocarbons and hydrochlorofluorocarbons. These substances are still used in coolants, fire extinguishers, foaming agents, solvents,pesticides, and aerosol propellants. Thinning of the protective ozone layer can caused various skin diseases.

Crop and forest damage - UV radiationsreach the Earth, which can lead to more cases of skin cancer, cataracts, and impaired immune systems. UV can also damage sensitive crops, such as soybeans, and reduce crop yields. Air pollution can damage crops and trees in a variety of ways.Ground-level ozone can lead to reductions in agricultural crop and commercial forest yields, reduced growth and survivability of tree seedlings, and increased plant susceptibility to disease, pests and other environmental stresses (such as harsh weather). As described above, crop and forest damage can also result from acid rain and from increased UV radiation caused by ozone depletion.

Global climate change - The Earth's atmosphere contains a delicate balance of naturally occurring gases that trap some of the sun's heat near the Earth's surface. This "greenhouse effect" keeps the Earth's temperature stable. Unfortunately, evidence is mounting that humans have disturbed this natural balance by producing large amounts of some of these greenhouse gases, including carbon dioxide and methane. As a result, the Earth's atmosphere appears to be trapping more of the sun's heat, causing the Earth's average temperature to rise - a phenomenon known as global warming. Manyscientists believe that global warming could have significant impacts on human health.

Conclusion - The pollutants are foreign substances created by the human beings and pollute the natural resources like air, water and soil etc. of Bhopal city area. The chemical nature, concentration and long persistence of the pollutants continually disturbs the ecosystem from so many years. These pollutants are poisonous gases, pesticides, fungicides, herbicides, noise, radioactive materials and organic compounds. Any type of pollution in our natural surroundings and ecosystem causeshealth disorders, insecurity and discomfort in normal living. It disorganizes the natural systems and thus disturbs the natural balance on the Earth. In the recent years the rate of pollution is increasing very sharply because of the industrialization, waste material mixing out directly into the air water and soil.This issues needs to be taken seriously otherwise our future generations would suffer a lots of problems.

Rate of pollution is increasing due to the selfishness of the human being to fulfill some unnecessary wishes and earn more money. In the modern era where technological advancement is given more comfort to the people, everyone has forgotten the real discipline of life.

Unnecessary and Continuous cutting down of the forests, urbanization and large production through industrialization has involved huge pollution. Harmful and poisonous waste causes irreversible changes to the environment which ultimately push lives towards pain. This social issue needs a social awareness program to destroy by its root to get complete relief. A holistic approach to urban development is necessary with a significant proactive role of the municipal corporation. This requires enactment of laws and formation of enforcement agencies with necessary incentive/disincentive structures to protect the human health. While the incentives are expected to encourage systematic growth of the urban areas, the disincentives (penalties) will restrict illegal expansions and wastages of resources.

References :-

1. Gorham, E. (1961) Factors influencing supply of major ions to inland waters with special references to the atmosphere, Bull, Geol. Soc. Amer., V. 72, pp. 795-840.
2. Mackenzie, F.T. and Garrels, R.M. (1965) Silicates reactivity with sea water, Science, V. 150, pp. 57-58.
3. Singh, Manisha, Gupta ,D.K. ,Raghuwanshi,R.S., Saxena ,R.N. (2011): "Behavior and Concentration of Heavy Metals in the Natural Water, Bhopal City Area, District Bhopal (M.P.)" in Journal of Advances in Science and Technology; VOL-II, ISSUE-I, ISSN-2230-9659, CERT-0202/pp1-13.
4. Singh, Manisha and Gupta, D.K. (2011): "Quality of Natural Water of the Area in and Around Bhopal City District Bhopal, M.P. with Special Reference to its Drinking Suitability" in Journal of Advances and Scholarly Researchers in Allied Education; VOL-II, ISSUE-II, ISSN-2230-7540, CERT-0209/pp1-9.
5. Singh, Manisha(2013): "Investigation of Heavy Metal

Contaminations in Ground Water Around Landfill Site in Bhopal City, M.P.” in Journal of Advances in Science and Technology; VOL-VI, ISSUE-XI, ISSN-2230-9659, CERT-2347/pp 1-5.

6. Singh, Manisha(2014): “Investigation of Physiochemical Contamination of Ground Water in and Around Bhopal City with Special Reference to Assess the Impact of Landfill Site on Water Quality” in Journal of Advances in Science and Technology; VOL-VI' ISSUE-XII, ISSN-2230-9659, CERT-2348/pp 1-8.
7. Mackenzie, F.T. and Garrels, R.M. (1965) Silicates reactivity with sea water, Science, V. 150, pp. 57-58.
8. Sillen, L.G. (1967) The Ocean as a chemical system, science, Vol. 156, pp. 1189997. Wilcox, L.V. (1948) The quality of water for irrigation use., V.S.D.A. Tech. Bull. 962, Washington, D.C., p. 40.World J. Envir. Pollut., 1 (2): 08-10, 2011
9. U.S. Salinity Laboratory Staff (1954) Diagnosis and improvement of saline and alkaline soils, U.S.D.A. Handbook No. 60, 160 p.

****

Risk Factors Associated With Diabetes Mellitus During COVID19

Varsha Mathur* Dr. Divya Dubey**

Abstract - Diabetes occurs when blood sugar increases because the body cannot use the glucose properly.This happens when there is a problem with insulin level in the blood.It is a chronic disease leads to complications like renal failure,heart disease,stroke and blindness.Type 1 Diabetes is insulin dependent ,the insulin production is deficient in the body.Type 2 Diabetes occurs due to ineffective use of insulin and it is the main cause of increasing cases of Diabetes globally.

Diabetes prevalence is increasing rapidly.As per the data of 2017 there were 425 million diabetics which rose to 463 million diabetes patients in 2019.Urbanization and lifestyle changes are the major reasons behind it.According to International Diabetes Foundation nearly 1 million Indians die due to Diabetes every year.Indian will have 109 million Diabetics by 2035 as per the Indian Heart association.India currently have 72 million cases which is 49% of world Diabetes burden. It is observed that the overall prevalence is comparable in male and female.

Today due to pandemic situation COVID 19,several researches on Diabetes clarified that Diabetics have high risk of complications or death due to COVID 19.It was discovered that the link between COVID 19 and Diabetes is bi-directional. Diabetics are at more risk due to Corona Virus as stress response and some treatments in COVID 19 increase blood sugar level.The virus also trigger Diabetes.

Diet and exercise play a vital role in management of diabetes. Food directly affects the blood glucose level. Some foods raise blood sugar level more than others. So, it is important to manage diabetes and knowing what and how much one should eat, and following an eating plan and simple changes in the lifestyle may help to control the blood glucose.Physical exercise especially yoga should be given utmost important in management of diabetes.As it not only maintained the blood glucose level but also help in weight management and further reduce the risk of cardiovascular ailments.

Diabetes is the major threat to India and it should be managed with utmost priority.Preference should be given to prevention.Major steps should be taken for it as treating Diabetes is a costlier affair for developing countries like India.So India needs a more effective National Diabetes prevention programme.Beside prevention,it should be ensured that there is availability of treatment options as well for the Diabetics population.This should only be possible with co-ordinated efforts of everyone including Government ,health care providers,people with Diabetes, food manufacturers and suppliers etc.

Key Worrds – Diabetes Mellitus,Insulin,Cardiovascular disease,ICMR, IGT (Impaired Glucose Tolerance),COVID 19,SARS, Intervention.

Introduction - Diabetes Mellitus is commonly referred to as Diabetes is a group of metabolic disorders in which there are high blood sugar levels over a prolonged period.

It is a condition in which the pancreas no longer produces enough insulin or cells stop responding to the insulin that is produced,so that glucose in the blood cannot be absorbed into the cells of the body.

It is the chronic disease that causes serious health complications including renal failure ,heart disease ,stroke and blindness.

Type 1 Diabetes- It is insulin dependent or Juvenile Diabetes.It is characterized by deficient Insulin production in the body .Type 1 diabetic patients required administration of insulin daily to regulate the level of glucose.If insulin is not provided regularly,they cannot survive.It is currently not preventable as the cause is not known.The patients show the symptom like excessive urination and thirst ,constant hunger,weight loss,vision change and fatigue.

Type 2 Diabetes – It is non insulin dependent or adult onset diabetes.It occurs due to ineffective use of insulin in body.It is the main cause of majority of people with diabetes globally.The symptoms may be similar but are often less marked or absent .Because of which ,it may undiagnosed for several years,until complications have already

*Research Scholar, Career Point University, Kota (Raj.) INDIA
** Research Supervisor, Career Point University, Kota (Raj.) INDIA

arisen.Overweight and obesity are the strongest risks factors for Type 2 diabetes.It are estimated to cause a large proportion of global diabetic burden.(Global Report ,WHO,2016)

Global Prevalence Of Diabetes - According to the International Diabetes Federation (2019 data) about 463 million adults are living with Diabetes globally.As per 2017 data ,it was 425 million people .It is clearly visualized that diabetes prevalence is increasing rapidly.The number is projected to almost double by 2030.

According to the global report of WHO on diabetes there were 1.5 million death worldwide due to diabetes in 2012.Higher than optimal blood glucose was responsible for an additional 2.2 million deaths as a result of increased risk of cardiovascular and other diseases ,for of total of 3.7 millions death,Many of the death (43%) occurs under the age of 70.

The number of people with diabetes rose from 108 million in 1980 to 422 million in 2014.The global prevalence of Diabetes among adults over 18 years age rose from 4.7 % in 1980 to 8.5 % in 2014 i.e; about 422 million people between 2000 to 2016.There was a 5% increase in premature mortality from Diabetes.

The prevalence of Diabetes has been steadily increasing for the past three decades and is growing most rapidly in Low and Middle Income countries including Asia and Africa ,where most patients will probably be found by 2030.Urbanization and lifestyle changes are the major cause of increase in incidence in developing countries.It includes sedentary lifestyles,less physically demanding work,increased intake of foods that are high energy dense and low nutrient contents..

Diabetes In India - According to International Diabetes Foundation India had more Diabetics than any other country in the world. Diabetes currently affects more than 62 millions Indians,which is more than 7.2% of the adult population. The average age on onset is 42.5 years.Nearly 1 million Indians die due to Diabetes every year.

According to the Indian Heart Association ,India is projected to be home to 109 million individuals with Diabetes by 2035.A study by the American Diabetes Association reports that India will see the greatest increase in people diagnosed with Diabetes by 2030,The higher incidence is due to a combination of genetics susceptibility plus adoption of a high-calorie,low activity lifestyle by India’s growing Middle class.(Kleinfield ,2006)

As per the Report of Indian Council of Medical Research ,Institute for health Metrics and Evaluation and Public Health Foundation of India (November,2017) Diabetes prevalence has increased by 64% across India over the quarter century.India currently represents 49% of World’s Diabetes burden with an estimated 72 million cases. Currently ,one in every four people under 25 has adult onset Diabetes(type 2),a condition more usually seen in 40-50 years old according to the Indian Council of Medical Research’s ‘Youth Diabetes Registry’.India actually has the highest number of Diabetes of any one country in the entire world.IGT (Impaired Glucose Tolerance) is also a mounting problem in India.The prevalence of IGT is around 8.7% in urban areas and 7.9% in rural areas.In India ,the type of Diabetes differs considerably from that in the Western Countries.Type 1 is considerably more rare and only about one third of Type 2 Diabetics are overweight or obese.The findings come from the National Diabetes and Diabetic Retinopathy Survey,conducted by The All India Institute of Medical Science stated that the overall prevalence of Diabetes in the country is 11.8% with men and women almost equally affected .Twelve percent of men are Diabetic compared to 11.7 % of women.

Diabetes and COVID 19 - This a challenging time as world is facing a pandemic situation .In just a short span ,an unknown virus has changed the way we live.It is a public health emergency of International concern. COVID 19 pandemic has affected the psychological health of normal people as well as the people with diabetes.

People with diabetes are believed to have high risk of developing complications and death rate due to infection from the corona virus.

A study done by Shelar J (2020) revealed that as many as 85% of those who died in the state due to COVID 19 had diabetes or hypertension or both,making their recovery difficult.In patients with diabetes the immune systems are weak(The humoral mediated immunity which help in the formation of antibodies and cellular mediated immunity). According to International Diabetes Federation when people with diabetes develop a viral infection ,it can be harder to treat due to fluctuations in blood sugar level and possibly the presence of Diabetes complications.There may be two reasons,firstly compromised ,making it harder to fight the virus and likely leading to a longer recovery period. Secondly,the virus may thrive in an environment of elevated blood glucose.

As per the report presented by Gordon S (June 2020),early in the Coronavirus pandemic,it was learned that people with diabetes face a greater risk of developing serious complications from COVID 19 infections.Seventeen leading diabetes experts collected data through a new global registry ‘CoviDiab Registry’ to get a better idea about how COVID 19 and Diabetes exactly interact.It was found that the link between COVID 19 and Diabetes is bi-directional i.e; Diabetes is associated with severe COVID 19 manifestations and conversely, COVID 19 is associated with severe manifestation of pre-existing Diabetes.The leading expert Dr. Francesco Rubino divulged that there are known stress response that can make pre existing diabetes worse.Some of the treatments used for COVID 19 are known to increase blood sugar level.Past research also showed that the Corona Virus responsible for SARS (Severe acute respiratory syndrome)seemed to trigger an acute type of Diabetes .The virus also directly damaged the pancreas.

Keenan G (June 2020) in the article Published in World

Economic Forum stated that Diabetes doesn't just make people more vulnerable to the corona virus but that the virus might also trigger diabetes in some patients.Findings from early tissues studies and some COVID 19 patients revealed that new Corona Virus damages insulin producing cells which are important for regulating blood sugar levels .New findings from experiments on miniature lab-grown pancreas also suggested the virus might trigger diabetes by damaging insulin producing cells.

Managing Diabetes - It is clearly visualized that Diabetes should be considered as a major threat for the country and strong steps should be taken towards managing it severity. Preventing Diabetes in the developing nations is valued highly because of the high cost of treating it. In India ,it is estimated that a diabetic person spends approx..Rs.10,000 for medical treatment. Pragmatic cost effective strategies for primary prevention of Diabetes is necessary (Wikipedia,2020)

The findings of research done by CADI (Coronary Artery Disease in Asian Indians) disclosed that India is facing an epidemic of Diabetes with high prevalence in urban areas. Over the past 30 years the prevalence of Diabetes has increased to 12-18% in urban area and 3-6 % in rural area.The prevalence of both Diabetes and prediabetes increase by age with 60% Indians having Diabetes or prediabetes by age 60.

Kannan R (2019) in her research published in The Hindu (Nov.2019) revealed that one in six people with Diabetes in the World is from India.The numbers place the country among the top 10 countries for people with Diabetes ,coming in at number 2 with an estimated 77 million diabetics.

The International Diabetes Foundation Diabetes Atlas makes it clear that India needs to Pause and re-evaluate its strategy to combat Diabetes.It is just over 134 million Indians will be diabetic in the next 25 years.The IDF has stressed the urgency to develop and implement multi-sectorial strategies to combat Diabetes. It is estimated that 10 % of global health expenditure is being spent on Diabetes .So the focus must be on prevention .India needs a more effective national diabetes prevention programme which will require co-operation from several quarters including medical education.health awareness in schools and urban planning. Prevention is the key to the problem.In addition to people with diabetes, India also has a huge burden of pre-diabetes.If the information on the right lifestyle options to keep blood sugar,lipids and blood pressure under control will be targeted then atleast one third of people can be prevented from developing Diabetes.

Beside prevention the treatment options should also be made available .It includes basic care for all who are living with Diabetes and treatment of various complications.

Role Of Diet And Exercise In Diabetes Management - Diet,exercise,medicine and monitoring are the four pillars of effective management of diabetes.In COVID 19 situation it should be ensured that each one of these parameters are looked after properly.

Healthy nutrition is an essential component of diabetes management. Diabetic patients should eat a varied and balanced diet to maintain their blood glucose level and to enhance immune system. Preference should be given to the food with a low glycaemic index like vegetables. Diabetes and diet are closely related because what one eat has a direct impact on the system.Unhealthy meal planning and lack of exercise causes type 2 diabetes.Diet should includes healthy carbs,fibre rich food,lean protein and good fats like fish and nuts.

Physical activity not only helps preventing the risk but also help in better management.It also helps in preventing risks of further complications which can damage health in an irreversible way.

Patients with type-2 diabetes should have a prescribed exercise routine to control their blood sugar levels. The sedentary lifestyles and unhealthy diets are two factors responsible for the increase in the number of type-2 diabetes.Working out can help keep blood sugar levels in control and protecting the person from cardiovascular ailments in future. Exercise not only helps in reducing blood sugar level but also insulin resistance. One of the aspects of exercise is yoga that promised holistic healing from this lifestyle disease. Apart from managing blood sugar levels and keeping one fit, yoga also helps dealing with stress—a major contributor to the onset and progression of the diabetes. Yoga helps reducing the secretion of glucagon, a hormone released during stress that increases blood sugar levels. It also increases the effectiveness of insulin in body. Yoga can also be beneficial in long term to manage weight and reduce fat accumulation—two major risk factors for diabetes. Yoga also works on breathing pattern of the person, which is beneficial in increasing oxygenated-blood flow in body. Exercising and yoga can help keep you active which reduces the sugar levels and complications.

As stated in Global Report of WHO on Diabetes(2016) there are no simple solutions for managing Diabetes but coordinated, multicomponent intervention can make a significant difference. Everyone can play a role in reducing the impact of all forms of Diabetes .It includes Governments, health care providers,people with Diabetes, civil society,food producers and manufacturers and suppliers of medicines and technology.They all can make a remarkable contribution in controlling Diabetes and improving live of the people suffering with Diabetes.

References :-

1. CADI Report(2012)."Diabetes Epidemic in Indians". Diabetes in India,CADI Research foundation.
2. "Epidemiology of diabetes" Wikipedia.en.wikipedia.org
3. Gordon S (2020) "does COVID 19 trigger New cases of Diabetes".Health Day News.June 22,2020.
4. Internal Diabetes Federation,IDF Diabetes Atlas,8th Edition ,Brussels , Belgium 2019
5. Kannan R (2019)."India is home to 77 million diabetics, second highest in the world .The Hindu,November

14,2019.
6. Keenan G (2020)"The World Economic Forum COVID Action Platform".June29,2020
7. Kleinfield,N R (September 13,2006)."Modern ways open India's
8. Doors to Diabetes". New York Times retrived 8 June 2012.
9. "Overview" Indian Heart Association Retrived 2020-01-14
10. Shelar J (2020) "Diabetes,hypertension top comorbidities among COVID 19 fatalities.The Hindu April 7,2020
11. World Health Organisation,Global Report on Diabetes,Geneva 2016
12. https://www.sciencedirect.com/science/article/pii/s1871402120301181#bib4
13. https://medical-dictionary the freedictionary.com/diabetes+mellitus
14. https://www.icmr.nic.in/final/diabetes/executive summary ydr 25082014.pdf
15. https://www.healthissueindia.com/2019/10/12/diabetes-in-indian-epidemic
16. https://www.diabetes.co.uk/global-diabetes/diabetes_in_India
17. https://betterhealthkare.com/importance-of-diabetes-and-diet/
18. https://www.idf.org/aboutdiabetes/what-is-diabetes/covid-19-and-diabetes/1-covid-19-and-diabetes.html
19. https://www.weforum.org/agenda/2020/06/COVID 19-top-science-stories-diabetes-beijing/

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

A Study of Madhya Pradesh State Co-operative Marketing Federation (MARKFED)

Ms. Meenakshi Shrivastava* Dr. Basanti Mathew Merlin**

Abstract - The Madhya Pradesh State Co-operative Marketing Federation, popularly known as MP Markfed is well known name in the field of agriculture market which is establish for the support and development of farmers in their agriculture field which eventually helps in the development of agriculture sector by providing various different types of facilities and help. It is an Apex body of Marketing Co-operative Societies established in 1956.It is a registered body under the Madhya Pradesh State Cooperative Societies Act, 1960.Being a Co-operative federation it has a commitment towards the social responsibility, hence it weighs more on services than profit.MP Markfed cherishes in exchange is an everlasting smile on the face of Farmer who form the moving spirit behind the mission. This research paper is based on the objective behind the establishment of Markfed as well its structure , its importance towards society as well as for farmers and what are the limitations faced by the Marked during the performance of its duties. MP Markfed began its operation on 19th September 1956 with a share capital of 4.65 lac.Today in the year 2018-19 the share capital has grown to 21.12 crore with an annual turnover is 16767.77 crores with 1458 member societies and 1200 employees.

Key words - Agriculture, Marketing & Farmers.

Introduction - The Madhya Pradesh State Co-operative Marketing Federation, popularly known as MP Markfed is an APEX body of Marketing Co-operative Societies established in 1956.It is a registered body under the Madhya Pradesh State Cooperative Societies Act, 1960.Being a Co-operative federation it has a commitment towards the social responsibility, hence it weighs more on services than profit.MP Markfed cherishes in exchange is an everlasting smile on the face of Farmer who form the moving spirit behind the mission.

Markfed is one of the largest channelizing agency of Agriculture related products in Madhya Pradesh. MP Markfed was setup with the object to promote Co-operative marketing of agriculture produce to benefits the farmers. Institution is involved in the purchase, sale and distribution of agriculture related commodities like fertilizer, seed, pesticide, agriculture machineries and procurement of food grains under minimum price support schemes from primary agriculture credit co-operative societies, marketing co-operative societies and farmers in the remote areas. Markfed has a vast marketing network comprising of 7 zonal offices, 41 district offices and 426 distribution centers at 244 different locations and supported by 280 Marketing Societies and 4526 Primary Agricultural Credit Co-operative Societies. Today, Markfed has attained a leadership position in the agri-product business in the state. It has emerged as a very stable organization, committed to the services of farmer community of the state of Madhya Pradesh.

MP Markfed began its operation on 19th September 1956 with a share capital of 4.65 lac.Today in the year 2018-19 the share capital has grown to 21.12 crore with an annual turnover is 16767.77 crores with 1458 member societies and 1200 employees.

S.	Types of Unit	Number
1.	Head office	1
2.	Zonal Office	7
3.	District office	41
4.	Storage Center	244
5.	Petrol Pump	2

Definitions - Cooperative marketing established for the cooperation of farmers of rural areas based on the principles of cooperation. It is arrangement through which farmers can sell their agriculture produce in the market at a reasonable price and able to earn maximum return on their produce.

According to R.K kulkarni , "Co-operative marketing is the marketing for the producers and by the producers that aims at eliminating the chain of middlemen operating between producers and the ultimate consumer and thus securing the maximum price for their produce."[1]

According to Dr. A. P. Gupta, "Co-operative marketing is the formation of an association by producers for self-help in marketing their produce collectively and securing economies emerging from large scale business."2

*Research Scholar, Rabindranath Tagore University, Bhopal (M.P.) INDIA
** HOD, Faculty Of Commerce, Rabindranath Tagore University, Bhopal (M.P.) INDIA

It is an association of different producers for the collective marketing of their agriculture produce and able to get maximum advantages of large scale marketable surplus which an individual cultivator cannot secure because of small marketable surplus. The members are the proprietors, administrators and supporters of the commodities and are the immediate recipients of the investment funds that accumulate to the general public. No intermediary stands to profit or loss at the costs of the other members.

Objectives of the Study

1. To study the objective of Markfed.
2. To study the importance of Markfed.
3. To study the structure of Markfed.
4. To study the limitations of Markfed.

Research Methodology - Research is based of the literature of Markfed available in the Annual Report , in different journals and online sources available. This study is based on conceptual study of Markfed and totally based on secondary published data of Markfed.

Expected outcome of the study - The expected outcome of the study will provide the indebt study about the functioning of the Markfed. It will provide the information about the objective, importance as well as the role of Markfed in the development of agriculture as well as help provided by them to the farmers in shaping their future. This study also help the Markfed to know their strength and weakness and work according to make them more strong and can able to work more efficiently for the betterment of the farmers which eventually make the agriculture sector more strong.

Limitations of the study - Study is based on theoretical concept of Markfed and on available secondary resources published online and annual reports of Markfed .

Objectives of Markfed - The main objective of Markfed is the development and growth of farmers so that the agriculture production can be increases by providing various facilities to them at reasonable cost that farmers can afford. It is voluntary association of farmers join together for the collective marketing of their produce so that they can get maximum return on their produce . Its some main objectives behind the establishment are :-

1. It is voluntary association of members.
2. It is based on democratic principles .
3. Its main objective is to provide the services not to earn the profit.
4. It works as a bridge between the product and the consumers by charging the nominal value of commission for their services.
5. Its objective to expand the harvest creation and efficiency by convenient channelizing excellent horticulture inputs like fertiliser, agriculture equipments , seed and pesticide to the farmers at rational price .
6. Providing scientific storage facility for agriculture produce.
7. Helps the farmer to get reasonable return on their produce in the market.
8. To work as booster for the farmers .
9. Increase in the horticulture produce.
10. To systematize fundamental beliefs and make a culture of group building, strengthening and development.

These are some main objectives of the Markfed . Its mission is to promote a sustainable development of agriculture community , so that they can make their future more bright.

Advantages /Importance of Markfed - Marketing of agriculture produce through co-operative marketing plays an important role as they purchases at reasonable price from farmers and sell it in market at appropriate price so that farmers get maximum return on their produce. This provides dual profit ,firstly no exploitation of farmers and secondly consumers also get the commodities at best price. Markfed do not earn the profit it involves in providing facilities to farmers and consumers. Some importance of Markfed are:-

1. Removal of Middleman:- The most important role of Markfed is that it eliminates the role of middleman who exploit the farmers and pressurize them to sell their produce according to them, also heavy amount of commission from them. Establishment of Markfed act as role of middleman who works for the farmers profit.

2. Relative less exploitation:- When a farmer enter in market to sell their produce he has to bear many different type of deductions like weight, dust ,carriage etc, these are the losses which a farmer has to bear but Markfed do not exploit the farmers for the same rather it provides the facility of proper weights & storage facility.

3. Grading and Standardization:- Markfed purchases from the farmers and make the grading there so that farmers get the right cost for their product.

4. Low marketing cost:- Markfed charges very low rate of commission for their services it is about 3% only from the farmers . They don't charges any amount like toll and transportation etc.

5. Financial assistance:- Markfed also provide the financial assistance to the farmers on very nominal rate of interest.

6. Warehousing Facility:- Markfed provides the storage facility to the farmers for their produce , till farmers not get appropriate return on their produce also they can morgage itand take loan from Markfed .

7. Benefits to Consumers and society:- Markfed provides benefits to consumer as well as the society by providing good quality of produce at reasonable price.

Structure of Markfed - Structure of Markfed was not same for every state. It differs according to the state . In Indian, mostly two tier system is fallowed .

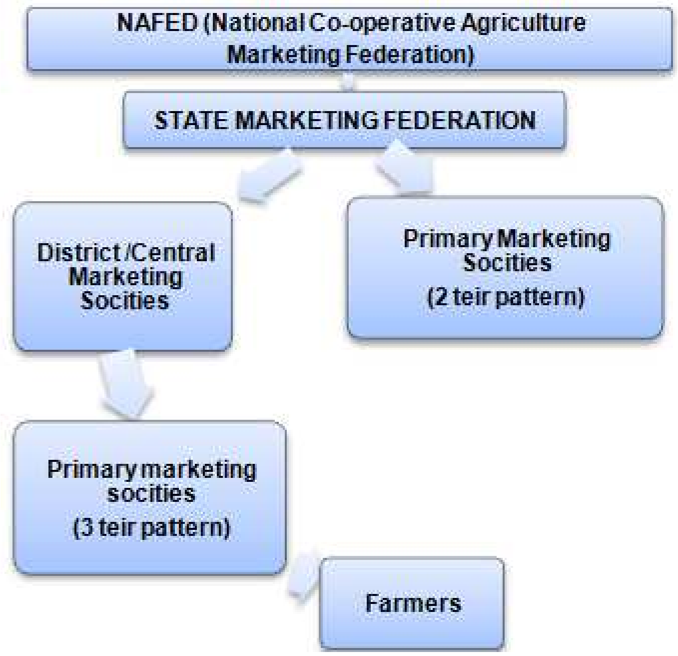

NAFED (National co-operative agriculture Marketing Federation):-In Indian NAFED is established in 1958 and under this all state marketing federation are the member .Some main activities perform by them are:-

1. Controls over all other marketing federation , gives the instructions, provide financial assistance and suggestions on different situations.
2. Provide information regarding international & national market.
3. To get maximum return to farmers on their produce selling of their produce at national & international market.

State Marketing Federation:- It is establish to regulate the working of state marketing federation. To provide the rules & regulation, co-operation and also financial assistance to the farmers.

Primary Marketing societies:- It works at ground level and directly connected with farmers by establishing many local mandies for the farmers.

Limitations of Markfed :- Some problems are faced by the Markfed while working like

1. Lack of Financial Resources :- Markfed faces the problem of finance as they purchases from farmers and sell it market and for rendering this service they charges very low percentage of commission.

2. Marketing System is not according to time :- They should maintain the time management also.

3. Lack of Proper Processing Facilities :- Because of lack of finance Markfed is not able to purchase the items for making the farmer produce in a proper form before selling it in the market.

4. Lack of education and training :- In most of the marketing federation employees are uneducated and untrained because of that Markfed faces the problem of inexpert working persons.

5. Lack of Warehousing Facilities :- Markfed purchases the agriculture produce from farmer and kept it in warehouse till reasonable price for the produce in the market but Markfed has inadequate facility of warehouse because of this sometimes agriculture produce get spoiled.

6. Competition with Middleman :- Markfed has to compete with middleman for their working. If the farmers deal with middleman than Markfed has to faces the loss.

Conclusion and Suggestions - From the research it was found that Markfed works to facilitate the farmers by providing various facilities to them so that they can get maximum return on their produce which endeavours helps in upliftment of agriculture sector . Markfed provides various facilities like Purchase and Sale of Produce, Distribution of Agricultural Inputs, Providing Storage Facility, Supply of Agricultural Implements, Provide Financial Assistance, Providing Transportation Facility, Providing Market Information and so on to facilitate the farmers.Apat of that Markfed faces some problems also.

Suggestions - Some suggestions that can help the markfed for their growth

1. Proper availability of finance so that the working of the Markfed not get affected because of lack of finance.
2. Training and education should be provided to the employees so that expert working can be possible.
3. Proper storage facility should be in warehouses and very less amount of interest should be charged by Markfed for providing the storage facilities.
4. Proper information regarding market should be provided to Markfed at right time.
5. Markfed should be competent of all need items for processing of produce before sale.
6. Establishment of marketing societies should be near to the mandies.
7. Sick or not working marketing societies should be closed.

References :-

1. Dr. Gupta U.C Co-operative Business Management, Arjun Publication House (2013)
2. Website of Markfed
3. http://www.tjprc.org/publishpapers

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

Bioactive Entrapment and Targeting Using Nanocarrier Technologies

Renuka Thakur* Dr. S.K. Udaipure**

Abstract - Optical nanotherapy requires the bioactive or therapeutic molecule to be protected from degradation and reach its target cell and intracellular location . because of their unique properties., nanocarrier system enhance the performance of bioactives by improving their solubility and bioavailability, in vitro and in vivo stability, and preventing their unwanted interactions with other molecules. Nanocarrier technologies used for the entrapment/encapsulation and selective targeting of bioactives can be broadly categorized as polymer, lipid and surfactantbased systems. Cell specific targeting of carrier systems is a prerequistite to attain the concentration of bioactives required for therapeutic efficacy in the target tissue while minimizing adverse effects on other parts of the body.

Introduction - The protection of bioactive agents, including drugs, vaccines, nutrients and cosmetics, from degradation and inactivation has been investigated extensively using microencapsulation systems. However , to provide targeted controlled release is a key functionality that can be provided much more efficiently by employing nanocarrier technologies. Advancements in nanoscience and technology have made it possible to manufacture and analyse sub micrometric bioactive carrers on a routine basis. The delivery of bioactives to various sites with in body – as well as in non living systems – and their release behavior is directly effected by particle size. Compared to micrometer size carriers, nanocarriers provide more surface area and have the potential to increase solubility, enhance bioavailability, improve controlled release and enable precision targeting of the entrapped compounds to a grater extent. As a consequence od improved stability and targeting, the amount required to exert a specific effect when encapsulated or incorporated to nanocarriers is much less than the amount required when encapsulated. This is particularly useful when dealing with expensive bioactive materials. A timely and targeted release improves the effectiveness of bioactive, broadens their application range and ensures optimal dosage, thereby improving cost-effectiveness of the product. Reactive or sensitive material, such as polynucleotides and polypeptides, can be turned into stable ingredients through encapsulation or entrapment by nanocarriers systems. It is also possible to prepare multireservoir nanocarriers in which two or more material are segregated in different compartments of the same capsule, minimizing their contact and undersired interactions while releasing them at the target site simultaneously.

Because of their aforementioned properties, nanocarriers are a leading technology employed in nanotherapy to increase life standards of humans and animals. Nanocarriers systems vary in terms of ingredients, rigidity, stability, release properties and ability to incorporate materials with different solubilities.There is no universal nanocarriers that can be employed for all applications, although some are more versatile than other. The choice of which carrier system to use depend on the characteristics(size,solubility,charge etc) of the bioactive agent to be incorporated, safety and efficiency of the bioactive carrier complex as well as the intended application and route of administration of the complex to the body. With respect to manufacturing such complexes, possibility of mass production with minimum consumption of material, solvents, equipment and time should seriously be considered.

One of the challenges in nanotherapy is to reduce or completely eliminate side-effects. If bioactive agents act solely on their chosen target to produce the desired effect without causing unwanted effects on other systems, their usefulness will be enhanced significantly. In cancer therapy for example, in most cases, the drugs have no way of discriminating between normal dividing cells and the neoplastic cell line, making it difficult to completely eradicate cancer without at the same time doing irreparable damage to healthy cells and tissues. It is clear that nanotherapy would gain enormously if bioactives could be associated with target-specific nanocarrier systems. Targeted bioactive delivery can be defined as the ability of a given bioactive to concentrate in the required organ or tissue selectively and quantitatively, independent of the site and method of its administration Targeted delivery is under extensive research

*Govt. Narmada College, Hoshangabad (M.P.) INDIA
** Govt. Narmada College, Hoshangabad (M.P.) INDIA

and development in order to increase bioactive concentration in the required sites with no harmful effects on normal healthy tissues, hence reducing the cost of therapeutic strategy different bioactive carrier and delivery technologies, along with their preparation, material incorporation and strategies for their targeting, are explained in this chapter.

Bioactive Carreier Systems - A carrier system can be defined as the technology necessary for optimizing the therapeutic efficiency of a bioactive agent. Ideally a carrier system should provide a nonreactive matrix to physically protect its load from destructive factors (e.g. oxygen, light, enzymes, etc.) physically separate it from other reactive components and also deliver it to the target site inside or outside the body. Carrier technologies can be broadly categorized as polymer, lipid and surfactant based systems or a combination of these, Typical examples for carrier systems are microspheres, nanospheres, liposomes, nanoliposomes, vesicular phospholipid gels (VPG) , archaeosomes, and niosomes . Examples of combined carrer systems are micelles and nanoparticles that can be prepared from polymer lipid conjugates and polymer surfactant mixtures respectively. In terms of size one can divide the carrier systems to micrometric (one to several micrometers) and sub micrometric particles (nanocarriers) whose dimensions should be maintained from the point of application. Some of these and other bioactive carrier technologies are explained in the chapters of this book .

In the design and formulation of carrier systems the key parameters are preparation and entrapment method, size, stability and degradation characteristics aof the bioactive carrier complex as well as release kinetics of the entrapped material. Generally biodegradable and bioabsorbable carriers are preferred so that they would degrade inside the body by hydrolysis or by enzymatic reactions, without producing any toxic product. More importantly, no preparation method will be useful unless it can be adapted to industrial scales for mass production of bioactive carrier complexes with clearly defined reproducible properties. There are numerous lab scale and a few large scale techniques for the preparation of the carrier systems and entrapment of biactives to these carriers. Some examples for these techniques and the resultant carriers are given in table 1-1. Nevertheless most of these methods are not suitable for entrapment of sensitive substances because of their exposure either to mechanical stresses (e.g. high shear homogenization, sonication, high pressures) potentially harmful chemicals (e.g. volatile organic solvents, detergents) or low/high value of pH during the preparation.

Preparation techniques of some carrier systems

Preparation method	Carrier system
Thin film hydration method	Niosomes/liposomes
Heating method	Nanoliposomes/ archaeosomes
Heating method	Nanoliposomes/liposomes/ archaeosomes/VPG*
Reverse-phase evaporation	Liposomes/archaeosomes
Ether-injection technique	Liposomes
High-pressure homogenization	VPG*
Precipitation polymerization	Nanoparticles
Emulsion solvent evaporation technique	Microspheres

Many of these preparation techniques involve the application of harmful volatile solvents (e.g. chloroform, ether, methanol, acetone) to dissolve or solubilise the ingredients. These solvents not only affect the chemical structure of the entrapped substance but also may remain in the final formulation and contribute to toxicity and influence the stability of the carrier systems. In general, residual solvents are known as organic volatile impurities and have no therapeutic benefits, but may be hazardous to human and animal health as well as the environment. In addition to the above mentioned disadvantages, application of volatile organic solvents necessitates performance of two further steps in the preparation of the carrier systems. Removal of these solvents and assessment of the level of residual volatile organic solvents in the formulations. Removal of these solvents from final preparations, especially in industry, requires application of costly and laborious vacuum procedures. Hence, avoiding the utilization of these solvents and harmful procedures will bring down the toxicity as well as the time and cost of preparation of the carrier systems. For instance certain carriers, including lipsomes, nanoliposomes, VPG and archaeosomes, can be prepared by beating method without employing volatile solvents or detergents and were found to be completely non toxic when tested on human cultured cells.

The cost of preparing carrier entrapped bioactive molecules can be further reduced by minimizing the number of steps and time it takes to produce these formulations into products that are suitable for human or animal use. It is also desirable to have a method capable of producing a vast number of polymer,, lipid, and surfactant based carrier complexes in a single step and in a single piece of equipment or vessel, without involving harmful substances or procedures. Indeed, in a recent simple method, that is an improved and further developed version of heating method, different carrier systems (i.e.microspheres, nanospheres, liposomes, VPG, archaeosomes, niosomes , micelles and nanoparticles) can be prepared using a single apparatus in the absence of potentially toxic solvents in less than an hour. The method is economical and capable of manufacturing bioactive carriers with a superior monodipersity and storage stability using a simple protocol. Another important feature of the method is that it can be adapted from small to industrial scales. This method is obviously most suitable for production of carrier systems for different in vitro and in vivo applications and involves heating and stirring the carrier ingredients, in the presence

of a polyol, at a temperature between 50 to 120^0C (based on the properties of the ingredients and material to be entrapped). Incorporation of bioactives into the carriers can be achieved by several routes including: adding the bioactive to the reaction medium when temperature has dropped to a point not lower than the transition temperature of the ingredients. Adding the bioactive to the carrier after it is prepared at ambient temperatures (e.g incorporation of different DNA molecules to micro- and nanocarriers can be achieved by this route.)

Following preparation of carrier systems and incorporation of bioactive materials the next issue to be addressed is targeting the formulation to its site of action, which can be inside or outside the body. Examples of in vitro bioactive targeting include delivery of encapsulated antibiotics, to control bacterial growth in systems such as food or pharmaceutical reactors, and cheese ripening enzymes preferentially in the cheese curd for accelerated ripening much of the research however, has been devoted to devise systems for in vivo bioactive targeting as explained in the following sections.

Barriers To Bioactive Targeting - A logical design of optimal delivery systems entails considerations of various limiting steps in the in vivo and in vitro trafficking of bioactive agents . in the body, random and uncontrolled bioactive action on non target tissues and failure of drugs to reach diseased cells often lead to devastating side-effects. One of the main challenges in nanotherapy is to develop more selective, site-specific therapeutic agents for controlled and lasting treatment of diseases. Much emphasis is now being laid on the research and development of carrier systems that facilitate the delivery of the nonselective compounds to the diseased cells and organs preferentially, there by imparting them with an exquisite target specificity and enhanced efficacy. Main impediments to bioactive targeting include physiological barriers as well as challenges to identify and validate the molecular targets and to devise appropriate techniques of conjugating targeting ligands to the nanocarriers. The challenge in bioactive targeting is not only the targeting of bioactive to a specific site but also retaining it for optimum duration to elicit the desired action. In pulmonary bioactive delivery the main points to consider for targeting the bioactive to a specific part of the lung (alveoli) mainly by macrophage phagocytosis, clearance via the lymphatic system and uptake by alveolar type II epithelial cells.

For an intravenously administered nanosystem, the first and foremost barrier is that of the vascular endothelium and the basement membrance. In addition, plasma proteins affect the biodistribution of carrier systems introduced into the blood. The in vivo biodistribution and opsonization of carriers in blood circulation is governed by their stability, size and surface characteristics. For a carrier to remain in blood circulation for a long time, the major problem is to avoid its opsonization and subsequent uptake by the phagocytic cells. The passage of bioactives and carrier systems across the endothelium depends on the molecular weitht and size of the system, respectively. The tight endothelial cells in brain constitute the blood brain barrier (BBB) that restricts the entry of most molecules and their carriers. However, vascular endothelium is not uniform throughout the altered endothelia in tumors allow an enhanced permeability to macromolecules and the particulate carrier systems. Another barrier is that of the extracellular matrix, which sould be crossed to access the target cells in a tissue. If the whole tissue constitutes a target then the uniform distribution of bioactive throughout the tissue need to be addressed. Targeting nanosystems to specific receptors or antigens on the cell surface provides the driving force for diffusion of the system to the specific cells.

A major parameter to consider in the formulation of efficienttherapeutics is the solubility of bioactive compounds. Following administration of a bioactive to a human or animal, it must travel through multiple aqueous compartments, partitioned by lipid membrances, to reach its site of action in a particular organ or tissue. Furthermore, most of the bioactive compounds have their action sites in sub-cellular compartments such as cytosol or nucleus. However, the lipophilic nature of biological membrances restricts direct intracellular delivery of such compounds. Although there are several critical steps involved in transporting bioactives to the vicinity of the target cells, intracellular targeting is considered one of the biggest rate-limiting steps for bioactive delivery,. For the bioactive agent to be transported while reting its activity, it must exhibit reasonable solubility. However, as its aqueous solubility increases, its partition into biomembrances and its rate of diffusion across cellular membranes become proportionally difficult. Thus, the safe and efficient delivery of biologically active compounds to the eukaryotic cytosol has become one of the greatest challenges of the bioactive targeting.

The barriers do not end here, a number of endocytic pathways have been described for the cellular entry of nanocarriers. Bioactives/nanocarrier systems need to diffuse through the viscous cytosol to access particular cytoplasmic targets. Nuclear membrane poses another formidable barrier for bioactives such as oligonucleotides, plasmid DNA and low molecular weight drugs whose site of action is located in the cell nucleus. Although a number of cellular and molecular targets are emerging, the real problem lies with the poor accessibility of bioactives/ nanocarrrriers to the target tissue. The presence of such barriers leads to a poor in vitro/in vivo correlation when the targeted delivery systems are tested in receptor bearing cells in vitro and fail in vivo . therefore, to exploit the potential of new tagets in nanotherapy, one would need to delvelop targeted systems that can successfully overcome the physiological barriers and deliver the agent to its site of action at therapeutically relevant concentrations for a time sufficient to allow therapeutic action. Conjugation of targeting ligands to bioactives or carriers is the most applied method of directing them to their target sites. To this end,

various techniques have been devised, including covalent and non-covalent conjugation. The emphasis is that the ligand must be attached stably and accessibly to the drug carrier, so that the ligand is presented in its right orientation for binding to the target receptors. For example , the monoclonal antibodies must bind to the bioactive/carrier with their Fc part, so that their antigen-binding site (Fab) is free to interact with the antigenic targets on cells. The coupling reactions must not affect the biological activity of ligand and should not adversely affect the structure of nanocarrier systems. Moreover, such coupling reactions must be optimized so that binding of ligands takes place in a homogeneous manner on the suface of the nanocarries system.

Active Targeting - Compared to passive targeting, active targeting offers more opetions for site specific delivery of bioactive agents. Active targeting is achieved by engineering acrriers sensitive to different stimuli (e.g. pH, temperature, light , etc.) or conjugating the bioactive/carrier system to one or more targeting ligands such as tissue or cell specific molecules. Direct coupling of bioactives to targeting ligand restricts the coupling capacity to a few bioactive molecules. In contrast, coupling of nanocarriers to ligands allows import of thusands of bioactive molecules by means of one receptor targeted ligand. Bioactive targeting to specific cells has been explored utilizing the presence of various receptors and antigens/ proteins on the cell membranes and also by virtue of the lipid components of the cell membranes . the receptors and surface bound antigens may be expressed uniquely in diseased cells only or may exhibit differentially higher expression in diseased cells as compared to the normal cells. Active agents, such as ligands for the receptors and antibodies to the surface proteins have been used extensively to target specific sell. Upon ligation to targeted receptors, both nanocarriers and the engaged receptors are often internalized by a complex process known as receptor-mediated endocytosis/phagocytosis. The plasma membrane receptors considered for active targeting of bioactive agents include tuftin, folate, transferring and low density lipoprotein (LDL) receptors.

Lipid components of cellular membranes are emerging as novel targets for antineoplastic drugs. Interaction of synthetic phospholipid analogs with cellular membranes changes the lipid composition, membrane permeability and fluidity, thereby influencing signal transduction mechanism and inducing apoptotic cell death. Two such phospholipid analogs, i.e. miltefosine and edelfosine, can selectively kill malignant cells and thus offer promising approaches in cancer chemotherapy. They have also been shown to have antileishmanial effects.

Active targeting can also be achieved utilizing external stimuli such as ultrasound, magnetic field, or light. Ultrasound focused on tumor tissue has been shown to trigger the release of drugs from polymeric micelles only at the tumor site. A decrease in tumor volume was demonstrated by focusing ultrasound on the tumors following an intravenous injection of Doxorubicin loaded micelles. Magnetic nanoparticles and photosensitive liposomes also offer exciting new opportunities towards developing effective bioactive targeting systems. It is possible to produce characterize and specifically tailor the functional properties of these carrier technologies for clinical applications. A potential benefit of using magnetic nanoparticles is the use of localized magnetic field gradients to attract the particles to chosen site, and the possibility to hold them there until the therapy is complete,. Photosensitive liposomes on the other hand can release their contents at the target site following destabilization of the liposomal membrance upon being subjected to localized light source.

The stypical conditions of cellular microenvironment and other physiological characteristics, such as local temperature increase in inlamed organs, can also be exploited to obtain accelerated bioactive release at a specific target by engineering particulated that are sensitive to these microenvironmental conditions. Towards this end, particles incorporating pH-sensitive or thermo responsive components have been synthesized to preferentially disintegrate at acidic pH or increased temperature, respectively. The sensitivity of thermo responsive nanocarriers to elevated temperatures in the body can be useful in the treatment of solid tumors. Intracellular delivery of bioactives can be achieved using pH-sensitive nanocarriers, including pH-sensitive nanoliposomes, which provide noninvasive methods of targeting. The pH-senstive carriers destabilize endosomal membrane under the low pH inside the endosome/lysosome compartment and liberate the entrapped bioactive into the cytoplasm.

Conclusion - Nanocarrier engineering is an essential requirement for the protection, segregation and delivery of bioactive material towards achieveing optimal nanotherapy. Critical to the development of optimized bioactive delivery systems is the design of target-specific nanocarriers. For optimal therapeutic effect, an administered bioactive molecule must safely reach not only its target cell bus also the appropriate location with that call nanocarriers offer opportunities to achieve site specific delivery with improved passive and active targeting mechanism and newly discovered disease specific targets. However, challenges remain, primarily because of the complexity of the body and the layers of barriers that these systems need to overcome to reach their target. To exploit the potential of new targets in nanotherapy, one would need to delvelop targeted system that can successfully overcome the physiological barriers and deliver the agent to its site of action at therapeutically relevant concentrations for a time sufficient to allow therapeutic action as nanotechnology for biomedical applications evolves, the safety of nanodevices including nanocarriers should also be investigated thoroughly.

References :-

1. Personal Research.

A Study of Customer's Perception with respect to Life Insurance Services of State Bank of India Life Insurance in Ujjain Division

Jitendra Sharma*

Abstract - The insurance industry is a business that has considerable potential in India, but to get customer perception to gain customer loyalty to the company is not easy amid intense competition with other similar companies. Therefore, this study aims to identify and analyse the an-tecedents of customer perception and loyalty in the life insurance industry. The performance of SBI insurance company is the outcome of customer's perception on service quality of the SBI life insurance service provider. The present study has focused on finding customer perception towards service quality as provided by the SBI Life Insurance Company. The primary data has been collected from 364 respondents from Madhya Pradesh UJJAIN Region. The factor analysis and correlation has been used to find the perception of the customers. The study has found that there are five major factors which influence customer perception of service quality, namely responsiveness and assurance, convenience, tangible and empathy. Only age of the respondents have been found to be significantly related with the customer perception and other demographic factors have no significant impact.

Introduction - Insurance means managing risk Insurance is a legal contract that transfers risk from a policy holder to an insurance provider Services are activities and /or benefits that one party offers to the other and that services are necessarily intangible and do not result in the ownership of anything. Insurance service is unlike other services, as it is multifaceted and potential reliant service involves extensive legal characteristics. Insurance plays a pioneer role in terms of all kinds of economic and financial development of our society because it involves the soundness and managing of the enterprises as well as including household which may face financial losses due to any type of harmful events or health problems or natural calamities and additionally fire theft. As we are aware that insurance serves not only in savings but also as a product that provides us financial protection and security. Thus insurance might be a good transfer of loss or risk from one unit to another in exchange of certain amount. In an insurance procedure, a corporation provides insurance and conjointly sells it to the entity or a person.

Customer dissatisfaction has been found to have a greater psychological impact and a greater longevity compared to good experiences.

The purpose of the present study is to measure customer's perception towards service quality of SBI life insurance Company. The framework developed by Tsoukatos and Rand, (2006), Durvasula et al. (2004) and Mittal et al. (2013) has been used to find out customer's perception towards service quality dimensions of Life Insurance providers.

Objectives of the Study - The objective of the study was to find out the relationship between the Demographic Profiling of respondents and customer perception of services quality delivered by SBI life insurance. In order to achieve these objectives, the following hypotheses have been formulated:

1. To study the various situational (Marital Status Profiling) measures affecting Customers, Regarding the SBI Life Insurance.
2. To study the relationship between the age of respondents and perception of service quality delivered by SBI life insurance.

Literature Review

Life insurance is a high credence service (Lynch and Mackay, 1985), very abstract, complex and focused on future benefits that are difficult to prove (financial protection etc.). Life insurance products provide very little signs to signal quality. It has been suggested that consumers usually rely on extrinsic signs like brand image to ascertain and perceive service quality (Gronroos, 1982). Customer satisfaction in insurance is both difficult to measure and ascertain. The future benefits of the "product" purchased are difficult to foresee and take a long time to "prove" its effects (Crosby and Stephens, 1987). An extended period of time may be required in this industry for a fully informed evaluation (Devlin, 2001). Extensive research has been undertaken on different aspects of service quality providing a sound.

*Research Scholar, Career Point University, Kota (Raj.) INDIA

conceptual foundation. Authors (Parasuraman et al., 1988; 1991; Carman, 1990) agree that service quality is an abstract and elusive concept, difficult to define and measure. Empirically, various service quality models and instruments have been developed for measuring service quality. The most widely used service quality measurement tools include SERVQUAL (Parasuraman et al.,1988; Boulding et al., 1993) and SERVPERF (Cronin and Taylor, 1992). The SERVQUAL model suggests that service quality can be measured by identifying the gaps between customers' expectation and perceptions of the performance of the service using 22 items and five-dimensions: reliability, assurance, tangible, empathy, and responsiveness. In the SERVPERF scale, service quality is measured through performance on score based on the same 22 items and five dimensional structure of SERVQUAL. The SERVQUAL have been used to measure service quality in the insurance industry (Stafford et al., 1998; Leste and Vittorio, 1997; Westbrook and Peterson, 1998; Mehta et al., 2002; Evangelos et al., 2004; Goswami, 2007; Gayathri et al., 2005; Siddiqui et al., 2010).

Research Methodology

a) Data Collection Method - The main instrument used for data collection in this research was the questionnaire. The responses have been collected through survey using costumer meetings and email.

b) Development of Research Instrument - In order to develop a questionnaire, The constructs of the questionnaire are based on the framework developed by Tsoukatos and Rand, (2006), Durvasula et al. (2004) and Mittal et al. (2013). in depth literature review on service quality dimension in Life Insurance sector was carried out.

Customer perception survey was a quantitative research by distributing questionnaires among the customers. 400 customers were involved in this survey but among them unfortunately some persons did not fill the questionnaire completely. That is why 364 questionnaires were accepted. The survey was one month long process, when first 15 days researcher distributed the questionnaires among the customers and next half 15 days they submitted those to one employee of SBI Life Insurance Company Limited.

The perception of the respondents towards the service delivery quality was gauged using a questionnaire containing close-ended questions, which were designed to ascertain perception of the respondents using a five point Likert scale with following options: Highly Agree, Agree, Neutral, Disagree and Highly Disagree.

five factors represent different elements of services quality 25 scale response items. the first factor represents elements of the service quality named as **Reliability,** These elements are Services are Branded, Clarity and Accuracy of service procedure, Clarity and Accuracy of in the specimen form in use, Solutions of complaints, common evaluation**.** The second factor represents elements of the service quality named as **Responsiveness**; these elements are Initiative to attend customers for their needs, Transparency in follow-up, fairness in treatment, Flexibility in dealing, Availability of manual and related document of service. The third factor represents elements of the service quality named as **Convenience or assurance Factor,** These elements are Availability of utilities, easy accessibility, easy contact and communication, Suitability of services and procedure, highly active and fast changing in new techniques**.** The fourth factor represents elements of the service quality named as **Tangible factor,** these elements are Charges are compatible, Efficiency and knowledge, Availability of necessary information, Easy to use e services, extent of service swiftly and efficiently. The fifth factor represents elements of the service quality named as **Empathy Factor,** These elements are Employees are cooperative, easy accessibility of information, response of customer in suggestion, making customer awareness, Clarity in administrative decisions.

c) Research and Statistical Tools Employed - The research and statistical tools employed in this study are factor analysis and correlation. SPSS 16 was used to perform statistical analysis. The reliability of the data was carried out by using Cronbach's Alpha Value. The factor analysis was used to examine the underlying or latent dimensions within variables of overall customer perception. That the requirement of factors analysis were met.

Data Analysis and Interpretation - The analysis of this data was divided into following section:

1. Demographic profile of Respondents - The respondent profile as displayed in table 2 indicates the current scenario of life insurance sector and its user's profile. Most of the respondents belongs to Urban aria (53.58%) were males (63.47%) and under-graduate (39.83%). Majority of respondents are in the age group of 35-40 years (20.32%) and most of married respondents (80.49%). Most of the respondents have employed (37.93%). The profile of respondents indicates they are young, urban, educated, married and have high employed which is a right demographic composition from life insurance provider's context.

Table 1.0:Correlation between Age and Customer Perception of Service Quality

	Sq 1	**Sq 2**	**Sq 3**	**Sq 4**	**Sq 5**
PC	-0.018	-0.127	-0.333	0.264**	0.069
Sig.	0.833	0.135	0.000	0.001	0.422
	Sq 6	**Sq 7**	**Sq 8**	**Sq 9**	**Sq 10**
PC	-0.258	0.020	0.265*	-0.130	-0.123
Sig.	0.002	0.819	0.022	0.128	0.143
	Sq 11	**Sq 12**	**Sq 13**	**Sq 14**	**Sq 15**
PC	-0.160	0.072	-0.264	0.157	0.370
Sig.	0.060	0.399	0.002	0.065	0.000
	Sq 16	**Sq 17**	**Sq 18**	**Sq 19**	**Sq 20**
PC	-0.195	-0.271	0.421**	-0.223	-0.329
Sig.	0.021	0.001	0.000	0.008	0.000
	Sq 21	**Sq 22**	**Sq 23**	**Sq 24**	**Sq 25**
PC	.265**	-0.130	-0.370	0.258*	-0.072
Sig.	0.002	0.128	0.000	0.002	0.003

PC = Pearson Correlation Sig. = Significance (2-tailed)

2. Correlation - Table 1.0 shows the correlation between age and service quality. We accept the null hypothesis that there is no relationship between the age of respondents and perception of service quality delivered by SBI Life Insurance. In other words, the age has significant relationship which determines the service quality perception. Similar findings were there in the study of Bishnoi and Bishnoi (2013).

Discussion - Based on the results of the analysis and discussion described, we draws some conclusions as follows:

1. There is no relationship between the age of respondents and perception of reliability factor in service quality (Services are Branded, Clarity and Accuracy of service procedure, Clarity and Accuracy of in the specimen form in use, common evaluation.) delivered by SBI life insurance.
2. The age has significant relationship which determines the reliability factor of service quality (Solutions of complaints) perception.
3. There is no relationship between the age of respondents and perception of Responsiveness factor in service quality (Initiative to attend customers for their needs, fairness in treatment, Flexibility in dealing, Availability of manual and related document of service.) delivered by SBI life insurance.
4. The age has significant relationship which determines the Responsiveness factor of service quality (Transparency in follow-up) perception.
5. There is no relationship between the age of respondents and perception of Convenience factor in service quality (Availability of utilities, easy accessibility, easy contact and communication, Suitability of services and procedure, highly active and fast changing in new techniques.) delivered by SBI life insurance.
6. There is no relationship between the age of respondents and perception of Tangible factor in service quality (Charges are compatible, Efficiency and knowledge, Availability of necessary information, Easy to use e services, extent of service swiftly and efficiently.) delivered by SBI life insurance.
7. The age has significant relationship which determines the Tangible factor of service quality (Availability of necessary information) perception.
8. There is no relationship between the age of respondents and perception of Empathy factor in service quality (easy accessibility of information, response of customer in suggestion, Clarity in administrative decisions.) delivered by SBI life insurance.
9. The age has significant relationship which determines the Empathy factor of service quality (Employees are cooperative) perception.
10. The age has significant relationship which determines the Empathy factor of service quality (making customer awareness) perception.

Suggestions -The factor analysis has brought five factors related with the service quality of life insurers. These factors are Reliability Factors, Responsiveness and Assurance Factors, Convenience Factors, Tangible Factors and Empathy Factors. The life insurers may take note of tangible factors which significantly determines the customer's perception of service quality. They may take care of these factors and ensure proper availability of all are factors which will positively enhance the customer perception of service quality.

The test of correlation between demographic characteristics and service quality parameters have found out that the age of respondents significantly determine the customer perception of service quality of SBI life insurance company. Therefore, the life insurance providers may keep in mind the gender factor while designing their product offerings and promotions. The other demographic characteristics such as gender, education and marital status does not have significant impact on customer perception towards service quality of SBI life insurance. these findings to further improve their product offering and marketing strategies incorporating these findings.

References :-

1. Agarwal, R.F., "Role of Information Technology in the Insurance Industry", Chartered Secretary, Aug 2001, P. 235-237
2. Chawla (2007) in her study titled "Privatization of life insurance-A study of customer satisfaction in northern India."
3. Chawla, S. and Singh, F. (2008), "Service Quality Perceptions of Life Insurance Policyholders in Northern India: Pre-privatization vs. Postprivatization", The ICFAI University Journal of Marketing Management, Vol. VII No. 4, pp. 24-53
4. Dr. Daleep Pandita Customer Service in Changing Market Scenario, The Insurance Institute of Journal, January - June 2003, Pg.38.
5. Deepika Upadhyaya and Manish Badlani (2011), "Service Quality Perception and Customer Satisfaction in Life Insurance Companies in India", International Conference on Technology and Business Management, pp.1011–1024
6. Dr Nina L Reynolds and Professor Antonis Simintiras, "Establishing Cross-National Equivalence of the Customer Satisfaction, Dissatisfaction Construct" , European Business Management School & University of Wales, Singleton Park, UK,2005.
7. Dr. Rudra Saibaba, 2002, "Perception and attitude of Women towards Life Insurance Policies" –Indian Journal of Marketing,vol.No.12 ,xxxii, p 1, October.
8. PARTHA SARATHI CHOUDHURI, "Investigation of Customer Product Awareness & Transaction Gap in Life Insurance Corporation of India", International Journal Of Research In Commerce ,IT & Management, Volume 4 , Issue 5, May 2014, pp 69-72
9. Prof. O' Reilly Philip, Prof. Dunne Sean, "Measuring CRM performance: an exploratory case", University College Cork, Ireland, 2005.

The Role of Professional Ethics in Teacher Education

Asmita Bhattacharya*

Abstract - This article provides a theoretical discussion of the process of developing a professional code of ethics for teachers. In this competitive world we human beings are witnessing diverse changes in our educational system. Aims, objectives of education is changing according to the interests, needs and requirements of the learners. It is very important that teachers understand that when they get teaching position they are agreeing to follow the path of code of ethics. They need to protect their student's safety. The main thing is not to abuse the power of their position over their students. The professional ethics will enlighten the teachers that they have a major role in bringing desirable changes in the behavior of the students. Teacher who having the sense of professional ethics will treat their students with love, affection, care, commitment. Integrity honesty and moral conduct are essential elements in a good teacher. Personal ethics, morality, integrity will strongly influence a person's professional ethical conduct. This paper specifically highlights the importance of professional ethics in education system namely teacher education.
Key words - ethics, code of professional ethics, human dignity, teacher, values.

Introduction - It is universally felt that like all other professions the teaching profession should also have its own code of processional ethics which indeed is a pre-requisite to ensure its integrity and dignity. Professional ethics is concerned with one's behavior and conduct when carrying out professional work. While education of acceptable quality depends on many factors including infrastructure, curriculum, teaching-learning material, methods, educational technology and so on, but the most important factors among these factors is the teacher. Teacher who is directly responsible to operationalize the process of education, establish intimate conduct with learners and motivate and train students in various aspects of their personality in a manner that they are successfully initiated into the society as its young, promising, productive, and responsible members who are capable to face the challenges of life effectively. Many institutions are facing lack of professional ethics within the teachers, who have ample of degree, qualifications, achievements, content knowledge. Teaching is not just about imparting the subject matter but it is just beyond that. The teaching is regarded as noble and righteous profession, because of its contribution to nation building, creative personalities, responsible citizens. Therefore, teaching profession requires lot of dedication, sincerity, devotion, commitment towards pupils and educational institution. Os, teachers need to have the professional ethics, without professional ethics it will become a barrier in the development of learners, society, institution and a nation as a whole, since a great nation needs great citizen which is the product of proper guidance of a teacher. I will mention some essential works that centers the importance of ethics for educational practice. Robert Nash (2002) explains how 'three moral languages' – rules and principles, character and basic beliefs – can be brought to bear on ethical issues and professional practices. Form the consequentialist ethics, the education can draw the importance of the consequences of one's own actions and the justification for a public education that serves all children to the best of their abilities. Concerning the virtue ethics the most important set of virtues in the school are the one that are being cultivated in students. A professional educator has a philosophy of education and the philosophy of education grounded on the care of the self is a philosophy of possibility. An educator is in a position to continually develop ethical and professional judgement throughout his career and in his various positions of responsibility.

The importance of ethics in education - Ethics are well founded standards that make the actions right or wrong, ethics influences behavior and allows individual to make the right choices. Without ethics it will be very difficult for human beings to act responsibly and to conduct life. Ethics in education is very essential as they help run the system smoothly. It sets the standards of what is acceptable and what is not, and protecting the interests of educators and the learners. Teachers play very important role in a student's life. They not only impart education but also help develop the personality of a student. Ethics in education that are applicable on teachers require them to show patience to every student despite their learning abilities, they should treat every students equally and do justice while taking an action. It is important that a teacher understands that every student is different and should not be evaluated on the same basis. Ethics in education doesn't allow teachers to hold

*Guest Lecturer, Netaji Nagar College for Women (Under C.U.), Kolkata (W.B.) INDIA

grudges and it intentionally treat students unfairly. And at the same time, ethics in education requires students to respect their teacher and abide by the rules set by them. Students should acquire academic integrity and responsibility as well as practice self-discipline.

Importance of professional ethics for teachers - The school is considered miniature of society. The school is that formal agency which provides education to students. School has a major role in bringing development in the society. The teaching process and teacher is an important factor in the schools. Without it the education process cannot function properly. Teacher plays an important role in the educational process to impart education and bring desirable changes in the behavior of the students. Teacher should realize and understand his profession. The aims, objectives of teaching is purely dependent upon his ability, teaching aptitude, subject-matter, pedagogy and most important is the professional ethics. Aristotle states that treating people fairly implies treating equals equally and unequals unequally. Now question is " what is professional ethics? (1) Professional ethics encompass the personal and corporate standards of behavior expected of professionals. (2) Professional ethics is concerned with one's behavior and conduct when carrying out professional work. It is codified and varies across different cultures. (3) Professional ethics is the ethical norms, values, and principles that guide a profession and the ethics of decisions made within the profession.

Different definitions of Professional Ethics :

1. Banks (2003) explains that, a code of ethics is usually a written document produced by a professional association, occupational regularity body, or other professional body, with the stated aim of guiding the practitioners who are members, protecting service users and safeguarding the reputation of the profession."
2. The Secondary Education Commission has stated 'They (teachers) will not look upon their work as an unpalatable means of carrying a scanty living but as an avenue through which they are rendering significant social services as well as finding some measure of self fulfillment and self-expression."

Concept of Professional Ethics:

1. Professional ethics is a set of beliefs that a teacher accepts concerning relationships with students, colleagues and parents (or guardians and caregivers of children), all of whom are stakeholders in the life of the teacher. These principles guide the teacher in their daily activities in working with their stakeholder.
2. Professional ethics give a certain set of broad principles derived in turn from a spectrum of values which are arrived at after deep philosophical reflection on the nature and role of the profession in the life of mankind.

Components of Professional Ethics - Some professional organizations may define their ethical approach in terms of a number of discrete components. These includes :

i. Honesty
ii. Integrity
iii. Transparency
iv. Accountability
v. Confidentiality
vi. Objectivity
vii. Respectfulness
viii. Obedience to the law.

Why ethics for a noble profession – Teaching :

1) Great impact in the molding of the next generation
2) Teacher work as Friend, Philosopher And Guide
3) Imbalance between past, present and future
4) To enjoy respect and status in the society
5) To commensurate ethical and cultural values in India.
6) Paradigm shift in the perception of teachers
7) Perplexed with new development and cultural heritage
8) Erosion I the values, responsibilities, commitment in this profession.

Principles of Professional Ethics :

Teacher as a guide :

1) Deal justly and impartially with students
2) Recognize the individual difference among students
3) Seek to meet their individual needs
4) Respect the right of every student
5) Encourage students to formulate and work
6) Accept no remuneration for tutoring
7) Aid students to develop an understanding andappreciation.

The absence of professional ethics in teachers will impact the development of students. It is the fact that students follow the footsteps of their teachers since teachers are their motivator, inspiration, leader, model. So, teacher should posses a good behavior and positive attitude towards the teaching profession and their learner. The fundamental role of the teacher is to solve the problems, barriers of students that come along in their development process. The teacher must have a clear cut vision to foster the potentialities of the students. In practical situations many of teacher face the problem of adjustment in school. There could be many factors and reasons associated with it such as Interest, Aptitude, Values, Ethics, Discipline which makes the uncomfortable at workplace. The most important quality of a teacher thatteacher should posses the professional ethics. If they fail to understand it and implement it, then they might not be satisfied with their profession and it will hamper the performance of students. Teachers are the role-model. They play the important role in learners character formation. So, to make character formation successful we need well-trained teachers. Teachers should faces on providing the right path and guidance to students to make them well-behaved individual and responsible citizen also. Hence, teachers should inculcate the fundamental professional ethics and values within them before entering into teaching profession. Teachers help students learn the academic basics, but they also teach valuable life lessons by setting a positive example. They should follow a

professional code of ethics. This ensures that students receive a fair, honest and uncompromising education. A professional code of ethics outlines teachers' main responsibilities to their students and defines the role in students' lives. Teachers must demonstrate integrity, impartiality and ethical behavior in the classroom and in their conduct with parents and co-workers. Developing and following a professional code of ethics helps make sure teachers act in a professional and ethical manner at all times.

- **Working with students -** A teacher's job is to provide a quality education to his students. A professional code of ethics must address that teachers must not show favouritism or discriminate against students. Teachers must interact with students appropriately; not taking advantage of students. Contact with students outside of the classroom or school premises must be kept to a minimum and must focus on school-related activities and events.
- **Keep Learning -** A professional code of conduct demands attentiveness to continuing education requirements and career development. Teachers must research new teaching methods, attend classes to maintain their certification, consult their colleagues for professional advice, participate in curriculum improvements and stay up to date on technical advancements for the classroom. It is their duty to ensure that their teaching methods are fresh, new, innovative, relevant and comprehensive. They should enage in educational research to continuously improve their teaching strategies.
- **Interacting with Parents -** Asides form colleagues, teachers have a responsibility to interact positively with parents and other stakeholders in a students' education. Contact with parents must be kept professional, free from arguments and physical contact. Teachers must avoid being unduly influenced by parents when it comes t students' grades or other school related matters.
- **The dignity of a profession -** Today a teacher sees himself as the society. He knows that every individual in the society has received at least some instruction from a teacher and teachers would like to use this view to project themselves more. Teachers are grasping for control, and pedagogy is the only place where teachers still have a trace of it. The question is to teachers get to have dignity? Teachers are the symbol of dignity and they deserve the best, they are symbols of social counselors, overall and specific development specialists, advisors and policy makers. Believe teaching is the most sacred of all professions carrying divine inspiration, cover and protection. Teaching is the most demanding career in terms of selflessness commitment and sacrifice. A teacher is not merely a routine teacher but the maker of leading professionals and personalities. A teacher is a mentor of society and an architect of the nation. Teachers have more responsibility than any other person in a society. Parents send their children to them with such expectation that it becomes a test of their professional honesty and reputation. The main task entrusted with our teacher is to educate and train the young nation for a bright future. A crucial role of teachers as well as teaching profession is to together with families, parents, help students on their path from potential to full moral agents, which also means that they help children and youth in developing awareness of those times when respect and appreciation towards man depends to large extent, on his behavior and actions. Emphasizing the fact that respect and appreciation on the part of teachers towards students at a higher school age depends to a certain extend on their behavior and actions. The principle and the value of human dignity should be among the most significant in the mutual relationship of the teacher towards students and student towards teachers. Education at the school ought to the directed at a full development of human personality and strengthing respect for human rights. It embodies the obligation, commitment within teaching profession, hence teachers guide and educate children and youths to mutual respect and appreciation towards the human dignity of other children and adults.

On the other hand, there are some aspects which are closely connected to shattering human dignity or humiliation of individuals by means of behavior or actions of teachers. It is true that if a teacher does not respect the students dignity, the he cannot respect his own dignity to be respected. We remember that teachers who formed our lives in a positive way, but at the same time we also remember such teachers who degraded student's dignity, favoured some special students, or were only interested in children of influential parents.

Conclusion - Teachers at all levels of education should ensure the cognitive, intellectual, moral progress of their students and show them respect and appreciation. Moral way of life helps the development of human life, teachers should focus on imparting quality education. Teachers should take the liability of teaching profession seriously and perform their duties efficiently. Integrity, honesty and moral conduct are essential elements in a good teacher. Any philosophical study of professional ethics must focus on the following key concepts and their application to professional expertise and practical work : duties, obligations, rights, and virtues. Teachers must wholly commit to the teaching profession. Classroom should promote safety, security and acceptance, always avoiding any form of bullying, hostility, dishonesty, neglect or offensive conduct.

References :-

1. Alexander, R. (2009), Children, their world, their education : final report and recommendations of the Cambridge Primary Review. Abingdon, NY : Routledge.
2. Aultman, L.P., Williams – Johnson, M.R, &Schutz, P.A. (2009). Boundary dilemmas in teacher – student relationships : struggling with 'the line'. Teaching and teacher education, 25, 636 -646.
3. Campbell, Elizabeth. (2003). The Ethical Teacher.

Open University Press.
4. Cam, Philip. (2012). Teaching Ethics in schools: A New Approach to Moral Education. Read how youwant.com.
5. Campbell, E. (2008). The ethics of teachin gas a moral profession. Curriculum Inquiry 38(4), 357 – 385.
6. Carr, D. (2006). Professional and personal values and virtues in education and teaching. Oxford Review of Education, 32, 171 -183.
7. Carr, David. (2000). Professionalism and Ethics in Teaching. Routledge, New York.
8. Goodman, Joan. F. (2004). Moral Education : A Teacher – Centered Approach. Allyn & Bacon.
9. Hand, Michael. (2018). A Theory of Moral Education. Routledge.
10. Wringe, Colin. (2006). Moral Education : Beyond the teaching of Right and Wrong. Springer.

****

Synthesis And Photocatalytic Activity of ZnO/ $H_3PW_{12}O_{40}$ - Supported Mordenite Composite

Renuka Thakur* **Dr. S.K. Udaipure****

Abstract - 12-tungstophosphoric acid ($H_3PW_{12}O_{40}$) and Zinc Oxide (ZnO) particles were encapsulated into mordenite by salt melting procedure. The material was characterized by X-ray diffraction (XRD), Ultraviolet-visible diffuse reflectance spectra (UV-Vis-DRS), High Resolution Transmission Electron Microscopy (HRTEM), Energy Dispersive spectrometer (EDS) and Brunauer, Emmett and Teller surface area (BET). The characterization of ZnO/$H_3PW_{12}O_{40}$ – supported mordenite composite (ZnO/PW_{12}/ mordenite) clearly shows that some of ZnO and $PW_{12}O_{40}$ particles were encapsulated with in cavities and frame works of mordenite, which effectively increases the photocatalytic activity on degradation of methl orange. The Zn_O/PW_{12}/mordenite composite showed 1.7-fold increase amplitude of the photodegradation rate versus that of ZnO-supported mordenite composite (ZnO/ mordenite) without $H_3PW_{12}O_{40}$.

Introduction - Mordenites have a great deal of application in many technological fields such as catalysis and wastewater treatment, since they have unique uniform pores and channel sizes, which provide selective exclusion of molecules and ions. Research indicates that by encapsulating the semiconductor cluster in the porous support is a possible way to inhibit or retard the electron-hole recombination and effectively increases the photocatalytic activities. Since some studies have confirmed that ZnO powder exhibits more efficiency than TiO_2 powder in photocatalytic degradation of some dyes, ZnO was selected to entrap into mordenite to form ZnO/mordenite composite, which shows higher photodegradation rate and better chemical stability than that of pure ZnO semiconductor particle .

In order to improve the photodegradation efficiency, tha research focuses on modifying the semiconductor-supported mordenite by using some photosensitive molecules. Among the photosensitive molecules, solid heteropoly acids are known to be a kind of active and reusable catalysts for a variety of homogeneous and heterogeneous acid- catalyzed reactions due to their stronger Bronsted acidity character compared to homogeneous catalysts such as H_2SO_4, HCl, $AlCl_3$ etc. Based on the above concept, the mordenite supported $H_3PW_{12}O_{40}$ and ZnO was prepared with salt melting procedure, and it shows highly efficient photocatalyst for the degradation of methyl orange. The presented preparation is very simple and promising in high volume production.

Preparation of ZnO/PW_{12}/mordenite - The particle size of natural mordenite was controlled within 75-100 um, and washed several times with distilled water until clear suspension was obtained. Then, mordenite was separated by centrifugation technique and calcined at 523 K for 2h.The ZnO/$PW_{12}O_{40}$ and mordenite was mixed thoroughly in the present of a few drops of $1ML^{-1}$ HNO_3 solution on the evaporating dish. After being stirred and vaporized to nearly dry, the resultant solid product was calcined at 523K for 2h. then, the obtained product was designated as PW_{12}/ mordenite. Secondly, 3mL2M L-1 aqueous solution $Zn(NO_3)_2$ was added dropwise to 1.0g PW_{12}/mordenite, with stirring and heating to receive vaporized composite. Finally, ZnO/PQ_{12}/mordenite is obtained by calcining the composite at 623K for 2h.

Characterization of ZnO/PW_{12}/mordenite - Brunauer, Emmett and Teller surface area (BET) measurements were conducted with Micrometitics Tristar 3000(USA). The crystalline phases of the products were identified by X-ray diffraction (XRD) (Rigaku-D/max-2500) using Ni-filtered Cu-ka radiation. The band gap energies of the products were determined from the onset of diffuse reflectance spectra curve of the sample using a Shimadzu Model UV-3100 ultraviolet-visible (UV-Vis) spectrophotometer. The Energy Dispersive Spectrometer (EDS) experiments were carried out with a Philips FEI XL 30 ESEM. High Resolution Transmission Electron Microscopy experiments (HRTEM) was performed on a Philips FEI tecnoi F30.

Photocatalytic reaction - The photodegradation of methyl orange was performed to compare the activities of ZnO/ PW_{12}/mordenite with that of ZnO/mordenite and PW_{12}/ mordenite. Photocatalytic reaction was carried out in a Pyrex reactor which was attached to an inner radiation type 30W high-mercury lamp. The inner cell had thermostatted water

*Govt. Narmada College, Hoshangabad (M.P.) INDIA
** Govt. Narmada College, Hoshangabad (M.P.) INDIA

flowing through a jacket between the mercury lamp and the reaction chamber which was constructed of pyrex glass to filter out UV emission of the mercury are with wavelengths less than 290 nm. This photodegradation device was the same as that of our previous study. The photoactivity of a sample was determined by measuring the degradation ratio of methyl orange at various time intervals of irradiation of the suspension of a sample (0.2g) in 50 mL 0.061 mML^{-1} methyl orange solution.

The absorbance measurement was done at 0000000 nm for methytl orange. The degradation ratio of methyl orange solution can be described by the following expression.

Results And Discussions

XRD - The powder X-ray diffraction pattern of ZnO/PW_{12}/ mordenite. Diffraction peaks can be observed at 10.36^0, 20.49^0, 23.72^0, 27.04^0 and 29.60^0. They are matched with that of the substrate mordenite, despite turning a little weak. This indicates that the framework structure of mordenite is unaltered upon contacting with the very strong acid HPA and depositing ZnO by the salt melting procedure. Furthermore, the ZnO species can be detected by XRD from the high 20 region, the weak diffraction peaks at 31.96^0, 34.65^0, 36.49^0, 47.7^0, 56.75^0 and 63.04^0 can be observed. It implies that some of ZnO particles were encapsulated with in the cavities and frameworks of mordenite by successive ion exchange, while additional Zn2+ could lead to the formation of adventitious ZnO particles not included inside the zeolite voids, but present on the mordenite external surfaces.

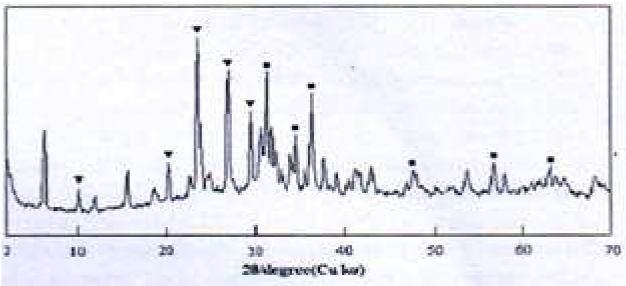

Fig.1: The powder X-ray diffraction pattern of ZnO/PW_{12} /mordenite

DRS - The samples were further characterized by UV-Visdiffuse relectance spectroscopy techniques (DRS) . The spectrum of ZnO indicates the onset at ca 407nm which corresponds to band gap energy of 3.05eV, while the spectrum of ZnO/PW_{12}/mordenite shows an obvious blue shift. This suggests that some ZnO was encapsulated within the cavities and frameworks of mordenite, showing quantum effects, and the blue shift in the DRS may be seen as an indirect indication of a high photocatalytic of ZnO/PW_{12}/ mordenite compared to the powered ZnO .

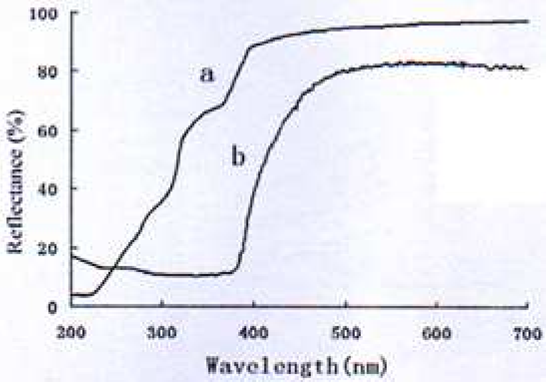

Fig.2: UV-Vis diffuse reflection spectra of (a) ZnO/PW_{12}/mordenite and (b) ZnO

HRTEM and EDS - ZnO/PW_{12}/mordenite was studied by high-resolution transmission electron microscopy (HRTEM) with selected-area electron diffraction. The HRTEM picture of ZnO/PW_{12}/mordenite. The ZnO particles were black dot in **** and PW_{12} is not found obviously due to the low doping. Thus the analysis of W element was performed by energy dispersive spectroscopy in micro area as shown and the W peaks in the EDS analysis could correspond to the existence of $H_3PW_{12}O_{40}$ particles on the mordenite.

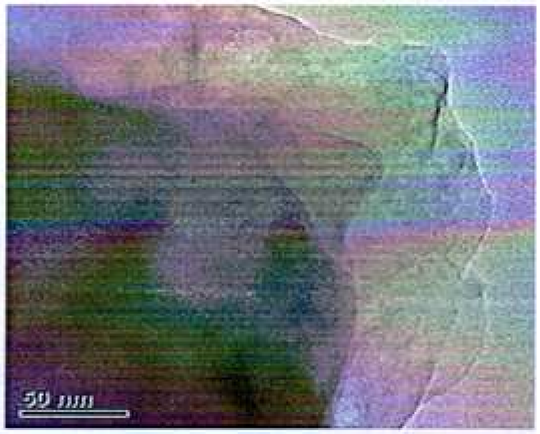

Fig. 3: The HRTEM micrograph from ZnO/PW_{12}/mordenite

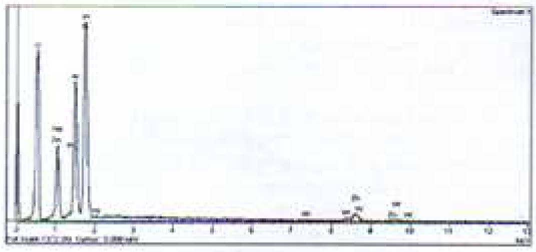

Fig.4: The EDS spectrum of ZnO/PW_{12}/mordenite composite.

BET - From low temperature nitrogen adsorption isotherms (Micrometitcs TriStar 3000), BET surface area and total pore volume were determined. Prior to the determination of

adsorption isotherm, the sample was pretreated at 573K to remove all of the physic-sorbed species from the surface of the adsorbent. It shows that the surface area of ZnO/ PW_{12}/mordenite ($244.6m^2g^{-1}$) is much lower than the surface area of substrate mordenite ($599.6m^2g^{-1}$) and the total pore volume of pores less than nm diameter of pristine mordenite ($0.31ml\ g^{-1}$) is reduced to $0.14mlg^{-1}$ for ZnO/PW_{12}/ mordenite. These results imply that heteropoly-phosphotungstic acid ($H_3PW_{12}O_{40}$) and ZnO particles were intercalated into the cavities and frameworks of mordenite.

Photocatalytic Activity - Using ZnO/PW_{12}/mordenite, ZnO/ mordenite and PW_{12}/mordenite as photocatalyst respectively the decomposition reaction of methyl orange aqueous solution was carried out, and it is found that PW_{12}/ mordenite nearly does not have photocatalytic activity. The hptocatalyzed degradation of methyl orange by ZnO/PW_{12}/ mordenite and ZnO/mordenite at various time intervals by measuring the absorbance changes at absorption maximum (462nm) of methyl orange. It can be oserved that the photocatalytic activity of ZnO/PW_{12}/mordenite is about a 1.7-fold higher than that of ZnO/mordenite. Moreover In(A0/A) increased linearly versus the UV irradiation time which indicated that the kinetics of photocatalytic oxidation fits in with the first-order kinetic model. Undoubtedly, mordenite used as matrix in this study provides a better dispersion of active ZnO and PW_{12} sites thereby facilititation higher photocatalytic activity. Thus, in the prepared ZnO/PW_{12}/mordenite, a feasible mechanism for the photocatalytic degradation of methyl orange is proposed as that of the methl orange degradation processes by HPA –encapsulated TiSBA-15 incluting the following steps : on the photoexitation, the methyl orange molecules inject electrons into the conduction band of ZnO nanoparticles network in mordenite, the photoinduced interfacial electron transfer takes place form the ZnO in mordenite to the encapsulated PW_{12} followd by the synergistic enhancement of the catalytic activity of photodestruction of dye in a way analogous to the plant photosystem .

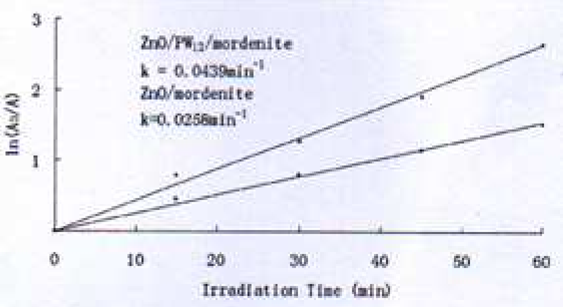

Fig.5: Photodegradation of methyl orange on (▲) ZnO/PW_{12}/mordenite and (■) ZnO/mordenite

Conclusions - Based on the above analysis the following conclusions may be drawn. (1) Encapsulation of ZnO particles into mordenites would be highly effective in increasing the number of surface active siteds of the nano-sized ZnO, which showed excellent photocatalytic and the guest to host electron transfer seemp to play an important role to improve the photocatalytic activity. (2) $H_3PW_{12}O_{40}$ and ZnO particles have sysnergistic effets to greatly increase the photocatalytic activity of ZnO/PW_{12}/mordenite is a 1.7 fold increase amplitude comparing to that of ZnO/ mordenite . The study clearly shows that the preparation of ZnO/PW_{12} mordenite is easy and anticipated to be an efficient photocatalytic system to work with.

References :-

1. Personal Research.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

Effect of *Pterocarpus marsupium* (Vijayasaar) on Lipid Profile and Diabetic Quality of Life in Recent onset Type1 Diabetes

Dr. Bharti Taldar* Dr. Rohitashv Choudhary** Dr. Ritvik Agrawal*** Dr. R.P. Agrawal****

Abstract - Background : Diabetes is an important human ailment afflicting life in different countries .It is characterized by abnormally high levels of sugar (glucose) in the blood. When the amount of glucose in the blood increases, it triggers the release of the hormone insulin from the pancreas. Diabetes is a chronic health condition where the body is unable to produce insulin and breakdown sugar (glucose) in the blood .In India too, it is major health problem. In people with diabetes, blood sugar levels remain high .This may be because insulin is not being produced at all or not made at sufficient levels or is not as effective as it should be.

Aim : The aim of the study was to evaluate efficacy of *Pterocarpus marsupium* (Vijayasar) on lipid profile and diabetic quality of life in type-1 diabetic patients.

Material & Methods : This was a randomized control study. After stabilization period of one month 200 patients were screened randomly from D.C.R.C. S. P. Medical College, Bikaner. These patients were randomly divided into three age groups, young group (age <18year), adult group (age 19-40year) and old group (age >40years). Four sets were studied in each group (T0–Normal; T1-half dose; T2-full dose; and T3–1½ dose of Pterocarpus marsupium powder).

Results : . In T1 group, mean total cholesterol at 0 month was 244.99±41.98 mg/dl while at 3 month mean total cholesterol was 224.76±38.51mg/dl (p<0.05).

In T2 group, mean total cholesterol at 0 and 3 months were 225.58±49.20 mg/dl and 197.88±43.16 mg/dl respectively.(p<0.01).

In T3 group, mean total cholesterol at 0 month was 232.74±40.76 mg/dl and at 3 month mean total cholesterol was 198.92±34.84 mg/dl (<0.001).

While in T0 group where we didn't gave any drug to the patient mean total cholesterol was higher at 3 month in comparison to 0 month where mean total cholesterol at 0 month was 159.15±36.73 mg/dl and at 3 months it was 187.24±43.22 mg/dl(p=0.001).

Conclusion : The mean total cholesterol was decreased when *Pterocarpus marsupium* was added to supplements. In conclusion that Type 1 diabetics always require insulin therapy to replace their lost of insulin for life although the supplements (*Pterocarpus marsupium* Vijaysaar). Regular consumption of this powder blood sugar level has normal approximately.

Introduction - Diabetes is a chronic condition associated with abnormally high levels of sugar (glucose) in the blood. Insulin produced by the pancreas lowers blood glucose. Absence or insufficient production of insulin, or an inability of the body to properly use insulin causes diabetes.

Health is a birth right of every individual .The increasing evidence that the dietary habits of people are important determinants of health. Proper dietary substances can either protect person from chronic diseases like: obesity, cancer, coronary heart disease and diabetes mellitus.

Diabetes mellitus is an universal health problem affecting human society at all stages of development (Rai, Sohi 1998).Diabetes mellitus is relatively a common disorder in India, It has been defined as a genetically and clinically heterogenous group of disorders. It is mainly caused by degeneration and inactivations of the B cells of islets of Langerhans. There is serious effect of carbohydrate, fat and protein metabolism in this disorder (Bahl 2000).

The two types of diabetes are caused by different things. They also have unique risk factors.There are two major types of diabetes Type 1Diabetes (IDDM) Known as

*M.Sc., Ph.D. Department of Botany, Government Dungar College, Bikaner (Raj.) INDIA
** M.Sc., Ph.D., Department of Botany, Government Dungar College, Bikaner (Raj.) INDIA
***Senior Resident, Department of Medicine, S.P. Medical College, Bikaner (Raj.) INDIA
**** Senior Professor, In-Charge DCRC, Department of Medicine, S.P. Medical College, Bikaner (Raj.) INDIA

insulin dependent diabetes mellitus which is usually diagnosed in childhood. In this case body makes little or no insulin and daily injections of insulin are required to live.

Type2 diabetes (NIDDM) known as non insulin dependent diabetes mellitus which is more common in about 90% of all diabetes cases and usually occurs in adulthood. In this type of diabetes diet, exercise or oral antidiabetic drugs may be enough to control the raised blood sugar (Visanthamein, Savita 2001).

Type 1 diabetes is a chronic disease. In people with type 1 diabetes, cells in the pancreas that make insulin are destroyed, and the body is unable to make insulin.

Insulin is a hormone that helps your body's cells use glucose for energy. Your body gets glucose from the food you eat. Insulin allows the glucose to pass from your blood into your body's cells.

Type 1 diabetes develops very quickly, and symptoms are obvious. For people with type 2 diabetes, the condition can develop over many years. In fact, a person with type 2 diabetes may not know they have it until they have a complication.

Type 1 diabetes develops predominantly in children and young adults but it may be present in all age groups. Once considered to be a single disease entity, it is now seen as a heterogeneous group of diseases characterized by a state of chronic hyperglycemia, resulting from a diversity of etiologies and interaction of environmental factors with an inherited predisposition of the diseases. Possible environmental triggers include various viruses[1,2] like coxsackie and neonatal.

The exact cause of type 1 diabetes is unknown. Most likely it is an autoimmune disorder. An infection or some other trigger causes the body to mistakenly attack the cells in the pancreas that make insulin. This kind of disorder can be passed down through families.

The following risk factors may increase and getting chance of diabetes:

1. Family history of diabetes
2. Being overweight
3. Physical stress (such as surgery or illness)
4. Use of certain medications, including steroids
5. Injury to the pancreas (such as infection, tumor, surgery or accident)
6. Autoimmune disease
7. High blood pressure
8. Abnormal blood cholesterol or triglyceride levels
9. Age (risk increases with age)
10. Smoking
11. History of gestational diabetes

The symptoms of diabetes include:

1. Increased thirst
2. Increased hunger (especially after eating)
3. Dry mouth
4. Frequent urination
5. Unexplained weight loss
6. Weak, tired feeling
7. Blurred vision
8. Numbness or tingling in the hands or feet
9. Slow-healing sores or cuts
10. Dry and itchy skin

The Expert Committee recognizes an intermediate group of subjects whose glucose levels, although not meeting the criteria for diabetes, are nevertheless too high to be considered altogether normal. Thus the categories of FPG and 2 hPG values are as follows :-

Category	FPG	2 hPG
Normal	< 100mg/dl (6.1 mmol/l)	<140 mg/dl (7.8 mmol/L)
Impaired fasting Glucose	> 100 mg/dl and < 126 mg/dl (6.1 mmol/l, 7 mmol/l)	>140mg/dl and <200 mg/dl (7.8 mmol/l, 11.1 mmol/l)
Diabetes Mellitus	> 126 mg/dl (7.0 mmol/l)	>200mg/dl (11.1 mmol/l)

Classification Of Diabetes - There are different types of classification depending on different parameters of presentation. The following etiological classification proposed by American Diabetic Association (2006) is very practical[5].

1. Type-1 diabetes (b cell destruction usually leading to absolute insulin deficiency).

a. Immune Mediated

i. Immune-mediated diseases: A broad term encompassing those diseases whose etiopathogenesis involves tissue damage caused by the body's immune system. Synonyms include "allergy" and "hypersensitivity". Classically, four basic mechanisms of immune injury may be involved: type I (anaphylactic), type II (cytotoxic), type III (immune complex) and type IV (cell-mediated).

ii. Autoimmune diseases: Diseases whose etiopathogenesis involves the production of host antibodies and/ or immunocompetent lymphocytes directed against "self" (host) antigens resulting in primary damage to the host's tissues. Autoimmunity should be demonstrable by in *vitro* and in *vivo* techniques.

b. Idiopathic

The medical term *idiopathic* comes from Greek roots: *idios*, or "one's own," and *pathos*, "suffering" or "disease." The literal meaning is something like "a disease of its own," or an illness that isn't connected to any particular cause. This is often the diagnosis doctors end up with after ruling out a lot of known conditions or diseases.

2. Type-2 diabetes : Type 2 diabetes is a lifelong (chronic) disease in which there is a high level of sugar (glucose) in the blood. Type 2 diabetes is the most common form of diabetes in which fat, liver, and muscle cells do not respond correctly to insulin. This is called insulin resistance. As a result, blood sugar does not get into these cells to be stored for energy.

3. Other Specific types

a. Genetic defects of b cells function.

b. Genetic defects in insulin action.
c. Diseases of exocrine pancreas.
d. Endocrinopathy.
e. Drugs or chemical induced.
f. Infections.
g. Uncommon forms & other genetic syndromes.

In India many herbal remedies have been recommended in various medical treatises. According to Nagarajan et.al (1978) about 75 Indian plants are known to possess hypoglycemic properties e.g. *Allium sativum, Eugenia jambolana, Pterocarpus marsupium* (Vijaysaar) etc.

Pterocarpus Marsupium is a big tree whose bark is very useful for treatment of diabetes. *Pterocarpus* bark is a rich source of polyphenolic compunds that are reported to have blood sugar lowering effects and control diabetes.

It has a magnificent role in reducing excessive fat from the body and improves digestion. It is known to regenerate activity of the pancreas.

Indian Kino (Vijay Saar) removes all toxins from body, purifies blood, reduces blood sugar & regenerates each and every cell of the body which makes this herb excellent blood sugar remedy.It is a remarkable herb used since ancient times for management of diabetes & its complications, however its effect specifically on control of type 1 DM

MATERIAL AND METHODS - This study was conducted in S.P. Medical College Bikaner. Patients were selected from the diabetic clinic held in the Diabetes Care and Research Centre P.B.M. Hospital Bikaner.

TYPE OF STUDY - Randomized case control study

Selection Criteria

- Diagnosis of the disease according to American Diabetes Association revised criteria with age.
- Patient were in insulin therapy
- No medical contraindications (including pregnancy) or any other major chronic disease.

Willingness and capability to participate in regular follow up.

Flow Chart :

Newly Onset Diabetic Subjects (n=220)

Randomized Selection (n=200)

One month stabilization period Young group (age up to 18 year) | **Adult group** (age19-40year) | **Old group** (age more than 40)

Clinical examination:
Blood Sugar, BMI, Waist Hip Ratio (Weekly)
Lipid Profie (TC, HDL, LDL, VLDL,TG) and Diabetes quality of life (initial and after 3 months)

3months treatment

Four sets were studied in each group as follows –

I. With normal diet and medicine. (T0 group).
II. With additional half dose of *Pterocarpus marsupium* powder (T1group).
III. With additional full dose of *Pterocarpus marsupium* powder (T2group).
IV. With additional one and half dose of *Pterocarpus marsupium* powder (T3group).

T1 group which included <18 years subjects, we gave 2 gm i.e. half dose of *Pterocarpus marsupium*, T2 group which included 19-40 years subjects, 4 gm i.e. full dose of *Pterocarpus marsupium*, T3 group which included >40 years subjects, 6 gm i.e. one and half dose of *Pterocarpus marsupium* and T0 group we did not gave any dose of *Pterocarpus marsupium* but we calculated and checked all parameters biochemical and anthropometric regularly.

1. For statistical comparison of data appropriate statistical model were applied. The subjects were selected on a random basis. Since the study was conducted at one place only. Hence geographical and climatic conditions were similar in all the cases.
2. **SERUM LIPID PROFILE**
3. **Estimation of Total cholesterol (TC)**
4. The quantitative estimation of Total serum cholesterol was done by calorimetrically using biochemical analyzer at Diabetes Care and Research Centre.
5. **High density lipoprotein Cholesterol (HDL-C)**
6. The quantitative estimation of HDL cholesterol was done by calorimetrically using biochemical analyzer at Diabetes Care and Research Centre.
7. **Low density lipoprotein Cholesterol (LDL-C)**
8. **Very low density lipoprotein Cholesterol (VLDL-C)**
9. LDL and VLDL cholesterol were calculated by using Friedwald (1972) formula:
10. LDL-C (mg/dl) = Total cholesterol-(HDL-C+VLDL-C)
11.
12. VLDL-C(mg/dl) =Triglyceride/5
13. **Estimation of serum triglyceride (TG)**
14. The quantitative estimation of serum triglyceride was done by calorimetrically using biochemical analyzer at Diabetes Care and Research Centre.

How to prepare *Pterocarpus marsupium* (Vijayasar)

We collected *Pterocarpus marsupium* bark from Patanjali Ayurved Limited. After that we washed the bark with clean water and dried in sunlight. After drying it was crushed into small pieces by electrical grinder and then finally powdered. The powder was then stored in a clean, oven dried stopper plastic container.

Patients included in the study group we were given *Pterocarpus marsupium* powder with water once a day (morning) according to dose, according to age for three months regularly.

Before started *Pterocarpus marsupium* powder patients were instructed about the procedure. Baseline parameters were taken of every patient i.e. Waist hip ratio, Body mass

index, Fasting Blood Sugar, lipid profile, blood pressure, glycosylated haemoglobin and c -peptide. Weekly patient were evaluated for body mass index, waist hip ratio, Fasting Blood Sugar and blood pressure. After three months besides above test lipid profile i.e. Total cholesterol (TC), High density lipoprotein Cholesterol (HDL-C) Low density lipoprotein Cholesterol (LDL-C) Very low density lipoprotein Cholesterol (VLDL-C), (serum triglyceride (TG), and diabetic questionnaire were also estimated in all four groups.

Results

Table 1 (see in last page)

Table 1 shows statistical comparison of total cholesterol in all four groups at 0 and 3 months. In T1 group, mean total cholesterol at 0 month was 244.99±41.98 while at 3 month mean total cholesterol was 224.76±38.51 and this difference was found statistically significant (p<0.05).

In T2 group, mean total cholesterol at 0 and 3 months were 225.58±49.20 mg/dl and 197.88±43.16 mg/dl respectively and the difference was also found statistically significant (p<0.01).

In T3 group, mean total cholesterol at 0 month was 232.74±40.76 mg/dl and at 3 month mean total cholesterol was 198.92±34.84 mg/dl and this difference was also found statistically significant (p<0.001).

While in T0 group where we didn't gave any drug to the patient mean total cholesterol was higher at 3 month in comparison to 0 month where mean total cholesterol at 0 month was 159.15±36.73 mg/dl and at 3 months it was 187.24±43.22 and this difference was found statistically significant inversely (p=0.001).

Table 2 (see in last page)

Table 2 shows statistical comparison of HDL cholesterol in all four groups at 0 and 3 months. In T1 group, mean HDL cholesterol at 0 month was 43.01±11.54mg/dl while at 3 month mean HDL cholesterol was 39.46±10.58 mg/dl and this difference was found statistically insignificant (p>0.05).

In T2 group, mean HDL cholesterol at 0 and 3 months were 52.11±17.42 mg/dl and 45.71±15.28 mg/dl respectively and the difference was also found statistically significant (p<0.05).

In T3 group, mean HDL cholesterol at 0 month was 57.38±21.63 mg/dl and at 3 month mean HDL cholesterol was 49.04±18.49 mg/dl and this difference was also found statistically highly significant (p<0.05).

While in T0 group where we didn't gave any drug to the patient mean HDL cholesterol was raised at 3 month in comparison to 0 month where mean HDL cholesterol at 0 month was 42.19±11.79 mg/dl and at 3 months it was 49.64±13.84 mg/dl and this difference was found statistically significant inversely (p<0.01).

Table 3 (see in last page)

Table 3 shows statistical comparison of LDL cholesterol in all four groups at 0 and 3 months. In T1 group, mean LDL cholesterol at 0 month was 159.60±43.67mg/dl while at 3 month mean LDL cholesterol was 149.08±40.09 mg/dl and this difference was found statistically insignificant (p>0.05).

In T2 group, mean LDL cholesterol at 0 and 3 months were 125.78±31.43 mg/dl and 116.84±27.57 mg/dl respectively and the difference was also found statistically insignificant (p>0.05).

In T3 group, mean LDL cholesterol at 0 month was 130.69±38.82 mg/dl and at 3 month mean LDL cholesterol was 116.79±31.20 mg/dl and this difference was also found statistically insignificant (p>0.05).

In T0 group mean LDL cholesterol was higher at 3 month in comparison to 0 months where mean LDL cholesterol at 0 month was 101.68±33.13 mg/dl and at 3 months it was 114.09±38.09 mg/dl and this diffeence was also found statistically insignificant (p>0.05).

Table 4 (see in last page)

Table 4 shows statistical comparison of VLDL cholesterol in all four groups at 0 and 3 months. In T1 group, mean VLDL cholesterol at 0 month was 42.38±13.23 mg/dl while at 3 month mean VLDL cholesterol was 36.22±11.31 mg/dl and this difference was found statistically significant (p<0.05).

In T2 group, mean VLDL cholesterol at 0 and 3 months were 47.70±26.03 mg/dl and 35.33±19.28mg/dl respectively and the difference was also found statistically significant (p<0.01).

In T3 group, mean VLDL cholesterol at 0 month was 44.67±26.70 mg/dl and at 3 month mean VLDL cholesterol was 33.09±19.78 mg/dl and this difference was also found statistically significant (p<0.05).

In T0 group mean VLDL cholesterol was higher at 3 month in comparison to 0 months where mean VLDL cholesterol at 0 month was 15.28±7.29 mg/dl and at 3 months it was 23.51±11.21 mg/dl and this difference was also found statistically highly significant inversely (p<0.001).

Table 5 (see in last page)

Table 5 shows statistical comparison of Triglyceride cholesterol in all four groups at 0 and 3 months. In T1 group, mean triglyceride at 0 month was 211.89±66.14 mg/dl while at 3 month mean triglyceride was 181.10±56.53 mg/dl and this difference was found statistically significant (p<0.05).

In T2 group, mean triglyceride at 0 and 3 months were 238.48±130.14 mg/dl and 176.65±96.40 mg/dl respectively and the difference was also found statistically significant (p<0.01).

In T3 group, mean triglyceride at 0 month was 223.34±133.50 mg/dl and at 3 month mean triglyceride was 165.44±98.89 mg/dl and this difference was also found statistically significant (p<0.05).

In T0 group mean triglyceride was higher at 3 month in comparison to 0 months where mean triglyceride at 0 month was 76.41±36.40 mg/dl and at 3 months it was 117.56±56.07 mg/dl and this difference was also found statistically highly significant inversely (p<0.001).

Discussion - In the course of presenting the results of the study **entitled " Effect of *Pterocarpus marsupium* (vijayasaar) on lipid profile and diabetic quality of life in recent onset type1 diabetes"**

in the preceding chapter, significant variation in the criteria used for evaluating the treatment was observed. An effort has been made in this chapter to discuss and explain the effect of *Pterocarpus marsupium* in type 1 diabetes patients lipid profile i.e.(TC,HDL,LDL,VLDL,TG) and diabetic questionnaire in different group according to doses.

Diabetes is a chronic (long term) condition marked by abnormally high levels of sugar (glucose) in the blood. People with diabetes either do not produce enough insulin – a hormone that is needed to convert sugar starches and other food into energy needed for daily life or cannot use the insulin that their bodies produce. While an estimated 18.8 million have been diagnosed with diabetes (both type 1 and type 2) unfortunately, 7 million people or nearly one third are unaware that they have type 1 diabetes. The exact cause of type 1 diabetes is not known. Each year more than 13000 young people are diagnose with type 1 diabetes. Various studies have also showed that Tinospora cardifolia (Guduchi) is widely used in Indian ayurvedic medicine for treating diabetes mellitus (Stanely et al 2001; Price and Menon 1999; Mathew and Kuttan 1997). Oral administration of an aqueous T. cordifolia root extract to alloxan diabetic rats caused a significant reduction in blood glucose and brain lipids. Though the aqueous extract at a dose of 400mg/kg could elicit significant antihyperglycemic effect in different animal models, its effect was equivalent to only one unit/kg of insulin (Dhaliwal 1999). It is reported that the daily administration of either alcoholic or aqueous extract of T. cordifolia decreases the blood glucose level and increses glucose tolerance in rodents (Gupta et al. 1967).

Raphael et al[3] studied in Phyllanthus amarus (Bhuiawala) and used the plant in diabetic therapeutics. Methanolic extract of Phyllanthus amarus was found to have potent antioxidant activity. They concluded that this extract also reduced the blood sugar in alloxanized diabetic rats. The plant also shows anti-inflammatory activity.

In our study we observed that fasting blood glucose is slightly significant given to our drugs and triglyceride was found statistically significant in comparison of 0 and 3 months.

Wadood et al[4] gave Acacia arabica (Babhul) in powder form to normal rabbit induced hypoglycemic effect by initiating release of insulin from pancreatic beta cells. They chosen this plant extract acts as an anti-diabetic agent by acting as secretagouge to release insulin.

In our study we also chosen Pterocarpus marsupium because it contents (Epicatechin and Pterostilbene) also showed insulin like activity.

Yeh et al[5] in their study concluded that as interest in the potential benefit of herbs and supplements for diabetes grows, it will become increasingly important to monitor the progress of the clinical literature and to communicate these findings to patients. They also concluded that medical system capable of incorporating those complementary therapies proven to be beneficial.

In our study Pterocarpus marsupium (vijayasar) also gave the same effects as shown by Yeh et al[5] in their study.

Conclusion - The domain of the natural anti diabetic activity of pterocarpus marsupium (vijaysar) nascent one and our study is an effort towards building new inroads into this area. Though it is clearly understood from our study that pterocarpus marsupium (vijaysar) having slight improvement on beta cell function but it is not statistically significant. Yet further large scale studies are needed to fully establish it.

It is well appreciated herb not only be able to control blood sugar but also delay the onset of diabetes complications. There are lot of research done on its effectiveness on diabetes.

Pterocarpus has a long history of use in India as a treatment for diabetes. Pterocarpus bark is a rich source of polyphenolic compounds that are reported to have blood sugar lowering effects in laboratory studies. It is one among the best hypoglycemic, hypolipidaemic and hypocholestro -lemic agent.

It has a magnificent role in reducing excessive fat from the body and improves digestion. It is known to regenerate activity of the pancreas.

Indian Kino (Vijay Saar) removes all toxins from body, purifies blood, reduces blood sugar & regenerates each and every cell of the body which makes this herb excellent blood sugar remedy.It is a remarkable herb used since ancient times for management of diabetes & its complications, however its effect specifically on control of type 1 DM

In conclusion *Pterocarpus marsupium* (vijayasar) as an adjunctive to intensive insulin therapy has slight effect on residual beta cell function in patients with recent onset type 1 diabetics. These results have important implications for current thoughts in designing strategies for preventing type 1 diabetics.

Although *Pterocarpus marsupium* is an effective alternative mode of treatment in type 1 diabetics. There is significant reduction in doses of insulin and significant achievement in glycemic control. There is effective anabolic role of *Pterocarpus marsupium* in type 1 diabetic patients. In conclusion the result of this study have shown that Type 1 diabetics always require insulin therapy to replace their lost of insulin for life although the supplements (*Pterocarpus marsupium* Vijaysaar) mentioned in our study may help offset some of the complications caused by diabetes e.g. reduced blood sugar, antioxidant capacity increases and glycation as well as enhance glucose metabolism and may help reduced damaged associated with diabetes. Regular consumption of this powder blood sugar level has normal approximately

Inspite of all the efforts in finding efficient therapeutic approaches for this disease, insulin keeps being the only effective treatment, as islet transplantation and beta cell generation.

Under no circumstances should people suddenly stop taking diabetic drugs especially insulin. A type 1 diabetic

will never be able to stop taking insulin. However it is possible to improve glucose metabolism control and tolerance.

References :-

1. American Diabetes Assocaiton. *Diabetes Care* 2006; 29 (Suppl 1).
2. Bahl N. 2000. Food value of mushrooms. New Delhi: Oxford & IBH publishing.
3. Nagarajan, S., Jain, H.C., Aulakh, G.C. (1978). Indigenous plants used in the control of diabetes. *Bull Indian Raw Materials & Their Utilization* 4:1-17.
4. Rai RD, Sohi. 1988. The food value of mushrooms (pleurotus). Indian horticulture 33:3;10-12.
5. Rai RD, Sohi. 1998. How protein rich are mushrooms. Indian Hort 33:2; 2-3.
6. Raphael, K.R., Sabu, M.C., Kuttan, R. (2002). Hypoglycemic effect of methanol extract of Phyllanthus amarus on alloxan induced diabetes mellitus in rats and its relation with antioxidant potential. *Indian J. Exp. Biol.,* 40:905–909.
7. Szopa TM, Titchener PA, Portwood ND, Taylor KW. Diabetes mellitus due to viruses. Some recent developments. Diabetologia 1993; 36:687-95.
8. 6. Visanthamein G, Savita D. 2001. Hpoglycemic and hypocholesterolemic effect of selected powder. Indian J Nut Diabetic 38: 419-27.
9. Wadood A, Wadood N, Shah SA. Effects of Acacia arabica and Caralluma edulis on blood glucose levels on normal and alloxan diabetic rabbits. J Pakistan Med Assoc, 1989; 39:208–12.
10. Yeh GY, Eisenberg DM, Kaptchur TJ, Phillips RS. Systematic review of herbs and dietary supplements for glycemic control in diabetes. Diabetes Care 2003; 26(4):1277-94.
11. Yoon JW. Role of viruses and environmental factors in induction of diabetes. Curr Topics Microbiol Immun 1940; 164:95-123.

Table 1 : Statistical comparison of Total Cholesterol (TC) in all four groups at 0 and 3 months

Parameters	T1		T2		T3		T0	
	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth
Mean	244.99	224.76	225.58	197.88	232.74	198.92	159.15	187.24
SD	41.98	38.51	49.20	43.16	40.76	34.84	36.73	43.22
T	2.511	2.993	4.460	3.501				
P	0.014	0.003	0.001	0.001				

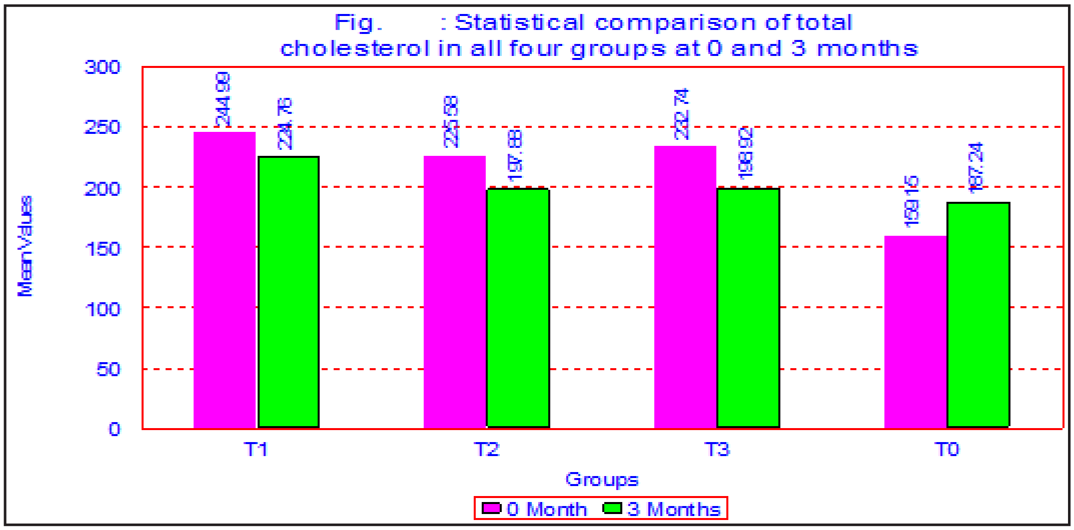

Table 2 : Statistical comparison of HDL cholesterol in all four groups at 0 and 3 months

Parameters	T1		T2		T3		T0	
	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth
Mean	43.01	39.46	52.11	45.71	57.38	49.04	42.19	49.64
SD	11.54	10.58	17.42	15.28	21.63	18.49	11.79	13.84
T	1.603	1.953	2.072	2.899				
P	0.112	0.048	0.041	0.005				

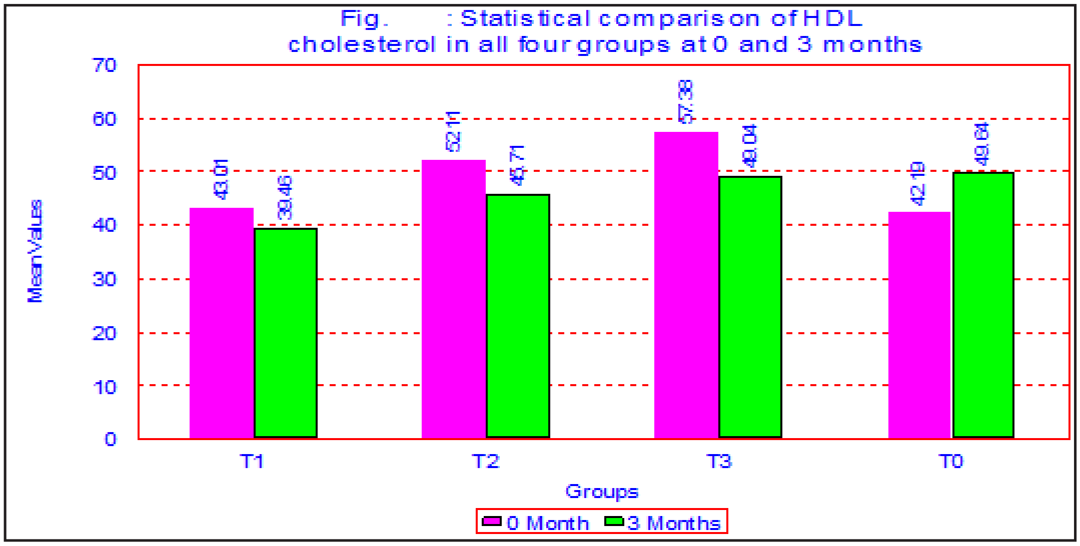

Table 3 : Statistical comparison of LDL cholesterol in all four groups at 0 and 3 months

Parameters	T1		T2		T3		T0	
	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth
Mean	159.60	149.08	125.78	116.84	130.69	116.79	101.68	114.09
SD	43.67	40.09	31.43	27.57	38.82	31.20	33.13	38.09
T	1.255	1.512	1.974	1.739				
P	0.213	0.134	0.051	0.085				

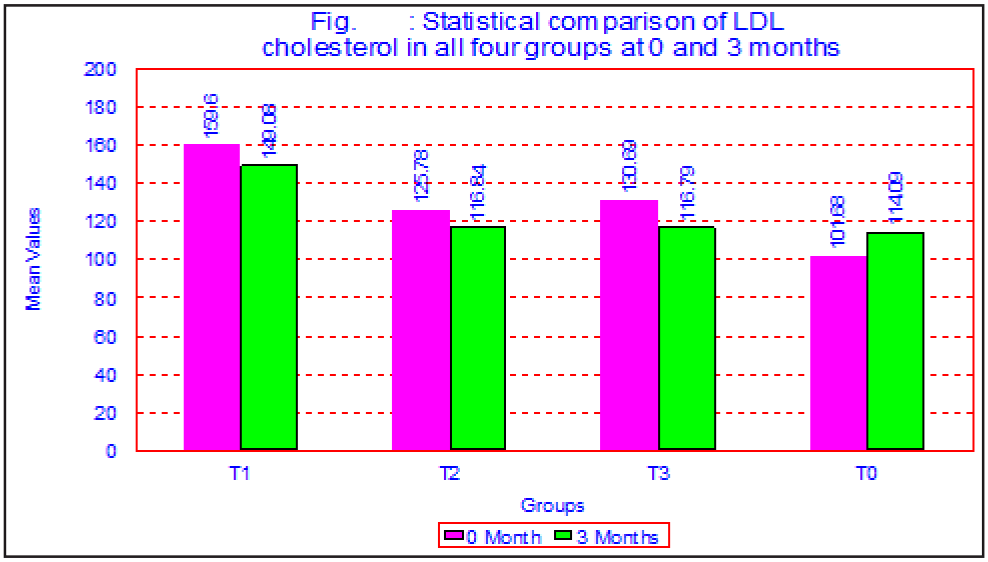

Table 4 : Statistical comparison of VLDL cholesterol in all four groups at 0 and 3 months

Parameters	T1		T2		T3		T0	
	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth
Mean	42.38	36.22	47.70	35.33	44.67	33.09	15.28	23.51
SD	13.23	11.31	26.03	19.28	26.70	19.78	7.29	11.21
T	2.502	2.699	2.464	4.351				
P	0.014	0.008	0.015	<0.001				

Fig. : Statistical comparison of VLDL cholesterol in all four groups at 0 and 3 months

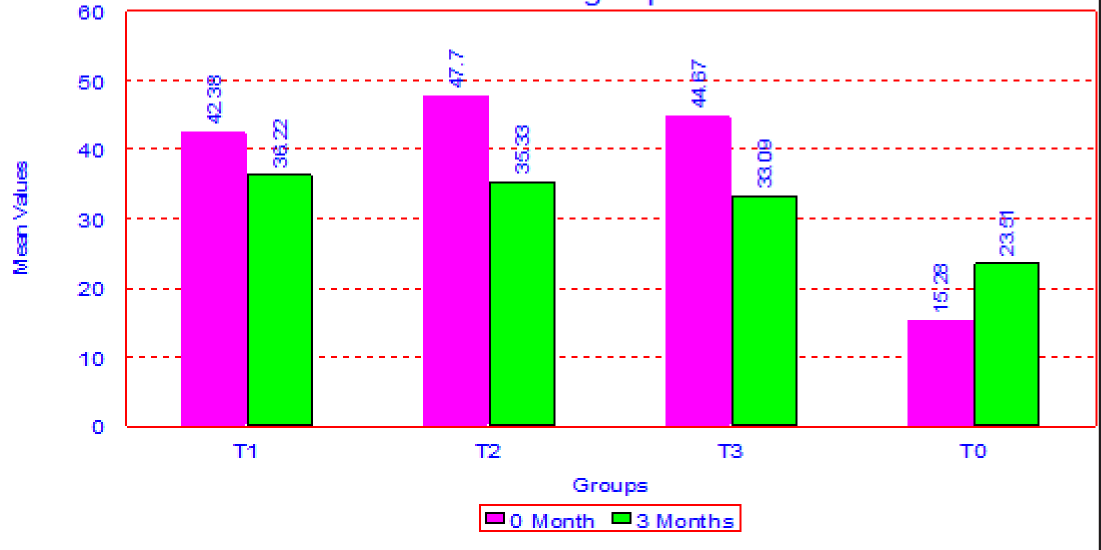

Table 5 : Statistical comparison of Triglyceride cholesterol (TG) in all four groups at 0 and 3 months

Parameters	T1		T2		T3		T0	
	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth	0 mth	3 mth
Mean	211.89	181.10	238.48	176.65	223.34	165.44	76.41	117.56
SD	66.14	56.53	130.14	96.40	133.50	98.89	36.40	56.07
t	2.502	2.699	2.464	4.351				
p	0.014	0.008	0.015	<0.001				

Fig. : Statistical comparison of triglyceride cholesterol in all four groups at 0 and 3 months

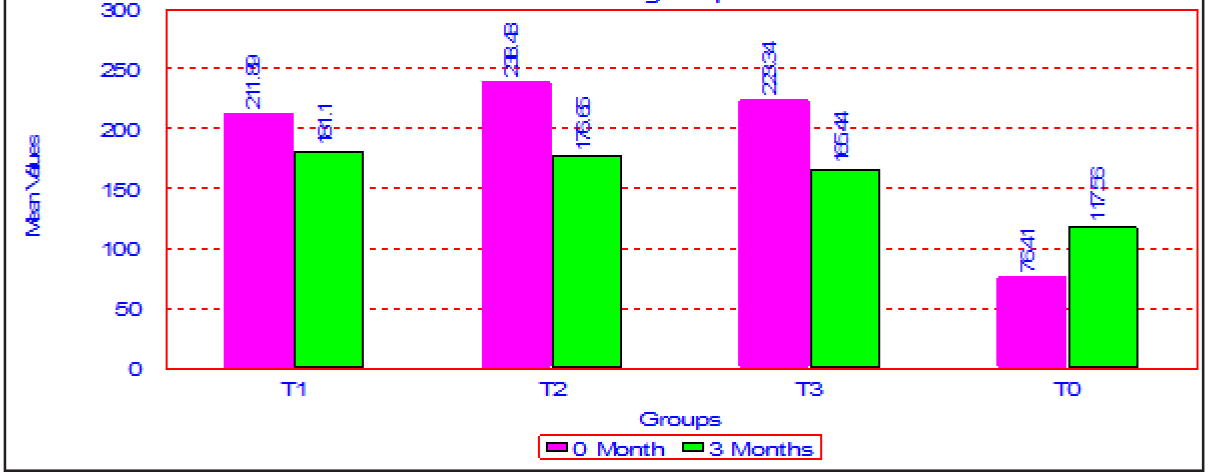

****

वर्तमान परिदृष्य में साहित्य का अवदान

डॉ. वन्दना अग्निहोत्री*

प्रस्तावना - वर्तमान समये में पूरा विश्व कोरोना जैसी महामारी से जूझ रहा है। ऐसा नही कि विश्व में किसी महामारी ने पहली बार तांडव मचाया हो। पहले भी प्लेग, हैजा, कालरा, और चेचक जैसी महामारियों ने मानव सभ्यता को आंतकित किया था। इन सभी बिमारियों के चलते साहित्य पर इनका असर हुआ और इन बिमारियों पर कई तरह का साहित्य रचा गया। अल्बेयर कामु की रचना प्लेग किसी भी महामारी पर लिखी गई सर्वाधिक चर्चित कृति रही है। भारत में भी महामारियों और उनसे उपजे दृष्य पर काफी साहित्य रचा गया, जिसने न केवल इन महामारियों के दुष्प्रभावों का वर्णन किया बल्कि इनके आगे असहाय होते मनुष्य को एक सकारात्मक संबल भी प्रदान किया।

हमेशा से विश्व की महामरियाँ वर्तमान के साथ-साथ भविष्य को भी प्रभावित करती हैं। समाज और साहित्य पर इसका सबसे अधिक असर दिखाई देता है। जब भी विश्व पर कोई संकट आता है उसकी अभिव्यक्ति साहित्य और संस्कृति दोनो में ही दिखाई देती है।

साहित्य में महामारियों के संकट पर अनेक रचनाएॅ पूर्व में लिखी गई हैं, जो उस समय की महामारी की भयानकता को बताती हैं। ये मनुष्य के अहंकार, अन्याय और नश्वरता का परिचय कराती हैं, साथ ही मनुष्य की जीजिविषा को भी स्मृति में लाती हैं कि किस तरह मनुष्य इन महामारियो से अपने को बचा लाया है।

यदि हम देखे तो ज्ञात होगा कि महामारियों की भयानकता को, उसके परिणामों को, उसकी विसंगातियो को, और सामाजिक परिवर्तनों को साहित्य ने चिन्हित किया है। यह साहित्य मनुष्य में सांत्वना, धैर्य और शक्ति प्रदान करनेवाला है। उसके दु:खो में उसे सहानुभूति प्रदान करने वाला है।

अल्जीरियाई मूल के विश्वप्रसिद्ध साहित्कार अल्बेर कामू ले अपने उपन्यास 'प्लेग' मे बताया है कि स्वार्थी महत्वाकांक्षाओ, विलासिताओ एवं पूॅजीपतियों के आग्रहो से भरी दुनिया मे किसी भी महामारी का आक्रमण कितना जानलेवा हो सकता है वह मध्यवर्गीय अभिलाषाओ को नष्ट करता हुआ जीवन के उजालो को अंधेरे मे बदल सकता है। हर किसी को पता है कि महामारियो के पास दुनियॉ में लौट आने का रास्ता होता है फिर भी न जाने क्यों हम उस चीज पर यकीन ही नहीं कर पाते है। जो नीले आसमान से हमारे सिरों पर आ गिरती हैं। जब युद्ध भड़कता है तो लोग कहते है 'ये बहुत बड़ी मूर्खता है, ज्यादा दिन नही चल पायेगा लेकिन युद्ध कितना ही मूर्खतापूर्वक क्यो न हो, ये बात उसे चलते रहने से नही रोक पाती है। मूर्खता के पास अपना रास्ता बना लेने का अभ्यास होता है जैसा कि हमे देख लेना चाहिए, अगरचे हम लोग हमेशा अपने में ही इतना लिपटे न रहे।'[1] इसमे कामू समाज में फैली सहयोग की भावना से दूर मनुष्यो की असहिष्णुता को दिखाते हैं।

'लव इन द टाईम आफ कॉलेरा' के कोलम्बियाई लेखक ग्राबिएल ग्रार्सीया मार्केस ने अपने उपन्यास में प्रेम और यातना की दास्तान बताई है जहॉ महामारी से खत्म होते जीवन के समानांतर प्रेम और जीवन को बचाने का संघर्ष एक जिद के समान दिखाई देता है।

पाकिस्तानी लेखक कवि अहमद अली के उपन्यास 'ट्वाइलाईट इन डेल्ही' उपन्यास में बताया है कि 'महामारी के शवों को दफन करने के लिए कब्र खोदने वालो की कमी हो जाती है उसके दाम बहुत अधिक बढ़ जाते है। इतने बडे पैमाने पर काम हो रहा था कि लगता था दिल्ली मुर्दो का शहर बन गया है।'[2] फकीर मोहन सेनापति जो कि ओडिया साहित्य के जनक कहे जाते है ने अपनी कहानी 'रेबती' में हैजे की भीषणता का वर्णन किया है। कन्नड कथाकार यूआर अनंतमूर्ति की रचना 'संस्कार' में मुख्य पात्र की मौत प्लेग से हो जाती है। मलयाली साहित्यकार शिवशंकर पिल्लै के उपन्यास 'थोत्तियुडे माकन' (मैला साफ करनेवाले का बेटा) में बताया है कि एक संक्रामक बीमारी में पूरा शहर किस तरह से आ जाता है।

20 वीं सदी के प्रांरभिक वर्षो में महामारी चेचक करोड़ो लोगो को अपनी चपेट में ले चुकी थी। रवीन्द्रनाथ टैगोर की कविता 'पुरातन भृत्य' मे बताया है कि मालिक की देखभाल करने में नौकर चेचक की चपेट मे आ जाता है। उन्होने 'शिशु' नाम से अलग-अलग शीषर्को वाली कविता श्रृंखला लिखी थी।

'अंतहीन पृथ्वियों के समुद्रतटो पर मिल रहे है बच्चे,
मार्गविहीन आकाश मे भटकते है तूफान, पथ विहीन,
जलधाराओं मे टूट जाते हैं जहाज, मृत्यु है निर्बंध,
और खेलते है बच्चे, अंतहीन पृथ्वियां के समुद्रतटो
पर बच्चो की चलती है एक महान बैठक।'[3]

महाकवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला ने अपनी आत्मकथा 'कुल्लीभाट' में महामारी फ्लू से हुई मौतो का वर्णन किया है 'दाह संस्कार के लिए लकडियॉ कम पड़ जाती थी, और जहॉ तक नजर जाती थी गंगा के पानी में लाशें ही लाशें दिखाई देती थी उस बीमारी ने हिमालय के पहाड़ो से लेकर बंगाल के मैदानो तक सबको अपनी चपेट में ले लिया था।'[4] उनकी रचना सरोज-स्मृति की मार्मिकता दिल दहला देती है।

'मुझ भाग्यहीन की तू सम्बल, युग वर्ष बाद जब हुई विकल
दु:ख ही जीवन की कथा रही, क्या कहूॅ आज, जो नही कही।'[5]

राजिन्दर सिंह बेदी की कहानी क्वारंटीन में महामारी से अधिक उसके बचाव के उपाय और अलग-अलग किए गए क्षेत्रो का डर है। यह विडम्बना

*विभागाध्यक्ष (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय स्ना.कन्या महाविद्यालय, इन्दौर(म.प्र.) भारत

है कि भय के कारण महामारी से अधिक मौते क्वारंटीन मे दर्ज होने से लगती है। मलेरिया का वर्णन फणीश्वनाथ रेणु ने अपने उपन्यास 'मैला ऑचल' में किया है। जिसमें ग्रामीणो की पीड़ा व्यक्त हुई है। इसी तरह 'ईदगाह' कहानी मे प्रेमचंद्र ने हैजे के बारे में बताया है। अनेक साहित्यकारो ने महामारियों का अपने साहित्य में अंकन किया है।

कोरोना का संकट विश्व में परिवर्तन का एक नया बिन्दु बन गया है। मनुष्य के जीवन पर कई रूपो में इसका असर होगा। कुछ–कुछ संकेत तो स्पष्ट रूप से दिखाई भी दे रहे हैं। यह हमारी पढ़ने लिखने की रूचि पर भी प्रभाव डालेगा। जिस पुस्तक को हम पढ़ना चाहते हैं, उसे खरीद नहीं सकते, कोई उसे मंगाकर भी नही दे सकता, आनलाईन प्लेटफार्म पर जितनी ई बुक या आडियो बुक है उनमे से ही चयन करना, पढ़ना और सुनना एक विकल्प है हमारे पास दूसरा विकल्प यह भी है कि इस लॉकडाऊन मे जो पुस्तकेे घर में उपलब्ध हैं उन्हे ही फिर से पढ़ लिया जाये। कई साहित्य प्रेमियो ने अपने अनुभव साझा कर बताया है कि उन्हे बहुत सारी पुरानी रचनाऐं याद आ रही है, जिन्हे पढ़ने का उनका मन हो रहा है। कई साहित्य प्रेमी नई–नई पुस्तको के बार में भी जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं। वे सब भी ऑनलाईन ही यह खोज कर रहे हैं।

25 मार्च 2020 से जब लॉकडाऊन प्रारम्भ हुआ और उसके बाद जब सोशल डिस्टेंसिग का दूसरा दौर शुरू हुआ तब से सोशल मीडिया में अनके साहित्यिक कार्यक्रम आयोजित किए जा रहे हैं। ताकि साहित्य प्रेमियों को मानसिक खुराक मिलती रहे क्योकि ई बुक और आडियोबुक डाउनलोड करने की सुविधा सबके पास उपलब्ध नही है।

वर्तमान परिवेश में जबकि कोरोना महामारी पूरे विश्व में फैली हुई है अधिकांश रचनाकार सोशल मीडिया के माध्यम से अपनी रचनाओं को जनता तक पहुँचाने का कार्य ऑनलाईन ही कर रहे हैं। लघुकथाऐं, कविताऐं, व्यारव्यान आदि लिखे जा रहे है। यूट्यूब, वाट्सएप और फेसबुक लाइव के माध्यम से अनेक लेखक, संगठन, व्यक्ति और प्रकाशन संस्थान लेखको से उनकी रचनाऐं और अनुभव जनता तक पहुँचा रहे हैं। वर्तमान के संशय यातना और संघर्ष की रचनाएँ आगामी समय के लिये निश्चित रूप से प्रेरणादायी रहेगी।

भारत में बहुत ही कम लोग होंगे, जिन्होने स्वंय इन महामारियों और उनके दुष्परिणामों को देखा या भुगता होगा। वर्तमान पीढ़ी के लिए यह एक मानसिक आघात से कम नही है। साहित्य से दूर इस पीढ़ी ने शायद ही कभी इस विषय से सम्बंधित पुराने साहित्य को भी पढ़ा, देखा हो, कुछ पुरानी फिल्मो से जरूर नई पीढ़ी को महामारियों के सम्बन्ध में कुछ जानकारी हो सकती है।

भौतिकतावादी उपभोग संस्कृति में पली बढ़ी इस नई पीढ़ी के लिए वर्तमान परिस्थितियॉ किसी त्रासद कैद से कम नही है। मॉल, थिएटर, होटल, शॉपिंग में खुशियॉ ढूंढ रहे इन युवाओं को अचानक घर में कैद किए जाने से उनके जीवन मे न केवल एक निर्वात बल्कि एक नकारात्मकता व डर उत्पन्न हो चुका है। सिर्फ साहित्य ही है जो मानव समाज को इन नकारात्मक परिस्थितियो व डर से उबार कर उनमें जिजीविषा को जागृत कर सकता है।

इस समय में बहुत सा सकारात्मक व मानसिक सम्बल देने वाला साहित्य रचा जा रहा है। जो मानव को इस विभीषिका से लड़ने की ताकत दे रहा है। हिन्दी साहित्य में अनेक ऐसी रचनाऐं है जो मनुष्य को ऐसी परिस्थितियों से उबारने मे सहायक हो सकती हैं।

लॉकडाऊन के दौरान लोगो ने अपने घरो मे रहते हुए समय का सदुपयोग किया व इन रचनाओ को पढ़कर वे निराशा के अंधकार से निकल पाये। मनोवैज्ञानिकों का भी मानना है कि इस दौर में यदि सकारात्मक साहित्य को पढ़ा, देखा जाये तो हमारा शरीर व उसकी प्रणाली रोगो से लड़ने मे सक्षम होती है।

न केवल साहित्य बल्कि फिल्मो ने भी इस समय में अपनी महती भूमिका निभाई है। घर मे बन्द लोगो ने इस समय अपने परिजनो के साथ उन फिल्मो का आनंद लिया जो श्रेष्ठ साहित्य पर आधारित थी। प्रेमचंद, शरतचंद्र, टैगोर, रेणु जैसे महान साहित्यकारों की रचनाओं पर बनी लघु फिल्मे भी इस दौर में दर्शको द्वारा देखी व सराही गई। इस तरह से साहित्य ने इस कठिन समय में परिवारो को निकट लाकर पारिवारिक एकता का भी महत्व स्थापित किया है।

अभी अखबार में मैने पढा कि गीतकार योगेश द्वारा रचित एक गीत इस समय में बहुत ज्यादा लोकप्रिय हो रहा है तथा यह गीत नई पीढ़ी को काली अंधेरी रात मे एक नई सुबह, एक नए प्रकाश का संदेश दे रहा है। योगेश जी का यह गीत फिल्म 'बातो बातो मे' लिया गया था वह इस प्रकार है :–

'कहाँ तक मन के अंधेरे चलेंगे
उदासी भरे दिन कभी तो टलेगें।
कभी सुख, कभी दु:ख।
यही जिंदगी है,
ये पतझड़ का मौसम घड़ी दो घड़ी है
नये फूल कल फिर डगर में खिलेंगे
उदासी भरे दिन कभी तो ढलेंगे।'[6]

सचमुच एक रचना हमें कितनी ताकत दे सकती है और सब कुछ खोने के बावजूद हम आशा कि किरण को कैसे जगाये रख सकते है, इस गीत से हमे सन्देश मिलता है। वर्तमान समय में यह कार्य साहित्य बखूबी कर सकता है।

महाकवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला एवं जयशंकर प्रसाद की ये रचनाऐं आज भी हमे निराशा से उबारने का कार्य कर रही हैं। निराला ने वन बेला में। लिखा है–

'देखा फिर कर, घिर का हँसती उपवन बेला
जीवन में भर–यह ताप–त्रास
मस्तक पर लेकर उठी अतल की अतुल सांस
ज्यो सिद्धि परम
भेद कर कर्म जीवन के दुस्तर क्लेष सुषमा
आयी उपर जैसे पार कर क्षीर–सागर'[7]

इस प्रकार का साहित्य एक नये प्रकार की प्रेरणा देता है।
प्रसादजी ने कामायनी मे लिखा है

'दु:ख की पिछली रजनी बीच
विकसता सुख का नवल प्रभात
एक परदा यह झीना नील
छिपाये है जिसमे सुख गात।'[8]

निश्चित ही दु:ख की रात्रि के पश्चात् एक नया प्रभात सुखो को लेकर आयेगा और यह पूरा विश्व एक बार पुन: नवीन उत्साह और उर्जा से भरकर जीवन जियेगा, अपने सपनो को पूर्ण करेगा अपनी मंजिल को प्राप्त करेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. प्लेग – अल्बेर कामू – नेट से उद्धृत
2. ट्वाईलाईट – अहमद अली – नेट से उद्धृत
3. शिषु – रवीन्द्रनाथ टैगोर – प्र. 15
4. कुल्ली भाट – सूर्यकातं त्रिपाठी निराला प्र. 45
5. सरोज स्मृति – सूर्यकात त्रिपाठी निराला प्र. 95
6. दैनिक भास्कर – योगेश
7. वन–बेला – निराला – निराला प्र. 185
8. कामायभी – प्रसाद – निराला प्र. 62

****

ग्रामीण महिला सशक्तिकरण एवं सूचना प्रौद्योगिकी

डॉ.पूजा तिवारी*

शोध सारांश – महिला सशक्तिकरण से आशय महिलाओं की उस क्षमता से है जिससे उनमें ये योग्यता आ जाती है, जिससे वे अपने जीवन से जुडे सभी निर्णय ले सकती है। साधारण शब्दों में महिला सशक्तिकरण का मतलब है कि महिलाओं को अपनी जिंदगी का फैसला करने की आजादी देना,या उनमें ऐसी क्षमताएं विकसित करना ताकि वे समाज में अपना सही स्थान स्थापित कर सके। विश्व को आधी आबादी महिलाओं की है तथा वे कार्यकारी घंटों में दो तिहाई का योगदान करती है, किन्तु विश्व आय का मात्र दसवां हिस्सा वे प्राप्त कर पाती है तथा उन्हें विश्व संपत्ति में सौवें हिस्से से भी कम हिस्सा प्राप्त हैं। दूसरी ओर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी संचार क्रांति के फलस्वरूप इलेक्ट्रानिक संचार सहित एक उद्योग के तौर पर एक उभरता हुआ क्षेत्र है। सूचना प्रौद्योगिकी ने पूरी धरती को एक गांव बना दिया है ,वर्तमान में सूचना क्रांति से समाज में शिक्षा ,स्वास्थ्य ,व्यापार ,प्रशासन ,सरकार ,उद्योग , ग्रामीण क्षेत्रों में कायापलट हो गया है। आज का समाज सूचना समाज कहलाने लगा है। वर्तमान में महिलाओं की संख्या रोजगार में लगातार बढ़ रही है किंतु उन्हें कम वेतन ,असंतोषजनक हालात में काम करना पड़ता है। इस शोध पत्र के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण में सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका एवं महत्व पर प्रकाश डाला जायेगा।
शब्द कुंजी – सूचना प्रौद्योगिकी ,महिला सशक्तिकरण ,ग्रामीण सामाजिक , स्वास्थ्य।

उद्देश्य :–

1. ग्रामीण क्षेत्र में निवासरत महिलाओं की वैयक्तिक ,पारिवारिक वैवाहिक दशा ज्ञात करना।
2. ग्रामीण महिला सशक्तिकरण में सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका ज्ञात करना।
3. ग्रामीण क्षेत्र में संचालित महिला विकास कार्यक्रम की जानकारी एकत्र करना।
4. ग्रामीण महिलाऐं को संचार सूचना प्रौद्योगिकी के विभिन्न साधनों की जानकारी है की नहीं।

उपकल्पना :–

1. नवीन सूचना प्रौद्योगिकी के साधनों द्वारा ग्रामीण महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक स्थिति में परिवर्तन किया जा सकता है।
2. सूचना तकनीक की सहायता से निर्धनता एवं बेरोजगारी को समाप्त किया जा सकता है।
3. जनसंख्या नियंत्रण पर विशेष बल देकर ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य में सुधार लाया जा सकता है।

समग्र एवं निर्दशन – अध्ययन का क्षेत्र छिन्दवाड़ा जिले की बिछुआ तहसील के पांच गांव में निवासरत महिलाओं पर अध्ययन केन्द्रित है। बिछुआ के ग्राम गोनी, मजियापार, जाखावाड़ी, उल्हावाड़ी एवं लोहार बतरी गांव में उद्देश्यपूर्ण निर्देशन पद्धति से 300 महिलाओं का चयन कर उनसे तथ्य संकलित किये गए है।

संकलन का स्त्रोत – मुख्य रूप से साक्षात्कार ,अनुसूची, अवलोकन द्वारा आंकड़ों का संकलन किया गया। इसके अतिरिक्त पूर्व लेख, पुस्तक, पत्र पत्रिकाऐं एवं समाचार पत्र से भी जानकारी ली गई।

विश्लेषण – जनसंचार साधनों के अन्तर्गत रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र,पत्रिकाऐं आदि शामिल है। कृषक समाज पर रेडियो का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। वर्तमान में आकाशवाणी द्वारा कृषि चर्चा तथा महिलाओं से संबंधित अनेक कार्यक्रम प्रसारित किये जाते है। रेडियो एवं टी.वी.के द्वारा ग्रामीण महिलाओं के मानसिक विचारों में सशक्तिकरण,आर्थिक सशक्तिकरण तथा सामाजिक सशक्तिकरण दिखाई दे रहा है। वर्तमान में ग्रामीण क्षेत्रों में भी साक्षर, शिक्षित महिलाओं की संख्या बहुतायत में है , अत: पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से भी ग्रामीण महिलाएं विश्व से जुड़ जाती है। जनसंचार के साधनों से उन्हें नवीन ज्ञान की प्राप्ति होती है एवं वो अद्यतन रहती है।

सारणी क्रमांक 01 : महिला सशक्तिकरण पर जनसंचार साधनों के प्रभाव के विषय में उत्तरदाताओं के विचार

	प्रभाव	संख्या	प्रतिशत
1.	महिलाओं के विचारों में परिवर्तन	84	28
2.	महिलाओं की आर्थिक स्थिति में मजबूती	36	12
3.	नवीन कृषि तकनीक का ज्ञान	42	14
4.	नवीन योजनाओं की जानकारी	33	11
5.	कृषि के प्रति सकारात्म सोच का विकास	33	11
6.	कृषि उत्पादन में निरंतर वृद्धि	33	11
7.	अन्य	39	13

इस सारणी से स्पष्ट होता है कि 28 फीसदी उत्तरदाता यह मानते है कि जनसंचार साधनों के प्रभाव के कारण महिलाओं के विचार में परिवर्तन आया है। 12 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार आर्थिक स्थिति में मजबूती आई है। 14 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार कृषकों को नवीन कृषि तकनीकी का ज्ञान प्राप्त हुआ है। 11 प्रतिशत ने यह माना कि नवीन योजनाओं की जानकारी हुई है। 11 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार कृषि के प्रति सकारात्मक सोच का विकास हुआ है। 11 प्रतिशत ने माना कि

* सह प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला -छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है तेरह प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार जनसंचार के साधनों का ग्रामीण समाज पर अन्य प्रभाव भी पडे है।

सारणी क्र. 02 : वैज्ञानिक अविष्कारों का ग्रामीण समाज पर पड़ने वाले प्रभाव

	प्रभाव	संख्या	प्रतिशत
1.	कृषि उत्पादन में वृद्धि	93	37
2.	आर्थिक निर्भरता में सहायक	69	23
3.	महिलाओं की सामाजिक प्रतिष्ठा एवं आर्थिक स्थिति में सुधार	36	12
4.	कृषि संबंधों में परिवर्तन एवं महिलाओं का आर्थिक सशक्तिकरण	60	20
5.	कृषि कार्य संस्कृति में परिवर्तन	24	08
6.	अन्य	18	06

सारणी से स्पष्ट है कि 31 प्रतिशत ने माना कि वैज्ञानिक अविष्कारों से ग्रामीण समाज में कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है। इसी प्रकार 23 उत्तरदाताओं के अनुसार आर्थिक निर्भरता उत्पन्न हुई है। 12 फीसदी के अनुसार महिलाओं की सामाजिक प्रतिष्ठा बड़ी है। 20 प्रतिशत ने माना कि कृषि संबंधों में बदलाव आया है एवं महिलाए आत्मनिर्भर हुई है ,8 फीसदी के अनुसार कृषि कार्य संस्कृति में परिवर्तन आया है तथा 6 प्रतिशत उत्तरदायित्वों के अनुसार महिलाओं पर अन्य प्रभाव भी पडे हैं।

सारांश एवं निष्कर्ष – स्वतंत्रता पश्चात् सर्वाधिक बड़ा परिवर्तन वर्तमान में देश के प्रत्येक गांव में टेलीफोन सुविधा पहुंच गई है। संचार क्रांति लाने का पूरा श्रेय पूर्व प्रधानमंत्री स्व.श्री राजीव गांधी को जाता है। संचार क्रांति आने से गांवों में भी रोजगार के संसाधन बढे हैं एवं महिलाओं को भी रोजगार मिल रहा है आज लगभग हर परिवार में मोबाइल है ,टी.वी.है ,आज लगभग प्रत्येक महिला निश्चित रूप से मोबाइल रखना चाहती है। ग्रामीण क्षेत्रों में भी सायबर कैफे खुल रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्र की महिलाएं भी अब कम्प्यूटर एवं इंटरनेट का प्रयोग कर नयी नयी जानकारियाँ प्राप्त कर रही है। इससे उनका ज्ञान बढ़ रहा है एवं उन्हें रोजगार भी मिल रहा है साथ ही उनकी शैक्षणिक एवं आर्थिक उन्नति भी हो रही है जो महिला सशक्तिकरण का परिचायक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आहुजा राम – भारतीय सामाजिक व्यवस्था – रावत पब्लिकेशन्स जयपुर
2. शर्मा सुभाष – भारतीय महिलाएं दशा एवं दिशा
3. स्वाति के. – महिला सशक्तिकरण में सूचना प्रौद्योगिकी की भूमिका (दि इन साइड)

****

कोराना काल (कोविड-19) में मानव स्वास्थ्य पर धूम्रपान (स्मोकिंग) का प्रभाव

डॉ. बसंती जैन*

शोध सारांश - कोराना नाम की महामारी शुरू हुये लगभग छह माह बीत चुके हैं। यह बीमारी कुछ इस तरह शुरू हुई की हम सभी को इसे समझने और संभलने का मौका नहीं मिला। पूरा विश्व इस बीमारी से परेशान हैं। सभी देशों में कोराना संक्रामण की रफ्तार दिनो-दिन तेजी से बढ़ती ही जा रही है। 2 - 4 मरीज से शुरू हुई बीमारी का आंकड़ा लाखों करोंड़ों में पहुँच गया हैं।

शब्द कुंजी - इम्यूनिटी, एंटीबाडी, केमिकल्स, प्लाज्मा थेरेपी।

प्रस्तावना - कोविड-19 वायरस - इस वायरस का सीधा संबंध हमारे श्वसन तंत्र से है। मानव शरीर में यह वायरस नाक, मुंह एवं आंखो के जरिये प्रवेश करता हैं। गले में रहने के पश्चात फेफड़ों की और अग्रसर होता है और मनुष्य में सर्दी-खांसी, बुखार,त्वचा पर लाल चिकते जैसे लक्षण चार-पाँच दिनों में ही दिखाई देने लगते हैं। संक्रमित मरीज को ठीक होने में लगभग 15 से 25 दिन का समय लगता है। यदि किसी व्यक्ति को डायविटीज, हाई-ब्लड प्रेशर या केंसर जैसी बीमारी पहले से हो तो उन्हें और अधिक समय ठीक होने में लगता है। अब तक इस महामारी को ठीक करने के लिए कोई निश्चित दवा नहीं बन सकी हैं। दुनिया में कई देश वेक्सीन बनाने के अंतिम चरण में पहुँच गए हैं। आक्साफोर्ड यूनिवर्सटी की वेक्सीन का इन्सानों पर पहले और दूसरे चरण का ट्रायल सफल रहा है। इस वेक्सीन का नाम है: सीएचएडीओएम्स-1 एनसीओवी-19 जब यह वेक्सीन इंसान के शरीर में जाती है तो कोशिकाएं स्पाइक-प्रोटीन पैदा करती हैं। यह इम्यून सिस्टम को कोराना वायरस की पहचान कर लड़ने की ट्रेनिंग देती है।

एंटीबाडी, हमारे इम्यून डिफेंस का ही हिस्सा है। एंटीबाडी, इम्यून सिस्टम से बने छोटे-छोटे प्रोटीन हैं जो वायरस की सतह पर चिपक कर उसे निष्क्रिय कर देते हैं, और संक्रमित व्यक्ति ठीक होने लगता है। जिन मरीजों की स्थिति गंभीर हो जाती है अर्थात फेफड़े अधिक संक्रमित हो जाते हैं उनका इलाज वर्तमान समय में प्लाज्मा थेरेपी के द्वारा भी किया जा रहा है जिसके काफी अच्छे परिणाम प्राप्त हुये हैं।

धूम्रपान का संक्रमित व्यक्ति पर प्रभाव - वर्तमान समय में युवा वर्ग का एक बड़ा भाग स्मोकिंग (धूम्रपान) करने लगा है। स्मोकिंग से मुंह, छाती एवं फेफड़ों के केंसर होने का खतरा बढ़ता है।

स्मोकिंग के निम्न कारण सामने आते हैं:-

1. मानसिक जटिलताओं से मुक्त होने के लिए
2. आर्थिक तनाव से मुक्ति पाने के लिए
3. बुरी संगति के प्रभाव में

अमेरिका के सेंटर-फार-डिसीज-कंट्रोल-एवं-प्रवेन्शन के अनुसार सिगरेट में पाये जाने वाले कुछ हानिकारक केमिकल्स इस प्रकार हैं जिनका संक्रमित व्यक्ति के फेफड़ों पर सीधा प्रभाव पड़ता है:

1. **1,3-ब्यूटाडाइन**: स्टमक, ब्लड और लिंफेटिक सिस्टम आदि के केंसर के लिए जिम्मेदार होता है।
2. **एक्रोलीन**: यह गैस फेफड़ों की उन लायनिंग्स को भी खत्म करती है, जो फेफड़ों को बीमारियों से बचाती हैं।
3. **आर्सेनिक**: यह मनुष्य में दिल की बीमारियों और केंसर के लिए जिम्मेदार है।
4. **बेन्जीन**: यह इन्सानों में केंसर खासकर ल्यूकेमिया के लिए जिम्मेदार है।
5. **केडमियम**: किडनी डेमेज करता है। यह अर्टरीज को भी नुकसान पहुंचाता है।
6. **क्रोमियम**: इसका सीधा संबंध फेफड़ों के केंसर से है।
7. **फार्मल्डीहाइड**: यह केंसर और लंग डिसीजेज के लिए जिम्मेदार है।
8. **टार**: यह सिगरेट पीने वाले लोगों के फेफड़े, दाँत और नाखूनों पर भूरे रंग के धब्बे छोड़ देता है।
9. **निकोटीन**: ये तंबाखू में पाये जाने वाला सबसे घातक केमिकल है। यह ब्लड-प्रेशर और हार्ट रेट को बढ़ाता है। अर्टरीज को पतला करता है और इन्हें कठोर भी बनाता है, जिससे दिल की बीमारियों का खतरा कई गुना बढ़ जाता है।
10. **कार्बन मोनो आक्साइड**: स्मोकिंग कराते समय कार्बन मोनो आक्साइड को व्यक्ति इन्हेल करता है। फेफड़ों में पहुँचने के बाद यह गैस हमारे ब्लड-स्ट्रीम में शामिल हो जाती है जिसके कारण लाल रक्त कणिकाएँ ठीक से आक्सीजन का प्रवाह नहीं कर पाती हैं। अर्टरीज के इनर लाइनिंग के कोलेस्ट्राल को भी यह गैस बढ़ा देती है, जिससे हार्ट अटेक का खतरा बढ़ जाता है।

यदि सिगरेट पीने वाले व्यक्तियों को कोराना होता है तो उन्हें बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है क्योंकि उनके फेफड़े उपरोक्त सभी केमिकल के दुष्प्रभाओं के कारण पहले से ही छतिग्रस्त होते हैं। सिगरेट ना पीने वालों की तुलना में, सिगरेट पीने वाले व्यक्तियों को कोराना से ठीक होने में बहुत अधिक समय लग जाता है। अत: कोराना काल में किसी को भी स्मोकिंग नहीं करना चाहिए, ताकि सभी व्यक्ति एक अनदेखे खतरे से बचे

* प्रोफेसर (रसायन शास्त्र) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

रहें और उनके फेफड़े व श्वसन–तंत्र स्वस्थ रहें।

यदि व्यक्ति को सर्दी, खाँसी या बुखार जैसे लक्षण दिखाई देने लगें तो कोविड टेस्ट सेंटर पर जाकर टेस्ट कराना चाहिए, जब तक टेस्ट का रिजल्ट नहीं आ जाता तब तक घर में ही स्वयं को अलग कमरे में आइसोलेट कर लेना चाहिए। कोराना के लिए सबसे सटीक टेस्ट ठढ–झउठ टेस्ट है।

कोराना से बचने के उपाय: इस गंभीर महामारी से बचने के लिए हमें निम्न बातों का ध्यान रखना अति आवश्यक है, विशेषकर जब हम घर से बाहर निकल रहे हों:

1. मुंह एवं नाक पर मास्क लगाना चाहिए।
2. आँखों पर चश्मा पहनना चाहिए ।
3. थोड़े अंतराल के बाद हाथों को साबुन से धोते या अल्कोहल बेस्ड सेनिटाइजर से सेनिटाइज करते रहना चाहिए।
4. सोशल एवं फिजिकल डिस्टेन्सिंग का पालन करना चाहिए।
5. अपनी दिनचर्या में गरम पेय पदार्थ जैसे काढ़ा, गरम पानी, गरम चाय या काफी एवं गरम सूप लेते रहना चाहिए।

जब तक वेक्सीन बाजार में उपलब्ध नहीं हो जाती है, तब तक उपरोक्त नियमों का पालन ही कोराना से बचने की उपयुक्त दवाई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यूरोपियन जर्नल आफ केंसर प्रवेन्शन, 21(2):182–192, 2012
2. http://quitsmoking.about.com
3. दैनिक भास्कर: सितंबर 2014
4. दैनिक भास्कर: मार्च– जुलाई 2020

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

छत्तीसगढ़ के पारंपरिक लोक गीतों का सामाजिक संदर्भ (आदिवासी अंचल के तंत्र-मंत्र गीत)

एन.आर. साव* डॉ. (श्रीमती) बसंत नाग**

प्रस्तावना - जनजातियों के व्रत-त्योहार देवी देवताओं तथा पूर्वजों के प्रति अटूट विश्वास और आस्थाएं आज भी जीवंत है। मरी-मसान, डिह-डिहवार, भूत-प्रेत, पूर्वजों को अलौकिक सत्ता से सम्पन्न मानते हैं और उसकी संतुष्टि एवं प्रसन्नता के लिए गीत नृत्य, जादू-मंत्र, टोना-टोटका, ओझाई, आदि उपक्रम अपने विश्वासों के अनुरूप करते हैं। इसके पीछे इनकी आदिम विश्वास और अधिमान्यताएं कार्य करती है।

तंत्र साधना को वाममार्गी साधना कहा जाता है, यह असाधारण एवं भयावह होती है, इनके द्वारा व्यक्ति प्रकृति में छुपी हुई शक्ति को अपने वश में करने का उपक्रम करता है। तंत्रविद्या एक साधना है, जिन्हें व्यक्ति की भलाई और विनाश दोनों रूपों में करने का प्रयास करते हैं ऐसा माना जाता है। जनमानस में कुछ भ्रांतियां फैली हुई है, जैसे :- यदि कोई साधक बिना जानकारी के तांत्रिक क्रियाओं का संपादन करते हैं तो उस साधक की मृत्यु हो जाती है। इसलिए तंत्र साधना करने वाले साधक पहले स्वयं को शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक रूप से स्वस्थ्य और शक्तिशाली बनाता है।

हिन्दू धर्म में सैकड़ों प्रकार के विद्या और साधकों का उल्लेख मिलता है। कोई भी व्यक्ति सांसारिक, आध्यात्मिक और लोगों की भलाई के लिए प्राय: साधना करते हैं। साधना मूलत: चार प्रकार के माने जाते हैं :-

(1) तंत्र साधना
(2) मंत्र साधना
(3) यंत्र साधना
(4) योग साधना

तंत्र, मंत्र और यंत्र साधना में तंत्र साधना का स्थान प्रथम है। हिन्दू धर्म के साथ-साथ बौद्ध और जैन धर्म में भी इसका प्रचलन है। सामान्यत: तंत्र का अर्थ तन से है और मंत्र का अर्थ मन से। यंत्र का संबंध वस्तु से है। तंत्र को एक व्यवस्था भी कहा गया है। तंत्र सभी के शरीर में छुपी हुई वास्तविकता है, यह शरीर के कार्यो का केन्द्रीय बिन्दू है। शरीर को स्वस्थ्य रखने के लिए जो साधना किया जाता है, उसे आध्यात्म को साधा जाता है, वह योग है। तंत्र को मूलत: शैव आगम शास्त्रों में जोड़कर देखा जाता है। लेकिन इनका मूल उद्गम अथर्व वेद है। तंत्र शास्त्र के तीन भाग हैं :-

(1) आगम तंत्र
(2) यामल तंत्र
(3) मुख्य तंत्र

आगम के अंतर्गत शैवागम, रूद्रागम और भैरवागम आते हैं। तंत्र ग्रंथ 199 है। तंत्र का विस्तार ईशा पूर्व तेरहवीं शताब्दी में भारत, चीन, तिब्बत, थाई देश, मंगोलिया, कंबोज आदि देशों में रहा है। तंत्र को तिब्बती भाषा में 'ऋगयुद' के नाम से जाना जाता है। यह 78 भागों में है जिनमें 2640 स्वतंत्र ग्रंथ है।

इन ग्रंथों में भारतीय तंत्र ग्रंथों का अनुवाद है, जिसकी कई तिब्बती तपस्वियों द्वारा रचना की गई है। तंत्र विद्या में गुहा विद्या का भी उल्लेख है जो रहस्यमयी विद्या है। इसी से सम्मोहन, त्राटक, त्रिकाल, इंद्रजाल, परा, अपरा और प्राण विद्या का जन्म हुआ है। तंत्र में वशीकरण, मोहन, विद्वेषण, उच्चाहन और स्तंम्भन क्रियाएं भी की जाती है। तंत्र के प्रथम उपदेशक भगवान शंकर और बाद में भगवान दत्तात्रेय माने गये हैं। इनके अलावा नारदमुनि, परशुराम, पिप्पलादी, वशिष्ट, सनक, शुक सन्दर, सनत कुमार, भैरव, भैरवी, काली आदि इस साधना के उपासक के रूप में समाहित है।

वैसे तो विश्वास की भाषा संस्कृत मानी जाती है किन्तु जनजाति अपने वैयक्तिक भाषा का प्रयोग करते हैं। मंत्रों के माध्यम से देवताओं को आव्हान किया जाता हैं। पूजा करने का उनकी अपनी-अपनी अलग परिपाटी प्रचलित है। इस संदर्भ में निम्नांकित विद्वानों का मत दृष्टव्य है :-

(1) **डॉ. हीरालाल शुक्ल :-** (दण्डकारण्य का सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ क्रमांक 135) जनजातियों में आज भी मंत्रों का प्रयोग किया जाता है। ये मंत्र देवी-देवताओं के आह्वान के द्वारा अनिष्ठकारी शक्तियों से बचने के लिए, सर्प तथा बिच्छू के जहर उतारने के लिए इन मंत्रों का प्रयोग किया जाता है। भारत में ब्राम्हण और बौद्ध धर्म में अनेक प्रकार के जादू या तंत्रों की क्रियाएं प्राचीन काल में जनजातियों से आई हैं। वामपंथ में शावर तंत्र विख्यात है।

(2) **डॉ. शिवकुमार तिवारी :-** (म0प्र0 की जनजातीय संस्कृति, पृष्ठ क्रमांक 240, म0प्र0 हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 1999) जनजातियों में प्रचलित मंत्र गीतों को उनके संपूर्ण गीतों से अलग देखना आवश्यक है, क्योंकि इनमें न तो तारतम्य है और न वर्णन की व्यापकता। इनके अर्थ निराला और सरल नहीं है। मंत्र इनमें अनिष्ठकारी शक्तियों से बचने एवं सर्प अथवा बिच्छू के जहर उतारने के लिए प्रचलित है।

जनजाति इन मंत्र गीतों में अटूट विश्वास करते है। इनमें प्रचलित तंत्र-मंत्र गीतों का स्वरूप इस प्रकार से है :-

(1) **जनजातियों में देवी-देवता के आह्वान मंत्र :-**

इटकी पाट, किटकी पाट
लावा पाट, लवई पाट
केंदा पाट, कदवा पाट

* सहा. प्राध्यापक (हिन्दी) भा.प्र.देव. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कांकेर (छ.ग.) भारत
** सहा. प्राध्यापक (समाज शास्त्र) भा.प्र.देव. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कांकेर (छ.ग.) भारत

तिल्ला पाट, बछाड़ा पाट
कैमूर पाट, बघेसर पाट
महरका देवी, छारपुर छत्तराही
नगर काट का झलापा देवी भवानी खड़ा हो।

-बसंत निरगुणे, आलेख (बैगा)

(2) **भूत पकड़ने पर उसके निवारण हेतु मंत्र गीत :-**

काली काली खप्परवाली चेक पर।
बैरी छाता फोर कलेजा खाकारी।।
जल बांधव, जालल बांधव जल के बाघ की दानौ।
नगर के देव ला बांधव, भूत ला बांधव।।
मरी मशान टोना, भूत बंधा जा।
मोर शरी बंधा जा मोर बांधे।।
मोर गुरू के बांधे, पारबत्ती के बांधे बंधा जा।
कीकरो आवत मा, जावत मा देत तम बुलाव तम।।
चलत मा टोन्ही के टोना झन लागे।

(3) घीव के दिया, फूल के बाती।
टोना सिखे मंगल के रानी।।
बाप चमार, महतारीन ढिमरीन।
मन सुझे, पत्थर पूजा कर परे गुरू भंडार के।।
मोर फूंके मोर गुरू महादेव, पारबत्ती के फूंके, भूत भगा जा।

गोंड जनजाति भूत भगाने के लिए अरंडी की पत्ती एवं छींद बाहरी का उपयोग करते हैं। मिर्च का धूप दिया जाता है।

(4) भूत के दबाना, हाड़ मांस के छोड़ना।
भूत भाग झरपट झंगा, भूत भाग झरपट झंगा।।
काकर फूंके मोर गुरू के फूंके।
महादेव पार्वती के फूंके।
कौन गुरू धोबिन गुरू।।
चमरिन, तेलिन तो भी तोला भेजे हे।
मोर फूंके महादेव के फूंके ते भाग जा।।

इन मंत्र गीतों को सामूहिक रूप से उच्चारित किया गया है। तत्पश्चात सिरहा के शरीर में देवता का प्रवेश हो जाता है और विशेष आवाज करके कांपने लगता है। इस प्रक्रिया को देवता आना कहा जाता है। देव का स्वागत करने हेतु धूप दिया जाता है। देवता जो सिरहा (बैगा) के शरीर में अवतरित होते हैं, वे देवता अलग-अलग नामों के हो सकते है। जैसे :- पाटदेव, बुढ़ादेव, दुर्गा मां, शंकरजी, काली मां आदि। किसी व्यक्ति को देव से अपनी बात कहनी होती है, समस्या बताना होता है तो कह सकता है।

जनजातियों में यह मान्यता है कि देव उनकी फरियाद को, उनकी मन की बात को जानकर निदान बता देता है। फरियादी की समस्या का निदान होने पर वह देवता को नारियल या बलि चढ़ाकर उनके प्रति श्रद्धा, आस्था एवं कृतज्ञता प्रकट करता है।

देवता अपना चमत्कार भी दिखाते हैं। जिस पर देवता का वास होता हैं, वह जलती आग से भी गुजर जाता है, वह लोहे की सांकल से अपने पीठ को पीट-पीट कर लहुलुहान करता है, तो कभी मुंह के आर-पार लोहे की कील चुभाता है। जब देवता को शांत करना होता है तो उसे धूपबत्ती देकर शांत किया जाता है। तत्पश्चात देवी-देवता अपने-अपने लोक लौट जाते हैं।

(5) **देवी आहवान मंत्र :-**

अजर कोठी, बजंर काया
पिण्ड हे प्राण,
लक्ष्मण जहीं रहें रखनार
सिंस सैत गुरू नैन
बारा बारी बंगला, बदिया
नाम सुरसति खड़ा हो.....

(6) **सांप के काटने पर जहर उतारने वाला मंत्र :-**

'दहऊ बांधऊ पताल बांधऊ, दहऊ लोक के ददेन बांधऊ'
जल बांधऊ, जलहरी बांधऊ
धरती बांधऊ, बामी बांधऊ
नाग बांधऊ, पर बांधऊ, पूंछ बांधऊ
जय गुरू महादेव जी।

जनजातियों में नाड़ी और काड़ी के माध्यम से दुष्टात्मा का पता लगाया है। ग्राम के गुनिया मानते हैं कि हाथ के मुख्य नाड़ी के साथ उससे लगा हुआ अन्य नाड़िया भी होती है। जिससे किसी के शरीर में प्रवेश बाहरी हवा को आसानी से पहचाना जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शुक्ल डॉ0 हीरालाल - दण्डकारण्य का सांस्कृतिक इतिहास (विश्व भारती प्रकाशन, नागपुर)
2. तिवारी डॉ0 शिवकुमार - मध्यप्रदेश की जनजाति संस्कृति (हिन्दी ग्रंथ अकादमी, मध्यप्रदेश भोपाल)
3. निरपुणे बसंत - आलेख- बैगा बिलासपुर जिले की
4. खाण्डे जानकी प्रसाद - कंवर जनजाति में प्रचलित लोकवार्ता का समाजशास्त्रीय अध्ययन (महावीर पब्लिशर्स, इंदौर)
5. नाग डॉ0 बसंत - जनजातीय लोकगीतों एवं लोकनृत्यों का समाजशास्त्रीय अध्ययन (अखण्ड पब्लिसिंग हाऊस, दिल्ली)

****

महिला सशक्तिकरण चुनौतियां और संभावनाएं

श्रीमती नीतिनिपुणा सक्सेना* श्रीमती ज्योति पांचाल मिस्त्री**

शोध सारांश – किसी भी देश की वास्तविक स्थिती का पता लगाने में उस देश की महिलाओ की स्थिति क्या है। वह विषय महत्वपुर्ण हो जाता है उनकी स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन होते रहे, यह महिला सशक्तिकरण की अवधारणा को सफल बनाने के लिए आवश्यक है एक सफल समाज के निर्माण मे महिलाओ की सुद्दढ स्थिति महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। और उनकी स्थिति को सुद्दढ बनाने के कई कारण है जो अपनी भूमिका निभाते है। जैसे आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक व विधिक। महिला सशक्तिकरण अपने आप मे एक संकल्पना भी है व आज के समय का यथार्त भी , पर यह कई विकट परिस्थितियों से झुझती रहा है, बहुत आसान हो जाता है यह कहना के महिलाओ को आगे बढ़ाया जाए, आत्मनिर्भर बनाया जाए, पर क्या यह बस कहने या लिखने मात्र से संभव है, नही। यहां अगर हम इस संकल्पना को पूर्ण रूप देना चाहते हैं तो महिलाओं की वर्तमान स्थिति को लेकर काफी सजग रहना होगा, महिलाओं के लिए आदर्श समाज का निर्माण करना होगा । क्योंकि महिला और पुरुष दोनों ही देश व्यापी गाड़ी के दो पहिए हैं अगर गाड़ी के दोनों पहिए को सशक्त नहीं बनाया जाए तो केवल एक पहिया के सहारे चलने वाली गाड़ी ज्यादा दूर तक नहीं चल सकेगी अत: देश की प्रगति उन्नति और विकास के लिए महिला रूपी पहिए के सशक्तिकरण की आवश्यकता है।

शब्द कुंजी – अपर्याप्तता, अधिकार आदर्श समाज, आत्मनिर्भर, अधिकार , समानता।

प्रस्तावना – महिला प्रकृति की अद्धितीय रचना है। पुरुष प्रधान समाज में महिलाओं की स्थिति सदैव से ही एक अध्ययन का विषय रही है ।किंतु स्वाधीनता के बाद आए राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तन जैसे महिलाओं के अधिकारों में वृद्धि शिक्षा का प्रसार, रोजगार के नए आयाम एवं अवसर, सरकार की समतावादी नीति आर्थिक उदारीकरण आदि ने पारिवारिक परिवेश को प्रभावित किया है ।परिवार के लिए उच्च जीवन स्तर की आकांक्षा, उच्च शिक्षा तथा कभी-कभी मात्र जीवन यापन के लिए महिलाओं ने घर की चारदीवारी से निकलकर कार्यालयों, प्रतिष्ठानों विद्यालय एवं अन्य अनेक प्रकार के संस्थानों में पुरुषों के साथ मिलकर कार्य करना प्रारंभ कर दिया। पुरुषों के एकाधिकार में महिलाओं का प्रवेश होने से पुरुष वर्ग में संस्कार गत प्रतिक्रिया हुई ।स्त्री को भोग्या समझने वाले पुरुष अपने समान एवं अपने ऊपर या नीचे स्त्री को कार्यकर्ता देख सहन नहीं कर पाते । जिससे स्त्री भोग वाद के संस्कार में विकृति आने लगी। जिसने महिलाओं के प्रति अशोभनीय को कार्यालयों में स्कूलों में संस्थाओं और घरों में महिलाओं के यौन उत्पीड़न की संज्ञा दी।

शोध प्रारूप व प्रविधि –

1. अध्ययन का प्रारूप– प्रस्तुत शोध पत्र में अध्ययन का प्रारूप परंपरागत विधि है जिसमे महिलाओ से सम्बन्धी पुस्तक, लेख, आलेख, समाचार पत्र इंटरनेट आदि के माध्यम से जानकारी ली गई है।

2. उपकल्पना– महिला सशक्तिकरण आज भी यर्थाथ से दूर है।

3. शोध अध्ययन का उद्देश्य– महिलाओं की स्थिति में सुधार की आवश्यकता को देखते हुए सशक्तिकरण के की संकल्पना को व्यहारिक रूप देने के समक्ष आने वाली चुनौती से अवगत कराया जाना शोध पत्र का उद्देश्य है।

विश्लेषण – महिलाओं को प्राकृतिक एवं विधिक रुप से विभिन्न अधिकार प्रदान किए गए हैं, ताकि समाज का सर्वांगीण विकास हो सके। कारण की ऐसी प्रतिभा एवं सामर्थ्य एकमात्र स्त्रियों में ही होती है जो कहीं भी और विश्व के संपूर्ण भागों में पुरुष के भाग्य और चरित्र को आधार प्रदान कर सकते हैं।

समय परिवेश तरीके भले ही बदले हूं हर युग हर काल में महिलाएं असमानता का शिकार होती रही हैं। समाज में महिलाओं को दोयम दर्जा प्राप्त है चाहे वैदिक युग या द्वापर या फिर कलयुग 'यत्र नारी पूज्यंते रमंते तत्र देवता।'जहां नारी की पूजा होती है वहां देवता निवास करते हैं इस युग में शालीनता को शिरोधार्य कर संस्कारों की बलिवेदी पर चढ़ा कर हिंसा की जाती थी मुगल काल में नारी को पैरों के जूते समझा जाता था।आज पाश्चात्य करण स्टेटस आधुनिकता के नाम पर शोषण से नहीं बचा जा सकता है।

जिस देश में सदियों से महिलाओं को विभिन्न समानता और मानवाधिकारों से वंचित रखा गया वहां कुछ ही वर्षों में चमत्कारिक बदलाव संभव नहीं है।

महिला सशक्तिकरण के नाम पर कई कानून बनाए गए जिनमें प्रमुख दहेज प्रतिषेध अधिनियम 1961 घरेलू हिंसा अधिनियम सती प्रथा निषेध अधिनियम बाल विवाह निरोधक अधिनियम स्त्रियों का संपत्ति पर अधिकार अधिनियम आदि, मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने महिला बाल विकास विभाग तथा राष्ट्रीय महिला आयोग का गठन किया एवं राष्ट्रीय महिला नीति भी बनाई कई सारे कार्यक्रम महिला एवं बाल कल्याण के लिए किए गए। किंतु सभी प्रावधानों पर ईमानदारी से क्रियान्वयन नहीं किया गया सकारात्मक उपलब्धियां अवश्य मिली हैं किंतु वह पूर्ण नहीं है अत: यह जरूरी हो गया है कि पुरुष प्रधान भारतीय समाज में महिला सशक्तिकरण

* सहायक प्राध्यापक, विधि इंस्टिट्यूट ऑफ लॉ एंड लीगल स्टडीज सेज यूनिवर्सिटी, इंदौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, विधि इंस्टिट्यूट ऑफ लॉ एंड लीगल स्टडीज सेज यूनिवर्सिटी, इंदौर (म.प्र.) भारत

को पुरुष अपने अधिकार में कटौती के रूप में ना देखें।

महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए महिलाओं के वर्तमान सामाजिक शैक्षिक मनोवैज्ञानिक आदि पक्ष ध्यान में रखते हुए उनकी समस्याओं को वास्तविकता के धरातल पर उत्तर कर निरीक्षण करना चाहिए उसके उपरांत नीतियों का निर्धारण करना चाहिए। महिलाओं को उत्साहवर्धन पारिवारिक सामाजिक प्रशासनिक वातावरण सुलभ कराया जाना चाहिए। तभी महिलाएं अपने अधिकारों एवं विकास कार्यक्रमों का भरपूर फायदा उठा पाएंगी।

व्यावहारिक समस्याएं – हमारे समाज की सरचंना ही ऐसी गुथी हुई है जिसमे पुरुष के वर्चस्व का सर्वोपरि माना गया है, घर का मुखिया स्त्री तभी हो सकती है। जब उस परिवार में कोई पुरूष हो ही ना, अन्यथा यह असंभव है की किसी परिवार में उस परिवार की स्त्री को वह सम्मान दिया जाये जो उस परिवार के पुरूष को दिया जाता है।

आज भी महिलाओं की साक्षरता दर बहुत कम है निरक्षरता के कारण या शिक्षित ना होने के कारण वहां भेदभाव शोषण अपेक्षा के दलदल में फसी हुई है।

सर्वेक्षण से यह तथ्य उभरकर सामने आया है कि शासन के जटिल प्रक्रियाओं के कारण जब पुरुषों आय जाति निवास के प्रमाण पत्र बनवाने में शासकीय कार्यालयों के चक्कर लगाने पढ़ते हैं और वे इन प्रमाणपत्रों के अभाव में योजनाओं का लाभ नहीं ले पाते हैं तब तो महिलाओं को उनका लाभ प्राप्त करना लगभग असंभव लगता है एक तो महिलाएं घर से बाहर नहीं निकल पाती हैं परीवार के अधिकतर पुरुष उन्हें कार्यालयों में जाने व महिला कार्यक्रमों का लाभ उठाने हेतु हतोत्साहित करते हैं।

महिलाओं के प्रति होने वाले यौन शोषण के अपराध, अपहरण, एवं बलात्कार के अपराध कि दर प्रति मिनट बड़ी है।

महिला कानूनों की संख्या में बहुत बढ़ोतरी हो रही है जैसे-जैसे महिलाओं की सुरक्षा के कानून बनाए जा रहे हैं वैसे वैसे महिलाओं के प्रति अपराधों का ग्राफ ऊपर बढ़ता जा रहा है राष्ट्रीय महिला आयोग के आंकड़े हकीकत को बयां करते हैं।

भारत में महिलाएं दहेज उत्पीड़न भेट चढ़ रही है महिलाओं को बेडियों में जकडने का काम घुघंट प्रथा ने बखुबी निभाया है घर की चार दिवारी से बाहर कैसे निकले घर में रहो 'परदे में रहो', 'मर्यादा में रहों' यह कथन ही नही गुलामी का सबसे बडा कारण रहा है।

आर्थिक तंगी समझोतों से संबंधित होती है तो ये समझौते सिर्फ महिलाओं के हिस्से आते है फिर चाहे वो शिक्षा से संबंधित हो या स्वास्थ से, पुरूष व घर के बच्चों को अधिक, सुविधा देने के लिए जैसे नारी सर्मर्पित है, इसलिए वह अपने अधिकारो की और गंभीरता से कोई कदम नही उठा पाती।

समान कार्य के लिए समान वेतन सुविधाएं नहीं मिल पा रही है और ना हीं परिवार में उन्हें समान अवसर व प्रोत्साहन मिल रहा है।

आज महिला दोयम दर्जे का जीवन व्यतीत कर रही है यहां उसे अधिकार और सुविधाएं कम प्राप्त है श्रम का न्यूनतम पारिश्रमिक शोषण और भेदभाव बहुत ज्यादा है।

परिवार हो या समाज चाहे आर्थिक स्तर हो या राजनैतिक कोई भी हो महिला को खुद को साबित करने के लिए कई परीक्षाओं से गुजरना होता है। हर जगह भेदभाव, असमानता को झेलना होता है।

महिलाऐं हर क्षैत्र में कुशलता से कार्य कर रही है कर सकती है परन्तु उनकी कार्यक्षमता पर अक्सर प्रश्न लगा दिये जाते है इसीलिए राजनैतिक स्तर पर महिलओं की उम्मीद्धारी अभी भी 50 प्रतिषत पर ही पहुची है।

महिलाओं की दशा सुधारने हेतु कुछ सुझाव :

1. पुरुषों के समान राजनैतिक आर्थिक अधिकार देकर सर्वागीण विकास किया जा सकता है इस हेतु शक्ति करण को व्यवहारिक रूप में अपनाना होगा।
2. सरकार द्धारा बनाई जा रही योजनाएं एवं कार्यक्रम योग्य महिलाओं तक पहुंचाने होंगे।इस हेतु महिला अधिकारियों और कर्मचारियों की नियुक्ति की जानी चाहिए।जिससे निरक्षर ,पुरुषों से भयभीत महिलाएं और बालिकाएं वास्तविक समस्याएं सामने रख सके तथा उन समस्याओं एवं आवश्यकताओं के अनुरूप नीति कार्यक्रम महिलाओं द्धारा ही बनाया जा सके।
3. पुरुष प्रधान समाज सरकार की भी यह सोच बदलने हेतु जन आंदोलन शुरु करना होगा कि वे अब विशेष अधिकारी नहीं है। महिलाओं को भी अपनी दुर्दशा सुधारने हेतु विश्वसनीयता की कसौटी पर खरे उतर चुके पुरुषों का भी मार्गदर्शन व सहयोग निसंकोच लेना चाहिए।
4. निरक्षरता महिलाओं की इस मूल दुर्दशा का कारण है इससे निपटने की शुरुआत परिवार से ही करनी होगी।परिवार में महिलाओं को शिक्षित करना होगा। तथा संकल्प लेना होगा कि एक शिक्षित एक साक्षर को एवं एक साक्षर एक निरक्षर को अनिवार्य रूप से पढ़ाई।
5. जब तक देश की आधी आबादी अशिक्षित रहेगी तब तक महिलाओं के अधिकार मात्र शोपीस ही बने रहेंगे अधिकारों का प्रयोग नहीं हो पाएगा।
6. इसके साथ ही महिला वर्ग को भी मिलने वाली स्वतंत्रता सहानुभूति एवं सहायता आदि का सदुपयोग करने हेतु वचनबद्ध होना होगा इनकी आड़ में उन्हें उत्तेजक रहन सहन भौतिकवादी ता विलासिता से दूर रहना चाहिए क्योंकि इसकी वजह से ही अधिकतर अपहरण बलात्कार जैसी दुर्घटनाएं होती है।
7. संविधान ने महिलाओं को मूल अधिकार तो दिए हैं इन मूल अधिकारों का ईमानदारी से क्रियान्वयन करना होगा तभी महिलाओं का सर्वागीण विकास सुनिश्चित किया जा सकेगा।
8. संविधान में बच्चों एवं महिलाओं हेतु विशेष प्रावधान की व्यवस्थाएं स्थापित करने की भी बात गई है।
9. महिलाओं की विधिक और सामाजिक स्थितियों के अंतर्विरोध को दूर करना होगा।
10. महिलाओं को खुद अपने आप में जागरूकता लानी होगी।
11. महिलाओं को महिलाओं का विरोधी ना हो कर सहयोगी बनना होगा।
12. महिला एवं पुरुषों दोनों की मानसिकता में परिवर्तन लाना अनिवार्य है।
13. अधिकारों एवं कर्त्तव्यों का सामंजस्य पूर्ण व्यवहार अनिवार्य है।

विधि या कानून अपराधों का निवारण कर सकती है। विधि समानता ला सकती है किंतु जन जागृति के बिना व्यावहारिक परिवर्तन संभव नहीं है इसके लिए सामाजिक संस्थानों को महिलाओं को पुरुषों को एवं शिक्षक वर्ग को जन आंदोलन के माध्यम से जागृति लानी होगी हमें अपनी मानसिकता मैं परिवर्तन करना होगा।

निष्कर्ष – पुरुष प्रधान समाज में व शासन-प्रशासन में महिलाओं हेतु मात्र कानूनी या नए अधिकारों के स्थापना से सशक्त ता नहीं हो सकती है परीवारों में भी महिलाओं के प्रति जो संकुचित दृष्टिकोण है उसको व्यापक उदार तथा व्यवहारिक बनाने की नितांत आवश्यकता है महिलाओं के पूर्ण

सशक्तिकरण के लिए सामाजिक धार्मिक आर्थिक राजनीतिक अधिकारों के साथ ही स्वतंत्रता तथा समानता को भी अपनाना पड़ेगा इसके लिए महिलाओं को निर्णय लेने नीति निर्धारण करने जैसी प्रक्रियाओं में शामिल करना होगा अब समय आ गया है कि पुरुष और महिलाएं थोपी गई परंपराओं और लिंग भेद की संकीर्ण धारणाओं से बाहर निकलकर एक दूसरे के कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़े । समानता पर आधारित पारिवारिक व्यवस्थाएं एवं सामाजिक जीवन प्रणाली विकसित करनी होगी। जिससे महिलाएं भेदभाव रहित एवं उत्साह वर्धन वातावरण में अपनी क्षमताओं को वास्तविक प्रयोग कर सकें। महिला उत्थान द्वारा समाज कल्याण हो सकेगा और देश के उन्नति हो सकेगी ।स्त्रियों की दशा में सुधार ना होने तक विश्व का कल्याण असंभव है जिस प्रकार एक पक्षी का एक पंख से उड़ना ।हमेशा यह याद रखना चाहिए कि एक नारी ही सुयोग्य और संस्कारवान संतान द्वारा पूरे राष्ट्र का निर्माण करने का श्रेय प्राप्त कर सकती है। अत: महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु अधिकारों के साथ-साथ उन्हें मानवीय व्यवहार और समान अवसर भी दिए जाने चाहिए ।महिलाएं सर्व गुण संपन्न होते हैं सभी के साथ सहयोगात्मक रवैया रखते हैं चाहे वह पति हो माता पिता भाई बहन रिश्ते नाते ।आवश्यकता केवल इस बात की है कि उनकी क्षमता तथा गुणों को पहचाना जाए और उनको सदुपयोग किया जाए विश्व की आधी आबादी का सशक्तिकरण कर लिया तो वह दिन दूर नहीं जब की विश्व की आर्थिक सामाजिक और राजनीतिक स्थिति सुधरने लगे संभवत गरीबी अत्याचार अनैतिकता भ्रष्टाचार आदि विश्व की ज्वलंत समस्याओं से छुटकारा पाने का यह संभवत: सरल उपाय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. एस. सी. त्रिपाठी, वूमेन एंड क्रिमिनल लॉ सेंट्रल लॉ पब्लिकेशन
2. डॉ. एच. ओ. अग्रवाल. मानवाधिकार
3. मान चंद्र खंडेला, आधुनिकता और महिला उत्पीड़न
4. एस.के. वाधवा, घरेलू हिंसा और यौन उत्पीड़न से महिलाओं का संरक्षण कानून
5. डॉ. आर.पी.तिवारी , डॉ. डी.पी. शुक्ला , भारतीय नारी वर्ग समस्या समाधान

****

मीडिया और बाजारवाद

डॉ. सुनीता शुक्ला *

प्रस्तावना – मीडिया और बाजार का रिश्ता बहुत नाजुक है, इस सच को मानना होगा कि मीडिया समाज का चौथा स्तम्भ होने के साथ-साथ एक व्यवसाय भी है। जीवन के हर क्षेत्र के लिए आज मीडिया महत्वपूर्ण बन गया है, जनमत को प्रभावित करने और राजनीतिक जागरूकता बढ़ाने में उसकी भूमिका सराहनीय है। व्यापारिक गतिविधियों को प्रकट करना, ग्राहक को सचेत करना, धार्मिक और सांस्कृतिक गतिविधियों पर चर्चा करना, सामाजिक परिवर्तनों पर सही दृष्टिकोण रखना और मनोरंजन को समुचित स्थान देना तथा नवीनतम वैज्ञानिक प्रगति को प्रकाश में लाना आदि अनेक ऐसे कार्य हैं जिन्होने मीडिया को महत्वपूर्ण अंग बना दिया है। मीडिया के जीवनव्यापी महत्व को देखते हुए उससे कुछ दायित्वों के निवर्हन की आशा भी की जाती है। उससे यह भी अपेक्षा है कि वह विश्वषांति और विश्वबन्धुता की भावना को प्रोत्साहित करें।

बाजारवाद के दौर का मीडिया अपनी विश्वसनीयता खो रहा है, मीडिया स्कूलों से निकलने वाले छात्र समाज-सुधार के साथ-साथ रोटी भी कमाना चाहते हैं, मीडिया का विस्तार बाजारवाद के दौर में ही सम्भव हो पाया है।

मीडिया के विस्तार से मीडिया की आजादी बढ़ी है। बाजारवाद के इस दौर में मीडिया कैसे अपनी स्वतंत्रता केवल राजनीतिक विचारधारा से नहीं, बल्कि बाजार से भी बनाये रखे ? इन सवालों के जवाब सैद्धांतिक हैं। उन्हें व्यावहारिक बनाना मौजूदा युग के मीडिया की सबसे बड़ी चुनौती है। मीडिया का प्रमुख कार्य लोकमत का निर्माण, सूचनाओं का प्रसार, भ्रष्टाचार एवं घोटालों का पर्दाफाश तथा समाज की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत करना है। मीडिया की शक्ति का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि वह कई बार जनमत का निर्माण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मीडिया के जीवनव्यापी महत्व को देखते हुए उससे यह भी अपेक्षा है कि वह विश्वशांति और विश्वबन्धुता की भावना को प्रोत्साहित करें।

अठाहरवीं सदी के प्रारम्भ में अखबार में पहली बार पैसे देकर विज्ञापन छपा था। यह एक क्रांतिकारी युग का आरम्भ था, जहाँ धींरे-धींरे छपाई के खर्च की चिन्ता खत्म होने लगी थी। पत्रकार अब केवल अपने उद्देश्य की चिन्ता कर सकते थे। जन-जन तक पहुँचने का जरिया मिल चुका था। आने वाले दशकों में मीडिया का स्वरूप ज्यों-ज्यों बदला, विज्ञापन भी रंग-रूप बदल-बदल कर ढलता गया। बाजार का विस्तार हुआ, बाजारवाद का जन्म हुआ।

आज का मीडिया हमारे समाज को नया आकर प्रदान करने तथा इसको मजबूत बनाने में अपनी एक सशक्त एवं महत्वूपर्ण भूमिका निभा रहा है। आज हम मीडिया के द्वारा देश के किसी कोने में बैठकर दुनिया के किसी कोने में घटित हुई घटना को देख सकते, सुन सकते हैं। इसके साथ ही सोषल मीडिया भी हमें हर तरह की खबरों से अवगत कराता है।

पहले लोग अपने से दूर रह रहे मित्रों एवं रिश्तेदारों से बात करने के लिए टेलीग्राम, पत्र, लेखन आदि का सहारा लेते थे जिससे काफी समय लगता था, परन्तु आज फेसबुक, व्हाट्सएप, टि्वटर, इंस्टाग्राम, यू-टयूब आदि जैसे सोशल मीडिया का प्रयोग बड़ी आसनी से एक दूसरे से बातचीत करने में करते है। हम वीडियो कान्फ्रेसिंग के द्वारा अपने रिश्तेदारों, मित्रो जो विदेशों में है, उन्हें देखकर बात कर सकते है।

आधुनिकीकरण के साथ ही औद्योगिक क्षेत्र में भी मीडिया ने एक क्रांति ला दी है। आज मीडिया विज्ञापन का एक ऐसा सरल माध्यम बन गया है जिसके द्वारा कोई भी व्यापारी या कम्पनी अपने द्वारा उत्पादित किए गए किसी नए उत्पादन को टेलीविजन तथा सोशल मीडिया का प्रयोग करके, आज जनमानस बड़ी ही सहजता से बात कर सकती हैं तथा उसके प्रयोग के लिए लोगों को उत्सुक कर सकती है और अधिक से अधिक कमा सकती है।

समाज में मीडिया की भूमिका सूचनाप्रद एवं शिक्षाप्रद दोनों पहलुओं में अत्यंत महत्वपूर्ण होती है, जो कि जनसहभागिता को बढ़ाने हेतु लोकतांत्रिक शासन-व्यवस्था को प्रभावी व कुशलता प्रदान करने में सहायक सिद्ध होती है। पूर्वाग्रहों से मुक्त समाज की समस्याओं पर राय विश्लेषण करके एवं संतुलित चेतना का विकास करते हुए मीडिया का कार्य अत्यंत जिम्मेदारी से भरा है। मीडिया का और भी वह कार्य है जिसमें निर्धन, शोषित व दबे कुचले लोगों की सशक्त आवाज उठाना एवं उनके हितार्थ, व्यवस्था को सोचने के लिए विवश करना, आदि महत्वपूर्ण है। इस प्रकार नीति निर्धारण में जन सहभागिता के लिए जनता एवं नीति निर्धारकों के बीच मीडिया एक सेतु का कार्य करता है।

टीआरपी एक ऐसा शब्द है, जिसका उपयोग धड़ल्ले से होता है, पर यह है बेहद गढ़ व्यवसाय की बारीकियों में न जाते हुए आसान शब्दों में समझें तो किसी चैनल को कितने लोग देख रहे हैं, यह टीआरपी से पता चलता है। किसी भी शो की टीआरपी तय करती है कि वह सफल है या नहीं जैसे कभी एक्शन फिल्मों का दौर आता है और कभी रोमांटिक फिल्मों का, उसी तरह कभी लोग अजब-गजब न्यूज के शो अधिक देखते हैं, कभी पॉलिटिकल डिबेट, इसमें कोई दो राय नहीं कि हर टीवी न्यूज चैनल टीआरपी को महत्व देता है क्योंकि एडवर्टाइजर्स चैनल की साख को इन्हीं अंको से मापते हैं। अत: रेवेन्यू चाहिए तो टीआरपी बढ़ाना जरूरी है और टीआरपी बढ़ानी है तो वह दिखाना होगा, जो लोग देखना चाहते हैं। इस नजरिये से देखने पर बाजारवाद का अक्स दिखने लगता है।

दरअसल भुग बाजारवाद का है, तो जहाँ जरूरत दिन-रात दिखने की भी है वहीं 24x7 की इस दुनिया में हर एक मिनट कुछ अलग दिखाने का

* प्राध्यापक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

दबाव है। कई समय जब राजनीतिक घटनाक्रम शून्य बंटे सन्नाटा होते है जब कुछ इतना बड़ा नहीं से रहा होता, जिसमें लोगों की दिलचस्पी होगी तब नमूने खबरों की तलाश की जाती है। मुश्किल तब खड़ी होती है जब खबर को खास बनाया जाती है। खबर को सनसनी की श्रेणी में डाला जाता है। मीडिया को बाजारवाद में युग में इससे बचने की जरूरत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मीडिया और बाजार वर्तिका नंदा, पृ. 176
2. समाज शास्त्रीय निबंध- डॉ0 माधवीलता दुबे, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल

****

भारत में बढ़ती जनसंख्या एवं उसका आर्थिक प्रभाव

डॉ. ए. के. पाण्डेय*

प्रस्तावना – भारत उन चुनिंदा देशों में से एक है जो प्राकृतिक तथा मानवीय संसाधनों से समृद्ध तथा सम्पन्न है। भारत का क्षेत्रफल विश्व के क्षेत्रफल का 2.4 प्रतिशत है किंतु यहां विश्व की 17.5 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। भारत में सन् 1872 में पहली बार जनगणना की गई थी लेकिन जनसंख्या की क्रमवार गणना का कार्य सन् 1881 से किया जा रहा है।

सन् 1891 में भारत की कुल जनसंख्या 23.6 करोड़ थी जो मार्च 2011 में बढ़कर 121.02 करोड़ हो गई। जिसमें 62.37 करोड़ पुरूष तथा 58.65 करोड़ महिलाएं हैं। देश की जनसंख्या चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। किन्तु 2030 में भारत चीन को पीछे छोड़ते हुए विश्व में सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश हो जायेगा। संयुक्त राष्ट्र संघ के जनसंख्या अनुमान के अनुसार, 2030 में चीन की जनसंख्या 144 करोड़ तथा भारत की जनसंख्या 144.9 करोड़ होने की संभावना है। सन् 2050 में भारत की जनसंख्या 159.3 करोड़ हो जाने का अनुमान लगाया गया है। जबकि चीन की जनसंख्या उस समय 139.2 करोड़ होगी।

भारत की जनसंख्या की प्रकृति को परिणात्मक तथा गुणात्मक दो रूपों में देखा जा सकता है। परिणात्मक प्रवृत्ति के अंतर्गत मुख्य रूप से जनसंख्या वृद्धि की प्रवृत्ति, प्रतिशत वार्षिक वृद्धि, दष्कीय वृद्धि, महिला एवं पुरूष अनुपात तथा ग्रामीण व शहरी जनसंख्या का प्रतिशत आदि को सम्मिलित किया गया है।

तालिका 1 – भारत की जनसंख्या की परिमाणात्मक प्रवृत्ति

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)	दशक में परिवर्तन (करोड़ में)	स्त्री/पुरूषअनुपात (प्रति हजार पुरूषों पर महिलाएं)
1901	23.84	--	972
1911	25.21	1.37	964
1921	25.13	-.08	955
1931	27.90	2.77	950
1941	31.87	3.97	945
1951	36.11	4.24	946
1961	43.92	7.81	941
1971	54.82	10.90	930
1981	68.33	13.57	934
1991	84.64	16.30	927
2001	102.87	18.23	933
2011	121.02	18.15	940

स्त्रोत :– भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रतियोगिता दर्पण, 2013

उक्त सारिणी से स्पष्ट है कि 1901 से 2011 तक लगातार जनसंख्या में वृद्धि हुई है। मात्र 1921 में जनसंख्या 08 करोड़ की गिरावट दर्ज की गई है। 2001 की तुलना में 2011 में जनसंख्या में मामूली गिरावट दर्ज की गई जिसमें औसत वार्षिक घातांक 1.95 (2001) की तुलना मं 1.64 (2011) रहा है।

जनगणना के महापंजीयक की एक अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार, देश में कुल प्रजनन दर (TFR) में 0.1 प्रतिशत बिंदु की कमी 2010 में हुई थी। वर्ष 2008 व 2009 में यह दर 2.6 पर बनी हुई है। जो 2010 में 2.5 रही है। इससे पूर्व वर्ष 2000 में देश में कुल प्रजनन दर 3.2 थी। इस प्रकार 2000 से 2010 की अवधि में देश में कुल प्रजनन दर में 19 प्रतिशत की गिरावट दर्ज की गई। रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इंडिया की सिम्पल रजिस्ट्रेषन सिस्टम (SRS) रिपोर्ट में कहा गया है कि शैक्षणिक स्तर व कुल प्रजनन दर में स्पष्ट संबंध है।

वर्ष 2010 में निरक्षर महिलाओं में कुल प्रजनन दर जहां 3.4 पाई गई थी वहीं साक्षर महिलाओं में यह 2.2 ही रही है। जनसंख्या वृद्धि का वितरण देश के सभी प्रदेशों में भिन्न-भिन्न है। देश के 5-6 बड़े प्रदेशों में जनसंख्या वृद्धि उच्चतम शिखर पर रही है।

सर्वोच्च प्रजनन पद वाले राज्य एवं न्यूनतम प्रजनन दर वाले राज्यों की स्थिति निम्न सारिणी 2 प्रदर्शित है –

तालिका 2 – (अगले पृष्ठ पर देखे)

देश में कुल प्रजनन दर को 2010 तक रिप्लेसमेंट लेबल 2.1 तक लाने का लक्ष्य राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 में निर्धारित किया गया था। रजिस्ट्रार जनरल ऑफ इंडिया की रिपोर्ट के अनुसार, 35 राज्यों में से केवल 10 राज्यों में ही इस लक्ष्य को प्राप्त किया जा सका है। जिनमें औसत कुल प्रजनन दर 1.83 प्रतिशत रहा है। इन राज्यों में देश की कुल जनसंख्या का 42.91 प्रतिशत हिस्सा निवास करता है।

किंतु चिंता की बात यह है कि 10 बड़े राज्यों में जहां देश की कुल जनसंख्या का 54.63 प्रतिशत भाग निवास करता है वहां औसत कुल प्रजनन दर 2.6 है। इससे स्पष्ट होता है कि जनसंख्या की आंतरिक संरचना में चिंताजनक विसंगति है।

देश की कुल जनसंख्या की वृद्धि दर में 1971 से दशक वृद्धि दर से गिरावट दर्ज की गई है। किन्तु कुल जनसंख्या में निरंतर तेजी से वृद्धि हो रही है। क्योंकि कुल जनसंख्या का 51 प्रतिशत भाग जनन आयु वर्ग (15-49) का है। इसलिए इस जनसंख्या में प्रतिवर्ष लाखों लोग और बढ़ जाते हैं। देश में प्रतिवर्ष 260 लाख बच्चे पैदा होते हैं। केवल 53 प्रतिशत दम्पत्ति ही गर्भ निरोधक उपायों का उपयोग करते है। देश में शिशु मृत्यु दर बहुत अधिक है। शिशु मृत्यु दर के अधिक होने का कारण बच्चों के प्रति असुरक्षा भी

* प्राध्यापक/विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

मध्यम एवं निम्न मध्यम वर्ग में जनसंख्या में वृद्धि का कारण रही है।

जनसंख्या का आर्थिक विकास पर प्रभाव – जनसंख्या को प्राय: लोगों की बढ़ती हुई संख्या की समस्या के रूप में देखा जाता है। किन्तु यह विकास की समस्या भी है। बढ़ती हुई जनसंख्या केवल सामाजिक और आर्थिक विकास के आभाव का सूचक ही नहीं वरन् यह धारणीय विकास को भी प्रभावित करती है।

देश में पिछले कुछ वर्षो से योजना निर्माण में धारणीय विकास की आवधारणा एवं आवश्यकता पर जो दिया जा रहा है। धारणीय विकास तभी प्राप्त किया जा सकता है जबकि उसके प्रमुख घटकों जैसे, शिक्षा स्वास्थ्य, प्रतिव्यक्ति आय में वृद्धि, गतिशील सामाजिक ढांचा, एवं स्वास्थ्य के प्रति जीवन संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति जथा जनसंख्या संसाधन की गुणवत्ता आदि मानक स्तर तक विकसित हो।

देश में जनसंख्या संसाधन आर्थिक विकास को दो प्रकार से प्रभावित करती है, एक तो सकारात्मक रूप में जिसके अंतर्गत विश्व में सबसे युवा राष्ट्र के रूप में 50 करोड़ युवाओं की उपस्थिति, एक समृद्ध बाजार, तकनीकी उन्नतशीलता तथा भारतीयों का कौशल जो कि विश्वभर में अपनी छाप छोड़ने में सफल रहा है। जिसके कारण भारत विश्व की पांचवीं बड़ी अर्थव्यवस्था की दिशा में आगे बढ़ा है। वही दूसरी ओर जनसंख्या धारणीय विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने में सबसे बड़ी बाधा है। वर्तमान में जनसंख्या की अनियंत्रित विकास दर देश को आर्थिक एवं सामाजिक रूप से अनेक अनपेंक्षित समस्याओं से ग्रसित कर रही है। तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या के कारण खाद्यान्न की अत्यधिक आवश्यकता खाद्यान्न संकटके रूप में मौजूद है। तथा यह पेयजल की उपलब्धता, पर्याप्त आवासकी कमी, स्वास्थ्य, शिक्षा एवं सामाजिक कल्याण जैसी बुनियादी आवश्यकताओं पर भी प्रश्न चिन्ह लगा रही है। देश की एक तिहाई आबादी जीवन की समुचित सुविधाओं एवं आवश्यकताओं से भी वंचित है। जिसका मुख्य कारण तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या है।

जनसंख्या वृद्धि का सबसे अधिक दुष्परिणाम जनसंख्या के संरचनात्मक बनावट पर पड़ता है। क्योंकि जनसंख्या वृद्धि मध्य एवं निम्न वर्ग से अधिक हो रही है। जिससे गुणवत्ता विहीन जनसंख्या अधिक होती जा रही है। और भविष्य में इनका प्रतिशत और अधिक होने संभावना है जो सबसे अधिक चिंता का विषय है। कम उम्र में विवाह एवं 20 वर्ष की आयु से पहले गर्भ धारण करना माँ और बच्चे दोनों के जीवन के लिए जोखम को बढ़ा देता है। निम्न और मध्यम वर्ग में सामाजिक दबाव के कारण भी अधिक बच्चे पैदा करने एवं बच्चों के जन्म मं पर्याप्त अंतर न होने के कारण यह माँ और बच्चे दोनों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल डालता पड़ता है। इससे जन्म, मृत्यु और बुरे स्वास्थ्य का दोषपूर्ण चक्र प्रारंभ हो जाता है। तथा यह दोषपूर्ण चक्र समस्त विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि जनसंख्या जहां एक तरफ कुषल मानव संसाधन के रूप में आर्थिक एवं सामाजिक विकास का मूल आधार हैं वहीं दूसरी ओर अनियंत्रित एवं अनपेंक्षित जनसंख्या आर्थिक विकास में सबसे बड़ी बाधक भी हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

तालिका 2

सर्वोच्च प्रजनन दर वाले राज्य			न्यूनतम प्रजनन दर वाले राज्यों		
राज्य	**कुल प्रजनन दर**	**कुल जनसंख्या में राज्य का प्रतिशत**	**राज्य**	**कुल प्रजनन दर**	**कुल जनसंख्या में राज्य का प्रतिशत**
बिहार	3.7	8.58	तामिलनांडु	1.7	5.96
उत्तर प्रदेश	3.5	16.49	पं. बंगाल	1.7	7.55
मध्यप्रदेश	3.2	-6.00	आंध्र प्रदेश	1.7	7.00
राजस्थान	3.1	-5.67	हिमांचल प्रदेश	1.8	2.76
झारखंड	3.0	2.72	केरल	1.8	0.57
छत्तीसगढ़	2.8	2.11	पंजाब	1.8	2.29
असम	2.5	2.58	महाराष्ट्र	1.9	9.29
गुजरात	2.5	4.99	दिल्ली	1.9	1.38
हरियाणा	2.3	2.02	जम्मू कश्मीर	2.0	1.04
ओडिशा	2.3	3.47	कर्नाटक	2.0	5.05
औसत	**2.6**	**54.63**	**औसत**	**1.83**	**42.91**

स्त्रोत :- भारतीय अर्थव्यवस्था, प्रतियोगिता दर्पण, 2013

****

जनजातियों का भौगोलिक विवरण

डॉ. डी.पी. शार्मे *

प्रस्तावना – आधुनिक वैज्ञानिक चकाचौंध से अनभिज्ञ बहुत सारी जातियों के लोग विश्व में निवास करतें हैं, जो अपने आदिम कालीन परम्परागत सभ्यता व संस्कृति को अपना कर जीवन-यापन कर रहे हैं। जनजातीय समाज के लोग संसार में ऐसे दुर्गम, बीहड़ जंगलों में निवास करते हैं; जहॉ आधुनिकता से बिल्कुल स्पर्श नहीं है। अभाव में प्रकृति पर पूरी तरह निर्भर जनजातीय वर्ग विकट परिस्थिति वाले ऐसे दुर्गम स्थलों में निवास करते हैं, जहॉ जीवन जीना सरल नहीं है कठोर से कठोर श्रम के बावजूद दो जून का भोजन जुटाना मुश्किल का काम रहता है। फटेहाल नंगे पैर वस्त्रों के रूप में लगोटी वृक्षों के पत्ते अथवा छालों से अपना तन ढकते हैं। जानवरों के शिकार के लिए पत्थरों का हथियार तथा तीर कमानों का प्रयोग करते हैं। विश्व के ऐसे स्थल जो बहुत ही बिकट व बीहड़ स्थान हैं, जहॉ की जलवायु जीवन यापन के लिए अनुकूल नहीं है, विशुवत रेखीय क्षेत्र जहॉ सालभर वर्षा होने के कारण जमीन दलदली बनी रहती है। औसत वर्षा दो सौ सेण्टीमीटर से भी अधिक है दूसरी तरफ मरूस्थली क्षेत्र जहॉ भीषण रूप से गर्म वातावरण बना रहता है। धरती पूरी तरह तपती है। ध्रुवीय हिमाच्छादित प्रदेश जहॉ जीवन बिकट स्थिति में जीते हैं, ऐसे ही स्थलों में जनजातीय जनजीवन निवास करती है।

जनजाति का अर्थ– जनजाति का अर्थ सदैव ही विषय सापेक्ष रहा है – उदाहरणार्थ प्राणी विज्ञान में ट्राइब एक कुटुम्ब का बोधक है तो राजनीति शास्त्र में विकसित या अविकसित मानव समाज का मृशास्त्र और समाजशास्त्र में भी जनजाति देशकाल परक होने से नहीं बच पाता। उदाहरण के लिए यूरोप में जनजातियों का लगभग अभाव केवल टोंडा प्रदेश में ही थोड़े से लोग जनजातीय श्रेणी के हैं यही स्थिति श्वेत प्रजाति के लोगों की है। जबकि पूरी की पूरी कृष्ण प्रजाति या अफ्रीका में सहारा के दक्षिण में रहने वाले सभी समाजों को जनजातीय मानने की परम्परा है।

वर्तमान वैज्ञानिक चकाचौंध से अनभिज्ञ बहुत सारी जातियों के लोग विश्व में निवास करती हैं, जो अपने आदिम काल सभ्यता एवं संस्कृति के साथ जीवन यापन कर रही हैं। पृथ्वी पर ऐसे स्थल हैं, जहॉ इनका निवास क्षेत्र है। कठिन परिस्थितिकीय वाले प्रदेश हैं। कठिन परिश्रम के बाद भी भोजन जुटाना संभव नहीं वस्त्रों के रूप में लंगोटी वह भी वृक्षों की छाल, पत्तों या जंगली जानवरों के खाल से बनी हुई।

पत्थरों के औजार तथा तीर कमानों के साथ मृगया में तल्लीन लोग घने वनों दल-दलों हिमाच्छादित प्रदेश व तपते हुये मरुस्थलीय जगहों में निवास कर रहे हैं।विश्व की प्रमुख जनजातियॉ एक्सिमों, जो टुण्ड्रा प्रदेश में निवास करती हैं। लेप्स इण्डोनेशिया में, समायोड़ी साइबेरिया में, पिग्नी विषुवतरेखीय क्षेत्र में जहॉ मुसलाधार वर्षा होती है। बुशमैन और बद्दू सहारा और कालाहारी मरुस्थलों में निवास करती हैं। खिरगीज, कालमुख, पर्वतीय क्षेत्रों में निवास करती हैं। मंगोल शीतल मरुस्थल में निवास करते हैं। भारतीय जनजातियों का विवरण निवासरत क्षेत्र अधिकांश घाटी पहाड़ी घने जंगलों के मध्य हैं।

भारतीय जनजातिया – भारतीय जनजातियों को तीन प्रजातीय वर्ग में मानते हैं – 1. नीग्रिटो, 2. प्रोटो अस्ट्रेलायड, 3. मंगोलायड।

जनजातीय लोग आदिम धर्म को मानते हैं जिसमें भूतों तथा आत्माओं की पूजा का महत्वपूर्ण स्थान है। जनजातीय व्यवसायों को अपनातें है जैसे वन उपज का संग्रह वस्तुओं का संग्रह इनकी खाना बदोसी आदतें होती है। जो मदिरा के प्रति विशेष रूचि रखते हैं ये सभ्य जगत् से दूर पर्वतों तथा जंगलों में दुर्गम स्थानों में निवास करते हैं।

भारतीय जनजातियों का वर्गीकरण – 'मदन एवं मजूमदार' ने भी गुहा के ही विवरण आधार को स्वीकार करते हुए जनजातियों को तीन ही भागों में वितरित किया है।

1. **उत्तर एवं उत्तर-पश्चिम क्षेत्र –** इस क्षेत्र के पश्चिम की ओर शिमला व लेह हैं तथा पूर्व की ओर लुसाई पर्वत और मिशमी मार्ग हैं। इस क्षेत्र में जनजाति समुदाय पूर्वी काश्मीरप्रदेश, असम व सिक्किम में पाये जाते हैं इस क्षेत्र की मुख्य जनजातियॉ राभां, खासी, अका, डफला, मिरी, अपातानी, नागा, कुकी, लुसाई, लेपचा, गारो, गैलोंग, जौनसारी, लरवेरी, कर्णफूली, थारू, गुज्जर व लम्बा हैं।
2. **मध्यवर्ती क्षेत्र –** इस क्षेत्र के अन्तर्गत बिहार, बंगाल, दक्षिणी उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश, दक्षिणी राजस्थान, उत्तरी महाराष्ट्र एवं उड़ीसा आते हैं। इस क्षेत्र की प्रमुख जनजातियॉ संथाल, मुण्डा, उरॉव, हो, खोड़, भूमिज, लाधा, कोरा, गोड़, बैगा, भील, मीना, दामर आदि हैं।
3. **दक्षिण क्षेत्र –** इस क्षेत्र के मुख्य जनजातीय प्रदेश हैदराबाद, मैसूर, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु और कोचीन हैं। अनेक जनजातियॉ अण्डमान-निकोबार द्वीप समूहों में निवास करती हैं। इस क्षेत्र की प्रमुख जनजातियॉ चे-चु, इरूला, पनियन, कादार, टोडा, टोटा तथा पुलयन आदि हैं।

- श्यामाचरण दुबे 1960 ने चार क्षेत्रीय विभाजन किये हैं –

1. उत्तर पूर्वी क्षेत्र 2. मध्यवर्ती क्षेत्र 3. दक्षिणी क्षेत्र 4. पश्चिमी क्षेत्र

इसमें तीन तो गुहा के ही समान हैं पर चौथे के अन्तर्गत मध्यवर्ती क्षेत्र से राजस्थान और महाराष्ट्र एवं गुजरात के सह्चाद्रि समूह के जनजातियों का क्षेत्र पश्चिमी क्षेत्र माना गया है।

- योगेश अटल 1965 ने भी इसे निम्नलिखित चार क्षेत्रों में बांटा है।

1. उत्तरी एवं उत्तर पूर्वी क्षेत्र 2. पश्चिमी एवं उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र
3. मध्यवर्ती क्षेत्र 4. दक्षिणी क्षेत्र

- बी0के0 राय वर्मन 1971 ने विभिन्न भारतीय क्षेत्रों में रहने वाले

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय महाविद्यालय, पुष्पराजगढ़, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत

जनजातीय समूहों के ऐतिहासिक एवं समाज-सांस्कृतिक संबंधों को ध्यान में रखते हुए निम्नांकित पांच भागों में विभक्त किया है-

1. **उत्तरपूर्वी भाग -** इसके अन्तर्गत असम, मेघालय, नागालैण्ड, मणिपुर, अरुणाचल प्रदेश, मिजोरम एवं त्रिपुरा आते हैं।

2. **उत्तर और उत्तर-पूर्वी का उप हिमालयी क्षेत्र -** इसके अन्तर्गत उत्तरी उत्तर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्र एवं हिमालय प्रदेश आते हैं।

3. **मध्य एवं पूर्वी भारत -** इसमें पश्चिमी बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश तथा आन्ध्रप्रदेश को शामिल किया गया है।

4. **दक्षिणी भारत -** इसके अन्तर्गत तमिलनाडु, केरल एवं कर्नाटक रखे गये हैं।

5. **पश्चिमी भारत -** यह राजस्थान, गुजरात एवं महाराष्ट्र को मिलाकर माना गया क्षेत्र है।

ऊपर दिये गये वर्गीकरणों को पुनः संवारते हुए ललिता प्रसाद विद्यार्थी ने 1976 में एक नया वर्गीकरण प्रस्तुत किया। इसमें उन्होंने चार प्रधान क्षेत्र चुने एवं द्वीप समूहों का एक अलग क्षेत्र माना है। इसके पूर्व किन्हीं विद्वानों का ध्यान इस ओर नहीं गया था। विद्यार्थी द्वारा वर्गीकृत क्षेत्र निम्नांकित हैं -

1. **हिमाचल क्षेत्र -** इसके अन्तर्गत उन्होंने तीन उपक्षेत्र मानें हैं -

क. उत्तर पूर्वी हिमालय क्षेत्र

ख. मध्यवर्ती हिमालय क्षेत्र और

ग. उत्तर-पश्चिमी हिमालय क्षेत्र।

उत्तरपूर्वी हिमालय क्षेत्र के अन्तर्गत उन्होंने असम, मेघालय, पश्चिमी बंगाल का पहाड़ी क्षेत्र दार्जलिंग अरुणाचल प्रदेश, नागालैण्ड, मणिपुर, मिजोरम एवं त्रिपुरा रखा है। मध्यवर्ती हिमांचल क्षेत्र में उत्तर प्रदेश एवं बिहार के तराई क्षेत्रों को शामिल किया गया है। उत्तर-पश्चिमी हिमांचल क्षेत्र, हिमांचल प्रदेश, जम्मू एवं काश्मीर को मिलाकर बनाया गया है। इस क्षेत्र की जनजातीय जनसंख्या 12.33 प्रतिशत है।

2. **मध्य भारतीय क्षेत्र -** यह क्षेत्र बिहार, पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा तथा मध्यप्रदेश का सम्मिलित क्षेत्र है। इस क्षेत्र में जनजातियों की सर्वाधिक आबादी 55.4 प्रतिशत रहती है।

3. **पश्चिम भारतीय क्षेत्र -** इसमें राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, गोवा, दादरा और नगर हवेली आते हैं। यहाँ की जनजातियों की संख्या लगभग एक करोड़ है। इस क्षेत्र में 26.1 प्रतिशत जनजाति जिवास करते हैं।

4. **दक्षिणी भारतीय क्षेत्र -** इसमें उन्होंने आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल को रखा है। इस क्षेत्र में 6.49 प्रतिशत जनजाति निवास करते हैं।

5. **द्वीप समूह क्षेत्र -** इस नये क्षेत्र को एकदम पृथक रखना विद्यार्थी का सराहनीय कदम है। क्योंकि इस क्षेत्र में निवास करने वाली जनजातियों के विषय में अभी भी जानकारी नहीं है। यथा- सोम्पेन जारवा, सेन्टेनेलिस इत्यादि। इस क्षेत्र में अण्डमान-निकोबार द्वीप समूह एवं लक्षद्वीप को रखा गया है। इस क्षेत्र में जनजातियों की अनुमानित संख्या 0.13 प्रतिशत है।

प्रमुख जनजातियों के नाम - उपरोक्त विवरणों को देखते हुए विद्यार्थी द्वारा किया गया विभाजन सम्पूर्ण लागता है। यहाँ एक तालिका के माध्यम से इन क्षेत्रों में पायी जाने वाली प्रमुख जनजातियों के नाम दिये जा रहे हैं क्रमांक भौगोलिक क्षेत्र प्रमुख जनजातियों के नाम

1 हिमाचल प्रदेश - गद्दी, गुज्जर, भोट, किन्नौरा, थारू, कुकी, हमार, बिमसा, नागा आदि अनेक उपजातियाॅ भी हैं यथा त्रिपुरी, रियान, थड़ाऊ आदि।

2 मध्य भारतीय क्षेत्र - संथाल, मुण्डा, उरॉव, हो, भूमिज, लोधा, कोया, खोण्ड, गोंड़, सोवर, गदवा, कमार, बैगा, भूईवॉ, कोरकू, हल्वा आदि।

3 पश्चिमी भारतीय क्षेत्र - मीना, भील, डफली, घोटिया, गमीत, सह्याद्री, कोली, महादेव, कोंकण आदि।

4 दक्षिण भारतीय क्षेत्र - गोंड़, कोंया, अण्डी, भेरुकूल, कोण्डा, डोरा, इरुला, माला, कुरावान, नैकाडा, यरावा, पुलियन, पनियन, कादर आदि।

5 द्वीप समूह क्षेत्र - अण्डमानी, ओंगे, जरावा, शॉम्पेन, सेन्टेनेलिस आदि।

निष्कर्ष - जनजातीय भौगेलिक वितरण का उल्लेख करने के उपरान्त निष्कर्ष में कह सकते है कि यह समाज विशेष रूप से प्रकृति के विश्व पटल पर विषय जलवायु वाले प्रदेशाके के साथ दुर्गम वीहड़ घाटी घने जंगलो में निवास करने वाली जनजातीय समाज है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ0 सी0पी0 तिवारी - भारतीय पर्यावरण, पृ. 16/19
2. डॉ0 रामगोपाल तिवारी - जनजातीय संस्कृति, पृ. 40-41
3. डॉ0 शिवकुमार तिवारी - जनजातीय संस्कृति एक परिचय, पृ. 13/38

****

शिक्षा एवं शैक्षणिक पर्यावरण का सामाजिक पर्यावरण पर प्रभाव एक अध्ययन (अपराध के विशेष संदर्भ में)

डॉ. ओंकार सिंह मेहता*

प्रस्तावना – आज हमारा देश 21वी सदी में प्रवेश करने के साथ-साथ विकासशील देशों की श्रृंखला में अग्रणीय स्थान पर है। जहाँ हम वैश्वीकरण, उदारीकरण एवं विकसित तकनीकी संचार के क्षेत्र में निरतंर विकास की और अग्रसर है। हमारे देश का आर्थिक विकास प्रतिवर्ष 7 से 9 प्रतिशत के बीच प्रतिवर्ष रहता है जो विश्व के विकसित देशों के विकास दर के समकक्ष है। लेकिन यह विकास क्या हमारे समस्त पर्यावरण को भी पोषित एवं सुद्दंढ़ कर रहा है यह एक विचारणीय प्रश्न है ?

पर्यावरण ब्राह्मंड की सभी बाह्य शक्तियों के प्रभाव एवं पारिस्थिति का सैंद्धातिक रूप है जिसमें प्रत्येक जीवधारी वनस्पति आदि उत्पन्न से समाप्त तक की समस्त क्रियाएँ सम्पन्न करते है। यहाँ सभी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से प्रकृति से जुड़े है। सामान्यत: पर्यावरण में विभिन्न घटक एक निश्चित मात्रा तथा अनुपात में होते हैं एवं इन सभी तत्वों के मध्य एक संतुलन बना रहता है इसमें किसी एक तत्व की अधिकता या दूषितता से असंतुलन बढ़ ज़ाता है इससे प्रदूषण एवं अन्य दूष्परिणाम उत्पन्न होते है। प्राकृतिक पर्यावरण की तरह देश में और भी पर्यावरण पाये जाते है और उन सबका मानव एवं प्राणियों के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इन पर्यावरण में प्रमुख रूप से व्यावसायिक पर्यावरण, सांस्कृतिक सामाजिक पर्यावरण, नगरीय एवं ग्रामीण पर्यावरण, तथा शैक्षणिक पर्यावरण आदि आते है। शैक्षणिक पर्यावरण भी बहुत कुछ शिक्षा की दिशा एवं दशा तय करने में महत्वपर्ण भूमिका निभाता है। शिक्षा ही एक ऐसा सशक्त माध्यम है जिससे शक्ति तो प्रबल होती है चहुँमुखी विकास भी संभव है। स्वामी विवेकानंद जी ने कहा है कि शिक्षा मनुष्य के भीतर निहित पूर्णता का विकास है। शिक्षा मानव जीवन का सबसे बड़ा वरदान है। शिक्षा में मानव की समस्त समस्याओं के हल निहित है। स्वामी जी ने यह भी माना है कि 'आज भारत को मानवता तथा चरित्र का निर्माण करने वाली शिक्षा की नितांत आवश्यकता है जो शिक्षा प्रणाली मन और मस्तिष्क को दुर्बल बनाए और मनुष्य को कुसंस्कारों से भर दे जिससे वह अज्ञानता के अंधकार में खो जाये। सोते हुए सपने देखता रहे उस प्रणाली को में पंसद नही करता क्यौंकि मानवता के लिये उसका परिणाम भयावह होगा।' शिक्षा प्रणाली अर्थात् शिक्षा व्यवस्था नीतियाँ प्रक्रिया आदि शामिल किये जाते है। इसका संस्कृति एवं समाज पर सकारात्मक प्रभाव है तो ऐसी प्रणाली से अच्छा शैक्षणिक पर्यावरण बनता है।

उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य क्रियात्मक शोध द्धारा शैक्षणिक विकास को जानना, शिक्षा के बढ़ते स्तर से भारतीय संस्कृति एवं समाज की दिशा का अध्ययन करना, साथ ही उन माध्यमों का पता लगाना जिससे समाज को सशक्त एवं सक्षम बनाया जा सके। बढ़ते हुये अपराधिक दर का संबध का क्या बढ़ती शैक्षणिक दर से भी है इसके साथ ही शोध का उद्देश्य यह भी हैं हमारे समाज में अपराध बढ़ने की दर क्या है? इसका अध्ययन करना।

समस्या का कथन – प्रस्तुत अध्ययन शिक्षा के सैद्धातिक विकास पर आधारित है। दुनिया की आबादी महिला और पुरूषों से मिलकर बनी है। शैक्षणिक और सामाजिक विकास की व्यवस्था इनके चारो और चक्कर लगाती है। आज सांस्कृतिक एवं समाज की व्यवस्था में लगातार बदलाव आ रहे है। समाज में अलगाववाद बढ़ रहा है। एकांकी परिवार की संख्या भी बढ़ती जा रही है। संस्कृति में कुसंस्कृति का मिश्रण होने से मानव की विचारधारा संकीर्ण होती जा रही हैं। इससे समाज में एक सांइलेन्ट अशान्ति विद्यमान हो गई है।

परिकल्पनाएँ –प्रस्तुत शोध निम्न परिकल्पनाओं को ध्यान में रख कर तैयार किया गया है

1. महिलाओं में शैक्षणिक प्रगतिशील विकास दर पुरूषों की शैक्षणिक प्रगतिशील विकास दर से अधिक है।
2. बढ़ते हुये शैक्षणिक एवं आर्थिक विकास के साथ-साथ समाज में अपराध की दर भी बढी है।
3. हमारा शैक्षणिक पर्यावरण जितना सुद्दंढ़ ओर उच्च तकनीकी से युक्त होता जा रहा हैउतना सामाजिक पर्यावरण संतुलित पोषित एवं स्वच्छ नही हो पा रहा है।

शोध प्रविधि – शोध कार्यो द्धारा उन प्रयत्नों का उत्तर खोजने का प्रयास किया जाता है

जिनका उत्तर साहित्य में उपलब्ध न हो प्रस्तुत शोध-पत्र द्धितीयक समंको पर आधारित है।अध्ययन मुख्यत: कुछ प्रसिद्ध प्रकाशित पुस्तकों, शोध पत्रिकाओं, शोध-पत्रों व दैनिक समाचार पत्रों पर आधारित है तथा इंटरनेट पर शैक्षणिक सर्वेक्षण व अन्य सर्वेक्षण का उपयोग किया गया है।

शोध व्याख्या –आज सांस्कृतिक एवं सामाजिक पर्यावरण और शैक्षणिक पर्यावरण में अतंर आया है। शिक्षा के निजीकरण शिक्षा प्रणाली की अति सरलता चारों और खुले साहित्य नें शैक्षणिक पर्यावरण को बहुत प्रभावित किया है। आर्कषक विज्ञापन समुचित अध्ययन विधि रोजगार ग्यारंटी आदि समाज को लगातार आर्कषित करने का प्रयास कर रहे है। इस गलाघाट प्रतियोगिता में कोई धारा अधिक से अधिक लाभ ले रही है और एक बहुत बड़ी धारा इस विकास में पिछड़ रही है। देश के विकास की प्रांरभिक स्थिति से आज तक देखे तो शिक्षा के स्तर एवं शैक्षणिक दर में लगातार वृद्धि हुई है।

तालिका क्र. 1 : Litaracy rate by census in mp rural and

*सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

urban

census year	Total	rural	Urban
1991	44.6	35.4	70.7
2001	63.7	57.8	79.4
2011	70.6	65.3	84.1

Sources ; m.p. education surve 2011

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि 1991 की तुलना में 2011 में दशक की शैक्षणिक विकास दर में लगभग दुगनी वृद्धि हुई है। ग्रामीण ओर शहरी शैक्षणिक विकास को तुलनात्मक दृष्टि से देखे तो ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा के स्तर लगभग दुगनी वृद्धि में जबकि शहरी क्षेत्र में कम देखी गई है।

तालिका क्र. 2 : Litaracy rate by sex in m.p.

census year	Person	male	Female	Gap in litercy
1991	35.4	50.3	19.3	31.0
2001	57.8	71.7	42.8	28.9
2011	65.3	76.6	53.2	23.4

Sources ; m.p. education surve 2011

लिगांनुसार दशक शैक्षणिक वृद्धि दर देखे तो उपर्युक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि पुरूषों की तुलना में महिला शिक्षा मैं वृद्धि दर दुगने से भी अधिक रही हैं। Gape in literacy लगातार कम होती जा रही है। अर्थात् 1991 से 2011 के बीच महिलाएँ अधिक शिक्षित एवं साक्षर हुई है। शिक्षा में वृद्धि दर समाज एवं संस्कृति पर सकारात्मक प्रभाव लाती है। रोजगार के साधनों में वृद्धि होती है। प्रति व्यक्ति आय तथा राष्ट्रीय आय वृद्धि होती है। साथ ही समाज में अंधविश्वास, कुरूतियॉ, सांप्रदायिकता, हिंसा, समाप्त होती है, कुसंस्कृति समाप्त होकर सुसंस्कृति में बदलती है और समाज का जीवन स्तर उन्नत और परिष्कृत होता है। लेकिन क्या आज बढ़ते हुए शैक्षणिक दर तथा उॅचा होता। शैक्षणिक पर्यावरण साथ-साथ सामाजिक पर्यावरण दूषित हुआ है। यह एक विचारणीय प्रश्न है? हम देख रहे है कि उॅचा होता शिक्षा के दर के साथ आधुनिकता के साथ-साथ समाज में लगातार हिंसा एवं विभिन्न प्रकार के अपराध बढ़ रहे है।

तालिका क्र.3 : Number of Complaints received by police and cases registered under ipc and sll 2011

State	ipc	sll	total
madhya pradesh	217094	118319	335413
All india	2325575	3927154	6252729
percetange in m.p.	3.47%	1.89%	5.36%

national crime records bureau ministry of home affairs

तालिका क्र.4 (अगले पृष्ठ पर देखे)

उपर्युक्त तालिका क्रमाकं 3 एवं 4 के संख्यात्मक विशलेषण से स्पष्ट होता है कि 2011 में कम्पलेन रिसिव्हड जो चोरी, अपहरण, चोट, हत्या, डकैती, बलात्कार, छेड़छाड़, मारपीट, दंगों आदि के सबंध में की गई जो पुलिस में आई.पी.सी. एवं एस.एल.एल के अन्तर्गत रजिस्टर्ड हुई है क्रमश: 3.47 एवं 1.89 प्रतिशत है। बढते अपराधों के दृष्टिकोण से मध्यप्रदेश की तुलना भारत के कुल अपराधिक रिकार्ड के अनुसार करे तो चोरी, सेन्धमारी, हत्या, अपहरण, बलात्कार, अभिरक्षा बलात्कार चोट एवं दगों आदि के सबंध में मध्यप्रदेश में यह अपराध 2006 के आधार वर्ष के अनुसार 2007,2008,2009,2010,2011 में क्रमश: 3.94 प्रतिशत 6.08प्रतिशत 6.72 प्रतिशत, 10.04 प्रतिशत और 11.5 प्रतिशत रहे है और यह वृद्धि दर उक्त वर्षो में लगातार बढ़ रही है 2007-08 और 2010-11 में यह वृद्धि दर सर्वाधिक रही है।

जिसमें हम निवास करते है मानवीय समाज कहलाता है समाज में मानवीय नियम और कानून समाज व्यवस्था को चलाने के लिए अलग-अलग समाज के लिए बनाये जाते है। बडे हुये सामाजिक नियमों को तोड़ना अपराध की श्रेणी में गिना जाता है सामाजिक नियमें में राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक और रहन-सहन के नियम सभ्यताओं के अनुसार प्रतिपादित किए जाते है। पूर्वी तथा पश्चिमी देशों के प्रारंभिक विधानों के अनुसार सामाजिक नियमों को तोड़ना समान रूप से अपराध था। दौ सौ वर्ष पूर्व संसार के सभी देशों की यह निश्चित नीति थी कि जिसने समाज के नियम कायदे को तोड़ा उसे घोर यातनाये दी जाती थी। पशु से भी अधिक बुरा व्यवहार किया जाता था। लेकिन आज अपराध के सबधं में धारणा बदल गई है और यह अलग-अलग देशों में अलग है। ऐसी स्थिति में एक देश का अपराध दूसरे देश में सर्वथा उचित आचार बन सकता है।

सुझाव :-

1. देश की सरकार का प्रथम कर्तव्य समाज को बाह्य एवं आंतरिक नकारात्मक शक्तियों से मुक्त रखने के लिए समुचित व्यवस्था करना होना चाहिये।
2. आवश्यकता यह भी है कि किसी भी क्षेत्र में शासन या प्रशासन स्थानीय लोगों में बड़ रहे अंसतोष नजर अन्दाज नहीं करना चाहिये उसे समय रहते स्थानीय समस्या का समाधा निकाल लेना चाहिये। अपराध गतिविधयॉं बड़ने का बहुत बड़ा कारण होता है। हिन्सा की प्रतिक्रिया में हिंसा इसे सख्ती से रोका जाये।
3. अपराध मुक्त समाज बनाने के लिए समाज में व्याप्त नशाखोरी, सट्टेबाजी, चारित्रिक पतन के कार्यो को चरित्र निर्माण कर रोका जाना चाहिये। अध्ययन में पाया गया है कि पुलिस विभाग पर सीबीआई से कम काम का दबाव है अत: पुलिस के काम के तरीके एवं आधुनिकता में वृद्धि करना होगी।
4. हमारी राजनीति को स्वच्छ प्रतिस्प्रर्धात्मक बनाकर अपराध को संरक्षण देने की नेताओं की पहल एवं नेताओं का रवैया पाक साफ करना होगा।
5. वर्तमान मनोरंजन हेतू पारंपरिक साधन जैसे खेल-कूद, तमाशा नाटक, नौटंकी चौपाल, स्वाँग खेल आदि लगभग समाप्त हो चुके है उन्हें पुन: जीवित करना होगा।
6. हमारी शिक्षा प्रणाली को प्रारंभिक अवस्था से ही संस्कारवान बनाकर उसकी गुणवत्ता को बड़ाना होगा क्योंकि शिक्षा ही स्वच्छ समाज की रीड़ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समाजशास्त्र के मूल तत्व जे.पी. सिहं
2. जागरण 2 अप्रैल 2013
3. जरा सोचिये , सत्य शील अग्रवाल
4. जनसत्ता समाचार-पत्र, 28 फरवरी 2016
5. नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरों, (मिनीस्ट्री ऑफ होम अफेयर्स)
6. स्टेटस ऑफ लिटरेन्सी सेन्सस

तालिका क्र.4 : Incidence & rate pf total cognizable crime under indian penal code [ipc] and special and local law [sll] 2001 to 2011

State	2006	2007	2008	2009	2010	2011
m.p	194711	202386	206556	207762	214269	217094
inc/disin parcentage	basic year	3.94%	6.08%	6.72%	10.04%	11.50%
Total all india	1878293	1989673	2093379	2121345	2224831	2325575
inc/disin parcentage	basic year	5.93%	11.45%	12.94%	18.44%	23.81%

national crime records bureau ministry of home affairs

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

मुगलकालीन आर्थिक परिवेश

डॉ. सुनीता शुक्ला *

प्रस्तावना – आर्थिक दृष्टिकोण से हम भारतीय समाज को हम 9 भागों में विभक्त कर सकते हैं। आय के क्रम से रखते हुये प्रथम श्रेणी में राजा, महाराजा तथा सम्राट के उच्च मंसबदार थे। दूसरे वर्ग में शाही सेना तथा शाही शासन विभाग के मध्यवर्ग पदाधिकारी थे। इनके बाद तीसरी श्रेणी के राज कर्मचारी थे जिनमें विभिन्न श्रेणियों के सैनिक, चपरासी, हरकारे, चौकीदार, फर्राश, भिश्ती, साईस आदि शामिल थे। इसके बाद की श्रेणी व्यापारी वर्ग की थी। इसमें विभिन्न आय स्तर के लोग शामिल थे। इनके मध्य में बड़े नगरों के बड़े दुकानदार थे अन्य प्रमुख वर्ग कारीगरों का था। इनमें भी कई कोटि के लोग शामिल थे। कुछ अत्यन्त बारीक और उत्कृष्ट सोने–चांदी के आभूषण तैयार करते थे। इनके अतिरिक्त बढ़ई, लोहार, कुम्हार, चर्मकार, साधारण राज, संगतराश, रंगरेज, जुलाहे आदि थे, जिनकी आय उनको कार्यकुशलता तथा उनके द्वारा बनाई चीजों के महत्व के अनुसार कम या अधिक होती थी। इनके अतिरिक्त सामान्य मजदूर थे जो दैनिक अथवा मासिक वेतन पर काम करते थे। इनकी दशा शायद सबसे खराब थी। अंतिम वर्ग किसानों का था जो संख्या में सबसे बड़ा था परन्तु देश की शासन व्यवस्थ्ज्ञा में प्राय: कोई अधिकार प्राप्त नहीं था।

डॉ. आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव के अनुसार 'मुगल काल की आर्थिक व्यवस्था की एक महत्वपूर्ण बात यह थी कि उत्पादक और उपभोक्ताओं के बीच खाई बढ़ गई थी। उत्पादक लोक कृषक, औद्योगिक मजदूर और व्यापारी थे, जबकि अमीर, दीवानी, फौजदारी विभागों के अधिकारी, नौकरी–पेशा और मौलवी उलेमा, पण्डित, पुरोहित आदि, सेवक, गुलाम एवं फकीर उपभोक्ता थे। दूसरी विशेष बात यह थी कि घरेलू नौकर की भीड़ से घिरे रहने का फैशन चल पड़ा था। हिन्दू और मुसलमान, दोनों ही साधु, सन्यासी, फकीर और भिक्षु काफी संख्या में थे।'

व्यापार में विदेशी व्यापारियों का एकाधिकार था जिसकी और सुल्तानों ने कोई ध्यान न दिया। विशाल उद्योग में राज्य के नियंत्रण के साथ ही संचालन भी राज्य की ओर से होता था, किन्तु कर्मकारों का वेतन इतना अल्प था कि इतिहासकार स्मिथ के अनुसार उनकी आर्थिक दशा संतोजनक न रही होगी। इस प्रकार जन–जीवन कीआर्थिक दशा को समझने के लिये पहले निम्न लिखित तथ्यों पर गौर करना उचित होगा।

कृषि तथा पशुपालन – भारत आज भी अनविार्यत: एक कृषि प्रधान देश है और इसका आर्थिक ढांचा एक उद्योग प्रधान देश से एकदम भिन्न है। भारत में उत्पादन का साधन है, भूमि उसकी शक्ति है। जुलाई में काम आने वाले पशु, उसके उपकरण हैं लकड़ी का हल, दाँतेदार, भूमि चिकनी करने का तख्ता, समतल करने की बल्ली, बीज बोने की नली और कुछ अन्य चीजें जैसे फावड़ा, खुरपी, पानी निकालने के विभिन्न साधन, गैंती, कुदाली, और हेंगी। नहरों द्वारा सींची जाने वाली भूमि का अनुपात अभी भी अधिक नहीं है और फसल बहुधा उपयुक्त मौसमों में अनुकूल वर्षा पर आधारित रहती है।

मूरलेण्ड के अनुसार– 'तेरहवीं सदी से लेकर अठारहवीं सदी तक के मुस्लिम शासन के मूलाधार दो थे– कृषक तथा सैन्य शक्ति और सम्राट एवं सैन्य शक्ति दोनों की आर्थिक स्थिति कृषकों पर ही निर्भर थी।' अमीर खुसरों के अनुसार 'इस काल के निर्धन कृषकों के नेत्रों से उमड़ने वाले रक्ताश्रु बिन्दु राजकीय मुकुट के एक–एक मुक्ताफल थे। इस समय को अधिकांश अराजक परिस्थितियों में अफगान सुल्तान तथा उनके जागीरदार प्राप्त भूमि कर से सन्तुष्ट थे किन्तु उनका प्रयत्न यही रहा कि वे अधिकाधिक कर वसूल कर सकें। शेरशाह ने अपने शासनकाल में उपर्युक्त भ्रष्टाचार एवं शोषण को रोकने का यत्न किया, किन्तु जैसा कि डॉ0 राम प्रसाद त्रिपाठी का मत है कि वह पर्याप्त सफल न हो सका। यद्यपि मुगल सम्राटों की ओर से सदा आशा दी जाती थी कि अधिकारी कर वसूली के समय कृषकों को बरबादी से रक्षित रखें तथापि राज्याधिकारी उनके प्राणों को छोड़कर सर्वस्व शोषण के लिये सदैव उद्यत रहते थे।

विजयनगर साम्राज्य के शासकों ने उसकी पठारी भूमि को तोड़कर उसे कृषि योग्य बनाया जिससे राज्य की आय वृद्धि के साथ ही जनता के आर्थिक साधनों की भी वृद्धि हुई। विजयनगर राज्य में खाद्यान्नों के अतिरिक्त रूई तथा तिलहन का उत्पादन प्रचुर मात्रा में होता था। पशुपालन तथा उनकी नस्लों से सम्बन्धित उल्लेख भी विजयनगर तथा उड़ीसा के हिन्दू राज्यों के विषय में मिलते हैं। इतिहासकार स्मिथ का मत है कि भूमिहीन अनुबंधित मजदूर के पास अकबर और जहांगीर के समय में सम्भवत: आज से अधिक खाने को था।

संदर्भग्रंथ सूची :–

1. डॉ0 अवधबिहारी पाण्डे–मध्यकालीन शासन और समाज, संस्करण–1966, खंण्ड–3, पृ0 245–46
2. डॉ0 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव–मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, संस्करण–1982, अध्याय–4, पृ0 33
3. डॉ0 आर0सी0 मजूमदार–दि0 देहली सल्तनत, अध्याय–18, पृ0 651–54
4. डॉ0 वी0 ए0 स्मिथ– अकबर दि ग्रेट मुगल, अध्याय–14, पृ0 388–89
5. इण्डियन इयर बुक– 1931, पृ0 29
6. इण्डियन इयर बुक–1931 के अनुसार।
7. डब्लू0 एच0 मोरलैण्ड– दि0 अग्रेरियन सिस्टम ऑफ मुस्लिम इंडिया, भूमिका, पृ0 11

* प्राध्यापक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

8. डॉ0 आर0 सी0 मजूमदार एण्ड एच0 सी0 राय चौधरी- एन एडवान्स हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, भाग-2, अध्याय-6 पृ0 399
9. डब्लू0 एच0 मोरलैण्ड- दि अग्रेरियन सिस्टम ऑफ मुस्लिम इण्डिया, अध्याय-3, पृ0 65
10. डॉ0 आर0 पी0 त्रिपाठी- सम आस्पेक्ट ऑफ मुस्लिम एडमिनिस्ट्रेशन, पृ0 305
11. डॉ0 युदनाथ सरकार- मुगल पडमिनिस्ट्रेशन, संस्करण-2, अध्याय-5, पृ0 80
12. प्रो0 वासुदेव उपाध्याय- विजयनगर साम्राज्य का इतिहास- पृ0 169-70
13. डॉ0 आर0 सी0 मजूमदार- दि देहली सल्तनत, अध्याय- 17, पृ0 641-42
14. डॉ0 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव- मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, संस्करण- 1982, अध्याय-4, पृ0 35

****

कक्षा आठ के विद्यार्थियों की सृजनात्मकता एवं विभिन्न रूचियों का तुलनात्मक अध्ययन (आगरा जनपद के जगनेर शहर के सन्दर्भ में)

मनीष कुमार* डॉ. प्रमिला दुबे **

शोध सारांश – भारत एक प्रजातांत्रिक देश है जो अपने समस्त नागरिकों के लिए सम्मान की भावना रखता है तथा उन्हें अपनी रूचि के अनुसार कार्य करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। यदि हम अपने नागरिकों की सृजनात्मक योग्यता को तिरस्कृत करें या उस पर ध्यान न दें तो हमारे देश की उन्नति बाधित होगी तथा समय की धारा के साथ-साथ हमें अपने राष्ट्र की उन्नति करने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। अत: सृजनात्मक विद्यार्थी समाज एवं राष्ट्र की महत्वपूर्ण एवं उपयोगी व्यक्ति वस्तु अथवा पूँजी होते हैं। राष्ट्रीय जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उन्नति एवं विकास पूर्ण रूप से सृजनात्मक विद्यार्थियों की योग्यता तथा उनकी सम्बन्धित रूचियों के ऊपर निर्भर करता है। इसलिए हमें समस्त विद्यार्थियों में समय-समय पर आवश्यकता पड़ने पर उनकी सृजनात्मकत योग्यताओं को विकसित करने हेतु समुचित अवसर प्रदान करने चाहिए वही दूसरी ओर उनकी रूचियों को भी परिष्कृत करने के अवर मुहैया कराए जाए क्योंकि सृजनात्मक विद्यार्थी ही सम्पूर्ण राष्ट्र को प्रगति के पथ पर आगे ले जा सकते है। इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन में कक्षा आठ के विद्यार्थियों की सृजनात्मकता एवं विभिन्न रूचियों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। वर्तमान शोध में आगरा जनपद के अन्तर्गत जगनेर शहर के यूपी बोर्ड से मान्यता प्राप्त 7 माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों का चयन किया गया तत्पश्चात् यादृच्छिक चयन के आधार पर प्रदत्त संकलन हेतु चार विद्यालयों को चुना गया तथा इनमें से 184 विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में लिया गया जिसमें 104 छात्र तथा 80 छात्रायें सम्मिलित है। शोध समस्या हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है प्रदत्तों के संकलन हेतु सारणीयन एवं आलेखीय निरूपण का प्रयोग किया गया है। प्रदत्त संकलन हेतु मानकीकृत परीक्षणों का प्रयोग किया गया है। उक्त शोध में शोध परीक्षणों का विश्लेषण करने के उपरांत सृजनात्मकता के मापन के लिए डॉ0 बाकर मेंहदी (रिटायर्ड प्रोफेसर इन एजूकेशन, एन0सी0ई0आर0टी0, न्यू दिल्ली 110016) के शाब्दिक सृजनात्मक परीक्षण का प्रयोग किया गया तथा यह परीक्षण सृजनात्मकता से सम्बन्धित तीन प्रकार की योग्यताओं प्रवाहता, लचकता तथा मौलिकता का मापन करता है तथा रूचियों के मापन के लिए डॉ0 एस0के0 बाबा (रीडर, डिपार्टमेन्ट ऑफ एजूकेशन एण्ड कम्यूनिटी सर्विसेज, पंजाब यूनिवर्सिटी, पटियाला) द्वारा तैयार रूचि परीक्षण का प्रयोग किया गया। यह परीक्षण व्यावसायिक रूचि, धार्मिक रूचि, सामाजिक रूचि, बौद्धिक रूचि, मनोरंजनात्मक रूचि आदि पाँच क्षेत्रों का वर्णन करता है। अत: उक्त शोध पत्र में सृजनात्मक योग्यता प्रवाहता तथा पाँच रूचि क्षेत्रों से सम्बन्धित परिकल्पनाओं तथा उद्देश्य को शोध कार्य हेतु लिया गया है।

शब्द कुँजी – सृजनात्मकता, विभिन्न रूचि, प्रवाहता, लचकता, मौलिकता।

प्रस्तावना – शिक्षा मावन जीवन को परिष्कृत करने, परिमार्जित करने एवं विकसित करने का महत्वपूर्ण साधन है। शिक्षा के बिना मानव जीवन ठीक उसी प्रकार होगा, जैसे बिना वस्त्रों के शरीर। शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का मुख्य साधन है। व्यक्ति के सर्वांगीण विकास से सामाजिक राष्ट्रीय विकास होता है तथा सभ्यता का विकास व संस्कृति का संरक्षण होता है। किसी ने कहा है कि 'आज का विद्यार्थी कल का नागरिक है।' विद्यार्थी राष्ट्र की धरोहर है अत: समाज तथा शिक्षा जगत से जुड़े समस्त व्यक्तियों का कर्तव्य हो जाता है कि वे शिक्षा की गुणवत्ता में निरन्तर सुधार का प्रयास करते रहे तथा शैक्षिक क्षेत्र में आने वाली समस्याओं के निराकरण के लिए मार्ग दर्शन करते रहे।

प्रत्येक मानव में प्राकृतिक रूप से कुछ अन्तर्निहित योग्यताऐं होती है जिनके आधार पर व्यक्ति नवीन-नवीन रचनायें करता है तथा अपने विचारों को सन्तुष्टि प्रदान करने की कोशिश करता है। बहुत से मानवीय क्रिया-कलाप सृजनात्मकता पर आधारित होते है तथा प्रत्येक मानव में नये विचार, नयी अर्न्तदृष्टि तथा किसी कार्य को करने का अपना नवीन ढंग होता है। सृजनशील व्यक्ति के लिए प्रत्येक विचार तथा अभिव्यक्ति सृजनात्मकता का उदाहरण है। पर शर्त यह है कि यह उस व्यक्ति के लिए मौलिक हो क्योंकि सृजनात्मकता व्यक्ति की वह योग्यता है जिसके द्वारा वह उन वस्तुओं या विचारों का उत्पादन करता है जो नये हैं। जिस प्रकार एक पौधे के स्वस्थ्य विकास के लिए हवा, पानी, मिट्टी की आवश्यकता होती है जो मिलकर पौधे के लिए एक अनुकूल वातावरण का निर्माण करते है जिससे एक सुन्दर पौधा विकसित होता है ठीक उसी प्रकार विद्यार्थियों के लिए भी उस अनुकूल वातावरण की आवश्यकता होती है जो उसकी अन्तर्निहित योग्यता को विकसित करके उनके सुन्दर एवं समन्वित व्यक्तित्व का निर्माण करें।

व्यक्तित्व के विकास के लिए विद्यार्थियों की अन्तर्निहित योग्यताओं को परखकर उनकी सृजनात्मकता का विकास भी करना चाहिए तथा जिसके लिए आवश्यकता है एक ऐसे वातावरण की जिससे व्यक्ति की इच्छाओं, अभिरूचियों तथा रूचियों के मध्य उचित सामंजस्य स्थापित हो सके। व्यक्ति की रूचियों को सही दिशा में पहचानकर ही उस व्यक्ति को उसी दिशा में प्रेरित कर उसकी सृजनात्मकता का उचित विकास करना चाहिए क्योंकि

* शोधार्थी, शिक्षा संकाय, शिक्षा विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
**शोध निर्देशिका, शिक्षा संकाय, शिक्षा विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

सृजनात्मक व्यक्ति ही राष्ट्र निर्माण में अपना सर्वोत्तम योगदान दे सकते है। विद्यार्थी ही आगे चलकर परिवार का सृजन, विकास एवं नियंत्रण करते है तथा राष्ट्र के समग्र विकास में विद्यार्थियों की सृजनात्मक योग्यता तथा उनकी रूचियों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। अत: कहा जा सकता है जिस प्रकार हरी-भरी मखमली घास पर ओस की बूंद सौन्दर्य लोक का सृजन करती है - हिमाच्छादित शैलमालाओं पर प्रभात की मुस्कुराते सूर्य की किरणें कल्पना का मधुर संसार बनाती है। ताजमहल के भव्य भवन पर शरद पूर्णिमा के चन्द्र की शीतल स्निग्ध ज्योत्सना शान्त जगत का उल्लासपूर्ण सृजन करती है ठीक उसी प्रकार जीवन प्रांगण में आकांक्षायें विभिन्न रूचियों को जन्म देती है। यदि आकाश में चन्द्रमा न हो, यदि शीतलता में आकर्षण न हो और उस आकर्षण में जीवन की मधुर लालसा न हो और लालसा में रूचि न हो तो मानव जीवन कटिंका कीर्ण हो जाता है।

समस्या कथन - 'कक्षा आठ के विद्यार्थियों की सृजनात्मकता एवं विभिन्न रूचियों का तुलनात्मक अध्ययन।'

समस्या में प्रयुक्त शब्दों की व्याख्या

1. सृजनात्मकता - किसी विचार, क्रिया अथवा कार्य की प्रभाविता को बढ़ाने और आकर्षक बनाने की दृष्टि से उसे नवीन रूप देना और प्रभावकारी बनाना ही सृजनात्मकता है। सृजनात्मकता का अर्थ एक ऐसी योग्यता से है जो किसी समस्या या परिस्थिति का विद्धतापूर्वक समाधान करने के लिए नवीनतम विधियों एवं स्थितियों का सहारा लेती है तथा इसमें प्रवाहता, लचकता, मौलिकता तथा विस्तारण आदि कारक निहित होते है। सृजनात्मकता के सम्बन्ध में 'ड्रेवर' ने लिखा है 'सृजनात्मकता मुख्यत: नवीन रचना या उत्पाद होती है।'

अत: सृजनात्मकता वह योग्यता है जो मनुष्य को किसी समस्या का बौद्धिकतापूर्वक निराकरण खोजने के लिए नवीन विधि से सोचने तथा विचार करने में सक्षम बनाती है। परम्परा से हटकर नवीन विधी से चिन्तन, मंथन तथा क्रिया अथवा कार्य करने की योग्यता सृजनात्मकता है।

2. रूचि - रूचि व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विभा है। रंग-रूप, शारीरिक-गठन, मानसिक, योग्यता, स्वभाव, आचार-विचार, अभिवृत्ति, बुद्धि आदि की तरह रूचियों में भी भिन्नता पायी जाती है। रूचि एक मानसिक संरचना है। यह एक आन्तरिक प्रेरक शक्ति है जो हमें किसी वस्तु, व्यक्ति, तथ्य एवं प्रतिक्रिया आदि को पसंद करने तथा उसके प्रति आकर्षित होने की प्रवृत्ति है। जब किसी व्यक्ति को कोई वस्तु पसंद आती है या अपनी ओर आकर्षित करती है तो स्वाभाविक रूप से कहा जा सकता है कि उस व्यक्ति की रूचि उस वस्तु के प्रति है।

रूचि के सम्बन्ध में रैमर्स, गेज व रूमेल ने लिखा है कि 'रूचियाँ वास्तव में सुखान्त व दुखान्त भावनाओं, पसंद या नापसंद के व्यवहार के प्रति आकर्षण व प्रतिकर्षण से परिलक्षित होती है।' अत: रूचि किसी वस्तु, व्यक्ति, प्रक्रिया तथा कार्य आदि को केन्द्रित करने तथा उससे सन्तुष्टि पाने की प्रवृत्ति को ही रूचि कहते है। रूचि का व्यक्ति की योग्यताओं से कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता है परन्तु जिन कार्यों में व्यक्ति की रूचि होती है। वह उसमें अधिक सफलता प्राप्त करता है। रूचियाँ जन्मजात भी हो सकती है तथा अर्जित भी हो सकती है। यद्यपि लघु समय अन्तराल में रूचियाँ प्राय: स्थिर रहती है परन्तु समय व अनुभव के साथ रूचियों में कुछ अन्तर आता रहता है।

3. तुलनात्मक - जब दो या दो से अधिक कारणों के मध्य अन्तर देखा जाता है तो उसे तुलनात्मक कहते है।

समस्या के चयन का औचित्य एवं महत्व - कक्षा आठ में प्रवेश करने वाले अधिकांशत: विद्यार्थी किशोरावस्था की दहलीज पर खड़े हुए होते है या फिर किशोरावस्था में प्रवेश कर चुके होते है। किशोरावस्था को बड़े संघर्ष, तनाव, तूफान तथा विरोध की अवस्था कहा जाता है। यह तीव्र परिवर्तन की अवस्था है इस अवस्था में मानसिक द्वन्द्व, तनाव तथा संघर्ष अपने चरम पर होते है। दूसरी ओर शिक्षा की दशा एवं जीवन की दिशा का निर्धारण भी इसी अवस्था में प्रारम्भ होता है क्योंकि यह विद्यार्थी की शिक्षा व भविष्य से सम्बन्धित महत्वपूर्ण सीढ़ी भी यही होती है जिसके कारण उसे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इनमें से प्रमुख समस्याएँ उसके संवेगों, प्रवृत्तियों, समायोजन एवं रूचियों से अधिक सम्बन्धित होती है। किशोरावस्था में संवेगात्मक अस्थिरता और अतिसंवेगात्मकता अन्य आवश्यकताओं की अपेक्षाकृत अधिक होती है तथा संवेगों एवं प्रवृत्तियों की अस्थिरता विद्यार्थियों के स्वास्थ्य तथा उनकी रूचियों एवं सृजन की प्रक्रिया को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। इस अवस्था में आवेश तथा आवेग के कारण अभिभावक बालकों पर विशेष ध्यान देते है। यदि किशोर बालकों को पर्याप्त मनोवैज्ञानिक वातावरण नहीं मिलता है उनकी समस्या बढ़ जाती है जिसके कारण उनकी योग्यताओं, विभिन्न प्रकार की रूचियों एवं सृजन की क्षमता पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

वर्तमान समय में विद्यार्थियों की सृजनात्मकता एवं विभिन्न रूचियों के मध्य तुलनात्मक दृष्टिकोण को जानना नितान्त आवश्यक है क्योंकि जो विद्यार्थी अपनी रूचियों को पहचानते है तथा सृजनात्मकता का विकास करते है, ऐसे विद्यार्थी ही समाज तथा देश को प्रगति की ओर अग्रसर करते हैं। यदि विद्यार्थियों के महत्व को समझा जाए और स्नेह पूर्वक उनकी क्षमता को विकसित करने में योगदान दिया जाए तो वे हर क्षेत्र में महती भूमिका निभा सकते है। अत: वर्तमान आवश्यकता है कि विद्यार्थियों की सृजनात्मक अभिव्यक्ति को सही दिशा देने के साथ-साथ विभिन्न क्षेत्रों में उनकी रूचियों को समझा जाए तथा उन्हें उचित निर्देशन प्रदान किया जाए।

विद्यार्थियों की प्रतिभा को नष्ट होने से बचाने के लिए हमें ऐसे उपयुक्त वातावरण का सृजन करना होगा जिससे विद्यार्थियों की रूचियों एवं सृजनात्मक क्षमताओं का विकास हो सकें क्योंकि एक अपनी रूचियों को सही दिशा में पहचानने वाला तथा वातावरण के साथ समायोजित एवं कुशल सृजनात्मक विद्यार्थी ही समाज तथा राष्ट्र के उत्थान में महती भूमिका अदा कर सकेगा। प्रस्तुत अध्ययन में इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए शोधकर्ता ने विद्यार्थियों की रूचियों एवं सृजनात्मकता के स्तर को ऊँचा उठाने एवं विकसित करने के लिए उक्त समस्या का चयन किया। अत: इस संदर्भ में इस शोध अध्ययन का औचित्य या महत्व और अधिक बढ़ जाता है।

अध्ययन की परिसीमाऐं - समय व साधनों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत अध्ययन की अधोलिखित परिसीमाऐं है -

1. प्रस्तुत शोध कार्य में आगरा जिले के अन्तर्गत कस्बा जगनेर के यू0पी0 बोर्ड से मान्यता प्राप्त विद्यालयों को ही सम्मिलित किया गया है।
2. प्रतिदर्श के रूप में कक्षा आठ (8) के विद्यार्थियों को ही सम्मिलित किया गया है।
3. इसमें प्रदत्तों को संकलित करने के लिए केवल 184 विद्यार्थियों को चुना गया जिसमें 104 छात्र तथा 80 छात्रायें सम्मिलित है।
4. केवल शाब्दिक सुजनात्मकता पर ही विचार किया गया है जिसमें तीन योग्यता प्रवाहता, लचकता तथा मौलिकता सम्मिलित है।
5. रूचियों के व्यावसायिक, धार्मिक, सामाजिक, बौद्धिक तथा

मनोरंजनात्मक क्षेत्रों को सम्मिलित किया गया है।

6. प्रतिदर्श में केवल हिन्दी माध्यम वाले विद्यार्थियों को ही सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य – प्रस्तुत अध्ययन के निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्य है –

1. उच्च प्रवाहता के विद्यार्थियों तथा निम्न प्रवाहता के विद्यार्थीयों की व्यावसायिक रूचि की तुलना करना।
2. उच्च प्रवाहता के विद्यार्थियों तथा निम्न प्रवाहता के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि की तुलना करना।
3. उच्च प्रवाहता के विद्यार्थियों तथा निम्न प्रवाहता के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि की तुलना करना।
4. उच्च प्रवाहता के विद्यार्थियों तथा निम्न प्रवाहता के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि की तुलना करना।
5. उच्च प्रवाहता के विद्यार्थियों तथा निम्न प्रवाहता के विद्यार्थियों की मनोंरजनात्मक रूचि की तुलना करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पना – प्रस्तुत शोध पत्र में शोध की समस्या के सन्दर्भ में निम्न शून्य परिकल्पना निर्मित की गयी है

1. उच्च प्रवाहता के विद्यार्थियों तथा निम्न प्रवाहता के विद्यार्थियों की व्यावसायिक रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।
2. उच्च प्रवाहता के विद्यार्थियों तथा निम्न प्रवाहता के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।
3. उच्च प्रवाहता के विद्यार्थियों तथा निम्न प्रवाहता के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।
4. उच्च प्रवाहता के विद्यार्थियों तथा निम्न प्रवाहता के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।
5. उच्च प्रवाहता के विद्यार्थियों तथा निम्न प्रवाहता के विद्यार्थियों की मनोरंजनात्मक रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध उपकरण का चयन – प्रस्तुत शोध समस्या के लिए दो चरों सृजनात्मकता व रूचियों के मापन के लिए उपकरण का चयन करना है। किसी भी शोध अध्ययन की सफलता उपयुक्त उपकरणों पर ही निर्भर करती हैं। अध्ययन के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए प्रदत्तों के एकत्रीकरण हेतु शोधकर्ता ने उपलब्ध शोध उपकरणों का विश्लेषण करने के उपरांत सृजनात्मकता के मापन के लिए डॉ0 बाकर मेंहदी (रिटायर प्रोफेसर इन एजूकेशन, एन0सी0ई0आर0टी0, न्यू दिल्ली – 110016) के शाब्दिक सृजनात्मक उपकरण का प्रयोग किया गया। यह उपकरण तीन प्रकार की योग्यताओं प्रवाहता, लचकता तथा मौलिकता का अध्ययन करता है। शाब्दिक सृजनात्मक परीक्षण में चार प्रकार के उप परीक्षण सम्मिलित है। प्रत्येक उप–परीक्षण में अलग–अलग प्रश्नों की संख्या दी हुई होती है। प्रश्नों का उत्तर विद्यार्थियों को अपनी सोच एवं विचारों के आधार पर लिखकर देना होता है। रूचियों के मापन के लिए डॉ0 एस0के0 बावा (रीडर, डिपार्टमेंट ऑफ एजूकेशन एण्ड कॉम्यूनिटी सर्विसेज, पंजाब यूनिवर्सिटी, पटियाला) द्वारा तैयार रूचि परीक्षण सूची का प्रयोग किया गया। यह परीक्षण पाँच रूचि क्षेत्रों व्यावसायिक, धार्मिक, सामाजिक, बौद्धिक तथा मनोरंजनात्मक रूचि का वर्णन करता है। इस रूचि परीक्षण में कुल 320 पद है तथा प्रत्येक रूचि क्षेत्र के अलग–अलग पद निर्धारित है। इस परीक्षण में पदों के उत्तर सही का निशान लगाकर देने होते है। दोनों ही परीक्षण प्रश्नावलियाँ हिन्दी व अंग्रेजी माध्यम में उपलब्ध है तथा धन एवं समय की दृष्टि से मितठी है।

प्रदत्तों का संकलन – प्रदत्तों के संकलन में शोधकर्ता जितनी सावधानी रखता है, प्राप्त निष्कर्ष उतने ही विश्वसनीय एवं वैध होते है। सामग्री के संकलन के बाद उसका वर्गीकरण अत्यन्त आवश्यक होता है। प्राप्त सामग्री को प्रदर्शन योग्य बनाने तथा इसका विश्लेषण करके किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए, उस सामग्री को व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करना आवश्यक है।

आँकड़ों के संकलन के लिए शोधार्थी द्वारा प्रमापीकृत परीक्षणों को आगरा जिले के जगनेर शहर के अन्तर्गत आने वाले चार माध्यमिक विद्यालयों के कक्षा 8 के विद्यार्थियों को वितरित किया गया। शोधकर्ता ने अध्यापकों की सहायता से विद्यार्थियों को व्यवस्थित ढंग से बैठाया तथा परीक्षण वितरित कर परीक्षण सम्बन्धी निर्देश दिये गये तत्पश्चात प्राप्त तथ्यों को सावधानीपूर्वक एकत्रित किया गया।

प्रयुक्त सांख्यकीय विधि – सांख्यकीय शोध अध्ययन का मूल आधार होती है। शोध हेतु निर्मित परिकल्पनाओं की सत्यता–असत्यता की परख के लिए उनका परीक्षण विभिन्न सांख्यिकीय प्रविधियों के माध्यम से किया जाता है। आँकड़ों के संकलन के बाद सांख्यिकी का प्रमुख कार्य उनको व्यस्थित स्वरूप प्रदान करना होता है। जिससे उसके जटिल स्वरूप को सरल, स्पष्ट एवं बोधगम्य बनाया जा सके। शोध में प्रयुक्त सांख्यिकीय विधियाँ निम्न है –

1. मध्यमान
2. मानक विचलन
3. क्रान्तिक अनुपात
4. आलेखीय निरूपण (उच्च सृजनात्मक तथा निम्न सृजनात्मक विद्यार्थियों की विभिन्न रूचियों की तुलना हेतु मध्यमान मानक विचलन के शंक्वाकार आरेख खीचे गये है।)

प्रदत्तों का सारणीयन, आलेखीय निरूपण, विश्लेषण एवं व्याख्या

सारणी नं0 1.1 तथा आलेखीय चित्र 1.1(a), 1.1(b)

उपरोक्त सारणी नं0 1.1 से स्पष्ट है कि उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की व्यावसायिक रूचि के प्राप्तांकों का मध्यमान 14.96 व मानक विचलन 15.679 है तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का मध्यमान 6.60 है व मानक विचलन 14.518 है। क्रान्तिक अनुपात (C.R.) का प्राप्तमान 2.7663 है जो सार्थकता स्तर 0.05 पर df = 98 के लिए तालिका मान 1.982 से अधिक है। अतः उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की व्यावसायिक रूचि में सांख्यिकीय दृष्टि से सार्थक अन्तर है। अतः परिकल्पना नं0 1 'उच्च प्रवाहता तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की व्यावसायिक रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।' अस्वीकृत की जाती हैं।

चित्र 1.1(a) से स्पष्ट है कि उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की व्यावसायिक रूचि प्राप्तांकों का मध्यमान निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की व्यावसायिक रूचि प्राप्तांकों के मध्यमान से काफी अधिक है। अतः निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की तुलना में उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थी विभिन्न व्यवसायों में अधिक रूचि रखते हैं। चित्र 1.1 (b) से स्पष्ट है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों के मानक विचलन में विशेष अन्तर नहीं है। अतः कहा जा सकता है कि न्यादर्श के संगठन में विजातीयता नहीं है।

सारणी नं0 1.1 : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की व्यावसायिक रूचि क्षेत्र में मध्यमान, मानक विचलन तथा क्रान्तिक अनुपात प्राप्तांकों का विवरण

क्र.	समूह	संख्या N	मध्यमान Mean	मानक विचलन S.D.	क्रान्तिक अनुपात C.R.	df = 98 के लिए सार्थकता स्तर 0.05 पर C.R.
1.	उच्च प्रवाहता	50	14.96	15.679	2.7663	1.982
2.	निम्न प्रवाहता	50	6.60	14.518		

चित्र 1.1 (a) : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की व्यावसायिक रूचि क्षेत्र में मध्यमान प्राप्तांकों का आलेखीय चित्र

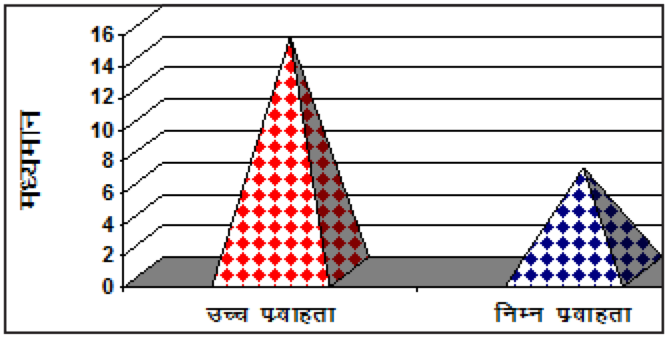

चित्र 1.1 (b) : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की व्यावसायिक रूचि क्षेत्र में मानक विचलन प्राप्तांकों का आलेखीय चित्र

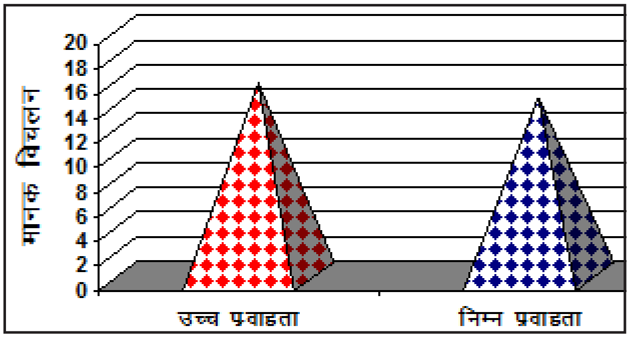

सारणी नं0 1.2 तथा आलेखीय चित्र 1.2(a), 1.2 (b)

उपरोक्त सारणी नं0 1.2 से स्पष्ट है कि उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि के प्राप्तांकों का मध्यमान 29.74 तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का मध्यमान 27.28 है। उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का मानक विचलन 11.030 है तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों मानक विचलन 12.518 है। क्रान्तिक अनुपात का प्राप्तमान 1.0425 है जो सार्थकता स्तर 0.05 पर df = 98 के सारणी मान 1.982 से कम है। अत: उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि में सांख्यिकीय दृष्टि से सार्थक अन्तर नहीं है। अत: परिकल्पना नं0 2 'उच्च प्रवाहता तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।' स्वीकृत की जाती है।

चित्र 1.2(a) से स्पष्ट है कि उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि प्राप्तांकों का मध्यमान निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि प्राप्तांकों के मध्यमान से थोड़ा अधिक है। अत: निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की तुलना में उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि कुछ अधिक है। चित्र 1.2 (b) से स्पष्ट है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों के मानक विचलन में विशेष अन्तर नहीं है। जो इस बात को दर्शाता है कि न्यादर्श के संगठन में विजातीयता नहीं है।

सारणी नं0 1.2 : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि क्षेत्र में मध्यमान, मानक विचलन तथा क्रान्तिक अनुपात प्राप्तांकों का विवरण

क्र.	समूह	संख्या N	मध्यमान Mean	मानक विचलन S.D.	क्रान्तिक अनुपात C.R.	df = 98 के लिए सार्थकता स्तर 0.05 पर C.R.
1.	उच्च प्रवाहता	50	29.74	11.030	1.0425	1.982
2.	निम्न प्रवाहता	50	27.28	12.518		

चित्र 1.2 (a) : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि क्षेत्र में मध्यमान प्राप्तांकों का आलेखीय चित्र

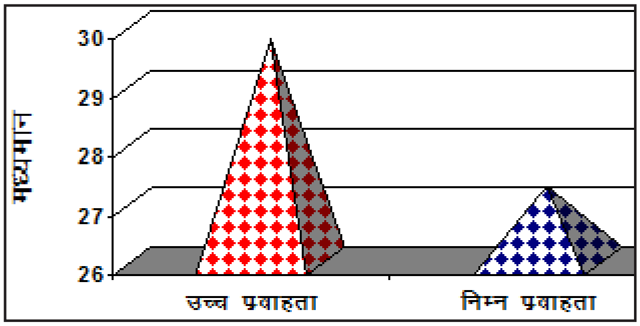

चित्र 1.2 (b) : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि क्षेत्र में मानक विचलन प्राप्तांकों का आलेखीय चित्र

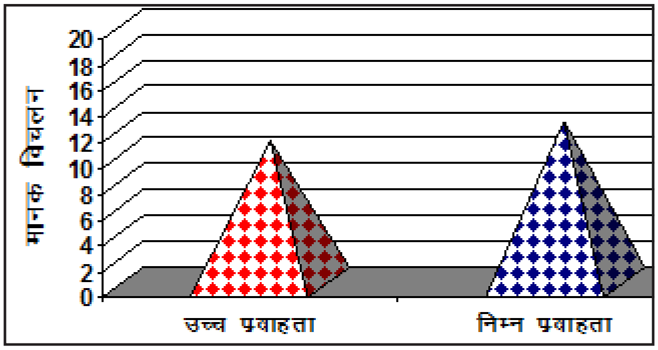

सारणी नं0 1.3 तथा आलेखीय चित्र 1.3(a), 1.3 (b)

उपरोक्त सारणी नं0 1.3 से स्पष्ट है कि उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमश: 2.20 व 2.88 है। उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का मानक विचलन 10.602 तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का मानक विचलन 10.146 है। क्रान्तिक अनुपात का प्राप्तमान 0.3276 है जो सार्थकता स्तर 0.05 पर df = 98 के सारणी मान 1.982 से बहुत कम है। अत: उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि में सांख्यिकीय दृष्टि से सार्थक अन्तर नहीं है। अत: परिकल्पना नं0 3 'उच्च प्रवाहता तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।' स्वीकृत की जाती है।

चित्र 1.3 (a) से स्पष्ट है कि उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि प्राप्तांकों का मध्यमान निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि प्राप्तांकों के मध्यमान से बहुत कम अन्तर है। अत: निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की तुलना में उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि लगभग समान है। चित्र 1.3 (b) से स्पष्ट है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों के मानक विचलन में नगण्य अन्तर है। जो इस बात को दर्शाता है कि न्यादर्श के संगठन में लगभग सजातीयता है।

सारणी नं0 1.3 : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि क्षेत्र में मध्यमान, मानक विचलन तथा क्रान्तिक अनुपात प्राप्तांकों का विवरण

क्र.	समूह	संख्या N	मध्यमान Mean	मानक विचलन S.D.	क्रान्तिक अनुपात C.R.	df = 98 के लिए सार्थकता स्तर 0.05 पर C.R.
1.	उच्च प्रवाहता	50	2.20	10.602	0.3276	1.982
2.	निम्न प्रवाहता	50	2.88	10.146		

चित्र 1.3 (a) : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि क्षेत्र में मध्यमान प्राप्तांकों का आलेखीय चित्र

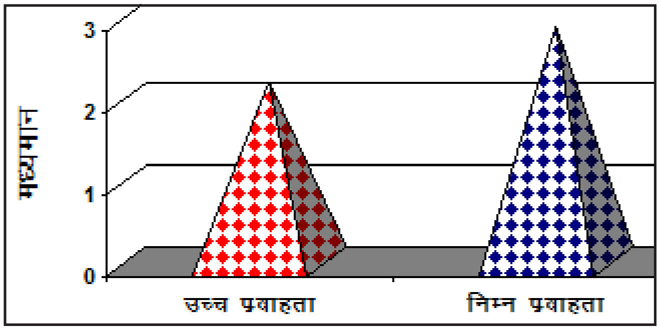

चित्र 1.3 (b) : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि क्षेत्र में मानक विचलन प्राप्तांकों का आलेखीय चित्र

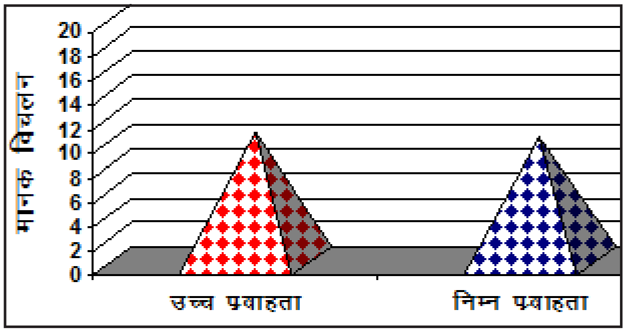

सारणी नं0 1.4 तथा आलेखीय चित्र 1.4(a), 1.2(b)

उपरोक्त सारणी नं0 1.4 से स्पष्ट है कि उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि के प्राप्तांकों का मध्यमान 8.40 तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का मध्यमान 8.42 है जबकि उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का मानक विचलन क्रमश : 8.761 व 8.441 है। क्रान्तिक अनुपात का प्राप्तमान 0.01162 है जो सार्थकता स्तर 0.05 पर df = 98 के सारणी मान 1.982 से बहुत कम है। अत: उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि में अन्तर सांख्यिकीय दृष्टि से बिल्कुल सार्थक नहीं है। अत: परिकल्पना नं0 4 'उच्च प्रवाहता तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।' स्वीकृत की जाती है।

चित्र 1.4(a) से स्पष्ट है कि उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि प्राप्तांकों का मध्यमान निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि प्राप्तांकों के मध्यमान में नगण्य अन्तर है। अत: निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि तथा उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि लगभग समान है। चित्र 1.4 (b) दर्शाता है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों के मानक विचलन में नगण्य अन्तर है। जो इस बात को स्पष्ट करता है कि न्यादर्श के संगठन में लगभग सजातीयता है।

सारणी नं0 1.4 : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि क्षेत्र में मध्यमान, मानक विचलन तथा क्रान्तिक अनुपात प्राप्तांकों का विवरण

क्र.	समूह	संख्या N	मध्यमान Mean	मानक विचलन S.D.	क्रान्तिक अनुपात C.R.	df = 98 के लिए सार्थकता स्तर 0.05 पर C.R.
1.	उच्च प्रवाहता	50	8.40	8.761	0.01162	1.982
2.	निम्न प्रवाहता	50	8.42	8.441		

चित्र 1.4 (a) : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि क्षेत्र में मध्यमान प्राप्तांकों का आलेखीय चित्र

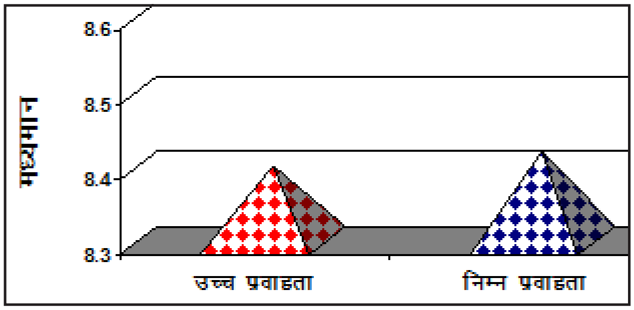

चित्र 1.4 (b) : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि क्षेत्र में मानक विचलन प्राप्तांकों का आलेखीय चित्र

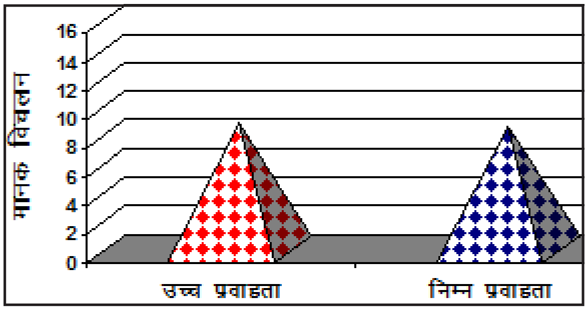

सारणी नं0 1.5 तथा आलेखीय चित्र 1.5(a), 1.5(b)

उपरोक्त सारणी नं0 1.5 से स्पष्ट है कि उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की मनोरंजनात्मक रूचि के प्राप्तांकों का मध्यमान 2.04 तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की मनोरंजनात्मक रूचि के प्राप्तांकों का मध्यमान 4.48 है जबकि उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का मानक विचलन 8.808 तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों का मानक विचलन 13.816 है। क्रान्तिक अनुपात का प्राप्तमान 1.0529 है जो सार्थकता स्तर 0.05 पर df = 98 के सारणी मान 1.982 से बहुत कम है। अत: उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की मनोरंजनात्मक रूचि में अन्तर सांख्यिकीय दृष्टि से बिल्कुल सार्थक नहीं है। अत: परिकल्पना नं0 5 'उच्च प्रवाहता तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की मनोरंजनात्मक रूचि में सार्थक अन्तर नहीं है।' स्वीकृत की जाती है।

चित्र 1.5(a) से स्पष्ट है कि उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की मनोरंजनात्मक रूचि प्राप्तांकों का मध्यमान निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की मनोरंजनात्मक रूचि प्राप्तांकों के मध्यमान से काफी कम है। अत: निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थी उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की तुलना में अधिक मनोरंजनात्मक रूचि रखते हैं। चित्र 1.5 (b) से स्पष्ट होता है कि दोनों समूहों के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों के मानक विचलन में अधिक अन्तर है। अत: न्यादर्श के संगठन में अधिक विजातीयता है।

सारणी नं0 1.5 : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की मनोरंजनात्मक रूचि क्षेत्र में मध्यमान, मानक विचलन तथा क्रान्तिक अनुपात प्राप्तांकों का विवरण

क्र.	समूह	संख्या N	मध्यमान Mean	मानक विचलन S.D.	क्रान्तिक अनुपात C.R.	df = 98 के लिए सार्थकता स्तर 0.05 पर C.R.
1.	उच्च प्रवाहता	50	2.04	8.808	1.0529	1.982
2.	निम्न प्रवाहता	50	4.48	13.816		

चित्र 1.5 (a) : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की मनोरंजनात्मक रूचि क्षेत्र में मध्यमान प्राप्तांकों का आलेखीय चित्र

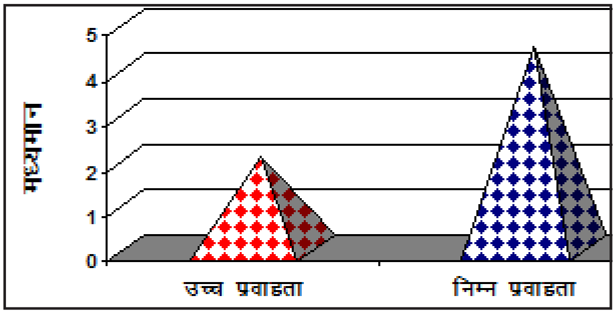

चित्र 1.5 (b) : उच्च प्रवाहता समूह तथा निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की मनोरंजनात्मक रूचि क्षेत्र में मानक विचलन प्राप्तांकों का आलेखीय चित्र

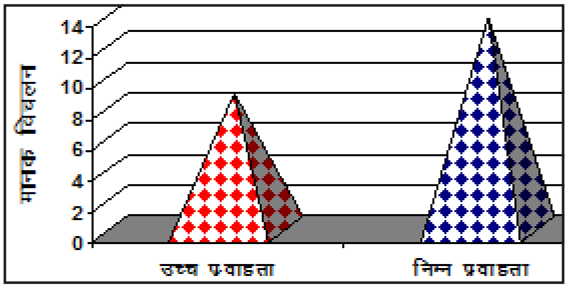

शोध निष्कर्ष – प्रस्तुत अध्ययन में प्राप्त निष्कर्ष निम्नलिखित हैं –

1. निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की तुलना में उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थी विभिन्न व्यवसायों में अधिक रूचि रखते है। न्यादर्श के संगठन में विजातीयता नहीं पायी गयी।
2. निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की तुलना में उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की धार्मिक रूचि कुछ अधिक है तथा न्यादर्श के संगठन में विजातीयता नहीं है।
3. निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों तथा उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की सामाजिक रूचि लगभग समान है। न्यादर्श के संगठन में लगभग सजातीयता है।
4. निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों तथा उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की बौद्धिक रूचि लगभग समान है। न्यादर्श के संगठन में लगभग सजातीयता है।
5. निम्न प्रवाहता समूह के विद्यार्थी उच्च प्रवाहता समूह के विद्यार्थियों की तुलना में अधिक मनोरंजनात्मक रूचि रखते है। न्यादर्श के संगठन में अधिक विजातीयता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. अग्रवाल, उमेश चन्द्र : 'क्रियेटिविटी एण्ड एडजस्टमेन्ट ऑफ एडोलसेन्टस', न्यू दिल्ली, श्री पब्लिशिंग हाउस, (1990)
2. अग्रवाल, राम नारायण : 'मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन',आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर (2007)
3. अनास्ती, ऐने : 'साइकॉलाजीकल टैस्टिंग',न्यू दिल्ली, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, (2006)
4. बैस्ट, जॉन डब्ल्यू : 'रिचर्स इन एजेूशन',न्यू दिल्ली, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, (1963)
5. भटनागर, आर0पी0 : 'स्टैटिस्टिक्स इन एजूकेशन',मेरठ, आर0 लाल बुक डिपो हाउस (2010)
6. भार्गव, महेश : 'आधुनिक मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मापन',आगरा, एच0पी0 भार्गव बुक हाउस (2005)
7. गैरेट, एस0ई0 : 'शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी',मुम्बई, यकिल्स पेकर एण्ड सिमन प्राइवेट लिमिटेड (1981)
8. गिल्फर्ड, जे0पी0 : 'फन्डामेंटल स्टेटिस्टिक्स इन साइकॉलाजी एण्ड एजूकेशन', न्यूयार्क, एम0रा0 हिल बुक कम्पनी (1971)
9. हेल्मर, गिल्मर बी0 वॉन : 'अप्लाइड साइकालॉजी',न्यू दिल्ली, मैक्ग्रा हिल कम्पनी (1967)
10. पाठक, पी0डी0 : 'शिक्षा मनोविज्ञान',आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर (2007)
11. कपिल, एच0 के0 : 'सांख्यिकी के मूल तत्व',आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन हाउस (1975)
12. माथुर, एस0एस0 : 'शिक्षा मनोविज्ञान',आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर (2004)

सत्ता हस्तान्तरण में 1857 की भूमिका

डॉ. कुन्दन कुमार*

प्रस्तावना – बिट्रेन द्वारा भारतीय सत्ता के हस्तान्तरण में 1857 ई0 क्रांति की महत्वपूर्ण भूमिका है, जिसके परिणाम स्वरूप भारत को 1947 ई0 में आजादी मिली। सर जे0 एन0 सरकार ने लिखा है, **'सन् 1857 का बिद्रोह कोई विप्लव न होकर भारतीयों का प्रथम स्वधीनता संग्राम था।'**

यह पहला संग्राम था, जो राष्ट्रीय स्तर पर लड़ा गया, जिसमें देश के सामान्यत: सभी क्षेत्र चाहे वह बंगाल हो, अवध, मेरठ, लखनऊ, दिल्ली या अन्य कोई प्रान्त सभी ने बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। इसमें समाज के सभी वर्गो एंव समुदायों ने भी योगदान दिया। जिसमें हिन्दुओं, मुसलमानों एव सिखों की भूमिका अग्रणी रही। उनकी एकता को देखकर लगने लगा था कि अब अंग्रेजों के शासन का शीघ्र ही अन्त हो जाएगा। लेकिन भारत से ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन का अन्त अवश्व हो गया और यहाँ का शासन सीधे बिटेन की महारानी द्वारा संचालित होने लगा। जो अन्तोगत्वा 1947 ई0 में बिट्रेन की शक्ति क्षीण होने पर सत्ता हस्तान्तरण की कारण बनी।

सत्ता हस्तान्तरण में 1857 ई0 की क्रांति का काफी योगदान है लेकिन अनेक ब्रिट्रिश इतिहासकारों ने तो इसे भारतीय स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम मानने पर प्रश्न चिन्ह् खड़ा किया है। मोलसेन, ट्रेवेलियन, होम्ज, शीले, स्मिथ जैसे ब्रिट्रिश इतिहासकार इसे केवल **'गदर'** अथवा **'सैनिक बिद्रोह'** कहकर ही छुट्टी पा लेने का प्रयत्न किया। जिसका कई जनाधार नही था जिसका तात्कालिक कारण चर्बी वाले कारतूस थे। स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने लिखा है **'यह केवल सैनिक विद्रोह ही नही था। यह भारत में शीघ्र फैल गया और इसने जन विद्रोह एंव भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का रूप धारण किया था।'**

1947 ई0 में हुई सत्ता के हस्तान्तरण में 1857 ई0 की क्रांति का योगदान काफी महत्वपूर्ण था। अशोक मेहता ने लिखा है, **'नि:सदेह भारतीय सैनिक विद्रोहियों के अंग थे, बिद्रोह के प्राण थे और गुलामी की बेड़ियों को तोड़ने के लिए अग्रगामी थे, परन्तु इस सैनिकों के अतिरिक्त लाखों अन्य व्यक्तियों ने भी उसमे भाग लिया और जीवन की आहूति दी। इस क्रांति के राष्ट्रीय होने का सबसे प्रबल प्रमाण यह है कि हिन्दू और मुसलमान दोनों जातियों ने इसमें सक्रिय भाग लिया और कन्धें से कन्धा मिलाकर अंग्रेजी साम्राज्य को भारत से समाप्त करने का प्रयास किया। अत: इसे राष्ट्रीय विप्लव मानना सर्वथा उचित होगा।'**

ब्रिटेन द्वारा भारत को सत्ता हस्तान्तरण में 1857 ई0 की क्रांति की ही भूमिका थी, जिसके परिणामस्वरूप भारतीय राष्ट्रीय क्रांगेस जैसी संस्था स्तीत्व में आई। इसकी स्थापना प्रसिद्ध अंग्रेज ए0 ओ0 ह्यूम द्वारा 1885 ई0 में की गई। जिसमे 72 प्रतिनिधियों ने 28 दिसंबर 1885 ई0 को गोकुल दास तेजपाल संस्कृत पाढ़शाला में आयोजित कान्फ्रेंस में भाग लिया था। इस अधिवेशन के प्रथम सभापति उमेश चन्द्र बनर्जी थे।

1857 ई0 की क्रांति के बाद सत्ता का संचालन करना अंग्रेजो के लिए कठिन हो गया था। फलत: अंग्रजी निति के पक्षधर कुछ लोगों को मिलाकर इस संस्था की स्थापना की गई। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के बारे में कुछ विद्धानों का तर्क है कि ए0 ओ0 ह्यूम अवकाश प्राप्त अंग्रेज पदाधिकारी थे, जिन्हे तात्कालीन वायसराय लार्ड डफरिन और अनेक ब्रिट्रिश राजनितिज्ञों का आर्शिवाद प्राप्त था। लाला लाजपत राय ने अपने पुस्तक **'यंग इंडिया'** में लिखा है कि, **'कांग्रेस की स्थापना का मुख्य उद्धेश्य अंग्रजी सामाज्य को खतरे से बचाना था, भारत की राजनैतिक स्वतंत्रता के लिए प्रयत्न नही। ब्रिटिश साम्राज्य का हित प्रमुख था। भारत का कोई भी व्यक्ति यह नही कह सकता था कि कांग्रेस ने इस उद्धेश्य के लिए प्रयत्न नही किया।'**

जबकि कुछ ब्रिटिश इतिहासकारों के अनुसार 1857 ई0 का विद्रोह महज कुछ भारतीय मुसलमानों का विद्रोह था, जिन्होने अपने विद्रोह में कंपनी से असंतुष्ट अधिकारियों नवाबों एवं कुछ हिन्दू राजाओं को मिला लिया था उनकी मंशा अंग्रेजों से सत्ता प्राप्त कर दिल्ली के सिंहासन पर मुगल बादशाह बहादूरशाह जफर को बैठना था। डब्लू टेलर व सर जेम्स आउट्रम के अनुसार **'यह अंग्रेजों के विरूद्ध मुसलमानों का षडयंत्र था, जो हिन्दुओं की शिकायत के बल पर लाभ उठाना चाहते थे।'**

परन्तु अनेक भारतीय इतिहासकार एंव विद्धान अंगेज इतिहासकारों के मत से सहमत नही है उनके अनुसार यह विद्रोह अंग्रेज सत्ता द्वारा किये जा रहे शोषण, अन्याय और अत्याचार के विरूद्ध स्वेदश की रक्षा के लिए प्रथम भारतीय विद्रोह था। जो अपने देश की रंक्षा के लिए विधर्मी अंग्रजों को निकालने के लिए द्दढ़ संकल्प हो उठे। जो ईसाई धर्म का आड़ में भारतीय धर्म को नष्ट करना चाहते थे।

सत्ता हस्तान्तरण में 1857 ई0 के दौरान ईसाई धर्म के बढ़ते प्रभाव ने भी निर्णायक भूमिका निभाई। **रीज** ने भी इस बात को माना है कि भारत में ईसाई धर्म के बढ़ते प्रभाव से असंतुष्ट होकर भारतीय नागरिकों ने अपने धर्म की रंक्षा के लिए संघर्ष किया। विद्रोह की गर्मी में भिन्न-भिन्न धर्मो के नैतिक नियमों का लड़ने वालों पर कोई नियंत्रण नहीं रहा। दोनों धर्मो ने अपनी-अपनी ज्यादितियों को छिपाने के लिए अपने-अपने धर्म ग्रन्थों का आश्रय लिया। अन्तत: ईसाई जीत गए परन्तु धर्म नही। यह ठीक है कि पाश्चात् विज्ञान की नई ईसाई धर्म प्रचारकों को धर्म प्रचार में कोई विशेष सफलता नहीं मिली।

सत्ता हस्तान्तरण में 1857 ई0 के दौरान उपजी रंग-भेद की नीति भी उत्तारदायी थे। गोरे लोग अपने को श्रेष्ठ समझते थे तथा भारतीयों को काले

* एम0 ए0, पी0-एच0 डी0 (इतिहास) बी0 आर0 ए0, बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार) भारत

लोग मानते थे। अंग्रेज भारत में ही रहकर भारतीयों के साथ दूसरे दर्ज का व्यवहार करते थे। ट्रेनों में प्रथम श्रेणी के डिब्बे भारतीयों के लिए बन्द रहते थे। होटलों व प्रमुख स्थानों पर भारतीयों का प्रवेश वर्जित था। वहाँ लिखा होता था, **'Dog's and Indian are not allowed'**

टी0 आर0 होम्स जैसे अंग्रेज इतिहासकारों ने लिखा है, **'यह तो बर्बरता और सभ्यता के बीच युद्ध था।'**

सत्ता हस्तान्तरण में देशी राजाओं के असंतोष ने भी निर्णायक भूमिका निभाई जो 1857 ई0 की क्रांति के दौरान प्रकट हुई। 1857 के विद्रोह में अनेक देशी रियासतो नागपुर, ग्वालियर, अवध, बरार, कानपुर या बिहार के जगदीशपुर के बाबू कुँवर सिंह सभी ने बढ–चढ़कर हिस्सा लिया। ये सभी अंग्रेजो के **'हड़प निति'** से असंतुष्ट थे। डलहौजी ने **'डाक्ट्रीन ऑफ लैप्स'** की नीति के तहत कितने ही देशी रियासतों को उनकी इच्छा के विरूद्ध ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया था। भले ही देशों राज्य अपनी रियासते प्राप्त करना चाहते थे या अपनी आर्थिक इच्छाओं की पूर्ति करना चाहते थे, लेकिन इसकी पृष्टभूमि में उनका एक ही उदेश्य था कि ब्रिटिश राज्य का अन्त। जिसके लिए नाना साहेब, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, बिहार के आरा के बाबू कुँवर सिंह ने अपने जीवन के अन्त तक अंग्रेजों का सामना किया और कुछ क्षेत्रों में विजय भी प्राप्त की।

सत्ता हस्तान्तरण की पृष्टभूमि 1857 ई की क्रांति के फलस्वरूप ही तैयार हुई। इस क्रांति का प्रभाव निम्न क्षेत्रों पर पड़ा– 1. ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन का अन्त 2. साम्राज्य विस्तार की नीति का अंत 3. असैनिक सेवा कानून 4. फूट डालों और राज करो नीति का अनुसरण 5. सैनिक नीति में परिवर्तन 6. उग्रवाद का उदय 7. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना 8. सुधार युग का आरंम्भ 9. चंपारण आंदोलन का आंरभ 10. असहयोग आंदोनल का आंरभ 11. सविनय अवज्ञा आंदोलन का आरंभ 12. भारत छोड़ो आंदोलन का आरंभ।

1857 ई0 की क्रांति का ही प्रभाव था कि सत्ता हस्तान्तरण के लिए वैवेल योजना तथा कैबिनेट मिशन योजना भारत भेजी गई। 1945 ई0 में इंगलैंड में आम–चुनाव हुए, इस चुनाव में श्रमिक दल का प्रभुत्व कायम हुआ। श्रमिक दल ने चुनाव घोषणा पत्र में भारतीय समस्या को हल करने का वचन दिया। 20 फरवरी, 1947 को प्रधानमंत्री एटली ने ब्रिटिश संसद में घोषणा की भी थी कि वह जून 1948 तक भारतीय हाथों में सता का हस्तान्तरण कर देगी।

अन्तोगत्वा 1857 ई0 की क्रांति, सत्ता हस्तानन्तण में निर्णायक सिद्ध हुई, जिसने भारतीय के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के अनेक मार्ग खोले। इन मार्गो में माउण्ट बैटन योजना सबसे निर्णायक सिद्ध हुई। लार्ड वैवेल के बाद माउण्ट बैटन 23 मार्च, 1947 ई0 को भारत के वायसराय नियुक्त किये गए। जिन्हें बिट्रिश सरकार का सख्त निर्देश था कि 30 जून, 1948 के पहले भारतीयों के हाथों में सत्ता का हस्तान्तरण करा दें। फलत: 3 जून, 1947 ई0 को उन्होंने एक योजना के तहत देशी राज्यों की इच्छा, अल्पसंख्यकों की इच्छा, सिन्ध प्रान्त, उत्तार–पश्चिमी सीमा प्रान्त, आसाम के सिलहट क्षेत्र के अधिकांश मांगो को मान लिया। फलस्वरूप 15 अगस्त, 1947 ई0 को भारत जैसे देश का उदय हुआ व सत्ता स्थानान्तरण संभव हो सका।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. बी0 एल0 ग्रोवर,– भारतीय स्वतंत्रता संग्राम।
2. डी0पी0एस0 मनराल– राष्ट्रीय आंदोलन।
3. कालेश्वर राय– आधुनिक भारत का इतिहास।
4. डॉ राजेन्द्र प्रसाद– इंडिया डिवाइडेड।
5. राम मनोहर लोहिया– समाजवादी आंदोलन का इतिहास।
6. विपिन चन्द्रा– राष्ट्रीय आंदोलन की दीर्घकालीन राजनीति।
7. उमा मुखर्जी– फाइट फोर फ्रीडम एण्ड स्वदेशी जागरण।
8. तेंदुलकर– भारत छोड़ो आन्दोलन।
9. के0 डी0 गौतम– भारतीय राजनैतिक व्यवस्था।
10. महादेव देसाई– गाँधी की सत्याग्रह की झलक।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

मध्यकालीन बीकानेर राज्य में विवाह संस्कार के स्वरूप का विश्लेषणात्मक अध्ययन

शिवरतन सिंह यादव* अजय गोदारा**

प्रस्तावना – प्राचीनकाल में भारतीय समाज में व्यक्ति के व्यक्तित्व के उत्थान के लिये संस्कारो का संयोजन किया गया था। शुद्धता, आस्तिकता, धार्मिकता, और पवित्रता, संस्कार की मुख्य विशेषतायें मानी गयी संस्कारो की संख्या सोलह है लेकिन इन संस्कारो में सबसे महत्वपूर्ण एवं श्रेष्ठ संस्कार विवाह संस्कार है, विवाह संस्कार के अनेक उद्देश्य थे जैसे व्यक्तित्व की पूर्णता सामाजिक उत्तरदायित्व निभाना आदि।

वैदिक कालीन साहित्य से ज्ञात होता है कि पुरूष अपने आप में पूर्ण नही होता है स्त्री उसको पूर्ण बनाती है विवाह आठ प्रकार के होते थें ब्रहा विवाह, देव विवाह, आर्श विवाह, प्रजापत्य विवाह, गन्धर्व विवाह, असुर विवाह, राक्षस विवाह, पैशाच विवाह, इनमें ब्रह्मा विवाह, देव विवाह, आर्ष विवाह, प्रजापत्य विवाह, को ही विधि सम्वत माना जाता था।

मध्यकालीन बीकानेर राज्य में भी विवाह संस्कार का स्वरूप अलग अलग समाज में अलग– अलग था जहाँ जनसाधारण में विवाह संस्कार एक सामान्य सादगी से पूर्ण संस्कार था वहीं राजघराने में विवाह संस्कार सबसे बडी प्रतिष्ठा एवं गौरव का प्रतीक समझा जाता था। बीकानेर राजघराने में विवाह समारोह से पूर्व बडी मात्रा में त्याग (विवाह के समय चारण एव भाटों को दिया जाने वाला दान) बांटना षुरू हो जाता था और अनेक दिनो तक यह प्रक्रिया निरन्तर जारी रहती थी।

बीकानेर राज्य के उच्च वर्ग में विवाह संस्कार का स्वरूप – बीकानेर राजा महाराजाओं तथा सामन्त वर्ग में सगाई एवं विवाह संस्कार पर भारी खर्च किया जाता था सगाई का एक ऐसा ही उदाहरण:– महाराजा गजसिंह के समय जैन कुवंर की सगाई में सोने चाँदी के नारियल दिये गये। कलंगी भी दी गई जिसमें 69 हीरे जडे हुऐ थे, एक हाथी एवं दस घोडे दिये गये सारा सगाई का सामान राजपुरोहित लेकर वर पक्ष के पास उदयपुर गया।

विवाह संस्कार राजनीति स्थिति को मजबूत बनाने हेतु भी किये जाते थे ऐसा ही एक उदाहरण बीकानेर के महाराजा सूरसिंह के समय का प्रस्तुत किया जा सकता है। सूरसिंह ने भाटी सामन्तो के साथ वैवाहिक सम्बन्धो को इसलिये स्थापित किये तांकि उसके विरोधी भाई दलपत सिंह के विरूद्ध भाटी सामन्त उसको सहायता प्रदान कर सके।

सगाई का दस्तूर राजा की आज्ञा से ही किया जाता था कुंवर कुंवरियो से उनके रूचि एवं विचार नही लिये जाते थें जिसके कारण अनेक बार कुंवर व कुंवरियाँ वैवाहिक सम्बन्ध करने से मना कर देती थी। बीकानेर के महाराजा सूरतसिंह की बहिन की सगाई अलवर के राजा से होना तय हुआ तो सूरतसिंह की बहिन ने इसका घोर विरोध किया सगाई नही होने दी।

ऐसा भी उदाहरण मिलता है कि उत्तराधिकार संघर्ष में अगर राजकुमारियों की हत्या हो जाती थी तो उन घरानों में बीकानेर राज्य की राजकुमारियों की शादी नही की जाती थी। ऐसा उदाहरण है कि बीकानेर रियासत की राजकुमारियों की शादी सिरोही एवं जैसलमेर में हुयी थी लेकिन उत्तराधिकार संघर्ष में उनकी हत्या कर दी गयी थी इसलिये बीकानेर राजघराने ने सिरोही एवं जैसलमेर में अपनी राजकुमारियों का विवाह न करने का फैसला लिया।

उच्चवर्ग विवाह के अवसर पर में बडे पैमाने पर त्याग बांटा जाता था चारण एवं भाटों को विवाह के अवसर जो ज्यादा त्याग देता था उसका गुणगान चाण भाट करते थें न सिर्फ राजा महाराजा बल्कि छोटे बडे ़सरदार भी त्याग बांटते थे कर्ज लेकर भी त्याग बांटा जाता था जिसके कारण लोग कन्यावध कर देते थे उसके इस कु–प्रथा को रोकने के लिये बीकानेर के महाराजा रतनसिंह ने इस विषय पर नियम बनाकर आदेष जारी किया कि सरदार अपनी हैसियत से ज्यादा खर्च न करे, महाराजा रतनसिंह तीर्थयात्रा के समय 1837 ई. में अपने सरदारो से प्रतिज्ञा ली थी कि कोई भी सरदार कन्यावध नही करेगा। वि.स. 1901 में अंग्रेजी सरकार की तरफ से एक खरीता बीकानेर के महाराजा के पास आया था कि विवाह के अवसर पर अत्याधिक खर्चे को रोका जाये और यह नियम बनाया गया कि अगर विवाह के अवसर पर 100 रू खर्च किये जाये तो त्याग अधिकतम 10 रू. बांटा जाये।

बीकानेर राज्य के जनसाधारण वर्ग में विवाह संस्कार – बीकानेर के जनसाधारण वर्ग में वैवाहिक सम्बन्ध समाज में प्रतिष्ठा के आधार पर होता था वधू पक्ष का घर आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से जैसा होता था वैसा ही घर अपनी पुत्री के लिये ढूंढता था। मध्यम एवं निम्न वर्ग के लोग नारियल लडके वालों (वर पक्ष)– वधू पक्ष के घर भेजा जाता था जबकि राजघराने व सामन्ती मुतसदी वर्ग में यह परम्परा बिल्कुल उल्टी थी इन वर्गो में वधू की तरफ से वर पक्ष को नारियल भेजा जाता था, जनसाधारण वर्ग में सगाई सम्बन्ध करते समय वर पक्ष की ओर से वधू पक्ष को रीत दी जाती थी रीत अलग अलग जातियों में आर्थिक स्थिति पर निर्भर करती थी अगर रीत के रूपयों नगदी नही होते तो उधार रख सकता था तथा उन रूपयों को बाद में चुकाने का आश्वासन दे सकता था ऐसा उदाहरण मिलता है कि किशनसर के रामा छीपा की सगाई स.1830 में पीपालसर के भोमें की बेटी से तय हुआ जब रीत का 5 रू. चुकाया गया तब शादी हो पायी।

अनेक जातियो में आमने सामने वैवाहिक सम्बन्ध निर्धारित किये जाते

* शोधार्थी, महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर (राज.) भारत
** शोधार्थी, महाराजा गंगासिंह विश्वविद्यालय, बीकानेर (राज.) भारत

थे जिनको 'दुहरा सगपण' कहा जाता था।

सगाई तो बाल्यावस्था में ही तय कर दी जाती थी लेकिन विवाह बडे होने पर किया जाता था ऐसा उदाहरण किलाणसर के जोधराज की लडकी की सगाई जूने के बेटे से हुयी तब लडके की आयु 1 वर्ष तथा लडकी की आयु 6 माह थी।

सगाई सम्बन्धो का विच्छेद भी हो जाता था इसको वैर कहा जाता था। वैर एक प्रकार का आर्थिक दण्ड होता था इसमें दोषी पक्ष वैर की राशि पीडित पक्ष को चुकाता था ऐसा उदाहरण मिलता है कि फतेहचन्द बोथरा के पुत्र निर्मलचन्द की सगाई रामलाल बांठिये की बेटी से हुयी थी सगाई तोडने पर वैर की 100 रू. राशि चुकानी पडी थी।

जनसाधारण वर्ग में विधवा विवाह का प्रचलन था जिसको नाता प्रथा कहते थे पति की मृत्यु होने के बाद सामान्यत: मृत पति के भाई के साथ या निकटतम देवर के साथ किया जाता था। नाता प्रथा में एक निश्चित राशि दी जाती थी ऐसा एक उदाहरण मिलता है कि 31 रू. से 151 रू. तक कि राशि रकम विधवा के घर वाले को दी जाती थी।

अत: कहा जा सकता है कि उच्च वर्ग एवं राजघरानों तथा सामन्त वर्ग में विवाह संस्कार में प्रतिष्ठा, धन तथा विलासिता का प्रर्दशन किया जाता था वहीं पर निम्न एवं मध्यम वर्ग में विवाह एक सामान्य संस्कार था उच्च वर्ग में विधवा विवाह का प्रचलन नही था जबकि निम्न एवं मध्यम वर्ग में विधवा पुर्नविवाह प्रथा जिसको नाता प्रथा कहा जाता था का बडे पैमाने पर प्रचलन था जो विधवा स्त्री के नवजीवन की कसौटी था।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बाइया रे ब्याव री बही वि.स. 1706
2. बीकानेर ब्याव बही वि.स. 1818
3. बाइया रे ब्याव बही वि.स. 1816
4. दयालदास री ख्यात भाग-2 सम्पादक डॉ. दशरथ शर्मा अनूप संस्कृत पुस्तकालय बीकानेर
5. कागदो की बही विक्रम संवत 1811
6. शर्मा डॉ. जी.एन.- सोशयल लाइफ इन मिडेविल राजस्थान
7. टॉड कर्नल जेम्स एनाल्स एण्ड एन्टिक्विटीज ऑफ राजस्थान
8. देवडा जी.एम. बीकानेर राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था
9. शर्मा डॉ. गोपीनाथ- राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास
10. मनोहर डॉ. राघवेन्द्र सिंह राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास
11. कत्छल मंजू- सामाजिक कुरूतियाँ एवं स्त्रियों की स्थिति में परिवर्तन
12. अरोडा डॉ. शशि- राजस्थान में नारी की स्थिति
13. ओझा गोरी शंकर - हीराचन्द - बीकानेर राज्य का इतिहास भाग 1 व भाग 2

****

यशपाल की कहानियों में चित्रित रूपाजीवा

दीपक सिंह*

प्रस्तावना – आज स्त्री–विमर्श को लेकर नारी चेतना से संबंधित अनेक कहानियां और उपन्यास लिखे जा रहे है, जिसमें नारी की स्थिति स्वयं को संघर्षशील और कर्तव्यनिष्ठ बनाती हुई प्रतीत होती है। नारी के संघर्ष का परिणाम यह है कि नारी आज सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, व्यावसायिक और वैज्ञानिक क्षेत्रों में पुरुष के समान ही नहीं, वरन पुरुष से बढ़कर अपनी नि:शंक सेवाएं दे रही है, लेकिन व्यैक्तिक स्वतंत्रता के नाम पर स्त्री को छला जा रहा है। कहीं उनका मातृत्व तो, कहीं भ्रूण हत्या कर दी जाती है। तलाक पुनर्विवाह या स्त्री यौन–शोषण पर लेखनी जब प्रकाशनार्थ मार्ग ढूँढती है तो संपादकों द्वारा स्त्री लेखन चूल्हा–चौका का लेखन कहकर खेद सहित लौटा दिया जाता है। लेकिन महिला लेखिकाओं ने हार नहीं मानी और जब से महिला लेखिकाओं ने कलम पकड़ा है तब से सामाजिक सरोकारों पर कलात्मकता और ईमानदारी के साथ निरंतर परिवर्तन आया है। महिला रचनाकारों ने साहित्य के माध्यम से जन–जागरण की अलख जगाई और कामयाबी से आगे बढ़ रही है। किन्तु स्त्री समाज का एक वर्ग ऐसा भी है जिसकी स्थिति ज्यों का त्यों बनी हुई है, वह है रूपाजीवा। हमारे साहित्य समाज और देश में सदैव स्त्री का स्थान ऊँचा रहा है। जन्मदात्री के कारण उसे जननी, जीवन भर साथ निभाने के कारण जीवनसंगिनी धर्म कार्यो में अनिवार्य रूप से सहभागिता के कारण उसे सहधर्मिणी और गृहकार्यो को नैतिक जिम्मेदारी के साथ व्यवस्थित करने के लिए गृहलक्ष्मी विशेषण से सुशोभित किया जाता है। भारत में तो स्त्री को देवी के रूप में स्वीकार किया जाता है। वेदों में भी कहा गया है कि 'यत्र नार्यस्तु पूजयेते रमते तत्र देवता:' आधुनिक युग में नारी का उत्तारदायित्व बढ़ गया है फिर भी पुरुष की स्वार्थी प्रवृत्तिा में इनके साथ छल किया तो कभी सामाजिक आर्थिक समस्याओं का सामना करने हेतु निराश्रित छोड़ दिया, सामाजिक आर्थिक समस्याओं ने एक नये नारी वर्ग को जन्म दिया जिसे रूपाजीवा या वेश्या कहा गया।

नारी के वेश्या बनने के कारणों में प्रमुख कारण है आर्थिक संघर्ष। नये कहानीकारों में भौतिक मूल्यों को सर्वग्राही तथा विध्वंसक मानते हुए भूख तथा सेक्स संबंधी जो कहानियाँ लिखी है उनमें आर्थिक विवशता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। इस प्रकार की समस्याओं को लेकर यशपाल ने अपनी लेखनी को गति प्रदान की।

यशपाल की कहानी आबरू एक ऐसी नारी की कहानी है जो अपने पति के साथ मुम्बई आयी थी, यहाँ आने के बाद आर्थिक संकट ने उसे शरीर बेचने के लिए मजबूर कर दिया और अपने क्लाइंट शिव से कहती है–'हम लोग क्या करें? इस बदन के सिवाय हम लोगों के पास है क्या.......?'[1] 'आबरू' कहानी में यशपाल ने ऐसे महिलाओं को रेखांकित किया है, जो पति के साथ परदेश गमन तो करती है, लेकिन जब आर्थिक संकट की स्थिति आती है तो उनके पास शरीर बेचने के सिवाय कोई दूसरा रास्ता नहीं बचता। 'आदमी या पैसा' कहानी में कहानीकार ने एक ऐसी अभ्यस्त नारी को चित्रित किया है जो यह मानती है कि पैसा ही सब कुछ है, आदमी कुछ भी नहीं–'मेरी जाँघ पर बहुत सा पाउडर डाल, उसे हाथों से सूतते हुए उसने उत्तार दिया–संतोष क्यों नहीं बाबू, टका मिलता है। मैने बात बढ़ाई टका ही मिलता है न! ....संतोष नहीं मिलता? टके से ही संतोष होता है बाबू! उसने उत्तार दिया पेट भरना है तो टका चाहिए। टके के लिए करती हूँ नहीं तो तुम टका क्यों दो?'[2]

जब ग्राहक उससे पूछता है कि पैसे के लिए वह किसी के भी साथ संबंध बना सकती है, तो वह कहती है कि इसमें क्या बुराई है, तो ग्राहक फिर पूछता है कि गुलजारा सिंह जैसे गंदे, भद्दे और कुरूप पुरुष के साथ भी तो वह कहती है–'बाबू तुम बीस देते हो तुम्हारी बात दूसरी है, पुराना साथ है, गुलजारा सिंह आता है पच्चीस–तीस दे जाता है बोतल साथ लाता है। कभी साड़ी, कभी कपड़ा अलग से दे जाता है, बाबू आदमी साथ नहीं सोता उसका पैसा सोता है।'[3]

यशपाल ने रोटी और सेक्स की समस्या को अनेक कहानियों में निरूपित किया है। किस प्रकार पूँजीवादी सामाजिक विधान में नारी को अपनी इज्जत–आबरू का सौदा करना पड़ता है। यशपाल के अनुसार गृहस्थ नारी जो आर्थिक रूप से बहुत कमजोर है उसका जीवन वेश्या से भी बद्तर है। दुखी–दुखी कहानी में यशपाल वेश्या के प्रति समाज को इस तथ्य से अवगत कराना चाहते है कि–'जैसे डाक्टर, वकील और दुकानदारों में छोटे–बड़े का दर्जा है वैसे रंडियों में भी है। एक रंडिया चावडी में रहती है जहाँ अट्टालिकाओं पर फूलों के गजरे लटके रहते है............दूसरी रंडिया है रोशन थियेटर के नीचे की ओर प्राय: धुँधली लालटेन गिरी दीवारे के छज्जे के कमरे से लटकी रहती है उसके साथ ही जैसे रोशनी पर आये पतंगों को निगलने के लिए छिपकली ताक लगाए बैठी रहती है, वैसे ही मुँह पर सफेद रंग पोते रंडिया ग्राहकों की बाट जोहा करती है।'[4]

यशपाल इसी कहानी में वेश्या के प्रति सहानुभूति एवं करूणा प्रकट करते है, और यह बताना चाहते है कि उनका यह अनैतिक कर्म परिवेश के कारण अनैतिक नहीं रह जाता है। अनजाने में जब एक भूखा व्यक्ति वेश्या के कोठरी में पहुँच जाता है, तो वेश्या गिड़गिड़ा कर कहती है–'तुम जो चाहो अल्लाह के नाम पर दे देना मैं मरी जा रही हूँ। आज चार रोज मुझे यहाँ आये हो गये है। अल्लाह की कसम एक दाना मुँह में नहीं गया।'[5] वह भूखा व्यक्ति जब वेश्या की दयनीय दशा से परचित होता है तो उसको कुछ समझ में नहीं आता है और इसके इस कृत्य से न जाने क्यों उसके प्रति जरा भी ग्लानि नहीं हुई–'वह जो शरीर का सौदा करने बैठी थी, न जाने क्यों मुझे उसके

*शोधार्थी, तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

प्रति जरा भी ग्लानि न हुई। कह नही सकता, मेरा विवेक मर गया था या स्वयं मेरे अपने पेट की 'आग' उसकी ओर से सफाई दे रही थी। उस समय एक रोटी के लिए मैं क्या कुछ करने को तैयार न हो जाता यह आज नहीं कह सकता।'[6] उस वेश्या की भूख को देखकर यह कहावत चरितार्थ होती है कि 'मरता क्या न करता'।

वेश्या नारी का एक और रूप यशपाल की कहानी 'हलाल का टुकड़ा' में दिखाई देता है, जहाँ फुलिया वेश्या होकर भी धर्म को पहचानती है। ईमानदारी से शरीर का सौदा करने वाली वेश्या फुलिया दो रूपये में शरीर बेचती है, लेकिन कांग्रेस नेता रावत के दो हजार रूपये ठुकरा देती है-'फुलिया के बेरौनक चेहरे की ओर देखकर वे सोचने लगे जवानी को टके-टके बेचने वाली अपने शरीर का सौदा करने वाली यह औरत बासी गोश्त-पूरी को देखकर अपने को न सम्भाल सकने वाली, यह दो हजार को कैसे ठुकराये दे रही है!.... इसका भी धर्म है, ईमान है, इज्जत है! उन्हें फुलिया के चेहरे पर एक ज्योति दिखाई देने लगी जैसे कोई परम त्यागी सतवंती देवी उसके सामने बैठी हो।'[7]

कांग्रेस नेता रावत को फुलिया वेश्या में एक सतवंती, परम त्यागी स्त्री दिखाई देती है। रावत लिफाफे का मुँह खोलकर दस-दस के नोट निकाल कर फुलिया को देना चाहा तो फुलिया घृणा से मुँह फेरकर कहा-'वाह रे! हम कोई पीर-फकीर है क्या जो हाथ फैलाकर खैरात लेगें। हमारी मेहनत का जो भी अल्ला देगा किसी की खिदमत करेगें तो हलाल के टुकड़े पर हमारा हक होगा। ऐसे गये थोड़े है कि भीख लें।'[8]

कहानीकार यशपाल ने वेश्या के कई रूप चित्रित किया है। कही घर से परदेश आयी स्त्री जो आर्थिक संकट के कारण वेश्यावृत्ति को अपनाती है, तो कहीं सिर्फ पैसे के लिए ही वेश्यावृत्ति को अपना पेशा बनाती है, तो कहीं पेट भरने के एक रोटी के ही लिए मजबूर होकर इस कुकृत्य को अपनाती है। कहानीकार ने वेश्या के एक नये रूप में देखा और बड़े सादगी के साथ चित्रित किया है, जिसमें यह बताने का प्रयास किया है कि रूपाजीवा का भी ईमान और धर्म होता है। समाज की दृष्टि से कुकृत्य करने वाली वेश्याओं का अपना अलग जीवन है जो हराम के पैसों को ठुकराना पसंद करती है।

स्वातंत्र्योत्तर कहानीकार यशपाल ने वेश्यानारी या वेश्यावृत्ति पर खुलकर अपनी लेखनी चलायी है। वे इस उपेक्षित वर्ग के साथ संवेदना और करूणा के स्तर पर साथ खड़े दिखाई देते है। इनके समर्थन में खुलकर आवाज उठाते है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तुमने क्यों कहा था मैं सुन्दर हूँ, यशपाल, लोकभारती पेपर बैक्स दूसरा संस्करण 20114, पृ0सं0-107
2. चित्रका शीर्षक यशपाल, लोकभारती पेपर बैक्स, पहला संस्करण 2010 पृ0सं0 31
3. वही पृ0सं0 32
4. पिंजरे की उड़ान, यशपाल, लोकभारती पेपर बैक्स दूसरा संस्करण 2014 पृ0सं0 74
5. वही, पृ0सं0 75
6. वही, पृ0सं0 76
7. ज्ञानदान, यशपाल, लोकभारती पेपर बैक्स पहला संस्करण 2010 पृ0सं0 112
8. वही, पृ0सं0 113

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

भारत चीन सम्बन्धों का बदलता परिदृश्य

डॉ. श्रीकांत दुबे *

शोध सारांश – भारत चीन सम्बन्धों में कभी भी स्थायित्व का भाव नहीं रहा। दोनो देशों के मध्य आसन्न विवाद इसका प्रमुख कारण रहा है। दोनों देश सीमा विवाद का शांतिपूर्ण एवं स्वीकार्य हल तो चाहते हैं लेकिन वास्तविक नियंत्रण रेखा पर घटने वाली घटनाएं इस ओर बढ़ने नहीं देती। जनसंख्या की दृष्टि से दोनों देश विश्व में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।दोनों देशों के सम्बन्ध विश्व के राजनीतिक परिदृश्य को परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। दोनों देश सोहाद्र एवं शांति की ओर अग्रसर होते दिखाई देते हैं किंतु दूसरी ओर भारत के सीमावर्ती देशों में चीनी दखल इसमें विघ्न उत्पन्न करता है। भारत चीन के मध्य संबंधों की कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती वर्तमान परिदृश्य में जब समूचा विश्व महामारी की चपेट में है ऐसे समय में चीन की ओर से विवादों को न्यौता दिए जाने में कोई कोर कसर नहीं रखी जा रही है। गलवान घाटी एवं लद्दाख की घटना इसकी गवाह है ।भारत ने भी अपनी कूटनीति में परिवर्तन किया है एवं चीन को उसी की भाषा में जवाब भी दिया है। फिर भी आने वाले समय में कौन सी घटनाएं घटित होंगी यह नहीं कहा जा सकता।

प्रस्तावना – भारत और चीन की राजनीतिक व्यवस्था में बहुत बड़ा अंतर है, एक और जहां भारत पूर्ण लोकतांत्रिक राष्ट्र है वहीं चीन में साम्यवादी शासन व्यवस्था है, एवं उसने दिखावे के लिए लोकतांत्रिक प्रणाली अपना रखी है। दूसरी ओर भारत जहां पड़ोसी राष्ट्रों की संप्रभुता का सम्मान करता है वहीं चीन की नीति विस्तारवाद की है, यही कारण है कि भारत और चीन की दोस्ती कभी भी स्थाई प्रवृत्ति की नहीं रही। भारत और चीन के मध्य विवाद हमेशा बने रहे, विशेषकर सीमा विवाद । दोनों देशों की आर्थिक निर्भरताओं के कारण ये विवाद उभरते रहे एवं फिर कुछ समय के लिए दब भी गए।वर्तमान हालात में तो दोनों देशों के रिश्ते पुन: सामान्य हो सकेंगे इसकी संभावना नजर नहीं आ रही है ,क्योंकि दोनों के मध्य विश्वास कायम होने की स्थिति दिखाई नहीं दे रही है। वर्तमान समय में समूचा भारतीय जनमानस चीनी विरोध की प्रवृत्ति का समर्थन कर रहा है। दोनों राष्ट्रों के कारोबारी रिश्ते भी बिगड़े हैं। एक और जहां चीन भारतीय सीमा पर घुसपैठ की फिराक में है वही भारत उसका पुरजोर विरोध करते हुए आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर होने हेतु प्रयासरत है। हल ही में भारत ने विभिन्न एशियाई राष्ट्रों के साथ संबंध मजबूत करने के प्रयास तेज किए हैं, भारत की इस पहल को चीन के साथ संतुलन स्थापित करने की नीति के तौर पर देखा जा सकता है। भारत अपनी क्षमता में वृद्धि करने हेतु भी प्रयासरत है जिससे चीन पर उसकी निर्भरता कम की जा सके।

ऐसे समय जबकि समूचा विश्व महामारी से निपटने हेतु आपसी सहयोग एवं समन्वय चाहता है वही विश्व के दो बड़े राष्ट्र आपसी विवाद से प्रभावित हैं, हालियाँ घटनाएं इसका प्रमाण है, जब दोनों देशों की सेनाएं आमने-सामने आ गई हैं।भारत एवं चीन के मध्य स्थित सीमा रेखा को पार करते हुए चीनी सेना अस्थाई कैंप लगाकर भारत की सीमा की ओर बढ़ने लगी परिणाम स्वरूप भारतीय सैनिकों के विरोध में आपसी संघर्ष की स्थिति निर्मित की अंतत: दोनों सेनाओं को पीछे हटने हेतु समझौता करना पड़ा।वर्तमान परिदृश्य ने इस घटना से यह संदेश जरूर दिया कि भारतीय सेना किसी भी परिस्थिति का सामना करने हेतु तत्पर है ।मोदी शासनकाल में सेना में नवीन मनोबल दिखाई दिया ,भारत सरकार ने स्पष्ट किया कि चीन को 1 इंच जमीन पर भी कब्जा नहीं करने दिया जाएगा वहीं चीन अपनी विस्तारवादी नीति से पीछे हटने की स्थिति में दिखाई नहीं देता ,इन घटनाओं के परिणाम स्वरुप भारतीय सेना ने अपनी ताकत सीमा पर बढ़ा दी है, जिससे किसी भी परिस्थिति का सामना करने हेतु वह तत्पर रहें। वर्तमान परिदृश्य में जहां भारत विश्व पटल पर अपनी उपस्थिति दर्ज करवा रहा है, वहीं चीन भारत की बढ़ती साख से परेशान होकर उसे विश्व मानचित्र पर प्रभावी भूमिका से रोकने की पूर्ण कोशिश कर रहा है, किंतु कूटनीतिक स्तर पर उसे सफलता नहीं मिल रही है।अमेरिका, फ्रांस, इजराइल व अन्य देशों के भारत का समर्थन करने के कारण उसने विश्व का ध्यान भटकाने हेतु सीमाई क्षेत्र में भारत को उलझा है। उसने अपनी पुरानी रणनीति पर कार्य करना प्रारंभ कर दिया है।लेकिन बदलते परिवेश में भारत चीन के इस कदम का पुरजोर विरोध भी कर रहा है एवं काफी हद तक चीन को पीछे धकेलने में सफल हुआ है।

भारत चीन संबंधों का ऐतिहासिक स्वरूप–भारत चीन के वर्तमान संबंधों को जानने हेतु हमें इतिहास में झांकना होगा।1950 में चीन में साम्यवादी शासन की स्थापना हुई इसी समय चीन ने तिब्बत पर आक्रमण कर उसे हथिया लीया, इस स्थिति में भारत एवं चीन सीमाई राष्ट्र बन गए, दोनों के मध्य संबंधों की शुरुआत प्रारंभ में व्यापारिक एवं यात्रियों के आवागमन तक सीमित रही। 1954 में पंचशील समझौते के माध्यम से भारत ने दोनों के संबंधों को विस्तार देने की इच्छा व्यक्त की एवं सौहार्द व शांति स्थापना की दिशा में मिलकर कार्य करने की इच्छा व्यक्त की ,किंतु 19062 में चीन ने भारत पर आक्रमण कर दिया । इस आक्रमण ने हिंदी चीनी भाई-भाई के नारे को तार-तार कर दिया। करीब 15 वर्षों बाद 1976 में दोनों देशों के मध्य संबंधों में सकारात्मकता दिखाई दी। राजनीतिक एवं व्यापारिक संबंध बढ़े इसे राजीव गांधी ने 1988 में चीन की यात्रा कर आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया। दोनों देश सीमा विवाद के हल की ओर अग्रसर हुए ।

1942 में राष्ट्रपति आर वेंकटरमन ने पहले भारतीय राष्ट्रपति के रूप में चीन का दौरा कर इन संबंधों को आगे बढ़ाने का प्रयास किया। 2003 में

* प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय गृहविज्ञान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

प्रधानमंत्री वाजपेई ने चीन का दौरा कर दोनों देशों के मध्य आपसी संबंधों की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई ।2015 में प्रधानमंत्री मोदी ने चीन की यात्रा कर नथुर्ला दर्रा खोलने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास किए ।2018 में भारत के प्रधानमंत्री मोदी एवं चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने चीन में 1 शिखर सम्मेलन के माध्यम से आपसी सहमति बढ़ाने के प्रयास किए, 2018 में भारत में दूसरा शिखर सम्मेलन आयोजित कर इन संबंधों को आगे बढ़ाने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास हुए।

भारत-चीन संबंधों की वर्तमान स्थिति-चीन द्वारा डोकलाम विवाद, गलवान घाटी एवं लद्दाख जैसी घटनाओं को अंजाम देकर भारत के आपसी सहयोग के प्रयासों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने का काम किया गया। वर्तमान परिदृश्य में भारत ने अपनी रणनीति में परिवर्तन करते हुए सीमा पर अपनी मजबूत स्थिति कायम करने की दिशा में कार्य किया एवं व्यापारिक संबंधों में भी बदलाव देखा गया। भारत एवं चीन के मध्य वर्तमान समय में विभिन्न घटनाएं परिलक्षित हो रही हैं।

भारत चीन के मध्य प्रमुख विवाद :- भारत एवं चीन के मध्य निम्नांकित विवादास्पद मुद्दे हैं

1) **सीमा विवाद** - सीमा विवाद की महत्वपूर्ण बात यह है कि चीन द्वारा वास्तविक नियंत्रण रेखा को कभी महत्त्व ही नहीं दिया गया, मेक मोहन रेखा को चीन नहीं मानता और यहीं से भारतीय सीमा में चीनी घुसपैठ होती हैं, वह भारत के हिस्से को अपनी सीमा में दिखाता रहा है । कई बार अरुणाचल प्रदेश को चीन ने अपनी सीमा में दिखाया है।

2) **भारतीय भूभाग पर आधिपत्य-** चीन विस्तारवादी नीति का द्योतक रहा है उसने भारत के क्षेत्र अक्साई चीन पर आधिपत्य जमा रखा है, यह क्षेत्र जम्मू कश्मीर में स्थापित है। पाकिस्तान ने जम्मू कश्मीर पर कब्जाई भूमि का एक बड़ा हिस्सा चीन को सौंप दिया है ।

3) **अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारत का विरोध**-चीन प्रारंभ से ही संयुक्त राष्ट्र परिषद में भारत की स्थाई सदस्यता का विरोध करते हुए वीटो पावर का प्रयोग करता रहा है चीन ने परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह में भी भारत के प्रवेश को रोकने का कार्य किया है।

4) **आतंकवाद पर दोहरी नीति** - आतंकवाद के मुद्दे पर चीन ने दोहरी नीति अपनाई है, वह अंतरराष्ट्रीय मंचों पर आतंकवाद के विरोध का समर्थन करता है लेकिन भारत के पड़ोसी देश पाकिस्तान के आतंकवादी राष्ट्र होने के मसले पर हमेशा उसने पाकिस्तान का बचाव एवं समर्थन किया है।

5) **हिंद प्रशांत महासागर में विरोध**-चीन ने हिंद प्रशांत महासागर क्षेत्र में भारत की सदस्यता को भी स्वीकार नहीं किया ,वह भारत की उपस्थिति को पसंद नहीं करता। उसे भय है कि यदि यहां भारत अपनी उपस्थिति दर्ज कराता है तो यह उसके लिए कूटनीतिक हार होगी।

6) **पाक की मदद**-चीन लंबे समय से पाकिस्तान को हर स्तर पर मदद मुहैया कराता आया है ,पाकिस्तान को हथियारों की आपूर्ति एवं उसकी परमाणु क्षमता में वृद्धि में चीन ने मदद की है। पाक अधिकृत जम्मू कश्मीर में चीन ने रेल नेटवर्क स्थापित करने की दिशा में तेजी से कार्य किया है।

7) **भारत की घेराबंदी-** चीन ने नेपाल ,भूटान, तिब्बत के सीमाई क्षेत्र में रेलवे लाइन बिछाकर भारत की घेराबंदी की हैं। वर्तमान में नेपाल भी चीन के समर्थन की भाषा बोल रहा है ,उसने भारत के कई छोटे पड़ोसी देशों को भारत के विरुद्ध करने का भरसक प्रयत्न कर भारत की घेराबंदी मजबूत की है।

8) **आर्थिक विवाद-** भारत के विरोध में चीन पाकिस्तान आर्थिक गलियारे का विवाद भी महत्वपूर्ण है चीन द्वारा शिनजीप्रांत को पाकिस्तान बंदरगाह से जोड़ने के लिए सड़क एवम रेल नेटवर्क स्थापित किया जा रहा है।इसके माध्यम से चीन पाकिस्तान के एक बड़े भाग पर अधिकार स्थापित कर सकता है जो भारत के लिए की भी किसी भी रूप में उपयुक्त नहीं होगा।

भारत चीन विवादों के समाधान की संभावनाएं- विगत कुछ वर्षो से मोदी सरकार द्वारा चीन से संबंध सुधारने के प्रयास किए हैं इनमें निम्नांकित प्रमुख है।

1) **एक दूसरे की संप्रभुता का सम्मान-** दोनों देशों के मध्य शिखर सम्मेलनों का आयोजन कर इस बात के प्रयत्न किए गए कि पंचशील के सिद्धांतों के मुताबिक दोनों देश एक दूसरे की संप्रभुता के लिए सम्मान के सिद्धांत का अनुसरण करेंगे, भारत ने इस दिशा में सार्थक पहल की है, इसका चीन को भी समर्थन करना होगा।

2) **भारत की प्रभावी विदेश नीति**-प्रधानमंत्री मोदी ने भारत की विदेश नीति को नई दिशा प्रदान की है, विगत वर्षों में मोदी ने विश्व के विभिन्न देशों की यात्रा एवं विश्व सम्मेलनों के माध्यम से चीन से संबंध प्रगाढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, इसे और प्रभावी बनाना होगा।

3) **भारत की बढ़ती साख का प्रभाव-** चीन ने विगत वर्षों में भारत के विश्वव्यापी प्रभाव को स्वीकार नहीं किया है, वह भारत के बढ़ते प्रभाव से चिंतित है । भारत ने विश्व के विभिन्न राष्ट्रों से मधुर संबंध स्थापित कर चीन पर नियंत्रण स्थापित करने की दिशा में कार्य किया है ,इसे और अधिक प्रभावी बनाना होगा।

4) **सेन्य मजबूती-** भारत सरकार ने पिछले कुछ वर्षों मेंअपनी सैन्य मजबूती के लिए गंभीर प्रयास किए हैं, सेना का मनोबल बढ़ाया है एवं सीमा पर सेना को कार्यवाही के लिए अपेक्षाकृत अधिक छूट दे रखी है इसे कायम रखना चाहिए एवं सेना को आधुनिक शस्त्रों से सुसज्जित कर अधिक ताकतवर बनाने के प्रयास अनवरत किए जाने चाहिए।

5) **कूट नीतिक चातुर्य की आवश्यकता-** चीन एक अवसरवादी राष्ट्र है, वह इसी अवसरवादी नीति का प्रभावी क्रियान्वयन करने के प्रयत्न करता रहता है । भारत को उसकी नीति से सचेत एवं सतर्क रहकर अपने प्रभावी कूटनीतिक चातुर्य का इस्तेमाल करना होगा।

6) **सीमाई राष्ट्रों से मित्रता-** भारत को ऐसे राष्ट्रों से मित्रता करनी होगी जिन से चीन के मतभेद हैं। उदाहरणार्थ भूटान ,वियतनाम ,जापान बांग्लादेश आदि।

निष्कर्ष - भारत ने चीन के साथ विवादों के कारण विभिन्न आसियान राष्ट्रों से संबंध मजबूत करने के प्रयास किए हैं ये संबंध भारत की संप्रभुता की दृष्टि से समसामयिक प्रतीत होते हैं। भारत अकेले चीन का सामना करने की स्थिति में दिखाई नहीं देता इसलिए इन राष्ट्रों से भारत के संबंध उसे मजबूती प्रदान करेंगे, भारत को इन से मदद मिल सकती है।जापान ऑस्ट्रेलिया एवं कई अन्य यूरोपीय राष्ट्रों से प्रधानमंत्री मोदी ने संबंध बढ़ाने की कोशिशें की हैं, ये संबंध चीन को घेरने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।भारत ईन देशों के माध्यम से चीन पर दबाव बढ़ा सकता है। भारत चीन पर नियंत्रण स्थापित करने हेतु राष्ट्रों का साथ भी चाहता है, क्योंकि वर्तमान समय में चीन पर भारत का दबाव बनाए रखना आवश्यक है, चीन आसानी से सीमा से पीछे हटने की स्थिति में दिखाई नहीं दे रहा है ।उसने पुन: अरुणाचल प्रदेश को अपने क्षेत्र में दिखाने का दुस्साहस किया है, भारत भी अब निर्णायक स्थिति कायम करना चाहता है। भारत के प्रधानमंत्री एवं सेना भी इस प्रकार के संकेत दे चुकी है।

भारत एवं चीन के रिश्तो का वर्तमान परिदृश्य अच्छे संकेत नहीं देता है कोविड–19 की महामारी से प्रभावित भारत इस समय चीन के साथ सीमा विवाद में उलझा हुआ है, कभी–कभी यह प्रतीत होता है कि चीन ने यह सोचा होगा कि यह समय भारत की सीमाओं में घुसने का सबसे उपयुक्त अवसर है लेकिन भारत ने अपने कूटनीतिक चातुर्य एवं प्रभावी सेना की उपस्थिति से चीन के मंसूबों पर पानी फेर दिया है। भारत ने चीन से आर्थिक संबंध भी बहुत हद तक कम कर लिए हैं, भारतीय जनमानस में चीनी उत्पादों का प्रयोग न करने की जनभावना का तेजी से विस्तार हुआ है। भारत सरकार ने आत्मनिर्भर भारत का नारा देकर इस अभियान को और अधिक प्रभावी बनाया है, भारत सरकार भारत के युवाओं, वैज्ञानिकों को इस बात के लिए प्रोत्साहित कर रही है कि हमें आगे बढ़ने के लिए स्वतंत्र एवम स्वयं के उत्पाद विकसित करने चाहिए। नए अविष्कार कर बहुत हद तक इस चुनौती का भारत सामना कर सकता है। भारत युवाओं का देश है एवं प्रतिभाओं की यहां कमी नहीं है, आवश्यकता है इन प्रतिभाओं को अवसर प्रदान करने की भारत सरकार इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास कर रही है भारत सरकार ने चीनी एप्स पर प्रतिबंध लगाकर तथा चीनी आयात कम करके इस दिशा में स्पष्ट संकेत देने का प्रयत्न किया है कि हमें इस और आगे बढ़ने का प्रयत्न करना होगा।

भारत सरकार अमेरिका, फ्रांस एवम् ईजराइल जैसे देशों से तकनीकी सहयोग को बढ़ावा देना चाहती है जिससे आत्मनिर्भरता की दिशा में तेजी से अग्रसर हुआ जा सके। चीन जैसे विस्ताररवादी राष्ट्र से मुकाबला करने के लिए प्रधानमंत्री मोदी कई बार संकेत दे चुके हैं कि हम हर तरह की परिस्थिति का सामना करने के लिए तैयार है, हमारी सेनाएं मजबूती से भारतीय सीमा की सुरक्षा कर रही है। इस कार्य को और अधिक प्रभावी बनाने के लिए महत्वपूर्ण सैन्य उत्पादों का विभिन्न राष्ट्रों से आयात किया जा रहा है जिससे हम इस चुनौती से निपट सकें। यह कार्य भारत के लिए आसान नहीं है लेकिन हमें आशा है कि हम भारत के बढ़ते वैश्विक प्रभाव से इस चुनौती का सामना करने में सक्षम होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शौरी, अरुण, भारत चीन संबंध, प्रभात प्रकाशन ,जनवरी 2009 माधव,राम ,असहज पड़ोसी, किंडले एडिशन
2. सिंह,जे जे, मैकमोहन लाइनरू ए कंट्री आफ डिस्कार्ड, किंडले एडिशन गुरुस्वामी एवं सिंह, इंडिया चाइना रिलेशन्स द बॉर्डर इश्यू एंड बियांड,विवा बुक्स, न्यू दिल्ली ,2009
3. राघव ,व्ही आर ,इंडिया चाइना रिलेशन मिलिट्री पर्सपेक्टिव,ज्ञान पब्लिकेशन हाउस,नई दिल्ली राव निरुपमा,द इंडिया एंड चाइना वार
4. 50 ईयर्सलेटर,द ट्रिब्यून
5. कल्प नारायण एस, इंडिया एंड चाइना सिस्टम आफ्टर 1962 इंस्टीट्यूट ऑफ डिफेंस स्टडी एंड एनालिसिस
6. त्रिपाठी आरडी इंडिया चाइना रिलेशन , फ्यूचर पब्लिकेशन,ब्रिज बुक्स राव निरुपमा ,द इंडिया चाइना ईशु, द हिंदू ,मई 14 2015
7. भारत चीन संबंधरू चुनौतियां एवं उभरते मुद्दे ,दृष्टि द विजन,14 अक्टूबर 2019 प्रियदर्शन एस,भारत चीन संबंध
8. भारत चीन संबंध , द इंडियन वायर भारत चीन के कूटनीतिक संबंध के 70 साल पूरे ,अमर उजाला ,नई दिल्ली ,27 मई 2020

****

कोविड-19 के भावी सकारात्मक सामाजिक प्रभाव

डॉ. विभा वासुदेव*

प्रस्तावना - मनुष्य प्राचीन समय से ही अनेक चुनौतियों का सामना करते आया है और अनेक प्रकार की गंभीर महामारियों से सबक लेते हुए अपनी विकास की यात्रा के साथ-साथ कुछ नया करने के लिए अनवरत प्रयासरत रहता है। मानव के सामने आज कोरोना वायरस जिसे हम सभी कोविड-19 के नाम से जानते हैं, वैश्विक महामारी का रूप ले चुका है जो पूरी दुनिया के लिए बड़ा संकट बनकर उभरा है। कोरोना वायरस ने जहां एक तरफ भय, भूख, व्याकुलता और आर्थिक संकट को उत्पन्न किया है वहीं दूसरी तरफ मानव सभ्यता के सामने कुछ मूलभूत प्रश्न भी प्रकृति ने खडे़ कर दिए हैं। कोरोना काल का समय लगातार चल रहा है और अनेक सवालों के जबाब हमसे मांगते हुए आगनिकल जाएगा जिसके भावी प्रभावों पर आज हम यहां विचार करते हुए विश्लेषण करेंगे कि सामाजिक पहलूओं पर किस प्रकार के सकारात्मक निष्कर्ष निकलेंगे।

इस शोध पत्र में सामाजिक पहलूओं का अध्ययन कर विभिन्न व्हाट्अप ग्रुप से प्रश्नावली के माध्यम से कोविड-19 के भावी प्रभावों पर चर्चा करते हुए निष्कर्ष निकाले गए हैं।

(1) प्रकृति व विकास में संतुल - मनुष्य के अति लोलुपतापूर्ण व्यवहार के कारण जहां हम प्रकृति का दोहन बड़ी तेजी से विकासवादी गतिविधियों में कर रहे थे, आज इस महामारी ने हमे सचेत कर दिया है कि हम प्रकृति का इसी तरह लगातार शोषण नकर सकते, मानव को नदियों, पहाड़ों, वायु के प्रति अपने आचरण को सुधारना ही होगा। लॉकडाउन होने से जहां हम सभी को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा, परन्तु प्रकृति व पर्यावरण को पुन: सुंदर और निर्मबना दिया है। प्रकृति और माँ दोनों एक समान है इनका दोहन नहीं सम्मान करें।

(2) स्वच्छता की आदत - जिस स्वच्छता कार्यक्रम पर हमारी सरकारों ने अरबों रूपया व्यय किया वह इस महामारी के परिप्रेक्ष्य में सही साबित हुआ, स्वच्छ रहने की आदत विकसित करना अति आवश्यक है। आज लोग बार-बार हाथ धो रहे हैं, शारीरिक स्वच्छतके साथ बाहर से लाए सभी सामानों, सब्जियों, फल आदि को धोकर या सेनेटाइज करने के बाद इस्तेमाल कर रहे हैं अर्थात् हामरी कई पुरानी परम्पराएं भी जीवित हो गई हैं जैसे-बाहर से आने पर जूते-चप्पल बाहर उतारना व हाथ-पैर धोकर घर में प्रवेश करना तथा इसके साथ ही साथ आज हम सफाई के प्रति अधिक सजग हो गए है। आशा है कोरोना के बाद भी ये आदतें हमारी दिनचर्या का हिस्सा बन जाए।

(3) परिवार की महत्ता- कोविड-19 का सबसे उजला पक्ष परिवार के महत्व को बढ़ाना हैं समस्त संसार में मानव को अपने-अपने घरों में बंद रहकर एक-दूसरे को जानने व समझने के साथ उनकी पसंद नापसंद जानने का अवसर प्रदान किया है व आपसी संबंधों में मधुरता, मजबूती व संवेदनशील बनाने में अहम भूमिका निभाई है, जहां 70% लोगों ने माना कि अकेले रहने पर उन्हें सबसे ज्यादा याद परिवार की ही आयी।

(4) समय प्रबंधन व सहयोग - लॉकडाउन से परिवर्तित दिनचर्या में भी समय प्रबन्धन से अनेक प्रकार के कार्यो को सम्पन्न कर पारिवारिक सहयोग की भावना का विकास हुआ है। पुराने शौक पूरे करने व युवाओं को नव-प्रवर्तन करने का अवसर प्रदान किया व घर की ही पुरानी व बेकार पड़ी वस्तुओं से अनेक प्रकार की उयोगी व सजावटी वस्तुओं से रोजगार के नये अवसर प्राप्त किए।

(5) दूसरे की सहायता - महामारी के संकटकाल में हम सभी के हृदय में कुछ न कुछ परिवर्तन आया है जहां हम पहले स्वार्थी व स्वयं के प्रति ही ज्यादा सोचते थे वहां हम दूसरों के प्रति थोड़ा बहुत विनम्र हुए हैं वे किसी न किसी रूप में मदद के लिए आगे बढ़े हैं। मनोवैज्ञानिक सोच में परिवर्तन का यह रूप हमेशा बना रहे ऐसी आशा की जानी चाहिए।

(6) खान-पान में चिंतन - हमारे खान-पान में शुद्ध व सात्विक शाकाहारी भोजन करने की प्रवृत्ति बढ़ी है व आर्युविदिक जड़ी-बूटी व मसालों से हम सभी परिचित हुए हैं व रोग प्रतिरोधक क्षमता विकास में इसका अधिक प्रयोग करने लगे हैं, खासकर वह युवा वर्ग जो रेस्टोरेन्ट, होटल व फास्टफूड पर अधिक आश्रित होता जा रहा था उसमें कमी आने की संभावना बढ़ गई है जिसका सीधा लाभ हमारे स्वास्थ्य को मिलेगा।

(7) विदेश प्रवास - कोविड-19 से विदेशी प्रवास में कमी आएगी जहां पहले परिवारों में अपनी संतान को विदेश में पढ़ने या रोजगार के लिए भेजना अपनी प्रतिष्ठा मानते थे वहीं अब हमारे युवाओं की प्रतिभा का लाभ हमारे राष्ट्र के विकास करने को मिलेगा।

(8) अपराधों पर प्रभाव - शारीरिक दूरी व लॉकडाउन के कारण कई प्रकार की सामाजिक व्याधियों एवं अपराधों पर भी रोक लगेगी व अनैतिकता पर नियंत्रण किया जा सकता है।

(9) सामुदायिक भावना का विकास - महामारी के दौर में उत्पन्न संकटों का समाधान सामुदायिक भावना से ही किया जा सकता है। आज 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की अवधारणा पुन: विकसित हो रही है।

(10) स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता - मानव धन कमाने के लिए मशीन की तरह दिन-रात एक कर रहा था भौतिक उन्नति की अंधी दौड़ में वह अपने स्वास्थ्य से खिलवाड़ कर रहा था और स्वार्थी व्यक्तिवादी दृष्टिकोण ने मानसिक रूप से तनाव को बढ़ावा दिया परन्तु कोरोना ने हमें यह सोचने के लिए मजबूर कर दिया कि स्वास्थ्य ही हमारी पूंजी है व वह तभी स्वस्थ व सुरक्षित रहेगा जब दूसरे लोग भी स्वस्थ व सुरक्षित होंगे। आज हम संपूर्ण विश्व के स्वस्थ होने की कामना करते हुए सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय

* प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत

की भावना से ओत-प्रोत हैं।

(11) सामाजिक समारोह में प्रदर्शन प्रभाव पर रोक – वर्तमान में आयोजित शादी समारोह व सामाजिक, धार्मिक समारोह पर अनावश्यक व प्रतिस्पर्धात्मक व प्रदर्शनकारी व्यय में कमी आएगी। आशा है कि भविष्य में भी इस दिखावा संस्कृति से मुक्ति मिलेगी व समारोह परम्परानुसार सादे तरीके से होंगे।

(13) डिजीटल प्रोग्ग्रम को प्रोत्साहन – पूरे विश्व में कार्यों को गति प्रदान करने के लिए डिजीटाइलेजेशन पर निर्भरता बढ़ गई है व ऑनलाईन वर्क, वर्क फ्रोम होम, वीडिया कान्फ्रेसिंग, वर्चुअल लेक्चर, जूम मीटिंग, बेबीनार, ई-मेल तथा मोबाइल, कम्प्यमें अनेक प्रकार के एप डाउनलोड कर हम कई प्रकार की गतिविधियों को सम्पन्न कर रहे हैं। इससे जहां एक ओर पर्यावरण संरक्षित हो रहा है तो वहीं दूसरी ओर पेपरलेस वर्क में पेड़ों की कटाई पर भी अंकुश लगा है।

(13) आत्मनिर्भरता – जहां हम पहले छोटे-छोटे कार्य व घरेलू कार्यो के लिए दूसरों पर निर्भर थे वहीं लॉकडाउन अवधि में हम स्वयं के सारे कार्य स्वयं करने की महत्वपूर्ण सीख मिली है जो पुन: पारिवार के सहयोग से कार्य कैसे किया जाता था उसकी याद दिलाता है।

(14) लघु कुटीर उद्योगों का विकास – इस महामारी का एक और उजला पक्ष यह है कि अब पुन: लघु कुटीर उद्योग को ग्रामीण स्तर पर प्रारम्भ किया जा सकता है जिससे स्वरोजगार व स्वावलंबी बनने की गांधीजी का सपना साकार हो सकता है।

(15) बचत की भावना एवं पुन: उपयोग की प्रवृत्ति – जहां हम पहले अत्यधिक उपभोग की प्रवृत्ति से ग्रसित होते जा रहे थे वहीं इस महामारी ने दुनिया को भारतीय संस्कृति अनुसार बचत की भावना और किसी भी चीज का जरूरत से कम प्रयोग करने के लिए प्रेरित किया है, वहीं पुरानी खराब गैजेट्स या अन्य वस्तुओं को बार-बार ठीक करवा कर पुन: उपयोग की प्रवृत्ति में भी वृद्धि देखी गई है जिससे ई-वेस्ट के बढ़ने पर रोक लगाने के साथ ही साथ पर्यावरण पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

(16) रचनात्मकता में वृद्धि – लंबे लॉकडाउन के कारण हमारी छिपी हुई रचनात्मकता को बाहर लाने का अवसर दिया है और अपनी अपनी रूचि अनुसार अनेक प्रकार की नवीन वस्तुओं का सृजन व सकारात्मक विचारों ने नए भारत को गढ़ने की जमीन तैयार की है जहां महामारी सभी जातीय, वर्गीय बाधाओं को तोड़ती हो, जहां संकट सुधार का अवसर प्रदान करें व सभी को जीने की वास्तविकता प्रदान करते हुए रचनात्मक विकास को गति प्राप्त हो।

(17) अनुशासित और प्रेरक आचरण अपनाना – वर्तमान महामारी ने हमें यह सबक भी सिखाया है कि आज अनुशासित आचरण को अपनाकर ही हम सुरक्षित और आगे बढ़ सकते हैं, साथ ही स्वयं के साथ ही दूसरों को भी प्रेरणा दे सकते हैं।

(18) प्राकृतिक संसाधनों की बच – महामारी काल में आवागमन बंद व कम होने से डीजल-पेट्रोल की मांग में कमी से एक तरफ पर्यावरण प्रदूषण में भारी कमी देखने को मिली, वहीं दूसरी तरफ प्रकृति प्रदत्त संसाधनों के तेजी से होते हुए दोहन में कुछ कमी देखने को मिल रही है। पैदल चलना व साइकिल के प्रयोग से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले फायदों के प्रति व्यक्ति अधिक जागरूक हुआ है।

(19) श्रम की महत्ता– भारत की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग शारीरिक श्रम जैसे- घरेलू काम, बोइना उठाना, ढाई, दिहाड़ी मजदूर, सफाई कर्मी, डिलीवरी बॉय और अन्य कार्य करने वालों के प्रति हमारे नजरिये में परिवर्तन हुआ है जिन्हें हम दोयम दर्जे का समझकर अच्छा व्यवहार नहीं करते थे आज हमारे जीवन को उनकी महत्ता से उनके प्रति हमारे व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन हुआ है।

(20) योग, ध्यान, मनन एवं आध्यामिकता को बढ़ावा – कोरोना काल में हम सभी मानसिक तनाव से गुजर रहे हैं और इसे कम करने के लिए अधिकांश लोगों ने अपनी दिनचर्या में योग, ध्यान, मनन व आध्यात्मिक गतिविधियों को शामिल कर आत्म उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया है।

कोविड-19 ने जहां एक तरफ निराशा को जन्म दिया वहीं दूसरी ओर हम कैसे नकारात्मकता के बीच अच्छी सोच एवं नजरिए के साथ निराशा से लड़ते हुए धैर्य व धीरज से प्राचीन सामाजिक व्यवस्था के उस सुनहरे व उजले पक्ष को उद्घाटित किया जो प्राचीन समय से हमारी संस्कृति की नीवं रही है कि जीवन को जीवंत बनाने के लिए अपने हर क्षण को उपयोगी बनाएं। चीजों को सकारात्मक दृष्टिकोण से देखने पर ही हर समस्या का समाधान संभव हैहमें नवीन जीवन शैली को अपनाते हुए आज की परिस्थितियों के अनुसार न्यू नार्मल को अपनाना होगा जैसे- पहले बैलगाड़ी थी, फिर गाड़ी आई, फिर रेलगाड़ी आई, हवाई जहाज, रॉकेट आया और हम सभी को अपनाते हुए आगे बढ़ते गए और आज हम दोगुनी ताकत व ऊर्जा से जीवन को रीस्टार्ट कर सकते हैं और सकारात्मक दृष्टिकोण को अपनाते हुए समाज को परिवर्तन की नई दिशा की ओर ले जाने में अपना अहम योगदान दे सकते हैं। हमारा जीवन अंतहीन संभावनाओं से भरा हुआ है। इससे पहले भी अनेक विषमताएं और कठिन परिस्थितियां हमारे जीवन में आई है लेकिन वे बड़ा अवसर भी सिद्ध हुई हैं। इस संकट में भी हमें निराशा से बाहर निकलकर जीवन के मूल मंत्र सिर्फ सकारात्मकता, सादगी, आत्म संयम और सात्विकता के साथ मूल संस्कारों की ओर लौट कर आगे बढ़ना होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. दोषी एवं जैन- समाजशास्त्र-नई दिशाएं।
2. नदीम हसन- समकालीन भारतीय समाज।
3. दैनिक भास्कर- समाचार पत्र।
4. इंटरनेट की अध्ययन सामग्री।
5. स्वयं का अध्ययन व दृष्टिकोण।

****

भारत में लोकतन्त्र : सबल और दुर्बल पक्ष

डॉ. विनीता भालसे* डॉ.गिरधारीलाल भालसे**

प्रस्तावना – भारत को दुनिया का सबसे बड़ा लोकतन्त्र कहा गया है। सन् 1952 में वयस्क मताधिकार के आधार पर देश में पहले आम चुनाव हुए थे। उस समय मतदाताओं की संख्या 17 करोड़ 30 लाख से कुछ अधिक थी। यह संख्या आज बढ़कर लगभग 70 करोड़ से अधिक पहुंच गयी है। 1952, 1957, 1962, 1967, 1971, 1980, 1984, 1989, 1991, 1996, 1998, 1999, 2004, 2009 और 2014 में लोकसभा के लिए आयोजित 15 उत्तरोत्तर चुनाव एवं राज्य विधानसभाओं के लिए हुए उत्तरोत्तर चुनावों ने हमारी राजनीतिक-प्रणाली को शक्ति और स्थायित्व प्रदान किया। इस चुनावों के औचित्य, उनकी निष्पक्षता और सुव्यवस्था के लिए दुनिया भर के देशों में हमारी सराहना हुई है। प्रत्येक आम चुनाव से इस बात की पुष्टि होती रही है कि संसदीय लोकतंत्र की प्रणाली के प्रति हमारे देश की निष्ठा है।

भारत में लोकतन्त्र – लोकतन्त्र राजनीतिक परिस्थिति ही नहीं है या सामाजिक परिस्थिति मात्र नहीं, वह शासन और जीवन की लोकजयी नैतिक धारणा भी है। सभी मनुष्यों का लोकतन्त्र में बराबर महत्व होता है, सभी मनुष्यों के अधिकार भी समान होते हैं। समाज की इकाई के रूप में व्यक्ति लोकतन्त्र का मूल आधार है। लोकतन्त्र समाज को उन्नत करने का यत्न करता है जिसमें व्यक्ति भी उन्नत होता है। लोकतन्त्र में व्यक्ति का बहुत बड़ा महत्व है। लोकतन्त्र में सबको समता मिलती है। लोकतन्त्र केवल शासन चलाने की एक पद्धति मात्र नहीं है, वह एक विकासषील दर्शन है और साथ ही वह जीवनयापन की एक गतिशील पद्धति भी है। लोकतन्त्र केवल अधिकारों पर ही जीवित नहीं रहता वरन् उसका मूल कर्त्तव्य पर आश्रित है। अपने कर्त्तव्य के प्रति व्यक्ति की निष्ठा लोकतन्त्र के जीवन का आधार हुआ करती है। लोकतन्त्र मर्यादा की मांग करता है और मनुष्यता को व्यक्ति के आचरण में उतारता है। स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व लोकतन्त्र के आदर्श है किन्तु स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व तब तक कायम नहीं हो सकते जब तक व्यक्ति अपना सर्वोत्तम समाज को देने का संकल्प नहीं करता।

भारत में संसदीय लोकतन्त्र की दुर्बलताए – भारतीय संविधान संसदीय ढांचे के लोकतन्त्र की स्थापना करता है। सच्चा लोकतन्त्र संसदीय लोकतन्त्र ही हो सकता है जिसमें बिना हिंसात्मक क्रान्ति के सरकार को बदला जा सकता है, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि विगत कुछ वर्षो से देश में लोकतन्त्र की जड़ें हिल रही है। विगत वर्षों में अनेक स्थानों पर कानून और व्यवस्था की स्थिति बेकाबू हुई, हिंसा, उपद्रव, लूटमार, सामान्य बात हो गयी। प्राकृतिक प्रकोप, अतिवृष्टि, अकाल और सूखे के कारण हमारे आर्थिक विकास का सम्पूर्ण नियोजन ही छिन्न-भिन्न हो गया। देश का आम आदमी गरीबी, अभाव, बेकारी और मंहगाई से त्रस्त है। मूल्य-वृद्धि की वर्तमान प्रक्रिया से हमारी आर्थिक स्थिति बिगड़ते-बिगड़ते विस्फोटक दौर में पहुंच गयी और सत्तालोलुपता की बढ़ती हुई प्रवृत्ति के कारण राष्ट्रीय जीवन भ्रष्ट और अनुशासनहीन हो गया। चारों ओर अविश्वास, अनिश्चितता और निराशा का घोर अन्धकार छाने लगा। प्रसिद्ध समाज वैज्ञानिक **डॉ. योगेश अटल** के शब्दों में, 'स्वतन्त्र भारत का स्वाधीन नागरिक, सामान्य जन आज कठिनाई के जिस दौर से गुजर रहा है, उसमें उसका मानस 'चिर मुक्ति' की ही कामना कर सकता है।'

संक्षेप में, भारतीय लोकतन्त्र के कतिपय दुर्बल तत्व इस प्रकार है –

1. **सशक्त प्रतिपक्ष का अभाव –** हमारी संसदीय व्यवस्था की प्रथम त्रुटि यह है कि सशक्त प्रतिपक्ष का लम्बे समय तक अभाव रहा है। एक सशक्त विरोधी दल देश में स्वस्थ संसदीय लोकतन्त्रीय व्यवस्था की स्थापना के लिए अति आवश्यक है। प्रभावशाली विरोधी दल संसदीय व्यवस्था के संचालन की अपरिहार्य संस्था है। जब बहुमत दल होता है तो एक विरोधी दल भी होना चाहिए और यदि ऐसा नहीं है तो वास्तव में प्रजातन्त्र ही नहीं।
2. **उत्तरदायी प्रतिपक्ष का अभाव –** संसदीय लोकतन्त्र में आलोचना करना विरोधी पक्ष का कार्य हुआ करता है, किन्तु आलोचना सृजनात्मक एवं सैद्धान्तिक होनी चाहिए। लोकतन्त्र में परिवर्तन मतों के आधार पर होती है। इसलिए विरोधी पक्ष को चाहिए की वह जनता को परिवर्तन के लिए शिक्षण दे, किन्तु हमारे देश में विरोधी दलों ने न केवल आर्थिक विकास में ही रूकावट डाली बल्कि वे अर्थ-व्यवस्था और प्रशासन के सभी सामान्य कार्यों में भी रूकावट डालते रहे। आजकल संसद को ठप्प कर गतिरोध उत्पन्न करने की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है।
3. **साम्प्रदायिकता, भाषावाद और प्रादेशिकता –** साम्प्रदायिकता, प्रादेशिकता और भाषावाद की समस्याएं पिछले 70 वर्षों से भारतीय लोकतन्त्र के लिए सिरदर्द रही है। इन समस्याओं ने देश में विघटनकारी तत्वों को बढ़ावा दिया है और अनेक अवसरों पर हिंसात्मक वातावरण का निर्माण किया। इन समस्याओं ने देश के नवोदित लोकतन्त्र में कोढ़ के निषान पैदा कर दिये हैं।
4. **महंगाई और भ्रष्टाचार –** महंगाई और भ्रष्टाचार ने मध्यम वर्ग की शक्ति को जर्जर और उसकी रचनात्मक प्रतिभा को कुण्ठित कर दिया है। एक ओर करोड़ों की सम्पत्ति के मालिक रात-दिन विलास और वैभव का अशोभनीय प्रदर्शन करते हैं तो दूसरी और लाखों आदमी भुखमरी के शिकार हैं। आर्थिक शोषण की प्रवृत्ति और राजनीतिक भ्रष्टाचार भारतीय लोकतन्त्र के प्रबल शत्रु है।

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अलीराजपुर (म.प्र.) भारत
** अतिथि विद्वान (राजनीति शास्त्र) शासकीय महाविद्यालय, कसरावद (म.प्र.) भारत

हम भ्रष्ट आचरण की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहे हैं। 1992-97 के वर्षों में 'शेयर घोटाले', 'दूर संचार निविदा घोटाले', 'हवाला काण्ड', 'चारा घोटाला' और बैंकों में हजारों करोड़ रूपयों का वारा-न्यारा हो गया। अब पूरे देश में कोई ऐसा पद नहीं रहा है, जिस पर भ्रष्ट आचरण के आरोप न लगे हों।

5. संसदीय वाद-विवाद में गुणात्मक ह्रास - संसद और राज्य विधान-मण्डलों की कार्य-प्रणाली का गुणात्मक ह्रास हुआ है, वाद-विवाद का स्तर घटा है। व्यक्ति-दोषारोपण और छिद्रान्वेषण की बढ़ती हुई प्रवृत्ति के कारण संसदीय मंच का अवमूल्यन हुआ है।

6. अनुशासनहीनता - भारत में लोकतन्त्र को मुख्य खतरा अनुशासनहीनता से है। कुछ लोग लोकतन्त्र में विश्वास नहीं करते और इतने निराश हो चुके हैं कि हिंसा और अराजकता पर उतर आये हैं, वे 'वाक आउट' और प्रदर्शन में विश्वास करते हैं।

भारतीय लोकतन्त्र के सबल तत्व - भारत के लोग संसदीय लोकतन्त्र के विरोधी नहीं हैं। भारत में लोकतंत्र के सभी रोगों का निदान अधिक लोकतन्त्र के द्वारा ही हो सकता है। भारत में लोकतन्त्र विफल भी नहीं हुआ है। यह तो एक संस्था है और ऐसी संस्था जो सबसे कम खराब राजनीतिक व्यवस्था है।

हमारी राजनीतिक व्यवस्था में अनेक सबल तत्व मौजूद हैं जिनके फलस्वरूप सामान्य काल और संकटकाल में राज-व्यवस्था के अस्तित्व की रक्षा की जा सकती है। ये तत्व इस प्रकार है :

(1) संसद - भारतीय संसद भारतीय प्रजातन्त्र का स्पष्ट प्रतीक है और कार्यपालिका की राजनीतिक शक्ति का स्त्रोत संसद ही है। राष्ट्रीय महत्व के अनेक प्रश्नों एवं समस्याओं के निर्धारण में संसद की निर्णायक भूमिका रही है।

(2) पंथनिरपेक्षता - हमारे लोकतन्त्र का बुनियादी सिद्धान्त पंथनिरपेक्षता है। भारतीय समाज के सभी अल्पसंख्यकों को बिना किसी धार्मिक भेदभाव के लोकतन्त्रात्मक पद्धति में भाग लेने का अवसर प्रदान किया गया है।

(3) आर्थिक नियोजन - भारत में यह महसूस किया गया कि आर्थिक लोकतन्त्र की स्थापना के बिना राजनीतिक लोकतन्त्र व्यर्थ है। अत: आर्थिक लोकतन्त्र की स्थापना के लिए नियोजित आर्थिक विकास का सूत्रपात हुआ है।

(4) विकेन्द्रीकरण पर बल - भारत में पंचायती संस्थाओं को सांविधानिक दर्जा प्रदान किया गया है और आर्थिक शक्तियों का विकेन्द्रीकरण किया गया। निश्चित ही पंचायती राज-व्यवस्था में संसदीय लोकतन्त्र को गांव-गांव और घर-घर तक पहुंचाने का एक सुन्दर अभियान इस देश में चल रहा है।

भारत में लोकतन्त्र का भविष्य - आजादी के 7 दशकों बाद भी भारत युवा देश है और उसे काफी कुछ करना है। भारत एक जीवंत देश है जो विश्व में सबसे बड़ा लोकतन्त्र है। अनिष्ट की भविष्यवाणियों के बावजूद 21वीं सदी में एक आर्थिक महाशक्ति बनने की ओर बढ़ रहा है। पड़ोसी देशों जैसी सैनिक सत्ताहरण की कोई कोशिश भारत में कभी नहीं हुई।

भारत का सफर बहुत शानदार रहा है। देश में 16 बार आम चुनाव हुए हैं और जनादेश से सत्ता में बदलाव बहुत व्यवस्थित और सहज ढंग से हुआ। पहली बात तो यह कि इन 7 दशकों के दौरान अधिकांश क्षेत्रीय और राष्ट्रीय पार्टियों को केन्द्र और राज्यों में अकेले या गठबंधन के घटक के रूप में सत्तासीन होने का अवसर मिला।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. फड़िया, बी.एल., भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन, पृष्ठ-776
2. डॉ. फड़िया, बी.एल., भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन, पृष्ठ-778
3. डॉ. फड़िया, बी.एल., भारतीय शासन एवं राजनीति, साहित्य भवन पब्लिकेशन, पृष्ठ-779

****

ठाकुर प्रसाद सिंह के व्यक्ति व्यंजक निबन्ध-अवधारण एवं विश्लेषण

डॉ. हरि नारायण राम*

प्रस्तावना - ठाकुर प्रसाद सिंह एक नवगीतकार थे जो अपने गीतों की रचना करके साहित्य जगत में छा गये। इनके साहित्यिक स्वरूप का विकास स्वतंत्रता के पश्चात् सन् 1950 के आस-पास हुआ था। सर्वप्रथम वे 'वंशी और मादल' में संकलित अपने नये प्रकार के गीतों के लिए विख्यात हुए। वैसे नवगीत के पुरोधा डॉ0 शम्भूनाथ माने जाते हैं, लेकिन आदिवासी क्षेत्र में 'वंशी और मादल' की रचना करके उस क्षेत्र में ये अग्रणी थे। उस समय भारत वर्ष में इनके निर्माण और विकास का चिन्तन चल रहा था। पंचवर्षीय योजनाओं का कार्यान्वयन हो रहा था लेकिन दूसरी ओर जनसंख्या, बेकारी और भ्रष्टाचार की व्यवस्था व समस्या पनप रही थी। हिंदी साहित्य में पाश्चात्य प्रभाव प्रबल हो रहा था। ऐसे समय में भारत वर्ष की अस्मिता के लिए नये रचनाकार सक्रिय हो गये थे। गीतों में भारतीय लोकमानस की प्रतिष्ठा होने लगी। इन रचनाकारों में लोक जीवन में भारतीय अस्मिता को पहचानने का प्रयास किया। ठाकुर प्रसाद सिंह ऐसे रचनाकारों में अग्रणी थे। इन्होंने गीतों के अतिरिक्त कविता, उपन्यास, कहानी, नाटक, संस्मरण, रिपोर्ताज, निबन्ध 'प्रदक्षिणा' आदि की रचनाएँ कीं। इनकी नई कविता का संग्रह 'हारी हुई लड़ाई लड़ते हुए' नाम से प्रकाशित हुआ है। ठाकुर प्रसाद सिंह ने इन रचनाओं के अतिरिक्त व्यक्ति व्यंजक निबन्धों की भी रचना की है। इनके निबन्ध दीनमान, सण्डे मेल आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। इनके निबन्धों के केन्द्र में उनकी वैयक्तिकता होती है। वे किसी विचार, संस्मरण, काव्यात्मक पंक्ति, कथा अथवा किसी समाचार से अपने निबन्धों का आरम्भ करते हैं। बीच-बीच में उनके विचार कौंधते हैं। उसका थोड़ा विस्तार भी होता है लेकिन लेखक फिर भी किसी दूसरे प्रसंग की ओर उन्मुख हो जाता है। यह संस्मरण लोक कथा, पुराण कथा अथवा काव्यात्मक पंक्ति का हो सकता है। इस प्रकार से कथात्मकता तथा वैचारिकता उनके निबन्धों का आधार है इन दोनों का जहाँ सहज रूप हो जाता है वहाँ इनके निबन्ध श्रेष्ठ बन जाते हैं।

ठाकुर प्रसाद के निबन्धों में बहुत अधिक विस्तार नहीं होता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी में यह कौशल था, वे अपने व्यक्तित्व अभिव्यंजना बहुत ही सधे हुए ढंग से करके समेट लेते थे। पं0 विद्या निवास मिश्र लोक संदर्भ अथवा अपनी काव्यात्मक उक्तियों द्वारा कथ्य को विस्तृत कर देते हैं किंतु पाठक निरन्तर मिश्र जी से बँधा रहता है। कुबेरनाथ राय समाजशास्त्रीय, मिथकीय, भाषा वैज्ञानिक तथा तंत्र साहित्य के किसी संदर्भ को देकर निबन्ध का इतना विस्तार कर देते हैं कि पाठक ऊबने लगता है। इसके विपरीत ठाकुर प्रसाद सिंह पाठक को निरन्तर अपने साथ लेते हुए अग्रसर होते हैं। वे अपने निबन्धों को अति विस्तार दोष से युक्त नहीं होते लगते हैं। किसी भी प्रसंग का वे यथावसर एवं यथोचित ही प्रयोग करते हैं चाहे वे संस्मरण हों, कथा हों, गद्यात्मक पंक्तियाँ हों या पुराण कथा हो। प्रसंगों के संयोजन में ठाकुर प्रसाद सिंह अत्यन्त कुशल हैं। प्राय: व्यंग्यशैली का प्रयोग ऐसे प्रसंगों के लिए संयोजन में हुआ है। इस व्यंग्य के द्वारा वे समकालीन, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक विद्रपता का प्रहार करते हैं। कभी-कभी उनका लक्ष्य कोई व्यक्ति भी होता है। लेकिन वह व्यक्ति होता है जिससे कि पाठक को रस ग्रहण करने में कोई कठिनाई नहीं होती है। जैसे वे किसी राजनेता अथवा धार्मिक नेता पर व्यंग्य कर रहे हैं तो वह इतना चर्चित व प्रतिष्ठित होगा कि सामान्य से सामान्य पाठक भी उनके व्यंग्य के लक्ष्य को समझ सकेगा। प्राय: ठाकुर प्रसाद सिंह उन सामाजिक, राजनीतिक समस्याओं पर कडुवे और तीखे व्यंग्य करते हैं जिन्हें इन्होंने अपने जीवन में भोगा है। ठाकुर प्रसाद सिंह के निबन्धों में उनकी वैयक्तिकता सर्वप्रथम व्यंग्य के द्वारा होती है। अधिकांश निबन्धों की यही स्थिति है। उनके कुछ निबन्ध ऐसे हैं जिनमें कथा केन्द्र में होती है और वह प्रतीक अथवा मिथक बनकर लेखक के अभिप्रेत को बहुत दूर तक खोलते हैं। ठाकुर प्रसाद सिंह सबसे पहले कवि हैं, फिर कथाकार और इसके पश्चात् और कुछ हैं। लेकिन निबन्धकारों में उनका व्यंग्यकार प्रधान हो जाता है, कथाकार उसका अनुगत होता है और कवित्व बहुत पीछे हट जाता है। इस दृष्टि से उनके निबन्ध हजारी प्रसाद द्विवेदी तथा विद्या निवास मिश्र से बिलकुल अलग दिखलायी पड़ते हैं। ठाकुर प्रसाद सिंह ने नवगीतों की रचना लोक तत्वों से प्रेरित होकर की थी लेकिन निबन्धों में उनका लोक मन कहीं दिखायी नहीं पड़ता है। उनके द्वारा उठाई गई समस्यायें नगरों की हैं। इनके निबन्धों में संस्कृति पर विचार कम हुआ है। इसके विपरीत इनके निबन्धों में सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याएँ ही प्रधान हैं। इनके पूर्ववर्ती व्यक्ति व्यंजक निबन्धकारों से पृथक करने वाली एक रेखा यह भी है। ठाकुर प्रसाद सिंह के निबन्धों में लाक्षणिकता और ध्वनि से समन्वित भाषा है। लक्षण के द्वारा वे भाषा को धार-दार बनाते हैं उनकी ध्वनिमूलक भाषा प्रतीकों और मिथकों से सन्निहित अर्थ को दूर तक प्रक्षेपित करती है। मुहावरों के साथ ही प्रतीकों और मिथकों की रचना में भी वे सक्रिय दिखायी पड़ते हैं। डॉ0 हरिवंश राय बच्चन ने ठाकुर प्रसाद सिंह के निबन्धों का मूल्यांकन करते हुए कहा है-

'ठाकुर प्रसाद सिंह के निबन्धों में व्यंग्य की बड़ी मारक शक्ति है। उन्होंने कड़वे, तीखे भोग को सामाजिक समस्याओं से संदर्भित करते हुए शब्दबद्ध किया है। उनकी भाषा की लाक्षणिकता की जो धारा दिखायी देती है वह उनके व्यंग्य को दूरगामी और पैनी बना देती है।'[1] इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वे अपने समकालीन व्यक्ति व्यंजक निबन्धकारों में अपनी एकदम अलग पहचान रखते हैं।

अब तक ठाकुर प्रसाद सिंह के निम्नलिखित निबन्ध संग्रह प्रकाशित

* प्रधानाचार्य, आदर्श जनता इण्टर कालेज, अडींग, मथुरा(उ.प्र.) भारत

हो चुके हैं। 'पुराने घर नये लोग' 1960, 'प्रदक्षिणा '1965 और 'मोर पंख' 2001। इनमें व्यक्ति व्यंजक निबन्धों की दृष्टि से प्रदक्षिणा और मोर पंख सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। 'प्रदक्षिणा' में मेरा उत्तराधिकारी, घर से बाहर एक नये घर की नींव, सो काशी सईय कसन, गॉव के रास्ते, शान्ति निकेतन की छाया में तथा हिंदी विद्यापीठ तुलसी का विरवा। 'मोर पंख' में अमरबेली, इतिहास को छोटा करने की कला, सहज अस्वीकृत कबीर, एक आदिम गीत कुंज में, नन्दगाँव में कृष्ण कहा है, मेरी अपनी गली भी दिल्ली जाती है, अपने लोगों के बीच का पराया पन आदि प्रमुख व्यक्ति व्यंजक निबन्ध है।

ठाकुर प्रसाद सिंह के सभी व्यक्ति व्यंजक निबन्धों का आरम्भ सहज तरीकों से होता है। इन्होंने अपने विचारों को वैयक्तिकता के माध्यम से व्यक्त किया है। इनके व्यक्ति व्यंजक निबंध इन्हीं की आत्माभिव्यक्ति हैं। इन्होंने आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी की तरह ही अपनी मनोगत भावनाओं को निबन्ध में दर्शाया है। मैं, मेरा और मुझको या मुझे द्वारा ही इनकी मनोगत भावनाएँ स्पष्ट हुई हैं जैसे-'मैं जब उन्हें देखता हूँ या उनके विषय में सुनता-पढ़ता हूँ तब उनके प्रति मन में एक मोह जागता है।'[2] 'मुझे यह नहीं पता कि वे ठीक लिख रहे हैं या गलत शायद उनका लिखा हुआ अधिकांश व्यर्थ चला जायेगा और आने वाले लोग उन पर विचार भी नहीं करेंगे।'[3] 'मेरा मोह तो बस इतना ही है कि वे सब मेरे भीतर के उन नये झगड़ालू लड़के जैसे लगते हैं।'[4] 'वे जब मुझसे लड़ते हैं तो मुझे आत्मिक सुख झकझोरने लगता है।'[5] 'वे जब चुपचाप मेरे पास बैठे रहते हैं तो जैसे मैं सुख की वर्षा में बैठा भीगता रहा हूँ।'[6]

इस तरह विभिन्न पद्धतियों द्वारा ठाकुर प्रसाद सिंह ने अपना आत्मीय संबंध पाठकों से जोड़कर आत्म व्यंजना के रूप में विषय निरूपण किया है। ठाकुर प्रसाद सिंह के व्यक्ति व्यंजक निबन्ध मात्र रोचक या मनोरंजक ही नहीं हैं बल्कि पाठकों में सम्मोहन पैदा करने की शक्ति भी उनके निबन्धों में दिखायी पड़ती है। इनके निबन्ध सामाजिक राजनीतिक भावनाओं से परिपूर्ण हैं। ये अपने पूर्ववर्ती व्यक्ति व्यंजक निबन्धकारों की श्रेणी में अपने शैली के अकेले निबन्धकार है। इन्होंने इन निबन्धों के माध्यम से समाज में अभ्युदय एवं निश्रेयस करने की चेष्टा की है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हिंदी साहित्य का इतिहास, डॉ0 नागेन्द्र, पृ0 699
2. प्रदक्षिणा - ठाकुर प्रसाद सिंह, पृ0 117
3. प्रदक्षिणा - ठाकुर प्रसाद सिंह, पृ0 117
4. प्रदक्षिणा - ठाकुर प्रसाद सिंह, पृ0 117
5. प्रदक्षिणा - ठाकुर प्रसाद सिंह, पृ0 117
6. प्रदक्षिणा - ठाकुर प्रसाद सिंह, पृ0 117

****

भारत में औद्योगिक विवाद: एक अध्ययन

डॉ. संदीप कुमार अग्रवाल *

शोध सारांश – औद्योगिक विवाद आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक वातावरण को तहस नहस कर देता है। देश की चलती जीवन रेखा जैसे निष्प्राण सी हो जाती है। विवाद यदि जनता के जीवन से सम्बंधित आवश्यक वस्तुओं के संदर्भ में हो तो (जैसे पानी बिजली सड़क परिवहन रेलवे, टेलीफोन आदि) सभी के जीवन को काफी संकट का सामना करना पड़ता है। औद्योगिक विवाद के दौरान श्रमिक अपनी मजदूरी खो देते है और परिणामस्वरूप मानव दिवस की हानि अत्यधिक हो जाती है और औद्योगिक उत्पादन शून्य रहता है।

शब्द कुंजी – औद्योगिक विवाद, श्रमिक, नियोक्ता, श्रम, कानून, हड़ताल, तालाबन्दी।

प्रस्तावना – उद्योगो में पूँजीवाद की वृद्धि तथा श्रम बाजार में श्रम विक्रेता (श्रमिक) तथा श्रम क्रेता (उत्पादक) दो वर्गो में विभाजित होने के कारण श्रम संघर्षो की उत्पत्ति हुई। श्रमिको एवं नियोजको के बीच संघर्ष एवं विवाद चलता रहता है। श्रमिक असंतोष, वर्गभेद, कार्य का अनुचित वातावरण, कम मजदूरी, श्रमिको के साथ मानवीय सम्बंध में कमी आदि कई कारणो से यह संघर्ष बढ़ता गया। जोकि औद्योगिक विवाद का स्वरूप धारण कर लिया। औद्योगिक विवाद से आशय उद्योगो में शान्ति की अनुपस्थिति से है। यदि श्रमिको में असंतोष व्याप्त होता है तो उद्योगो में हड़ताल, तालाबन्दी, घेराव, प्रदर्शन, नारेबाजी आदि का जन्म होता है जो औद्योगिक विवाद कहलाता है। औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 की धारा 2(के) के अनुसार औद्योगिक विवाद वे विवाद है जो नियोक्ता के मध्य अथवा नियोक्ता एवं श्रमिको के मध्य अथवा श्रमिको एवं श्रमिको के मध्य हुए किसी विवाद अथवा मतभेद से है। जो किसी व्यक्ति की नियुक्ति अथवा सेवा मुक्ति अथवा रोजगार की शर्तो या श्रम की दशाओं तथा बेरोजगारी से सम्बंधित हो। भारत में औद्योगिक विवाद प्रथम विशुद्ध के पूर्व नाम मात्र के थे। किन्तु युद्धकाल में मूल्य वृद्धि अन्तराष्ट्रीय श्रम संघ की स्थापना एवं रूस की क्रांति में भारतीय श्रमिको को संघर्ष करने के लिए जागृत कर दिया जिससे 1918 से विवादो की श्रृखंला प्रारम्भ हो गयी। 1921 में श्रमिको द्वारा 396 हड़ताले हुई जिसमें 6 लाख श्रमिको ने भाग लिया एवं 70 लाख कार्य दिनो की हानि हुई। 1928 एवं 1930 के बीच श्रमिको द्वारा अत्यधिक हड़ताले की गयी, इसके बाद के वर्षो में यह संख्या कम हुई। कारण यह था कि मजदूर संघो पर साम्यवादियों की स्थापना हो चुकी थी, वे पूँजीवादी अर्थव्यवस्था को हड़तालो एवं संघर्षो द्वारा नष्ट कर देना चाहते थे। सितम्बर 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारम्भ हुआ जिससे उत्पादो के मूल्य बढ़ने लगे परिणामस्वरूप औद्योगिक विवाद पुन: तेजी से प्रारम्भ हो गया। 1939 में 406 हड़ताले हुई जिनमें 5 लाख श्रमिको ने भाग लिया जिससे 50 लाख कार्य दिनो की हानि हुई। युद्धकाल में 1942 में भारत सुरक्षा अधिनियम के अन्तर्गत हड़तालो एवं तालाबन्दियों पर कुछ प्रतिबन्ध लगा दिया गया जिससे इसमें कुछ कमी आयी। किन्तु युद्ध के उपरान्त 1946 एवं 1947 में यह क्रमश: 1629 एवं 1811 विवाद हुए जिसमें क्रमश: 19.6 एवं 18.4 लाख श्रमिको ने भाग लिया। जिससे 1947 में 16.5 लाख मानव दिनो की हानि हुई।

15 अगस्त 1947 को भारत को स्वतंत्रता मिलने व राष्ट्रीय सरकार की स्थापना से इसमें कमी आयी किन्तु बाद में इसमें उत्तरोत्तर वृद्धि होती रही जिसे निम्न तालिका से स्पष्ट किया जा सकता है–

वर्ष	औद्योगिक विवाद			मानव दिवस की हानि		
	हड़ताल (हजार में)	तालाबंदी (हजार में)	कुल (हजार में)	हड़ताल (लाख में)	तालाबंदी (लाख में)	कुल (लाख में)
1951	–	–	1071	–	–	38
1961	432	80	512	30	19	49
1971	1476	169	1645	118	47	165
1981	1261	327	1588	212	154	366
1994	626	220	846	67	143	210
2000	385	305	690	34	133	167
2005	2111	183	2294	108	189	317
2013	103	155	258	–	–	126
2019	36	6	42	–	–	6

स्त्रोत: श्रम मंत्रालय वार्षिक रिपोर्ट (2009–10) एवं (2018–19)

भारत में औद्योगिक विवाद के कई कारण है। सबसे महत्वपूर्ण कारण अधिक मजदूरी की मांग है। श्रमिक ह्रॅची मजदूरी तथा अधिक सुविधाए पसन्द करते है किन्तु नियोक्ता श्रमिको को कम मजदूरी देकर उनसे अधिक कार्य लेना चाहते है। श्रमिक चाहते है कि उनकी कार्य दशाये स्वास्थ्य प्रद हो, उन्हें उन्नति के अधिक अवसर प्राप्त होते रहे, प्रबन्ध में उनसे सलाह मशविरा भी किया जाए तथा अधिक समय कार्य करने की दशा में प्रोत्साहित मजदूरी भी प्राप्त होती रहे। जबकि नियोक्ता श्रमिको की मांग दर्शाओं पर न्यायोचित ध्यान नहीं देना चाहता जिससे श्रमिको में असंतोष व्याप्त हो जाता है और यही असंतोष औद्योगिक विवाद का स्वरूप धारण कर लेती है। डॉ0 वी0वी0 सिंह ने औद्योगिक विवाद को दो कारणो में बांटा है– (1) आय– इसके अन्तर्गत विवाद मजदूरी, मंहगाई भत्ता, बोनस, पी.एफ., ग्रेच्युटी, पेंशन, न्यूनतम मजदूरी, वार्षिक वेतन वृद्धि आदि के कारण होती है। (2) रोजगार सम्बंधी औद्योगिक विवाद छुट्टियों तथा सवेतन अवकाश, उपार्जित अवकाश, बिमारी अवकाश, कार्य के घण्टे, कल्याण कार्य, भर्ती, छटनी, तालाबन्दी

* सहायक आचार्य, वाणिज्य विभाग, हण्डिया पीजी कालेज, हण्डिया, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

हड़ताल इत्यादि के कारण होते है।

सारिणी-2 : कार्य देने में असमर्थता

वर्ष	छुट्टियां	कार्य बाधित
2013	59	7226
2014	21	2515
2015	31	3654
2016	29	4200
2017	38	6449
2018	20	3556
2019	12	2646

स्त्रोत:- श्रम मंत्रालय वार्षिक रिपोर्ट 2018-19

सारिणी-2 औद्योगिक विवाद की उस स्थिति को स्पष्ट करता है जिसके अन्तर्गत उत्पादक कार्य देने में अपनी असमर्थता व्यक्त करता है तदुपरान्त श्रमिको को अपना रोजगार समाप्त होते हुए लगता है और वही औद्योगिक विवाद का स्वरूप धारण कर लेता है।

सारिणी-3 : उपक्रम को बन्द करने की सूचना (राज्य एवं केन्द्र दोनो के सम्बंध में)

वर्ष	तालाबन्दी	कार्य बाधित
2013	95	4476
2014	34	4726
2015	21	1496
2016	26	2079
2017	22	2740
2018	5	344

स्त्रोत:- श्रम व्यूरो, शिमला

सारिणी-3, औद्योगिक विवाद का यह भी एक प्रमुख कारण होता है कि श्रमिको को कारखाने में आने से रोक दिया जाता है। जिसके अन्तर्गत उत्पादक समुह उपक्रम को बन्द करने की संसूचना प्रेषित करते है जोकि विवाद का कारण बन जाता है।

सारिणी-4 :छटनी के कारण औद्योगिक विवाद

वर्ष	छटनी	कार्य बाधित
2013	22	1297
2014	14	1798
2015	12	533
2016	5	3654
2017	3	86
2018	5	70

स्त्रोत:- श्रम व्यूरो, शिमला

सारिणी-4, औद्योगिक विवाद का प्रमुखत: कारण छटनी भी होता है। इस विवाद का स्वरूप उत्पादक वर्ग के द्वारा श्रमिको को कार्य से मुक्त करके उत्पन्न किया जाता है तथा श्रमिक कार्य मुक्त होने के लिए तैयार नहीं होते जोकि विवाद का कारण बन जाता है।

उपर्युक्त अध्ययन के अनुसार आधे से अधिक विवाद (51.7 प्रतिशत) आय से सम्बंधित होते है तथा 26.5 प्रतिशत रोजगार की दशाओं से सम्बंधित होते है। 16.5 प्रतिशत रोजगार से सम्बंधित होते है तथा 5.3 प्रतिशत तकनीकी परिवर्तन के कारण होते है। सन् 1931 में साही आयोग ने अनुभव किया कि यद्यपि श्रमिक राष्ट्रीय एवं साम्यवादी विचारो अथवा व्यापारिक उद्देश्यों से प्रभावित होते है। किन्तु यह विश्वास है कि शायद ही कोई हड़ताल ऐसी हो जो पूर्णत: अथवा सही माने में आर्थिक कारणो को लेकर न हुई हो। भारत में औद्योगिक विवाद प्रमुखत: आय एवं रोजगार अर्थात आर्थिक आधार को ही मानकर किया जाता है तथा गैर आर्थिक कारण 67 से 74 प्रतिशत तालाबन्दियों के लिऐ उत्तरदायी है। इसी प्रकार उच्च तकनीकी के कारण श्रमिक असुरक्षित महसूस करते है। इसी को आधार बनाकर तालाबन्दी या हड़ताल घोषित हो जाता है जो कि औद्योगिक विवाद का स्वरूप धारण कर लेता है।

औद्योगिक विवादो का समाधान - हड़ताल एवं तालाबन्दी अधिक होने के कारण औद्योगिक एवं सामाजिक गतिरोध उत्पन्न हो जाता है। डॉ0 रस्तोगी के अनुसार- 'औद्योगिक शान्ति एक ऋणात्मक विचार ही नही है, जिसका आशय केवल औद्योगिक विवाद के नहीं होने से है अथवा विध्वंसकारी या उत्तेजनात्मक कार्यवाहियों को समाप्त करने से है ऐसा वातावरण उत्पन्न करने से है जिसके द्वारा आपसी सहयोग एवं सहभागिता का वातावरण तैयार हो सके।' भारत में विवाद निवारण की दृष्टि से औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 की वैधानिक प्रणालियों एवं ऐच्छिक प्रणालियों का प्रयोग किया जाता है।

औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 के अनुसार विवाद निवारण की पद्धति :-

1. कार्य समितियाँ (धारा 3)- नियोजको और नियोजितो के अच्छे सम्बंध स्थापित करने हेतु कार्य समितियों की स्थापना की जाती है। जिस औद्योगिक संस्थान में 100 या अधिक श्रमिक नियुक्त हो या पिछले 12 माह में नियुक्त किये गये हो वे संस्थान कार्य समितियों की स्थापना करेगे, जिसमें नियोक्ता एवं श्रमिको के प्रतिनिधि इस प्रकार होगे कि किसी भी पक्ष के प्रतिनिधि कम नही होगे तथा यह समिति मिलकर छोटी मोटी समस्याओं को हल करेगी।

भारत में यह समिति पूर्णत: सलाहकारी है यह केवल सलाह ही दे सकती है जिसे मानने अथवा न मानने के लिए किसी पक्ष पर दबाव नही डाला जा सकता है। जिसका परिणाम यह होता है कि समिति के सुझावो की पूर्णत: अवहेलना की जाती है और समिति में आस्था समाप्त हो जाती है। अत: यह समिति सफल नहीं हो सकी।

2. समझौता अधिकारी (धारा 4)- सरकार अपनी अधिसूचना प्रकाशित करके जितनी संख्या में चाहे समझौता अधिकारी नियुक्त कर सकती है। जिनका कर्तव्य औद्योगिक विवादो का निपटारा करना एवं मध्यस्थता को प्रोत्साहित करना होगा। समझौता का कार्य प्रशासनिक है न कि न्यायिक, इन्हें स्वयं निश्चित करना होता है कि किन विवादो को निपटाना है अथवा किन्हे नही निपटाना है।

यह कार्य भी भारत में सफल नहीं है क्योकि इसमें अधिकारी जिस कार्य को चाहता है उसे ही निपटाने का प्रयास करता है अन्यथा नहीं, जोकि औद्योगिक विवाद निवारण का उचित माध्यम नहीं है।

3. समझौता मण्डल (धारा 5)- जब कोई औद्योगिक विवाद समझौता अधिकारी या बोर्ड सुलझने में असमर्थ होते है तब सरकार सरकारी गजट में प्रकाशित करके समझौता मण्डल की स्थापना कर सकती है। जिसमें एक सभापति तथा 4 अन्य सदस्य होते है।

4. जांच न्यायालय (धारा 6)- जब विवाद उपर्युक्त स्तर पर नही सुलझते तो सरकारी आदेश के अन्तर्गत एक जांच न्यायालय की स्थापना का आदेश दिया जा सकता है। इस न्यायालय का कार्यक्षेत्र सरकार द्वारा सन्दर्भित किये गये विवादो की एवं उसके कारणो की जांच करना है न कि निर्णय

देना। यह न्यायालय 6 माह में सरकार के पास अपनी रिपोर्ट भेज देगा।

5. श्रम न्यायालय (धारा 7) – राज्य सरकारो द्वारा नियोक्ताओं के विवादास्पद आदेशो, प्रबन्धको द्वारा निलम्बित और पदच्युत किये गये कर्मचारियों, हड़तालो और तालाबन्दियों के कानूनी या गैरकानूनी होने के बारे में निर्णय करने के लिए श्रम न्यायालय स्थापित किये गये है। यह न्यायालय अनुसूचि 2 में वर्णित मामलो के बारे में शीघ्र निर्णय कर सरकार को रिपोर्ट भेज देते है।

6. औद्योगिक न्यायाधिकरण (धारा–7–ए, 7–सी तथा 8)– औद्योगिक विवादो के निपटारा के लिए दो प्रकार के न्यायाधिकरण कायम किये गये है (1) राज्यीय न्यायाधिकरण (2) राष्ट्रीय न्यायाधिकरण। राज्यीय न्यायाधिकरण–सरकार मजदूरी, बोनस, लाभ अर्जन आदि से सम्बंधित मामलो में से एक से अधिक न्यायाधिकरण कायम कर सकती है। इसमें उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के स्तर का व्यक्ति कार्य करता है। राष्ट्रीय न्यायाधिकरण औद्योगिक विवादो पर अपना निर्णय देती है जो केन्द्र सरकार की दृष्टि से राष्ट्रहित के हो अथवा वह विवाद एक से अधिक राज्यों के हित को प्रभावित करते हो।

7. शिकायत निपटान अधिकारी– ऐसा प्रत्येक औद्योगिक संस्थान जहां 50 या अधिक श्रमिक नियुक्त हो अथवा 12 महीनो में किसी भी दिन नियुक्त हो वहॉ इस अधिनियम के अन्तर्गत व्यक्तिगत श्रमिक से सम्बंधित औद्योगिक विवादो का निपटारा करने के लिए शिकायत निपटान अधिकारी की नियुक्ति की जायेगी।

8. पंच निर्णय– इस प्रथा में किसी औद्योगिक विवाद के निपटारे के लिए सम्बधित पक्षकारो को बराबर–बराबर संख्या में पक्षकारो को नियुक्त करना होता है जो दोनो पक्षो की बात सुनने के बाद अपना निर्णय देते है। यह प्रथा शीघ्र विवाद निपटाने में सहायक होती है।

निष्कर्ष – भारत में औद्योगिक विवाद के निवारण की पद्धति बहुत ही विलम्बकारी है, किसी भी विवाद पर यदि शीघ्रतम निर्णय नहीं लिया जाता है तो वह विवाद और विनाशकारी रूप धारण कर लेता है। पद्धति ऐसी हो जो सुंगमता से पूर्ण हो ताकि श्रमिको या नियोक्ताओं का ज्यादा नुक्सान न हो।

औद्योगिक विवाद आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक वातावरण को तहस नहस कर देता है। देश की चलती जीवन रेखा जैसे निष्प्राण सी हो जाती है। विवाद यदि जनता के जीवन से सम्बंधित आवश्यक वस्तुओं के संदर्भ में हो तो जैसे पानी बिजली सड़क परिवहन रेलवे, टेलीफोन आदि सभी के जीवन को काफी संकट का सामना करना पड़ता है। औद्योगिक विवाद के दौरान श्रमिक अपनी मजदूरी खो देते है और परिणामस्वरूप मानव दिवस की हानि अत्यधिक हो जाती है और औद्योगिक उत्पादन शून्य रहता है। औद्योगिक विवाद श्रमिको एवं नियोक्ताओं के मध्य एक गम्भीर संकट पैदा कर देता है किन्तु अब सरकार कई पैमाने को निश्चित करती है जिससे विवाद को मापा एवं रोका जा सके। सरकार औद्योगिक के विवाद को रोकने एवं विकास को सुनिश्चित करने की कई प्रणालियों पर निरन्तर प्रयास करती रहती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. एस0चन्द्र कम्पनी प्राइवेट लि0, भारतीय अर्थ व्यवस्था, गौरव दत्त एवं अश्वनी महाजन
2. साहित्य भवन पब्लिकेशन, मानव संसाधन प्रबंध, डॉ0 मामोरिया, डॉ0 दशोरा
3. एस.बी.पी.डी. पब्लिशिंग हाउस, औद्योगिक सन्नियम, प्रो0 अग्रवाल एवं गुप्ता।
4. शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, मानव संसाधन प्रबंध, डॉ0 अजय कुमार सिंघल
5. उपकार प्रकाशन, यू0जी0सी0 नेट चन्द्र प्रकाश श्रीवास्तव
6. अरिहन्त पब्लिकेशन, वाणिज्य, डॉ0 विनीत कौशिक
7. www.ilo.com
8. annual Report (www.ilo.com)

****

उपरोक्ता संरक्षणः जागरूकता की एक पहल

डॉ. विवेक कुमार मिश्र*

शोध सारांश – भारत एक विकासशील देश है यहां उपभोक्ता आन्दोलन अभी शैशवावस्था में है, उदारीकरण के पश्चात् भारतीय उपभोक्ताओं में जागरूकता की पहल प्रारम्भ हुई है, किन्तु यह पहल पर्याप्त नहीं है। भारत में उपभोक्ता जागरूकता का सम्यक रूप से विकास न होने के कई कारण है। भारत की लगभग 68.82 प्रतिशत जनसंख्या गांवो में निवास करती है उसकी सभी आवश्यकताएं लगभग स्थानीय स्तर पर पूरी हो जाती है इसके साथ ही भारत की लगभग 35 प्रतिशत जनता गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करती है, ऐसे वर्ग की जनता सर्वप्रमि अपना पेट भरना चाहती है, वस्तु की गुणवत्ता, मात्रा में कमी, कीमत आदि के प्रति कोई दिलचस्पी नहीं होती है। उपभोक्ता की जागरूकता के लिए ग्राहको अर्थात उपभोक्ता का शिक्षित होना अति आवश्यक है। भारत की शिक्षा साक्षरता भले ही 64.84% से बढ़कर 73% हो गयी है किन्तु समक्ष का स्तर पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो सका है। अज्ञानता और जागरूकता के अभाव में जनता अपने अधिकारो के प्रति पूर्णरूप से संरक्षित नहीं रह पाती, जिसका प्रत्यक्ष लाभ बड़े उद्यमियों एवं व्यापारियों को होता है।

शब्द कुंजी – उपरोक्ता संरक्षण, उपभोक्ता जागरूकता– आशिक्षा उत्पाद, उपभोक्ता।

प्रस्तावना – भारत में सामाजिक व्यवस्था का उदय लगभग पांच हजार वर्ष से भी पहले प्रारम्भ हुआ था, किन्तु वर्तमान परिदृश्य में भारतीय समाज का जो स्वरूप है, वह विभिन्न जटिलताओं और विरोधाभासो से परिपूर्ण है। समाज जहां आध्यात्मिक विकास की चेष्ठा करता है वही दूसरी तरफ भौतिक साधनो की प्राप्ति की भी आकांक्षा रहती है। समाज वैज्ञानिक विकास पर बल देता है किन्तु वह चमत्कारो एवं अलौकिक घटनाओं मे भी आस्था रखता है इसी तरह भारतीय संविधान का अनुच्छेद 14 से 18 समता या समानता की बात करता है वही समाज जातीय एवं नस्लीय तथा अमीरी गरीबी का भेद भाव करता है। इन सभी विरोधा भाषो का विश्लेषण सरल नहीं है किन्तु इससे भारतीय समाज के विकास क्रम की जटिलताओं को समझना आसान है।

सामाजिक परिवर्तन संरचनात्मक अद्य: संरचमात्मक एवं उनके वितरण तथा संस्कृति, परंपरा, जीवन दर्शन, समाज के प्रति दृष्टिकोण आदि तमाम परिस्थितियों में परिवर्तन के सापेक्ष होता है, एल्फिन टावर ने कहा है कि इस संसार में एक ही सत्य है वह है परिवर्तन, परिवर्तन तो अपरिहार्य है और किसी भी समाज की संस्कृति भी बिना परिवर्तन के स्थिर नहीं रह सकती है। किन्तु सामाजिक परिवर्तन मूलत: चिन्तन व्यवहारिक परिवर्तन का एक प्रकार का रूपान्तरण है जोकि अपने सकारात्मक या नकारात्मक अनुप्रभावो पर बिना विचार किए सम्पन्न हो जाता है। सामाजिक परिवर्तनों में कई परिवर्तन है जिसमें से तकनीकी परिवर्तन एक प्रमुख कारक बन कर उभरा है।

तकनीकी अविष्कारो ने आम जनमानस के जीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाने का प्रयास किया है। इस तकनीकी परिवर्तन का प्रयोग गांवो में भी दिखायी दे रहा है, जो लोग परम्परागत तरीके से कार्य करते थे, आज तकनीकी का प्रयोग कर रहे है जैसे खेती में उच्च तकनीकी का प्रयोग करना, स्वयं के कार्यो में प्रयोग करना आदि। सड़क यातायात, रेल व्यवस्था, दूरसंचार आदि ने लोगो की मानसिकता का क्षैतिज एवं गुणात्मक दोनो प्रकार से विस्तार किया है जिससे भारतीय समाज में जागरूकता की वृद्धि हुई है। किन्तु वास्तविक रूप से मानसिक स्तर के परिवर्तन की दर बहुत ही धीमी रही है। परम्पराओं से समझौता किए बगैर व्यक्ति अपने अधिकारो के प्रति सचेत रहा है। आज के समाज में व्यक्ति अर्थात उपभोक्ताओ के अर्थो में भी परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है।

उपभोक्ता अर्थात किसी वस्तु या सेवा की कीमत देकर प्रयोग करने वाला व्यक्ति को ही उपभोक्ता कहा जाता है। मानवीय विकास के प्रारम्भिक दौर में भौतिक वस्तु अथवा सेवा को क्रय करने वाले को क्रेता कहा जाता था किन्तु विकास के इस दौर में इसे उपभोक्ता शब्द से सम्बोधित किया गया, जो क्रेता से कही अधिक व्यापक शब्द समाहित किये हुए है। उपभोक्ता अर्थात किसी वस्तु का प्रयोगकर्ता होने के साथ–साथ उस वस्तु के गुणो एवं दोषो का विश्लेषण करने का माध्यम होता है। जैसे–जैसे समाज का विकास होता गया, लोगो की भौतिक आवश्यकताओं में भी बेहताशा वृद्धि होती गयी। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बाजार भी विकसित हुआ। इन बाजारो से व्यक्ति अपनी सभी भौतिक, अभौतिक आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है।

जब आवश्यकताओं में बेहताशा वृद्धि हुई तो बाजार भी तेजी से आगे बढ़ा, प्रत्येक उत्पादक अत्यधिक लाभ कमाने की इच्छा के साथ काम करने लगा ऐसे में समाज के प्रति उनका कर्तव्य उपेक्षित होने की सम्भावना अधिक होती है इसी कारण उपभोक्ता संरक्षण की आवश्यकता पड़ी, जिससे संरक्षण के लिए विभिन्न प्रकार के कानून का निर्माण किया गया तथा जरूरत पड़ने पर किया भी जा रहा है।

उपभोक्ता संरक्षण से सम्बंधित आधुनिक आन्दोलन जिसे उपभोक्ता आन्दोलन भी कहा जाता है कि शुरूआत 1962 में अमेरिका से हुई। 15 मार्च 1962 को अमेरिकी राष्ट्रपति ने उपभोक्ता के अधिकारो को 'बिल आफ राइट्स' में सम्मिलित करने की घोषणा की तथा उपभोक्ता सुरक्षा आयोग के गठन की घोषणा की। इसी उपलब्ध में 15 मार्च को विश्व उपभोक्ता दिवस मनाया जाता है। अमेरिकी घोषणा से प्रेरित होकर 1973 में ब्रिटेन में भी

* प्रवक्ता (वाणिज्य) हण्डिया पी0जी0 कालेज हण्डिया, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

व्यापार सम्बंधी अधिनियम लागू किया गया। अमेरिका के बिल ऑफ राइट्स में शामिल उपभोक्ता अधिकार सूचना, सुरक्षा, चयन एवं सुनवाई से सम्बंधित थे। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा बाद में तीन अतिरिक्त उपभोक्ता अधिकार–क्षतिपूर्ति का अधिकार, शिक्षा का अधिकार एवं स्वस्थ पर्यावरण का अधिकार शामिल कर इसे सशक्त बनाया गया, विश्व के अन्य विकसित एवं विकासशील देशो में उपभोक्ता के अधिकारो के संरक्षण की दिशा में व्यापक रूप में जागरूकता आयी।

समाज में जागरूकता के परिणाम का शीघ्र ही अवलोकन हुआ। विनियमित्ताओं तथा विक्रेताओं द्वारा पैकिंग एवं लेबलिंग का प्रयोग किया जाने लगा, जिस पर उत्पाद से सम्बंधित सभी सूचनाए अंकित की जाने लगी। प्राय: भ्रामक एवं मिथ्या प्रचार का प्रसार कम होने लगा। उपभोक्ता संरक्षण से सम्बंधित इन आन्दोलनो को नया आयाम आर्थिक उदारीकरण तथा वैश्वीकरण के बाद मिला।

जहां तक भारत का सम्बंध है यहां उपभोक्ता जागरूकता शैशवावस्था में है। सन् 1961 से प्रारम्भ आर्थिक उदारीकरण के बाद उपभोक्ताओं में कुछ जागरूकता जरूर दिखायी दी है किन्तु यह अभी भी अपर्याप्त है। भारत की 68.82% जनता गांव में निवास करती है। उसकी सभी आवश्यकतायें लगभग स्थानीय स्तर पर पूर्ण हो जाती है। साथ ही भारत की लगभग 35% जनता गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करती है। ऐसे वर्ग की जनता पहले अपने पेट को शांत करना चाहती है।

उपभोक्ताओं की जागरूकता के लिए उनका शिक्षित होना अति आवश्यक है। भारत की शतप्रतिशत जनता अभी भी अशिक्षित है। अज्ञानता और जागरूकता के अभाव में ऐसी जनता अपने अधिकारो के प्रति सजग नहीं रह पाती। इसका सीधा लाभ व्यापारी वर्ग को मिलता है।

हमारे देश में खाद्य पदार्थो में मिलावटी, चोर बाजारी, कमतौल, मिथ्या प्रचार, भ्रामक विज्ञापन, भ्रामक पैकिंग, भ्रामक कीमत आदि के कारण उपभोक्ता आन्दोलन को गति नहीं मिल पा रही है। देश में नकली वस्तुओं तथा नकली ब्राण्डो की कमी नहीं है सच तो यह है हम दैनिक जीवन में जिन वस्तुओं का प्रयोग करते है उन वस्तुओं का अधिकतम भाग नकली हो सकता है। दूध में यूरिया का प्रयोग का भी मामला देश में आ चुका है। यहां तक कि सिंथेटिक घी का भी मामला अखबार में प्रकाशित हो चुका है। आज बाजार में प्रत्येक वस्तु के साथ साथ उसकी नकली वस्तु भी उपलब्ध है। यह कार्य इतनी कुशलता से किया जा रहा है कि असली एवं नकली में पहचान करना मुश्किल होता है। इससे उपभोक्ताओं को जो नुक्सान होता है जिससे वे गम्भीर बीमारियों से ग्रसित हो जाते है। जिसका मौद्रिक मूल्यांकन सम्भव नहीं है। यह सीधे–सीधे जिन्दगी एवं मौत का मामला बन जाता है।

व्यापार सम्बंधी अनैतिक तथा उपभोक्ताओं के शोषण सम्बंधी क्रिया कलापो पर नियंत्रण करने तथा उपभोक्ता अधिकारो के संरक्षण हेतु समय–समय पर नियमो तथा अधिनियमों का निर्माण सरकार द्वारा किया गया जैसे कृषि उपज अधिनियम 1937, औषधि व सौन्दर्य अधिनियम 1940, खाद्य मिलावट निवारण अधिनियम 1954, आवश्यक वस्तु पूर्ति अधिनियम 1955, औद्योगिक विकास नियमन अधिनियम 1951, व्यापार व व्यापार चिन्ह अधिनियम 1958, एकाधिकार व अवरोधक व्यापार व्यवहार अधिनियम 1969, पैकेज्ड वस्तु नियमन आदेश 1975, भारत मानक ब्यूरो अधिनियम् बाँट मॉप (प्रवर्तन) अधिनियम 1985, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986.

दिसम्बर 1986 में भारत सरकार ने वृहत अध्ययन करने के पश्चात् उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 बनाया सन् 1991, 1993 तथा 2002 में संशोधन किये गये, यह अधिनियम उपभोक्ता के अधिकारो का संरक्षण एवं संवर्द्धन उपभोक्ता परिषदो की स्थापना के व्यवस्था, उपभोक्ता के विवादो को निपटाने की व्यवस्था तथा विवादो का सरलतम पूर्वक निपटारा के लिए लागू किया गया तथा हाल ही में वापस संशोधन कर उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 2019 लागू किया गया। इस व्यवस्था के अन्तर्गत उपभोक्ता के विवादो को निपटाने की त्रि–स्तरीय व्यवस्था किया गया है। इसके अन्तर्गत जिला मंच, राज्य मंच तथा राष्ट्रीय मंच की स्थापना की गयी है। यह त्रिस्तरीय व्यवस्था उपभोक्ताओ के लिए बहुत ही उपयोगी एवं व्यवहारिक साबित हो रही है, क्योंकि इसमें सामान्य न्यायालयों की भांति वैधानिक औपचारिकताओं यथा सिविल प्रोसिजर कोड तथा क्रिमिनल प्रोसिजर कोड के प्रावधानो का पालन नहीं करना पड़ता है। इस व्यवस्था से उपभोक्ताओं को त्वरित एवं सस्ता न्याय प्राप्त होता है, जिससे उनके समय एवं धन की बचत होती है।

अधिनियम के दायरे को विकसित करते हुए नकली सामान व सेवाओं की बिक्री को भी इसके अन्तर्गत शामिल किया गया। जिला फोरम में 50 लाख रूपये तक, राज्य फोरम में एक करोड़ रूपये तक तथा एक करोड़ से अधिक राशि के लिए राष्ट्रीय फोरम में वाद लाया जा सकता है। प्रत्येक मंच के निर्णय को 30 दिन के भीतर उससे ट्पर मंच में लाया जा सकता है तथा राष्ट्रीय मंच के निर्णय से असंतुष्ट होने की दशा में उच्चतम न्यायालय में वाद लाया जा सकता है।

भारत में उपभोक्ताओं में जागरूकता की कमी के कारण उपभोक्ताओं के संरक्षण सम्बंधी सभी प्रयास निष्प्राय साबित हो रहे है। यही कारण है कि हमारे देश में उपभोक्ता आन्दोलन अन्य देशो के मुकाबले काफी कमजोर साबित हो रहा है। उपभोक्ताओं का बाजार पर कोई नियंत्रण नहीं दिखायी दे रहा है। बाजार के विस्तार तथा उपभोक्ताओं की संख्या में दिन प्रतिदिन वृद्धि होने के कारण वस्तु की गुणवत्ता और उसकी कीमतो पर से उपभोक्ताओं का नियंत्रण समाप्त होता जा रहा है। विकसित देशो में बाजार पर नियंत्रण करने का काम उपभोक्ता स्वयं करता है, उसके लिए उनका खुद का एक संगठन भी होता है। इग्लैण्ड एवं अमेरिका में उपभोक्ता इस सन्दर्भ में बहुत आगे है। अमेरिका में नाडार के प्रयास से आज उपभोक्ताओं के पास Better Business Bureau, Am¡a Good Manufacturing Practic जैसे यंत्र है। जिससे वहां शोषण न्यून स्तर तक है। इग्लैण्ड में तो Ministry of Consumer welfare है जहां तक भारत की बात है यहां की स्थिति अलग है यहां संरक्षण हेतु कुछ संगठन है जो बड़े शहरो तक सीमित है जैसे (1) Consumer Guiadence Society of India जिसकी शाखाएं मात्र हैदराबाद, पुणे, कोट्टायम, त्रिचूर में ही है। (2) Vilantry Organisation in Interest of Consumer Education नई दिल्ली (3) Consumer Education and Research Centre (CERC) अहमदाबाद। इन संगठनो की शाखाएं अभी छोटे शहरो तथा गांवो तक पूर्णत: विकसित नहीं हो सकी है।

भारत में उपभोक्ता संरक्षण से सम्बंधित सभी कानूनो में उपभोक्ता को सम्बंधित व्यापारी के विरूद्ध विधिक कार्यवाही का अधिकार दिया गया है। कानून के अनुसार उपभोक्ता न केवल नापतौल में कमी, खराब वस्तुओं की बिक्री, अधिक मूल्य की वसूली इत्यादि के खिलाफ शिकायत दर्ज कर सकता है, बल्कि यह अपने असंतोष सेवाओं के खिलाफ भी अपनी शिकायत दर्ज कर सकता है। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 2019 में समितियों के माध्यम

से उपभोक्ताओं की शिकायत को निपटाने की व्यवस्था की गयी है। इसके अतिरिक्त सरकार वस्तुओं के मूल्यों पर नियंत्रण के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली की व्यवस्था भी की है।

इन सभी व्यवस्थाओं के बावजूद अभी भारत में उपभोक्ता शक्ति का विकास नहीं हुआ है। इसका प्रमुख कारण है उपभोक्ताओं का समुचित शिक्षित न होना तथा जागरूकता की कमी। विकसित देशो की भांति भारत में उपभोक्ताओं में सजगता का अभाव है। जिसका सीधा फायदा व्यापारियों को मिलता है। विभिन्न सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनो का यह दायित्व है कि वे उपभोक्ताओं को जागरूक करें। एन0जी0ओ0 यह कार्य सही तरीके से कर सकते है। उपभोक्ता आन्दोलन को सफल बनाने के लिए आवश्यक है कि विनिर्माता एवं उपभोक्ता के मध्य सीधा सम्बंध स्थापित करने का प्रयास किया जाय तथा सहकारिता को भी विकसित कर उपभोक्ताओं के अधिकारो के लिए प्रत्यक्ष लड़ाई लड़ा जा सकता है। जिससे भारत में ही उपभोक्ता संरक्षण में क्रान्ति लायी जा सकती है। उपभोक्ताओं को अपने अधिकारो के प्रति जागरूक होकर शोषण व हानि से समाज को मुक्त करना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गुप्ता एस0पी0, उपभोक्ता संरक्षण Lucknow Eastern Book Compay 2008-
2. प्रतियोगिता साहित्य 2014-15 एवं 2019-20
3. www.ministryofconsumerwelfare.
4. www.consumerprotectionact.
5. डॉ0 अजीत कुमार शुक्ल, विपणन प्रबन्ध वैभव लक्ष्मी प्रकाशन वाराणसी।
6. उपकार वाणिज्य
7. डॉ0 वी0सी0 सिन्हा, व्यावसायिक पर्यावरण, SBPD Publication आगरा

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

योग विज्ञान में रोजगार के अवसर

डॉ. जी. एल. मालवीय* डॉ. खुमेश सिंह ठाकुर **

प्रस्तावना – आपके दिल में भौतिक चीजों के लिए नहीं बल्कि योग के लिए जुनून जरूरी है– बी. के. एस. अयंगर
जीने की कला और सेहतमंद जीवन का विज्ञान है योग– ईश्वर बी. बासवारेड्डी

योग एक प्राचीन परम्परा और आध्यात्यिक अनुशासन है, जिसमें तन, मन, और प्रकृति के बीच एकात्म भाव स्थापित करते हुए सभी ताकतों के बीच चेतना के स्तर पर संगीत और समन्वय बनाया जाता है। योग शब्द संस्कृत भाषा से आया है, जिसका अर्थ मेल होता है। अत: योग न सिर्फ शारीरिक अभ्यास या व्यायाम है, बल्कि यह विचारों और कार्यो के बीच सन्तुलन और ताल–मेल स्थापित करने और स्वस्थ तन–मन के लिए समावेशी दृष्टिकोण के साथ शरीर व ऊर्जा को सुव्यवस्थित करने का साधन है। योग में विभिन्न परम्पराएं, विरासत और दर्शन है। इसके कारण योग की अलग–अलग धाराएं हैं और सभी के अपने –अपने सिद्धांत, मकसद और अभ्यास की पद्धतियां है।

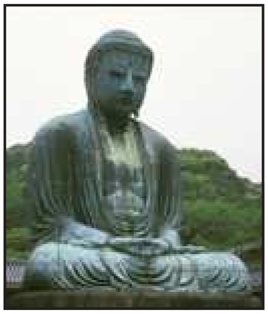

बुद्ध पदमासन मुद्रा में ध्यान में

योग का लक्ष्य– योग का लक्ष्य स्वास्थ्य में सुधार से लेकर मोक्ष (आत्मा को परमात्मा का अनुभव) प्राप्त करने तक है। जैन धर्म अद्वैत वेदांत के मोनिस्ट संप्रदाय और शैव समुदाय के अन्तर में योग का लक्ष्य मोक्ष का रूप लेता है, जो सभी सांसारिक कष्ट एवं जन्म और मृत्यु के चक्र (संसार) से मुक्ति प्राप्त करना है उस क्षण में परम ब्रह्माण के साथ समरूपता का एहसास है। मीर्चा एलीयाडे योग के बारे में कहते है कि यह सिर्फ एक शारीरिक व्यायाम ही नहीं है, एक आध्यात्मिक तकनीक भी है।

योग का महत्व– वर्तमान समय मे अपनी व्यस्त जीवन शैली के कारण लोग संतोष पाने के लिए योग करते हैं। योग से न केवल व्यक्ति का तनाव दूर होता है बल्कि मन और मस्तिष्क को भी शांति मिलती है। योग बहुत ही लाभकारी है, योग न केवल हमारे दिमाग, मस्तिष्क को ही ताकत पहुंचाता है बल्कि हमारी आत्मा को भी शुद्ध करता है। आज बहुत से लोग मोटापे से परेषान हैं उनके लिए योग बहुत ही फायदेमंद है योग के विभिन्न प्रकार के लाभों के कारण आज विदेशों में भी योग बहुत लोकप्रिय हो गया है।

योग जीवन जीने की कला है, साधना विज्ञान है। मानव जीवन मे इसका महत्वपूर्ण स्थान है। इसकी साधना व सिद्धांतों मे ज्ञान का महत्व दिया है इसके द्वारा आध्यात्मिक और भौतिक विकास संभव है। वेदों और पुराणों में भी योग की चर्चा की गई है। जब हम योग की बात करते है तो हमारे जेहन मे सिर्फ आसन, प्रणायाम, ध्यान, मुद्राएं ही आती हैं, लेकिन ऐसा नहीं है योग बहुत ही विस्तृत विषय है इसका क्षेत्र कर्म योग, ज्ञान योग, हठ योग, मंत्र योग, कुंडली जागृति जैसे कई योग–साधनों से है।

योग अब महज शरीर को स्वस्थ रखने का जरिया नही बल्कि एक व्यापक इंडस्ट्री बन गया है जिसमें कॅरियर बनाने की बेशुमार संभावनाएं है। योग से न सिर्फ आपका मानसिक संतुलन ठीक रहता है बल्कि कसरत, मेडिटेषन से आपकी बॉडी भी फिट रहती है, लोगों के फिट रहने की आदत ने योग मे कॅरियर की नई राहें खोल दी है, यही वजह है कि लोग युवा योगा इंस्ट्रक्टर के रूप में कॅरियर बना रहे हैं।

योग ऐसी चिकित्सा है जो व्यक्ति के शरीर, मन और आत्मा को एकीकृत करना है, शरीर को मजबूत करता है, मन को शान्त करता है। व्यक्ति को शारीरिक और आध्यात्मिक रूप से प्रबुद्ध करता है, तनाव दूर करता है और श्वसन का सही तरीका सिखाता है। शारीरिक मुद्रा में सुधार करता है, हर परिस्थिति से मुकाबला करने का कौशल प्रदान करता है तथा दृढ़ संकल्प एवं एकाग्रता के लिए व्यक्ति को प्रोत्साहित करता है। यह एक ऐसी पद्धति है जिसमें विभिन्न प्रकार के शारीरिक श्रम युवाओं को वर्तमान के प्रति जागरूक करते है और शरीर–मन को निरंतरता में मौजूदा भावनाओं के संबंध में उन्हें

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) सुभद्रा शर्मा शासकीय कन्या महाविद्यालय, गंजबासौदा, जिला– विदिशा (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सुभद्रा शर्मा शासकीय कन्या महाविद्यालय, गंजबासौदा, जिला– विदिशा (म.प्र.) भारत

सचेत करने का प्रयास करते है।

अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस के अस्तित्व में आने के बाद देश-दुनिया में योग को तेजी से अपनाया जा रहा है भारत में योग के प्रति लोगों का रूझान तेजी से बढ़ता जा रहा है लोग, योग के शरीर और मस्तिष्क पर पड़ने वाले बेहतर और सकारात्मक प्रभाव के कारण इसे अपना रहे है ऐसे में योग अब महज शरीर को स्वस्थ रखने का जरिया नही बल्कि एक व्यापक इंडस्ट्री बन गया है जिससे कॅरियर बनाने की बेशुमार संभावनाएं है।

यूजीसी ने योग में अब बीएससी, एमएससी, पीएचडी और पीजी डिप्लोमा इन योगा और पीजी डिप्लोमा इन योगा थैरपी का अप्रूवल दे दिया है पहले फेज में करीब छह सेन्ट्रल यूनिवर्सिटीज में यह कोर्स शुरू होंगें हर सरकारी विष्वविद्यालय में योग विभाग होना अब अनिवार्य होगा।

एसोचैम द्धारा किये गये एक अध्ययन के अनुसार देश में तीन लाख योग प्रशिक्षकों की कमी है, जबकि पांच लाख योग प्रशिक्षकों की आवष्यकता है। अध्ययन के अनुसार दक्षिण पूर्व एशिया में योग प्रशिक्षकों की मांग सबसे अधिक है। भारत, दक्षिण पूर्व एशिया और चीन के लिए इसका सबसे बड़ा निर्यातक है। अनुमान है कि चीन में भारत के 3000 योग प्रशिक्षक काम कर रहे है जिनमें से ज्यादातर हरिद्धार और ऋषिकेष के है, जिसे भारत की योग राजधानी कहा जाता है क्योंकि यहां सबसे ज्यादा योग स्कूल है। एसोचैम के महामंत्री डी.एम. रावत ने कहा कि योग को तेजी से बढते फिटनेस की नई मुद्रा के रूप देखा जा रहा है जितनी तेजी से यह दुनिया भर में लोकप्रिय हो रहा है उसके हिसाब से इसके प्रशिक्षकों की कमी है।

योग में अपना कॅरियर बनाने की शुरूआत कक्षा 12 के बाद और स्नातक के बाद की जा सकती है। योग में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए कई डिग्री, डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्स उपलब्ध है। बैचलर ऑफ आर्टस (योग), मास्टर इन आर्टस (योग), पीजी डिप्लोमा इन योग एवं पीजी डिप्लोमा इन योग थैरेपी कोर्सेस की अच्छी डिमांड है। योग एक्सपर्ट या नैचरोपैथी के तौर पर कॅरियर विकसित करना है तो साढ़े पाँच वर्ष का बैचलर ऑफ नैचरोपैथी एन्ड यौगिक सांइसेज (BNYS) किया जा सकता है।

योग के क्षेत्र में रोजगार के अवसर- योग एक विज्ञान है जिसे सीखने के लिए योग्य और प्रशिक्षित शिक्षक की जरूरत होती है योग शिक्षक अपना खुद का काम शुरू कर सकते है तमाम ऐसे शिक्षण संस्थान है जहां योग शिक्षक के लिए ढेरों वैकेंसी है अर्थात योग के क्षेत्र मे सर्वाधिक कॅरियर अवसर शैक्षणिक क्षेत्र मे ही उपलब्ध है वहाँ योग शिक्षक, योग प्रशिक्षक, योग सलाहकार, योग विषेषज्ञ, योग चिकित्सक, योग प्रबंधक, योग एरोबिक प्रशिक्षक, योगाभ्यास करने वाला के रूप में रोजगार के अवसर उपलब्ध है। कुल मिलाकर आप निम्न स्थानों पर अवसर तलाशें जा सकते है- अकादमिक संस्थान, अस्पताल, स्कूल/कालेज, हाउसिंग सोसाइटियां, कॉर्पोरेट संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय कंपनियां, हैल्थ स्पा, ब्यूटी सैलन, जिम आदि। इनके अलावा टेलिविजन चैनल भी योग प्रशिक्षक को हायर करते है और जानी-मानी हस्तियां भी निजी योग इंस्ट्रक्टर हायर करते है। योग प्रशिक्षण प्राप्त कर योग एयरोबिक्स इंस्ट्रक्टर, योग थैरेपिस्ट, योग इंस्ट्रक्टर, योग शिक्षक, थैरेपिस्ट एवं नैचरोपैथी के तौर पर भी काम किया जा सकता है। आप स्वयं का हैल्थ स्पा सैलून, हैल्थ क्लब, योग विद्यालय या जिम भी खोल सकते है इस समय यह व्यवसाय बहुत तेजी के साथ बढ़ रहा है। हमारे देश में विभिन्न राज्य सरकारों ने अपने हर स्कूल में योग शिक्षक रखना अनिवार्य कर दिया है। कुछ कंपनियां अपने कर्मचारियो के लिए स्टेस मैनेजमेंट की कक्षा लगाती है इन कक्षाओं को लेने वाले योग गुरू ही होते है अगर आप बड़ी कंपनियों मे अपनी सेवाएं दे रहे हैं तो आय ज्यादा होगी। वहीं योग की बढ़ती मांग से विदेशों मे भी काम के काफी अवसर उपलब्ध है। योग के क्षेत्र कॅरियर बनाने वाले अपनी शैक्षणिक योग्यता (डिप्लोमा, स्नातक/ स्नातकोत्तर डिग्री, पीएचडी) के अनुसार एक अच्छे वेतन (10000 रूपये से 1 लाख रूपये प्रतिमाह तक) पैकेज पा सकते है।

योग में कॅरियर बनाने के लिए जरूरी है कि आप एक अच्छे स्पीकर हों साथ ही आप मे एक व्यक्ति से लेकर ग्रुप तक को अपनी बात योग के जरिए समझाने की क्षमता होनी चाहिए। योग शिक्षक बनने से पहले स्वयं भी योग के बारे में विस्तृत जानकारी रखें क्योंकि एक भी गलत आसन या कसरत नई बीमारी को जन्म दे सकती है।

योग शिक्षक बनने का एक फायदा यह भी है कि योग क्लासेस ज्यादातर सुबह या शाम को ही होती है ऐसे में शिक्षक के पास बीच का पूरा दिन (समय) होता है जिसमें वह कुछ नया सीख सकते है या कोई दूसरा काम या बिजनेस या फिर अपना स्वयं का योग स्कूल भी शुरू कर सकते है। जल्द ही देश की प्रतिष्ठित यूनिवर्सिटी जेएनयू में भी योग पर शार्ट टर्म कोर्स शुरू होगा कई बार अस्वीकृत किए जाने के और छात्रों तथा शिक्षकों के एक वर्ग द्धारा आपत्ति उठाए जाने के बाद योग में लघु अवधि के पाठ्यक्रम को शुरू करने के जेएनयू के प्रस्ताव को विष्वविद्यालय की फैसला लेने वाली शीर्ष परिषद ने आखिरकार मंजूरी दे दी।

योग में डिग्री, डिप्लोमा, सर्टिफिकेट कोर्स एवं पार्ट टाईम योग कोर्स करवाने संस्थान-

1. देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्धार (उतराखण्ड)- योग में बीएससी से पीएचडी तक के कोर्स यहां उपलब्ध है। website: www.dsvv.ac.in
2. स्वामी विवेकानन्द योग अनुसंधान बेंगलुरू (कर्नाटक)- नियमित एवं दूरस्थ योग कोर्स। योग में बीएससी, एमएससी और पीएचडी कोर्स यहां उपलब्ध है। website:www.svyasa.org
3. मोरारजी देसाई नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ योग दिल्ली- 3 वर्षीय स्नातक बीएससी योगा सांईस, एक वर्ष का डिप्लोमा और पार्ट टाईम योगा कोर्स किया जा सकता है। website: www.yoga mdniy.nic.in
4. भारतीय विद्या भवन दिल्ली- यहां से 6 माह से 1 वर्ष तक का कोर्स किया जा सकता है। website: www.bvbdelhi.org
5. बिहार योग भारती मुंगेर (बिहार)- यहाँ से 6 माह से 1 वर्ष तक का कोर्स किया जा सकता है। website: www.biharyoga.net/bihar-yoga-bharti/byb-courses
6. ईन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, दिल्ली- website: ignou.ac.in
7. कैवल्यधाम योग इंस्टीट्यूट, पुणे (महाराष्ट्र)- website: kdham.com/college
8. द योग इंस्टीट्यूट, सांताक्रूज मुबंई (महाराष्ट्र)- website: theyogainstitute.org
9. इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ योगिक सांईस एन्ड रिसर्च- website: iiysar.co.in
10. गुरूकुल कांगडी विश्वविद्यालय हरिद्धार उत्तराखंड से योग में डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्स किए जा सकते हैं- website:

www.gkv.ac.in

11. द योग इंस्टीट्यूट सांताक्रूज, मुंबई (सन 1918 में स्थापित इस योग संस्थान से योग की शिक्षा ली जा सकती है)। website: theyogainstitute.org
12. बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल से एमए योग, योग में पीजी डिप्लोमा एवं योगा एंड नैचुरोपैथी में पीजी डिप्लोमा कर सकते है- website: bubhopal.ac.in
13. रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर से योग मे पीजी डिप्लोमा कर सकते है- website: rduniijbpin.org

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सम्पादकीय, समग्र स्वास्थ्य की ओर, योजना, वर्ष: 63, अंक : 06, जून 2019, पृ. क्रं. 05
2. https://literatuse.awgp.org/akhandjyoti/1948/february/v2.7
3. https://www.scotbuzz.org/2018/03/yog.html
4. https://fizikamind.in/ योग के उद्देश्य
5. https://hi.wikipedia.org/wiki/योग
6. https://aajtak.intoday.in/education/story/make-a-career-in-yoga-a-great-opportunity-to-get-here-tedu-1-959464.html
7. बासवरेड्डी ईश्वर वी. : योग-स्वास्थ्य व अरोग्य का सही मार्ग, योंजना, वर्ष : 59, अंक : 06, जून 2015, पृ. क्र. 35
8. https://khabar.ndtv.com/news/career/yoga-as-a-career-1714902
9. https://hindimerijaan.in/career/yoga-me-career-scope/
10. https://kaiseinhindi.com/career-in-yoga/

****

लॉक डाउन और बढ़ती हुई घरेलू हिंसा

डॉ. फरहत मंसूरी*

मुख्य शब्द – समाज, लॉक डाउन, घरेलू हिंसा, निम्न वर्ग, मध्यम वर्ग, उच्च वर्ग, परिवार।

प्रस्तावना – प्रस्तुत शोध पत्र में लॉकडाउन और बढ़ती हुई घरेलू हिंसा का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया है। वर्तमान समय में पूरे विश्व में महामारी का दौर चल रहा है, इस महामारी को आम जनता नोवेल कोरोना वायरस के नाम से जानती है तथा डब्ल्यू.एच.ओ. ने इसमहामारी को कोविड-19 का नाम दिया है। भारत में कोरोना वायरस का पहला मामला केरल में सामने आया और इस बिमारी ने धीरे-धीरे पूरे भारत में भी संक्रमण फैला दिया जिसके कारण संपूर्ण भारत में 22 मार्च 2020 को जनता कर्फ्यू और उसके बाद लॉकडाउन कर दिया गया था। यह लॉकडाउन चार चरणों में किया गया था। इस लॉकडाउन ने समाज को सकारात्मक और नकारात्मक दोनों तरह से प्रभावित किया है। हमने इस शोधपत्र में लॉकडाउन का बढ़ती हुई घरेलु हिंसा पर प्रभाव का एक समाजषास्त्रीय अध्ययन किया है। लॉकडाउन ने जहां एक ओर संपूर्ण परिवार को एक साथ समय व्यतीत करने का अवसर प्रदान किया वहीं पर कुछ परिवारों में कलह, मारपीट देखने को मिली और घरेलू हिंसा के मामलों में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है।

प्रस्तुत शोध पत्र में सबसे पहले घरेलू हिंसा के बारे में बताना चाहूंगी। घरेलू हिंसा एक ऐसा कृत्य है जिसमें किसी भी महिला एवं बच्चे (जो 18 वर्ष से भी कम आयु के बालक एवं बालिका) के साथ मारपीट, गाली गलोच, घुरना, अपमान, घर के किसी हिस्से के प्रयोग पर पाबंदी लगाना, उनके स्वास्थ्य की सुरक्षा न करना, जीवन पर संकट, आर्थिक क्षति, महिला और बच्चे को दुख पहुंचाना, इन सभी को घरेलू हिंसा के दायरें में रखा जाता है। इस शोध पत्र के माध्यम से बताना चाहूंगी कि भारत में घरेलू हिंसा अधिनियम 2005, के अनुसार घरेलू हिंसा में महिलाओं के विरूद्ध, पुरूषों के विरूद्ध घरेलू हिंसा, बच्चों और बुजुर्गों के विरूद्ध हिंसा भी शामिल है। शोधपत्र में लॉकडाउन और बढ़ती हुई घरेलू हिंसा के बारे में बताया गया है।

शोध की अध्ययन पद्धति – प्रस्तुत शोध पत्र में अध्ययन से संबंधित तथ्यों को एकत्र करने के लिए उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पद्धति का उपयोग करते हुए 60 उत्तरदाताओं से संपर्क कर फोन के माध्यम से साक्षात्कार लिया गया एवं साथ ही गूगल फार्म का उपयोग करते हुए तथ्यों को एकत्र किया गया है।

शोध की उपकल्पना – लॉकडाउन के दरमियान महिलाओं में घरेलू हिंसा का प्रभाव बढ़ा है।

शोध के उद्देश्य :

1. घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं की जानकारी प्राप्त करना।
2. लॉकडाउन के दौरान घरेलू हिंसा की जानकारी प्राप्त करना।
3. महिलाओं में घरेलू हिंसा कानून के प्रति जागरूकता की जानकारी प्राप्त करना।

घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं की जानकारी प्राप्त करना –

क्र.	विवरण	हां	नहीं	योग
1	क्या आप घरेलू हिंसा का शिकार हुई है?	80%	20%	100%

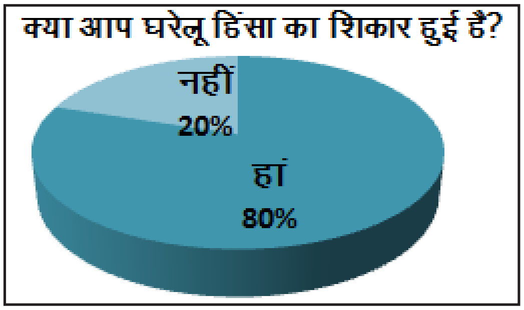

अध्ययन के दौरान फोन के माध्यम से साक्षात्कार लिया गया एवं साथ ही गूगल फॉर्म के माध्यम से जानकारी प्राप्त हुई है कि 80 प्रतिशत महिलायें घरेलू हिंसा का शिकार हुई हैं। अध्ययन के माध्यम से पता चला है कि इस 80 प्रतिशत में पढ़ी-लिखी और नौकरी पेशा महिलायें भी घरेलू हिंसा का सामना कर रही हैं। घरेलू हिंसा की शिकार महिलाओं में निम्न वर्गीय परिवार के साथ साथ उच्च और मध्यम वर्गीय परिवार की महिलायें भी शामिल हैं।

लॉकडाउन के दौरान घरेलू हिंसा की शिकार महिलाओं की जानकारी प्राप्त करना

क्र.	विवरण	हां	नहीं	योग
1	घरेलू हिंसा की शिकार महिलायें	80%	20%	100%
अ.	घरेलू हिंसा की शिकार निम्न वर्गीय महिलायें	40%	60%	100%
ब.	घरेलू हिंसा की शिकार मध्यम वर्गीय महिलायें	25%	75%	100%
स.	घरेलू हिंसा की शिकार उच्च वर्गीय महिलायें	15%	85%	100%
2	केवल लॉकडाउन में घरेलू हिंसा की शिकार महिलायें	70%	30%	100%

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, बिछुआ, जिला छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

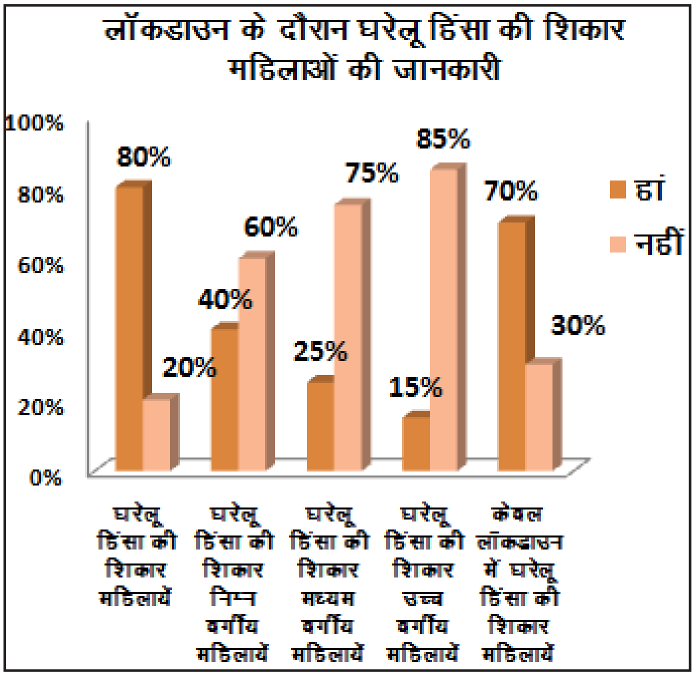

अध्ययन के दौरान जानकारी प्राप्त हुई है कि लॉकडाउन के कारण घरेलू हिंसा के मामलों में तीव्रता से वृद्धि हुई है। 80 प्रतिशत महिलायें घरेलू हिंसा का शिकार हुई है, जिसमें निम्न वर्ग की 40 प्रतिशत महिलायें घरेलू हिंसा का अधिक शिकार हुई है। अध्ययन के माध्यम से पता चला है कि इस हिंसा का कारण परिवार के पुरूषों का पूरे समय घर पर रहना और कोई व्यवसाय न होने की वजह से उत्पन्न हुआ आर्थिक संकट बताया गया है। मध्यम वर्ग की 25 प्रतिशत महिलायें एवं 15 प्रतिशत उच्च वर्ग की महिलायें घरेलू हिंसा का शिकार हुई है तथा केवल लॉकडाउन के कारण 70 प्रतिशत महिलायें घरेलू हिंसा का शिकार हुई है। मध्यम वर्ग की नौकरी पेशा महिलाओं ने साक्षात्कार में बताया कि लॉकडाउन के कारण ऑफिस बंद थे और हम लोग पूरे समय घर पर ही रहने के कारण छोटी छोटी बातों में बहस होने लगी ये बहस बढ़कर गाली गलोच और मारपीट तक पहुंच गई।

महिलाओं में घरेलू हिंसा कानून के प्रति जागरूकता की जानकारी प्राप्त करना

क्र.	विवरण	हां	नहीं	योग
1	क्या आप घरेलू हिंसा कानून के बारे में जानती है ?	90%	10%	100%

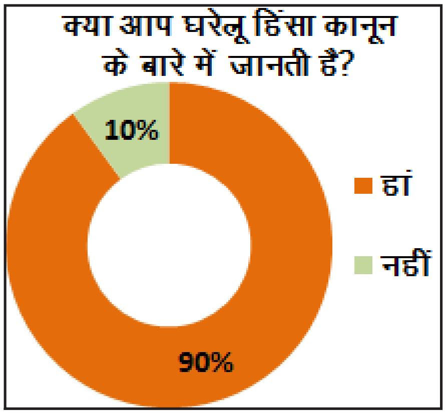

अध्ययन के दौरान जानकारी प्राप्त हुई है कि 90 प्रतिशत महिलायें घरेलू हिंसा कानून के बारे में जानती है। परंतु वे इस कानून का सहारा लेने में डरती है, उसका कारण कठिन कानूनी प्रक्रिया एवं समाज क्या कहेगा, ये सोच है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से जानकारी प्राप्त हुई है कि भारत में कोरोना महामारी की वजह से लगाए गए इस लॉकडाउन के कारण घरेलू हिंसा के मामलों में तीव्रता से वृद्धि हुई है। जहां पर एक तरफ समाज के परिवारों पर लॉकडाउन ने स्वस्थ और सकारात्मक प्रभाव डाला है, वहीं पर हमें घरेलू हिंसा के रूप में लॉकडाउन के नकारात्मक प्रभाव देखने को मिले हैं। हमें समाज को घरेलू हिंसा जैसे अभिशाप से बचाने के लिए समाज, पुरूष और महिलाओं या ये कहें कि अपनी सोच में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अर्चना शर्मा, 'महिलायें एवं मानवाधिकार', रितु पब्लिकेशन, जयपुर
2. अहुजा, राम, 1994, 'सामाजिक समस्यायें', रावत पब्लिकेशन, जयपुर एवं नई दिल्ली
3. अहुजा, राम 1996, 'महिलाओं के विरूद्ध हिंसा', रावत पब्लिकेशन, जयपुर
4. मानचंद, खण्डेला, 2006, 'आधुनिकता और महिला उत्पीड़न' पाइन्टर पब्लिकेशन, जयपुर
5. व्होरा, आशारानी, 'नारी शोषण आइनें एवं आयाम', नेशनल पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली
6. व्होरा, आशारानी, 'भारतीय नारी दषा और अधिकार', नेशनल पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

नई शिक्षा नीति : प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा तथा वर्तमान परिदृश्य में चुनौतियाँ

डॉ. आर.के. अरोरा* डॉ. अंजना पाटनवाला**

प्रस्तावना – हमारे देश में शिक्षा के विभिन्न स्तरों में गुणात्मक सुधार लाने के लिए अनेक आयोगों का गठन किया गया व योजनाओं को क्रियान्वित किया गया, किन्तु बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा की समुचित व्यवस्था करने व इसके विकास की ओर शिक्षाविदों का ध्यान केन्द्रित नहीं हो पाया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में सीखने के परिणामों की वर्तमान स्थिति एवं आवश्यकता के बीच की खाई को पाटने के लिए प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा (ECCE) के लिए गुणवत्तापूर्ण सार्वभौमिक प्रावधान शीघ्र उपलब्ध कराने की बात कही गई है। यह प्रावधान सभी बच्चों को शैक्षिक प्रगति में भाग लेने एवं तरक्की के समान अवसर प्रदान करने का सबसे शक्तिशाली माध्यम हो सकता है, क्योंकि बाल्यावस्था की शिक्षा, शिक्षा के अगले स्तरों के लिए नींव का कार्य करती है। यह बच्चों की शारीरिक, भावात्मक, बौद्धिक, नैतिक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक आवश्यकताओं को संतुष्ट करती है।

वर्तमान निजी विद्यालयों में ECCE शिक्षा के प्रयास किये जाते रहे हैं, किन्तु शासकीय विद्यालयों में ECCE शिक्षा की व्यवस्था नहीं होने से अपेक्षाकृत अधिगम स्तर कम पाया जाता है। परिणामस्वरूप निजी एवं शासकीय विद्यालयों में प्राथमिक स्तर पर विभेद देखा जा सकता है। अत: वर्तमान में यह आवश्यक है कि ECCE स्तर पर शिक्षा एवं शिक्षण का कार्यक्रम प्रभावी हो। यदि बाल्यावस्था की शिक्षा जिसे किंडर गार्टन, माण्टेसरी, पूर्व प्राथमिक शिक्षा, नर्सरी, प्री-बेसिक शिक्षा आदि कई नामों से जाना जाता है, यह समृद्ध एवं रुचिकर हो तो निश्चित ही बालकों के नन्हें कदम घर की देहली लांघकर स्कूल की ओर बढ़ेंगे।

इसी कड़ी में नई शिक्षा नीति 2020, के 5+3+3+4 ढाँचे में 3 वर्ष के बच्चों के लिए प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा (ECCE) की एक मजबूत बुनियाद को शामिल किया गया है जिससे आगे चलकर बच्चों का विकास बेहतर हो, वे बेहतर उपलब्धियाँ हासिल कर सके और खुशहाल हो, किन्तु सामाजिक, आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि के करोड़ों बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा के सार्वभौमिक प्रावधान को वर्ष 2030 से पूर्व उपलब्ध कराना वर्तमान परिदृश्य में चुनौतीपूर्ण होगा।

प्रारंभिक बाल्यावस्था की देखभाल और शिक्षा (ECCE) की अवधारणा – विश्व पटल पर ECCE की चेतना को जन्म देने वाले प्रथम यूरोपियन प्रवर्तक ईसान कमेनियस (1599-1670) के अनुसार- शिक्षा विद्यालय में बालक को दिया जाने वाला प्रशिक्षण मात्र नहीं है, बल्कि वह मनुष्य के समस्त जीवन तथा उसके द्वारा किये जाने वाले सामाजिक समायोजनों को सार्थक ढंग से पूरा करती है। कमेनियस ने पूर्व प्राथमिक शाला को 'माता की गोद' या 'मदर स्कूल' कहा है।

प्रारंभिक बाल्यावस्था की शिक्षा का अर्थ यदि विस्तृत रूप में लिया जाये तो यह शिक्षा औपचारिक विद्यालयीन शिक्षा के पूर्व में ही प्रारम्भ हो जाती है। बालक अपने परिवार में माता-पिता तथा अन्य सदस्यों के सानिध्य में रहकर जो शिक्षा प्राप्त करता है वह प्रारंभिक बाल्यावस्था की शिक्षा (ECCE) के अंतर्गत आती है तथा औपचारिक रूप से ढाई से तीन वर्ष की आयु में विद्यालय से प्रारंभ होती है। इस शिक्षा के अंतर्गत शिशु को स्वस्थ, संस्कारयुक्त एवं परिष्कृत वातावरण में रखकर उसका शारीरिक, मानसिक, नैतिक व सामाजिक विकास करने का प्रयास किया जाता है। सैद्धांतिक ज्ञान देने की अपेक्षा व्यावहारिक ज्ञान देने पर बल दिया जाता है तथा उनमें सामाजिकता की भावना उत्पन्न की जाती है। मात्र ज्ञान देना इसका मुख्य लक्ष्य नहीं है, अपितु खेल-खेल में बालक को उत्तम शिक्षा एवं उचित व्यवहार की जानकारी देना एवं सर्वांगीण विकास हेतु अवसर प्रदान करना ही इस शिक्षा का लक्ष्य है।

प्रारंभिक बाल्यावस्था की शिक्षा की आवश्यकता एवं उद्देश्य – कोठारी आयोग (1964-66) ने प्रारम्भिक बाल्यावस्था की शिक्षा की आवश्यकता पर बल देते हुए बताया कि यह विशेषकर ऐसे बच्चों के शारीरिक, मानसिक एवं भावात्मक विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण है जिनके घर का वातावरण संतोषजनक नहीं है।

शिक्षा शास्त्रियों द्वारा प्रारंभिक बाल्यावस्था शिक्षा के विकास की आवश्यकता निम्न प्रकार बताई गई है –

1. अधिकांश घरों में शिक्षा के वातावरण का अभाव।
2. बालक के शारीरिक विकास की आवश्यकता।
3. बालक की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की देखभाल।
4. संयुक्त परिवार प्रथा के अभाव की पूर्ति।
5. वर्तमान अर्थव्यवस्था एवं स्त्रियों का काम पर जाना।
6. प्रारंभिक बाल्यावस्था की शिक्षा का प्राथमिक शिक्षा पर अच्छा प्रभाव (प्राथमिक शाला हेतु तैयारी)
7. भावात्मक विकास।
8. बौद्धिक विकास।
9. वर्तमान शिक्षा की अवहेलना।

प्रारंभिक बाल्यावस्था की शिक्षा के उद्देश्य – शिक्षा आयोग (1964-66) ने प्रारम्भिक बाल्यावस्था की शिक्षा के निम्न प्रमुख उद्देश्य बताये हैं –

1. बालकों में अच्छी स्वस्थ आदतें विकसित करना, उनकी व्यक्तिगत

* प्राचार्य, रॉयल कॉलेज ऑफ टीचर एजुकेशन, रतलाम (म.प्र.) भारत
** सीनियर टीचर, शासकीय अत्रीदेवी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

जरूरतों के लिए आवश्यक बुनियादी बातों का विकास करना।

2. आवश्यक सामाजिक व्यवहार, भावात्मक परिपक्वता का विकास करना।
3. वातावरण के सम्बन्ध में बच्चों की बोद्धिक जिज्ञासा को उत्तोजित करना।
4. अपने विचारों और भावनाओं को शुद्ध, स्पष्ट एवं धाराप्रवाह भाषा में प्रकट करने की योग्यता का विकास करना।

प्रारंभिक बाल्यावस्था की देखभाल एवं शिक्षा की वर्तमान व्यवस्था – राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में शिशु देखभाल तथा शिक्षा (Child Care and Education) को बहुत अधिक महत्व दिया गया है। इसमें इसे मानव संसाधन विकास की नीति का एक महत्वपूर्ण निवेश तथा प्रारंभिक शिक्षा को सर्वव्यापी बनाने में सहायक कार्यक्रम के रूप में लिया गया है।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय के महिला एवं बाल विकास विभाग द्वारा चलाया जा रहा समेकित बाल विकास सेवा कार्यक्रम (Integrated Child Development Services- ICDS) देश का सबसे बड़ा तथा बहुआयामी कार्यक्रम है जो 2 अक्टूबर, 1975 को राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के 106 वें जन्मदिन पर शुरू किया गया। इस कार्यक्रम के अंतर्गत आँगनवाड़ी बच्चों एवं माताओं को समेकित सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए एक मुख्य केंद्र है।

आँगनवाड़ी केन्द्रों में शाला त्याग की दर को कम करने तथा छात्रों को विद्यालय में टिके रहने में सहायता देने के लिए 'शिशु शिक्षा योजना (Early Childhood Education Scheme)' शुरू की गई। संशोधित राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1992 में 'सभी के लिए शिक्षा' के लक्ष्य हेतु बाल्यावस्था की शिक्षा को ICDS से सम्बद्ध कर दिया गया तथा स्थानीय स्तर पर अधिकाधिक नामांकन में वृद्धि तथा प्राथमिक शिक्षा का सहायक क्षेत्र तैयार करने का लक्ष्य रखा गया। इन आँगनवाड़ी केन्द्रों में अनौपचारिक रूप से पूर्व प्राथमिक शिक्षा दी जाती है।

इन आँगनवाड़ी केन्द्रों में प्राथमिक बाल्यावस्था की शिक्षा हेतु आधारभूत पाठ्यचर्या, शिक्षण अधिगम प्रक्रिया एवं मूल्यांकन प्रणाली की कोई व्यवस्था नहीं है।

नई शिक्षा नीति 2020– प्रारंभिक बाल्यावस्था की देखभाल एवं शिक्षा हेतु प्रावधान – नई शिक्षा नीति इस सिद्धांत पर आधारित है कि शिक्षा से न केवल साक्षरता और संख्या ज्ञान जैसी बुनियादी क्षमताओं के साथ–साथ उच्चतर स्तर की तार्किक और समस्या समाधान संबंधी संज्ञानात्मक क्षमताओं का विकास होना चाहिए बल्कि नैतिक, सामाजिक–भावात्मक स्तर पर भी व्यक्ति का विकास होना चाहिए। सीखने के परिणामों की वर्तमान स्थिति और जो आवश्यक है उनके बीच की खाई को प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और उच्चतर शिक्षा के माध्यम से शिक्षा में उच्चतम गुणवत्ता, इक्विटी और सिस्टम में अखंडता लाने वाले प्रमुख सुधारों के जरिये पाटा जाना चाहिए।

नई शिक्षा नीति 2020 में प्रारंभिक बाल्यावस्था की देखभाल एवं शिक्षा हेतु निम्न प्रावधान किए गए है –

1. वर्तमान की 10+2 स्कूली व्यवस्था को 3 से 18 वर्ष के सभी बच्चों के लिए 5+3+3+4 की एक नई व्यवस्था में पुनर्गठित करना प्रस्तावित है, इसमें प्राथमिक शिक्षा में पूर्व प्राथमिक शिक्षा के समावेश की बात कही गई है।
2. नए 5+3+3+4 ढाँचे में 3 वर्ष के बच्चों को शामिल कर प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ECCE) की एक मजबूत बुनियाद को शामिल किया गया है, जिससे आगे चलकर बच्चों का विकास बेहतर हो।
3. प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के सार्वभौमिक प्रावधान को वर्ष 2030 से पूर्व उपलब्ध कराया जाये ताकि पहली कक्षा में प्रवेश पाने वाले सभी बच्चे स्कूली शिक्षा के लिए पूरी तरह तैयार हो।
4. एउउए का समग्र उद्देश्य बच्चों का शारीरिक–भौतिक विकास, संज्ञानात्मक विकास, समाज–संवेगात्मक नैतिक विकास, सांस्कृतिक विकास, संवाद के लिए प्रारंभिक भाषा, साक्षरता और संख्यात्मक ज्ञान के विकास हेतु – लचीली, बहुआयामी, बहु–स्तरीय, खेल आधारित, गतिविधि आधारित और खोज आधारित शिक्षा को ECCE में शामिल किया गया है।
5. राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय नवाचार, नवीनतम शोध एवं स्थानीय परम्पराओं को शामिल करते हुए NCERT द्वारा 8 वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों के लिए प्रारंभिक बाल्यावस्था की शिक्षा के लिए उत्कृष्ट पाठ्यक्रम एवं शैक्षिक ढाँचा दो भागों में– 0–3 वर्ष के बच्चों के लिए एक सब–फ्रेमवर्क और 3–8 साल के लिए एक अन्य सब–फ्रेमवर्क का विकास किया जाएगा।
6. पूरे देश में विशेषकर सामाजिक–आर्थिक पिछड़े क्षेत्रों में चरणबद्ध तरीके से उच्चतर गुणवत्ता वाले ECCE संस्थानों की सार्वभौमिक पहुँच सुनुश्चित करना– इसके लिए आँगनवाड़ी केन्द्रों, प्राथमिक विद्यालयों के साथ स्थित आँगनवाड़ी केन्द्रों, प्राथमिक विद्यालयों से संलग्न पूर्व प्राथमिक विद्यालयों, अकेले चल रहे प्री–स्कूल के माध्यम से इसे लागू किया जाएगा।
7. आँगनवाड़ी केन्द्रों से प्राथमिक स्कूलों में संक्रमण (Transition) को सुचारू बनाने के लिए इन्हें उच्चतर गुणवत्ता के बुनियादी ढाँचे, खेल उपकरण, प्रशिक्षित कार्यकर्ता/शिक्षकों के साथ सशक्त बनाया जाएगा साथ ही स्वास्थ्य के विकास की निगरानी और जाँच परीक्षण ECCE कक्षाओं के छात्रों को भी उपलब्ध कराया जा सके।
8. ECCE शिक्षकों के शुरूआती कैडर को तैयार करने के लिए आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं/शिक्षकों को NCERT द्वारा विकसित पाठ्यक्रम/शिक्षण शास्त्रीय फ्रेमवर्क के अनुसार ECCE में 6 महीने का प्रमाणपत्र एवं एक वर्ष का डिप्लोमा कार्यक्रम द्वारा प्रशिक्षण दिया जाएगा।
9. आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं/शिक्षकों के ECCE प्रशिक्षण को शिक्षा विभाग के क्लस्टर रिसोर्स सेंटर द्वारा मेंटर किया जाएगा। ECCE को आदिवासी बहुल क्षेत्रों की आश्रमशालाओं में भी शुरू किया जाएगा।
10. प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा पाठ्यक्रम की आयोजना और क्रियान्वयन मानव संसाधन मंत्रालय, महिला और बाल विकास विभाग, स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय और जनजातीय कार्य मंत्रालय द्वारा संयुक्त रूप से किया जाएगा तथा एक विशेष संयुक्त कार्यक्रम (Task Force) का गठन किया जाएगा।

वर्तमान परिदृश्य में चुनौतियाँ :

1. अभी तक हम 6 से 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा के शत–प्रतिशत लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाए हैं। ऐसे में वर्ष 2030 तक ECCE लागू कर पाना चुनौतीपूर्ण होगा।
2. ASER रिपोर्ट के अनुसार देश भर में विशेष रूप से आर्थिक एवं

सामाजिक रूप से पिछड़े क्षेत्रों में प्राथमिक कक्षाओं में शत-प्रतिशत नामांकन का लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सका है, ऐसे में ECCE कक्षाओं में नामांकन का लक्ष्य शत-प्रतिशत प्राप्त करना जमीनी स्तर पर दुष्कर है।

3. ICDS अंतर्गत संचालित आँगनवाड़ी केन्द्रों का प्रमुख उद्देश्य 0 से 6 वर्ष तक के बालकों के स्वास्थ्य की देखरेख, पोषाहार एवं टीकाकरण की व्यवस्था करना है। ECCE की व्यवस्था करना इनकी स्थापना का उद्देश्य नहीं है। ऐसे में आँगनवाड़ी केन्द्रों द्वारा बहुविविधा कार्यक्रमों में समन्वय स्थापित कर पाना कठिन है।
4. पूर्व से स्थापित आंगनवाडी केन्द्र, प्राथमिक विद्यालयों से सम्बद्ध पूर्व प्राथमिक शालाएँ कमजोर अधोसंरचना के साथ रुग्णावस्था में है। ऐसे में इन पर ECCE की जवाबदेही थोप देना, इन्हें कृशकाय कर देगा।
5. प्रारंभिक शिक्षा की सार्वभौमिक पहुँच सुनिश्चित करने के लक्ष्य को हम अभी तक प्राप्त नहीं कर सके हैं। तब ECCE के सार्वभौमिक पहुँच के लक्ष्य की बात करना वास्तविकता से परे है।
6. शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 में निहित प्रावधानों के अनुसार शिक्षक-छात्र अनुपात (1:30), गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, शत-प्रतिशत प्रशिक्षित शिक्षकों की उपलब्धता, शत-प्रतिशत नामांकन एवं ठहराव आदि लक्ष्य कोसों दूर हैं। प्राथमिक शिक्षा के साथ ECCE को जोड़ने से उपलब्ध संसाधानों एवं अधोसंरचना पर अनावश्यक बोझ बढ़ेगा परिणामस्वरूप अन्य लक्ष्य भी प्रभावित होंगे।
7. ECCE स्तर पर बहुआयामी एवं बहुस्तरीय शिक्षा जिसमें इण्डोर-आउटडोर खेल, चित्रकला, संगीत, नाटक, शिल्प, व्यवहार कौशल, खोज आधारित आदि बहुआयामी एवं बहुस्तरीय शिक्षा प्रदान करने हेतु शैक्षणिक अमले की व्यवस्था करना आसन लक्ष्य नहीं है।
8. हमारे देश में गरीबी एवं चिकित्सा संसाधनों के अभाव में लाखों बच्चों की 0 से 3 वर्ष की आयु में ही असमय मृत्यु हो जाती है। इस स्तर पर जीवन जीने के लिए आवश्यकता सुविधाओं को सुनिश्चित किए बिना ECCE शिक्षा को लागू करना व्यावहारिक रूप से तर्क संगत प्रतीत नहीं होता।

निष्कर्ष – वर्तमान में निजी विद्यालयों में प्रारंभिक बाल्यावस्था की देखभाल एवं शिक्षा (ECCE) शिक्षा के प्रयास किये जाते रहे हैं, किन्तु शासकीय विद्यालयों में ECCE शिक्षा की व्यवस्था नहीं होने से अपेक्षाकृत अधिगम स्तर कम पाया जाता है तथा बाल्यावस्था के सीखने के सर्वोत्तम वर्ष (मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से) बिना किसी मार्गदर्शन के व्यर्थ गुजार देते हैं।

नई शिक्षा नीति 2020 के 5+3+3+4 ढाँचे में 3 वर्ष के बच्चों के लिए प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा (ECCE) की एक मजबूत बुनियाद को शामिल किया गया है, जिससे आगे चलकर बच्चों का विकास बेहतर हो, वे बेहतर उपलब्धियाँ हासिल कर सके और खुशहाल हो, किन्तु सामाजिक, आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि के करोड़ों बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ECCE) के सार्वभौमिक प्रावधान को वर्ष 2030 से पूर्व उपलब्ध कराना वर्तमान परिदृश्य में चुनौतीपूर्ण तो होगा, किन्तु यह कदापि असंभव नहीं है। आवश्यकता है कि सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हुए चुनौतियों का सटीक आकलन कर उन्हें दूर करने का हर संभव प्रयास स्थानीय स्तर पर किया जाये, जिससे मानवीय एवं भौतिक संसाधानों का दोहन एवं प्रबंधान प्रणाली विकसित कर भविष्य के भारत की मजबूत नींव रखी जा सकती है एवं नई शिक्षा नीति 2020 में वर्णित प्रस्तावों को धारातल पर उतारकर अमलीजामा पहनाया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भावे, कमला (1983) : पूर्व प्राथमिक शिक्षण सिद्धांत एवं कार्यप्रणाली, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
2. श्रीवास्तव के.एम. (2005) : शैशवकालीन शिक्षा सिद्धांत, स्वरूप एवं शिक्षण, युवराज आफसेट, रीवा।
3. शाला पूर्व शिक्षा सन्दर्शिका – शिशु शिक्षा एवं देखभाल केन्द्र तथा आँगनवाड़ी केन्द्रों के लिए (2006) : राज्य शिक्षा केन्द्र, म.प्र. शासन भोपाल।
4. आँगनवाड़ी कार्यकर्ताओं के लिए हैंडबुक (2006) : राष्ट्रीय जनसहयोग एवं बाल विकास संस्थान।
5. जागृति आँगनवाड़ी कार्यकर्ता मार्गदर्शिका (भाग-4) : महिला एवं बाल विकास विभाग, म.प्र. शासन भोपाल।
6. सामर्थ्य (2010) : प्रशिक्षण सन्दर्शिका, राज्य शिक्षा केन्द्र, म.प्र. शासन, भोपाल।
7. https://itpd.ncert.gov.in
8. www.teachersofindia.org

****

'हो' भाषा लोक जीवन में साहित्य का अध्ययन

सेवित देवगम*

प्रस्तावना – भारत देश बहु भाषा, बहु धर्म एवं बहु संस्कृति का देश है। इसलिए लोक भाषा लोक धर्म, लोक संस्कृति एवं लोक जीवन की विशिष्टता है। 'हो' लोक जीवन में हो लोक साहित्य का बहुत व्यापक महत्व है। लोक साहित्य से ही शिष्ट साहित्य का सृजन होता है। 'हो' भाषा लोक साहित्य का अध्ययन सर्वप्रथम विदेशी विद्धनों ने आरंभ किया था। 'हो' लिखित साहित्य का आरंभ ले. कर्नल एस. आर. टिकेल ने सन् 1840 ई. में की। उन्होंने '**ग्रामेटिकल कन्सट्रशन ऑफ हो लैंग्वेज' शीर्षक लेख 'जर्नल ऑफ द एसियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल'** में छपवाया। रेव.ए. नोट्रोट ने 'ग्रामर ऑफ दे कोल लैंग्वेज' नामक पुस्तक 1905 ई. में जी.ई. एल. मिशन प्रेस, राँची से प्रकाशित करवाया। इसमें 'हो' शब्दावलियों का उल्लेख किया गया है। अंग्रेजी में ही 'हो' ग्रामर की रचना भमि राम सोलंकी ने लियोनेल बरो से पूर्व की। सन् 1915 ई. में लियोनेल बरो ने अंग्रेजी भाषा में 'हो ग्रामर' (विथ वोकाब्युलरी) की पुस्तक लिखी जिसमें व्याकरण के साथ-साथ लगभग 4000 शब्दों की शब्दावाली को प्रस्तुत किया गया। इसके कुल 24 अध्याय एवं 194 पृष्ट है। 'हो' भाषा मुण्डा भाषा परिवार का उपशाखा है। मुण्डा भाषा समूह के संदर्भ में भाषा वैज्ञानिक डॉ. दिनेश्वर प्रसाद के विचार से इस भाषा की पहचान सर्वप्रथम यपेंटस्टिमट ने की थी। उन्होंने 1906 ई. में ऑस्ट्रिक भाषा परिवार शब्द का पहली बार प्रयोग किया। सर्वप्रथम 1854 ई. में 'मैक्समूलर' ने द्रविड भाषाओं से अलग कर मुण्डा भाषाओं का एक प्रथम वर्ग की भाषा के रूप में मान्यता प्रदान की थी। झारखण्ड में बोली जाने वाली ऑस्ट्रिक भाषा परिवार की 'हो' भाषा अपने भाषा-संस्कृति और साहित्यिक महत्व के कारण अपना एक अगल पहचान है। 'हो' भाषा की अपनी स्वतंत्र भाषा और **बारङ्-चिति** लिपि है। 'हो' भाषा कोल्हन क्षेत्र के हो जनजाति समुदाय की मातृभाषा है। कोल्हान क्षेत्र 'हो' जनजातियों की धनी आबादी वाली जिला पश्चिम सिंहभूम है। 'हो' जनजाति के लोग भारत के एक आस्ट्रिक भाषा परिवार के एक समूह है। 'हो' जनजाति कोल्हान के झारखण्ड राज्य में केद्रित है 2011 की कुल अनुसूचित जनजाति की आबादी का लगभग 10.7 प्रतिशत हैं। 2001 में राज्य में लगभग 700,000 की आबाढी के साथ, संताली, उराँव, मुण्डा के बाद 'हो' जनजाति झारखण्ड में चौथा सबसे अधिक जनसंख्या वाली जनजाति है।

लोक साहित्य -लोक साहित्य का शाब्दिक अर्थ -'ग्राम के लोगो का ज्ञान'। लोक साहित्य का दूसरा अर्थ - 'लौकिक दंत कथा' का भी प्रयोग हुआ है। लोक साहित्य प्रायः अलिखित है। श्रुति रूप में गीत, कहानी, कथा, गाथा, संगीत आदि युगों से हो लोक जीवन में विद्यमान है। इसलिए प्रकृति के प्रत्येक ऋतु में, पर्व-त्यौहार में अपनी भावनाओं को अभिव्यक्ति करती है। 'हो' भाषा साहित्य, लोक साहित्य के रूप में ही विकास हुआ था। लोक साहित्य में 'हो' भाषा बहुत समृद्ध था। हो लोक साहित्य, लोक गीत, लोक कथा के भाषा की प्राचीनता का भी अभाव है। 'हो' भाषा में मधुर मात्र में शुद्ध भण्डार है लेकिन इसका बहुत कम लिखबद्ध हुआ है। लिखित साहित्य के रूप में लाने का ईसाई मिशनरियों का दिया निर्देशन सबसे महत्वपूर्ण रहा है क्योंकि साहित्य सृजन के क्षेत्र में हम उन विदेशी विद्धानों एवं ईसाई मिशनरियों द्वारा लिखित साहित्य रचना की आधार मानकर हम अपना साहित्य रचना करते है। इससे पूर्व किसी भी जनजातीय समुदाय की साहित्य रचना प्राप्त नहीं होता है। इस कारण से हम अपनी भाषा साहित्य रचना अवलोकन करने के लिए कठिन होते है। उनकी साहित्य रचना से ही सभी जनजातीय भाषा समुदाय के साहित्य रचना का प्रेरणा मिली है। हो भाषा साहित्य एवं संस्कृति की परम्परा को जाने समझने की प्रेरित हुई।

कलान्तर में 'हो' भाषा साहित्य रूप संग्रह किया है पूर्व में हो भाषा साहित्य का महत्व गाँव देहात, पर्व त्यौहार और खेत खलिहान तक ही सीमित था। अब इसका क्षेत्र विस्तार हुआ है। शिक्षा के क्षेत्र में, आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक अस्मिता की रक्षा के क्षेत्र में 'हो' भाषा साहित्य धीरे-धीरे विकास की ओर बढ़ रहा है।

हो भाषा साहित्य का लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य रूप में विकास 19 वीं सदी के आसपास से लेखन कार्य प्रारंभ हुआ। लिखित साहित्य के रूप में 'हो' साहित्य विभिन्न पक्षों पर साहित्य रचना हुआ है। और प्रकाशित भी हो रहा हैं। सर्वप्रथम हो साहित्य रोमन लिपि में साहित्य रचना हुआ है। जो 'हो' व्यकारण साहित्य में प्राप्त होता है। 'हो' लिखित साहित्य का आरंभ ले. कर्नल एस. आर. टिकेल ने सन् 1840 में की। उन्होंने 'ग्रामेटिकल कन्सट्रशन ऑफ हो लैंग्वेज' शीर्षक लेख 'जर्नल ऑफ द एसियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल' में छपवाया लेकिन हो साहित्य के कुछ साहित्य विद्या पर ना के बराबर साहित्य रचना हैं। जिसमें निबंध उपन्यास आत्मकथा नाटक, यात्रावृत्र जीवनी साहित्य इन विद्या पर स्वतंत्र साहित्य के रूप है।

'हो' भाषा को भारतीय संविधान के आठवीं अनुसूची में शामिल होने, लिपि को सरकार मान्यता दिलाने के लिए प्रयास कर रहा है इस कार्य को सफल बनाने के लिए 'हो' भाषी समुदाय के लोग निरन्तर प्रयासरत है। इस संबंध में कई आन्दोलन भी किया जा चुका है। 'हो' भाषा का प्रथम भाषाई सम्मेलन जुन 1983 ई. को भूवनेश्वर उड़िसा में आयोजित हुआ था। इस भाषा आन्दोलन में कई विभिन्न हो समुदाय संगठन एवं संस्थाएँ शामिल हुआ था। किसी भी भाषा साहित्य विकास एवं संरक्षण की बात करे तो साहित्यकार के साथ-साथ संरचना और पत्र-पत्रिकाओं को प्रमुखता देते है। उनमें कई गैर सरकारी संस्थाएँ शामिल होते हैं। 'हो' भाषा साहित्य विकास में कई संस्थाएँ अपना महत्वपूर्ण योगदान रहा है। जो लगातार भाषा साहित्य

* शोधार्थी (जनजातीय एवं क्षेत्रीय भाषा विभाग) राँची विश्वविद्यालय, राँची (झारखण्ड) भारत

विकास की गति प्रदान कर रहे हैं।

हो भाषा साहित्य के मामले में 'हो' साहित्य भाषा साहित्य विकास के क्षेत्र में बहुत कम लोगों का योगदान रहा है। क्योंकि हो भाषा साहित्य रचना कार्य में गिनती बार लोग साहित्य रचना निस्वार्थ भाव से अपना योगदान दे रहे है। 'हो' क्षेत्र में हो भाषा साहित्य का विशेष महत्व है। 'हो' भाषी के विद्यार्थी स्कूल, कॉलेजों में लगातार से वृद्धि हो रही है। सरकारी मान्यता एवं साहित्यकारों की कमी के करण 'हो' भाषा इतना महत्व होने के बावजूद अब तक हो भाषा साहित्यकारों का बहुत कम सृजित हुआ है। हो भाषा प्राचीन काल से समृद्ध रहा है लेकिन साहित्य रचना के क्षेत्र में सही दिशा निर्देशन के अभाव में साहित्य रचना नहीं हो पा रहा है।

डॉ. नागेश्वर सिन्हा के अनुसार ईसाई मिशनरियों के बेहतरीन प्रयास से ही 'हो' साहित्य प्रकाश में आया जो पूर्व में पूर्णत: अलिखित था। **डॉ. नोन्तरोत साहब** ने सर्वप्रथम हो भाषा में 1870 ई. में यदि कोल्ह प्रइमर और दि कोल्ह टाइमन नाम पुस्तक का प्रकाशन कराया। ईसाई मिशनरियों के द्वारा हो भाषा में विदेशी विद्धानों के निर्देशन का कार्य गैर ईसाई मिशनरियों के द्वारा ही सम्पन्न किया गया । इस प्रकार 'हो' भाषा साहित्य का महत्व सर्वप्रथम ईसाई विद्धानों का ध्यान गया है और उस पर शोध कार्य के लिए गाँव-गाँव जा कर शोध कार्य किया। ईसाई समुदाय के विदेशी नागरिक फादर देनी 'हो' क्षेत्र में रहा कर सर्वप्रथम 'हो' भाषा सीखा फिर उस पर साहित्य लेखन शुरू किया। हो भाषा सीखने के क्रम में बहुत सा 'हो' मतों का शब्द को संग्रह किया। बाद में हो व्याकरण लिखना का अच्छा प्रयास किया उनकी द्वारा रचित हो व्याकरण पुस्तक **-'हो इंगिलश डिक्शनरी, हो ग्रामर एण्ड वोकाव्युलरी, और हो अंग्रेजी शब्दकोश'** आदि। ईसाई मिशनरियों द्वारा हो भाषा साहित्य रचना अधिक संख्या में नहीं है लेकिन हो भाषा साहित्य सृजन में ईसाई मिशनरियों का बहुत बड़ा योगदना रहा है। उस के द्वारा लिखा गया 'हो' भाषा साहित्य अध्ययन में विदेशी विद्धानों का साहित्यक कृत्तियों को शामिल नहीं किया जाने के कारण से 'हो' भाषा साहित्य का अध्ययन अधुरा रहा जाएगा। विदेशी विद्धानों जनजातियों भाषा सीखने के क्रम में उन्होंने 'हो' लोक साहित्य का संकलन और प्रकाशन भी किया। उनके द्वारा प्रकाशित पुस्तको को 'हो' साहित्यों एवं भारतीय साहित्य का अध्ययन किया। इस कारण बहुत से 'हो' साहित्यकार एवं भारतीय साहित्यकार 'हो' भाषा साहित्य लेखन में साहित्य समृद्ध में विदेशी साहित्यकार के साथ योगदान देकर 'हो' साहित्य आज प्रगित पथ पर आगे बढ़ रहा है। 'हो' साहित्य में कई पीएच.डी, डी.लिट शोध साहित्य शामिल हैं। इन शोध साहित्य के माध्य से 'हो' साहित्य लेखन कार्य लगे हो विद्धान द्वारा लिखित साहित्य ज्ञान और अज्ञान रूप में या पांन्डुलिपि रूप में उपलब्ध साहित्य समृद्ध में प्रकाशित अप्रकाशिक साहित्य रचना को संग्रह और संरक्षण कर अति आवश्वयक कार्य रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हो भाषा और साहित्य का इतिहास (डॉ. आदित्य प्रसाद सिन्हा)
2. झारखण्ड की रूप रेखा (डॉ. राम कुमार तुलनात्मक)
3. विवेचना (डॉ. जिंदर सिंह मुण्डा)
4. झारखण्ड की भाषाएँ विकास और अनुप्रयोग (अभिषेक अवतेस)
5. हो भाषा के साहित्यकार (डॉ. दमयन्ती सिकु)
6. ईसाई मिशनरियों का जनजातीय साहित्य (डॉ. नागेश्वर सिंह)
7. आदिवासी शोध पत्रिका संत जेवियर्स कॉलेज, ट्राइबल रिसर्च सेन्टर रांची)
8. हो भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन (डॉ. सरस्वती गागराई)

****

भारतीय समकालीन कला में न्यू मीडिया आर्ट

सूरज सोनी* डॉ. सुरेश शर्मा **

शोध सारांश – संचार के साधनों के विकास ने विश्व को एक सूत्र में बांध दिया, जिससे कला व संस्कृतियों का तीव्र गति से आदान-प्रदान होने लगा। फलस्वरूप भारतीय कला जगत भी न्यू मीडिया आर्ट के प्रभाव से अछूता नहीं रहा। भारतीय कला परिदृश्य में न्यू मीडिया आर्ट की शुरुआत नब्बे के दशक से मानी जाती हैं, किन्तु इसके पूर्व भी हमें कुछ वैकल्पिक और इंटरमीडिया कला के उदाहरण देखने को मिलते है। अस्सी व नब्बे के दशक में कम्प्यूटर का प्रभाव बढ़ा व डिजीटल कैमरा भी आ गया। कम्प्यूटर के द्वारा सम्पादन सरल हो गया तथा वीडियो आर्ट आदि में भी हाथ आजमाया जाने लगा। भारत में न्यू मीडिया आर्ट के प्रारम्भिक दौर में इंस्टॉलेशन आर्ट पर अधिक कार्य हुआ, फिर विडियो इंस्टॉलेशन और नये-नये तकनीकी प्रयोग होने लगे, किन्तु आज भी यह लोकप्रिय होने के साथ विवादास्पद विषय भी बना रहा हैं।
शब्द कुंजी – न्यू मीडिया आर्ट, इंटरमीडिया कला, वैकल्पिक मीडिया, अंत: विषयक कला, इंटरडिसिप्लिनरी आर्ट, भारतीय समकालीन कला।

प्रस्तावना – कला और मनुष्य का हमेशा से घनिष्ठ सम्बंध रहा है तथा कला सदैव मनुष्य के भावों की अभिव्यंजना का प्रथम व प्रभावी साधन रही है, चाहे वह कोई भी समय-काल, देश या सभ्यता हो। कोई भी कला अपने उस समय-काल का प्रतिबिम्ब होती है तथा उस समय से जुड़ी राजनैतिक, सामाजिक तथा दार्शनिक परिस्थितियों को प्रस्तुत करती है। कला की सृजनात्मकता भी अपने अतीत, वर्तमान तथा समकालीन परिघटनाओं का संयोग होती है, जिसमें विकास व प्रगति का तत्व अनिवार्यत: समाहित रहता है। कला के निरन्तर प्रवाह में परम्पराओं का नवीनीकरण आवश्यक गुण रहा है, क्योकि यह नवीनीकरण ही कला को मृतप्राय होने से बचाता है। जहाँ यह प्रक्रिया रुक जाती है, रूढिगत होने लगती है, वही समसामयिक सौन्दर्य क्षीण होने लगता है। निरन्तर बदलते समय, परिस्थियों और विकासशीलता के साथ कला ने भी सदैव अपने लालित्य गुणों को प्रकट किया है। अपने समय की गलियों, खिड़कियों, झरोखों से निकलते हुए कला ने नवीन परिवर्तन और परिवर्धन के साथ स्वयं को प्रस्तुत किया है। यह परिवर्तन दार्शनिक या वैचारिक रुप से, कभी माध्यम में, कभी तकनीकी रुप से, कभी सामाजिक स्तर पर या कभी कला के प्रभाव में हुए। किन्तु हर परिवर्तन के साथ भी कला में निरन्तरता, गतिशीलता बनी हुई है और भविष्य में भी अनन्त सम्भावनाओं को अपने भीतर समेटे हुए है। समय के साथ-साथ कला का स्वरूप आज बहुत तेजी से बदल रहा है। आज कला मात्र अनुरंजन, आनन्द या सौन्दर्य प्राप्ति का साधन मात्र नही रह गई है, अपितु आज की कला अपनी परिभाषा तथा सोच बदल रही है। कलाकार पुराने प्रतीकों, संयोजनो, आकारों तथा प्रतिमानों से आगे बढ़कर कुछ नया देखने व करने की इच्छा रखता है। आज की कला में गम्भीर रहस्य-दर्शन के साथ-साथ, आस-पास की जिन्दगी जुड़ी हुई है। इसलिए कलाकार समसामयिक कला में अपने तथा अपने आस-पास की जिन्दगी से जुड़ी घटनाओं, समस्याओं, मुद्दो, सम्भावनाओं, चुनौतियों, आकारों, रंगों और वातावरण में भी नयापन देखना चाहता है।

न्यू मीडिया आर्ट का परिचय – न्यू मीडिया आर्ट परम्परागत कलात्मक माध्यमों के अतिरिक्त नवीन प्रौद्योगिकियों का माध्यम के रूप में उपयोग कर निर्मित कलाकृतियों को संदर्भित करती है, जिसमें ध्वनि, प्रकाश, प्रदर्शन, कम्प्यूटर ग्राफिक्स, एनिमेशन, एल.ई.डी., प्रिन्टर, इन्टरनेट, प्रोजेक्शन, वीडियो, रोबोटिक्स, 3-डी प्रिन्टिग, बायोटेक्नोलॉजी, रोबोटिक्स तथा यांत्रिक उपकरण आदि के माध्यम से कलात्मक अभिव्यक्ति की जाती है। इसके अतिरिक्त रोजमर्रा की कोई भी वस्तु नये वातावरण, नये विचार, नये भावों व टेक्नोलॉजी के साथ प्रदर्शित की जाती है तो वह माध्यम अपना मूलरूप तथा भाव त्यागकर चाक्षुष अभिव्यक्ति सम्प्रेषण का नवीन माध्यम बन जाता है। न्यू मीडिया के प्रसंगों में अक्सर दूरसंचार, जनसंचार माध्यम और डिजिटल इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से प्रसारित कलाकृतियों को शामिल किया जाता है, जिसमें वैचारिक से लेकर आभासी कला, प्रदर्शन से लेकर संस्थापन तक शामिल होते हैं। टेलीविजन, कैमरा, कम्प्यूटर, इन्टरनेट व डिजीटल तकनीकों के आविष्कार ने आधुनिक कला के मायनों को क्रान्तिकारी तरीके से बदल दिया और यहीं से कला में न्यू मीडिया कला का आगाज हुआ।

भारतीय समकालीन कला और न्यू मीडिया आर्ट – भारत में न्यू मीडिया के इतिहास को पश्चिमी देशों में स्थापित न्यू मीडिया इतिहास से तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो विचारों का काफी अंतराल देखने को मिलता है। भारत की वैचारिक स्थितियां, ऐतिहासिक धारणाएं, सांस्कृतिक मूल्य और तकनीकी परीस्थितियां काफी भिन्न रही है। न्यू मीडिया आर्ट का इतिहास किसी भी देश के तकनीकी विकास की संरचना व संचार प्रौद्योगिकी पर निर्भर रहा है। इसलिए जब पाश्चात्य कला परिवेश में 1960 में 1970 के दशक में वीडियो कला का प्रदर्शन हो रहा था तब भारतीय कलाकार इस परंपरा से काफी दूर थे, क्योंकि हम तकनीकी रूप से उतने उन्नत व सक्षम नहीं हो पाए थे। अस्सी के दशक में भारत वीडियो के आगमन ने इसे वीडियो कला के रूप में इस्तेमाल करने का अवसर दिया। भारतीय कलाकार जो पहले से ही पाश्चात्य देशों की आवां-गार्द कला शैलियों से परिचित हो चुके थे। उन्होंने इस समय को और मौजूदा बदलती परिस्थितियों को एक अवसर के रूप में देखा। कुछ समकालीन कलाकारों ने इस प्रौद्योगिकी के विकास में कला की बढ़ती संभावनाओं को तलाशना

* शोधार्थी, दृश्य कला विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** सेवानिवृत प्रोफेसर, दृश्य कला विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

शुरू किया और तकनीक को एक नए विकल्प के रूप में स्वीकार किया।

भारतीय समकालीन कला परिवेश में 1990 के दशक से इंटरमीडिया की शुरुआत को माना जाता है, किंतु 1960 के दशक के धुंधले इतिहास में देखें तो पता चलता है कि कृष्ण खन्ना ने फोटोग्राफी और प्रोजेक्टेड इमेज के द्वारा वैकल्पिक मीडिया के रूप में कुछ रोचक प्रयोग किए थे। अपने स्टूडियो में दक्षिणी पूर्वी एशिया और जापान की यात्राओं में एकत्र स्लाइड्स को प्रोजेक्ट करते समय वाइड एंगल के कारण कौवों की एक छवि उनके स्टूडियो में चारों ओर फैल गई, जो अप्रत्याशित दृश्य था। कृष्ण खन्ना का तात्कालिक विचार यह था कि वे इसको पेंटिंग में रूपांतरित करेंगे, लेकिन उस समय दृश्य की सार्थकता और सामर्थ्य को देखते हुए उन्होंने फोटो खींचने का फैसला लिया। अगले कई सालों तक उन्होंने पेंटिंग छोड़कर मल्टीपल प्रोजेक्शन, लाइट्स मैनिपुलेशन और नेगेटिव छवियों के साथ कलात्मक प्रयोग किए थे। 1960 के दशक के अंत में ही अकबर पदमसी ने एक अंत: विषयक कार्यशाला (Interdisciplinary Collobration Workshop) का आयोजन किया। इस कार्यशाला में चित्रकार, प्रिंट-मेकर, डॉक्युमेंट्री फिल्म निर्माता, एनिमेटर, सिनेमैटोग्राफर और मनोविश्लेषक भी थे। अकबर पद्मसी ने 'सिजगी' (Syzygy) शीर्षक से एक 16.34 मिनिट की प्रयोगात्मक साइलेंट ब्लैक एंड वाइट एनिमेशन आधारित आर्ट फिल्म का निर्माण किया था। इस फिल्म में अकबर पद्मसी ने एनिमेटर राममोहन का सहयोग लिया था। फिल्म का नाम एक तकनीकी शब्द से लिया गया था, जिसका तात्पर्य दो भिन्न चीजों का युग्मन है। अकबर पद्मसी ने एक गणितीय कोड के क्रम परिवर्तन और संयोजन से हजारों रेखा चित्रों का सृजन किया तथा इन ज्यामितीय और वास्तुशिल्पाकार रेखा चित्रों से आर्ट फिल्म का निर्माण किया। जिसे 1969 को पेरिस में यूनेस्को की स्क्रीनिंग में भी पेश किया गया था। पद्मसी ने 1974 में एक अन्य रचनात्मक फिल्म 'इवेंट्स इन ए क्लाउड चैम्बर' भी बनायी। इसमें उन्होंने एक अंधेरे कमरे में विभिन्न रंग के फिल्टर्स के माध्यम से आकृतियों के कटआउट को शूट किया था। यहां संयोग इस प्रक्रिया में रचनात्मक तत्व था, क्योंकि उन्हें स्वयं भी नहीं पता था कि क्या परिणाम सामने आऐंगे। लेकिन कृष्ण खन्ना और अकबर पद्मसी के प्रयोग उस समय की भारतीय कलात्मक मान्यताओं में जगह नहीं बना पाए। हमारी आधुनिकतावादी संस्कृति तब तक ऐसे संवेगों के योग्य नहीं बन पाई थी और न ही न्यू मीडिया आर्ट जैसा कोई संदर्भ उस समय तक बना था जिसके द्वारा इन कलाकारों के विचारों को कला जगत में स्थापित किया जा सके। स्वतंत्रता पश्चात के कलाकारों में हुसैन की भूमिका भी काफी प्रयोगवादी तथा क्रांतिकारी प्रवृती की थी। 1967 में उन्होंने अपनी फिल्म 'थ्रु द् आईज ऑफ ए पेंटर' का निर्माण किया और रचनात्मकता के नए क्षेत्र में प्रवेश किया। उनकी इस फिल्म ने आधुनिकतावादी कला और परंपरागत शिल्प के मध्य की सीमाओं को स्थानांतरित कर दिया।

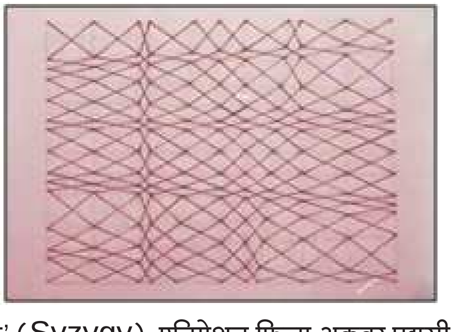

'सिजगी' (Syzygy), एनिमेशन फिल्म,अकबर पद्मसी ,1969

नब्बे के दशक की शुरुआत से ही भारतीय कला परिवेश में काफी प्रयोगात्मक बदलाव देखने को मिलते हैं। सामाजिक, राजनीतिक उथल-पुथल और टेक्नोलॉजी की चंचल प्रकृति ने ऐसे कलाकारों को प्रभावित किया जो न्यू मीडिया के साथ काम करना चाहते थे। ये वे कलाकार थे जिनकी शिक्षा और रुचियां ललित कला परिवेश के लिए सीमित नहीं थी, बल्कि विविध संस्कृतियों द्वारा काफी समृद्ध थी। समकालीन कला के क्षेत्र में भी काफी बदलाव हो गया था। कला अब गैलरी ऑब्जेक्ट ना बनकर जनता के बीच आ गई थी, देखने का नजरिया बदल गया था, दर्शक बदल गए थे, और साथ ही कला का बाजार भी बदल गया था। तकनीक जन सामान्य के साथ रोजमर्रा की जिंदगी में संबंध बना चुकी थी। फोटोकॉपी मशीने तो डाटा कॉपी के रोजमर्रा माध्यम के रूप में पहले से इस्तेमाल हो रही थी और पर्सनल कंप्यूटर भी अब जन-सामान्य तक उपलब्ध होते जा रहे थे। यह भारतीय समकालीन कला में एक मूल बदलाव के रूप में चिन्हित किया जाता है। अब वीडियो और प्रदर्शन कला की नई शैलियों में कलाकार स्वयं को अभिव्यक्त कर रहे थे और विभिन्न माध्यमों के साथ समन्वय स्थापित करने व कला की भूमिका को फिर से परिभाषित करने का प्रयास कर रहे थे। इस समय कई कलाकारों ने परंपरागत चित्र और मूर्ति रचना से आगे कला के मौजूदा दायरे में प्रवेश किया। विवान सुन्दरम, नलिनी मालानी और वेद नायर, इन्स्टालेशन, वीडियो आर्ट व बहुमाध्यम कला के लगातार अभ्यासकर्ताओं में प्रमुख नाम थे। इन कलाकारों ने राष्ट्रवाद, राजनीति, हिंसा, धर्म और स्त्रीत्व जैसे मुद्दों के साथ परम्परागत कला माध्यमों से अलग वैचारिक कला में अपनी जगह बनाई। उदहारण के तौर पर बाबरी मस्जिद विध्वंस और उसके बाद मुंबई दंगो पर केन्द्रित विवान सुन्दरम के 'मैमोरियल' और 'हाउस बोट' इन्स्टालेशन धर्म के साथ जुडी राजनीतिक लोलुपता, नष्ट होती नैतिकता, बिखरे सामाजिक ढांचे और खोखले मानवीय मूल्यों का प्रस्तितिकरण था। नलिनी मालानी की कला वीडियो और ट्रांसपेरेंट सिलेंडर पर पेंट की हुई इच्छाओं, सामाजिक प्रदुषण, भय और छायाप्रकाश की जादुई दुनिया के रूप में अपनी कहानी को प्रकट करती है। बैजू पार्थन ने इंटरनेट डिजिटल और पेंटिंग, रणबीर कालेका ने पेंटिंग के साथ वीडियो प्रोजेक्शन, नलिनी मालानी, विवान सुंदरम, नवजोत अल्ताफ व शेबा छाछी ने फोटोग्राफी, वीडियो प्रोजेक्शन, लाइट, ध्वनि और मूर्ति संस्थापन के साथ, रूमन्ना हुसैन, सोनिया खुराना, अनीता दुबे, शिल्पा गुप्ता, तेजल शाह व सुबोध गुप्ता ने प्रदर्शन, वीडियो इंस्टॉलेशन, मेकैनिज्म, वीडियो आर्ट व प्रोजेक्शन के साथ और रक्स मीडिया कलेक्टिव, साइना आनंद, डिजायर मशीन कलेक्टिव ने संचार प्रौद्योगिकी के साधनों का उपयोग कर अपनी अभिव्यक्ति का कलात्मक रूपांतरण किया।

ब्रह्मा का होमपेज, वेब आर्ट, बैजू पार्थन, 1999

ऐसे कई कला समूह, आर्ट कलेक्टिव और संस्थान है जो न्यू मीडिया आर्ट के प्रसार और संरक्षण के रूप में महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। डाक्युमेंट्री फिल्म, ऑनलाइन व ऑफलाइन मीडिया के साथ ऐतिहासिक संदर्भो, सांस्कृतिक प्रतिक्रियाओं और अनुसन्धान के साथ रक्स मीडिया कलेक्टिव ने भारतीय कला को वैश्विक कला परिदृश्य में स्थापित किया, जिसे कि 1992 में जीबेश बागची, मोनिका नरूला और सुधोब्रता सेनगुप्ता की तिकड़ी ने नई दिल्ली में स्थापित किया। डिजायर मशीन कलेक्टिव के कलाकार जनसामान्य की प्रतिकार के काफी निकट है। इनके अतिरिक्त साइना आनंद, संजय बांगर, अशोक कुमार द्धारा दिल्ली में स्थापित सराय, स्पेस स्टूडियो (बड़ोदा), देवी आर्ट फाउंडेशन (गुरुग्राम), किरण नादर म्यूजियम आफ आर्ट (दिल्ली), खोज स्टूडियो (दिल्ली), सेंटर फॉर एक्सपेरिमेंटल मीडिया एंड आर्ट्स (बैंगलोर) आदि भारतीय कलाकारों को प्रोत्साहित करने के साथ-साथ दुनिया भर के प्रगतिशील कलाकारों की मेजबानी करते है।

आज हम कला के उस दौर में हैं जब चित्रकार, मूर्तिकार, आर्किटेक्ट, म्यूजिशियन, डॉक्यूमेंट्री फिल्म निर्माता, फोटोग्राफर, एनिमेटर, रंगमंच कलाकार, कंप्यूटर प्रोग्रामर आदि सभी एक मंच पर आ गए हैं। यहां अवधारणा का प्रदर्शन कलाकार का मुख्य ध्येय है चाहे माध्यम कुछ भी हो। कई युवा कलाकार जो विज्ञान और नई तकनीकों से सहज है और दक्षता के साथ ही नए विचारों, नयी खोजो से अपने को कला जगत में स्थापित कर रहें हैं और लगातार इस और प्रयोगोन्मुखी है। रचनाकार का रचना के साथ एकाकार ही उसे कला बनाता है। यहाँ तकनीक एक सहायक पक्ष है, किन्तु वह एक कलात्मक तकनीक मात्र ही होगी जब तक कि कलाकार की संवेदना का जुड़ाव उसमें न हो।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. सम्पादक पीयूष दईया: *कलाभारती-खण्ड : दो*, ललित कला अकादमी, नई दिल्ली, 2010
2. प्राणनाथ मागो: *भारत की समकालीन कला, एक परिप्रेक्ष्य* (अंग्रेजी से अनुवाद: सौमित्र मोहन), नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2012
3. सम्पादक विनय कुमार, अनुप कुमार चांद आदि: *कला कैनवास*, (अंक 1), पटना
4. Ed. Anupa Mehta: *India 20: Conversations With Contemporary Artists,* Alekhya Foundation, Vadodara, 2007
5. Ed. Gayatri Sinha: *Indian art: An Overview*ed, Rupa books, New Delhi, 2003
6. Ed. Gayatri Sinha: *Art and Visual Culture in india 1857-2007,* Marg Publications, Mumbai, 2009

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

The Study on Speed and Agility Fitness Varrable Between Resiedential and Non Residential School Players in the Madhya Pradesh

Punit Gupta* Dr. Jogendra Singh Khangharot Dr. Hemant Pandey*****

Abstract - The study plays major role in the physical fitness performance. It helps in the development of the body work efficiency and movement in the different direction with quick time period. This includes the speed, agility and physical fitness variable taken from the study. The main aim of the study is to check relation between fitness variable in the residential and non residential school player of Madhya Pradesh. In this study school level players participated for the physical fitness variable. The study was tested on 70 players; in these thirty five players each from residential and non residential school were included. In this study the assessment test included the analysis sample and student t test was used to compare both school players fitness variable. In this study the players from 14 to 16 years age group were selected for the test. After the completion of the study, result found was that the residential school player were better in speed, agility fitness variable and stamina of the respiratory system was also better than the non residential school players.
Key words - stop time watch, cone, starter, medical kit, fitness measurement tape, residential and non residential school players, gun and whistle.

Introduction - The speed is defined as a part of the quick movement of the limb and exercise performed with good pace of any sprint activities. It is very essential for any sports. The respiratory function depends on this skill and it is the quality of the muscle to perform against the opposite force and give forward action by the limb. It is combination of warm up of the body with the limb and takes action with nervous system of the body and mind set activity. It increases with different method compared to other physical fitness variable because the speed is combination of different part and activity of the body to perform special movement. It is part of the distance covered in the quick time period and completes the task and competition as soon as possible. It is equal to the distance and time period taken. It is quality of the organ system to do work with fast pace and cover the entire situation before the given time. It is the capacity of the big muscle to contract and relax in the fast movement to cover given area. The speed is classified by the quality of the speed .There are 5 types of speed fitness: speed endurance, locomotors capacity, reaction capacity, acceleration capacity and movement capacity. It is the combination of two or more limbs movement to take any action against the surface. It is developed by the use of sports training. Speed endurance is capability to work with quick time period, it is done with best and high level of performance in the fast event and the body performs even during the tired condition of individual body system. It is the work in fast pace with warming up of the body respiratory system. In this section the work is done in very less time period. Locomotors capability is to move the body in different direction as soon as possible and maintains the fast movement of the body part with more time period during sport performance. It is not fast pace of the body because in this the activity takes more time to complete an event and this also depends on the neuron processor in the sport performance. Reaction capacity is different part of speed .It is not direct form because this component works with cognitive domain and not include maximum pace of any movement. Acceleration capacity is defined as the speed meter of any movement with the control of all speed activity. In this section speed works with start position till the last action of the activity and it is work with quick run competition where the fast pace is essential to any exercise of the sport. This is very essential part of the group game and sports in which the player is more than two in single team. Movement capacity is defined as the function of any activity in different directions and speed changes after some time in the speed step of the object; it is individual type of action in a very less time period. It is useful in the water sports where time changes according to the need of this quality

*Research Scholar, Pacific University Udaipur (Raj.) INDIA
** Assistant Professor, Pacific University Udaipur (Raj.) INDIA
*** Pacific University Udaipur (Raj.) INDIA

speed. It also depends on the quick energy and power movement to take action against the gravity. Speed plays a particular role in situation to situation of all body movement for any sporting activity. This is fast movement of any limb in sports it is different in movements of exercise performance. Sometime it is defined as the general and specific types of the speed quality. “Speed is ability of all people to take action against any movement with fast rate and play a positive step in time period during quick acceleration” according to Barrow and McGee. Speed is classified according to movement; there are maximum paces, power pace, fast endurance activity. Second most essential component of the physical fitness is agility part. In this study agility plays important role. According to their performance of the different direction and movement always change with time to time. The lower limb is involved in this component of the maximum activity related to this part. In this the shuttle run plays important part in the assessment of this component and Zig-Zag run is also a test assessment of the body segment. It is the movement of the limb after sports official gives signal in the direction and the movement takes place in the direction with fast rate and quick time period of the body movement. All the parts of the body is takes part in this performance because use of internal part and system with strength of the muscle to supply oxygen for the quick action of the neuron system.

Objective Of Study - The main aim of the study is to find out the difference between residential and non residential player of the speed and agility in the Madhya Pradesh state. The study is directly related player fitness performance in different conditions.

Method And Tools - This study is conducted on the boarding school player, in which thirty five students are part of both schools. They are residential and non residential schools. Total numbers of seventy players were included in this study. Data was collected with sampling process and experimental practice method was used for collection of scores of all players. The player also knows about the goal of the study organized.

Process And Test - This study used the players with their level of fitness during their growth age. In this fifty meter sprint race was taken for the testing of speed and power of the lower body muscle and limb with reaction to the quick movement in the action situation. The other is agility fitness; this component is tested by using the forty meter shuttle run of every player for their movement of whole body in given direction. In this test total seventy players were included; they were from different school and district of Madhya Pradesh. Total 35 students each from residential and non residential school players were included. The selection age group was between 14 to 16 years in the district of Madhya Pradesh. The following physical fitness test result is arranged in the table below. The study was done only on male school level player and no other training was given to them, to increase their performance before the conducting the test method.

Table 1 Test Method Taken Are Showed.

S.	Measurements	Test	Element
1	Speed	Sprint Run	Time In Minutes
2	Agility	Shuttle Race	Time In Minutes

Table 2 (see in next page)

Mathematical Results - All study is done with use of experimental method and collection of data with help of random sampling process of the players, in this we found the standard deviation and mean value of all result and used in the table with use of t test formula to compare the difference between residential and non residential school players. Table one shows the components of the test study and Table two shows the comparison between both schools. The t test value was 1.68 in the sprint race and the value of shuttle race was 1.09.

Conclusion - This study is done with day boarding school and non boarding school players and the students were selected between age group from 14 to 16 years. The goal of this study showed the need of physical fitness in young school players. It is useful to know about the level of the fitness in the school players. It is very essential for the body fitness in the school players. The speed plays important role in all fitness factors and wellness of the body. It proves the reliability, validity and the difference between residential and non residential school players. The study represents that the residential school players were better than non residential players and their fitness level was also better than compared to non residential players. All tests were conducted in both schools. In this the mean value of the residential school is low in speed and their related sprint race components, on the other side the agility level of the residential school player is better with use of the method of shuttle run compared between non residential players. The main aspects are the major part of the components. The main cause of this difference is BECAUSE of diet chart of the players in the boarding school and their daily routine in the school time period. They survived this skill in the healthy climatic conditions compared to urban school players; more pollution in the city is the reason for low body fitness and low health level according to the standard level of wellness condition. Today we face more communicable diseases and radiations in the society and it impacts mostly on respiratory system of the body that is why we need healthy body and mind to avoid and prevent our body from these viruses and diseases.

References :-

1. DR. ajmer singh, essentials of physical education, New Delhi, Kalyani Publication, 2009.
2. Science of the sports training book page num 115 to 117.
3. DR. v.k. Sharma, health and physical education, New Delhi, saraswati publication, 1950.
4. Gupta A.K. (2003), Test and Measurement in Physical Education Sports Publication,Ashok Vihar, Delhi.

Table 2 : Related To Comparison Of Physical Fitness With Use Of Statistics T Test Of Both Schools.

Components	Residential		Non Residential		Mean Difference	Total Players	T-Result
	MEAN	S.D.	MEAN	S.D.			
50 Meter Sprint Race	8.14	0.46	10.87	0.48	2.73	35	2.904
10*4 Meter Shuttle Race	8.962	0.50	11	0.46	2.04	35	2.125

***Level Of Significant At 0.05**

****

Yield, Growth and Development of Rapeseed Mustard and Other Field Crops With Different Saline Water

Harish Kumar*

Abstract - India is the third largest oilseed economy in the world. Among the seven edible oilseeds cultivated in India, rapeseed-mustard contributes 29.2% in the total oilseeds production and ranks second after groundnut sharing 28.2% in the India's oilseed economy. The mustard growing areas in India are experiencing the vast diversity in the agro climatic conditions and different species of rapeseedmustard are grown in some or other part of the country. Under marginal resource situation, cultivation of rapeseedmustard becomes less remunerative to the farmers. This results in a big gap between requirement and production of mustard in India. Therefore site-specic nutrient management through soil-test recommendation based should be adopted to improve upon the existing yield levels obtained at farmers ?eld. Effective management of natural resources, integrated approach to plantwater, nutrient and pest management and extension of rapeseed-mustard cultivation to newer areas under different cropping systems will play a key role in further increasing and stabilizing the productivity and production of rapeseed-mustard. The paper reviews the advances in proper land and seedbed preparation, optimum seed and sowing, planting technique, crop geometry, plant canopy, appropriate cropping system, integrated nutrient management and so forth to meet the ever growing demand of oil in the country.

Introduction - Rapeseed-mustard is one of the most important oilseed crops of the world where India is ranking third in area and production in the world . Among the seven edible oilseeds cultivated in India, rapeseedmustard contributes 29.2% in the total oilseeds production and ranks second after groundnut sharing 28.2% in the India's oilseed economy . however due to more oil content (ranging from 38-48%) rapeseed-mustard ranks ?rst in terms of oil yield among all oilseeds crops. Its seed contains 39 to 51 percent edible oil.

Demand of edible oil has increased with increasing population and improvement in the living standard of the people, resulting thereby in short supply of edible oils which is being met with imports of edible oil worth 45,000 crores per annum. Thus, there is need to boost the oilseed production through area expansion and productivity enhancement.

In India, rapeseed-mustard occupy 6.23 million ha area with production and productivity of 6.92 million tones and 1102 kg/ha respectively . Indian mustard is an important *rabi* crop of Haryana.

The rise in temperature, even by a single degree beyond the threshold level is considered as heat stress in the plants .The global mean surface air temperature increased by 0.7°C in the twentieth century and is expected to increase a further 1.7–4.7°C by the late twenty-?rst century . Climate change has increased the intensity of heat stress and heat stress due to increased temperature is an agricultural problem in many areas in the world as well as in India . There is a speci?c time for the sowing of particular variety of a crop on specific area. Time of sowing is very important for crop production as different sowing dates provide variable environmental conditions within the same location for growth &development of crop . The late sowing of mustard decreased seed yield through synchronization of silique filling period with high temperatures, the decrease in assimilates production, drought stress occurrence, shortened silique filling period and acceleration of plant maturity. because it is a thermo sensitive as well as photosensitive crop.

Effect of sowing dates on various stages of Rapeseed Mustard and other crops:

1. Effect on Phenology
2. Effect on Growth
3. Effect on physiology
4. Effect on yield and yield attributes

Effect on Phenology: Whole life cycle of mustard plant has been divided into three development stages, sowing to seedling emergence, seedling emergence to ?owering and ?owering to maturity. Chauhan *et al.*[11], studied 22 cultivars of mustard under two different sowing dates *i.e*11 November and 27 November and observed that high temperature at the time of seedling emergence and 52 % ?owering in late sown Indian mustard on 27 November sowing time and reported that more days were taken to seedling of emergence and early ?owering in late sown

*M.Sc. Ph.D., Distt. Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Indian mustard due to heat stress. Akhter *et al.*[4], studied *Brassica rapa* with 3 sowing dates (3 October, 17 October & 30 October) and 4 varieties (KOS- 1, Gulchein, Shalimar Brown Sarson-1 and P-3) and observed the effect of sowing dates on phenology of crop.

Crop growth rate (CGR) & Relative growth rate (RGR)

Crop growth rate (CGR) is slow at early growth stages because the plant cover is incomplete and the plants absorb just a part of the solar radiation. As the plants develop, their growth rate is quickly increased because of the expansion of leaf area and this trait is an index dealing with production potentiality of the plant and it is utilized in order to determine yield among different varieties . while the ecological advantage of high RGR is very clear. Due to high RGR, a plant will rapidly increase in size and is able to occupy a large space, both below and above ground. A high RGR may also facilitate rapid completion of life cycle of a plant.

Alam*et al.*[5], studied 11 genotypes of *Brassica* on three different sowing dates *i.e* 27 November, 7 December & 27 December and observed the effect of temperature due to different sowing dates on plant growth and development. They concluded that on 27 November sowing condition the decreased crop growth rate due to low temperature at vegetative stage and on 27 December sowing condition the decreased crop growth rate due to high temperature at grain ?lling stage in mustard crop that results into reduction in crop growth rate .

Effect on physiology (Water potential, osmotic potential, RWC, RSI, CTD. The plant growth and development depend upon cell division and cell enlargement and both of these process are sensitive to water de?cit. Among different parts of plant the leaf growth is generally more sensitive to water stress. Hence, it should be no longer assured that crop growth is not affected, if plant water de?cit do not reach that can directly reduces the many physiological processes like photosynthesis . Kumar & Srivastava.

Reported that under late sown conditions there is reduced chlorophyll stability index, poor harvest index and consequently decreased seed yield. Extreme temperature leads to accumulation of certain organic compounds (osmolytes) like sugars, polyols, proline and glycine betaine.

Effect on yield and yield components (Number of primary & secondary branchesnumber of siliqua/plant, 1000 seed weight, biological yield, seed yield, harvest index)

Seed yield is a quantitative trait, which is the expression of the result of genotype, environmental effect and genotypeenvironment interaction . The number of siliquae per plant is the most important component of the seed yield in rapeseedmustard[6].

Abdul & their co-workers studied three cultivars of canola *viz*; Bulbul-98, Zafar-2000 and Rainbow were sown at three different sowing dates i.e early (17th October), late (30th October) and very late (17th November) to evaluate the effect of sowing dates on seed yield & yield attributing component like 1000 seed weight, biological yield and harvest index. Their results revealed that the canola planted on 30th of October attained maximum 1000 seed weight, biological yield, harvest index & seed yield while minimum 1000 seed weight, biological yield, harvest index & seed yield were recorded in late sown (17th November) canola.

Conclusion - Optimum sowing time plays an important role to fully exploit the genetic potential of a variety as it provides optimum growth conditions such as temperature, light, humidity and rainfall. The accurate time of sowing and high yielding cultivars can boost the growth and yield of the crop. Ideal sowing dates for one or more variety allows for availability of a set of environmental factor that favour a desirable greening, establishment and survival of plantlet which as a result the plant encounters the favorable environmental conditions and avoid unfavorable ones during each stage of its growth.

References :-

1. Sattar, A., Cheema, M. A., Wahid, M. A., Saleem, M. F., Ghaffari, M. A., Hussain, S. and Arshad, M.S., Effect of sowing time on seed yield and oil contents of canola varieties. *J. Glob. Innov. Agric. Soc. Sci.,* 1(1): 1-4 (2013).
2. Ahmadi, B., Shirani Rad, A.M. and Delkhosh, B., Evaluation of plant densities on analysis of growth indices in two canola forage (Brassica napus L.). *Europian Journal of Experimental Biology* 4(2): 286–294 (2014).
3. Ahmed, J. U., & Hasan, M. A., Evaluation of seedling proline content of wheat genotypes in relation to heat tolerance. *Bangladesh Journal of Botany* 40:17–22 (2011).
4. Akhter, S., Singh, L., Saxena, A., Lone, B., Singh, P. and Qayoom, S., Effect of temporal and varietal variability on growth and developmental parameters of brown sarson (*Brassica rapa*l. var. *oleifera*) under temperate kashmir condition. *Journalof Agriculture research*1(2): 122126 (2014).
5. Alam, M.J., Ahmed, K.S., Mollah, M. R. A., Tareq, M.Z. and Alam, J., Effect of planting dates on the yield of mustard seed. *International Journal of Applied Science &Biotechnology*3(4): 651-654 (2014).
6. Angadi, S. V., Cufprth, H. W., Mc Conkey, B. B., Gan , Y., Yield adjustment by canola grown at different plant population under semiarid conditions. *Crop Science*43: 1358–1360 (2003).
7. Basu, P.S., Ali, M. and Chaturvedi, S.K., Terminal heat stress adversely affects chickpea productivity in northern india— strategies to improve thermotolerance in the crop under climate change.Workshop Proceedings: Impact of Climate Change on Agriculture 189 (2011).
8. Basu, S., Parya, M., Dutta, S.K., Maji, S., Jena, S., Nath, R. and Chakraborty, P.K., Effect of canopy temperature and stress degree day index on dry matter accumulation and grain yield of wheat (*triticumaestivum*l.) sown at different dates in the indo-

gangetic plains of eastern india. *Indian Journal of Agriculture,* 48(3): 167-176 (2014).

9. Beck, E. H., Fettig, S., Knake, C., Hartig, K., &Bhattarai, T., Specific and unspeci?c responses of plants to cold and drought stress. *Journal of Biosciences* 32:501–510 (2007).
10. Camejo, D., Rodr´ýguez, P., Morales, M.A., Dell'amico, J.M., Torrecillas, A. and Alarc´on, J.J., High temperature effects on photosynthetic activity of two tomato cultivars with different heat susceptibility. *Journal of Plant Physiology*, 162: 281–289 (2005).
11. Chauhan, J. S., Meena, M. L., Saini, M. K and Meena, D. R., Heat stress effects on morpho-physiological characters of Indian mustard (*Brassica juncea*L.). *16th Australian Research Assembly of Brassicas, Ballarat Victoria*. 91-97 (2009).
12. Chen, T. H. H., Murata, N., Enhancement of tolerance of abiotic stress by metabolic engineering of betaines and other compatible solutes. *Current Opinion in Plant Biology*. 5: 250–257 (2002).
13. Dias, A. S., &Lidon, F. C., Evaluation of grain ?lling rate and duration in bread and durum wheat, under heat stress after anthesis. *Journal of Agronomy and Crop Science*. 195: 137–147 (2009).
14. Ghosh, R. K. and Chatterjee, B.N., Effect of dates of sowing on oil content and fatty acid pro?les of Indian mustard. *IndianJournal of Oilseed Research* 5(2): 144-149 (1988).
15. Gulzar, A., Amanullah, J., Arif, I., Arif, M., Phenology and physiology of rapeseed as affected by nitrogen and sulfur fertilization. *Journal of Agronomy*5(4): 555–562 (2006). Mediteranneantype environments. Crop growth and seed yield. *European Journal of Agronomy*, 25: 1–12 (2006).

****

Ethnobotanical Investigation of some economic gums plants are used by Tribals of Dhar district, Madhya Pradesh, India

Dr. Kamal Singh Alawa*

Abstract - The present paper investigation was has been carried out during 2018 to 2020. Ethno botanical information was gathered through individual interviews and observation among the study area. Some economic important plants gums are sold by tribals of local weekly market and source of income of district Dhar, Madhya Pradesh. More than out of 18 plant species belonging to 14 genera and 11 families were found in the study area with medicinal, industrial, ethnic, economic as well as environmental important. The rural and the tribal peoples are majority of the population of district and most of them are economically backward. Some plants are needed for the economic upliftment of these backward people which will not require major monetary input or skilled labour. The most easy and adaptable mode of employment is the gainful exploitation of plants and plant products available in the vicinity for their economic importance.
Key words- Dhar district, economic gums plants, Market, Sold, tribals, Madhya Pradesh.

Introduction - Present study observes twenty three economically important gums plants are sold by tribals in the local market and directly involve with the socio economic uplift man of tribals of Dhar district, Madhya Pradesh. Mentioning few of them are *Acacia nilotica* (L.) Willd.ex Deli., *Aegle marmelos* (L.) Correa., *Azadirachta indica* A.Juss., *Azadirachta indica* A.Juss, *Terminalia bellirica* (Gaertn.) Roxb. *Madhuca longifolia* (Koen.) Mac., *Mangifera indica* L. etc. The tribals are collected in forest areas of fruits, flowers, seeds, gum and leaves etc. around them and exploitation of the forest products as a source of income. The plants grow around the dwellings of the tribals, who utilize many plants as food, herbal drugs, ropes, strings, oils, fats, flavors and dyes. These tribe's men have developed a good expertise to locate, harvest and process these useful materials. Among the plant products, some of them have good scope economically such as essential oil bearing plant, oil-seed plants, gums and resins, fruits and nuts, vegetables and specially the medicinal herbs as a recent spit in the manufacture of herbals drugs that has created a great demand for medicinal plants. There are some plants which can be formed into items of importance such as ropes and other cordages, baskets, mats, other, woven products, brooms, brushes, agricultural implements etc. the expert capacity of locating and collecting these useful plants and techniques for their subsequent processing and utilization is already available with the people living in these forests or villages of the dense rural areas, but the need is to convince them of the benefits which can solely be theirs. Literature survey of ethnobotanical work was done (Srivastava 1984, Jain 2004, Jadhav 2010; Maheshwari *et al*. 1986, Wagh *et al*. 2010, Alawa & Ray 2018, Prana *et al*. 2013, Alawa 2018 and Ratnam *et al*.2019). The present paper first time documented of the study area.

Materials and Method - Field surveys were conducted during the period 2018-2020. As per well planned schedule and rich pocket of tribal areas were visited for documentation of economic important plants. Information on economic plants were collected from the tribal villages of Nalcha, Mandu, Budhimandu, Undakho, Amkho, Keshvi, Bagh,Tanda, Pipalda, Bilda, Kukshi, Umarband, Sodpur,Mehandikhedi, Hedri Manawer, and Kachal Panala, Gyanpura,. Herbarium of the collected plants specimen was prepared following customary method (Jain and Rao, 1977). Data on the preparation of different species and their applications were gathered from indigenous experienced village people. Local name of the plants and their method of preparation with other raw ingredient were recorded. The plants were identified with the help of flora and available literature(Mudgal *et al*. and Khanna *et al.* 2001) The collected plant species are arranged alphabetically along with their botanical name ,vernacular names, family and economic important plants are sold by tribes of local weekly market selling and source of income.

Results and discussion: Present study observes twenty three economically important plants which are sold by tribals in the local market of tribals of Dhar district, Madhya Pradesh. Mentioning few of them are out of 18 plant species belonging to 14 genera and 11 families were discussed above are used as economic plants species are included shrubs, succulent shrubs and trees with potential economic

*Asst. Prof. (Botany) Govt. P. G. College, Dhar (M.P.) INDIA

importance and also strong soil binding properties. Some plants of forest produce are consumed as it is collected in the study area. Most of the living in interior hill ranges such as remote areas. Some plant parts are selling and income in local market in local people. Sources of botanical name and families, local name, ethnobotanical uses and sold in the market have been mentioned (Table: 1)

Acknowledgement - The authors are grateful to Dr. H.L.Fulware, principal and Dr. Subhash Soni, Head of Botany Department Govt. P.G. College, Dhar for providing research facilities. We are also thankful to Divisional forest Officer, Dhar for help during the tribal village's and forest areas. She is also thankful to all tribal people for their important information valuable information.

References :-

1. **Alawa, K.S. and Ray S. (2018)**. Some plants associated of tribal Clans of Dhar district, Madhya Pradesh, India and their Role in Conser- vation. *Bioscience Discovery*, 9(2): 260-263.
2. **Alawa, K.S. (2018).** Ethnobotany: Plants use in Fishing and Trapping by Bheel Tribes of Dhar district, Madhya Pradesh, India. *International Journal of Science and Research*, 8 (1): 733-735.
3. **Jain, S.P.(2004).** Ethno-Medico-Botanical Survey of Dhar district Madhya Pradesh. *Journal of Non- Timber Forest products*, 11 (2): 152-157.
4. **Jain, S.K. and Rao, R.R. (1977).** *A handbook of field and Herbarium methods*. Today and Tomorrow Publishers, New Delhi.
5. **Jadhav, D. (2010).** Ethno medicinal plants used as antipyretic agents among the *Bhil* tribes of Ratlam District Madhya Pradesh. *Indian forester,* 136 (6): 843-846.
6. **Maheshwari, J.K., Kalakoti, B.S. and Lal, B. (1986).** Ethno medicine of *Bhil* Tribe of Jhabua District, Madhya Pradesh. *Ancient Science of life,* (5): 255-261.
7. **Madgal, V., Khanna, K.K. and Hajra, P.K. (1997).** *Flora of Madhya Pradesh*, Vol. II.BSI. Calcutta.
8. **Prana, I.C. and Ahirwar, R.K (2013)** Socio-economic importance of some plants species used by the Tribes of Chanda Forest district Dindori, Madhya Pradesh, India 4 (3): 1733-1735.
9. **Ratnam V. Tirupati R. and Raju V.(2019).** Therapeutic importance of gums in folk medicine from eastern ghats, Andhra Pradesh, India, *Asian J. Pharm clin Res*. (12): 300-302.
10. **Srivastava, R.K. (1984).** Tribals of Madhya Pradesh and Forest Bill of 1980. *Man in India,* 64 (3):320-321.
11. **Verma, D.M., Balakrishan, N., and Dixit, R.D. (1993).** *Flora of Madhya Pradesh*, Vol. I, BSI, Calcutta.
12. **Wagh, V.V. and Jain, A.K. (2010).** Ethnomedicinal observations among the *Bheel* and *Bhilala* tribe of Jhabua District, Madhya Pradesh, India, *Ethnobotanical Leaflets* (14): 715-720.

Table: 1 Ethnobotanical investigation of some economic gums plants are used by Tribals of Dhar District (M.P.)

S.	Botanical name	Family	Vernacular name	Part sold in the market
1	*Acacia nilotica* (L.) Willd.ex Deli.	Mimosaceae	Babul	Gums
2	*Aegle marmelos* (L.) Correa.	Rutaceae	Bel patra	Gums
3	*Anogeissus latifolia* (Roxb. Ex DC.) Wall.ex Guill. & Perr.	Combretaceae	Dhavda	Gums
4	*Azadirachta indica* A.Juss.	Meliaceae	Neem	Gums
5	*Butea monosperma* (Linn.) Taub.	Fabaceae	Palash	Gums
6	*Cordia gharaf* (Forssk.) Ehrenb.	Ehretiaceae	Gondhi	Gums
7	*Ficus benghalensis* L.	Moraceae	Bargad	Gums
8	*Ficus racemosa* L.	Moraceae	Gular	Gums
9	*Ficus religiosa* L.	Moraceae	Pipal	Gums
10	*Ficus virens* Ait.	Moraceae	Paker/Piper	Gums
11	*Jatropha curcas* L.	Euphorbiaceae	Ratanjot, Agarandi	Gums
12	*Lannea coromandelica* (Houtt.) Merr.	Anacardiaceae	Moyen, Moi	Gums
13	*Madhuca logifolia* (Koen.) Macbr.	Sapotaceae	Mahua	Gums
14	*Mangifera indica* L.	Anacardiaceae	Aam	Gums
15	*Sterculia urens* Roxb.	Sterculiaceae	Kadai, Kullu	Gums
16	*Terminalia alata* Heyne ex Roth.	Combretaceae	Sajad	Gums
17	*Terminalia bellirica* (Gaertn.) Roxb.	Combretaceae	Baheda	Gums
18	*Ziziphus mauritiana* Lam.	Rhamnaceae	Bor	Gums

****

Khajuraho: A Socio Political story carved on Historical stones by Literary words

Dr. Archana Kashyap* Prof. Ojaswee Shirole Dr. Sehba Jafri*** Dr. Veena Kurre******

Abstract - The world is fed up by pandemic. People are searching for life and everybody is busy in this endless search. The painful pandemic has changed a large part of life and overall definition of well-being. It has affected the primary needs and pleasures and people are preferring the death over life. What the people are facing is a specific detachment to life, positivity and pleasure. In such a horrible scenario it is our duty to bring them back towards life by playing a significant part in bonding through intellectual research works. The topic, **Khajurahon: a socio political story carved on historical stones by literary words** is a small effort to keep people happy calm and cool by discussing the historical moments of transitional change by the meeting of two cultures, religions and metaphysics. It was same transitional period as the outbreak of any epidemic. This paper is an emotional remedy to reduce the level of anxiety and risk of heart disease. Improving self-esteem is it's another object.

Key words - Khajuraho: Jainism, Kandariya Mahadev, chausath yogini, tantra, mantra , Hinduism, Metaphysics.

Introduction - Khajuraho, a call of thousand voices, a song of civilisation and a wonderful cultural asset, is like seeping of small brooklets on the surface of heart. This Group of Monuments is a cluster of Hindu and Jain temples situated at Chhatrapure, Madhya Pradesh in India. They were made around 175 BC by The *Chandelas* – the royal *dynasty* of Central India. *They were also known as* Jejakabhukti. *Chandelas* ruled much over the Bundelkhand region between the 9th and the 13th centuries. These temples in Khajuraho have, on the outer side, beautiful women, beautiful men, and all in love postures.

This love tale with thousands of different strokes of art and culture has its own place with spirituality of Kandarya Mahadeva, Vishvanatha, Matangeshvara, Chausath Yogini, Lalguan Mahadeva and Brahma Temple. The only Mahadev Temple is decorated with over 870 idols. Some of these iconographic carvings contain erotic themes and various erotic poses. There is a common misconception about the temples that these twisting, broad-hipped and high breasted nymphs display their generously contoured and bejewelled bodies only for the sake of sex. These are beautiful temples, where the carving *apsaras* are playing across the stone wall, preparing themselves for their partners by making their lips up, washing their hair sensually and playing upon musical instruments endlessly.

There is very little written, accessible history about the place. The city was called Khajur – aho because of the khajur (date) trees in the city; The love, the Erotic Statues and a very few History. There are a number of questions arise as we contemplate the matter as: why these monuments are only carved upon the outer walls? Inside there are no love postures. Inside you will find the temple empty, not even a statue of God. What it indicates? The mysteries of sexuality, alongside other mysteries of the human experience are painstakingly sculpted on the walls of the temples. The insides of the temples are rich in mystery of sound vibration and non-duality. What is its reason? Why Tantrics from all over the world come to Khajuraho when they start their first phase of *Yoga*? What was the socio political need of this architecture? What was the literary importance of these temples? What were the rituals and the ceremony of worshiping priestesses, *dakinis*, and *yoginis* by priests, were the temples were alive? Khajuraho is surrounded by jungles, and traditional, cute little Indian villages, right in the centre of the country. So how did a place like Khajuraho, way ahead of its time come into being?

Historical Perspective - These temples are made around 175 BC by the *Chendelas. They were also known as Jejakabhukti*. They were from royal *dynasty* of Central India. *Chendelas* ruled much over the Bundelkhand region between the 9th and the 13th centuries. They initially ruled as feudatories of the Gurjara-Pratiharas of Kanyakubja (Kannauj) Most Khajuraho temples were built between 950 AD and 1050 AD during the reigns of the Hindu kings *Yashovarman* and *Dhanga*. Historical records note that the

*SAGE University, Bhopal (M.P.) INDIA
**SAGE University, Bhopal (M.P.) INDIA
***SAGE University, Bhopal (M.P.) INDIA
****SAGE University, Bhopal (M.P.) INDIA

Khajuraho temple site had 85 temples by the 12th century, spread over 20 square kilometres.

History explores the *Chandela* as Rajputas. They are the descendants of the sage Chandratreya, son of the moon. Many legends are in the air about the origin of this dynasty. Khajuraho was the capital city of Chandels which was later called Mahoba. It was a part of *Pratihara* kingdom. The founder of Chandela was Nannukya. *Khajuraho* was a strong hold of Nannukya who was considered as the chief of his clan. *Vakapati* succeeded his father in the first quarter of tenth century. Vakapati had to often assist Pratiharas in the battle field, as he was a liegeman of them. Some inscriptions prove that his territory extended till Vindhya hills

Jai-shakti, the elder son, succeeded the throne and was successful in extending his empire. Jaishakti, the elder brother who ruled first, was also called Jai Jak and from this name the region ruled by the Chandelas acquired the name of Jaijikbhukti. He was succeeded on the throne by his younger brother, Vajaishakti. According to inscriptions, Vijaishakti conquered a number of neighbouring areas. Rahil, the son of Vijaishakti, lead the throne after him. The village Rahilya which is situated in south west of Mohaba was named after him.

There he also built a tank known as Rahilyasagar and a temple on its banks, He had ruled for twenty years. He was succeeded by his son Harshdev around 900 A.D. He extended his dominion in his twenty five years of rule. During his reign, Rashtrakuta King Indra III, invaded and captured Kannauj. He had helped the Pratihara King Mahipal I to get back Kannauj. He further strengthened his position by marrying Kanchuka, a princess of a Chauhan clan of the Malwa region. After *Harshdev's* death *Yashorvarman,* son of Harshdev succeeded him. He began to take over the neighbouring areas of the Rashtrakuta kingdom. He proved to be an able general and a brave warrior. He captured Kalinjar and extended his empire in the north and in the south. He reached the banks of the Yamuna in one direction and the borders of Chedi and Malwa in the other. Chandellas became strong by these military conquests.

Political Causes of making the temple - In ancient time, the terminology ***"dharma, artha Moksha and kama"*** were the principle motivating urges of life. They were for the improvement of human status. They were for ***Rajaya Vistara*** and they were for the development of civilization. Politics individual has a lot around it.

The historical study of ancient India indicates that India was not ***Aryawart*** during that period. It was divided into several small dynasties which have great disputes among each other. They were neither socially united not geographically. This was the positive feature for all outsider invaders and they used it for their ***Rajaya Vistara.*** The Ruined temples of other states have created the concepts in the mind of great politicians to use their holy places for the welfare of kingdom. There were several political reasons for building these temples.

Socio religious Politics to unite the people - These temples are dedicated to Hinduism and Jainism. However, they differ over the precise nature and meaning of these concepts they are a wonderful blending of Jainism mirrored in Hinduism. Before the establishment of ***Nyaya-Vaisheshika*** and ***samkhya*** schools these two doctrines had a great dispute. The reason was basically the metaphysics used in the development of both the religions. Within the doctrine of Jainism, there exist many metaphysical concepts which are not known in Hinduism, some of which are *dharma* and *Adharma tattva* (which are seen as substances within the Jain metaphysical system). *Kama* does not counted as a *dharma tatva* and Hinduism counts it as a necessary *Prushartha.* The basic political motto to build these temples in both the styles was to vanish the boundary line between both the religions and keep them close.

For the propagation of life among youth - The great disputes between Hinduism and Jainism were increasing stress in the people and they were transmigrating towards different set of mind. It was *Kapalik Viddhya*. This was mysterious, tough and away from life. To maximize happiness, health & immunity and to cut down the stress and depression among the people at socio political level, these temples were formed by paying respect to both the religions**.**

To restore the idea of life and to remove the faith in tantra - Black magic, Necromancy *or* ***Tantra viddhya*** was the art which started to create a feeling of detest in the natural source of love and meditation among the people. It was a period when transformation of sexual energy into ***Brahammacharyya*** was very common. The politicians felt it as a big challenge and to decrease the number of ***Sannyasees*** and to increase the number of soldiers, they propagated "if sex is suppressed it cannot be transformed". by emphasising sexual energy they created the powerful brave vibrations among the youth and created the iron men for their armies.

To use the ladies for Politics - These temples show many other practises which are prohibited for the normal ladies in the society. They were, in fact, political practises. The politics during that period looks like a great fantasy. The study of those days unfolds many hidden facts. We see, *Gurillah Techniques*, *Cold Wars* and *Ayyari* was very common political practices. Aiyyar (male) or Aiyyara (female) was a secret agent spy fighter. He or she was expert in many arts like:

1. Disguise
2. Fighting skills
3. Spying
4. Science
5. Fine arts
6. Medical
7. Chemistry

Disguise is must (Aiyyar/a may change him/herself into person of same or even of opposite sex but of resembling body built, by makeup). **Fighting skills** are also must, for

self-defence. An Aiyyar/a always overpowers any small group of ordinary soldiers. He/she may need to **spy** for taking out some secrets or for finding some missing persons. Knowledge of **science** and **fine arts** is also necessary, as it may come handy many times. **Medical** knowledge and specially that of Anaesthesia is needed for him/her. **Chemical** knowledge is also needed. In a nutshell an Aiyyar was a Jack of all trades. But contrary to common belief, Aiyyar was unfamiliar with magic and spells. He/she may join into any king's or landlord's service or may remain free.

These temples are clearly giving the hints about what is called the hidden politics. They people used to teach their ladies all the activities of a spy. ***Vatsyayana*** gives a list of sixty four subsidiary branches of knowledge ***(angavidya***) which should be learnt by a ***Ganika(***Ayyara) These include not only music, dancing and singing solving riddles of words, chanting recitations from books, completing unfinished verses, knowledge of lexicons and metres, archery, gardening, logic, making artificial flower, teaching parrots, languages, flower arrangement, preparation of perfumes and cosmetics, gymnastics, carpentry, writing in cipher etc. ***Kavyamimansa*** describes higher education for the women of royal officials rich families and the class of these spy ladies to use them for politics.

Social Importance of Khajuraho temple - Khajuraho temples are also the temple which are having a deep relation with society. Beyond the erotic art, the temples of Khajuraho depict various aspects of human life from birth to death. The different sculptures that occupy the rest of the walls of the temples include:

Daily Life: Statues of women absorbed in their daily life activities like dressing up, looking in the mirror, applying makeup, wearing ornaments, fixing hair, playing with her child, scratching her back, removing thorn from her foot.

Economic Life: Storytelling about the daily life in the ancient kingdom through the scenes of hunting, using animals for transport, constructing temples, fighting wars, meeting of ministers and king in the royal court.

Social & Cultural Life: Storytelling about the social life of people through statues of dancers, musicians, scenes of people playing music and drinking, brahmin imparting education and even funeral scenes.

Religious Life:

The acceptance of different gods in human life is represented through statues of gods and goddesses, demigods, gods with their consorts, various avatars of Vishnu.

Nature: Treating nature as an essential part of human life is represented by carvings of floral prints, statues of animals and mythical animals.

Explanation:

They are showing some very special Indian facts as:

1. Acceptance: we all know that once India was "Viswa Guru" . Because it had a deep heart for acceptance. ancient India had set the benchmark of how a civilised society should be governed. India used to be one of the most open-minded and liberal societies that the world had ever known. The topic of sex, nudity, homosexuality etc which are considered as taboo in the recent times, used to be discussed and represented in a very liberal way. The most famous example is the book written by the great scholar Vatsyayana, ' The Kamasutra ' which described the art of love making was a necessary practice to gain immense pleasure. Apart from the book, the Kings of the subcontinent were so liberal, that they constructed huge temples and sculpted erotic figures and sexual positions as mentioned in the Kamasutra.

Opposite to the concept of Manu: The women were regarded independent in Ancient India. According to Manu a female must be a subject to her father in childhood, in youth to her husband and in old age to her son; a women must never be independent. but they were free to choose their own lifestyle during the Chandela Dynasty. According to Panini's Ashtadhyayi, they had full liberty. in the first part of their life, the women were called Kumari, Kisori, Kanya. Some women remained unmarried through life (Kumaryamvayasi) were still called kumari, now in the old age these women were called as Vriddha kumari, Janat kumari etc. the mother hood was not related to the marriage but they people considerd it as a natural women right. women were free to take the decision about their motherhood. when a unmarried girl became mother, then the offspring was called 'kanina', which means, the issue of a Kanya, not formally married".2 When Kumari become engaged she was called as Vritya. In this period girls were free to choose their husbands if they are unmarried till the mature age and now they were called as 'Patinvara' (chose her husband by herself). The newly married bride was called as 'Sumangali'.

Appearance of Women: The position of women during the period is clearly indicated by these temples. Women in these sculpture are showing their upper body. It shows that Ancient Indian women had the liberty to expose. Although they had a dress concept of three parts. these three main pieces of clothing were :

1. the Antariya(Dhoti),
2. the Uttariya (Dupatta/Odhni)
3. Kamarabandha/Kayabandha.

The Uttariya could/can be worn in various ways, many of them covering the chest but many times you can uncover

Traditional clothing: Traditionally, the cloths of Chandella women of lower classes were just a white sari worn like how men wear lungis. The upper part of the body were not covered by majority of women. Only the rich women had the money to wear blouse or full sari etc. Also, exposed breasts were not considered as a sex symbol. It was considered on the same standards as how we consider topless men today.

5. Social Life:

Education & Marriage: About the women's education of this period we find that by about the period the marriageable

age of girls was further lowered to 9 or 10, this gave practically a death below any education worth the name. No doubt two or three years were still available, when some primary education could have been imparted, but both the girls and their guardians used to devote their attention during this period more to the problem of marriage than to that of education

Purdah System: Purdah was not much common in this period, but this system was not strict and popular as we find today. There are several stature which are indicating that women are playing on musical instruments in the presence of men.. They are busy in hunting practices; they are ploughing; village wives hastened to the neighbouring villages with baskets filled with various forest flowers etc. It seems that, ladies did not observe strict purdah.

The true union pleasure is indicating **the undoubted loyalty of wives towards their husbands.**

Literary Importance of Khajuraho: *Khajuraho* is a city of nymph and angels. It has given birth to new ideas for new literature. Unlike a real city in which everything is a matter of destruction under the law of nature, Khajuraho is eternal song. It is the city which can keep one's soul alive, vital, and singing. Language and literature has many more to discuss here. The Indian ethos, the omni-present Indian beauty, and the realm of the art and culture is the identity of Khajuraho. Ranging from beauty , pleasure, art, to folk culture, Khajuraho is across the length and breadth of the literature. It is in the movies (*Utsava*, *Kama sutra*, *Nishi Gandha*), in the palys (Mrichhkatika, *swapn vasavdatta*) and in other literary creations like *Vaishali ki Nagarvadhu, Chandrakanta, Chandrakanta Santati* etc..it is between the lines of Literature.

Chandrakanta and Chandrakanta Santati by Devaki Nandan Khatri is based on the plot of Ayyara, Ganika and their use in medival politics. *Vaishali ki Nagar vadhu* is based on the plot of the ritual to treat the ladies as a commodity during the old period. *Nishigandha* is the story of a proshit patita nayika and its place in society. The concept of *Nayika bhed* is also adopted from the walls of Khajuraho specially *Kandariya Mahadev* mandir. This temple has a number of beautiful *ganikas* busy in doing their make-up and other activities.The whole art of Khajuraho is based on *vatsyaayan's kamasutra* which exposes the face that Sex is a raw energy. It has to be transformed, and through transformation there is transcendence. Rather than transforming it, religions have been repressing it. And if you repress it the natural outcome is a perverted human being. He becomes obsessed with sex.

Khajuraho Festival is an initiative to celebrate this beauty and the brilliance, and to project these marvels. A platform for the exchange of like-minded ideas, and an endeavour to bring together the best of the minds of the country to reinvigorate the spirit of India's cultural unity. It's a way to celebrate Indian cultural pride.

Conclusion - All the temples are a wonderful treasure-house of beautiful and thought provoking statues. They all are present around the wall of the temple but inside, the walls are empty. why so? This is a wonderful question because at that time period, sex was considered as one of the practice to reach the god. This concept was taken with utmost seriousness that after knowing every mysterious pleasure of sexual practice the human mind becomes empty to attain the utmost pleasure to finally reach the abode of God.

and it is indicating as:

1. **Dharma (righteousness) -** represented by the duties of a human in their daily life
2. **Kama (desire) -** represented by erotic sculptures and sensual fulfilment in human life
3. **Artha (purpose) -** represented by the economic activities to make a living
4. **Moksha (liberation) -** represented by the diety inside the temple. Only after passing through the above stages (dharma, Kama and Artha) and leaving them behind, a human is eligible for attaining self-realisation or moksha. The temple symbolically represents dharma, kama, Artha on the outer walls. Only after a circular walk around the temple can one enter inside the temple to worship the god.

Khajuraho is like a journey of the universe, a blessing that can be received only by open minds ready to perceive everything this place has to offer.

References :-

1. M.R. Anand and Stella Kramrisch, *Homage to Khajuraho*,
2. Alain Daniélou, *The Hindu Temple: Deification of Eroticism*
3. Prasenjit Dasgupta, *Khajuraho*, Patralekha, Kolkata, 2014
4. Devangana Desai, *The Religious Imagery of Khajuraho*, Franco-Indian Research P. Ltd. (1996)
5. *Devangana Desai (2005).Khajuraho (Sixth impression ed.). Oxford University Press.*
6. Phani Kant Mishra, *Khajuraho: With Latest Discoveries,* Sundeep Prakashan (2001)
7. L. A. Narain, *Khajuraho: Temples of Ecstasy*. New Delhi: Lustre Press (1986)

****

GMO's Applications uses, advantages and dis-advantages

Sharad Kumar Singhariya*

Abstract - Genetically modified organisms (GMO's) are organisms in which the genetic material has been altered using recombinant DNA technology. Genetic manipulation involves a wide variety of modifications to produce nutritionally valued GM crops. In some cases, genetic modifications represent more faster and efficient mechanisms for achieving desired resulting traits. Production of GM food crops. Provides new ways to fulfill future food requirements but risk associated factors cannot be neglected. To overcome these problems and cope with the continuous increase in the number and variety of GMO's new approaches are needed. Different strategies can be used to identify, detect and quantify GM crops for increasing production levels with high efficiency. In this paper, we have discussed various features involved in production of GM crops, their uses and risk factors to adopt preventions and to overcome the related problems and also advantages and disadvantages of GMO's.
Key words - Genetic manipulation, GMO, crops, recombinant, gene transfer.

Introduction - Genetically modified organisms (GMO's) are the organisms whose genetic material has been modified through unnatural means. This technology has been used to transfer selected genes from one organisms to another organism. This technique is also referred as recombinant DNA technology and has been used around many countries of the world for creating GM crops. The new gene will contain desirable traits such as pest resistance, herbicide tolerance, drought resistance and enhanced nutritional values. These kind of desired genes are called novel genes. There has been substantial increase in area for GM crops throughout, many countries of the world, especially after the first GM crops was commercialized in 1996. The number of farmers who are planting GM crops across the world are about 12 million across 23 various countries. The desirable characteristics arose from naturally occurring variations in the genetic makeup of individual plants and animals. Hence, this type of natural genetic modification is the basis of evolution and breeding. The genetically modified can only be applied to products that have been genetically engineered. Application of genetic modification does not inherently increase or decrease the risk associated with the organism.

Biotechnology has contributed to the well being of the hungry is through higher incomes from production of GM cotton : only small set of countries have extend GM crops and most of them in a relatively minor way. GM plants manifest new traits via the expression of novel proteins encoded by inserted transgenes, for example, cotton modified to contain Bt ((*Baccillus thuringiensis*) gene and expressing Bt Insecticidal protein in its leaves and buds will be protected from caterpillar attack. Both the transgene and the novel protein in such plants could be considered as genetically modified. Genetically modified crops are the predominant GMOs introduced into the environment for food and feed production and to lesser degree for industrial applications, and are controversial for this reason GM plants used an agriculture are the largest class of GMOs intentionally introduced into the environment. GM crops are grown in varying amounts in select countries , the largest producers being the United States, Canada, Brazil, Argentina and India. The main traits introduced are herbicide tolerance and insecticide tolerance.

Genetically modified food crops : The GM products includes vaccines, food ingredients, medicines, feeds and fibres. The use of recombinant chymosin. In cheese production represents one of the first application of genetic engineering in the food industry. The flavr-savr tomato was considered to be one of the first genetically modified food crops derived from agrobacterium tumefacians is the most frequently used as a terminator in transgenic crops. Researchers are now trying to improve crops for production of nutritionally improved traits to gain health benefits. They have tried to develop GM crops resistance to certain pesticides and herbicides e.g. seed and soyabeans. Crop development is known for introducing novel traits and transgenic technology is currently being used for conventional breeding. A number of genetically modified crops are used to produce food ingredients like soya and maize. Soya beans can be processed to yield many different foods ingredients from soya protein and flour to oil lecithin used as emulsifiers. Similarly maize can be processed to yield a variety of ingredients from starch and sugars to oil and flour. Such advantages of GM crops would mitigate

*Assistant Professor (Botany) Govt. M.S. College for women, Bikaner (Raj.) INDIA

public hesitation about GM technology with the rapid advances in biotechnology, a number of transgenic crops carrying novel traits have been developed and released for commercial agriculture production. These include pest resistant cotton, maize, canola, herbicide, glyphosate resistant soyabean , cotton and viral disease resistant potatoes, papaya and squash in addition, various trans genic crops are under development and not yet commercially released with traits for biofortification, phytoremediation and production of pharmaceuticals, such as rice with high level of carotenoid for production of Vitamin - A like golden rice and bananas with vaccines. Tolerance of crops to herbicides has been achieved either by introducing a gene coding for a target enzyme insensitive to the herbicide or by introducing a gene encoding an enzyme metabolizing and detoxifying the herbicide. Major benefits exhibited by Bt resistant plants comprise improved crop yields, reduced use of chemical insecticides reduced levels of fungal toxins and preservation or enhancement of populations of Beneficial insects. Protection against viral disease has been achieved by expressing viral coat proteins or by introducing viral replicase genes. Resistance to fungi is conferred by GM induced bio synthesis of phytoalexins, by expression of Ribosomal inhibitor proteins specific to fungal ribosomes.

Methods used for analysis GM food - Polymerase chain reaction (PCR) can be used for analysis, detection and quantification of transgene DNA, a short sequence of DNA i.e. primer is added to a sample of the food to be tested. If primer match with any DNA in the sample was observed, PCR will cause this DNA to be amplified. The amplified DNA can then be stained and visualised to check the presence of transgene. Quantitative PCR can also be used to check the concentration of transgene in the sample. In general practice, it's sensitivity will depend on the nature of the food being tested and the transgene DNA sequence that is being sought.

Advantages of GMO's : Following are the some advantages -

1. **Pest resistance :** Growing genetically modified crops such as B.T. Corn help eliminate the application of chemical pesticide and reduce the cost of bringing a crop to market.
2. **Herbicide tolerance :** Crop plants genetically engineered to be resistant to one very powerful herbicide could help prevent environmental damage for exp. Monsanto has created strain of Soybean genetically modified to be not a affected by their herbicide product round up there are many viruses , fungi and bacteria that cause plant disease, plant biologist are working to create plants with genetically engineered resistance to these disease.
3. **Cold tolerance :** An antifreeze gene from cold water fish has been introduced into plants such as tobacco and potato due to this gene these plants are able to tolerate cold temperature.
4. **Drought and Salinity Tolerance :** Creating plants that can withstand long period of drought or high salinity in soil and ground water will help people to grow crops in formerly inhospitable places.
5. **Nutrition :** Rice and some other plants which are main food in third world countries could be genetically engineered to contain additional vitamins and minerals due to this nutrient deficiencies could be alleviated.
6. **Phyto remediation :** Soil and ground water pollution continues to be a problem in all parts of the world. Plants such as poplar trees have been genetically engineered to clean up heavy metal pollution from contaminated soil.

Disadvantages of GMO's : The pros and cons for using GMO's are vast and varied but there is little argument over the uncertain consequences of this relatively new science.

1. **Long Term Health Effect** : The long term health effect on humans may be adverse due to prolong use of genetically modified food.
2. **Gene Spilling** : Releasing pollen from genetically altered plants into the wild via wind and insects could have dramatic effects on the surrounding ecosystem but there in no long term research yet available to gauge the impact.
3. **Reduced Biodiversity** : As genetically engineered crop consume more and more acreage. The number and variety of wild species is reduced such alignment threatens the biodiversity and have adverse effect on biodiversity.
4. **Genetic Consequences** : The artificial insertion of genes into organisms could destabilize that organism, encouraging genetic mutations that could be detrimental either to the environment, to humans or both.
5. **Animals** : GMO's pose a potential risk to insects particularly these involved in pollination of GMO's crops, as well as birds, insects, organisms in soils and water.
6. **Human health** : Human health is also at stake GMO plants may create new allergens or unintentionally confer antibiotic resistance in humans.
7. **Food supply at risk** : As the reliance on GM seeds expands worldwide, concerns about food supply and safety continue to escalate genetically engineered seeds are identical in structure and a problem affects one particular crop a major crop failure can result.
8. **In environmental destruction :** Most GMO seeds are genetically engineered to herbicide tolerant insect and disease resistant. Environmentalists worry about those characteristics of GM crops may serious long term impact on environment.

Risk factors and preventions : Horizontal gene transfer of pesticide , herbicide, or antibiotic resistance to other organisms would not only put humans at risk, but it would also cause many ecological imbalances allowing some plants to grow uncontrolled leading to spread of disease among both plants and animals. Horizontal gene transfer occurs naturally at a very low rate and cannot be simulated. In an optimized laboratory environment. In contrast, the alarming consequences of vertical gene transfer between GMOs and their wild type counter parts have been highlighted by studying transgenic fish released into wild populations of same species. According to some studies,

GM food crops have not yet been commercially grown in developing countries. This is due to the reason that government authorities in most developing countries have not given farmers official permission to plant any GM crops because of safety concerns. Nearly 70% of poor and food insecure people live in rural areas in developing countries, low production in agriculture is major cause of poverty, food insecurity and poor nutrition, genetic engineering can help to facilitate agricultural and rural growth through high yielding varieties resistant to biotic and abiotic stresses, to reduce pest associated losses and to enable precision agriculture use of right inputs at the right time. Recombinant DNA technique should be increasingly used to improve the nutritional status of crops essential for the population in developing countries.

Conclusion - As a nut-shell although genetically modified organisms have a lot of advantages but still face many ethical issues related to the growing and consumption of genetically engineered crops. They hold potential to greatly increase the nutritional value of food as well as the productivity of crops while at the same time provide many safety as well environmental concerns. These decisions need to be looked at by all of humanity since everyone is directly affected by the choice. GMOs can potentially solve many hunger and malnutrition problems in the world as well as help protect and preserve the environment by increasing yields and reducing reliance upon chemical pesticides and herbicides. It is important to proceed with caution to avoid unfavourable consequences for the surroundings and our health considering that genetic engineering technology is very powerful. Remember that there are really potential benefits and risks to these products.

References :-

1. Tames C (2001). Global Review of commercialized Transgenic Crops 2001, ISAAA Brief No. 24, New York.
2. Huang, J., S.D. Rozelle, C.E. Pray and Q. Wang. 2002 “Plant Biotechnology in China” Science, 295 (January 25) : 674-77.
3. Lee, M. ((2009). E V Regulation of GMOs. Law and Decision making for a new technology. Biotechnology Regulation Series (Massachusetts Edward Elgar publishing, Inc.), 274.
4. Sharma D. From hunger to hidden hunger. Bio Spectrum, 2003 ; 1 (3) : 40-1.
5. Galun, E. Breiman, A. 1997. Transgenic plants imperial course Press London.
6. Malik, V.S. 1999 Biotechnology : Multi Billion Dollar Industry.
7. Chopra, V.L. Malik, V.S. Bhatt Applied plant Biotechnology. Science New Hampshire, 1-69.

****

मकान की समस्या

कुलदीप *

प्रस्तावना – शहरों एवं महानगरों में मकान की समस्या को लेखक ने अपने उपन्यास 'मकान' के माध्यम से पाठक को अवगत कराने का प्रयास किया है। भोजन, वस्त्र एवं मकान हमारे जीवन की मूलभूत आवाश्यकताएँ हैं, किसी एक के अभाव में जीवन जीना दुष्कर हो जाता है। नारायण एक संगीतकार एवं सितारवादक है। संगीत साधना से परिवार का खर्च पूरा न होने के कारण वह आजीविका कमाने लखनऊ आता है, उसे लखनऊ के एक सरकारी दफ्तर में नौकरी मिल जाती है, नारायण रोज सरकारी दफ्तर में जाता है, उसे मकान तो नहीं मिलता परन्तु मकान के नाम पर सान्त्वना अवश्य मिलती। जनसंख्या वृद्धि आज हमारे देश की बहुत बड़ी समस्या है जिसके कारण महानगरों में मकान मिलना कितना कठिन है। भाई-भतीजेवाद के कारण उच्चवर्गीय लोगों को मकान पहले बिना किसी कठिनाई के उपलब्ध हो जाना एवं नारायण जैसे मध्यवर्गीय व्यक्ति को मकान के लिए रोज दफ्तर के चक्कर लगाना पड़ता है, इसके अतिरिक्त एडमिनिस्ट्रेटर जैसे उच्च पदों पर आसीन व्यक्तियों का अपने कार्य के प्रति उदासीनता, मकान मिलने के मार्ग में बाँधा के रूप में खड़ी हो जाती है। यह समस्या सिर्फ नारायण की नहीं है, वरन नौकरी पेशा करने वाले प्रत्येक मध्यवर्गीय परिवार की है, जो अपना घर छोड़कर आजीविका कमाने के लिए शहरों में आते हैं। लेखक ने अपने उपन्यास 'मकान' में नारायण के माध्यम से मध्यवर्गीय परिवार की समस्याओं से पाठक को अवगत कराना चाहता है।

नारायण मकान एलाट करने वाले एडमिनिस्ट्रेटर से बार-बार निवेदन करता वह मकान के लिए प्रतिदिन दफ्तर के चक्कर लगाता वह अपनी पारिवारिक समस्याओं को अफसर से बताता, कि मुझे मकान की बहुत आवश्कता है तब एडमिनिस्ट्रेटर उसे मकान देने की सान्त्वना देता परन्तु मकान नहीं देता। इनसे मकान उपलब्ध कराना बैल दुहने जैसा था। एक बार मकान के लिए सिफारिश करने एक नेता आये। नेता ने नारायण से वहाँ आने का कारण पूछा नारायण अपनी सारी समस्याओं एवं मकान की अर्जी के बारे में नेता से कहा, 'तुम अपने साहब को नहीं जानते। ये तुम्हें सब-कुछ देंगे, बस मकान नहीं देंगे।'[1] नेता ने अफसर से कहा, भाई हमें नहीं मकान दे रहे हो, तो इन्हीं को पहले मकान एलाट करा दो। इसके बाद भी अफसर ने नारायण को मकान नहीं एलाट करता, मजबूरन नारायण को प्रिंस होटल में एक तंग कमरे में जीवन जीने के लिए मजबूर होना पड़ा, नारायण संगीत के माध्यम से स्वयं को प्रसन्न रखने का प्रयास करता, लेकिन जब होटल मालिक ने सितार बजाने से रोक लगा दिया, तब ऐसा मालूम पड़ा यह नियन्त्रण उसके हृदय पर लगा दिया गया हो। अखबार में मकान खाली होने का समाचार पढ़कर नारायण बारीन-दा के साथ मकान की समस्याओं के बारे में बात करते हैं, वह उन्हें कमरा दिखाता है, नारायण कमरा देखते ही कल्पनाओं में खो जाता है उसे ऐसा लगता है वह यहाँ बैठकर पहले कभी सितार बजाया था परन्तु अगले ही छड़ जब उसे यह पता चलता है कि मकान उठ गया है, तो उसकी खुशी अवसाद में बदल जाती है उसे यह एहसास होता है कि नियति ने उसके भाग्य में प्रिंस होटल का वह तंग कमरा ही ढूँढ़ रखा है। बारीन-दा ने नारायण से कहा, हम लोग आन्दोलन करके एडमिनिस्ट्रेटर को हटायेंगे। शायद कोई दूसरा व्यक्ति आ जाये और वह काम को सही ढंग से करे। 'बताऊँ हम लोग हटायेंगे। एक महीने में नगर-निगम में वो-वो आतिशबाजियाँ छूटेंगी कि देखना तुम्हारा एडमिनिस्ट्रेटर अस्पताल में ब्लड-प्रेशर लेकर पड़ा होगा। या, क्या पता बड़ा आदमी है: हार्ट अटैक ही हो जाये।'[2] बड़े लोगों को उनके पद से हटाना कोई आसान काम नहीं है, इसके लिए बहुत हिम्मत शक्ति एवं ऊपर तक पहुँच की आवाश्यकता होती है। बारीन-दा के साथ सब कुछ विपरीत हो गया। एडमिनिस्ट्रेटर, तो पहले की ही तरह दफ्तर में विराजमान रहा, तथा बारीन-दा उसे अस्पताल पहुँचाते-2 खुद ही अस्पताल पहुँच गये।

नगरों में मकान की समस्या दिनों दिन विकराल रूप धारण कर रही है। नगरों में मकान की समस्या का प्रमुख कारण नगरों की आबादी का बढ़ना है, क्योंकि अधिकांशत: उच्च शिक्षण संस्थान, सरकारी दफ्तर, उद्योग-धन्धे फैक्टरियों का विकास शहरों में ही किया गया है, जिसके कारण लोगों को मजबूरन रोजगार एवं उच्चशिक्षा प्राप्त करने के लिए शहरों में आना ही पड़ता है। यही हाल नारायण का भी था सरकारी दफ्तर का कर्मचारी होने के बाद भी जब उसे सरकारी मकान उपलब्ध नहीं हो पाता, तो वह प्रिंस होटल में रहने के लिए बाध्य हो जाता है नारायण लगातार समस्याओं से जूझने के कारण उसे अपने जीवन से घुटन सा महसूस होने लगता, और तब उसका वैयक्तिक पतन प्रारम्भ हो जाता है।

उस दिन जब प्रिंस होटल में अफसर ने आकर कहा, 'तुम्हें मकान मिल गया है तब मेरी चेतना पथरायी हुई थी। उस पर ये शब्द कुछ इस तरह गिरे थे जैसे लगातार वर्षा से गीली जमीन पर बाल्टी की कुछ बूँदें गिरी हों। उस समय इन बूँदों का गीली मिट्टी पर कोई स्वतन्त्र आकार नहीं बना।'[3]

लेखक के कहने का यह आशय है कि कोई भी वस्तु जब हमें उस समय प्राप्त होती है, जब मन में उसे पाने की लालसा ही समाप्त हो जाती, तब वह मिलने पर भी न मिलने के बराबर होती है। यही हाल नारायण का भी था। पहले वह मकान के लिए बहुत लालायित रहता था। मकान मिलने के लिए वह प्रतिदिन अफसरों से सिफारिश करता है, तथा प्रतिदिन मकान पाने के सपने देखता, परन्तु जब लगातार दफ्तरों का चक्कर लगाना एवं मकान के लिए अफसरों से सिफारिश करते-2 तंग आकर नारायण के अन्दर सरकारी मकान पाने की इच्छा ही समाप्त हो जाती है, और जब उसे मकान मिलता है

* शोधार्थी, माधव महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

तब उसे मकान पाने की कोई ख़ुशी नहीं रहती वह मकान एलाट होने के कई हफ़्तों तक उसे देखने नहीं जाता है। नारायण को लगता है कि होटल ही उसकी कुटिया है। इसी कारण अफसर द्वारा मकान मिलने की सूचना उसके ऊपर कोई प्रभाव नहीं डाल पाती।

अनेक समस्याओं का सामना करने के बाद जब नारायण को मकान उपलब्ध होता है, तब मकान मिलने के बाद भी वह मकान का सुख नहीं भोग पाता। वह अपनी पत्नी मीनाक्षी एवं बच्चे के साथ मकान में जाने की तैयारी करता है। नारायण जब अपने होटल के कमरे में ताला लगाकर आश्रम जाने के लिए तैयार होता है। बस से उतरने के बाद आश्रम तक पहुँचने के लिए रिक्शे का सहारा लेता है। उसे लगता है पत्नी के आने के बाद सारी चीजों पर अंकुश लग जायेगा रिक्शे में बैठा वह कल्पनाओं की दुनिया में खो जाता है। वह श्यामा के होठों को याद करता है, जिसकी अब मृत्यु हो गई है। नारायण ने रिक्शेवाले से अकबरी मुहल्ले की ओर मुड़ने के लिए कहा, क्योंकि सिम्मी से मिलने के लिए नारायण का मन लालायित हो रहा था मकान के लिए भटकता नारायण पुरानी शिष्या श्यामा एवं नई शिष्या सिम्मी के बीच मन का आश्रय ढूँढ़ता है। इसी कारण मकान मिलने के बाद एवं पत्नी के आने की आशा के बाद भी वह श्यामा एवं सिम्मी के बीच अपने मन के प्रेम का स्थान ढूँढ़ता है, और हिंसक उत्तेजना का शिकार हो जाता है।

'रम की बोतल नाली में पड़े हुए मुर्दे के पेट के नीचे दबी पड़ी थी और खून एवं कीचड़ में लथपथ होने के बावजूद सुरक्षित थी। हवा बन्द थी, पर उल्टे हुए रिक्शे का अगला पहिया अब भी धीरे-धीरे घूम रहा था।'[4] सिम्मी के गली की ओर जाते समय ही कुछ व्यक्यिों ने नारायण के पेट में छूरा घोंप कर उसकी हत्या कर दी तथा रिक्शे को भी इसके ऊपर उलट दिया। नारायण बनर्जी को इतनी समस्याओं एवं यातनाओं को झेलने के बाद मकान उपलब्ध होता है, वह अपने परिवार के साथ मकान में जाने वाला था, परन्तु उसके भाग्य में मकान का सुख नहीं लिखा था मकान में जाने से पहले ही नारायण का इतना दु:खान्त अन्त पाठक को शोकाकुल कर देता है।

निष्कर्ष- अन्त में हम कह सकते हैं, कठोर एवं निर्मम व्यक्ति को अगर मकान नहीं मिलता है, तो वे कहीं भी रहकर अपना जीवन निर्वाह कर लेते हैं, परन्तु कलाकारों का मन बड़ा कोमल होता है उन्हें रहने के लिए मकान के साथ-2 मन के लिए भी आश्रय ढूँढ़ना पड़ता है। अगर संगीतकार नारायण बनर्जी को समय से मकान मिल गया होता, तो वह अपनी पत्नी एवं बच्चे के साथ प्रसन्नता पूर्वक रहता, तो शायद उसकी मृत्यु भी न होती और वह श्यामा एवं सिम्मी के प्रसंग से बच जाता। सुप्रसिद्ध उपन्यासकार शुक्ल जी की कृति मकान पाठक को चिंतन के लिए विवश कर देती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मकान, श्रीलाल शुक्ल, पृ0 91, राधाकृष्ण प्रकाशन, पाँचवाँ संस्करण, जी-17 जगतपुरी दिल्ली-110051
2. मकान, श्रीलाल शुक्ल, पृ0 112, राधाकृष्ण प्रकाशन, पाँचवाँ संस्करण, जी-17 जगतपुरी दिल्ली-110051
3. मकान, श्रीलाल शुक्ल, पृ0 196, राधाकृष्ण प्रकाशन, पाँचवाँ संस्करण, जी-17 जगतपुरी दिल्ली-110051
4. मकान, श्रीलाल शुक्ल, पृ0 237, राधाकृष्ण प्रकाशन, पाँचवाँ संस्करण जी-17 जगतपुरी दिल्ली-110051

****

कला और संस्कृति

डॉ. मन्जू गर्ग *

प्रस्तावना – प्रकृति और मानवता में जो सत्य और सौन्दर्य देखने को मिलता है, कला उसी का उद्घाटन करती है। मानव की मूल उदान्त भावनाओं के साथ कला का जो घनिष्ठ सम्बन्ध है, हमारे जीवन के समस्त क्रिया-कलापों में उसकी झलक स्वत: ही देखने को मिल जाती है। इससे कला का रुप समाज के साथ एकाकार होकर मानव समाज का अपेक्षित अंग बनता है इसकी शक्ति में वृद्धि होती है एवं उसके तत्व प्रस्फुटित होकर जन-मन में प्रफुल्लित हो जाते हैं। इसके द्वारा मनुष्य की कल्पना शक्ति और व्यापक होती है जिससे नवीन सृष्टि का सृजन होता है। यही कल्पना शक्ति हम आदिम मानव की कला में भी देखते है और जैसे-जैसे मानव मस्तिष्क का विकास होता गया उनकी कल्पना शक्ति भी और व्यापक होती गई। आज का सुसंस्कृत मानव का मानसिक स्तर जिस सीमा तक पहुँच चुका है 'संभवत:' आदिम मानव ने इसकी कल्पना भी नही की होगी। इस मानसिक उन्नति के साथ कला के स्तर में भी महान परिवर्तन हुए और उन समस्त परिवर्तनों में यद्यपि, कला के मूल तत्व शुद्ध रुप में विद्यमान रहे, तथापि उसके रुप और गति में अलौकिक परिवर्तन हो गये। आज के मनुष्य की रुचि और अभिरुचि परिष्कृत एवं उदान्त बन गयी। जिस प्रकार विज्ञान के मूल में जिज्ञासा की भावना कार्य करती है उसी प्रकार कला के मूल में सौन्दर्यानुभूति की मौलिक पिपासा उसे गतिमान बनाकर तन्मयता की भावना को बल प्रदान करती है।

आदिकाल से लेकर अब तक मनुष्य जीवित रहने के लिए स्वयं पर ही निर्भर नही रह सकता। उसकी इस प्रवृत्ति ने पारिवारिक जीवन को जन्म दिया। छोटे-छोटे समुदायों में रह कर एक ओर वह अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है तो दूसरी ओर परिवार से बढकर समाज, देश, जाति, राष्ट्र और विश्व के प्रति लगाव की भावना को जन्म देता है। इस कारण संगठनात्मक जीवन, जिसका स्वरुप पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय एवम् विश्व बन्धुत्व के रुप में दिग्दर्शित होता है। मानव और प्रकृति के सम्बन्ध एक दूसरे को जीवन देने में सहायता करते रहे। इस पारस्परिक योगदान के फलस्वरूप सामाजिक गतिविधियों और क्रिया-कलापों का एक विशिष्ट रुप समय-समय पर सामने आता रहा है। यह मानव सभ्यता और संस्कृति के नाम से प्रख्यात है। इस संस्कृति की जन्मदात्री जहॉ एक ओर प्रकृति के संयोग और समय की गति है वहीं दूसरी ओर स्वयं में मानव-जीवन है।

संस्कृति की उन्नति और वृद्धि के माध्यम की श्रेणी के रुप में जिस तत्व का सर्वाधिक प्रयोग होता है वह है शिक्षा। शिक्षा का तात्पर्य है, 'आगे बढाने की शक्ति' अर्थात बालक में निहित समस्त शक्तियों की वृद्धि करना, उनकी उन्नति करना एवम् उन्हे बाहर प्रकाश में लाना। व्यक्ति और समाज के आपसी सम्बन्ध एवम् उसकी प्रगति हेतु किये गये प्रयास में जो कुछ भी किया गया वह समस्त हमारी संस्कृति का प्रतीक है। शिक्षा और ज्ञान ने इसके निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। शिक्षा ने संस्कृति के निर्माण में मानव का निर्देशन किया एवम् उसके क्रिया-कलापों को अनुशासित किया। इस भैतिकवादी युग में भी लक्ष्य और माध्यम के सिद्धान्त से परे मानव की सांस्कृतिक प्रवृत्ति ने ही विश्व की भयंकर विनाश से रक्षा की है। शिक्षा के भौतिक एवं निम्नस्तरीय लक्ष्य को सांस्कृतिक नियन्त्रण में रखने का सिद्धान्त जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कार्य करता है।

मानव के मन में स्वयं एवम् अपने से जुडे समस्त व्यक्तियों के लिये सुख और आनन्द प्राप्त करने की एक अभिलाषा बनी रहती है इसका मुख्य कारण अपने आप से जुडे प्रत्येक व्यक्ति के प्रति उसके लगाव व प्रेम को दर्शाते हैं। क्योकि वह किसी भी वस्तु का आनन्द अकेले ही प्राप्त नही करना चाहता है बल्कि वह चाहता है कि उसका परिवार, सम्बन्धी व समाज भी उस आनन्द को प्राप्त करें। उसका यह कार्य प्रत्येक मानव के हित और कल्याण की भावना का पोषण करता है तथा उस परमशक्ति के प्रति श्रद्धा का भाव भी रखता है। आन्तरिक भावनाओं की तृप्ति एवम् ईश्वर के प्रति भक्ति भावना की शक्ति हेतु शैक्षणिक एवम् सांस्कृतिक दोनो नियन्त्रण आवश्यक हैं। क्योकि ये दोनो एक दूसरे के पूरक हैं। हमारी सांस्कृतिक गतिविधियां एवम् हर्षोल्लास हमारी चेतना व क्रियाशीलता पर निर्भर करते हैं।

शिक्षा और संस्कृति का परस्पर सम्बन्ध है। इनके द्वारा हमारा बौद्धिक विकास बढता है। शिक्षा पर संस्कृति का नियन्त्रण अति आवश्यक है अन्यथा कहीं ना कहीं सम्भावना बनी रहती है कि शिक्षा द्वारा अर्जित ज्ञान कीं मानवता को विनाश की ओर न ले जाये। अनेक वैज्ञानिक अन्वेषणों की सम्भावना उच्च स्तरीय शिक्षा के बिना सम्भव नही है इसके लिये लगन, मेहनत, कठिन परिश्रम व साधना की आवश्यकता होती है। किन्तु इस सम्पूर्ण साधना का लक्ष्य मानव कल्याण की भावना उसकी उन्नति, सुख शान्ति व भलाई में निहित होना चाहिए। इसी कारण योग साधना पर सांस्कृतिक नियन्त्रण की आवश्यकता पर बल दिया गया है। सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में शिक्षा और ज्ञान का स्वरुप शुद्ध, सात्विक और निर्मल बन जाता है। क्योकि समाज और संस्कृति का निर्माण एक दिन की बात नही है। इसका सृजन तो अनवरत कालखण्ड से चला आ रहा है। यही सांस्कृतिक चेतना और उससे प्रभावित ज्ञान का स्वरुप सौन्दर्यात्मक चेतना को जन्म देता है। कला सौन्दर्य सृजन का सबसे बडा माध्यम है। एवम् संस्कृति उस व्यापक सौन्दर्य की परिभाषा को प्रकाश में लाती है। इस प्रकार संस्कृति कला के सौन्दर्यात्मक सृजन को जहाँ एक ओर दिशा प्रदान करती है, निर्देशित करती है वहाँ दूसरी ओर उस सौन्दर्य की लोकप्रियता एवम् शुद्धता को भी प्रमाणित करती है।

* प्राचार्या, हिन्दू महिला महाविद्यालय, शामली (उ.प्र.) भारत

संस्कृति के व्यवहारिक स्वरुप में दृष्टिगत होने वाले दर्शन के इतिहास का माध्यम कला है। कला इस संस्कृति के इतिहास को सरस और प्राणमय स्वरुप प्रदान करती है। कला और संस्कृति की पारस्परिक आत्मनिर्भरता इस सीमा तक पहुँच जाती है कि वे एक स्थल पर आकर एक दूसरे के पूरक प्रतीत होने लगते हैं। एक कलाकार की कला की विषयवस्तु बाह्य जगत के अनुभवों पर ही आधारित रहती है। एक कलाकार की अभिव्यक्ति समस्त मानसिक प्रक्रिया में अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है। इसी की सफलता पर कला की सफलता निर्भर करती है। प्रत्येक मनुष्य के स्वभाव में भिन्नता देखने को मिलती है। संस्कृति के सामान्य रुप के विकास का चरम लक्ष्य एक पूर्ण मानव को जन्म देना है। वह परमशक्ति जो इस जन्म का कारण बनती है, वह ब्रह्म शक्ति ही है। प्रत्येक मनुष्य में कोई न कोई गुण अवश्य विद्यमान रहता है जो उसे वह अपने आत्मभिव्यक्ति के माध्यम से प्रदर्शित करता है।

संस्कृति शब्द का निर्माण कब हुआ। इसके विषय में स्पष्टत: कुछ नही कहा जा सकता। अंग्रेजी में इस शब्द के लिये Culture शब्द का प्रयोग किया जाता है। जो लैटिन शब्द कल्ट (Cult) से लिया गया है जिसका अर्थ है हमारे कार्यो को विकसित या परिष्कृत करना। संस्कृति शब्द सम् उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु में क्तिन् प्रत्यय लगाने से बनता है जिसका अर्थ है वह कार्य जो भलीभाँति किया गया हो तथा विभूषित अथवा अलंकृत भी हो। संस्कृति स्थान के अनुसार परिवर्तित होती रहती है इतिहास के कालक्रम में घटित घटनाएं उसे विकसित करती है। मानव समाज के विकास के साथ-साथ संस्कृति का विकास भी होता रहा, जैसे-जैसे मानव समाज उन्नत होता रहा वैसे-वैसे संस्कृति भी उन्नत होती रही। प्रत्येक पीढी के लिए नई संस्कृति, नई भाषा या निर्माण की आवश्यकता नही लगी बल्कि हमारी पूर्व पीढियों द्वारा प्रदान हमारी भाषा, संस्कृति रहन सहन के आधार पर ही हमने विकास किया। यह हमारी संस्कृति ही है कि हमने हमेशा अपने पूर्वजों का सम्मान किया एवम् उनके द्वारा स्थापित मूल्यों के आधार पर ही उसी कालक्रम में आगे बढे और विकास किया।

आदिम युग में जब मनुष्य हर बात से अनजान या अनभिज्ञ था तो भी उसकी तीन मुख्य क्रियाएं रही पहली जीवित रहने के लिए भोजन की आवश्यकता एवम् उसकी पूर्ति हेतु शिकार करना, कंदमूल खाना आदि एवं दूसरी परमशक्ति के समक्ष नतमस्तक हो जाना। एवम् तीसरी अपने आनन्द व मनोरंजन हेतु कलात्मक गतिविधियां जैसे नृत्य करना, आखेट करना, भित्ति चित्रांकन करना इत्यादि। मानव की प्रारम्भिक अवस्था से ही उनके क्रियाकलापों में कलात्मक तत्व का समावेश देखने को मिलता है। विश्व की पहली प्रमुख सभ्यता 'सिन्धु घाटी' की सभ्यता जिसमें मानव ने अभूतपूर्व अकल्पनीय, अद्‌भुत उपलब्धि प्राप्त की। उपलब्ध प्रमाणों से हमें उस काल की महान सभ्यता और संस्कृति का पता चलता है। कला, संस्कृति और साहित्य का स्वरुप समय के बदलते कालक्रम के अनुसार उस समय की भोगौलिक, राजनैतिक व धार्मिक मान्यताओं के अनुसार परिवर्तित होता रहा है। हम उतने ही हमारी संस्कृति के उत्पाद हैं जितना संस्कृति हमारी उपज।

भारतीय संस्कृति का सबसे अच्छा पहलू यह है कि इसका स्वरुप चिरस्थाई है। प्राचीन काल से लेकर आज तक हमारे देश में विभिन्न परम्पराएं, रीति-रिवाज और प्रथाऐं विकसित हुई उनमें से समयानुसार कुछ परम्पराएं व प्रथाएं निरन्तर गतिमान रही तो कुछ समयानुसार परिवर्तित हो गयी। आज अनेक प्राचीन परम्पराएं और रीति-रिवाज अस्तित्व में नही है परन्तु उनका अस्तित्व बदलते हुए स्वरुप में आज भी विद्यमान है। भारत के प्राचीन इतिहास पर यदि हम दृष्टि डालें तो हम देखते है कि समय-समय पर भारत की एकता, अखंडता पर प्रहार होते रहे भारत पर किये गये आक्रमणों के साथ भारतीय संस्कृति में नये आयाम जुडते गये या बलपूर्वक जोडे गये तब भी भारतीय संस्कृति ने अपनी मौलिकता को नही त्यागा। बोलचाल और साहित्य की भाषा के रुप में हम उर्दू, फारसी और अंग्रेजी भाषा को उसी प्रकार स्वीकार करते हैं जैसे हम अपनी स्थानीय भाषा या हिन्दी को स्वीकार करते है। यही भारतीय संस्कृति की महानता है कि वह अपने अस्तित्व को सहेज कर रखने के साथ-साथ अन्य संस्कृतियों को अपने में समाहित कर उसमें एकाकार हो जाती है। मानव संस्कृति का सम्बन्ध ज्ञान, कर्म तथा रचना से है, किन्तु इसके लिये यह भी आवश्यक है कि संस्कृति संस्कार सम्पन्न अथवा विभूषित हो। भारत की प्राचीन संस्कृति का इतिहास अत्यन्त गौरवशाली है।

इसने सभ्यता के प्रारम्भ से ही विश्व में आदरपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। अपने विशिष्ट तत्वों के कारण ही भारतीय संस्कृति ने विश्व के देशों में अपनी महत्ता को बनाये रखा। भारत में सभ्यता का उदय तथा विकास ईसा के कई सदियों पूर्व हुआ। प्रागैतिहासिक उपकरणों से पता चलता है कि विश्व के अन्य भागों के साथ ही भारत में भी मानव संस्कृति का प्रारम्भ हुआ सैन्धव सभ्यता की खोज से भरतीय संस्कृति की प्राचीनता का पता चलता है। यूनान, रोम आदि देशों में सभ्यता का प्रादुर्भाव भारत के बहुत बाद में हुआ। इस प्रकार भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में सर्वप्रमुख है। प्राचीनतम होने के साथ ही उसमें निरन्तरता और चिरस्थायिता भी है जो विश्व की अन्य संस्कृतियों में दृष्टिगोचर नही होती। भारत का अतीत उसके वर्तमान जीवन से अविच्छिन्न रुप से सम्बद्ध है। इस संस्कृति के मूल तत्व इतने स्थायी है कि समय का प्रवाह एवम् प्रहार उन्हे विलुप्त लही कर पाया है। शताब्दियों के परिवर्तनों के पश्चात भी भारतीय संस्कृति की आत्मा समान रही है। भारतीयों के लिए उनकी प्राचीन भाषा, साहित्य, धर्म, दर्शन, आचार-विचार आज भी उनते ही मूल्यवान बने हुए है जितने प्राचीन समय में थे। यह निरन्तरता भारतीय संस्कृति की अपनी एक अलग पहचान है जो हमें आज भी बांधे हुये है। भारतीय संस्कृति के सम्मुख चाहे जितनी चुनौतियां आई परन्तु वह अपनी ही दृढता के साथ खडी रही और समय की कसौटी पर खरी उतरी। आध्यात्मिकता अथवा धार्मिकता एक प्रकार से भारतीय संस्कृति के प्राण है जिसने इसके सभी अंगो को प्रभावित किया है। भारतीय संस्कति ने प्रतिकूल परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाकर अपने में समाहित कर लेने की अद्‌भुत शक्ति है।

ऐतिहासिक काल से लेकर मध्यकाल के पूर्व तक भारत पर अनेक जातियों के आक्रमण हुए। भारतीय संस्कृति ने पहले तो इनके प्रबल प्रहार को झेला फिर इन विदेशियों को अपनी ही धारा में समाहित कर लिया। हिन्दू धर्म की यह सर्वप्रमुख धारणा रही है कि ईश्वर एक है तथा संसार के सभी धर्म सच्चे और अच्छे है। समन्वय की यह प्रवृत्ति विश्व के किसी अन्य संस्कृति में नही दिखायी देती। भारतीय संस्कृति धार्मिक विषयों में सहिष्णुता का उपदेश देती है। संकुचित मनोवृत्ति एवम् धर्मान्धता इसमें नही देखने को मिलती सार्वभौमिकता के साथ इसमें अपनी उन्नति के साथ-साथ समस्त विश्व के कल्याण की भी कामना की गयी है। भारतीय परम्परा में कला को लोकरंजन का समानार्थी निरुपित किया गया है। इसका एक अर्थ कुशलता अथवा मेधाविता भी है कोई भी कला वहां के निवासियों के विचारों एवम् विश्वासों को समझने का एक सबल माध्यम है। कला अपने समाज का ही प्रतिबिम्ब होती है। अपने देशकाल, राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक आदि

दायरों में बंधी होती है। भारतीय कला की कुछ ऐसी विशषताएं है जो इसे अन्य देशों की कलाओं से प्रथम करती है। लगभग पांच सहस्त्र वर्ष पुरानी सैन्धव सभ्यता की कलाकृतियों से लेकर बाहरवीं शताब्दी तक की कलाकृतियों में एक अविच्छिन्न कलात्मक परम्परा प्रवाहित होती हुई दिखाई पडती है। भारतीय कला के विभिन्न तत्वों जैसे नगर विन्यास, स्तम्भयुक्त भवन निर्माण, मूर्ति निर्माण, भित्ति चित्र, लघु चित्र आदि का जो रुप हमे भारत की प्राचीन सभ्यता में दिखाई देता है वो तत्कालीन ऐतिहासिक गौरवशाली इतिहास को दर्शाता है।

भारतीय संस्कृति का प्रधान तत्व धार्मिकता अथवा आध्यात्मिकता की प्रबल भावना है। जिसने सभी पक्षों को प्रभावित किया है। इसके सभी पक्षों- वास्तु या स्थापत्य, तक्षण, चित्रकला आदि के उपर धर्म का व्यापक प्रभाव देखा जा सकता है। हिन्दू, जैन, बौद्ध, आदि धर्मो सेसम्बन्धित मन्दिरों, मूतियों तथा चित्रों का निर्माण कलाकारों के द्धारा किया गया। किन्तु इसका अर्थ यह नही कि इसमें लौकिक विषयों की उपेक्षा की गयी। धार्मिक रचनाओं के साथ-साथ भारतीय कलाकारों ने लौकिक जीवन से सम्बन्धित मूर्तियों अथवा चित्रों का निर्माण भी बहुतायत में किया है। इस प्रकार धर्मिकता और लौकिकता का सुन्दर समन्वय हमें भरतीय कला में देखने को मिलता है। जो भारतीय संस्कृति की अम्टि छाप छोडता है। सच्चा कलाकार अपनी कुशलता का प्रदर्शन शरीर की यर्थाथ चित्रण करने अथवा सौन्दर्य को उभारने में ही सक्षम नही है अपितु वह आन्तरिक भावों को भी कुशलता से उभारने के प्रयास सफल रुप से करता है क्योंकि वह अपनी संस्कृति, समाज एवम् परिवेश से जुडा हुआ है और यह जुडाव इतना गहरा है जो उसे सात्विकता की ओर ले जाता है। इसका सबसे सुन्दर उदाहरण हमें विशुद्ध भारतीय शैली में बनी बुद्ध मूर्तियों में देखने को मिलता है। जहां गन्धार शैली की मूर्तियों में बौद्धिकता एवम् शारीरिक सौन्दर्य की प्रधानता है वहां गुप्त कालीन मूर्तियों में आध्यात्मिकता एवम् भावुकता है। भारतीय कलाकार ने बुद्ध मूर्तियां बनाते समय उनके मुखमण्डल की आभा में जो तेज, शान्ति, गम्भीरता एवं अलौकिक आनन्द की ओर विशेष ध्यान दिया है उसमें उसका कोई मुकाबला नही है। भारतीय कलाकार का आदर्श इतना ऊंचा था कि उसने कला को इन्द्रिय सुख की प्राप्ति का साधन न मानकर परमानन्द की प्राप्ति का साधन स्वीकार किया। अजन्ता और एलोरा के भित्ति चित्रण में अंकित आकृतियों का जो सौन्दर्य हमे अपनी ओर आकृषित करता है वह हमें अभूतपूर्व आनन्द की प्राप्ति कराता है उस समय के कलाकार के लिए आकृतियों का चित्रांकन रुप या सौन्दर्य पाप वृत्तियों को उकसाने का साधन नही था अपितु उसका उद्देश्य चित्रवृत्तियों को ऊंचा उठाना था। जो उनके चरित्र की गरिमा को भी दर्शाता है।

भारतीय कला का एक विशिष्ट तत्व प्रतीकात्मकता है इसमें कुछ प्रतीकों के माध्यम से अत्यन्त गूढ, दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विचारों को व्यक्त कर दिया गया है। पद्म, चक्र, हंस, मिथुन, स्वास्तिक आदि प्रतीको के माध्यम से विभिन्न भावनाओं को व्यक्त किया गया है। पद्म प्राण या जीवन का, चक्र काल या गति का तथा स्वास्तिक सूर्य सहित चारों दिशाओं का प्रतीक माना गया है। अशोक के सारनाथ सिंहशीर्ष स्तम्भ का फलक पर उत्कीर्ण चार पशुओं- गज, अश्व, बैल, तथा सिंह के माध्यम से क्रमशः महात्मा बुद्ध के विचार, जन्म, गृहत्याग तथा सार्वभौम सत्ता के भावों को व्यक्त किया गया है। भारतीय कलाकार भौतिक यश तथा वैभव के प्रति उदासीन थे उन्हे अपनी प्रसिद्धि से अधिक तत्कालीन सभ्यता व संस्कृति के दर्शन कराने में अधिक रुचि रही यही कारण की अपनी कृतियों में कही भी अपने नाम का उल्लेख अधिकतर देखने को नही मिलता इसलिए उस समय अंकित चित्राकृतियों, मूर्तिशिल्प आदि में कलाकारों के नाम से नही अपितु उस काल से जानी व पहचानी जाती है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि भरतीय संस्कृति में अभिव्यक्ति समन्वय की प्रवृत्ति कलात्मक कृतियों के माध्यम से मूर्तमान हो उठी है। सुकुमारता का गम्भीरता के साथ, रमणीयता का संयम के साथ, अध्यात्म का सैन्दर्य के साथ तथा यर्थाथ का आदर्श के साथ अत्यन्त सुन्दर समन्वय हमें भारतीय कला में दिखाई देता है। सुप्रसिद्ध कलाविद् हेवेल ने आदर्शवादिता, रहस्यवादिता, प्रतीकात्मकता तथा पारलौकिकता को भारतीय कला का सारतत्व निरूपित किया है। समूचे देश की कलात्मक विशेषताएं प्रायः एक जैसी है पर्वतों को काटकर बनवाये गये मन्दिरों अथवा पाषाण निर्मित मन्दिरों में यद्यपि कुछ स्थानीय विभिन्नताएं है तथापि उनकी सामान्य शैली एक ही प्रकार की है। इस प्रकार भारतीय कला राष्ट्रीय एकता की संदेशवाहिका है।

प्राचीन भारतीय संस्कृति विद्धानों, जिज्ञासुओं एवम् शोधकर्ताओं को निरन्तर अपनी ओर आकर्षित करती रही है। हमारी प्राचीन संस्कृति, धर्म, दर्शन, साहित्य और कला आदि के रुप में हमेशा पहचानी जाती रही है। आज भी इसका इतिहास उतना ही गौरवशाली है जितना प्राचीन समय में था। अपने विशिष्ट तत्वों के कारण ही भारतीय संस्कृति और कला ने पूरे विश्व में अपनी एक अलग पहचान बनाई जिसमें हमारी भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में सर्वप्रथम है। कला संस्कृति का ही हिस्सा होती है और कला के माध्यम से ही कोई भी संस्कृति अपनी अभिव्यक्ति पाती है उसको साथ लिये बिना देश का विकास सम्भव नही है। वी0 एस0 अग्रवाल के शब्दों में 'भारतीय कला देश के विचार, धर्म, तत्वाधान तथा संस्कृति का दर्पण है। भारतीय जन-जीवन की पुष्कल व्याख्या कला के माध्यम से हुई है।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में भ्रष्टाचार का प्रभाव

डॉ. रामजी वर्मा*

शोध सारांश – भ्रष्टाचार शब्द दो शब्दों के मेल से बना है-'भ्रष्ट' और 'आचार'। 'आचार' का मूल 'चर' धातु है जिसका अर्थ होता है चलना। 'चर' से ही चरित्र भी बना है और आचार भी, आचरण भी। हिन्दी में प्राय: 'आचार-व्यवहार' का युग्म प्रयोग अधिक होता है। 'भ्रंशन' का अर्थ होता है-पतन, स्खलन, गिरना आदि। कहीं-कहीं इसे लोग टूटने के अर्थ में भी प्रयोग करते है।

आचार या आचरण व्यक्तिपरक भी है और समाजपरक भी। जब कोई समाज अपने सामाजिक जीवन व्यवहार के लिए एक मानदंड निर्धारित करता है तो उस मानदंड पर चलने के लिए नियमादि भी बनता है, व्यवस्था भी करता है। उस व्यवस्था के अनुसार 'आचरण'-सही आचरण कहलाता है और उसके विरूद्ध आचरण गलत या भ्रष्ट। समान्यत: व्यक्ति, समाज या परिवार के स्तर पर यह मानदंड अलिखित होता है, यह व्यवस्था परम्परागत होती है, फिर भी प्रत्येक व्यक्ति अपने पारिवारिक या सामाजिक मूल्यों की रक्षा के लिए, उन परम्पराओं का पालन करना अपना कर्तव्य समझता है। ऐसी ही व्यवस्था जब किसी राष्ट्र, राज्य या संस्था आदि के सदस्यों के लिए की जाती है तो उसे सामान्यत: सम्बन्धित राज्य, राष्ट्र या संस्था का विधान या संविधान या आचार-संहिता का नाम दिया जाता है और यह विधान अनिवार्य रूप से लिखित होता है। फिर किसी भी राष्ट्र या कोई भी राज्य या संस्था, उस राष्ट्रीय संविधान के अन्तर्गत, उसके नियामक तत्वों, आदर्शो को दृष्टि में रखते हुए अपने अधीनस्थों के लिए या नागरिकों के लिए भी भिन्न-भिन्न नियमादि बनाता है और ये नियमादि ही उस राज्य, के नागरिकों के लिए उनकी 'आचार-सहिता' कहलाती है।

शब्द कुंजी – रिश्वत, काला-बाजारी, जानबूझकर दाम बढ़ाना, पैसा लेकर काम करना, सस्ता समान लाकर महंगा बेचना, टैक्स चोरी, झूठी गवाही, हफ्ता वसूली, जबरन चन्दा लेना इत्यादि।

प्रस्तावना – हमारे देश का सबसे बड़ा दुर्भाग्य है-'बहुआयामी, बहु-जिह्वी संविधान', जिसका कोई भी महत्वपूर्ण तकनीकी शब्द एकार्थक नहीं है, एक निश्चित अर्थ का मापक नहीं है, एक निश्चित दिशा की ओर संकेत नहीं करता। प्राय: अधिकांश महत्वपूर्ण तकनीकी शब्द अपरिभाषित छोड़ दिए गए है, फलत: बहु-अर्थक, भिन्नार्थक और बहु-जिह्वी हो गए है। फलत: जैसा कि श्री झा ने लिखा है-'एक ही कानून एक ही तरह के दोष के लिए किसी को कड़ी सजा देता है, किसी को माँफ करता है। इतना ही नहीं एक न्यायालय दंड देता है और दूसरा माँफ करता है।' स्पष्ट है कि न्याय का भी कोई न तो वस्तुनिष्ठ-क्रियानिष्ठ मानदंड है, न आदर्श और न ही निश्चित नियम। जिस देश में न्याय का ही यह हाल हो, वहाँ की अन्य व्यवस्था तो अनिवार्यत: भ्रष्ट होगी ही और सामर्थ्यवान नेता, प्रशासक या कर्मचारी, नागरिक रही-सही व्यवस्था की भी धज्जियाँ ही उड़ातें रहेंगे। संविधान, विधान और व्यवस्था की यह दिशाहीनता, यह अनेकार्थता ही भ्रष्टाचार की जननी बनती है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में बड़े पैमाने पर काला धन है जिसमें आजादी के बाद काफी वृद्धि हुई है। लगभग 3 प्रतिशत के साथ 50 के मध्य दशक में इसकी शुरूआत हुई और 1980 के दशक में यह 20 प्रतिशत पहुँच गया। 1990 में 35 और 1995 में 40 प्रतिशत काला धन भारतीय अर्थव्यवस्था में घुन की तरह समाए हुए था, काला धन औद्योगिक और कृषि दोनों क्षेत्रों से आता है। भ्रष्टाचार निम्न स्तर से उच्च स्तर के सरकारी तंत्र, उद्यमों, नौकरशाही, न्यायपालिकाओं, और चुनावी कार्यालयों तक फैला हुआ है। ट्रांसपेरेन्सी इंटरनेशनल के वैश्विक भ्रष्टाचार मानक 2007 के अनुसार 5 में से 4 लोग यह विश्वास करते हैं कि राजनीतिक पार्टियाँ भ्रष्ट हैं और 70 प्रतिशत का मानना है कि यह भ्रष्टाचार और अधिक बढेगा।

उद्देश्य – शोध का प्रमुख उद्देश्य राजनैतिक यर्थाथ को समझना होता है अत: इसका प्रमुख उद्देश्य राजनैतिक यर्थाथ, को यथा सम्भव अधिक क्रमबद्ध दिशा में मोड़ने के लिए इस ज्ञान के क्षेत्र में करने के योग्य बनाना तथा इस ज्ञान से समाज को लाभान्वित करने हेतु विशिष्ट राजनैतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इसमें आवश्यक संशोधन करना इन्हीं उद्देश्यों द्वारा अनुसंधान विशुद्ध व्यावहारिक तथा क्रिया शोध के विभिन्न स्वरूप ग्रहण करता है।

किसी भी राजनैतिक संस्था/समुदाय से सम्बन्धित तथ्यों का अध्ययन विशेष उद्देश्य से प्रेरित होकर किया जाता है ताकि शोध से सम्बन्धित महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त की जा सके। डब्ल्यू स्काट माइकिन तर्थोन्मर के अनुसार शोध के तीन उद्देश्य निम्नलिखित है-

1. विशिष्ट समस्याओं का समाधान
2. सिद्धांतों का विकास एवं अंतर
3. वर्तमान सिद्धांतों का परीक्षण

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र का अध्ययन अनुभाविक प्रकृति का होने के साथ-साथ विवरणात्मक प्रकृति का एवं विश्लेषणात्मक प्रविधि पर आधारित है जिसमें प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोतों के रूप में पुस्तकालय, पत्र-पत्रिकाओं एवं समाचार पत्र, इंटरनेट तथा प्रकाशित शोध-पत्रों व शोध कार्य से सामग्री संकलन करने का प्रयास किया गया है। वर्तमान में भारतीय अर्थव्यवस्था को ध्यान में रखकर अध्ययन किया गया है। जिससे अनुसंधान का श्रेष्ठ परिणाम प्राप्त हो तथा भविष्य में इसका द्वितीयक स्त्रोतों के रूप में भी अध्ययन किया जा सके।

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय वीरसिंहपुर, पाली, जिला उमरिया (म.प्र.) भारत

विश्लेषण- हमारी जनसंख्या के 69 प्रतिशत की मासिक आय 35 रूपये से भी कम है।23 इस तरह उच्च आमदनी वाले नागरिकों का एक समाज इस देश में बन गया है। इनके समाज में हमेशा होड़ लगी रहती है कि कौन अपने रहन-सहन का स्तर कितना ऊँचा उठा सकता है। कोई यह नहीं देखता कि जिस धन का उपयोग करके बड़े-बड़े मकान बन रहे हैं तथा उनकी सजावट के लिए मूल्यवान फर्नीचर इत्यादि खरीदा जा रहा है, उस धन की उत्पत्ति कैसे हुई? एक प्रख्यात लेखक, श्रीमान् पीटर एच. ओडगर्डल महोदय ने इस समाज का भ्रष्टाचार से क्या संबंध है, इसके बारे में इन शब्दों में दर्शाया है। भ्रष्टाचार संग्रहकारी समाज की ऐसी जीवन-प्रणाली का ही एक परिणाम है जहाँ पैसे का ही बोल बाला है। जहाँ वहीं उचित समझा जाता हैं जिससे काम निकल सकता है और जहाँ सामाजिक सम्मान का मापदंड मनुष्य के गुणों के स्थान पर उसकी संपत्ति को समझा जाता है।

सन् 1965-66 की अनावृष्टि के कारण देश में खाद्यान्न की विशेष कमी हुई, इसलिए शासन को कन्ट्रोल रूपी नियंत्रण लगाना पड़ा। परन्तु कई बड़े व्यापारियों ने इस सब नियंत्रणों का उल्लंघन किया तथा झूठे परमिट निकालकर गल्ला चोरी से बाहर भेजकर लाखों रुपया कमा लिया। उन्होंने और भी कई तरह के अवैध व्यापार किये जिसके फलस्वरूप असंख्य गरीबों को विशेष कष्ट उठाना पड़ा व भूखे रहना पड़ा।

इस तरह देखा जाता है कि जैसे-जैसे भ्रष्टाचार बढ़ाकर कुछ व्यक्ति अनुचित धन-संग्रह करते हैं, वैसे-वैसे गरीबों का कष्ट बढ़ता जाता है। यह कष्ट वे कब तक बरदाश्त करेंगे? आखिर सहनशीलता की भी एक सीमा होती है। इसलिए यह स्पष्ट दिखाई देने लगा है कि यही उत्पीड़ित जनता भ्रष्टाचारी धन संग्रहकारियों के विरुद्ध संघर्ष आरम्भ करेगी। यह भी संभव है कि शिक्षित बेकार नवयुवक उस संघर्ष का नेतृत्व करें।

निष्कर्ष- भ्रष्टाचार भारत में एक कड़वा सत्य है। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक तथा कच्छ से लेकर नागालैण्ड तक मकड़ जाल जैसा फैला हुआ है। कैंसर की भाँति यह हमारे समाज को निरंतर खोखला करता जा रहा है।

भारतीय संस्कृति व्यक्तिगत शुचिता, नैतिकता तथा कर्त्तव्यपरायणता की संवाहक रही है। इस देश में भ्रष्टाचार जैसे शब्द का नाम लेना भी पाप था। भ्रष्टाचार का प्रथम साक्षात्कार चाणक्य के 'अर्थशास्त्र' में होता है जहाँ उन्होंने भ्रष्टों के लिए कड़े आपराधिक दण्ड के प्रावधान का सुझाव दिया तथा भ्रष्टाचार द्वारा अर्जित सम्पत्तियों को शासन द्वारा जब्त करने की सलाह दी। पर चाणक्य को इस दण्ड-व्यवस्था को लागू करने की आवश्यकता नहीं हुई। अंग्रेजों की ईस्ट इंडिया कम्पनी के समय उपहार संस्कृति द्वारा भ्रष्टाचार खूब फला-फूला।

सन् 1990 तक भ्रष्टाचार ने देश को खोखला कर दिया। तब जुलाई 1991 में भारत को इंग्लैण्ड बैंक में 47 टन सोना गिरवी रखना पड़ा। तब सभी की आँखे खुली तथा तत्कालीन वित्त मंत्री मनमोहन सिंह के नेतृत्व में उदारीकरण तथा वैश्वीकरण की शुरूआत हुई। परिणाम उत्तम रहे तथा भारत का विदेशी मुद्रा भण्डार शनैः-शनैः अप्रत्याशित ऊँचाइयों तक पहुँचता रहा इसमें योगदान उन मुख्यतः युवा इंजीनियरों तथा पेशेवर का है जिन्होंने सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से विदेशों में जाकर भारत का झण्डा गाड़ा।

सुझाव :

1. भारतीय दंड संहिता की धाराओं 161, 162, 163, 164, 165-(क) के अंतर्गत रिश्वत लेना व देना दोनों अपराध है। यदि रिश्वत देने वाला ही न हो, तो लेने वाला कहाँ से आयेगा? आजकल रिश्वत लेने वाले पर अधिक आँखें केंद्रित रहती हैं क्योंकि वह सरकारी नौकर है। पर जो व्यक्ति रिश्वत देने जाता है, वह तो और बड़ा अपराधी है। क्योंकि वह पक्षपात के द्वारा अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहता है। घूस देने वाले की मजबूरी केवल एक मुखौटा मात्र ही है। यदि सभी लोग यह निर्णय ले लें तो किसी न किसी का काम होगा ही। अंत में सभी काम नियमित रूप से क्रमबद्ध होने लगेंगे।
2. विभिन्न आधुनिक तकनीकों का समुचित उपयोग करके भ्रष्टाचार को कम किया जा सकता है जैसे कि रेलवे-आरक्षण में कम्प्यूटरीकृत प्रणाली का प्रचलन। इसी प्रकार विभिन्न परीक्षाओं की उत्तर पुस्तिकाओं के कम्प्यूटरों के द्वारा जाँचने के कारण काफी सीमा तक निष्पक्ष होने लगे हैं।
3. केंद्र में सभी राज्यों एवं सरकारी उपक्रमों में सतर्कता संगठन है। राज्य सरकारों के पास इन सतर्कता संगठनों का जाल जिला-स्तर तक बिछा है। इन संगठनों में जाँच प्रायः पुलिस अधिकारी ही करते हैं तथा सतर्कता विभागों की फाइलें वरिष्ठतम नौकरशाहों एवं राजनीतिज्ञों के पास जाती हैं जो अपनी विशेष विचारधारा अथवा रूचि के अनुसार निर्णय लेते हैं। प्रायः इन सतर्कता संगठनों पर घूँस की रकम पकड़ने की अपेक्षा खर्च अधिक होता है। इनमें आजकल केंद्रीय जाँच संगठन (सी.बी.आई.) लोकप्रियता के शिखर पर है। यदि लोकप्रिय सरकारों ने इन संगठनों को दुरुस्त नहीं किया अथवा इनकी कार्रवाई में बाधा डाली, तो हताशा में जनता लोकप्रिय सरकारों के तख्ते पलटती रहेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कोहली, इविल, 1975, भारत के भ्रष्टाचार, चेतना प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. भार्गव, सुरेन्द्रनाथ, 1967, भारत में राजनीतिक भ्रष्टाचार, चेतना प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. हेलाय, एम., 1985, भारत में भ्रष्टाचार, पश्चिम प्रेस।
4. पाल शमूएल, सन्जीवी, 1997, भारत में भ्रष्टाचार कार्यवाही, गुहान, पश्चिम प्रेस।
5. तटरक्षक, सोमियह, 2010, ईमानदार हमेशा अकेले खड़े, नियोगी बुक्स, नई दिल्ली।
6. विट्ठल, एन., 2003, भारत में भ्रष्टाचार राष्ट्रीय समृद्धि के लिए अंधीगली, शैक्षिक फाउण्डेशन।

****

पद्माकर के काव्य में युग-बोध

डॉ. रंजना मिश्रा *

प्रस्तावना –'फाग की भीर अभीरन में, गहि गोविन्द लै गई भीतर गोरी।
भाई करी मन की पद्माकर, ऊपर नाइ अबीर की झोरी।
छीनि पीताम्बर कम्मर तें, सु विदा दई मीड़ि कपोलन रोरी।
नैन नचाइ कही मुस्काइ, लला फिर आइयो खेलन होरी।।'

मौलिक कल्पनाओं और अनूठी उद्‌भावनाओं से अत्यंत सरस कविता सृजित करने वाले महाकवि पद्माकर रीतिकाल के श्रृंगारी कवियों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। शब्दों के पारखी पद्माकर के काव्य में तत्कालीन युग अपने सम्पूर्ण परिवेश के साथ उभरता है। न केवल राजाश्रयों में शासकों का प्रशस्ति गान बल्कि अलंकारों की अद्‌भुत छटा में श्रृंगार चित्रण, नायिका भेद वर्णन, षड् ऋतु वर्णन, प्रकृति चित्रण, भक्ति और वैराग्य जनित छंद एवं तद्युगीन जन-जीवन के व्यापक चित्रण में पद्माकर ने पूर्ण सफलता प्राप्त की। एक कवि का राजसी हाट-बाट और शानोशौकत यह प्रमाणित करती है कि हृदयभेदी, मोहक और अत्यंत सरस, अलंकारों से सुसज्जित उनकी कविता उस दौर में सर्वाधिक लोकप्रिय हुई। कुछ राजा तो उनकी कविता से इतने प्रभावित हुए कि हाथी, घोड़े, सोने की मुहरों और रुपयों के अलावा उन्हें गाँव भी पुरस्कार स्वरूप प्रदान किये। चूँकि पद्माकर का अधिकांश जीवन बुन्देलखंड में बीता, इसलिए उनका काव्य बुन्देलखंड के रीति-रिवाज, संस्कार, उत्सव, मेले, आमोद-प्रमोद और रहन-सहन अर्थात् सम्पूर्ण बुन्देली संस्कृति का सजीव चित्र है।

उत्तरमध्यकालीन समय और समाज के पुरोधा पद्माकर ने सन् 1753ई. में श्री मोहनलाल भट्ट के यहाँ सागर म.प्र. में जन्म लिया। मोहनलाल स्वयं उस दौर के प्रख्यात कवि थे। तत्कालीन राजदरबारों में उन्हें विशेष सम्मान प्राप्त था। नागपुर के महाराज रघुनाथराव और पन्ना के महाराज हिन्दुपति ने उन्हें गुरु बनाकर कई गाँव भेंट किये। जयपुर नरेश प्रतापसिंह ने जागीर के अलावा कविराज शिरोमणि की पदवी भी प्रदान की। पिता की इस ख्याति का लाभ पद्माकर को मिला। सुगरा के नोने अर्जुनसिंह ने उन्हें अपना मंत्र गुरु बनाया। सं. 1849 में महाकवि गोसांई अनूपगिरि उपनाम हिम्मत बहादुर के यहाँ गये, जो नामी योद्धा थे। यहीं पर उन्होंने हिम्मत बहादुर विरुदावली का सृजन किया। तदुपरांत वे बाँदा और अवध के राजदरबारों में शोभा पाते रहे। अवध-नरेश ने उन्हें सेना का बड़ा अधिकारी नियुक्त कर दिया। सं. 1856 में महाराजा रघुनाथराव ने उनके सम्मान में एक हाथी, एक लाख रुपया और दस गाँव भेंट किये। जयपुर-नरेश प्रतापसिंह के यहाँ पद्माकर बहुत समय तक रहे, प्रतापसिंह के पुत्र महाराज जगतसिंह के शासनकाल में उन्हें विशेष ख्याति मिली। इसी समय दोनों अलंकार ग्रंथों जगद्विनोद और पद्माभरण की रचना पद्माकर ने की। उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के दरबार में भी इनका अच्छा सम्मान हुआ, उन्हीं की आज्ञा से पद्माकर ने गनगौर के मेले का वर्णन किया था। तदुपरांत कवि ग्वालियर के महाराज दौलतराव सिंधिया के दरबार में गये, जहाँ इनकी कविता को अत्यधिक सम्मान मिला। जीवन की अंतिम अवस्था में कुष्टरोग से पीड़ित हो जाने पर कवि अपने पैतृक गाँव बूँदी चले गये और ईश्वर भक्ति में लीन हो गये। इसी समय उन्होंने 'प्रबोध-पचासा' नामक भक्ति और वैराग्य से पूर्ण ग्रंथ की रचना की। अंतिम समय में पद्माकर कानपुर में गंगातट पर निवास करने लगे। गंगा के पवित्र जल के प्रभाव से उनका कुष्टरोग ठीक हो गया। यहीं पर उन्होंने गंगा की महिमा का वर्णन करते हुए 'गंगालहरी' नामक कृति सृजित की। गंगातट पर ही सन् 1833 ई. में पद्माकर ने देवलोकगमन किया।

वर्ण्य विषय के आधार पर पद्माकर के काव्य में तीन प्रवृत्तियाँ प्रमुख हैं। राजदरबारों में राजाओं की वीरता और उनके यश-कीर्ति का गान करते हुए पद्माकर ने दो रचनायें प्रस्तुत कीं- 'हिम्मतबहादुर विरुदावली' और 'प्रतापसिंह विरुदावली' प्रतापसिंह ने यश प्राप्ति और अपनी राज्य सीमा बढ़ाने के लिए युद्ध किया लेकिन हिम्मतबहादुर ने केवल अपनी स्वार्थपूर्ति के निमित्त युद्ध किया। पद्माकर ने दोनों राजाओं की विरुदावली गाकर उनकी वीरता और युद्ध का अतिश्योक्तिपूर्ण वर्णन किया। इन वर्णनों में सूची गिनाने की प्रवृत्ति अधिक होने से वीर रस की सम्यक योजना नहीं हो सकी। इन सूचियों में ऐसे हथियारों की नामावली या घोड़े, हाथियों की अनुक्रमणी दी गई है, जो उस युद्ध में नियोजित ही नहीं हुए। इतिहास-विरूद्ध वर्णन से इन विरुदावलियों का बहुत अधिक महत्व सिद्ध नहीं होता। रणक्षेत्र, रण प्रस्थान और युद्धवर्णन परम्परायुक्त है। आश्रयदाताओं का प्रशस्तिगान ही यहाँ कवि का प्रमुख उद्देश्य है।

लक्षणग्रंथों की रचना में पद्माकर सिद्धहस्त थे। 'पद्माभरण' और 'जगद्विनोद' दोनों ही ग्रंथों में उत्कृष्ट भाव, उत्कृष्ट अलंकार, छंद योजना, नायक-नायिका भेद, रस निरूपण और उत्कृष्ट शब्द योजना से पद्माकर को विशेष लोकप्रियता मिली। कवि का एक और लक्षणग्रंथ 'आलीजाहप्रकाश' नाम से मिलता है, लेकिन विद्वानों का मत है कि यह कोई पृथक रचना नहीं है। नायक-नायिका भेद और रस-निरूपण का एक ही ग्रंथ दो व्यक्तियों के नाम पर प्रसारित कर दिया गया है। 'जगद्विनोद' राजा जगतसिंह के नाम पर और 'आलीजाहप्रकाश' महाराजा दौलतराव सिंधिया के नाम पर।

तत्कालीन जन-जीवन के रीति-रिवाज, रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा, धर्म, कला, साहित्य, संगीत, नृत्य, उत्सव, मेले तथा आमोद-प्रमोद के विविध लोक-प्रचलित साधन पद्माकर के काव्य में विशिष्ट अभिव्यक्ति पाते हैं। नारी को भोग्या मानने वाले उस सामंती परिवेश में स्त्री के वस्त्रों, उसके आभूषणों का बखान स्वाभाविक था। भारतीय प्रसाधन

* प्राध्यापक, शासकीय कला एवं वाणिज्य 'अग्रणी' महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत

परंपरा के सोलह श्रृंगारों का अद्भुत वर्णन पद्माकर के काव्य में मिलता है। यथा–

'भाल पै लाल गुलाल गुलाल, सो गोरी गरै गजरा अलबेलौ।'
और
'सोरह सिंगार के नवेली की सहेलिन हूं,
कीन्हीं केलि मंदिर में कलपित करे हैं।'

रीतिकालीन शासकों में माँस, मदिरा का प्रचलन आम बात थी, लेकिन पद्माकर ने साधारण जन के खान–पान यथा दूध, दही, पान, आँवला, मिठाई आदि का ही वर्णन किया है। नायिका भेद के अंतर्गत दही बेचने वाली नायिका का चित्रण इसका प्रमाण देता है–

'आज तें न जैहों दधिबेचन दुहाई खाऊँ
भैया की कन्हैया उत ठाड़ोई रहत है।
कहै पद्माकर त्यों सांकरी गली है अति,
इत–उत भाजिबे कौ दाउं न लहत है।
दौरि दधिदान काज ऐसौ अमनैक तहाँ,
आली वनमाली आइ बहियां गहत है।
भादों सुदी चौथ कौ लख्यौ मैं मृगअंक यातें,
झूठहू कलंक मोहि लागिबो चहत है।।'

'जगद्विनोद' नायिकाभेद निरूपण का ही ग्रंथ है। एक अत्यंत सुकोमल शरीर वाली कृशांगी नायिका का एक चित्र दृष्टव्य है जिसके गुलाब की पंखुड़ी से भी कोमल चरणों में मखमल का बिस्तर भी चुभता है –

'सुन्दर सुरंग नैन सोभित अनंग रंग,
अंग–अंग फैलत तरंग परिमल के।
बारन के भार सुकुमार कौ लचत लंक,
राजै परजंक पर भीतर महल के।
कहै पद्माकर बिलोकि जन रीझै जाहि,
अम्बर अमल के सकल जल–थल के।
कोमल कमल के गुलाबन के दल के,
सुजात गड़ि पायन बिछौना मखमल के।।'

लोकजीवन में शारीरिक और मानसिक थकान दूर करने के लिए प्रयुक्त मनोरंजन और आमोद–प्रमोद के विविध साधनों का वर्णन भी पद्माकर के काव्य में मिलता है। पौराणिक संदर्भों पर आधारित नृत्य और लघु नाटकों का उस समय बहुत प्रचलन था। इसके अलावा गनगौर मेले का सजीव चित्रण पद्माकर ने किया है। 'जगद्विनोद' में कई स्थानों पर राधा–कृष्ण की लीलाओं का गान मेले के संदर्भ में दृष्टिगत होता है –

'या अनुराग की फाग लखौ जहं रागती राग किसोर–किसोरी
गोरिन के रंग भींजिगो सांउरी, सांउरे के रंग भींजिगी गोरी।।'

विविध पर्वों और उत्सवों की अनूठी छटा पद्माकर के काव्य में जनमानस की आस्था, विश्वास, निश्छल भोली मानसिकता का सशक्त प्रमाण है। जैसे उन्मुक्त भाव से होली खेलना– श्रृंगारिक पक्ष कितना मनोहारी है–

'आई खेलि होरी घरैं नवल किसोरी कहूं,
बोरी गई रंग में सुगंध झकोरे हैं।'

गनगौर पूजन का आनंद और उल्लास देखते ही बनता है, जहाँ गाँव में गौरी माता के मंदिर में महिलाओं का समूह पूजन करने आया है–

'द्यौस गनगौर के सुगिरजा गोसांइन कौ,
आवत यहांई अति आनंद इतै रहै।
गोरिन में कौन थैं हमारी गनगौर यहै,
संभु घरी चारिक लौं चकित चितै रहै।।'

इसी तरह जन्माष्टमी, दीपावली, कुंभ मेला के सामूहिक आयोजनों का हूबहू चित्र पद्माकर ने अपने काव्य में दर्शाया है। ऋतु–वर्णन के अंतर्गत वर्षा ऋतु, शरद, शिशिर, हेमंत, बसंत और ग्रीष्म का चित्रण अत्यंत मोहक बन पड़ा है। यथा– वर्षा ऋतु का एक चित्र दृष्टव्य है–

'चंचला चलाकैं चहूँ औरन तें चाह भरी,
चरजि गई ती फेरि चरजन लागी री।
कहै पद्माकर लवंगन की लोनी लता,
लरजि गई ती फेरि लरजन लागी री।।'

शरद की चाँदनी सम्पूर्ण प्रकृति को ढंककर उसके सौंदर्य को अधिकाधिक बढ़ा रही है –

'तालन पै, ताल पै, तमालन पै, मालन पै,
वृन्दावन बीथिन बहार वंशीवट पै।
कहै पद्माकर अखंड रासमंडल पै,
मंडित उमंड महा कालिंदी के तट पै।।'

हेमंत ऋतु में लोग अपने घरों में रजाई–कम्बलों में दुबक रहे हैं, अलाव ताप रहे हैं –

'अगर की धूप, मृगमंद की सुगंध वर,
बसन विसाल जाल अंग ढाँकयतु हैं।
कहै पद्माकर सु पौन कौ न गौन जहाँ,
ऐसे भौन उमगि उमंग छकियतु हैं।'

मादक बसन्त ने चारों ओर प्रकृति में अपना स्वर्णिम सौंदर्य बिखरा दिया जिसमें तन–मन आनंद से सराबोर हो उठा। पद्माकर की नादयोजना और अनुप्रास अलंकार के प्रयोग में मौलिक सूझ–बूझ सराहनीय है–

'कूलन में, केलि में, कछारन में, कुंजन में
क्यारिन में कलित कलीन किलकंत है।
कहै पद्माकर परागन में, पौन हू में,
पातन में, पिक में पलासन पगंत है।
द्वारे में, दिसान में, दुनी में, देस देसन में
देखो दीप–दीपन में दीपत दिगंत है।
बीथिन में, ब्रज में नवेलिन में, बेलिन में
बनन में, बागन में, बगरौ बसंत है।।'

बुन्देली संस्कृति के समस्त महत्वपूर्ण उपादान पद्माकर के काव्य में मिलते हैं। आनंद महज मनोरंजन के साधनों में ही नहीं है बल्कि ईश्वर के प्रति श्रद्धा, प्रेम, अगाध आस्था, विश्वास और भक्ति भाव में भी है। प्रबोध पचासा में कवि भोग, विलास से परे भगवान राम की शरण में पहुँचजाते हैं। वे स्वयं को नितांत अधम और भगवान राम को जगत का उद्धारक मानते हैं–

'पावते न मोसौ जो पै अधम कहूँ तौ राम,
कैसें तुम अधम उधारन कहावते।।'

क्षणभंगुर और निस्सार जीवन की चेतना यथार्थ का परिचय कराती है तब कवि के मन में विश्वास जाग्रत होता है कि राम नाम का गान करने तथा उनके दर्शनमात्र के बाद कोई कष्ट शेष नहीं रह जाता। संसार से विरक्ति, वैभव और भौतिक सुखों की निस्सारता तथा राम नाम की महिमा का बखान उनके 'कलिपचीसी' नामक ग्रंथ में भी प्रमुखता पाता है। इसमें प्रत्येक लावनी के अंत में – 'अब वचन विचार कहै पद्माकर, यह ईश्वर की माया है।।' पंक्ति आती है।

भक्ति और वैराग्यपरक ग्रंथों में 'यमुना लहरी' और लिलहारी लीला

बहुत छोटी कृतियाँ हैं जिनमें यमुना की महिमा का गुणगान और ईश्वर की पश्चातापपूर्ण आराधना की अभिव्यक्ति है। भाषा सौष्ठव और अभिव्यंजना की दृष्टि से 'गंगालहरी' एक विशिष्ट कृति है, जिसमें गंगा के माहात्म्य और पतित पावन स्वरूप का वर्णन विशेष है। कहते हैं कि गंगा की शरण में कवि का कुष्टरोग ठीक हो गया, इस चमत्कार से उनकी आस्था और गहरी हो गई, तब उन्होंने गंगाजी की वन्दना करते हुए उनके लिए गाया कि वे करोड़ों पापियों को तारने वाली हैं–

'जमपुर द्धारे लगे न तिनमें किवारे कोऊ,
हैं न रखवारे ऐसे बनिके उजारे हैं।
कहै पद्माकर तिहारे प्रनधारे तेऊ,
करि अधमारे सुरलोक को सिधारे हैं
सुजन सुखारे करे पुन्य उजयारे अति,
पतित कतारें भव सिन्धु तें उतारे हैं।
काहू ने न तारे जिन्हें गंग तुम तारे और,
जेते तुम तारे तेते नभ में न तारे हैं।।'

पद्माकर के काव्य में भाषा और भाव का सुन्दर सामंजस्य मिलता है। लोकभाषा के अत्यंत सहज, सरल शब्दों का ऐसा मनोहारी प्रयोग, ऐसी उत्कृष्ट बिम्बयोजना, अलंकारों, छंदों का ऐसा अनूठा प्रयोग पाठकों को रस–विभोर कर देता है। कवि के तत्कालीन युग में शिक्षा का समुचित प्रबंध न होने से नैतिक मूल्यों का पतन स्वाभाविक था। राजकीय वातावरण में तो सुरा और सुन्दरी की ही प्रधानता थी। रीतिकाल के दौर में कवियों का प्रमुख कर्म आश्रयदाता राजाओं की रूचि के अनुसार कविता करना और पारितोषक प्राप्त करना था। यही कारण है कि पद्माकर का श्रृंगार काव्य विशेष प्रसिद्ध हुआ लेकिन साथ ही भक्ति और वैराग्य परक कृतियों में उनकी मौलिक काव्य प्रतिभा का भी दिग्दर्शन होता है। नि:सन्देह पद्माकर का काव्य युगचेतना को ग्रहण करता हुआ अपने समय और समाज को व्याख्यायित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पद्माकर ग्रंथावली– पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
2. पद्माकर के काव्य में अभिव्यंजना शिल्प– डॉ. विजयबहादुर सिंह
3. पद्माकर–व्यक्ति, काव्य और युग– डॉ. उमाशंकर शुक्ल
4. हिन्दी साहित्य का वृहद इतिहास– डॉ. नगेन्द्र

****

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के कार्यों से हो रहे ग्रामीण विकास का : एक विश्लेषण

डॉ. संजय कुमार साकेत *

प्रस्तावना – आज देश की आजादी के 70 वर्षो से भी अधिक समय के बाद भी देश की कुल आबादी का लगभग 68 प्रतिशत जनसंख्या देश के ग्रामीण क्षेत्रों में ही रहती हैं। इसका अर्थ यह हैं कि यदि देश का विकास करना हैं तो केवल शहरों का विकास करना ही पर्याप्त नहीं हैं बल्कि इसके लिए जरूरी है कि ग्रामीण क्षेत्र का विकास किया जाए। ग्रामीण क्षेत्रों में मूलभूत आवश्यकताओं जैसे- रोटी, कपड़ा, मकान के अतिरिक्त भी अन्य सुविधाओं जैसे- ग्रामीण स्वच्छता, सिंचाई व्यावस्था, बाढ़ नियंत्रण, ग्रामीण संपर्क आदि अनेक कार्य भी किये जाने कि आवश्यकता हैं।

आजादी के बाद से ही ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए अनेकों कार्यक्रम जैसे- सामुदायिक विकास परियोजना, बीस सूत्रीय कार्यक्रम, सघन कृषि जिला कार्यक्रम, काम के बदले अनाज, ट्राइसेम, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना आदि जैसे अनेक कार्यक्रम लागू किए गए जिसके फलस्वरूप कई बदलाव भी ग्रामीण क्षेत्रों में हुए। इन सब बातों के बावजूद ग्रामीण विकास को एक नए स्तर पर ले जाने की आवश्यकता थी।

विश्व की सबसे बड़ी योजना महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना एक ऐसी योजना हैं जिसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे अकुलश मजदूरों एवं कृषि श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध कराना हैं। योजना के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों में अनेकों अनेक कार्य हो रहे हैं जो ग्रामीण क्षेत्रों में परिसम्पत्तियों में वृद्धि कर ग्रामीण विकास को एक नई उंचाई मिल रही हैं।

योजना के बारे में जानकारी – महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम को संसद ने 2005 में पास किया, जो राष्ट्रपति की अनुमति के बाद कानून बन गया। यह कानून इस बात की गारंटी देता है कि हर ग्रामीण परिवार जो अकुशल श्रमिक के रुप में काम करता है, को एक वित्तीय वर्ष मे कम से कम 100 दिनों का रोजगार दिया जाएगा। यह अधिनियम 2 फरवरी 2006 को देश क 200 जिलों में, 2007-08 में 130 जिलों में और 1 अप्रैल 2008 में पूरे देश के सभी राज्यों और केन्द्र शासित प्रदेशों में लागू किया गया है।

योजना से किये जाने वाले कार्य :-

1. जल भरण जल संरक्षण संबंधी कार्य
2. पहाड़ी क्षेत्रों में जलसंभरण संबंधी कार्य
3. कृषि संबंधी कार्य
4. भूमि विकास से संबंधित कार्य
5. मवेशियों से संबंधित काम
6. मछली पालन से जुड़े कार्य
7. ग्रामीण पेय जल से संबंधित कार्य
8. ग्रामीण स्वच्छता से संबंधित कार्य
9. बाढ़ एवं सूखा प्रबंधन से संबंधित कार्य
10. सिंचाई से संबंधित कार्य
11. ग्रामीण संपर्क
12. खेल मैदान
13. अन्य कार्य

शोध पत्र में लिए गए आकड़े – प्रस्तुत शोध पत्र में वित्तीय वर्ष 2012-13 से वित्तीय वर्ष 2019-20 के आकड़ों के आधार पर प्रस्तुत किया गया हैं -

वर्ष	कुल कार्य	स्वीकृति राशि (करोड़ रू में)
2012-13	56237258	33463.48
2013-14	61937878	27129.60
2014-15	44270830	1751.42
2015-16	56326458	1260.13
2016-17	71863880	912.80
2017-18	87717801	4832.45
2018-19	98339592	4550.99
2019-20	105554287	4398.60

टीप - आकड़ों को सरल रूप में समझने के लिए राशि के आकड़ों को पूर्णांक के रूप में दिखाया गया है।

सारणी के आकड़ों के विश्लेषण के आधार पर यह कहां जा सकता हैं कि वर्ष 2012-13 से वर्ष 2019-20 तक लगभग 58 करोड़ से अधिक कार्य किये गये जो कि ग्रामीण विकास के लिए एक बहुत बड़ी उपलब्धी हैं। यदि देश की समस्त 2 लाख 50 हजार पंचायतों में इन कामों को बांटा जाए तो औसतन लगभग 2328 कार्य एक पंचायत में आते हैं। और यदि देश के 649481 गांवों में बांटा जाए तो एक गांव के हिस्से में औसतन लगभग 896 कार्य आते हैं। यदि इस योजना के शुरू से किये गये कार्यो की भी गणना की जाये तो यह आकड़ा लगभग प्रत्येक गांव का 1000 से भी अधिक कार्यो का होगा।

इन आकड़ों से स्पष्ट होता हैं कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के कार्यों से निश्चित ही ग्रामीण विकास के समग्र एवं बहुआयामी अवधारणा को पूरा करता हुआ दिखाई देता हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव – निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते कि योजना के माध्यम से हो रहे कार्यो से ग्रामीण क्षेत्रों का निश्चित ही विकास हो रहा हैं किन्तु आकड़ों से पता चलता है कि योजना के लिए व्यय की जाने वाली

* सहायक प्राध्यापक ; अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) शासकीय महाविद्यालय बिरसिंहपुर, पाली, जिला उमारिया (म.प्र.) भारत

राशि में निरंतर ही कमी देखने को मिल रही है।

योजना के द्वारा इतनी बड़ी संख्या में कार्य होने के बाद शायद ही कोई कार्य गांवों में करने को बचा हो। चूकि विकास एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया इसलिए आज भी इसकी जरूरत गांवों में हैं। आज के समय में जब देश में लॉकडाउन के बाद से शहरों से लोगों का पलायन गांवों की ओर हुआ है और लाखों करोड़ों लोग अपनी नौकरी खो दिए है ऐसे में इस योजना का महात्व गांवों में रह रहे लोगों के लिए बढ़ जाता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. साकेत संजय कुमार, पीएचडी शोध, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना का ग्रामीण विकास में पड़ने वाले प्रभाव : एक अध्ययन, अवधेश प्रताप सिंह वि0 वि0 रीवा, वर्ष 2014.
2. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005, दिशा–निर्देश 2013, चौथा संस्करण, प्रकाशन : ग्रामीण विकास मंत्रालय ग्रामीण विकास विभाग भारत सरकार नई दिल्ली, वर्ष 2013 पृष्ठ 03.
3. महात्मा गांधी नरेगा समीक्षा, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005 पर शोध अध्ययनों का संकलन 2006–2012, प्रकाशक ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड वर्ष 2012 पृष्ठ 32.
4. https://nrega.nic.in/netnrega/home.aspx
5. https://nregarep2.nic.in/netnrega/dynamic2/dynamicreport_new4.aspx

****

गांधीजी की शिक्षा नीति की प्रासंगिकता : वर्त्तमान परिप्रेक्ष्य में

डॉ. विद्या चौधरी*

शोध सारांश – किसी भी देश की समस्त नीतियों का निर्धारण उस देश के आमजन को केन्द्र में रखकर किया जाता है। कोविड 19 की कहर ने एक स्कैनर की भाँति देश की नीतियों का अनावरण कर यह सिद्ध कर दिया है कि स्वतंत्रता के इतने वर्षो बाद भी हमारे देश की अधारभूत नीतियों में आम जन के हित के लिए चिन्तन की कमी रह गयी है। अत: नीतियों का पुर्नमूल्यांकन कर सुधार की आवश्यकता है।

शिक्षा किसी भी राष्ट्र की आधारशीला है। शिक्षा से किसी राष्ट्र और वहाँ रहने वाले व्यक्ति के जीवन में परिवर्तन आ सकता है। अब गांधी जी द्वारा सुझाए कौशल आधारित शिक्षा की आवश्यकता महसूस की जा रही है। गांधी जी की शिक्षा पद्धति को भले ही भारत में स्थान नहीं मिला किन्तु वैश्विक स्तर पर अपनी प्रमाणिकता सिद्ध कर चुका है।

शब्द कुंजी – शिल्प आधारित शिक्षा,श्रम का सम्मान।

प्रस्तावना – चीन से फैले कोरोना (कोविड 19) महामारी के चपेट में आने से विश्व का कोई भी राष्ट्र अपने को नहीं बचा पाया है। इसके कारण अमेरिका, इटली, ब्रिटेन जैसे विकसित राष्ट्रों की स्वास्थ्य व्यवस्था के साथ- साथ आर्थिक ब्यवस्था भी पूरी तरह से ध्वस्त हो गई है। इस महामारी में लाखों ने प्राण गवांये हैं, करोडों के रोजगार छिन गये हैं। इस दुसाध्य महामारी के फैलाव को रोकने का एक मात्र विकल्प 'सामाजिक' दूरी अत: 'सम्पूर्ण ताला बन्दी' ही है। यद्यपि भारत में आरम्भिक दौर से ही सम्पूर्ण तालाबन्दी अपनाये जाने के कारण इस महामारी से मृत्यु दर अपेक्षकृत काफी कम रहा है किन्तु आर्थिक स्थिति बहुत ही खराब हो गयी है। तालाबन्दी के कारण सभी उद्योग बन्द हो गये। कामगार ,खेत- मजदूर, मकान- मिस्त्री तथा अन्य असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले मजदूरों के समक्ष रोजी- रोटी की समस्या खड़ी हो गयी। शासन के निर्देशों, राजकीय प्रयासों, समाज सेवी संस्थाओं तथा आम नागरिकों के सेवा प्रयासों के बावजूद भी अपने पैतृक घर लौट जाना ही एक मात्र विकल्प मानकर प्रवासी मजदूर हजारों किलोमीटर की यात्रा तय करने पैदल ही चल पड़े। उनमें से कुछ अपने गंतव्य तक पहूँच भी नहीं पाये थे कि काल के गाल में समा गये। 'जालना और औरंगाबाद के मध्य पैदल चल रहे 16 मजदूर ट्रेन की चपेट में आ गये।'[1] '26 मई 2020 तक अपने घर जाने के प्रयास में 224 प्रवासी मजदूरों की मौत हो गई।'[2] इस दिल दहला देने वाली स्थिति का क्या एक मात्र कारण कोरोना महामारी ही है ? क्या इन परिस्थितियों से बचा जा सकता है ? यह एक यक्ष प्रश्न है।

किसी भी देश के समस्त नीतियों का निर्धारण उस देश के आमजन को केन्द्र में रखकर किया जाता है। कोविड 19 की कहर ने एक स्कैनर की भाँति देश की नीतियों का अनावरण कर यह सिद्ध कर दिया है कि स्वतंत्रता के इतने वर्षो बाद भी हमारे देश की अधारभूत नीतियों में आम जन के हित लिए चिन्तन में कमी रह गयी है। अत: नीतियों का पुर्नमूल्यांकन कर सुधार की आवश्यकता है।

भारत की स्वतंत्रता के साथ ही 'बड़े-बड़े उद्योग और विराट योजनाओं के जरिये उत्पादन बढ़ाने तथा राज्य की शक्ति के द्वारा सामाजिक न्याय स्थापित करने' का प्रयास आरम्भ किया गया।-3 42वें संविधान संशोधन द्वारा प्रस्तावना में 'समाजवाद' शब्द जोड़कर इसे और बल दिया गया। किन्तु समस्त प्रयास सतही सिद्ध हुए और भारत की ऋणग्रस्तता बढ़ती गयी। सोवियत संघ के विघटन के बाद उत्पन्न राजनीतिक परिस्थितियों में उदारीकरण, नीजिकरण, वैश्विकरण की नयी अर्थव्यवस्था ने वैश्विक मंच पर अपना स्थान बना लिया। आर्थिक संकट के परिप्रेक्ष्य में भारत के समक्ष इस नयी अर्थव्यवस्था को अपनाने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं था। फलत: अनेक आशाओं और शंकाओं के साथ 24 जुलाई 1991 ई0 को संसद में प्रस्ताव पारित कर भारत में भी इसे अपना लिया गया और बडे सम्मान के साथ बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का स्वागत किया जाने लगा। इसमें कोई शंका नहीं है कि अनेक क्षेत्रों में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगमन से देश को लाभ हुआ किन्तु शीघ्र ही इसके नकारात्मक प्रभाव भी दिखने लगे। इसके कारण भारत के लघु उद्योग बन्द होने लगे, बेरोजगारी बढ़ने लगी, कृषि क्षेत्र भी इसके कुप्रभावों से नहीं बच पाया।

उदारीकरण,नीजिकरण, वैश्विकरण के इस मॉडल के कारण भारत के 'वासुधैव कुटुम्बकम्' की संस्कृति के स्थान पर 'ग्लोबल विलेज'की संस्कृति आ गयी। इसके साथ ही 'समानता, प्रेम और सद्भाव' आधारित भारतीय परम्परा के स्थान पर 'उपभोग और लाभ' प्राप्त करने की परम्परा शुरु हो गयी। परिणामत: श्रमिकों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है। इनमें से कुछ खेतीहर श्रमिक हैं किन्तु बड़ी संख्या में श्रमिक रोजगार की तलाश में अपने निवास क्षेत्र से दूर पलायन करने के लिए भी मजबूर हो गये हैं। पलायन करने वाले इन मजदूरों की जिम्मेदारी कोई सरकार लेना नहीं चाहती है, स्थिति यह बनी कि प्रवासी मजदूरों का सही आंकड़ा किसी के पास नहीं है। यदि केन्द्रिय श्रम राज्य मंत्री श्री संतोष कुमार गंगवार जी कि बात माने तो – 'प्रवासी मजदूरों की संख्या दस करोड़ से अधिक है।'[4] तात्पर्य यह है कि देश की इतनी बड़ी श्रम शक्ति अनिश्चितता के दौर से गुजर रही है जो कभी- कभी आत्महत्या जैसे कदम उठाने के लिए विवश हो जाते है। राष्ट्र अपराध रिकार्ड ब्यूरो 02 जनवरी 2020 के अनुसार 'सन् 2014- 2018 ई0 के मध्य 57345 किसान खेतीहर श्रमिक द्वारा ऋणग्रस्तता तथा अन्य इसी तरह के कारणों से आत्महत्या की गयी।'[5] यह एक चिन्तनीय विषय है।

*प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, बैतूल (म.प्र.) भारत

आज के इस दौर में मेक इंडिया ,मेड इन इंडिया,स्टार्ट अप इंडिया,स्टैण्ड अप इंडिया में नया गांव, आत्मनिर्भर गांव, ग्राम स्वराज्य कहीं खो गया है। ऐसे समय में पुन: एक बार राष्ट्रपिता महात्मा गांधी जी की आवश्यकता महसूस होने लगी है । उन्होंने कहा है–**'यदि स्वराज्य प्राप्त हो जाने पर लोग अपने जीवन की हर छोटी बात के लिए सरकार का मुँह ताकना शुरू कर दें, तो वह स्वराज्य सरकार किसी काम की नहीं होगी ।**[6] अत: ग्राम का प्रत्येक व्यक्ति राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक रूप से स्वतंत्र तथा आत्मनिर्भर हो। यह सब सम्भव हो सकता है– 'शिक्षा' से । गांधी जी शिक्षा को 'मानव के सर्वागीण विकास का सशक्त माध्यम' मानते थे। उन्होंनें मात्र 'ज्ञान आधारित' शिक्षा के स्थान पर 'आचरण आधारित' शिक्षा का समर्थन किया है। उनके शिक्षा का आधार 3 एच –'हेड, हार्ट, हैण्ड' अत: मस्तिष्क, हृदय,और हाथ है। 'रोटी के लिए श्रम' गांधी जी का 'जीवन–सूत्र' था। इसलिए गांधी जी ने शिक्षा के दौरान भी शारीरिक श्रम को अनिवार्य माना है । उनका मानना था कि – राष्ट्र को कोई चीज इतनी कमजोर नहीं बनायेगी,जितनी यह बात कि हम श्रम का तिरस्कार करना सीखें ।'[7] किन्तु खेद है कि भारत के निर्माण में गांधी जी के इन सिद्धान्तो को स्थान नहीं दिया गया और लार्ड मेकाले द्वारा प्रतिपादित शिक्षा पद्धति यथावत बनी रही। भले ही यह पद्धति तत्कालीन समय में हितकर रहा होगा किन्तु भारत निर्माण में इसकी उपादेयता नहीं रही। परिणाम यह हुआ कि विद्यालयों एवं महाविद्यालयों से पढ़े युवकों के पास डीग्री और बेरोजगारी के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । इन्ही कारणों से युवाओं का यह देश अब बेरोजगारों, मजदूरों और मजबूरों का देश बनकर रह गया है । इन सब का भयावह दृश्य कोरोना काल में सामने आया है।

अब हमें इन परिस्थितियों से उबरने के लिए प्रयास करना होगा । यहाँ हमें गांधी जी के इस आह्वान पर अवश्य ध्यान देना होगा –'अभी तक हम बच्चों के दिमाग को विकसित और प्रोत्साहित करने पर विचार किये बिना उनके दिमाग में सभी प्रकार की सूचना भरने पर केन्द्रित रहे हैं । अब हम रूकें और शारीरिक कार्य के द्वारा बच्चों को उचित रूप से शिक्षित करने पर केन्द्रित हों ।'[8] गांधी जी ने स्पष्टत: कहा था –'जहाँ अस्सी फीसदी आबादी खेती करने वाली है और दूसरी दस प्रतिशत उद्योगों में काम करने वाली है शिक्षा को निरी साहित्यिक बना देना तथा लड़के और लड़कियों को उत्तर जीवन में हाथ के काम के लिए अयोग्य बना देना गुनाह है।'[9] शारीरिक श्रम से युक्त शिक्षा हेतु गांधी जी ने 'बुनियादी शिक्षा' की ओर ध्यान आकर्षित करवाया था । बुनियादी शिक्षा का उद्देश्य कौशल के माध्यम से छात्रों का शारीरिक , बौद्धिक और नैतिक विकास करना है। गांधी जी ने कहा है–'मनुष्य न तो कोरी बुद्धि है न स्थूल शरीर और न केवल हृदय या आत्मा ही है। सम्पूर्ण मनुष्य के निर्माण में तीनों के उचित और एकरस मेल की जरूरत होती है और यही शिक्षा की सच्ची व्यवस्था है।'[10]

गांधी जी के शिक्षा दर्शन अनुसार –

- 7 से 14 वर्ष की आयु तक मातृभाषा में नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा हो ।
- शिक्षा द्वारा शरीर, हृदय और आत्मा का सामंजस्यपूर्ण विकास होना चाहिए ।
- कृषि कार्य तथा अन्य कुटीर उद्योग संचालन हेतु प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ।
- शिल्प की शिक्षा इस प्रकार हो कि बालक उसके सामाजिक एवं वैज्ञानिक महत्व को समझ सके तथा शिल्प द्वारा जीविकोपार्जन कर सके।
- बालक बालिकाओं को समान शिक्षा मिलनी चाहिए।

यद्यपि गांधी जी द्वारा सुझाये कौशल आधारित शिक्षा को भारत में स्थान नहीं दिया गया किन्तु विश्व के अनेक राज्यों ने इसे स्वीकार किया और आज उन राज्यों की गणना विकसित राज्यों के श्रेणी में किया जाता है । इसके उदाहरण हैं–अमेरिका ,चीन ,जापान जर्मनी ,फिनलैंड आदि ।

'फिनलैंड' यूरोप का एक छोटा सा किन्तु 100 प्रतिशत साक्षरता वाला देश है । जहाँ गांधी जी द्वारा बताये शिक्षा पद्धति अनुसार राज्य द्वारा अनिवार्य और निशुल्क शिक्षा दी जाती है । बच्चों के मस्तिष्क में सूचनाओं को भरने तथा प्रतियोगिता में धकेलने के स्थान पर आपस में सहयोग और विश्वास के साथ मानवीय गुणों के विकास पर ध्यान दिया जाता है । आज फिनलैंड की शिक्षा पद्धति विश्व के लिए आकर्षण का केन्द्र बना है।

'चीन' विश्व का सबसे बड़ा निर्यातक देश है । आज के इस व्यापारिक साम्राज्यवाद के युग में चीन का विश्व के अनेक राज्यों में व्यापारिक हस्तक्षेप है । चीन के इस शक्ति का कारण वहाँ की शिक्षा व्यवस्था ही है। विशाल जनसंख्या के बावजूद भी चीन में शिक्षा का व्यापारीकरण नहीं किया गया है तथा 9 वर्ष की अनिवार्य शिक्षा राज्य द्वारा निशुल्क दी जाती है । इसके उपरान्त छात्र अपनी रूचि के अनुसार व्यावसायिक अथवा विशेषीकरण की शिक्षा प्राप्त करते हैं । विश्व जानता है कि 'आज विश्व में सबसे ज्यादा पेटेंट चीन द्वारा कराया जा रहा है ।' निष्कर्शत: गांधी जी द्वारा प्रतिपादित शिक्षा पद्धति को अपनाया जाना प्रमाणित हो रहा है।

द्वितीय विश्व युद्ध के बम विस्फोट से बुरी तरह टूट जाने के बाद भी 'जापान' विश्व के शीर्ष राष्ट्रों में है । इसका श्रेय वहाँ की 'अद्भूत शिक्षा पद्धति' को जाता है । गांधी जी शिक्षा में नैतिक मूल्य, अनुशासन और वैज्ञानिकता पर जोर देते थे । जापान की शिक्षा पद्धति में भी इन सभी का अद्भूत सम्मिश्रण है । जापान में शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को जबाबदेह बनाना है। छात्र अपनी कक्षा की सफाई स्वयं करने के साथ–साथ बाजार की मांग के अनुसार व्यवसायिक शिक्षा भी प्राप्त करते हैं और शिक्षा समाप्त करते ही रोजगार में लग जाते हैं । ऑटोमोबाईल के क्षेत्र में जापान का विश्व भर में दबदबा है ।

विश्व के विकसित राष्ट्रों की कड़ी में एक नाम 'जर्मनी' का भी है । जर्मनी की उन्नत अर्थव्यवस्था का आधार वहाँ की शिक्षा पद्धति है । जर्मनी में सैद्धान्तिक शिक्षण के स्थान पर कौशल आधारित शिक्षण पर अधिक ध्यान दिया जाता है । अत: अपने अध्ययन के दौरान ही छात्र विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त कर लेते है। इन्ही कारणों से विश्व भर में श्रेष्ठ उत्पादों का निर्यात इस देश की पहचान है ।

महाशक्ति के रूप में स्थापित 'अमेरिका' की ओर देखें हम पायेगें कि अमेरिका में कृषि शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाता है । यहाँ भी गांधी जी के 'कृषि आधारित शिक्षा' की झलक मिलती है । कृषि विश्वविद्यालयों में कृषि आधारित खोज होते रहते हैं जिसका उपयोग किसान अपने खेतों में करते हैं।

उपरोक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि गांधी जी का शिक्षा दर्शन विश्व स्तर पर अपनी प्रमाणिकता सिद्ध कर चुका है। वर्तमान में शिक्षा पर किया गया खर्च ही भविष्य निर्धारित करता है। अत: बिना विलम्ब किये भारत की शिक्षा पद्धति में सुधार जरूरी है। वर्तमान में प्रचलित सैद्धान्तिक शिक्षा के स्थान पर व्यवसाय आधारित शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। यद्यपि विगत वर्षो में अनेक तकनीकी महाविद्यालय खोले गये हैं किन्तु भारत एक

कृषि प्रधान देश है और भारत में कृषि महाविद्यालयों की संख्या अन्य तकनीकी महाविद्यालयों की तुलना में नगण्य है तथा इस ओर छात्रों का रूझान बहुत कम है। अतः कृषि शिक्षा की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। कृषि आधारित खोज को बढ़ावा देने तथा कृषि सम्बन्धित शिल्प की शिक्षा से कृषि को लाभ का व्यवसाय बनाया जा सकता है। इससे युवाओं हेतु रोजगार के अवसर भी बढ़ेगें।

गांधी जी की मान्यता थी कि –'शिक्षा के प्रचलित ढाँचे को पूरी तरह समाप्त करके एक सच्चे राष्ट्रीय शिक्षा संघ की स्थापना करनी होगी जिसमें भारत की अपनी बुद्धि और प्रतिभा की सम्यक प्रतिष्ठा होगी।'[11] भारत की नयी शिक्षा नीति 2020 बन कर तैयार हो चुकी है जिसके तहत 3 वर्ष से 18 वर्ष की आयु तक अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान है। प्रारंम्भिक शिक्षा मातृभाषा में तथा कक्षा 6 से ही व्यवसायिक विषय को पाठ्यक्रम में जोड़े जाने का भी प्रावधान है। किन्तु लागू होने के बाद ही इस नयी शिक्षा नीति के परिणाम जाना जा सकता है। शिक्षा में गुणवता सुधार हेतु विश्व बैंक से सन् 2019 में 3700 करोड़ रूपये ऋण प्राप्त हुए हैं।[12] यह प्रयास तभी फलदायी होंगें जब गांधी जी के विचारानुसार शिक्षा का उद्देश्य मानवीय गुणों का विकास हो, शिक्षा में श्रम को जोड़ा जाए तथा शिक्षा हेड, हैण्ड एण्ड हार्ट से शिक्षा प्राप्त की जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दि हिन्दू 8मई 2020।
2. बी बी सी 1जून 2020।
3. गांधी मो0 क0, संपादक ढड्डा सिद्धराज, मेरे सपनों का भारत, सर्व सेवा संघ प्रका6न वाराणसी पृ0 06।
4. दैनिक भास्कर 01 मई 2020
5. एन सी आर बी .जी ओ व्ही .इन।
6. वही पृ0 26।
7. वही पृ0 83।
8. सक्सेना रमेश ,गांधी एक अध्ययन, विश्वभारती पब्लिकेशन, नई दिल्ली पृ0 210।
9. वही,पृ0 80।
10. वही,पृ0 82।
11. शर्मा शुभा, गाँधीजी का जीवन परिचय, चतुर्वेदी पब्लिकेशन जयपुर पृ0 116।
12. द इकोनॉमिक्स टाइम्स, 28 जून 2020
13. गांधी मोहन दास,सत्य के प्रयोग,नवजीवन प्रकाशान मंदिर, अहमदाबाद।
14. नेमा जी पी ,सिह प्रताप,गाँधीजी का दर्शन,रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर।

****

कोविड-19 महामारी के कालखण्ड में, भारतीय न्यायपालिका की भूमिका का सहकारी संघवाद पर प्रभाव

डॉ. विकास कुमार दीक्षित *

शोध सारांश – भारतीय न्यायपालिका भारतीय संघवाद की धुरी है, केन्द्र राज्य संबंधों की रेफ्री है तथा भारतीय जनता की स्वतंत्रता एवं मौलिक अधिकारों की संरक्षिका है। कोरोना महामारी के परिप्रेक्ष्य में सरकार के तीनों अंगों की भूमिका बढ़ गयी तथा केन्द्र एवं राज्य संबंध अपनी क्षेत्रातीत क्षेत्राधिकारों के संवर्धन को विवश नजर आये। इस संक्रमण काल के अवसर पर भारत में कहीं न कहीं सहकारी संघवाद के स्थान पर केन्द्र अभिभावी संघवाद परिलक्षित हुआ, भारतीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी सकारात्मक उपस्थित दर्ज की तथ दस से अधिक निर्देश दिये जिसमें 'हम भारत के लोग' कोरोना काल में अपनी स्वतंत्रता एवं मौलिक अधिकारों को संरक्षित अनुभव कर सकें।
शब्द कुंजी – संघवाद, न्यायपालिका, केन्द्र-राज्य संबंध, संविधान।

प्रस्तावना – ब्लैकवेल '*इनसाईक्लोपीडिया ऑफ पॉलिटिकल इन्सटीट्यूशन*' में संघवाद को इस प्रकार परिभाषित किया गया है कि 'संघवाद' एक ऐसा क्षेत्रीय समुच्चय है जिसके द्वारा एकात्मकता एवं क्षेत्रीय विविधता को एक राजनीतिक व्यवस्था में जोड़ा जाता है जिसमें शक्तियों का बंटवारा केन्द्रीय एवं क्षेत्रीय सरकारों के बीच एक संवैधानिक संरक्षकत्व के अन्तर्गत किया जाता है। ताकि दोनो एक दूसरे की सत्ता को स्वीकार करें'।[1] हमारे संविधान निर्माताओं ने क्षेत्रीय अस्मिता, स्वयत्ता एवं राष्ट्रीय एकता तथा अखण्डता को दृष्टिगोचर हमारे संविधान को प्रतिष्ठित किया था। भारतीय न्यायपालिका यद्यपि एकात्मक या एकीकृत है फिर भी भारतीय संघवाद की आधारशिला है, केन्द्र एवं राज्य संबंधों की अम्पायर अथवा रेफ्री है। प्रो0 उपेन्द्र बख्शी भारतीय सर्वेच्च न्यायालय को भारतीय संघवाद की केन्द्रीय शक्ति कहते हैं।[2]

कोरोना महामारी की विभीषिका जहाँ आम जनमानस को भयंकर रूप से त्रस्त कर रही है। वहीं हमारी संस्थाओं की प्रभावोत्पादकता एवं कार्यविधि का भी परीक्षण का अवसर उपलब्ध करा रही है। भारतीय संविधान ने हम भारत के लोगों को मात्र केन्द्र एवं राज्यों की कार्यपालिकाओं तथा प्रशासन के भरोसे न छोड़कर स्वतंत्रता तथा मौलिक अधिकारों के संरक्षण हेतु न्यायपालिका को जाग्रत प्रहरी बनाया है। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय ने कोरोना काल (कोविड-19)की भयंकर विभीषिका में कार्यपालिकीय निष्क्रियता के विरूद्ध कई महत्वपूर्ण निर्णय दिये जो भारतीय जनमानस के लिये मील का पत्थर साबित हुये।

अध्ययन का उद्देश्य – भारतीय संविधान के अन्तर्गत कोरोना (कोविड-19) महामारी की विभीषिका में केन्द्र राज्यों के बीच संबंधों का परीक्षण करना, भारतीय 'संघवाद की कार्यप्रणाली का इस भीषण कालखण्ड में प्रभावोत्पादकता का विश्लेषण करना एवं भारतीय न्यायपालिका के हस्तक्षेप के औचित्य एवं कारणों तथा प्रभावों की संक्षिप्त व्याख्या करना है।'

कोविड-19 का भारतीय संघवाद में प्रभाव – कोरोना महामारी की विभीषिका का प्राकट्य चीन के हुबेई प्रांत के वुहान शहर में 17 नवम्बर 2019 को माना जाता है तथा इस महामारी ने भारत में 30 जनवरी 2020 को प्रथम दस्तक केरल प्रांत में हुई जब एक चिकित्सा छात्रा चीन से भारत में लौटी थी। आज इस महामारी ने संपूर्ण देश को गिरफ में ले रखा है। कोविड-19 के परिणाम स्वरूप केन्द्रीय सरकार, क्षेत्रातीत अधिकारिता के अन्तर्गत कई सुधारों हेतु जिसमें कभी राज्यों का प्रभाव था। वर्तमान में कृषि क्षेत्र इसी प्रकार का एक ज्वलन्त उदाहरण है। जो प्राय: राज्यों के वर्चस्व का क्षेत्र रहा है। भारतीय संविधान (अनु-245-263) भाग 9 के द्वारा केन्द्र व राज्यों के संबंधों को विनियमित करने हेतु एक परिपक्व व गतिशील व्यवस्था का सृजन किया गया है। परन्तु सातवीं अनुसूची क केन्द्रीय सरकार के प्रति अग्रसर शक्ति साम्यता क्षेत्रीय अथवा प्रांतीय शक्ति शिथिलता को जन्म देती है। वस्तु एवं सेवाकर का भारतीय व्यवस्था में सम्मिलित इसी का उदाहरण है। कोविड-19 महामारी के प्रसार ने राज्यों को कहीं न कहीं केन्द्र पर अधिक निर्भर कर दिया, वित एवं अन्य व्यवस्थाओं की आवश्यकता ने राज्यों को केन्द्र का पिछलग्गू बना दिया है।

राष्ट्रीय लॉकडाउन तथा भारतीय संघवाद – भारतीय केन्द्र सरकार को आपदा प्रबन्धन अधिनियम 20053 के आलोक में महामारी से निपटने की व्यापक शक्तियाँ प्रदत्त हैं तथा भारत का प्रधानमंत्री राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन अधिकरण का मुखिया होता है। इसी कानून के द्वारा भारत में व्यापक लॉकडाउन लागू किये गये। यद्यपि महामारी अधिनियम 18974 में राज्य सरकारें भी महामारी से निपटने के लिये शक्ति संपन्न हैं। ध्यातव्य हो कि लॉकडाउन की प्रक्रिया भारत में पॉच चरणों में की गई।

प्रथम चरण 25 मार्च 2020 से 14 अप्रैल 2020 (21 दिन) द्वितीय चरण 15 अप्रैल 2020 से 3 मई 2020 तक (19) दिन तृतीय चरण 4 मई 2020 से 17 मई 2020 तक (14 दिन) चतुर्थ चरण 18 मई 2020 से 31 मई 2020(14) पॉचवा चरण 1 जून 2020 से 30 जून 2020 (30दिन) था।

भारत में प्रथम चरण के लॉकडाउन के कालखण्ड में, केन्द्र एवं राज्य सरकारों के बीच भारी मतभेद उजागर हुये हैं। इन मतभेदों के प्रमुख कारण इस प्रकार थे-

प्रथम– प्रवासी मजदूरों के आवागमन प्रबन्धन पर केन्द्र सरकार की अस्पष्ट

* सहा. प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) डॉ0 रामप्रकाश स्मारक महाविद्यालय परास,घाटमपुर कानपुर नगर (उ.प्र.) भारत

नीति।

द्वितीय– केन्द्र सरकार के कुछ कानून, जैसे राष्ट्रीय जनसंख्या रजिस्टर, एन0आर0सी0 एवं मोटर वाहन अधिनियमों में व्यापक बदलाव।

तृतीय– सत्ता बनाम विपक्ष की राजनीति।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रमसंगठन के अनुसार भारत में 40 करोड़ से अधिक लोग असंगठित क्षेत्रों में काम करते हैं तथा करोड़ों मजदूर अपने राज्यों से बाहर काम करते हैं। इन करोड़ों प्रवासी मजदूरों को बिना उनके गंतव्य के पहुँचाए लाक डाउन कर दिया गया। यह मजदूर मुख्यत: उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, छत्तीसगढ़ एवं पश्चिम बंगाल के थे जो मुख्यत: गुजरात, दिल्ली, महाराष्ट्र तथा कुछ दक्षिणी राज्यों में फंसे थे। यह श्रमिक रोजी–रोटी के अभाव में अपने ग्रह राज्यों में लौटने लगे, जिससे सैकड़ों रास्ते में ही किसी न किसी दुर्घटना या बीमारी का शिकार हो गये। यद्यपि लोकसभा में प्रश्नकाल के दौरान कितने मजदूर इस कुप्रबंधन से काल–कलवित हुए, इसका कोई रिकार्ड सरकार के पास नहीं था। जिसको लेकर के विपक्ष के नेताओं एवं सत्ता पक्ष के बीच मानसून सत्र में काफी गर्मा–गर्म बहस देखने को मिली। यद्यपि बाद के लॉकडाउन चरणों में काफी विचार–विमर्श एवं राज्यों की स्वयात्ता के बिन्दु दृष्टिगोचर हुए।

कोविड–19 का भारत के राजकोषीय संघवाद पर प्रभाव – भारी वित्तीय दबाव के मद्देनजर भारत की वित्तमंत्री श्रीमती निर्मला सीतारमण ने मई 2020 को लॉकडाउन पश्चात की अर्थव्यवस्था सुधारने हेतु वित्तीय सुधारों की श्रृंखला प्रस्तुत की जिनमें से राज्यों की ऋण सीमा में सशर्त बड़ोत्तरी करते हुये उनके सकल राज्य घरेलू उत्पाद के 3 प्रतिशत से 5 प्रतिशत तक कर दिया। परन्तु इस बड़ोत्तरी में केवल 5 प्रतिशत ही बिना शर्त के है। शेष बड़ोत्तरी केन्द्र सरकार द्वारा लगाई गयी शर्तो जैसे–जब राज्य रोजगार निर्माण, ऊर्जा क्षेत्र, शहरी विकास इत्यादि पर खर्च करें। सनद हो कि कृषि क्षेत्र में सुधार यथा प्रस्तावित कृषि उत्पादन एवं वाणिज्य (संवर्धन एवं सुविधा)विधेयक 2020 के कतिपय प्रावधानों को भी राजकोषीय संघवाद के प्रतिकूल माना जा रहा है तथा पंजाब एवं हरियाणा में इसका व्यापक विरोध हो रहा है। इस विधेयक के विरोध की पराकाष्ठा इस बात से समझी जा सकती है कि सत्ताधारी एन0डी0ए0 के प्रमुख एवं सबसे पुराने सहयोगी दल शिरोमणि अकाली दल की केन्द्रीय खाद्य एवं प्रसंस्करण उद्योग मंत्री श्रीमती हरसिमरत कौर बादल ने अपने पद से इस्तीफा दे दिया। वर्तमान में यह विधेयक लोकसभा एवं राज्यसभा में पारित हो चुका है तथा हस्ताक्षर के लिये राष्ट्रपति के पास लम्बित है।

पी0एम0 केयर फण्ड का औचित्य – भारत सरकार ने कोविड–19 से निपटने के लिये प्रधानमंत्री नागरिक सहायता एवं आपातकालीन स्थिति निधि(पीएम केयर फण्ड) की स्थापना 18 मार्च 2020 को की गई थी। इस निधि का उद्देश्य सरकार को राहत एवं चिकित्सा आदि के लिये फण्ड का संग्रहण करना था। मुख्यतया यह फण्ड विभिन्न सरकारी एवं प्राइवेट निगमों के चन्दे के द्वारा सृजित किया गया है। उक्त फण्ड एक ट्रस्ट के रूप में है, जिसके प्रमुख ट्रस्टी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी इसके प्रमुख हैं तथा सहयोगी ट्रस्टियों में अमित शाह(गृहमंत्री), राजनाथ सिंह(रक्षामंत्री) एवं निर्मला सीतारमण(वित्त मंत्री) हैं। इस फण्ड की आलोचना के कारणों में इसकी कार्यप्रणाली, पारदर्शिता व जवाबदेही का अभाव, दानदाताओं के नाम व राशि को सार्वजनिक न करना तथा सूचना के अधिकार का इस पर लागू न होना प्रमुख है। परन्तु इस फण्ड की सबसे बड़ी आलोचना इसका संसद द्वारा पारित न होना तथा राज्य की सहभागिता का पूर्ण अभाव होना है। टाइम्स आफ इण्डिया में प्रकाशित एक रिपोर्ट के मुताबिक(19.05.2020) के अनुसार पीएम केयर फण्ड में दो महीने से भी कम अवधि में 10,600/– करोड़ रूपये का दान आया।

कोविड–19 के कालखण्ड में भारतीय न्यायपालिका की भूमिका – भारतीय न्यायपालिका विशेषत: सर्वोच्च न्यायालय ने कई ज्वलंत मुद्दों पर केन्द्र तथा राज्य सरकारों को इस काल खण्ड में निर्णय अथवा निर्देश दिये प्रमुख इस प्रकार है।

इनरी कण्टज़न आफ कोविड–19 वाइरस इन प्रिजन,5 के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने राज्यों तथा केन्द्र शासित क्षेत्रों की सरकारों को निर्देश दिया बी त्वरित गति से एक उच्च स्तरीय समिति का गठन कर विभिन्न श्रेणियों यथा सामान्य अपराधों में निरूद्ध बंदियों को तत्काल अंतरिम जमानत अथवा पैरोल पर छोड़ा जाये। उक्त निर्णय को स्वप्रेरणा से मुख्य न्यायमूर्ति एस0ए0 बोबडे, न्यायमूर्ति एस0 नागेश्वर रॉव, एवं न्यायमूर्ति सूर्यकान्त की बेंच ने पारित किया था। मा0 सर्वोच्च न्यायालय ने इस निर्णय में जोड़ दिया कि बन्दीजन न्यायमित्र की सहायता लेकर के कर सकते हैं। सनद हो कि मा0 सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह निर्णय 23 मार्च 2020 को लिया गया था और इस निर्णय के फलस्वरूप राज्यों व केन्द्रशासित प्रान्तों को अपने यहाँ सम्बंधित उच्च स्तरीय समितियों का गठन कर हल्के अपराधों में निरूद्ध विभिन्न कैदियों को स्वतंत्र करना पड़ा।

इस निर्णय के अनन्तर इनरी कण्टज़न आफ कोविड–19 वाइरस इन प्रिजन, के द्वितीय केस में जो कि सीजेआई एस0ए0 बोबडे, जस्टिस एस0 नागेश्वर रॉव तथा जस्टिस मोहन एम सान्तवना गौदर की खण्डपीठ ने घोषित विदेशी नागरिकों के विषय में महत्वपूर्ण निर्णय लिया गया। इसके अनुसार यह नागरिक जो असम में गैर कानूनी ढंग से निरूद्ध किये गये थे तथा उन्होंने अपने निरूद्ध काल के दो वर्ष पूर्ण कर लिये थे। उनको 5000/–रू के बन्धपत्र के द्वारा अन्तरिम जमानत हेतु आदेशित किया गया। सनद हो कि यह निर्णय मा0 सर्वोच्च न्यायालय ने अपने पूर्व के निर्णय यथा सर्वोच्च न्यायालय विधिक सेवा समिति प्रति भारत संघ को संशोधित करके लिया गया।

हर्ष मंदर प्रति भारत संघ – के वाद में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने केन्द्र तथा राज्य सरकारों को प्रवासी मजदूरों के भोजन, आश्रम स्थल, गन्तव्य तक पहुँचने का साधन तथा अन्य आवश्यक जरूरतों को प्रदत्त करने हेतु आदेश जारी किया ताकि वह सुरक्षित अपने घरों को वापस जा सकें। इस निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय की खण्डपीठ सीजेआई बोबडे, जस्टिस एस0के0 कौल व जस्टिस दीपक गुप्ता के द्वारा न्यायिक सक्रियता का परिचय देते हुए याची हर्ष मन्दर एवं अंजली भारद्वाज की याचिका पर 07 व 21 अप्रैल 2020 को सुनाया गया। वरिष्ठ अधिवक्ता प्रशांत भूषण ने एक कोष बनाकर के दिहाड़ी मजदूरों को रोजाना दिहाड़ी देने की प्रार्थना सर्वोच्च न्यायालय से की गई थी। परन्तु इस निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि मजदूरों को लॉकडाउन के दौरान दिहाड़ी देना सरकार के विवेक पर निर्भर है। यद्यपि नीतिगत विषय होने के कारण सर्वोच्च न्यायालय इस पर सीधे हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। परन्तु सरकार से इस पर विचार करने का अनुरोध किया गया।

शशांक देव सुधी प्रति भारत संघ – के वाद में कोविड–19 की भारतीय जनता को सरकारी अस्पतालों में नि:शुल्क जॉच तथा प्राईवेट अस्पतालों में निर्धारित शुल्क पर जॉच के आदेश दिये तथा भारतीय चिकित्सा शोध परिषद एवं केन्द्र सरकार को आदेश दिया कि अतिशीघ्र कोविड–19 जॉच प्रयोगशालाओं की अनुमोदित सूची सार्वजनिक करें। इस निर्णय को जस्टिस अशोक भूषण व जस्टिस रवीन्द्र की खण्डपीठ के द्वारा 13 अप्रैल 2020

को पारित किया गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने इस निर्णय के द्वारा यह स्पष्ट किया कि आई0सी0एम0आर0 के द्वारा प्राइवेट प्रयोगशालाओं को सूचिबद्ध कर कोविड–19 की जॉच के लिये अनुमोदित किया जाये तथा आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना के द्वारा पात्र व्यक्तियों की नि:शुल्क जॉच की जाये। हालाँकि 5 दिनों के पश्चात सर्वोच्च न्यायालय ने अपने इस निर्णय पर संशोधन करते हुए प्राइवेट प्रयोगशालाओं से नि:शुल्क जॉच के स्थान पर न्युनतम तथा युक्तियुक्त शुल्क लेने की बात कही।

मनोहर लाल शर्मा प्रति नरेन्द्र दामोदर दास मोदी एवं अन्य – के बाद में सर्वोच्च न्यायालय ने पी0एम0केयर0फण्ड की संवैधानिकता का आदेश दिया तथा याची का तर्क इस प्रकार का फण्ड मात्र अनु0–266 व 267 के अन्तर्गत केवल संसद का अधिकार है को स्वीकार नही किया। इस निर्णय को सीजेआई बोबडे, जस्टिस एस नागेश्वर रॉव, तथा मोहन एम शान्तागोदर की पीठ द्वारा 13 अप्रैल 2020 को प्रतिपादित किया गया था। घ्यातव्य हो कि इस वाद में याची ने पीएम केयर फण्ड की संवैधानिकता को चुनौती दी थी तथा तर्क दिया था कि आपातकालीन निधि का गठन मात्र संसद का विशेषाधिकार है क्योंकी वित्त मुख्यतया व्यवस्थापिका के द्वारा तय मापदण्डों के अनुसार ही कार्यपालिका के द्वारा खर्च किया जाना चाहिये। इस वाद में याची पीएम केयर फण्ड की सार्वजनिकता साबित करने में असफल रहा तथापि किसी तकनीकी खामी के कारण सर्वोच्च न्यायालय ने याचिका को खारिज कर दिया। बेहद सम्मान के साथ निवेदन है कि याची का तर्क वास्तव में सही है, क्योंकी वित्त कार्यपालिका के क्षेत्र की विषयवस्तु न होकर व्यवस्थापिका का क्षेत्राधिकार है।

अलख आलोक श्रीवास्तव प्रति भारतसंघ– के बाद में असंख्य पैदल चलते श्रमिकों यथा बुजुर्गो औरतों बच्चों की बेहद दयनीय दशा को देखते हुये माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्थानीय राज्य सरकारों को पैदल यात्रा कर रहे श्रमिकों को समुचित वाहन भोजन दवायें आदि उपलब्ध कराने को निर्देश दिये तथा जिला कलेक्टरों को उक्त दायित्व से सम्बद्ध किया। उक्त निर्णय सीजेआई एस0ए0 बोबडे व एल नागेश्वर रॉव की खण्डपीठ द्वारा दिया गया। इस वाद में पैदल चल रहे हजारों प्रवासी मजदूरों को आश्रय स्थलों में रखा गया।

आयोम वेलफेयर सोसाइटी प्रति भारतसंघ– के बाद में याची नॉन राशन कार्ड होल्डर्स को भी राशन प्रदान करने का आग्रह किया। यद्यपि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उक्त रिट पिटीशन को केन्द्र सरकार को विचार के लिये अवश्य भेज दिया जिससे बिना राशन कार्ड धारी नागरिकों को भी कोरोना काल में राशन मिल सका।

महुआ मोईत्रा प्रति भारतसंघ– के बाद में याची त्रणमूल कांग्रेस सांसद ने कारपोरेट सोशल रिस्पांसिबिलिटी (सी0एस0आर0)का सी0एम0 केयर फण्ड को चन्दा न देने सम्बन्धी प्रावधान को लेकर याचिका दाखिल की तथा अनुसूची कम्पनीज एक्ट 2013 को भेदभावपूर्ण बताया। तथा एम0सी0ए0 सर्कुलर को अनुच्छेद 14 भारतीय संविधान का अति उल्लंघन करार दिया।माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने याचिका खारिज कर संसद में इस मुद्दे पर बहस का सुझाव दिया तथा कहा कि मामला न्यायालय में न्योग्य नहीं है।

इसके अतिरिक्त माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने कई निर्णयों तथा चिकित्सकीय सेवा करने वाले कर्मचारीगणों के आवास सम्बन्धी तथा राज्यों की जी0एस0टी0 विवादों को भी हल करने में भी प्रमुख भूमिका अदा की, अत: निसंदेह मा0 सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी सकारात्मक उपस्थिति का आभास कराया है।

इन री प्राब्लम्स एण्ड मिशरीज़ आफ माइग्रैन्ट्स लेबर्स– के स्व प्रेरित वाद में मा0 सर्वोच्च न्यायालय ने प्रवासी मजदूरों की सरकारी अनदेखी व नौकरशाही के लापरवाह रूख को लेकर के तल्ख टिप्पणी की तथा कहा कि इस समस्या से निपटने के लिये और अधिक सार्थक प्रयासों की आवश्यकता है, जो केन्द्र एवं राज्य सरकारों के द्वारा नहीं किये जा रहे हैं। 28 मई 2020 को इस निर्णय के अनुसरण में मा0 सर्वोच्च न्यायालय ने दिशा–निर्देश जारी किये जो इस प्रकार हैं–

1. प्रवासी श्रमिकों से उनके गंतव्य तक पहुंचने का किसी प्रकार ट्रेन अथवा बसों का किराया नहीं वसूला जायेगा तथा इस किराये को केन्द्र या राज्य सरकारों को वहन करना होगा।
2. सम्बंधित राज्यों को ही उक्त श्रमिकों को भोजन उपलब्ध कराना होगा, जहाँ यह श्रमिक रूकें होंगें।
3. जहाँ से यात्रा प्रारम्भ होगी वहाँ का राज्य प्रवासी मजदूरों के भोजन पानी की व्यवस्था करेगा। यात्रा के दौरान रेलवे तथा यात्रा समाप्त होने पर गंतव्य राज्य उपरोक्त व्यवस्था करेगा।
4. तत्काल सभी राज्यों को प्रवासी श्रमिकों की पंजीकरण की व्यवस्था करनी होगी तथा हेल्पडेस्क बनाकर के उनकी यात्रा का बन्दोबस्त करना होगा।
5. यदि प्रवासी मजदूर पैदल यात्रा करते पाये जायें, तो सम्बंधित राज्य उनके भोजन, पानी, दवायें तथा आश्रयस्थलों की व्यवस्था करें।
6. गंतव्य राज्य का दायित्व होगा कि वह इन मजदूरों के निशुल्क चिकित्सकीय जॉच अपने खर्चे पर करायेगा।

निष्कर्ष एवं सुझाव – वर्तमान में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के चमत्कारिक प्रभावशाली व्यक्तित्व ने कहीं न कहीं 'संघवाद' की परिधि में 'केन्द्र–अभिभावी संघवाद' बना दिया है भारतीय न्यायापालिका के कोरोना काल में आये प्रमुख निर्णय यद्यपि संघात्मकता के स्थान पर एकात्मकता प्रदर्शित करने वाले दृष्टिगोचर होते है। तथापि वर्तमान कोविड–19 से त्रस्त 'हम भारत के लोग ...'किसी सिद्धान्तगत राजनीति की अपेक्षा कल्याणकारी राजनीति पर भी विचार करना सर्वोत्कृष्ट है। यद्यपि भारतीय संसद में राज्यों के राजकोषीय संघवाद की गरिमा तथा पी0एम0 एवं सी0एम0 केयर फण्ड पर चर्चा अवश्य होनी चाहिए। संभवत: अन्तर्राज्यीय परिषद इस हेतु अच्छा मंच सिद्ध हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वरनन बॉगडैनर सम्पादित, 'द इनसाक्लोपीडिया ऑफ पॉलिटिकल इंस्टीट्यूशन' विले ब्लैकवेल 1987
2. प्रोफेसर उपेन्द्र बख्शी, 'द इण्डियन सुप्रीम कोर्ट एण्ड पॉलिटिक्स' 1980, ईस्टर्न बुक कम्पनी, लखनऊ
3. 2005 का अधिनियम सं0–53
4. महामारी अधिनियम 1897 की धारा 2
5. सुमोटो रिट पिटीशन (सी0)नं0–1/2020
6. रिट पिटीशन (सिविल)डायरी नं0–10801/2020
7. डायरी नं0–10816सन् 2020
8. रिट पिटीशन (क्रिमि0)डायरी नं0–10896/2020
9. रिट पिटीशन (सिविल) नं0–468/2020
10. रिट पिटीशन (सिविल)डायरी नं0–11031/2020
11. रिट पिटीशन (सिविल)डायरी नं0–11007/2020
12. सुओ मोटो रिट पिटिशन(सी) नं0–1/2020

स्वच्छता का आर्थिक विकास पर प्रभाव : एक अध्ययन (इन्दौर शहर के विशेष संदर्भ में)

डॉ. विवेक कुमार पटेल * डॉ. देवेन्द्र सिंह बागरी **

प्रस्तावना – विश्व के विकसित देशों में विकास एवं आधुनिकता के जो मानक तय किये गये है उनमें स्वच्छता का महत्वपूर्ण स्थान है। हम विकासशील देश विकसित देशों के माडल को अपना कर आगे बढने की बात करते है, परन्तु क्या उन मानकों को भी विकास और आधुनिकता में सम्मिलित करने के लिए तैयार है, यह विचार करने की आवश्यकता है। बिना स्वच्छता के हमारा जीवन, परिवार, समाज, संस्कृति, राष्ट्र, विश्व और चेतना के उच्च स्तरीय आदर्श को प्राप्त करने हेतु प्रथम स्थान पर आती है। यदि किसी भी देश में ये सभी बेहतर रहे तो आर्थिक विकास भी बेहतर होगा। यही कारण है कि स्वच्छता को लेकर देशों की सरकारें बहुत गम्भीर है। स्वच्छता के प्रभाव को हम म.प्र. के इन्दौर रीजन के आर्थिक विकास से समझ सकते है। सन् 2017 में पहली बार जब इन्दौर नम्बर वन बना तब रीजन में 2.5 हजार करोड़ का निवेश था और यह रफ्तार तेजी से बढती हुई 2019-20 में 21 हजार करोड़ तक पहुच गई। इस तेजी से हुए विकास में स्वच्छता ही मुख्य कारक नही है परन्तु स्वच्छता भी प्रभावी कारक है। इसका तीव्र विकास में कई क्षेत्रों का समेकित योगदान है। इस विकास के कारण जीवन स्तर में सुधार रोजगार के अवसरो में वृद्धि, विदेशी निवेश में वृद्धि, निवेशको का क्षेत्र के प्रति विश्वास बढ़ा है। इस प्रकार हम कह सकते है कि किसी भी क्षेत्र के विकास के लिए स्वच्छता प्रभावी कारक होता है।

स्वच्छता व भारत – यह सर्वविदित है कि स्वस्थ्य शरीर में ही स्वस्थ्य मन का वास होता है और जब मन स्वस्थ्य होगा तो सोच भी विस्तृत व स्वस्थ्य होगी तो विकास का सकारात्मक नजरिया होगा और विकास तीव्र गति से होगा। विश्व के जिन 2.5 अरब लागों के पास साफ सफाई स्वच्छता की सुविधा उपलब्ध नही है उनमें से एक तिहाई भारत में रहते है। इतना ही नही विश्व में जिन अरबों लोगो के पास शौचालय नही है और मजबूरन उन्हे खुले में शौच जाना पडता है , उनमें से 60 करोड़ लोग भारत के ही है। इससे स्पष्ट है कि हमारा देश स्वच्छता के प्रति कितना लापरवाह देश है। भारत में स्वच्छता मिशन कार्यक्रम लाया गया है। लेकिन इस कार्य हेतु आवंटन इतना कम हुआ कि यह कार्यक्रम प्रभावी परिणाम न दे सका। इस समस्या को देखते हुए वर्ष 1999 में सम्पर्ण स्वच्छता अभियान चलाया गया। इस अभियान में केवल घरों, पंचायतों, आगनवाड़ी केन्द्रों एवं स्कूलों को प्राथमिकता दी गई। सामान्यत: शासकीय योजनाओं में जो समस्याये देखने में आती है उन समस्यों की भेंट यह कार्यक्रम भी चढ़ा है। इसका मुख्य कारण भ्रष्टाचार, व्यक्ति, शासन-प्रशासन की कमजोर इच्छाशाक्ति, कर्तव्यविमुखता व आलस्य रहे हैं।

हमारे देश में लगभग 6 करोड़ टन कचरा प्रति वर्ष पैदा होता है जिसमें बडे शहरों की भागीदारी अत्यधिक है और यह दिनों दिन बढता रहा। लगभग 6 करोड़ टन के कचरें में से लगभग 1 करोड़ टन कचरा केवल दिल्ली, कोलकाता, मुम्बई, बंगलुरू और चेन्नई जैसे चुनिन्दा शहरों का है। परन्तु हमारे देश के ही कुछ प्राप्त केरल, मिजोरन, लक्ष्यदीप, और सिक्कम में अब स्वच्छता का कोई मुद्दा नही है और यहा विकास की गति तीव्र है। स्वच्छ भारत अभियान के उद्धाटन के दौरान प्रधानमंत्री मोदी जी ने देश की सभी पिछली सरकारों और सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृति संगठनों द्वारा सफाई को लेकर किए गए प्रयासों की सराहना की है। उन्होने जोर देते हुए कहा कि भारत को स्वच्छ बनाने का काम किसी एक व्यक्ति या अकेले सरकार का नही है। यह काम तो देश के 135 करोड़ लोगों द्वारा किया जाना है जो भारत माता के पुत्र-पुत्रिया है। उन्होने कहा कि स्वच्छ भारत अभियान को एक जन आन्दोलन में तब्दील करना चाहिए। लोगों को ठान लेना चाहिए कि वह न तो गन्दगी करेंगें और न ही करने देगे।

स्वच्छता एवं विकास – एक शोध के अनुसार देश की आधे से अधिक आबादी घोर गन्दगी या प्रदूषित स्थानों पर जीवन बसर करने के लिए मजबूर है। जिस कारण इस दिशा में ध्यान देनाा आवश्यक है जिन मोहल्लों या गावों की आबादी अधिक है या घनी बसी हुई है वहॉ पर स्वच्छता की ओर ध्यान देना की बहुत आवश्यक है। समान्यत: देखने में यह आया है कि ऐसे स्थानों पर लोग अधिक बीमार होते है और विकास की गति भी बहुत धीमी होती है। अधिक आबादीवाले स्थानों पर अधिकाशत: ऐसे लोग रहते है जिनकी आय कम होती है जो किसी प्रकार अपना जीवन निर्वाह करते है। इन बातों से स्पष्ट है कि स्वच्छता सीधे विकास को प्रभावित कर रही है। इस विकास को सीधे तौर पर सामाजिक परिवर्तन से जोड़कर देखा जाना चाहिए। उदाहरण के तौर पर दिल्ली के कम विकसित इलाकों में रहने वाले परिवारों की गलियाँ, सड़के और सार्वजनिक स्थलों पर पालीथीन और अपशिष्ट वस्तुयें अधिक फेकी हुई दिखाई पड़ती है। इससे अंदाजा लगाया जा सकता है कि सामाजिक विकास न हो पाने का स्वच्छता का भी एक कारण है। यदि व्यक्ति का परिवेश स्वच्छ है तो बीमारी कम होगी, सोच बढेग़ी और शिक्षा का स्तर बढेगा तो विकास स्वमेव होगा।

देश के विकास का पहला कदम स्वच्छता – भारत देश पुननिर्माण के दौर से गुजर रहा है जिसमें तरक्की की गगन चुम्भी इमारतों से लेकर दौडती बुलेट ट्रेन का स्वप्न, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश के सहारे देशवासियों के लिए आधारभूत सुविधाओं को जुटाना, राष्ट्रीयता की स्थापना से लेकर आतंक

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय तुलसी महाविद्यालय, अनूपपुर (म.प्र.) भारत

से मुक्ति का महामृत्युंजय मन्त्रा भी जपा जा रहा है। इन्ही सब प्रगति के विशाल आकाश में राष्ट्रपिता गांधी के स्वप्नों का स्वच्छ भारत भी अपना आकार ले रहा है। स्वस्थ जीवन जीने के लिए स्वच्छता का विशेष महत्व है। स्वच्छता अपनाने में व्यक्ति रोग मुक्त रहता है और एक स्वस्थ्य राष्ट्र निर्माण में अपना महत्वपूर्ण योगदान देना है, अत: हर व्यक्ति को जीवन में स्वच्छता अपनानी चाहिए और अन्य लोगों को भी इसके लिए प्रेरित करना चाहिए।

शरीर की स्वच्छता से लेकर मन की स्वच्छता और यहाँ तक कि धन की स्वच्छता में मिलकर भी भारत के पुनर्निर्माण की नींव रखी जा सकती है। ग्राम, नगर, प्रान्त की गन्दगी समाप्त होने के बाद ही राष्ट्र का स्वस्थ होना संभव है। तन -मन धन की स्वच्छता के बाद ही इस राष्ट्र का नवीन रूप सामने आएगा।

प्रधानमंत्री ने कहा कि विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक साफ-सफाई न होने के चलते भारत में प्रति व्यक्ति औसतन 6500 रूपये जाया हो जाते है। उन्होने कहा कि इसके दृष्टिगत स्वच्छ भारत जन स्वास्थ्य पर अनुकूल असर डालेगा और इसके साथ ही गरीबों की गाढी़ कमाई की बचत भी होगी। जिसमें राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण सुधार होगा। इन्होने लोगों से साफ-सफाई के सपने को साकार करने के लिए इसमें हर वर्ष 100 घन्टे योगदान करने की अपील की है। प्रधानमंत्री ने शौचालय बनाने की अहमियत को भी रेखांकित क्रिया। इन्होने कहा कि साफ -सफाई को राजनीतिक चश्में में नही देखा जाना चाहिए, बल्कि इसे देश भक्ति और जन स्वास्थ्य के प्रति कटिबद्धता से जोड़कर देखा जाना चाहिए। जब व्यक्ति स्वस्थ होगा तो उसकी मेहनत की कमाई, बीमारी के इलाज एवं अन्य जीवन निर्वाह में आवश्यक आनेवाली परेशानियों से बचेगी और वह उस बचत का निवेश करेगा तो निश्चित रूप से उसके जीवन स्तर में भी सुधार आएगा। इस प्रकार ये छोटे-छोटे निवेश व्यक्ति के विकास का कारण बनेगे, जब व्यक्ति का विकास होगा, समाज विकसित होगा। व्यक्ति का निवेश उसकी आय को बढ़ायेगा, क्रय शक्ति को बढ़ायेगा।

स्वच्छता और इन्दौर के आर्थिक विकास में अंतर्सम्बंध - स्वच्छता का आर्थिक विकास से प्रत्यक्ष संबंध है। इसे समझने के लिए इन्दौर रीजन का उदाहरण लिया जा सकता है, जहॉ स्वच्छता के प्रत्यक्ष प्रभाव से तीव्र आर्थिक विकास हुआ है। यहॉ पूरे म. प्र. का 70 प्रतिशत निवेश आ रहा है। आई टी कम्पनियां के लिए पहली पसंद है। यह सब परिवर्तन मात्र कुछ वर्षो में हुआ है। पहली बार सन् 2017 में इन्दौर स्वच्छता में नं. वन बना और उस समय पूरे इन्दौर रीजन का निवेश ढाई हजार करोड़ रूपये का प्रति वर्ष रहा। इन्दौर 2017 से लगातार स्वच्दता में नं. वन बना रहा और इसका प्रभाव यह हुआ कि 2017-18, 2018-19 और 2019-20 के दौरान पूरे रीजन का निवेश बढकर 21 हजार करोड़ रूपये हो गया अर्थात् प्रति वर्ष सात हजार करोड़ रूपये का औसतन निवेश हुआ। निवेश में यह वृद्धि सभी क्षेत्रों को मिलाकर हुई। इसमें प्रमुख रूप से रियल एस्टेट सेक्टर है जिसमें कारोबार प्रतिवर्ष आठ हजार करोड से बढकर ग्यारह हजार करोड़ से भी अधिक जा पहुचा। इस निवेश को वर्षवार तालिका-1 से समझा जा सकता है -

वर्ष	रजिस्ट्री	आय (लगभग)
2015-16	71000	824 करोड़
2016-17	70673	829 करोड़
2017-18	87000	1009 करोड़
2018-19	97000	1134 करोड़
2019-20	100000	1173 करोड़

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 2015-16 और 2016-17 के दौरान प्रत्येक वर्ष औसतन सत्तर हजार सम्पत्तियों के सौदे हो रहे थे जो 2017-18, 2018-19 एवं 2019-20 के दौरान बढकर एक लाख तक पहुच गये। रियल सेक्टर का कारोबार 10 से 11 हजार करोड़ पहुच गया। इससे सरकार का राजस्व 800 करोड से बढकर 1100 करोड हुआ।

उल्लेखनीय है कि म. प्र. में सभी ए के वी एन रीजन में हर वर्ष औसतन 12 हजार करोड़ रूपये का निवेश होता है, तो इसके 70 प्रतिशत से ज्यादा अकेले इन्दौर क्षेत्र में आया है। ए.के.वी.एन.के. एम. डी. रहे ***कुमार पुरूषोत्तम (आई.ए.एस.)*** ने बताया कि सफाई में नं. वन बनने के बाद इन्दौर ग्लोबल मैप पर आया है। जब हम निवेश के लिए इन्दौर का प्रेजेंटेशन बताते थे, तो लोग तुरन्त पहचान लेते थे। कम्पनियों की मांग के कारण ही स्मार्ट इंडस्ट्रियल पार्क और अतुल्य आई.टी. पार्क स्थापित हुए। ऐसा नही है कि इन्दौर में पूर्व में आद्यौगिक विकास नही था। पूर्व में की निम्नलिखित आद्यौगिक क्षेत्र कार्यरत थे -

पीथमपुर (चरण ख,खख,खिखख) के आसपास के क्षेत्रों में अकेले 1500 बड़े, माध्यम और लघु औद्योगिक सेट-अप हैं।, इन्दौर के विशेष आर्थिक क्षेत्र (डएन लगभग 3000 एकड़) सांवेर औद्योगिक वेल्ट (1000 एकड़) लक्ष्मी बाई नगर आद्योगिक क्षेत्र , भागीरथपुरा काली विल्लोद (औ.क्षे.),रणमलविल्लोद (औ.क्षे.), शिवाजी नगर भिंडिकों (औ.क्षे.), हानोद (औ.क्षे.), क्रिस्टल आईटी पार्क 15.5 लाख वर्गफीट), आई टी पार्क परदेशीपुरा (1 लाख वर्गफीट), इलेक्ट्रानिक कॉम्प्लेक्स, टी.सी.एम. डएन , इंफोसिस डएन आदि है। इसके साथ ही डायमंड पार्क, रत्न और आभूषण पार्क, फूड पार्क, परिधान पार्क, नमकीन क्लस्टर और फार्मा क्लस्टर आदि क्षेत्र भी विकसित किय गये है, परन्तु विकास के तीव्र गति की बात करें तो वर्ष 1982 से 2016 तक 34 वर्षो में इन्दौर रीजन में 150 बड़ी कम्पनियों ने प्लांट लगाये जो सफाई में नं. वन बनने के बाद 2017 से 2020 के बीच चार वर्षो में ही 90 बड़ी कम्नपियों का प्रवेश इस रीजन में हुआ। नि:संदेह यह स्वच्छता में नम्बर वन होने का ही परिणाम है।

औद्योगिक निवेश का एक -फायदा यह भी हुआ है कि रोजगार के अवसरों का सृजन भी तेजी से हुआ है। रोजगार के नये अवसर भी बढे हैं। इन चार वर्षो में लगभग 24500 लोगो को नवीन रोजगार प्राप्त हुए जिन्हें वर्षवार तालिका-2 से समझा जा सकता है -

नम्बर वन होने का रोजगार व निवेश पर प्रभाव सारणी

वर्ष	रोजगार	निवेश (करोडों में)
2015-16	2500	2500
2016-17	3500	3000
2017-18	7000	6300
2018-19	7500	7400
2019-20	10000	7500

विकास की तेज गति इन्दौर रीजन में हरक्षेत्र में दृष्टिगोचर हुई है जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण यह है कि पहले क्रिस्टल आईटी पार्क को बनने और आई टी कम्पनियों को आने में करीब 10 वर्ष का समय लगा। वर्ष 2017 के बाद तेजी से आईटी कम्पनियां ने इन्दौर का रूख किया। जिसके सुखद परिणााम स्वरूप अतुल्य आई टी पार्क सिर्फ दो वर्षो में ही बन गया और एक वर्ष में ही ये पूर्ण हो गया। आज दोनो पार्क में लगभग 5000 लोग कार्य कर रहे है। अब इन्दौर तीसरे आई टी पार्क की ओर अग्रसर हो रहा है।

निष्कर्ष - किसी भी वस्तु या क्षेत्र को ग्लोबल पटल पर लाने के लिए

उसकी पहचान अन्य से अलग होना आवश्यक है। जिसमें इन्दौर ने यह कर दिखाया। स्वच्छता में नं. वन बनते ही यह ग्लोबल मैप पर आया। अब इन्दौर किसी परिचय का मोहताज नही रहा है। दैनिक जीवन में हमें अपने बच्चों को साफ-सफाई के महत्व और इसके उद्देश्य को सिखाना चाहिये। स्वच्छता एक ऐसा कार्य नही है जो हम दबाव से करें, बल्कि ये एक अच्छी आदत और स्वस्थ तरीका है। हमारे अच्छे स्वस्थ जीवन के लिये जरूरी है कि अच्छे स्वास्थ्य के लिये सभी प्रकार की स्वच्छता बहुत जरूरी है चाहें वो व्यक्तिगत हो, अपने आसपास के पर्यावरण की, पालतू जानवारों की या कामकरने की जगह विद्यालय, महाविद्यालय या किसी अन्य कार्यस्थल आदि हो।

अब हम सभी को निहायत जागरूक होना चाहिये कि कैसे अपने दैनिक जीवन में स्वच्छता को बनाये रखें। अपनी आदत में साफ-सफाई को शामिल करना बहुत आसान है। हमें स्वच्छता में कभी समझौता नही करना चाहिये, ये जीवन में पानी और खाने की तरह ही आवश्यक है। इसमें बचपन से ही कुशल होना चाहिए। जिसकी शुरूआत हर अभिभावक के द्वारा हो सकती है।

स्वस्थ भारत के निमार्ण हेतु हमारा सर्वप्रथम कदम राष्ट्र की तमाम गंदगियों को मिटा कर ही आगे बढ़ना हो सकता है। फिर हम मन की स्वच्छता की ओर विशेष ध्यान दे, और मन में बुरे विचारों को आने न दें । हम मन में आतंक, धर्म, जातिगत, लिंगभेद ऊँच-नीच और अमीरी-गरीबी के भाव न आने दें जिससे मन स्वच्छ होगा। महात्मा गांधी ने सही कहा है,**'*सच्ची लोकसत्ता या जनता का स्वराज्य कभी भी असत्य, झूठ, गंदगी, दिखावा या हिंसक साधनों से नहीं आ सकता।*'** हम न रिश्वत लें, न ही रिश्वत दें और न ही बिना कर चुकाए कालाधन अपने पास न रखे। इसके बाद घर को स्वच्छ रखें, मोहल्ले को स्वच्छ रखें, ग्राम, नगर और प्रान्त के साथ-साथ राष्ट्र को स्वच्छ रखें तो इससे भारत को स्थाई स्वच्छता मिलेगी। स्वच्छ भारत के साथ ही भारत के पुनर्निर्माण हेतु प्रत्येक की स्वच्छता ही कारगार विकल्प है। यदि क्षेत्र का तीव्र विकास करना है तो इन्दौर को आर्दश मानकर आगे बढ़ना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अवस्थी, अमरप्रकाश भारतीय राजनीतिक चिंतक, 2016, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रकाषन, आगरा, पृ. 205
2. दैनिक भास्कर - जबलपुर
3. विकिपिडिया इन्दौर
4. औद्योगिक केन्द्र विकास निगम - इन्दौर (ए.के.वी.एम.)
5. जनसम्पर्क विभाग भोपाल। इन्दौर
6. स्वच्छता सर्वेक्षण वर्ष 2019 रिपोट
7. प्रतियोगिता दर्पण, अप्रैल 2019, उपकार प्रकाशन, आगरा, पेज-52

****

बिदेशिया की रंग परिकल्पना

अमित रंजन*

प्रस्तावना – नीम अंधेरी रात.... विशाल मैदान...... चौकियों को जोड़ कर बनाए गए या किसी दरख्त के नीचे स्थित चबूतरे का खुला रंगमंच.....मंच पर विराजमान मुर्दाशंख, पाउडर, ओठलाली, काजल से लिपे पुते कुछ चेहरे... साज-साजिन्दे..... पेट्रोमेक्स की मद्धम रोशनी.....सामने बैठी हजारों अबाल- युवा- वृद्ध की भीड़..... एक कोने में बैठी जनानियाँ... और नीरवता को चीरती गुरु गंभीर वाणी- *'आज बिदेसी के तमासा होइहन! बिदेसी के तमासा काहे? दूर- दूर के लोग कहेला जे बिदेसिया के नाच देखे चले के। बिदेसिया के नाच न हवन, विदेशिया के तमासा हवन। एह तमासा में चार आदमी के पाट बा- बिदेसी एक, प्यारी सुन्दरी दू, बटोही तीन आ रखेलिन चार। अथवा बिदेसी ब्रह्म, बटोही धरम, रखेलिन माया, प्यारी सुन्दरी जीव। ब्रह्म जीव दूनो जाना एही देह में बाड़न बाकी भेंट ना होखे। कारन? माया। एकरा के काटे वाला बटोही धरम।'* [1] .... और इसी के साथ शुरु होता भोजपुरिया इलाके की निम्न जातियों की सांस्कृतिक गतिविधि, लौंडा नाच जैसे अश्लील, पुरुषवादी विधा की धारा को मोड़ कर ब्रह्म- धर्म- माया और जीव के साथ रुपक बाँधते हुए ब्रिटिश हुकूमत की सामंती व्यवस्था से लेकर वर्त्तमान भारत तक के भोजपुरी ग्रामीण अंचलों से श्रमिकों के पलायन की व्यथा- कथा.... बिदेशिया.... और यह न सिर्फ गुलाम भारत के आजादी के छटपटाहट की सांस्कृतिक क्रांति है, आधुनिक काल का नव जागरण है, समाजिक- आर्थिक- जातिगत परिस्थियों की स्वानुभूत अभिव्यक्ति है वरन् यही है भिखारी के एक नाटक की पीड़ा से उठ कर वैश्विक पीड़ा में बदलने और एक नाट्य शैली में ढ़लती 'बिदेशिया' की रंग परिकल्पना।

भिखारी ठाकुर ने बिदेशिया, गबरघिचार, बेटी वियोग आदि अपने नाटकों को नाच से अलग करने की कोशिश की क्योंकि नाच जैसी कोरी मनोरंजनक और अश्लील विधा के सहारे समाज सुधार की बात नहीं कही जा सकती थी। इसीलिए उनका सूत्रधार नाट्यारंभ में ही घोषणा कर देता है- *'बिदेसिया के नाच न हवन, विदेशिया के तमासा हवन'* और भिखारी अपने नचदेखुआ को तमाशबीन बनाने में जुट जाते हैं क्योंकि उनका अभीष्ट अपनी भोजपुरी जनता की चेतना का परिष्कार कर उसे गंभीर विषयों की ओर मोड़ना है। पर गीत- नृत्य के लोकनाटक का प्राणतत्व होने के कारण वो नाच से उबर नहीं पाते। उन्हें फिर कहना पड़ता है *'नाच काँच हऽ, बात साँच हऽ।'* बंगाल के समाज सुधार से प्रभावित भिखारी मनोरंजन को गौण कर समाज सुधार को प्रमुखता देते दिखाई देते हैं।

आज बिदेशिया स्थान, देश काल की सीमाओं का अतिक्रमण कर दूर दुनिया के मॉरीशस सहित दूसरे देशों तक भी पहुँच चुकी है। विगत कई सालों से देश के प्रख्यात्, ख्यात् और गुमनाम रंग परिकल्पक- नाट्य निर्देशक और नाट्य मंडलियाँ अपने-अपने हिसाब से अपनी रंग परिकल्पना, अपनी डिजाईन के साथ इसकी अनवरत प्रस्तुतियाँ करती आ रही हैं, इनमें नित नूतन प्रयोग किए जा रहे हैं परन्तु बिदेशिया की रंग परिकल्पना की मीमांसा भिखारी ठाकुर की मूल डिजाईन, उनकी रंग परिकल्पना के संदर्भ में करना ही समीचीन होगा और यही इस शोध पत्र का केन्द्रित भाव भी है।

बिदेशिया की कथावस्तु या नाटकीय समस्या है- *गाँव का मंझोला कद का गेंहूआ रंग वाला धोती कुर्ता टोपी पहने एक खेतिहर मजदूर युवा जिसे वर्ष के कुछ ही दिनों काम मिलता शेष बेरोजगारी में कटती है। उसकी शादी एक सांवली- सलोनी सुंदर युवती से हो जाती है, शादी के बाद गवना करा कर वह उसे घर लाता है- वैवाहिक जीवन की गाड़ी बड़े प्रेम से चल पड़ती है। पत्नी के रुप लावण्य और उसके प्रति अपरिमित प्रेमवश उसे नाम देता है 'प्यारी सुंदरी'। कुछ दिन चैन में बीतेते हैं, लंबी बोरोजगारी और बिगड़ती आर्थिक स्थिति युवक के मन मस्तिष्क को बराबर उद्विग्न करती रहती हैं। दूसरी ओर गाँव तथा आसपास के युवक और अधेड़ उम्र के लोग कृषि कार्य के अभाव में काम कर कुछ कमाने के लिए कलकत्ता तथा आसाम आदि पूर्व स्थित राज्यों में आते जाते रहते हैं और धन बचाकर घर लौट आते हैं। युवक भी सोचता है कि वह कलकत्ता जा कर मेहनत मजदूरी कर कुछ धन कमाये और फिर घर लौट कर अपनी पत्नी प्यारी सुंदरी के साथ रह कर मौज मस्ती करे। युवक अपनी पत्नी प्यारी सुंदरी से कलकत्ता जाने का अपना प्रस्ताव रखता है। युवती आशंकित एवं विचलित हो जाती है। वह पुरजोर विरोध करती है। तब वह बहाना बना कर चुपचाप घर से भाग जाने का मन बना लेता है। युवक कलकत्ता पहुँच जाता है। कलकत्ता के रंग ढ़ंग में ढ़लते हुए वह परदेशी से 'विदेशी' बन जाता है, धन कमाता है। अचानक उसका परिचय एक युवती से होता है, पत्नी से लंबी दूरी और उसकी युवावस्था कामनाओ को उदिप्त करती हैं, दिनोदिन बढ़ती निकटता और दोनों की आवश्यकता तथा परिस्थितियाँ उन्हें पति पत्नी की तरह रहने को मजबूर कर देती हैं। इस युवती को तत्कालीन समाज रखैल, रखैलिन या रंडी समझता है। विदेशी भर दिन कमाता है और खाली समय उस युवती के साथ मौज मस्ती, ताश के पत्ते और प्रणय व्यापार। इधर गाँव में नवव्याहता अकेली जान प्यारी सुंदरी को पति के धोखा देकर कलकत्ता भाग जाने का ज्योंहि बोध होता है उस पर विपत्तियों का पहाड़ टूट पड़ता है। अनवरत विरह वेदना आँखों के रास्ते बहती रहती है। कभी पति की मधुर स्मृतियाँ सुखद कल्पनालोक का सृजन करती हैं तो परदेश में पति की स्थिति का अनुमान बिलखाता है तो एकाकी मन और पत्नी सुलभ कामनाओं के वशीभूत हो विचलित हो जाती है पर मन में दृढ़ विश्वास है कि उसका पति एक दिन अवश्य लोटेगा और दुख विरह के बादल छंटेंगे। तभी अपनी परिस्थितियों*

*शोधार्थी, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा (बिहार) भारत

का मारा कलकत्ता कमाने जा रहा एक अधेड़ बटोही अचानक प्यारी सुंदरी से टकरा जाता है, उसके विलाप से द्रवित हो उठता है और उसके कष्ट और दुखों को समझ कर उसके पति को ढूँढ़ कर वापस घर भेजने का आश्वासन दे कर चला जाता है। कलकत्ता में घूमने फिरने के क्रम में प्यारी सुंदरी द्वारा बताए गए विवरण के अनुसार विदेशी की पहचान करता है। प्यारी सुंदरी की दारुण दशा का चित्रण और अखंड पातिव्रत्य की पुष्टि करता है। विदेशी की स्मृतियाँ सहसा जगती हैं और वो घर वापसी का मन बना लेता है। रखेलिन इसका विरोध करती है पर बटोही के समझाने, डराने और विवश करने पर विदेशी घर की राह पकड़ लेता है। बाड़ीवाला, साहूकार और गुंडों द्वारा बकाए की वसूली के लिए उसका सारा सामान, कपड़ा- लत्ती छीन लिया जाता है और वह उसी स्थिति में घर वापस चल देता है। इधर गाँव में विदेशी से कम उम्र का एक मनचला युवक प्यारी सुंदरी के सतीत्व की परीक्षा लेने के लिए तरह तरह के प्रलोभन देता है, बलात्कार की चेष्टा करता है, प्यारी दृढ़ता से प्रतिवाद करती है और पड़ोसिन के आ जाने के कारण देवर बना मनचला भाग खड़ा होता है। इधर अपनी दुरावस्था में पिटा पिटाया विदेशी घर वापस पहुँचता है, पति की आवाज पहचान सालों से टकटकी लगाए पत्नी दरवाजा खोलती है और प्रियतम को सामने पाकर आह्लाद आँखों सहित रोम रोम से फूट पड़ता है। पति की दशा पर स्तंभित होती है और कुशल क्षेम का सिलसिला चलता है। विदेशी के कलकत्ता छोड़ कर घर चले आने पर उसकी कलकतिया पत्नी और दोनों बच्चों पूरे गहने कपड़े एवं सामान के साथ विदेशी के घर के लिए निकलते हैं। कलकत्ता के चोर डकैत उसके गहने कपड़े छीन लेते हैं। विपन्नता की स्थिति में वह बच्चों समेत कलकत्ता से घर के लिए चल देती है, पूछते पूछते वह विदेशी के घर पहुँचती है। विदेशी उसको देख कर आश्चर्यचकित होता है, किन्तु वह महिला प्यारी सुंदरी के साथ रहने का अनुनय विनय करती है, तो सब मिलजुल कर रहने लगते हैं। [2]

बिदेशिया नाटक की समस्या नाटककार भिखारी की कोरी नाटकीय कल्पना या सहानुभूति नहीं बल्कि स्वानुभूति है। भोजपुरिया ग्रामीण अंचल के गाँवों में रोटी रोजगार की न तब व्यवस्था थी और न ही अब है, सम्पन्न वर्ग की सामंती सोच- व्यापार , जातीय विद्वेष, ऊँच- नीच, अमीरी- गरीबी की गहरी खाई की पराकाष्ठा में श्रम प्रवर्सन या श्रमिकों का पलायन बड़ी त्रासदी है। इसलिए बिदेशिया की प्रस्तुति के दरम्यान प्रेक्षक कथ्य के साथ गहराई में खोता चला जाता है और पात्र आसपास के लगते हैं उनकी पीड़ा अपनी पीड़ा लगती है जिसे गीत-संगीत उदित्त करते हैं और वो आचार्य रामचंद्र की 'रसदशा' या 'सिद्धावस्था' को प्राप्त कर लेता है।

भिखारी के नाट्य वैशिष्ट्य पर भोजपुरी के नामचीन साहित्यकार भगवती प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है, *भिखारी ने छोकरे के नाच की सार्थक ढ़ंग से प्रस्तुति करके तो शोहरत पाई ही, दो महत्वपूर्ण पात्रों का सृजन करके भी दर्शकों का मन मोह लिया। वे दो पात्र हैं- सूत्रधार और विदूषक (लबार)। भिखारी ठाकुर चूंकि खुद एक सिद्धस्थ कवि और गायक थे और उनमें आशुकवित्व और अच्छे वक्ता का गुण भी विद्यमान था, अत: उन्होंने स्वयं ही सूत्रधार की भूमिका निभाई। मंगलाचरण के बहाने देवी- देवताओं की स्तुति के बाद सूत्रधार अपनी काव्यमय शैली में नाटक के उद्देश्य कथानक और पात्रों की बाबत महत्वपूर्ण बातें समझाता और अपनी विलक्षण स्वर माधुरी से सबके मन को मोह लेता। .... नाटक के बीच बीच में आकर लबार अपने अभिनय तथा संवाद के माध्यम से हंसी की फुलझड़ियाँ छोड़ता रहता था। इस प्रकार दर्शकों का मनोरंजन होता रहता था और समाज में व्याप्त विसंगतियाँ, कुरीतियाँ भी लबार के हास्य व्यंग्य का विषय बनतीं थीं।* [3]

भिखारी के समय में स्त्री चरित्र का पाट पुरुष ही किया करते थे कमसीन, सुंदर लड़कों की तलाश भिखारी और दूसरे नाच दल बड़ी शिद्दत से करते और नृत्य- गायन में निपुण करने के लिए उन्हें कठिन प्रशिक्षण दे कर तैयार किया जाता, चितवन को बांकी बनाया जाता, अदाएँ कूट कूट कर भरी जातीं, ऐसे गुणवंत लड़के मिलते भी कम थे क्योंकि तब नाच को हेय दृष्टि से देखा जाता था। नाच मंडलियों के बीच ऐसे गढ़े- अनगढ़े 'लौंडों' की छीना झपट भी बहुत होती। कथाकार संजीव के उपन्यास सूत्रधार का कथानायक भिखारी ठाकुर सोचता है, *'बाहर से तमाशा देखना एक बात है और अंदर से घुसकर देखना दूसरी बात। लवंडों का चेहरे पर रंग- रोगन पोतना, नकली स्तन की 'सकली 'बाधंकर लहंगा चोली पहनना, सज- धज कर पाँव में घुंघरु बांध कर छम्मक छम्मक चलना, डुग्गी को कमर से बाँध कर नचनिया के पीछे- पीछे बजाते हुए घूमना, गोया नाच न हुई फसल की मड़ाई हो गई और वे तमाम छिछोर गीत- हमरे जोबना पर आईल बहार राजा- कुछ अजीब सा सा लग रहा है।'* [4] उन्होंने आगे इसी उपन्यास में एक ऐसे ही पिता का प्रसंग भी लिखा है जिसके बेटे को स्त्री पात्र बना दिए जाने के कारण वो जीवन भर भिखारी का तिरस्कार ही करता रहा जिसकी पीड़ा भिखारी को आजन्म सालती रही। लौंडा नाच को जगत् प्रसिद्धि दिलाने का श्रेय भिखारी ठाकुर और उनकी मंडली को है। सत्य ही भिखारी ने छोकरे के नाच को सार्थक ढ़ंग से प्रस्तुत कर शोहरत पाई।

बिदेशिया के सारे पात्र और साजिन्दे हारमोनियम, सारंगी, ढ़ोलक, झाल, कठताल,जोड़ी के साथ मंच पर आकर बैठ जाते हैं और अंत तक मंच पर ही मौजूद रहते हैं। सबसे पहले सूत्रधार मंच पर अवतरित हो संस्कृत नाटकों के सदृश् लगभग 'सामगान' की तरह मंगलाचरण से नाट्यारंभ करता है, लंबी चौड़ी भूमिका प्रस्तुत करता है कि आज नाटक में क्या क्या होने वाला है और उसमें समाहित अर्थ क्या है। फिर लंबे लंबे गीत और लबार का कटाक्ष एवं व्यंग्यजन्य हंसी की फुलझड़ियों के साथ नाटकीय कथानक आगे बढ़ाता चला जाता है जिससे नाटक की मूल संवेदना दर्शकों को बाँधे रखती है। नाटक में आद्योपांत चाहे साजिन्दा हो, जिसे भिखारी ने समाजी कहा, या अन्य कोई भी कलाकार अपनी बारी पर उठ कर अपनी भूमिका निभाते और फिर बैठ जाते और अंत में पुन: स्तुति के बाद ही एक साथ मंच से रुखसत होते हैं।

भिखारी नाट्य प्रस्तुतियों में ताम झाम नहीं करते, किसी खुले विशाल मैदान में चौकियाँ जोड़ कर मंच बना लिया जाता है या कोई बना बनाया चबूतरा ही रंगमंच बन जाता है। मंच के तीन तरफ प्रेक्षक बैठ जाते हैं, रोशनी के लिए मशाल या गैसबत्ती जला ली जाती है। कलाकार मंच के पास ही बहुधा खुले स्थान पर ही रुपसज्जा कर लेते हैं, कपड़ा बदल लेते हैं और अपनी भूमिका के समय खड़े हो जाते हैं, दर्शकों को भी इससे कोई असहजता महसूस नहीं होती। डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय भी इस तथ्य को लक्षित करते हैं, *'यहाँ नेपथ्य का भी अभाव रहता है। विभिन्न पात्र किसी पेड़ की आड़ में खड़े हो कर कपड़ा बदलकर तैयार होते हैं और रंगमंच पर जा कर अपना अभिनय करते हैं'।* [5] कभी कभी एक ही धोती या गमछे की स्टाईल बदल कर कलाकार चरित्र बदल लेते हैं। प्रोपर्टी के रुप में हारमोनियम, ढ़ोलक, सारंगी, झाल, कठताल, जोड़ी, लाठी, फटे कपड़े का टुकड़ा, सारंगी का डंडा जैसी सहज उपलब्ध सामग्रियाँ होतीं।

नाटक का दृश्य विधान भी बड़ा सहज है। कलाकारों के उठ कर अपनी भूमिका निभाने और बैठ जाने से या मंच का तालबद्ध एक गोल चक्कर भर लगा लेने से दृश्य बदल जाता है, पात्र कलकत्ता पहुँच जाता और कलकत्ता

से वापिस भी आ जाता है। कपड़े को तानकर कहीं कोहबर बना लिया जाता है तो कहीं उसी से नदी की लहरें भी उत्पन्न कर दी जातीं तो कभी कंधे पर टाँग ली जातीं हैं। सारंगी का डंडा बंदूक की तरह तन जाता है तो जरूरत पर हल बन जाता है। कभी कभी समाजी के समूह गायन से भी दृश्य परिवर्त्तन की सूचना मिल जाती है।

बिदेशिया में अभिनेता, समाजी और दर्शक में कोई विभाजन नहीं है। अभिनेताओं पर तो पूरे नाटक की जिम्मेदारी होती ही है। गेय नाटक होने के कारण बिदेशिया में गायन की बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। नाटक में कोरस भरने का काम समाजी ही करते हैं। साजिंदे गाते बजाते उठ कर अभिनय भी करने लगते हैं। सूत्रधार के एक बार आकर चले जाने के बाद समाजी ही कथानक को पकड़ कर आगे बढ़ाता रहता है। अपने समूहगान से आगे होने वाले नाट्य घटनाक्रम की जानकारी देता है, दृश्य को ज्यादा संप्रेषणीय बनाता है तो दृश्य परिवर्त्तन की सूचना भी देता है–

तेहि अवसर बटोही एक आये। तासो प्यारी दुख सुनाये।।
पति गुन कहि कहि रोवन लागी। सुनि बटोही के धीरज भागी।। [6]

पात्रों के संवादों में हामी भरने के साथ समाजी जगह उनके साथ जगह लंबा लंबा कथोपकथन भी करता है–

'बटोही – ए बबूआ ढ़ब ढ़ब ।
समाजी– का ह बाबा?
बटोही– हम टीसन पर जाईब ए बबुआ
समाजी– ए बाबा हईहे रास्ता सीधे टीसन पर चल जाई।
बटोही– अच्छा ए बबुआ, ई बताव कि कलकत्ता के मसूल कतना बा।
समाजी– कलकत्ता के मसूल एह घरी तीस रुपया लागी।
बटोही– (चिहा के) तीस रुपया लागी? सवा रुपया में ना फरियाई?
समाजी– सवा रुपया में त टिकठे ना मिली, महराज।' [7]

बिदेशिया में दर्शकों की भागीदारी भी कथानक के साथ जुड़ जाती है, पात्र उनके साथ संवाद स्थापित करता चलता है और आवश्कतानुसार अपने कथन की पुष्टि भी करा लेता है। इस काम को प्राय: लबार करता है पर जरुरत के मुताबिक दूसरे पात्र भी नाटक के साथ प्रेक्षक के तादात्म्य के मद्देनजर उनके साथ संवाद करते हैं।

बिदेशिया गेय नाटक है अस्तु इसमें गीतों की प्रधानता है। इसका मूल पाठ गीत ही रहा है जिसमें संवाद बीच बीच में प्रकीर्ण रुप से आते रहे हैं और प्राय: वो अलिखित ही रहे हैं जिसकी कोई पूर्वयोजना नहीं बनाई जाती थी और जो दृश्यानुकूल समयानुसार अभिनेताओं के प्रजेंस ऑफ माईंड से स्वत: प्रस्फुटित होता रहा। बटोही या दूसरे पात्र समाजी से कब क्या पूछ बैठेंगे और समाजी क्या जबाव देगा वो नहीं जानता था। इसका एक महत्त्वपूर्ण पात्र लबार कब क्या बोल देगा इसे भिखारी, सह अभिनेता, समाजी, दर्शक और खुद लबार तक नहीं जानता था। संजीव ने सूत्रधार में लिखा है कि कई बार इसी कारण बड़ी विकट समस्या और मारामारी तक की स्थिति उत्पन्न हो गई।

बिदेशिया की भाषा भोजपुरी है जो भिखारी ठाकुर की निज भाषा है और जिसे वह घर का 'गुर' कहते हैं। बिदेशिया की लोकप्रियता से मुदित भिखारी कहते हैं– *अइसन भिखारी कइलन तमासा। फइल गइल भोजपुरी भाषा।।* [8] यह चुटली और हास्य व्यंग्य मिश्रित है जो भर रात दर्शकों को बाँधने में बड़ी महत्तवपूर्ण भूमिका निभाती है। इस नाटक में भाषा के विविध रुप आते हैं। रामलीला से नाटकों की ओर प्रवृत होने वाले भिखारी पर तुलसी का प्रभाव है जो सूत्रधार की मानस के तर्ज पर दोहे चौपाईयों में अवधी का मिश्रण भी भोजपुरी में हो जाता है। परन्तु कुछ ही देर में भिखारी अपनी खाल में लौट आते हैं, *'पिया अइतन बुनिया में राखि लिहतन दुनिया में अखड़ेला अधिका सवनवाँ बटोहिया'।* [5] भिन्न भिन्न पात्रों की भाषा में भोजपुरी के विविध रुप सामने आते रहते हैं। कलकत्ता में रखेलिन के–

पिया पिरितिया लगा के दूर देश मति जाहू।
कहे भिखारी भीख मांगि के हम लाईब तुम खाहू।।
प्रात काल में दरसन करि के भिक्षा माँग कर लाउंगी।
अपने हाथ से सुंदर भोजन, नितहिं तुझे कराउंगी।। [9]

पर वही जब बिदेशी के घर पहुँचती है तो भाषा तुरत बदल जाती है– *'रउवा छोड़ के चल अइलीं। हम लड़कन के ले के आवत रहीं कि डाकू सब लूट लेलसा'* [10] 'बिदेशिया में देशज शब्दों का भी जम कर प्रयोग है, बटोही का एक संवाद द्रष्टव्य है– *ई बताऊ कि हम चलल बानी नगद नारायण दाम कमाए कि देसा देसी तुम्हारा भतार खोजता है।'* [11]

भिखारी ठाकुर ने बिदेशिया के माध्यम से भोजपुरी भाषा– बोली, संस्कृति, विचार– रहन सहन, आचार– व्यवहार, पोशाक– पहनावा, खान– पान सबको उत्कर्ष पर पहुँचाया है। बिदेशिया ने देश विदेश मे भोजपुरिया समाज, उसकी भाषा और संस्कृति को विराट फलक दिया है। इसकी लोकप्रियता के कारण यह एक लोकनाट्य शैली बन गई है जिसमें आज भी नाटक लिखे, खेले जा रहे हैं।

भोजपुरी को भिखारी ने शिखर तक पहुँचा दिया। इन्हीं सबको लक्षित करते हुए महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने गोपालगंज में भोजपुरी साहित्य सम्मेलन में कहा, *हमनी के बोली में केतना जोर हवे, केतना तेज बा– ई अपने सब भिखारी ठाकुर के नाटक में देखीला। भिखारी ठाकुर हमनी के एगो अनगढ़ हीरा हवें। उनका में कुल गुन बा, खाली एने ओने तनी मुनी छाँटे के काम हवे।* [12]

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भिखारी ठाकुर ग्रंथावली– सं0 प्रो0 (डॉ0) वीरेन्द्र नारायण यादव और नागेन्द्र प्रसाद सिंह, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, पृ0 24
2. भिखारी ठाकुर ग्रंथावली– सं0 प्रो0 (डॉ0) वीरेन्द्र नारायण यादव और नागेन्द्र प्रसाद सिंह, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, पृ0 22
3. भगवती प्रसाद द्विवेदी, भिखारी ठाकुर: भोजपुरी के भारतेन्दु, पृ0 69
4. कथाकार संजीव के सूत्रधार से
5. डॉ0 कृष्णदेव उपाध्याय– भोजपुरी और उसका साहित्य, पृ0 126
6. भिखारी ठाकुर ग्रंथावली– सं0 प्रो0 (डॉ0) वीरेन्द्र नारायण यादव और नागेन्द्र प्रसाद सिंह, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, पृ0 34
7. भिखारी ठाकुर ग्रंथावली– सं0 प्रो0 (डॉ0) वीरेन्द्र नारायण यादव और नागेन्द्र प्रसाद सिंह, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, पृ0 34
8. भिखारी ठाकुर ग्रंथावली– सं0 प्रो0 (डॉ0) वीरेन्द्र नारायण यादव और नागेन्द्र प्रसाद सिंह, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, से
9. भिखारी ठाकुर ग्रंथावली– सं0 प्रो0 (डॉ0) वीरेन्द्र नारायण यादव और नागेन्द्र प्रसाद सिंह, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, पृ0 38
10. भिखारी ठाकुर ग्रंथावली– सं. प्रो. (डॉ.) वीरेन्द्र नारायण यादव और नागेन्द्र प्रसाद सिंह, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, पृ. 45
11. भिखारी ठाकुर ग्रंथावली– सं. प्रो. (डॉ.) वीरेन्द्र नारायण यादव और नागेन्द्र प्रसाद सिंह, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, पृ. 58
12. भिखारी ठाकुर ग्रंथावली– सं. प्रो. (डॉ.) वीरेन्द्र नारायण यादव और नागेन्द्र प्रसाद सिंह, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, पृ. 36
13. महापंडित राहुल सांकृत्यायन, 'भोजपुरी' बरसात, 2005 विक्रमी।

बैंकिग व्यवस्था एवं सहकारिता का जन्म (इंदूर परस्पर सहकारी बैंक, इन्दौर के संदर्भ में)

निलेश सैनी* डॉ. एल.के. त्रिपाठी **

भारत में बैंकिग – ईसा से करीब दो हजार वर्ष पूर्व साहुकारों से धनराशि उधार लेने की प्रथा थी। इसका प्रमाण मनुस्मृति एवं कौटिल्य की पुस्तकों में मिलता है। साहुकार धनराशि इनकों उधार देते थे कितना ब्याज लेते थे यह कोई निश्चित नहीं था। एवं ब्याज के बदले वह किसानों की फसल भी ले लिया करते थे। मुगल साम्राटों ने साहुकारों को कर की वसुलि हेतु अलग-अलग स्थानों पर नियुक्त किया जाता था जिन्हें कोशाध्यक्ष कहा गया। लोग अपनी बचत राशि इनके पास जमा करते थे और जरुरत पड़ने पर इन्हीं साहुकारों से अन्य लोग धनराशि उधार लेते थे। जिस पर साहुकार इनसे ब्याज लेते थे। आधुनिक बैंको के प्रारभ होने के पूर्व साहुकार ही धनराशि का लेन-देन किया करते थे। प्रथम आधुनिक बैंक इटली के जेनोवा में 1406 में स्थापित हुआ जिसका नाम सेन्ट जार्ज बैंक था। अंग्रजो ने अपनी व्यापारिक एवं मौद्रिक जरुरतों के लिए जॉइंट स्टाक बैंक प्रारंभ किए। 18 वी शताब्दि के अंत में औद्योगिक क्रांति के परिणाम स्वरुप इंग्लेण्ड और यूरोप में व्यापार की वृद्धि हुई और नए व्यापारिक केन्द्र बनते गए।

भारत में बैंकिग का प्रारंभ – भारत में बैंकिग का प्रारंभ सन् 1806 से होता है। 1806 ईसवी में इस्ट इंडिया कम्पनी के आज्ञापत्र के अनुसार बैंक आफ कोलकत्ता की स्थापना हुई इसके पश्चात 1840 में बैंक ऑफ बम्बई तथा 1843 में बैंक ऑफ मद्रास एवं बैंक ऑफ बंगाल की स्थापना हुई । ये सभी नोट निर्गमन का कार्य करती थी। इनका मुख्या कार्य इस्ट इंडिया कम्पनी के व्यापार एवं व्यवसाय की मदद करना था। सन 1860 में सबसे पहले सिमित दैयता को वैधानिक मान्यता प्राप्त हुई 1860 के बाद बहुत से बैंक अस्तित्व में आए। धिरे-धिरे सन 1881 में अवध कमर्शियल बैंक की स्थापना हुई जो भारतीय व्यवस्था में स्थापित किया जाने वाला सर्वप्रथम बैंक था। परंतु इसके पहले पंजाब नेशनल बैंक, इलाहाबाद बैंक एवं एलायंस बैंक ऑफ शिमला खुल चुके थें । सन 1906 से 1913 के बीच कुल 18 बैंक स्थापित हो चुके थे। सन 1906 में बैंक ऑफ इंडिया रजिस्टर्ड हुआ। बैंक ऑफ बड़ोदा 1909 में, सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया सन 1911 में स्थापित हुआ। सन 1913 तक भारत में करीब 560 बैंक स्थापित हो चुके थे। किन्तु सन 1913 से 17 के बैंकिग संकटकाल के चलते अधिकतर बैंक बंद हो गए थे। बंद होने वाले बैंकों में द इंडियन स्पेनी बैंक, द बंगाल नेशनल बैंक, द क्रेडिट बैंक ऑफ इंडिया आदि प्रमुख थे। सन 1913 से 17 के बीच जनता का बैंको पर से विश्वास कम होने लगा था। तथा प्रथम विश्वयुद्ध के आरंभ में यह कठिनाई अत्यधिक बढ़ गई थी। सन 1921 में तीनों प्रेसिडेंसी बैंको को मिलाकर इम्पिरियल बैक ऑफ इण्डिया की स्थापना हुई। उस समय बैंकिग व्यवस्था में आर्थिक मंदी के कारण बैंकों के सामने संकट उत्पन्न हुआ। संकट 1929 की मंदी में और गंभीर हो गया और 1936 तक संकट चलता रहा। सन 1929 से 1936 के बीच देश में करीब 481 बैंक बंद हो गए। 1930 में केन्द्रिय बैंकिग जॉच समिति की नियुक्ति कि गई जिसका उद्देश्य देश की बैंकिग व्यवस्था में सुधार के लिए आवश्यक सुझााव देना था। इस समिति द्वारा अनेक सुझाव दिए गए जिनमें दो प्रमुख सुझााव थे।

1. देश में केन्द्रिय बैंक की स्थापना कि जाए।
2. बैंक व्यवस्था के समुचित विकास के लिए बैंकिग संविनियम बनाया जाए।

1 अप्रैल 1935 को भारत में रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया की स्थापना कि गई। सन 1939 में रिजर्व बैंक ने बैंकिग कानून बनाने का सुझाव सरकार के सामने रखा परंतु द्वितीय विश्वयुद्ध शूरु होने के कारण इस पर अमल नहीं हो सका।

सन 1939 से 1949 तक भारत में बैंकिग विस्तार की अवधि थी इस समय व्यापार एवं उद्योगों के विस्तारिकरण के कारण बैंको की संख्या में वृद्धि हुई इस अवधि में न केवल पुराने बैंको का विस्तार हुआ अपितु नए बैंको की भी स्थापना कि गई। जैसे भारत बैंक यूनाइटेड, कमर्शियल बैंक, हिन्दुस्तात कमर्शियल बैंक परंतु यह विस्तार संतुलित ढ़ंग से नहीं हुआ। बैंको की नई शाखाए प्राय: उन्हीं नगरों में स्थापित कि गई जहॉ पहले से ही अन्य बैंको की शाखाए विद्मान थी इससे बैंको कि आपसी प्रतिस्पर्धा पहले की अपेक्षा ओर अधिक बढ़ गई और ग्रामीण क्षेत्रों में इसका कोई लाभ नहीं हो सका। युद्ध काल में बैको कि निवेश गति में कुछ आधारभुत परिवर्तन हुए थे।

1. सभी बैंको नें सरकारी प्रतिभूतियों में पहले से ज्यादा धन लागाना आरंभ कर दिया।
2. भारतीय बैंकों नें पहले की अपेक्षा अधिक कोश का निर्माण किया।

बैंको की निवेश निति में होने वाले यह दोनों परिवर्तन जमाकर्ताओं की दृष्टि से आवंछनीय थे क्योंकि इसके फलस्वरुप उनके निवेश बैंक में अधिक सुरक्षित हो गए थे।

सन् 1943-44 में कम्पनी कानून को पुन: संशोधित कर बैंको के नियंत्रण के लिए रिजर्व बैंक अधिकार बढ़ाए गए। सन् 1946 में अध्यादेश से रिजर्व बैंक को अनूसुचित बैंको द्वारा उसके आदेश का पालन नहीं करने पर उन्हें अनुसूचित बैंको की सूचि में से निकालने का अधिकार प्राप्त हुआ। सन् 1947 में भारत पाकिस्तान के विभाजन के बाद बैंको की जमा रशिया

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक, मातेश्वरी सुगनी देवी कन्या महाविद्यालय, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

बहुत कम हो गई थी और ऋणों की मांग बहुत बढ़ गई थी परंतु धीरे-धीरे उद्योंग एवं व्यापार के विस्तार के कारण बैंको की जमा राशि में वृद्धि होना आरंभ हो गई थी। स्वतंत्र भारत में बैंकिग के विकास के लिए सरकार द्वारा निम्न कदम उठाए गए -

रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण - स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सन् 1947 में बैंकिग प्रणाली की अर्थिक सुद्दण नीति को सफल बनाने के लिए सावजनिक स्वामित्व हस्तांतरण संनयम 1948 के अंतर्गत रिजर्व बैंक को राष्ट्रीयकृत कर लिया गया। भारतीय बैंक प्रणाली के उचित विकास तथा नियंत्रण हेतु एक अलग बैंकिग संनयम सन् 1950 में बनाया गया इसमें समय-समय पर आवश्यक संशोधिन भी किए गए। सन् 1965 में संशोधन द्वारा बैंकिग नियमन संनयम 1949 को नया रुप दिया गया। इस संनयम से रिजर्व बैंक का अन्य बैंको पर काफी अधिक नियंत्रण हो गया।

स्वतंत्रता के बाद बैंक की आर्थिक स्थिति को मजबुत करने के विचार से अलाभकारी पाए गए छोटे-छोटे बैंकों एकीकरण पर अधिक जोर दिया गया। सरकार ने सन् 1950 में बैंकिग संनयम में आवश्यकतानुसार आवश्यक संशोधन कर एकिकरण की योजना को ओर अधिक बढ़ावा दिया। सन् 1950 में बंगाल सेन्ट्रल बैंक, यनियन बैंक तथा हुगली बैंक को मिलाकर यूनाइटेड बैंक आफ इंडिया का निर्माण किया गया। सन् 1951 में भारत बैंक को पंजाब नेशनल बैंक में मिला दिया गया इसी तरह सन् 1969 में बैंक आफ बिहार को स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के साथ मिला दिया गया। देश के भीतर ग्रामीण साख समस्याओं के निराकरण करने के विचार से एवं देश में बैंको का जान बिछाने के विचार से 1 जुलाई 1955 में इम्पिरियल बैंग को राष्ट्रीयकृत करके स्टेट बैंक ऑफ इंडिया का निर्माण किया गया। इस बैंक में सरकार द्वारा साझेदारी कि गई एवं बैंकिग संनयम के अनुसार यह तय किया गया कि 15 प्रतिशत अंशों पर सरकार तथा बाकी अंशों पर जनता का अधिकर रहेगा। इस बैंक की स्थापना से कृषि साख व्यवस्था में वृद्धि करने में काफी मदद मिल रही है। 1 जनवरी 1962 में भारत में बैंको के लिए जमा निगम की स्थापना कि गई जिसके अंतर्गत अधिकृत पुंजी 1 करोड़ थी। जिसे बाद मे बढ़ाकर 5 करोड़ कर दिया गया। बैंकिग नियम के अनुसार इस निगम का सदस्य होना अनिवार्य किया गया। प्रारंभ में बैंक में जमाकर्ता की राशि के बीमा की राशि 2500 रुपये थी लेकिन इसे बढ़ाकर 5000 रुपये कर दिया गया। यदि कोई बैंक बंद हो जाता है तो उसके सभी जमाकर्ताओं की राशि रुपये 5000 तक की सीमा की राशि सुरक्षित रहती है। भारत में लम्बे समय से उद्योगिक विकास के लिए वित्तीय संस्थाओं की जरुरत महसुस की जा रही थी जो उद्यौगो को दिर्घकालीन समय तक साथ देने की व्यवस्था करे इसलिए इस कमी को पूरा करने के विचार से बहुत सी वित्तीय संस्थाए स्थापित कि गई जैसे औद्योगिक वित्त निगम, राज्य वित्त निगम, औद्यागिम साख एवं विनियोग निगम राष्ट्रीय उद्योग निगम, औद्योगिक विकास बैंक, कृषि पुनर्वित्त निगम इत्यादि है। इनकी स्थापना से औद्योगिक साख की समस्या को भी कम किया जा सका है सन् 1969 में एक महापरिवर्तन हुआ जो भारतीय बैंकिग के इतिहास की अत्यंत महत्वपूर्ण घटना है। सरकार द्वारा बैंकिग कम्पनी (उपक्रम अर्जन एवं हस्तांतरण) अध्यादेश के अंदर 19 जुलाई 1969 को 14 बड़े बैंको का राष्ट्रीयकरण किया। इसके अंतर्गत वे बैंक जिनकी जमा राशि 50 करोड़ अथवा इससे अधिक थी इनका रराष्ट्रीयकरण किया। बैंको के राष्ट्रीयकरण के संबंध में यह कहा गया कि देश में समाजवादी ढ़ॅाचे के निर्माण की दषा में महत्वपूर्ण कदम है। तात्कालिन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहा कि नविन योजना के प्रारंभ में हमने जो महत्वपूर्ण कदम उठाए है वे हमारे महान राष्ट्र के आकांक्षाओं की पूर्ति में सहायक होंगें।

भारतीय बैंकिग व्यवस्था के अंतर्गत सम्पूर्ण बैंकिग व्यवस्था को सम्मिलित किया गया जो कि पूरे देश में बैंकिग सेवाए प्रदान कर रहे है यह संस्थान एक विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र के अलग-अलग वर्गो को उनके आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रकार की सेवाए प्रदान कर रहे है। यह बहुत बड़ विस्तृत संगठन है जो कि देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसमें ग्रामीण एवं शहरी आधूनिक एवं परंपरागत सभी प्रकार के बैंक देखने को मिलते है। वास्तव में बैंकिग व्यवस्था यहा की सांस्कृति एवं सामाजिक व्यवस्था के भॉति अपनी विविधताओं से परिपूर्ण हैं वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदीजी द्वारा गरीब परिवारों के बैंको में जनधन योजना के माध्यम से खाते खुलवाकर बैंकिग से जोड़ा गया है। उनके द्वारा मुद्रा बैंकिग की स्थापना कर लोगों को रोजगार दिलाने के सुअवसर प्रदत्त किए है।

भारत में बैंकिग प्रणाली का उपयोग दो सौ वर्षो से किया जा रहा है। भारत में बैंकिग का आरंभ अंग्रजो के राज में हुई थी। 19वीं सदी की शुरुआत में ईस्ट इंडिया नें तीन बैंको की स्थापना कि बैंक ऑफ बंगाल का आरंभ 1809 में बैंक आफ बाम्बे की स्थापना 1840 में और बैंक ऑफ मद्रास की स्थापना 1843 में कि गई कुछ समय बाद उपरोक्त तीनों बैंको का विलय इम्पिरियल बैंक के रुप में किया गया। भारत की आजादी के बाद सन् 1955 में इम्पिरियल बैंक का विलय भारतीय स्टेट बैंक के रुप में कर दिया गया है। इलाहाबाद बैंक की स्थापना भारत की पहले निजी बैंक के रुप में हुई थी। हमारे देश में भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना सन् 1935 में कि गई तत्पष्चात पंचाब नेशनल बैक, बैंक आफ इंडिया, केनरा बैंक एवं इंडियन बैंक कि स्थापना हुई। आरंभ में बैकों का कार्य क्षेत्र वाणिज्यि केन्द्रों तक ही सीमित था देश की आजादी के पहले भारतीय रिजर्व बैंक देश के केन्द्रिय बैं के रुप में कार्यरत था देश की स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय रिजर्व बैंक केंद्रिय बैंक के रुप में कार्यरत रहा सभी तरह की मौद्रिक नीतियों का निर्धारण करने तथा उसे अन्य सभी बैंको का वित्तीय संस्थानों को भार भी भारतीय रिजर्व बैंक को सौपा गया। स्वतंत्रता के पश्चात सन् 1949 में भारतीय रिजर्व बैंक का राष्ट्रीयकरण किया गया। 19 जुलाई 1969 को देश के सभी प्रमुख बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया। इसी प्रकार 15 अप्रैल 1980 को नीजी क्षेत्र के 06 और बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया। देश में वर्तमान में इन सभी बैंको की 20 शाखाएं है।

भारत में नीजी एवं सहकारी क्षेत्र के बैंक - हमारे देश में भारतीय रिजर्व बैंक ने सन् 1993 में कुछ नए बैंको को आरंभ करने की अनुमति प्रदान की जैसे की आय.सी.आय.सी. बैंक, ग्लोबल ट्रस्ट बैंक आई.डी.बी.आय. बैंक एच.डी.एफ.सी. बैंक य.टी. आय. बैंक इंडस इंडिया बैंक इनके साथ भारत में लगभग 500 सहकारी बैंक भी कार्यरत है

1. भारत में वाणिज्यिक बैंक

भारत में निम्न प्रकार के वाणिज्यिक बैंक कार्यरत है -

1. केन्द्रिय बैंक - भारतीय रिजर्व बैंक हमारे देश की केन्द्रिय बैंक है जो कि भारत सरकार के नियंत्रण में कार्य करती है इस बैक का प्रमुख अधिकारी गवर्नर होता है जिसे भारत सरकार नियुक्त करती है यह देश की सभी बैंको को संचालन करने के लिए दिषा निर्देष जारी करती है।

2. सार्वजनिक क्षेत्रों के बैंक - सभी राष्ट्रीयक्रत बैंक , क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक,

3. नीजी क्षेत्र के बैंक

4. सहकारी क्षेत्र के बैंक – सहकारी क्षेत्र के बैंक भी लोगों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुए है। इन बैंकों को भी निम्नलिखित श्रेणी में विभाजीत किया जाता है केन्द्रिय सहकारी बैंक, राज्य सहकारी बैंक।

5. वित्तीय संस्थान – आय.सी.आय.सी.आय. बैंक, आय.डी.बी.आय. बैंक, राष्ट्रीय आवास बैंक, नाबार्ड बैंक, भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक

बैंक सेवाएँ – हमारे देश में बैंक की सेवा बहुत ही सुविधाजनक हो गई है बैंक द्वारा प्रदाय की जाने वाली सेवाए इस प्रकार है –

1. बैंक खाता – बैंक खाता ,बैंक द्वारा प्रदाय कि जाने वाली सबसे लोकप्रिय सेवा है। कोई भी व्यक्ति दस्तावेजों की पूर्ति कर बैंक में खाता खोल सकता है। बैंक खातें विभिन्न प्रकार के होते है जैसे बचत खाता, चालू खाता या जमा खाता।

2. ऋण खाता – विभिन्न प्रकार के ऋणों के लिए बैंको द्वारा ऋण खातों का संचालन किया जाता है और बैंको द्वार विभिन्न प्रकार के ऋण प्रदान किए जाते है। जैसे आवास ऋण, व्यक्तिगत ऋण, शैक्षणिक ऋण और कर ऋण आदि।

3. धन हस्तांतरण – बैक दुनिया में किसी भी स्थान पर रुपयों का स्थानांतरण के लिए ड्राफ्ट, धनादेश या चेक जारी कर सकती है

4. डेबिड कार्ड सुविधा – बैंकों ने अपने ग्राहकों की सुविधा के लिए डेबिट कार्ड उपलब्ध करवाऐ है। डेबिड कार्ड की सहायता से ग्राहक ए.टी.एम. से किसी भी समय नगद राशि निकाल सकता है। डेबिट कार्ड का उपयोग कर बिना नगद राशि के किसी भी वस्तु को खरीद सकता है। पैट्रोल पम्प से अपने वाहन में डीजल, पैट्रोल भरवा सकता है।

5. क्रेडिट कार्ड – बैंकों ने अपने ग्राहकों की सुविधा के लिए क्रेडिट कार्ड उपलब्ध करवाऐ है। यह बैंक द्वारा प्रदाय कि जाने वाली बहुत ही सुविधाजनक सेवा है। इस सेवा के तहत ग्राहक बैंक द्वारा जारी किए गए क्रेडिट कार्ड का उपयोग किसी भी वस्तु को क्रय करने के लिए, रेलवे टिकिट को बुक करने के लिए, इंटरनेट पर किसी भी वस्तु को आनलाइन क्रय करने के लिए पैट्रोल पम्प से अपने वाहन में डीजल, पैट्रोल भरवाने के लिए आदि अन्य कार्यो के लिए इस कार्ड का उपयोग सरलता से कर सकता है। इस सुविधा में व्यक्ति के खाते में पैसा नहीं भी हो तब भी वह किसी भी वस्तु को क्रय कर सकता है। इस सुविधा में बैंक ग्राहक को वस्तु क्रय का पैसा चुकाने के 40 दिन की अवधि देता है जिस कारण यह बैंक सेवा अत्यंत की लोकप्रिय हो गई है।

6. इंटरनेट बैंकिग – यह बैंकिग सेवा की सबसे लोकप्रिय और सुविधाजनक सेवा बन चुकी है। इस सेवा में ग्राहक किसी भी समय धनराशि का एक खाते से दुसरे खाते में देश के किसी भी कोने में हस्तातंरण कर सकता है किसी भी वस्तु का क्रय कर सकता है। इंटरनेट बैंकिग सुविधा के कारण ही बैंक द्वारा प्रदाय कि जाने वाली डेबिट एवं क्रेटिड कार्ड की सुविधा लोकप्रिय हुई है।

भारत में सहकारिता संस्थाओं का उदय – सहकारिता एक और एक मिलकर ग्यारह का सामर्थ्य अर्जित करने के गणित की विशेषता का प्रतिनिधित्व करती है। मन, वचन, कर्म तथा तन, मन, धान उसे सदप्यतापूर्वक परस्पर जुड़कर अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति व उन्नति के लिये संगठित मानवीय प्रयास का नाम ही सहकारिता है। यह व्यक्ति और समाज के आर्थिक शैक्षणिक और सांस्कृतिक विकास का एक सशक्त माध्यम है। इसमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता के साथ सौहार्द, सद्भाव, परस्पर सहयोग विश्वास और प्रेम का विकास होता है। सहकारिता अपने सदस्यों को शोषण के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करती हैं। यह एक स्वैच्छिक और जनतांत्रिक संगठन है। जिसमें किसी के साथ कोई भेदभाव नहीं किया जाता। 'एक सबके लिए और सब एक के लिए' की भावना से समता, न्याय, नैतिकता और ईमानदारी से सहकारी कार्य पद्धति का अनुसरण किया जाता है। यह जीवन जीने का एक आदर्श मार्ग है। इस प्रकार सहकारिता र धानहीन, दीन, दु:खी, शोषित, पीड़ित मानवता के कल्याण की दृष्टि से एक कल्पतरु, कामधोनु, चिंतामणि के समान है या मनकामनेश्वर ही है।

सहकारिता में पारस्परिक सहयोग से स्वावलंबन के धयेय को सर्वाधिाक महत्व दिया जाता है, जहाँ पूंजी स्वामी नहीं अपितु सेवक के स्तर पर होती है। लोकतांत्रिक व्यवस्था से एक व्यक्ति एक मत के आधार पर निर्णय लिए जाते हैं, सामूहिक प्रयास से प्राप्त प्रतिफल, आधिाक्य या लाभ का सदस्यों में उनकी आर्थिक भागीदारी या योगदान के अनुपात में न्यायपूर्ण रीति से वितरण किया जाता है। इसमें सदस्यों, संभावित सदस्यो. पदाधिाकारियों, अधिकारी–कर्मचारियों और आम नागरिकों के शिक्षा, प्रशिक्षण, सूचना, प्रचार–प्रसार और अभिप्रेरणा से विचारों के सकारात्मक परिवर्तन लाने का प्रयत्न किया जाता है। सहकारिता केवल आर्थिक पद्धति ही नहीं अपितु एक व्यावहारिक धार्म, आस्था, विश्वास और जीवन दर्शन है।

सहकारी मूल्यों, सिद्धान्तों, विशेष गुणों से युक्त आदश कार्य पति का विकार करके ही इग्लैण्ड, जर्मनी, डेनमार्क, स्वीडन, इजराइल, और जापान जाने छोटे–छोट नगा ने सहकारिता द्वारा व्यक्ति के आर्थिक विकास में उल्लेखनीय कीर्तिमान स्थापित किए हैं । प्राचीन भारत में सहकारिता हमारी सांस्कृतिक धारोहर रही है। इससे भारत विश्व में जगदगुरु और सोने की चिड़िया के नाम से विखुगान था परन्तु पिछले चार सौ वर्षों तक मगलों व अंग्रेजों के शासनकाल में यफूट डालो और राज करोय की नीति के कारण समाज में अलगाववादी प्रवृत्तियाँ बढ़ी और सहकार भावना का ह्रास होता चला गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात डॉ. सरैया, महात्मा गांधी, पंडित नेहरु, प्रो. गाडगिल, वैकुठ मेहता और त्रिभुवनदास पटेल जैसे नेताओं ने सहकारिता को देश के सर्वांगीण विकास का एक प्रमुख साधान माना। शासकीय स्तर पर इसे नियोजित रीति से प्रोत्साहन करने का श्रेय इन्ह ही दिया जाता है। परिणामस्वरूप हमारे देश में भी सहकारिता ने बहुआयामी और ग्राम स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक बहुआयामी विकास हुआ है।

राज्य में बैंकिग एवं सहकारिता का उदय – भारतीय बैंकिंग (विनियमन) अधिनियम, 1949 को सम्पूर्ण भारत में समान रुप से लागू किया गया है। इन अधिनियम का मुख्य उद्देश्य बैंकिंग संस्थाओं की क्रियाओं पर वैधानिक नियन्त्रण स्थापित कर इनका सुव्यवस्थित एवं सुदृढ़ ढंग से विकास करना है, ताकि बैंकिंग व्यवस्था में आने वाले परिवर्तनों को नयी दिशा एवं स्थायित्व प्राप्त हो सके। इस अधिनियम में रिजर्व बैंक एवं केन्द्रीय सरकार को बैंकिंग संस्थाओं के विकास एवं उनकी नीतियों तथा क्रियाओं के नियन्त्रण के सम्बन्ध में व्यापक अधिकार दिए गए है। अधिनियम के क्रियान्वयन का भार रिजर्व बैंक को सौपा गया है, जिसे बैंक ने विवेकपूर्ण ढंग से निभाया है। इसी का परिणाम है कि देश में व्यवस्थित ढंग से बैंकिंग का विकास होने लगा है। राष्ट्रीयकृत बैंकों पर यह अधिनियम लागू नहीं होता है, उनके लिए अलग से अधिनियम बनाया गया है। आवश्यकतानुसार समय–समय पर इस अधिनियम में आवश्यक संशोधन भी किये गए हैं।

मध्यप्रदेश में सहकारी आन्दोलन की स्थिति – देश का हृदय स्थल कहा

जाने वाला मध्यप्रदेश अपनी एक विशिष्ट पहचान रखता है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी इस क्षेत्र का महत्व है। गुप्तकाल में चीनी यात्री हवनसांग ने मध्यप्रदेश के प्रमुख नगरों की यात्रा की थी। उसके अनुसार सन् 1648 में इस क्षेत्र में अनेक छोटे-बड़े राजा थे।

सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से यह प्रदेश भी प्रभावित हुआ तथा इसके पश्चात् ब्रिटिश शासन के शोषण का शिकार हुआ। परिणामस्वरूप इसके विकास की अपनी स्वभाविक गति नष्ट हो गई। सन् 1750 की औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप यह प्रदेश भी इंग्लैण्ड के का खानों के लिये कच्चे माल हेतु मुख्य स्थान बन गया। कच्चे माल के अभाव एवं अंग्रेजी की औद्योगिक नीति के कारण इस प्रदेश के उद्योग धंधो नष्ट हो गये, बेरोजगारी बढ़ने लगी परिणामस्वरूप प्रदेशवासी निर्धनता की पराकाष्ठा पर पहुँच गये। सामाजिक दृष्टि से वर्ग विभाजन बढ़ने लगा तथा समाज दो वर्गो श्रमिक एवं पूंजीपति में विभक्त हो गया। सेठ साहूकार एवं मध्यस्थों के शोषण के कारण अधिकांश जनता का जीवन नरक बन गया।

इस स्थिति का चित्रण सर हैमिल्टन डेनियल ने इन शब्दों में किया था उस समय देश का कृषक वर्ग महाजनों के चंगुल में फंसा हुआ था। अत: कृषि की स्थिति में सुधार लाने और अपनी गरीबी दूर करने में सर्वथा असमर्थ रहा। 19वीं शताब्दी के अंतिम चरण में देश व प्रदेश में आर्थिक संकट के बादल मंडराने लगे। अकाल, महामारी तथा विदेशी शासन की जनता के प्रति असहयोगात्मक नीतियों के कारण कृषि अर्थव्यवस्था की स्थिति और भी दयनीय हो गई। इस क्षेत्र के लगभग 90% कृषक साहूकारों के चंगुल में फंस गये।

आजादी की लम्बी लड़ाई के बाद 15 अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ। 1 नवम्बर 1956 को भाषा के आधार पर प्रान्तों का गठन किया गया। इसी शृंखला में मध्यप्रदेश का गठन हुआ। 1 नवम्बर 2000 में मध्यप्रदेश का विभाजन हुआ तथा नया प्रदेश छत्तीसगढ़ अस्तित्व में आया। विभाजन से पूर्व यह प्रदेश 4.43 लाख वर्ग कि.मी. क्षेत्र मैं भाग्न के मध्य में स्थित एक विशाल राज्य था जिसमें 61 जिले, 317 तहला. 488 नगर एवं 71526 ग्राम थे।

विभाजन के पश्चात् इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 308 हजार वर्ग कि.मी. है। 26) तहसीलें एवं 31 3 विकास खण्डों में विभक्त इस प्रदेश में 370 नगर एवं 55841 ग्राम हैं।

मध्यप्रदेश में सहकारिता - भारत में 1904 के प्रथम सहकारिता अधिनियम के बनने के पश्चात् ही विधिवत सहकारी आन्दोलन का प्रारंभ हुआ। हालांकि प्रदेश में होशंगाबाद के पिपरिया ग्राम में पहली सहकारी साख समिति गठित हो चुकी थी। उधार प्रदेश के जबलपुर जिले में सिहाग नगर में पहला सहकारी बैंक बना माना जाता है। सन् 1956 से पूर्व मध्य भारत सहकारी आन्दोलन भिन्न-भिन्न रूप तथा अलग-अलग अवस्थाओं में था। यही नहीं यहाँ पर विभिन्न क्षेत्रों में सहकारिताओं की स्थिति एवं कार्यक्षमता असमान थी। 1956 में मध्यप्रदेश का पुनर्गठन हुआ तथा इसके विभिन्न क्षेत्रों में सहकारिता का सूत्रपात किया गया। लेकिन प्रथम पंचवर्षीय योजना तक इसकी प्रगति की दर मंद थी, और विविधाता का अभाव था। नये मध्यप्रदेश के अस्तित्व में आने के बाद सहकारिता के नवीन आयाम परिलक्षित हुए, प्रगति की गति भी बढ़ी।

पंचवर्षय योजनाओं के अन्तर्गत भी सहकारिता के विकास को उपयुक्त स्थान प्राप्त हुआ। परिणामस्वरूप प्रदेश के शत प्रतिशत गांवों में सहकारिता का संतरंगा धवज फहरा रहा है। सहकारिता की सदस्यता में 16 गुनी वृद्धि हुई, सहकारी संस्थाओं को आर्थिक रूप से सक्षम बनाया गया, कोई भी ऐसा उद्योग, व्यवसाय और सेवा नहीं है जिसमें सहकारी गतिविधियों का पदार्पण नहीं हुआ है।

छत्तीसगढ़ के अस्तित्व में आने से पूर्व दिनांक 30.10.2000 तक कुछ अपेक्स सहकारी संस्थाओं के पुनर्गठन की स्कीम को अनुमोदित किया गया। वे अपेक्स संस्थाएँ निम्नानुसार हैं

1. म.प्र. राज्य सहकारी बैंक मर्यादित, भोपाल
2. म.प्र. राज्य सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक समिति, भोपाल
3. म.प्र. राज्य सहकारी उपभोक्ता संघ मर्यादित, भोपाल
4. म.प्र. गन्य सहकारी आवास संघ मर्यादित, भोपात,
5. म.प्र. राज्य सहकारी विपणन संघ मर्यादित, भोपाल
6. म.प्र. राज्य सहकारी संघ मर्यादित, भोपाल
7. म.प्र. राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्ता एवं विकास निगम
8. म.प्र. मत्स्य महासंघ (सहकारी) मर्यादित, भोपाल म.प्र.
9. राज्य सहकाकरी सिल्क फेडरेशन, भोपाल
10. म.प्र. राज्य सहकारी औद्योगिक संघ मर्यादित, भोपाल
11. म.प्र. राज्य सहकारी लघु वनोपज संघ मर्यादित, भोपाल
12. म.प्र. राज्य सहकारी बैंकस् एसोसियेशन मर्यादित, भोपाल

म.प्र. राज्य सहकारी दुग्धा महासंघ मर्यादित, म.प्र. राज्य तिलहन उत्पादन सहकारी संघ, म.प्र. राज्य ग्रामीण विद्युत सहकारी संघ तथा म.प्र. सहकारी पावरलूम संघ, बुरहानपुर ने अपनी उपविधियों में संशोधन कर अपना कार्यक्षेत्र नवीन मध्यप्रदेश तक सीमित कर लिया है, अत: इनका विभाजन नहीं हुआ।

प्रदेश के विभाजन के परिप्रेक्ष्य में नवीन राज्यों में सहकारी समितियों की संख्यात्मक स्थिति (30.10.2000) निम्नानुसार है -

क्रं.	संस्था के प्रकार	छत्तीसगढ	शेष म.प्र.	योग
1.	केन्द्रीय बैंक	7	38	45
2.	भूमि विकास बैंक	7	38	45
3.	नागरिक बैंक	16	73	89
4.	पी.ए.सी.एस. (प्राथमिक कृषि साख समितियाँ)	1335	4538	5873
5.	एफ.एस.एस.(कृषक साख सहकारी समितियाँ)	27	137	164
6.	एल.ए.एम.पी.एस(आदिम जाति बहु उद्देश्यीय सह.स)	458	786	1244
7.	धन बैंक	.	5	5
8.	कर्मचारी साख संस्था	126	816	942
9.	अन्य साख संस्थाएं	.	360	360
10.	फल सब्जी	8	172	180
11.	तिलहन उत्पादक	.	1221	1221
12.	सामान्य विपणन	104	276	380
13.	शक्कर कारखाना	.	5	5
14.	प्रक्रिया समितिया	.	20	20
15.	दुग्ध समितिया	456	3478	3934
16.	शीत गृह	.	2	2
17.	मुर्गी पालन	10	33	43
18.	पशुपालन	1	6	7

19.	संयुक्त कृषि	2	38	40
20.	सामूहिक कृषि	16	60	76
21.	सिंचाई	11	50	61
22.	मत्सय पालन	527	981	1508
23.	प्राथमिक उपभोक्ता भंडार/केंटीन	833	4517	5350
24.	थोक भंडार	7	35	42
25.	वृक्ष संघ	5	7	12
26.	वृक्ष समितिया	334	198	532
27.	वन श्रमिक समितिया	20	315	335
28.	यातायात	66	108	174
29.	गृह निर्माण	308	2919	3227
30.	श्रम ठेका	140	551	691
31.	एम.पी.एस.सी.	21	51	72
32.	सहकारी प्रेस	11	79	90
33.	रिक्शा पुलर	2	7	9
34.	महिला समितिया	.	129	129
35.	अंत्यावसायी	7	38	45
36.	अन्य असाख समितियां	3	38	41
37.	बिजली	1	12	13
38.	जिला सहकारी संध	7	38	45
39.	बुनकर समितिया	202	606	808
40.	कताई मिल	.	5	5
41.	औद्योगिक संस्थाए	433	1143	1576
42.	अन्य उत्पादक	17	8	25
43.	दुग्ध संध	1	6	7
44.	पर्यावरण एवं बीज	12	4	16
45.	मछुआ संघ	1	12	13
46.	जिला वनोपज संघ	22	36	58
47.	खनिज	80	324	404
48.	वनोपज	887	1034	1921
49.	अन्य समितियां	63	203	266
50.	शीर्ष संघ	12	23	35
51.	परिसमापन में समितिया	1611	5179	6790
	योग	8217	30758	38975

मध्यप्रदेश के विभाजन से 7 केन्द्रीय सहकारी बैंक, 7 भूमि सहकारी विकास बैंक तथा 16 नागरिक सहकारी बैंक एवं 7 जिला सहकारी संघों एवं हजारों छोटी-छोटी सहकारी समितियों के छत्तीसगढ़ राज्य में विलय से मध्यप्रदेश राज्य का सहकारी क्षेत्र कम हुआ है, एवं प्रशासनिक व्यवस्थाओं और राजनीतिक कारणों से भी सहकारी प्रगति की गति धीमी हुई है।

उपरोक्त तालिका में एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी ध्यान देने योग्य है कि विभिन्न प्रकार की कुल 6790 सहकारी समितियों में से केवल मध्यप्रदेश में ही 5179 सहकारी समितियाँ परिसमापन की स्थिति में थीं जो कि गहन चिंता का विषय है, क्योंकि इन छोटी छोटी हजारों समितियों से गरीब एवं पिछड़े वर्ग के लाखों लोगों की आजीविका एवं उनका आर्थिक विकास जुड़ा होता है।

मध्यप्रदेश में सहकारिता विभाग की भूमिका - मध्यप्रदेश में सहकारी विधान के अन्तर्गत सहकारी विभाग द्वारा विभिन्न प्रकार की सहकारी संस्थाओं का गठन, पूंजीयन, निरीक्षण, अंकेक्षण एवं पर्यवेक्षण किया जाना हैं। ये संस्थाएँ उद्देश्यों की दृष्टि से विभिन्न श्रेणियों में विभाजित की गई हैं। स्वरूपगत ढाँच से ये प्रदेश, जिला एवं ग्राम स्तर तक सीमित हैं। सहकारिता विभाग के प्रशासनिक नियंत्रण की प्रमुख संस्थाएँ निम्नानुसार हैं -

1. **राज्य स्तर -** शीर्ष सहकारी बैंक, शीर्ष सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक, तिलहन संघ, विपणन संघ, आवास संघ, उपभोक्ता संघ, राज्य सहकारी संघ तथा शीर्षस्थ मुद्रणाल . इत्यादि।
2. **जिला/तहसील स्तर -** जिला केन्द्रीय सहकारी बैंक, जिला सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक, जिला उपभोक्ता भण्डार, प्राथमिक विपणन सहकारी संस्थाएँ, प्रक्रिया इकाइयाँ/संयंत्र जिला सहकारी संघ आदि।
3. **ग्रामीण/खण्ड स्तर पर -** प्राथमिक सहकारी साख समितियाँ, वनोपज समितियाँ, प्राथमिक भण्डार, गृह निर्माण, खनिज तथा वन श्रमिक सहकारी संस्थाएँ, दुग्धा समितियाँ, तिलहन समितियाँ आदि।

मध्यप्रदेश में शासकीय मशीनरी एवं विभागीय उत्तारदायित्व - मध्यप्रदेश में सहकारी कामकाज, म.प्र. शासन सहकारिता विभाग तथा इसके अन्तर्गत आयुक्त सहकारिता एवं पूंजीयक, सहकारी संस्थाएँ, भोपाल के माध्यम से होता है। प्रशासनिक दृष्टि से विभाग का कुल दायित्व म.प्र. सहकारी सोसायटी अधिनियम 1960 एवं नियम 1962 के अन्तर्गत संस्थाओं का सुचारू संचालन सहकारी संस्थाओं का गठन, निरीक्षण, अंकेक्षण तथा शासकीय नीतियों का क्रियान्वयन आदि भूमिका निभाना है। उक्त विभाग ने सहकारी आन्दोलन के विकास में चार प्रकार की भूमिकाएं निभायी है -

1. **वित्तीय भूमिका -** वित्तीय भूमिका के अन्तर्गत राज्य शासन ने प्रदेश की भिन्न स्तर की सहकारी संस्थाओं की पूंजी में योगदान किया है। जनजातियों को संस्थाओं के अंश खरीदने हेतु ऋण उपलब्धा कराए हैं! संस्थाओं को ऋण प्राप्त करने में सरकार ने गारण्टी दी है।

आदिवासी समितियों की शाखाएँ खोलने के लिए आर्थिक अनुदान उपलब्धा कराया गया है। प्रबन्धकीय अनुदान, साख की विपणन से संबद्ध हानि की स्थिति में अनुदान, कमजोर जिला सहकारी बैंक के पुनर्गठन पर अनुदान, सहकारी समन्वित विकास परियोजनाओं को आर्थिक सहायता, साख स्थायित्व कोश में अनुदान बिना ब्याज के दुर्बल घटक को उपभोक्ता ऋण, समितियों और बैंकों के संवर्ग कोश में अंशदान । बैंक की अमानती और वसली के संवर्द्धन में योगदान इत्यादि कार्य विगत वर्षो में दिये गये हैं।

2. **प्रशासनिक भूमिका -** सहकारिता विभाग ने अपने अधिकारों का उपयोग करते हुए समय-समय पर संस्थाओं का पूंजीयन कर आन्दोलन के विकास में योगदान दिया है और शीर्षस्थ संस्थाओं में कार्यपालक नियुक्त किये हैं तथा प्रतिनियुक्ति पर अधिकारियों को भेजा है। संस्थाओं के प्रबन्धा का अधिग्रहण भी किया है। धारा 58 (क) के अन्तर्गत एक अंकेक्षण बोर्ड के गठन का प्रावधान है। यह पृथक से गठित किया गया है लेकिन पूंजीयक इसके अधयक्ष हैं। धारा 58 के अन्तर्गत पूंजीयक प्रत्येक समिति के लेखाओं के अंकेक्षण के लिये अधिकृत है। वर्ष 1994 के निर्णयानुसार शीर्ष समिति अपने लेखाओं का अंकेक्षण राज्य शासन द्वारा अनुमोदित अर्हता प्राप्त चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट (सनदी लेखाकार) से करा सकती है।

3. **न्याय भूमिका -** पूंजीयक को मध्यप्रदेश सहकारी अधिनियम 1960 की धारा 64, 65, 66 और 67 के अनुसार सहकारी समितियों में होने वाले विवादों की सुनवाई स्वयं करने या नाम निर्दिष्ट व्यक्तियों के मण्डल के

निराकरण हेतु हस्तांतरित करने का अधिकार प्राप्त है। प्रदेश में सहकारिता विभाग के अधिकारी न्याय के सिद्धान्तों के अनुरूप सहकारी समितियों तथा सम्बन्धित पक्षकारों के विवादों का निराकरण नियमानुसार कर रहे हैं।

4. विकासात्मक भूमिका – विभाग ने सहकारी आन्दोलन के सुदृढ़ीकरण तथा विकास के लिए भी महत्वपूर्ण भमिका निभायी है। समितियों का पुनर्गठन कर उन्हें आर्थिक रूप से सक्षम बनाने के प्रयास किये हैं। नए-नए क्षेत्रों को सम्मिलित कर नवीन समितियाँ गठित की हैं तथा नई संस्थाएं पूंजीकृत करायी गयी हैं। संस्थाओं के कार्यकलाप को सुधारने के लिये मार्गदर्शन दिया गया है। उनकी गतिविधियों में इजाफा किया गया है। लेखा पद्धति, आंतरिक जांच के सम्बन्धा में परामर्श तथा आवश्यक निर्देश दिये गये है और संस्थाओं के व्यवसाय में वृद्धि हेत नवीन योजनाएँ स्वीकृत की गयी हैं। समितियों के सुचारू संचालन, सदस्यता, कार्यक्षेत्र, संस्था प्रबन्धा, पदाधिकारियों के भत्तो, प्रवास, वाहन उपयोग इत्यादि के सम्बन्धा में नियम बनाए गए। समय-समय पर संस्थाओं के निर्वाचन संपन्न कराए। विभिन्न विभागों से समन्वय स्थापित कर संस्थाओं की समस्याओं का निराकरण कराया तथा उनके विषय में सहयोग प्रदान किया। महिला सहकारी संस्थाओं के गठन हेतु विभाग में पृथक से एक प्रकोष्ठ बनाया गया है। प्रत्येक जिले में कम से कम एक महिला नागरिक बैंक के गठन हेतु विभाग कृत संकल्पित है। ग्राम स्तर पर महिलाओं को सहकारिता से जोड़ने हेतु 'शक्ति पुंज' नामक योजना प्रारंभ की।

उपर्यत विवरण को देखने से स्पष्ट है कि म.प्र. में कुल, 39218 पूंजीकृत सहकारी समितियाँ है जो विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण योगदान दे रही है जिसमें 6921 महिला सहकारी संस्थाएँ हैं। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि विभिन्न प्रकार की सहकारी संस्थाओं में महिला प्रतिनिधित्व बढ़ाने की आवश्यकता है जिससे महिलाओं को भी सहकारिता के क्षेत्र में पर्याप्त अवसर मिल सके।

म.प्र. के जिला सहकारी केन्द्रीय बैंकों की वित्तीय प्रगति एवं लाभ हानि का संक्षिप्त विवेचन – प्रदेश के कृषकों एवं ग्रामीणजनों को सहकारिता के माध्यम से साख प्रदाय हेतु सन् 1957 में म.प्र. राज्य सहकारी बैंक का गठन किया गया था। म.प्र. राज्य सहकारी बैंक यानि 'अपेक्स बैंक' एक शोडयूल्ड बैंक है, जो प्रदेश की अल्पकालीन सहकारी साख संरचना की सर्वोच्च कड़ी है, पूर्व में बैंक का प्रधान कार्यालय जबलपुर में था, परन्तु बेहतर समन्वय के उद्देश्य से इसका मुख्यालय 7 अप्रेल 1975 को राजधानी भोपाल में स्थानांतरित किया गया। प्रदेश में अपेक्स बैंक अपनी 10 संभागीय/उपसंभागीय शाखाओं, 13 अमानत शाखाओं एवं एक विस्तार पटल के साथ कार्य कर रहा है।

अपेक्स बैंक जिला सहकारी बैंकों की संघीय संस्था है तथा इसके ऊपर जिला सहकारी केन्द्रीय बैंकों की प्राथमिक सहकारी समितियों के माध्यम से आम ग्रामीण और कृषकों के साख आपूर्ति की व्यवस्था करने का उत्तारदायित्व है।

अपेक्स बैंक द्वारा विगत वर्षो में अपनी गतिविधियों को व्यापक बनाते हुए प्रदेश के सहकारिता के क्षेत्र में स्पिनिंग मिल, शक्कर कारखाने, सोयाबीन संयंत्रों की स्थापना एवं संचालन हेतु शीर्षस्थ संस्थाएँ यथा तिलहन संघ, विपणन संघ, लघु वनोपज संघ, उपभोक्ता संघ, दुग्धा महासंघ, हाथकरधा बुनकर संघ, पावरलूम फेडरेशन, भूमि विकास बैंक, म.प्र. बीज निगम आदि को साख सुविधाएँ उपलब्धा कराई जा रही है।

यह बैंक म.प्र. के समस्त साख आंदोलन का नियंत्रण एवं प्रबंधान करती है तथा प्रदेश की समस्त 38 जिला सहकारी केन्द्रीय बैंकों के कार्यो में निर्देशन एवं समन्वय स्थापित करती है। इस बैंक द्वारा ही राज्य की अन्य सहकारी साख संस्थाओं का नेतृत्व किया जाता है। यदि इसे सहकारी आंदोलन का मित्र, प्रेरक तथा मार्गदर्शक कहा जाए तो अतिश्योक्ति नहीं होगी।

शोध के दौरान म.प्र. राज्य सहकारी बैंक मर्यादित, भोपाल, (अपक्स बकका वित्तीय स्थिति का अध्ययन करने पर ज्ञात हुआ कि बैंक की प्रदत्ता अंशपूंजी जो 31 मार्च 2008 को 110.93 करोड़ थी वह 31 मार्च 2009 में बढ़कर 122.02 करोड़ हो गई है। प्रदत्ता अंशपूंजी में विगत वर्ष 11.09 करोड़ की वृद्धि हुई है। यह वृद्धि मुख्यत: प्रदश के जिन्टा सहकारी केन्द्रीय बैंकों द्वारा शीर्ष बैंक से ऋण ग्रहण के निर्धारित अनुपात में विनियोजन के परिणामस्वरूप हुई है। बैंक की रक्षित एवं अन्य निधियाँ गतवर्ष की तुलना में 4.08बढ़कर 31 मार्च 2009 को 477.23 करोड़ रुपये हो गई है। बैंक की अमानतों में विगत वर्ष में रू. 482.31 की वृद्धि होकर 31 मार्च 2009 पर कुल निक्षेप रुपये 2923.21 करोड़ हो गए हैं जबकि गतवर्ष 31 मार्च 2008 पर कुल अमानतें 2440.90 करोड़ रही थी।

विगत पाँच वर्षो में अंशपूंजी, रक्षित निधि एवं अन्य निधियों तथा अमानतों में क्रमश: 73.32ए 18.10 तथा 93.74 वृद्धि हुई है।

बैंक की कार्यशील पूंजी 31 मार्च 2009 पर 5057.18 करोड़ तथा विनियोजन 2295.12 करोड़ था इसमें विगत वर्ष में कार्यशील पूंजी में 787.37 करोड़ तथा विनियोजन में 1068.02 करोड़ की वृद्धि हुई। इसी प्रकार बैंक के ऋण एवं अग्रिम 31 मार्च 2009 को 2293.42 करोड़ रुपये थे गतवर्ष की तुलना में इनमें 156.70 करोड़ की कमी हुई है। इसमें कमी का कारण अल्पावधिा ऋण कम होना है।

विगत पाँच वर्षो की तुलना में बैंक के ऋण ग्रहण में 137.61 वृद्धि हुई है तथा ऋण एवं अग्रिम में 35.45 की वृद्धि हुई है।

इसी प्रकार बैंक के विनियोजन में 302.15 की उल्लेखनीय वृद्धि हुई है एवं बैंक द्वारा 29.97 करोड़ का शुद्ध लाभ अर्जित किया गया है।

उक्त तथ्यों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि म.प्र. राज्य सहकारी बैंक मर्यादित, भोपाल ने निरन्तर वित्तीय प्रगति करते हुए म.प्र. के जिला सहकारी बैंकों एवं सहकारी संस्थाओं का कुशल प्रबंधान एवं नेतृत्व करते हुए प्रदेश के सहकारी विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

स्थिति – बैंकिंग रेग्यूलेशन एक्ट 1949 के प्रावधान के अनुसार जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक द्वारा वर्ष के अंत में अर्थात् 31 मार्च को लाभ हानि पत्रक बनाया जाता है, जिससे बैंक की लाभ या हानि की स्थिति प्राप्त होती है। यदि किसी बैंक की आय, व्यय से अधिक हो तो बैंक को लाभ होता है एवं यदि किसी बैंक के व्यय, आय से अधिक हो तो हानि की स्थिति निर्मित होती है। इस प्रकार हम कह सकते है कि किसी भी बैंक के वर्ष भर के आर्थिक क्रियाकलापों की परिणति लाभ या हानि में होती है।

इन्दौर जिले में बैंक एवं सहकारिता का निर्माण – इन्दौर जिले के लिए यह गौरवान्वित का विषय हैं कि यहाँ पर कई प्रकार की बैंकिंग संस्थाएँ वर्तमान में कार्यरत् हैं। जिले का अग्रणी बैंक, बैंक ऑफ इंडिया हैं। इन्दौर जिले में स्टेट बैंक ऑफ इन्दौर का विलय 2009-10 में भारतीय स्टेट बैंक में कर दिया गया हैं। अब साथ ही साथ यहाँ पर उसके पाँच सहयोगी बैंक की शाखाएँ हैं। बैंक ऑफ इंडिया, यूनियन बैंक ऑफ इंडिया, सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया, पंजाब नेशनल बैंक, केनरा बैंक, यूनाईटेड बैंक, सिंडिकेट बैंक, बैंक ऑफ बड़ौदा, यूनाईटेड कमर्शियल बैंक, देना बैंक, इलाहाबाद बैंक, इंडियन बैंक, इंडियन ओवरसीज बैंक एवं बैंक ऑफ महाराष्ट्र के क्षेत्रीय व संभागीय

कार्यालय भी यहाँ पर स्थित हैं। 20 राष्ट्रीयकृत बैंकों में से वर्तमान में केवल 19 राष्ट्रीयकृत बैंक हैं क्योंकि एक बैंक न्यू बैंक ऑफ इंडिया का पंजाब नेशनल बैंक में विलय कर दिया गया हैं। इन्दौर जिला प्रदेश की इन सभी 19 राष्ट्रीयकृत बैंकों की शाखाएँ कार्यरत् हैं। अन्य शब्दों में इन्दौर एक ऐसा जिला हैं, जिसे समस्त राष्ट्रीयकृत बैंकों एवं भारतीय स्टेट बैंक समूह का पूर्ण प्रतिनिधित्व प्राप्त करता हैं। इन्दौर जिले की विशेषता यह भी हैं कि पूरे मध्यप्रदेश में यही एक ऐसा जिला हैं जहाँ वर्तमान में उक्त के अलावा 20 निजी क्षेत्र के बैंक, 1 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, 2 केन्द्रीय सहकारी बैंक, 1 भूमि विकास बैंक, एवं 21 सहकारी बैंक भी कार्यरत् हैं।

इन्दौर जिले में सभी 19 राष्ट्रीयकृत बैंकों व स्टेट समूह के सभी पाँच बैंकों की शाखाएँ भी स्थित हैं। राष्ट्रीयकृत बैंक एवं स्टेट बैंक समूह के बैंक सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक हैं यद्यपि स्टेट बैंक समूह एवं राष्ट्रीयकृत बैंकों की स्थापना अलग-अलग अधिनियमों के अंतर्गत की गई हैं व स्टेट बैंक समूह के बैंकों की तुलना में ज्यादा हैं किन्तु इन सभी बैंकों का उद्देश्य एक ही हैं।

वर्ष 2011-12 में इन्दौर जिले में कुल 69 बैंक कार्यरत हैं जिनका शाखावार स्थिति (ग्रामीण, अर्द्धशहरी, शहरी) विवरण तालिका में दर्शाया गया हैं ख

जिले में बैंकिंग सेवा क्षेत्र की शाखावार स्थिति वित्तीय वर्ष 2011-12 तक

क्रं.	बैंक का नाम	बैंकिंग शाखाओं की संख्या				
		बैंको की संख्या	**ग्रामीण**	**अर्द्ध शहरी**	**शहरी**	**योग**
1.	राष्ट्रीयकृत बैंक	19	30	11	108	168
2.	स्टेट समूह बैंक (सार्वजनिक बैंक)	05	10	4	60	79
3.	वाणिज्यिक बैंक (निजी क्षेत्र)	20	-	-	25	45
4.	क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक	01	15	02	01	19
5.	केन्द्रीय सहकारी बैंक	02	18	01	15	36
6.	भूमि विकास बैंक	01	10	01	01	13
7.	शहरी विकास बैंक	21	-	-	27	48
	योग	**69**	**8**	**19**	**237**	**408**

स्त्रोत - जिला अग्रणी बैंक, बैंक ऑफ इंडिया से संबंधित बैंकों को वार्षिक प्रतिवेदन शाखावार स्थिति वर्ष 2011-12 तक।

सहकारिता की विचारधारा का ऐतिहासिक अवलोकन करने पर यह ज्ञात होता है कि सहकारिता की प्रवृत्ति आदिकाल से ही मानव समाज में रही हैं, यद्यपि प्रारंभ में इसका जन्म नैतिकता और पारस्परिक सहयोग की भावना के कारण हुआ था, तथापि कालान्तर में समाज के कर्णधारों ने इसे रीति-रिवाजों के आधार पर समाज का आवश्यक तत्व मान लिया धीरे-धीरे नैतिकता की भावना से प्रभावित एवं पारस्परिक सहयोग ने स्वयं सहायता समूह, मिल-जुलकर काम करने, संयुक्त स्वामित्व तथा सामूहिक प्रबंधन जैसी नवीन प्रवृत्तियों को जन्म दिया है।

अत्यन्त प्राचीनकाल में प्लेटो तथा अन्य दार्शनिकों ने आत्मनिर्भर एवं स्वावलम्बी बस्ती स्थापित करने का जो आदर्श रखा था, वह सहकारिता तथा आपसी सहयोग के सिद्धान्तों पर ही आधारित था।

वास्तव में, आधुनिक सहकारिता भी इन्हीं प्रेरक शक्तियों का सुफल परिणाम है। साथ ही इन्दूर परस्पर सहकारी बैंक भी इस सहकारिता का एक कार्यरत उदाहरण है।

निष्कर्ष - मध्य भारत बनने के फलस्वरूप जिलों का पुनर्गठन किया गया। उसके कारण कन्नौद, खातेगांव का कारोबार देवास जिलों की सहकारी बैंकों तथा तराना, महिदपर का कारोबार उज्जैन जिला सहकारी केन्द्रीय बैंक को सौंपना पड़ा।

अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण समिति की स्थापना पर अमल शुरू होते ही रिजर्व बैंक ने ये आशा प्रकट की कि एक जिले में एक ही बैंक कायम की जावे और जहाँ एक से अधिक बैंक कार्यरत है वहाँ एक बैंक के कार्यक्षेत्र को कम करके एक जिले में सीमित किया जावे। इस आधार पर वर्ष 1957-58 में खरगोन जिले के बैंक का कारोबार बंद कर दिया गया।

नये मध्यप्रदेश के गठन के उपरांत इन्दौर जिले की सहकारी बैंक के रूप में **इन्दूर परस्पर सहकारी बैंक कार्यरत हैं।** यह प्रदेश की एकमात्र ऐसी बैंक है जो विगत कई वर्षो से अपने अंशधारियों को लाभांश घोषित कर रही है। इन्दौर शहर में कार्यरत यह बैंक अपनी सफलता के 111 वर्ष पूर्ण कर चुका है तथा सहकारीता के क्षेत्र में मध्य भारत में यहीं बैंक है जो सफलतापूर्वक अपनी गतिविधियों को लाभ के साथ संचालित करता आ रहा हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

Economic impact of Foreign Direct Investment (FDI) on Indian Economy

Dr. C.M. Tembhurnekar*

Abstract - FDI plays an important role in the economic development of any country. The capital inflow of foreign investors allows increasing infrastructure, increasing productivity and creating employment opportunities in India. For Indian economy which has tremendous potential. FDI be capable of help to move up the output, production and export at the sectoral level of the Indian economy. It is suitable to open up the export oriented sectors and higher growth of economy could be achieved through the growth of these sectors.

The economy of India had undergone significant policy shifts in the beginning of the 1990s. This new policy of economic reforms is commonly known as Liberalization, Privatization and Globalization (LPG). FDI policy have been a key driver for accelerating the economic growth throughout technology transfer, employment generation, and improved access to managerial skill, global capital, product markets and distribution network. All of these contribute to economic growth of the Indian Economy.

This research paper aims to examine the fundamental relationship between Foreign Direct Investment (FDI) and economic growth in India and also tries to analyze and empirically estimation the effect of FDI on economic growth in India.

Keywords - FDI, SEZ, EOU, GDP, LPG.

Introduction - Foreign Direct Investment (FDI) plays an important role in the growth and development of an Indian economy. It is more important when domestic savings are not enough to generate funds for capital investment in country. As well as it provide fund requirements of an economy but also it brings new technology, managerial skill and adds to foreign exchange reserves. Foreign Direct Investment (FDI) inflows are very important particularly to developing and emerging countries than developed ones. FDI was introduced in India from the year 1991 under Foreign Exchange Management Act (FEMA), by then finance minister Dr. Manmohan Singh. It started with a baseline of $1 billion in 1990. India is considered as second important destination for foreign investment. The major sectors that attracted FDI are services, telecommunication, construction activities and computer software and hardware. Many countries provide many incentives for attracting the foreign direct investment (FDI). Need of FDI depends on saving and investment rate in any country. Foreign Direct investment acts as a bridge to fulfill the gap between investment and saving. In the process of economic development foreign capital helps to cover the domestic saving constraint and provide access to the superior technology that promotes efficiency and productivity of the existing production capacity and generate new production opportunity

India in 1997 allowed foreign direct investment (FDI) in cash and carry wholesale. Then, it required government approval. The approval requirement was relaxed, and automatic permission was granted in 2006. FDI equity inflows from January 2000 to December 2017 were about US$ 368,732 million in India.

Features of Foreign Direct Investment Policy in India

The Salient Features of Foreign Direct Investment Policy in India are as follows:

I) FDI up to 100 per cent is allowed under the automatic route in all activities/sectors except the following, which will require approval of the Government:

(a) Activities/items that require an Industrial License;
(b) Proposals in which the foreign collaborator has a previous/existing venture/tie up in India in the same or allied field.
(c) All proposals relating to acquisition of shares in an existing Indian company by a foreign/NRI investor.
(d) All proposals falling outside notified sectoral policy/caps or under sectors in which FDI is not permitted.

II) FDI in areas of special economic activity:

(a) Special Economic Zones: 100 per cent FDI is permitted under automatic route for setting up of Special Economic Zone. Units in SEZ qualify for approval through automatic route subject to sectoral norms. Details about the type of activities permitted are available in the Foreign Trade Policy issued by the Department of Commerce. Proposals not covered under the automatic route require approval by

*Associate Professor (Commerce) M.B.Patel College, Sakoli, Distt. Bhandara (M.S.) INDIA

FIPB.

(b) Export Oriented Units (EOUs): 100 per cent FDI is permitted under automatic route for setting up 100 per cent EOU, subject to sectoral norms. Proposals, which are not covered under the automatic route would be considered and approved by FIPB.

(c) Industrial Park: 100 per cent FDI is permitted under automatic route for setting up of the Industrial Park. Electronic Hardware Technology Park (EHTP) Units All proposals for FDI/NRI investment in EHTP Units are eligible for approval under the automatic route subject to the parameters listed. For proposals not covered under automatic route, the applicant should seek separate approval of the FIPB, as per the procedure outlined in the policy.

(d) Software Technology Park Units: All proposals for FDI/ NRI investment in STP Units are eligible for approval under automatic route subject to parameters listed. For proposals not covered under automatic route, the applicant should seek separate approval of the FIPB, as per the procedure outlined in the policy.

Routes of FDI in Indian companies

An Indian company may receive Foreign Direct Investment (FDI) by two routes, these are:

1) Automatic Route: FDI is allowed under the automatic route without prior approval either of the Government or the Reserve Bank of India in all activities/sectors as specified in the consolidated FDI Policy, issued by the Government of India from time to time.

2) Government Route: Prior approval by government is needed via this route. The application needs to be made through Foreign Investment Facilitation Portal, which will facilitate single window clearance of FDI application under Approval Route. The application will be forwarded to the respective ministries which will act on the application as per the standard operating procedure. Foreign Investment Promotion Board (FIPB) which was the responsible agency to oversee this route was abolished on May 24, 2017. It held its last meeting on 17th April, which was the 245th meeting of the Board. On 24 May 2017, Foreign Investment Promotion Board was scrapped by the Union Government. Henceforth, the work relating to processing of applications for FDI and approval of the Government thereon under the extant FDI Policy and FEMA, shall now be handled by the concerned Ministries/Departments in consultation with the Department for Promotion of Industry and Internal Trade(DPIIT) , Ministry of Commerce, which will also issue the Standard Operating Procedure (SOP) for processing of applications and decision of the Government under the extant FDI policy.

Review of Literature

In the empirical literature, market size and growth rate of the market are considered as the major determinants .The earlier studies emphasize that a big market size of the host economy would attract foreign firms to produce in the economy whereas the small market size of the home country of the MNCs would induce the firm to go out for overseas production. However, it is also argued that if an economy grows at a faster rate. It would attract more foreign firms and bring more FDI. In this case, the growth rate of the economy is a better indicator of the demand than the simple size of the economy Wang and Swain (1995)[1]. Lucas (1993) [2]has argued that in addition to the size of the domestic market in the host country, FDI also depend on export markets. Though the market size hypothesis argues that inward FDI is a function of the size of the host country market, many export-orientated countries attract more FDI as they serve the export market of the product. Thus, if host country's firms are export oriented, these firms attract MNEs who are interested in exporting that product.

The cross-sectional study of Shamsuddin (1994)[3] for developed and less developed countries finds negative correlation between FDI and economic growth. There is no denying the fact that FDI has emerged as a fundamental source of financing for the developing countries like India. It is observed that most of the studies differ from one another in respect of sample and the method of analysis. This difference in the sample and the approach to the study could be seen from the discrepancy in the results. The existing Indian studies also show that there are contradictions in the findings. The study of Gopinath (1998)[4] has found that GDP and the forex reserves were the main positive determinants of FDI inflows into India. The study also confirms that the personal disposable income contributed positively towards the flow of FDI in India. However, the study has ignored some of the key policy variables like degree of openness of the economy and exchange rate, which determined the FDI flows. The study by Jaya Krishna (200 1)[55]

Krishna. M. J. (2001): "Private Foreign Investment in Post-Reform India: A search considers these policy variables, but ignores the variables such as GDP and exports and imports. However, neither of these two studies has considered all the variables comprehensively. The studies relating to the impact of FDI are very limited. The study by Dua and Rasid (1998)[6] shows uni-directional causality from Index of industrial Product (IIP) to FDI but not the reverse. IIP is taken as the proxy for GDP in this study. However, IIP cannot be a proper proxy for GDP as industrial sector contributes less than 30 per cent to the GDP in India. The study by Chakraborty and Basu (2002)[7] has ignored an important role of FDI, Which has to add to the domestic capital. These studies had not considered all the impact of FDI on the macro economic variables of the Indian economy.

The above discussion reveals the fact that the studies at the macro level in India did not cover all the macro economic variables to assess the determinants and impacts of FDI. The existing studies have ignored important macro economic variables like capital formation and savings while assessing the determinants and impacts of FDI in India. It is also observed from the literature that the policy variables

like interest rate and exchange rate have been ignored in the existing studies. The present study tries to include these variables in the analysis of the determinants and impact of FDI in India at the macro level.

Objective of the Study - The research paper covers the following objectives:

1. To understand the investment policy in India.
2. To analyze the trend of FDI in India
3. To analyze the relationship between FDI and GDP.
4. To analyze the most FDI attracting countries.
5. To estimate the impact of FDI on the Indian economy.
6. To identify the flow of investment in India.
7. To classify the challenges of investment in India.

Research Methodology - The above objectives have been studied through the use of secondary data. The secondary data has been collected from various secondary sources such as published reports RBI, Department of Industry Policy and Promotion, World Bank, UNCTAD, IMF etc. For policies some books and websites have been referred. The data collected has been analyzed through tables & graphs. The linear correlation analysis has been done to understand the relationship between foreign direct investment flow, GDP and foreign institutional investment flows in India.

Data Analysis - The liberal policy stance and strong economic fundamentals appear to have driven the steep rise in FDI flows in India over past one decade and sustained their momentum even during the period of global economic crisis (2008-09 and 2009-10), the subsequent moderation in investment flows despite faster recovery from the crisis period appears somewhat inexplicable.

Total FDI Inflows (From April, 2000 to June, 2019):

1. Cumulative Amount of FDI Inflows (Equity inflows+ Re-invested earning+ other capital)	-	US$628,774
2. Cumulative amount of FDI Equity inflows (excluding amount remitted through RBI's NRI Schemes)	Rs.2491864 Crore	US$436,350 Million

Source: DIPP Factsheet on FDI from April 2000 to March 2019

The total FDI inflow in India from 2000 to June-2019 is US$ 628,774 and cumulative FDI equity inflow is US$ 436,350 million. The year wise FDI inflow in the India has given below in table 1:

A. Table 1: **Year wise FDI inflows in India**

(Amount US$ Million)

Sr.	Year	*Total FDI Flows*	*% of growth over previous year (in US$ terms)*	*Investment by FII's Foreign Institutional Investors Fund (net)*
1	2000-01	4029	-	1847
2	2001-02	6130	+52%	1505
3	2002-03	5035	(-)18%	377
4	2003-04	4322	(-)14%	10918
5	2004-05	6051	+40%	8686
6	2005-06	8961	+48%	9926
7	2006-07	22826	+155%	3225
8	2007-08	34843	+53%	20328
9	2008-09	41873	+20%	(-) 15017
10	2009-10	37745	(-) 10%	29048
11	2010-11	34847	(-) 08%	29422
12	2011-12	46556	+34%	16812
13	2012-13	34298	(-) 26%	27582
14	2013-14	36046	+5%	5009
15	2014-15	45148	+25	40923
16	2015-16	55559	+23%	(-)4016
17	2016-17	60220	+8%	7735
18	2017-18(P)	60974	+1%	22165
19	2018-19(P)	64375	+6%	(-)3587
20	2019-20(P) (up to June ,2019)	21310	-	3928
21	Cumulative Total(From April,2000 to June, 2019	628774	-	218178

Source: DIPP Factsheet on FDI from April 2000 to March 2019

According by the above table, the gross FDI inflows have been rising in absolute numbers - from $4,029 million in 2000-01 to $64,375 million in 2018-19. Karl Pearson's coefficient correlation for Total FDI in India and Investment by FIIs in India for the period 2000-2001 to 2018-2019 for the data given in table 1 is 0.097989. This analysis is showing that the two variables have a strong positive correlation between them. As well as there is also evident from the data that increase in FDI in India is leading to increase in investments by FII because of its positive effect on the economic development of a country.

B. Table 2: DPIIT's- FINANCIAL YEAR- WISE FDI EQUITY INFLOWS

(As per DPIIT's FDI data base- equity capital components only)

Sr.	**Financial Year (April- March)** 2000-01 TO 2018-19	**Amount of FDI Inflows**		% of growth Over previous year(in term of US$)
		In Rs. Crores	**In US$ Million**	
1	2000-01	10733	2463	-
2	2001-02	18654	4065	(+) 65%
3	2002-03	12871	2705	(-)33%
4	2003-04	10064	2188	(-) 19%
5	2004-05	14653	3219	(+) 47%
6	2005-06	24584	5540	(+) 72%
7	2006-07	56390	12492	(+)125%
8	2007-08	98642	24575	(+)97%
9	2008-09	142829	31396	(+) 28%
10	2009-10	123120	25834	(-) 18%

11	2010-11	97320	21383	(-)17%
12	2011-12	165146	35121	(+)64%
13	2012-13	121907	22423	(-)36%
14	2013-14	147518	24299	(+)8%
15	2014-15	181682	29737	(+)22%
16	2015-16	262322	40001	(+)35%
17	2016-17	291696	43478	(+)9%
18	2017-18	288889	44857	(+)3%
19	2018-19	309867	44366	(-)1%
	CUMULATIVE TOTAL (from April, 2000 to March,2019	2378887	420142	

Source: DIPP Factsheet on FDI from April 2000 to March 2019

The equity component of FDI has also been rising from $2,463 million or Rs 10,733 crore in 2000-01 to $ 44,366 million or Rs 309,867 crore in 2018-19. However, in terms of annual growth in inflows or as a percentage of gross fixed capital formation (GFCF), the FDI inflows have come down significantly post-2008-09, contrary to the government's claim that the Make in India initiative of 2014 gave it an "unprecedented" boost.

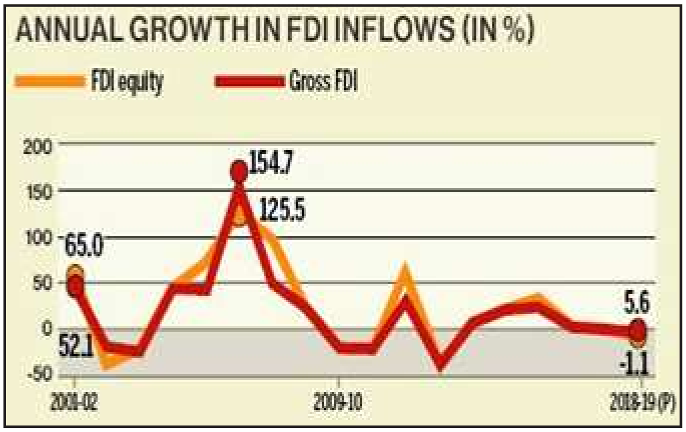

Source: DIPP Factsheet on FDI from April 2000 to March 2019

The annual growth in gross FDI and FDI equity inflows has fallen into single digits since 2016-17 with the latter registering a negative growth in 2018-19. The gross FDI as a percentage of GFCF has fallen from a high of 32.9% in 2008-09 to 8.1% in 2018-19. Similarly, the FDI equity came down from 24.6% to 5.6% during the same period.

The trend Analysis of the FDI data from 2000-01 to 2018-19 shows that there is always a positive average trend of FDI in India other than if we extremely analyze the data, FDI flow in India has increased in the recent years only starting from 2009 to 2019. The Indian economy has started attracting a good quality amount of FDI after 2004. Before 2004 the FDI flow was lying between US$ 4029 to US$4322, which was just a sluggish trend for FDI. The significant increase in FDI inflows in India reflected the impact of liberalization of the economy since the early 1990s as well as regular opening up of the capital account. As part of the capital account liberalization, FDI in India was allowed almost in all the sectors of the economy but a few on the basis of strategic importance and subject to the rule and regulations for those sectors. From the above data we can analyze that during the period of current global financial crisis, there was a significant decrease in the flow of FDI in most of the countries in 2008-2010 but this decline of FDI in India was comparatively moderate reflecting healthy equity flows on the back of strong rebound in domestic growth ahead of Global recovery and steady reinvested earnings reflecting better profitability of foreign companies in India.

Prof KS Chalapati Rao of the Institute for Studies in Industrial Development, who has been studying FDI for decades, says: "There has been no mechanism to tell what the FDI is doing in this country, especially in regards to technology transfer and employment".

He points to the observations of several government documents to drive home his point.

The 2008 report of the Prime Minister's Group (V Krishnamurthy) said there was "little or no emphasis" on technology transfer or whether the kind of technologies being brought in was "appropriate or not". Quite often, it said, the technologies bought in were not the state-of-the-art technologies but at least one or two generations older. Therefore, it asked for "a relook at our FDI policy in terms of the technological benefits the country needs to derive". In 2017, the 'Industrial Policy-2017' document of the Department of Industrial Policy & Promotion (DIPP) concluded that "FDI policy requires a review to ensure that it facilitates greater technology transfer, leverages strategic linkages and innovation".

The Niti Aayog's 2018 report, Strategy for New India@75, too recommended that "for India to become the world's workshop, we should encourage further FDI in manufacturing, particularly when it is supported with buybacks and export orders".

Repatriation and reinvested earnings: A negative trend

Another key trend is seen in the repatriation and reinvested earnings (earnings that are ploughed back into the Indian economy). Both show negative trends, indicating more capital is flowing out, diluting the FDI's potential benefit to the Indian economy. Repatriation of earnings, which used to be very low until 2008-09, rose to 17.9% of the FDI equity inflows in 2009-10 and reached 48% in 2017-18. This shows that more and more capital is being taken out of the economy. Simultaneously, the reinvested earnings (earnings that are reinvested), which were high in the beginning - more than 60% of FDI equity inflows in 2002-03 and 2003-04 - went down to 28% in 2017-18. This indicates more profits are being taken out, which could have benefited the Indian economy in the long run. The discussion paper on Industrial Policy-2017 had pointed out that "benefits of retaining investments and accessing technology have not been harnessed to the extent possible".

Source: DIPP Factsheet on FDI from April 2000 to March 2019

Seeking FDI has always been more than just about foreign capital. The Statement of Industrial Policy of 1991 stated that the objectives of opening the economy to FDI were to "bring attendant advantages of technology transfer, marketing expertise, introduction of modern managerial techniques and new possibilities for promotion of exports". The last FDI policy statement, Consolidated FDI Policy Circular of 2017, also made it clear that the FDI was also about supplementing technology and skills to propel economic growth.

The top 10 recipients of Foreign Direct Investment in 2019

The Global Investment Trend Monitor report compiled by **United Nations Conference on Trade and Development (UNCTAD)** states that the global foreign direct investment remained flat in 2019 at $1.39 trillion a one per cent decline from a revised $1.41 trillion in 2018. The top 10 recipients of Foreign Direct Investment in 2019 are as follows:

Table 3: TOP 10 HOST ECONOMIES

(FDI inflows in $ billions)

Sr.	Name of the Country	2018	2019
1	United States	254	251
2	China	139	140
3	Singapore	78	110
4	Brazil	60	75
5	United Kingdom	65	61
6	Hong Kong. China	104	55
7	France	37	52
8	**India**	**42**	**49**
9	Canada	43	47
10	Germany	12	40

Source: UNCTAD

India was among the top 10 recipients of Foreign Direct Investment in 2019, attracting $49 billion in inflows, a 16 per cent increase from the previous year, driving the FDI growth in South Asia, according to a UN report.

Developing economies continue to absorb more than half of global FDI flows. South Asia recorded a 10 per cent increase in FDI to $60 billion and "this growth was driven by India, with a 16 per cent increase in inflows to an estimated $49 billion. The majority went into services industries, including information technology," the report said. India attracted an estimated 49 billion dollars of FDI in 2019, a 16 per cent increase from the 42 billion dollars recorded in 2018, it said.

The FDI flows to developed countries remained at a historically low level, decreasing by a further six per cent to an estimated $643 billion.

The FDI to the European Union (EU) fell by 15 per cent to $305 billion, while there was zero-growth of flows to United States, which received $251 billion FDI in 2019, as compared to $254 billion in 2018, the report said.

Despite this, the United States remained the largest recipient of FDI, followed by China with flows of $140 billion and Singapore with $110 billion.

China also saw zero-growth in FDI inflows. Its FDI inflows in 2018 were $139 billion and stood at $140 billion in 2019. The FDI in the UK was down six per cent as Brexit unfolded.

According to the report, the global foreign direct investment remained flat in 2019, at $1.39 trillion, a decline of 1 per cent from a revised $1.41 trillion in 2018. This is against the backdrop of weaker macroeconomic performance and policy uncertainty for investors, including trade tensions.

The report also revealed a slow cross-border M&A activity, which decreased by 40 per cent in 2019 to $490 billion - the lowest level since 2014. Slowed down by sluggish Eurozone growth and Brexit, European M&A sales halved to $190 billion. Deals targeting United States companies remained significant - accounting for 31 per cent of total M&As. The fall in global cross-border M&As sales was deepest in the services sector (-56 per cent to $207 billion), followed by manufacturing (-19 per cent, to $249 billion) and primary sector (-14 per cent, to $34 billion). In particular, sales of assets related to financial and insurance activities and chemicals fell sharply. The decline in M&A values was also driven by a lower number of megadeals. In 2019, there were 30 megadeals above $5 billion compared to 39 in 2018.

FDI and GDP of India - Foreign direct Investment and Gross domestic product are the major determinant of the economy of any country. FDI affects the GDP of a country directly and hence they are positively correlated. But the FDI in a country is not the only economic factor on which causes the GDP to increase or Decrease there are so many quantitative and qualitative economic and non economic variables which influences the GDP of a country.

Table 4: FDI and GDP of India(From 2000-01 to 2018-19)

Year	GDP Growth (%)	Equity inflows In US$ Million
2000-01	4.82	2463
2001-02	3.80	4065
2002-03	7.86	2705
2003-04	7.92	2188
2004-05	7.92	3219
2005-06	8.06	5540

2006-07	7.66	12492
2007-08	3.09	24575
2008-09	7.86	31396
2009-10	8.50	25834
2010-11	5.24	21383
2011-12	5.46	35121
2012-13	6.39	22423
2013-14	7.41	24299
2014-15	8.00	29737
2015-16	8.17	40001
2016-17	7.17	43478
2017-18	6.98	44857
2018-19	7.25	44366

Source: Word Bank 17 July 2019 and DIPP Factsheet on FDI from April 2000 to March 2019

Karl Pearson's coefficient of correlation for the above data from 2000-01 to 2018-19 is 0.107293

From the statistical analysis it is quite clear that the above data of GDP growth rate and Equity inflows in India through GDP are positively correlated with each other. Thus any increase in FDI inflow leads to increase in the growth rate of GDP. But as we can see that both variables are not perfectly correlated and GDP growth rate is showing too many fluctuations. So we can say that they have moderate positive correlation between them. And further we can say that there are too many other factors that have impact on Indian GDP. The other factors may include interest rate, employment rate, inflation rate etc

Findings :

1. The FDI inflows in India are showing a positive trend and it is a very positive signal for Indian Economy.
2. The Indian Economy is one of the most favorable investment options than the other developed and developing countries.
3. India was among the top 10 recipients of Foreign Direct Investment in 2019.
4. India attracted an estimated 49 billion dollars of FDI in 2019, which was 16 per cent increase from the 42 billion dollars recorded in 2018.
5. The Inflow of FDI and FII in India has positive relationship between each other.
6. The FDI is significantly contributing in the economic development of India as it has the positive correlation coefficient of **0.107293** with Indian GDP.

Future Scope - This Study can be extended by finding the various determinants of FDI in India and how we can use those determinants for increasing the flow of Foreign Direct investment in India.

Conclusion - The FDI trends in Indian Economy are touching in upward direction that also with the good speed. On the basis of above analysis it is relatively evident to say that Indian economy is one of the most potential investment destination for most of the developed and developing countries. And we should take hold of this opportunity by liberalizing the rule and regulations for FDI in India.

Analysis of data from the year 2000-01 to 2018-2019 shows a larger share of the FDI equity (gross FDI includes equity, re-invested earnings and other capital) has gone into services (mainly financial services, software, telecommunication, construction and trading etc.) than manufacturing (mainly automobiles, chemicals, drugs and pharmaceuticals etc.).

There is one question that is remarkable by the above analysis is that in spite of having good inflow of FDI in India just after the recession period. Even we are not able to attract more FDI. As the growth rate of FDI in India for the period of 2010 to 2014 is not much attractive. Hence we need to find some factors that are causing slowdown of FDI inflow in Indian Economy.

References:-

1. Chakraborty, C and P Basu (2002): "Foreign Direct Investment and growth in India: A Co-integration Approach", *Applied Economics,* Vol. 34, pp. 1061-1073.
2. Chaturvedi, Illa (2011), "Role of FDI in Economic Development of India: Sectoral Analysis", International Conference on Technology &Busines
3. Dua, P. and A. I. Rasid (1998): "FD! and Economic activity 111 India", *Indian Economic Review,* Vol. 33, pp. 153-168.
4. Goel Shashank, Rao. K. Sambasiva,(2013) "Trends and patterns of FDI in India and its Economic Growth" Asian Journal of Research in Business Economics and Management
5. Gopinath, T. (1998): "Foreign Investment in India: Policy Issues, Trends and Prospects", *Reserve Bank of India Occasional Papers,* Vol. 18, pp. 453-470
6. Krishna. M. J. (2001): "Private Foreign Investment in Post-Reform India: A search for Proximate Determinants", *ISEC Working Paper Series.* No. 87.
7. Kumar, N. (2000): "Host Country Policies, WTO Regime and the Global Patterns of FDI Inflows: Implications of Recent Quantitative Studies for India", *lEG Workinking Paper Series,* No. *E/209.*
8. Lall, S. and N. Kumar (1981): "Friml Level Export Performance in an Inward Looking Economy: Indian Engineering Industry.", *World Development,* Vol. 9, pp.245-251.
9. Lucas, R. E. B. (1993): "On the Detenninants of Direct Foreign Investment: Evidence from East and Southeast Asia", *World Developmellt,* Vol. 21, pp. 391 – 406
10. Nagaraj, R. (2003): "Foreign Direct Investment in India in the 1990s, Trends and Issues", *Economic and Political Weekly,* Vol. XXXVIlI, pp. 1701-1712.
11. Pailwar. V. (2001): "Foreign Direct Investment Flows to India & Export Competitiveness", *Productivity,* Vol. 42, pp, *115-122.*
12. Pant. M. (1995): Foreign Direct Investment in India: The Issues Involved. Lancer Publication, New Delhi.
13. Reserve Bank of India, RBI (2001): Handbook of Statistics on the Indian Economy.
14. Reserve Bank of India, RBI (2018): Handbook of Statistics on the Indian Economy.

15. Reserve Bank of India, RBI (2019): RBI's Bulletin March, 2019 dt.11.05.2019 (Table No. 34 – FOREIGN INVESTMENT INFLOWS).
16. Root, F. R., and A. A. Ahmed (1978): 'The Influence of Policy Instrument on Manufacturing Direct Foreign Investment in Developing Countries", *Journal of'lntemational Business Studies,* Vol. 9, pp. 81 - 93.
17. Sastry, D. V S. (1990): "Expenditure on R&D and Importcd Technology-A CrossSection Study", *RBI Occasional Paper,* Vol. 11, pp. 287-296.
18. Sebastian, M. (1994): "Prospects for FDI and Multinational Activities", *Economic and Political Weekly,* Vol. 31, pp. 2314-2331.
19. Secretariat or Industrial Assistance, SIA (1998): Newsletters, Ministry of Industry, Government of India, New Delhi.
20. Secretariat of Industrial Assistance, SIA (2000): Newsletters, Ministry of Industry, Government of India, New Delhi.
21. Shamsuddin, A. F. M. (1994): "Economic Determinants of Foreign Direct Investment in Less Developed Countries", *The Pakistan Development Review.* Vol. 33, pp. 41- 51.
22. United Nations Conference on Trade and Development (UNCTAD) ,(2019) : "World Investment Report 2019"
23. Wang, Z. Q. and N. 1. Swain (1995): "The Detenninants of Foreign Direct Investment in Transfonning Economics: Empirical Evidence from Hungary and China", *Wellwirlschaflllches Archlv,* Vol. 131, pp. 358 - 382.

Online references:

1. https://dipp.gov.in/sia-newsletter/foreign-direct-investment-india-annual-issue-2019
2. https://dipp.gov.in/sites/default/files/FDI_Factsheet_4September2019.pdf

(Footnotes)

1. Wang, Z. Q. and N. J. Swain (1995): "The Determinants of Foreign Direct Investmentin Transforming Economics: Empirical Evidence from Hungary and China",*Weltwirtschafdiches Archive,* Vol. 131, pp. 358 - 382.
2. Lucas, R. E. B. (1993): "On the Determinants of Direct Foreign Investment: Evidence from East and South east Asia", *World Development,* Vol. 21, pp. 391 - 406.
3. Shamsuddin, A. F. M. (1994): "Economic Determinants of Foreign Direct Investment in Less Developed Countries", *The Pakistan Development Review.* Vol. 33, pp. 41- 51.
4. Gopinath, T. (1998): "Foreign Investment in India: Policy Issues, Trends and Prospects", *Reserve Bank of India Occasional Papers,* Vol. 18, pp. 453-470.
for Proximate Determinants", *ISEC Working Paper Series.* No. 87.
6. Dua, P. and A. I. Rasid (1998): "FD! and Economic activity 111 India", *Indian Economic Review,* Vol. 33, pp. 153-168.
7. Chakraborty, C and P Basu (2002): "Foreign Direct Investment and growth in India: A Co-integration Approach", *Applied Economics,* Vol. 34, pp. 1061-1073.

****

Charismatic Wild Animal: *Panthera tigris*

Dr. Farhana Ali* Dr. Imrana Siddiqui**

Abstract - The Tiger, *Panthera tigris* is the largest surviving cat species and a member of the genus *Panthera*. The Greek word "*tigris*" from which the word 'Tiger' has been adopted is derived from a Persian source meaning 'arrow', a reference to the animal speed which is about 49 to 65 km per hour. It is believed that the tiger have originated in East Asia and migrated in different directions.
Keywords- Tigers, pugmarks, extinct, ecosystem, apex Predator, forest.

Introduction - Adult male Tiger weights about 190 grams and are about 2.7 meters long including a tale of almost is 0.9 meters. Adult tigress weights about 140 kilograms and is slightly smaller. The Tigers coat ranges from brownish yellow to orange red and is marked by black strips which are over 100 in number. The stripes greatly differ in length width and spacing. Some tigers have chalk white fur with brown or black strips. These are white tigers and are also distinctive because these have blue eyes.

Tigers prefer large prey such as dear, antelope, wild oxen and wild pigs. Sometimes attacks elephant calves. They also eat small preys such as monkeys and frogs. A Tiger depends on its sharp eyes and keen ears but it may also use it sense of smell. Tigers are extremely swift for short distances and can leap nearly 9 meters. But if a tiger fails to catch its prey quickly, it usually gives up because it soon tires. A Tiger may eat 23 kilograms of meat in a night.

Territorial and nocturnal tigers are highly developed species. They are solitary creatures who mark their territory by leaving marks on trees trunks. No two tigers have same pugmarks. Almost all tigers have over 100 stripes yet each of them has a distinct pattern of stripes different from those of others.

There are eight species of tigers in the world. They are :-

1. Bengal Tiger - Panthera tigris tigris
2. Siberian Tiger - Panthera tigris altaica
3. Sumatran Tiger - Panthera tigris sumatrae
4. Caspian Tiger - Panthera tigris virgata
5. Javan tiger - Panthera tigris sondaica
6. South China Tiger - Panthera tigris amoyensis
7. Indochinese Tiger - Panthera tigris corbetti
8. Bali Tiger - Panthera tigris balika

Out of these species five are living and the rest three species- Bali Tiger, Javan tiger and Caspian Tiger have become extinct in last 50 years.

Significance of tigers - As an apex Predator, Tiger plays a key role in maintaining the balance within the ecosystem of forest. Tigers depend on herbivores for the food as deer, antelopes, wild oxen and wild pigs and sometimes elephant calves. These herbivores in turn depend on trees and vegetation for food. By preying on herbivores, tiger checks their population which prevents the overuse of forest vegetation and save the forest from being over grazed. Following are the benefits of this fact-

1. It stops deforestation and due to this there is no imbalance in atmospheric gases i.e. carbon dioxide and oxygen as trees absorb CO_2 and release O_2.
2. It decreases the global warming. Trees absorb greenhouse gases like carbon dioxide, carbon monoxide, Sulphur dioxide, methane, ethane, chlorofluorocarbon etc from the atmosphere which is released from vehicles and respiration of animals and human beings.
3. There is less soil erosion and floods. The roots of forest trees hold the particle of soil together firmly. This checks soil erosion. Trees of the forest have an ability of quick absorbing water. Due to this forests prevent sudden floods.
4. Forest absorbs thousands of tones of dust and other pollutants and also noise pollution and air pollution.
5. The water vapors released by trees during transpiration help to cool down temperature which increases rainfall in that area.
6. Forest gives us timber, paper, medicine, honey, rubber, resins, gum, oil and many other things. Tribal and other people living near forest depend on them for firewood, food and the means of livelihood.
7. Depriving animals of their food and shelter due to deforestation, increased risk of their straying into human habitation. It also leads to the extinction, permanent loss of plant and animal species. More than 150 medicinal plants have become extinct in India in last few years. We have also lost cheetah, the lesser one horned rhinoceros and the giant Indian squirrel.

*Principal, Govt. High School, Syahimudi, Korba (C.G.) INDIA
** Professor, Govt. Arts and Commerce College,Sagar (M.P.) INDIA

Taking an example of Leopard, for instance, few leopards were living in a small area of the Bharatpur sanctuary kept the cattle population under control by preying on their calves. In 1962, when the last leopard was shot dead, it resulted in large areas of forest being lost due to overgrazing by herbivores. The same will happen if the tiger vanishes from any forest where it has previously inhabited. All the life forms in an ecosystem are interdependent and their survival depends upon each other. Thus by saving a tiger, we save more than just an animal. We save the forest with all the animals and plants in it.

According to WWF (World Wild Federation) "when we protect one tiger, we protect about 100 square kilometer of area and thus save other species living in its habitat."

Tiger population - Since the beginning of the last century tiger population has shrunk by more than 90%. In the last fifty years three Tiger sub species, the Caspian, Java and Bali tiger became extinct in India, which is said to be the home to the largest Tiger population. 50% of the whole world's tiger population belongs to India. The rest of the world also has a similar story to tell. At the beginning of the 20th century India had about 40,000 tigers, by 2002 their number reduced to 3842, in 2008 the number dropped to 1411.In Chhattisgarh only, the population of tigers has fallen steeply in between 2014 to 2018. In 2014 census, 46 tigers were recorded. After only four years, the number has decreased to 19 in 2018. According to then Forest minister Mr. Mohd. Akbar, this decrease in number of tigers is due to the census technique. In the written answer given in the parliament, he told that the reason behind this decrease is the "Camera Trap Technique". 2018 census was carried on using this technique. In previous years "Pug path" and excreta were used for counting.

Special features of tiger- Tiger is an attractive inhabitant of tropical forest. Unlike its Siberian cousin which has a thick, shaggy coat, the tropical Tiger has a coat of short, close fur. The stripes on its body help it hide among tall grasses. This type of pattern on the body is called 'disruptive coloration. It breaks up the shape of the body visually and confuses the prey or Predator. Unlike other cats, the tiger loves water and is a good swimmer. A dip in the water helps it keep cool in warm climate, where it lives. Like all cats, tiger is a good Hunter. Its soft paw pads help it stalk its forelegs. This helps it jump on preys. It can retract or pull its claws into its paws, which protects his claws from wear and tear.

Project Tiger- Project Tiger was launched by Government of India on April 1st 1973 to save tiger from extinction. 21 Tiger reserves were selected in different states to protect the Tiger. By the time project Tiger celebrated its silver jubilee in 1998, the population of the Tiger had reached beyond 4000 by that time. In Chattisgarh District Indrawati Tiger Reserve, Udanti Tiger Reserve and Achanakmar Tiger reserve are three reserves which are included in project tiger. Rupees 13.86 crore has been spent for tiger conservation under Project Tiger from January 2019 till 31 July 2020. Besides Tiger Reserves there are 36 tigers in three Zoos of the state. There are 846 leopards in the state including 17 leopards in the zoo. From January 2019 till 31 July 2020, 4 tigers, 23 leopards and 22 elephants have died in Chattisgarh state. Project Tiger in India had been hailed as a great success until it was discovered that the initial count of tigers had been seriously decreased.

Ten ways to protect Tiger –

1. **Create awareness**- Anyone and everyone can help if commitment is made in their mind. Make posters, fliers, shout it out from the rooftops, spread a word; in other words, create awareness about the importance of tigers on the planet. Organize birthday parties with tiger themes. Parents can take their children to the zoo for more information on tigers.

2. **Educate the locals-** People living near forest need to be educated about the importance of tiger in terms of ecosystem. They need to be told that if there will be no tiger, there will be no forest, as all the grass eaters will devour the forest completely.

3. **Stop poaching and don't encourage poachers-** Sale of tiger's skin and other body parts is banned by the Government. So if you find somebody hunting tigers, report them to your local police station or even the forest officials. They will take care of the poachers. Tiger poaching has seriously impacted the probability of survival of tigers in India. About 3000 wild tigers now survive as compared to 10000 at the turn of the 20th century. The abrupt decimation in population count was largely due to slaughter of tigers by poachers right from British Raj following the independence of India. Most of those remaining, which are about 1700, are India's Bengal tigers. Most of the tiger parts end up in Chinese markets where a single skin can sell for Rs. 6.5 millions. Sansar Chand. The notorious tiger poacher acknowledged to selling 470 tiger skins and 2130 leopard skins to just four clients from Nepal and Tibet. 35 tigers have already been poached in India in 2019.

4. **Support a Cause**- Join a cause for tigers. You can join, save tigers and support them by blogging, or by making posters, sending fliers among other things. You can also organise a tiger sale and donate the money to the cause.

5. **Severe punishment for poachers**- Ensure that the poachers are not allowed to go easily. Make sure that they receive severe punishment for their crime. Hunting of any wild animal listed in the four schedules of the Wildlife (Protection) Act, 1972 is unlawful, either within or outside the wildlife sanctuary or National park. The tiger is listed in Schedule 1. The law empowers Forest officer to arrest the accused, investigate and file complaint before Judicial Magistrate. The punishment is imprisonment of not less than three years but extending to seven years and with fine of not less than Rs. 10,000.

6. **Ban the goods made up of tiger skin**- Please do not use goods made of Tiger skin. Also please don't use the medicine made out of tigers body parts. On an average one wild is killed each day for profit killing.

7. **Protect forests and tiger habitats-** In order to save tigers, forest need to be protected. Apparently the species are becoming extinct because of the loss of their natural habitat. Identify and monitor high priority tiger populations on which immediate conservation efforts should be focused. To survive in the wild, tigers need large areas of habitat with sufficient water to drink, animals to eat, and vegetative cover for hunting.

8. **Organize eco tours**- An eco tour that focuses on tigers can be beneficial in making people understand the importance of tigers. Also the money made out of these tours can help in convincing government that tigers can be profitable. "Eco-development" (ecologically-sensitive development) must be combined with educational conservation programs that inform, empower and inspire local communities to participate in the protection of the tiger.

9. **Support accredited zoos and wildlife sanctuaries**- You can also support various accredited zoos and wildlife sanctuaries in your area. They are active in research and conservation programs with some of the zoos involved in captive breeding of tigers. Working with conservation groups, tiger specialists are researching tiger nutrition, health, and reproduction and zoo facilities and management so that zoo tigers will breed future generations of healthy cubs.

10. **Donate money to Tiger conservation organizations** -You can also donate some amount to Tiger conservation organization who are constantly striving to fund money for their research as well as education programs on tigers.

Today, international conservation groups are working hard to save the tiger from extinction, but the prospect of losing the last of the world's wild tigers within the next five years continues to loom. Combined with vital efforts to reduce the demand for tiger parts and strengthen protected-area laws, wildlife conservation and protection remains at the heart of the strategy to save the tiger in the wild.

Some Interesting Tiger facts

1. The Bengali Tiger roar can be heard from up to 3 km.
2. Tigers have eyes that are the brightest of any other animal in the world.
3. A group of tigers is called a 'streak'.
4. The night vision of a tiger is 6 times better than that of human being.
5. Tigers can run with three legs in the air simultaneously.
6. In the poll conducted by Animal Planet, Tiger was voted world's most favorite animal narrowly beating the dog. Tigers received 21% and dogs 20% of votes.
7. Tiger can spend up to 18 hours sleeping.
8. Almost all of the captive white tigers have descended from a wild white Bengal Tiger Mohan that was captured in India in 1950s.
9. According to ancient Chinese legend when a tiger become 500 year old, its tail turns white.
10. From nose to the tip of its tail average male Tiger measures 10 feet.
11. White tiger have a pink nose and pink paw pads.
12. Adult tigers have 30 teeth.
13. If you shave a tiger's fur, its skin would still have stripes.
14. All tigers have a similar marking on their forehead which resembles the Chinese symbol-wang meaning 'King' (‹**s**).
15. In 1972, the tiger was declared 'the National Animal of India'.
16. A Tiger cub can gain hundred grams in weight per day.
17. Over the course of the life, a female Tiger gives birth to approximately equal number of male and female cubs.
18. Tigers are excellent swimmers and can swim up to 6.5 km at a stretch.
19. Tigers occasionally eat vegetation for dietary fibre.
20. Together with Kanha Kisli, the Bandhavgarh forests are believed to be the set for Rudyard Kipling's "The Jungle Book".

Why danger of Being Hunted?

Following are the different parts of a tiger's body and how they are being used –

Head: As a trophy on the walls.
Brain: To cure laziness and pimples.
Teeth: For the treatment of rabies, asthma and sores.
Blood: For strengthening of concentration and willpower.
Fat: For treatment of vomiting, dog bites, bleeding, hemorrhoids and scalp ailment in children.
Skin: To treat mental illness and to make fur coats.
Whiskers: For toothache.

Initiatives of Government

1. Training programs and workshops have been organized to sensitize government departments to be pro-active in control of trade and preventing a smuggling of wildlife products.
2. A forum of Tiger Range countries "Global Tiger Forum" has been created for addressing international issues related to Tiger conservations.
3. Launching of public awareness programs to involve non-governmental organizations and others for supporting the Government in its efforts towards wildlife conservations.
4. A National Wildlife Action Plan (2002 to 2016) was launched with action points and priority projects after the first plan in 1983. India has now unveiled the third National Wildlife Action Plan for 2017-2031 spelling out the future road map for wildlife conservation.
5. Wildlife Conservation Strategy - 2002 was adopted in the meeting of National Board for Wildlife, wherein it was envisaged that "lands falling within 10 kilometers of the boundaries of National Parks and Sanctuaries should be notified as eco-fragile zones under Section 3(v) of the Environment (Protection) Act, 1986 and Rule 5 of the Environment Protection Rules, 1986."
6. An extremely aided India Eco development project has been launched in seven States covering 7 protected areas. Recognizing the absolute necessity of preserving the forest and its wildlife, the authorities

launched an innovative project named India Eco-development Project in the year 1998. The initiative aimed at "sharing of power; not show of power"

Conclusion- Participate in the solution. Your awareness and support is a vital part of the effort to save the wild tiger from extinction. It would cost approximately $15 million a year to adequately protect the tigers in India's reserves. It is imperative that we protect the tiger: it will not survive on its own.

References :-

1. AMAZING FACT-FINDER ANIMALS, Tiny Tots
2. "Wildlife Conservation Strategy 2002" (PDF). envfor.nic.in. Retrieved 20 November 2016
3. "The Environment (Protection) Rules, 1986" (PDF). *envfor.nic.in*. Retrieved 20 November 2016
4. Singh, A. (1981). *Tara, a tigress*. London and New York: Quartet Books. ISBN 978-0-7043-2282-0.
5. Jhala, Y. V., Gopal, R., Qureshi, Q. (eds.) (2008). Status of the Tigers, Co-predators, and Prey in India
6. "India's wild tiger population rises to nearly 3,000 – a drastic increase despite human conflict". CBS News. 29 July 2019. Retrieved 30 July 2019
7. Bhattarai, B. and Fischer, K. (2014). Human–tiger Panthera tigris conflict and its perception in Bardia National Park, Nepal. *Oryx*, 48(04), pp.522-528.
8. Goodrish, J. (2010). Tiger conservation in the Year of the Tiger, 2010. [Journal] *Integrative Zoology*, 5(4), pp.283-284.
9. Goodrich, J., Seryodkin, I., Miquelle, D. and Bereznuk, S. (2011). Conflicts between Amur (Siberian) tigers and humans in the Russian Far East. *Biological Conservation*, 144(1), pp.584-592
10. Khandelwal, V. (n.d.). Tiger Conservation in India - Project Tiger. *SSRN Journal*.
11. Prajapati, R., Triptathi, S. and Mishra, R. (2014). Habitat Modeling for Tiger (Penthra Tigris) Using Geo-spatial Technology of Panna Tiger Reserve (M.P.) India. *IJSRES*, 2(8), pp.269-288.
12. Sharma, K, Wright, B, Joseph, T, & Desai, (2014), [Journal] 'Tiger poaching and trafficking in India: Estimating rates of occurrence and detection over four decades', *Biological Conservation*, 179, pp. 33-39
13. Zhang, C., Zhang, M. and Stott, P. (2013). Does prey density limit Amur tiger Panthera tigris altaica recovery in northeastern China?. *Wildlife Biology*, 19(4), pp.452-461.
14. How to identify a tiger from its stripes -Project Tiger. Retrieved 4 March 2019

****

ग्रामीण क्षेत्र के किशोर एवं किशोरियों के स्वास्थ्य संबंधी समायोजन का अध्ययन (कुक्षी तहसिल के संदर्भ में)

रेखा जामोद *

शोध सारांश – किशोरावस्था अत्यंत संक्रमणकाल की अवस्था है। इस अवस्था में अनेक प्रकार के शारीरिक ,मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक एवं व्यवहारिक परिवर्तन व विकास दिखाई देते है इन परिवर्तनों के कारण उनकी अभिवृत्तियां, आदत, रूचियॉ, स्वास्थ्य, इच्छाओं आदि परिवर्तित हो जाते है। किशोरों का शारीरिक एवं मानसिक व्यवहार उनके स्वास्थ्य पर निर्भर करता है इस अवस्था में किशोर-किशोरियों के शरीर के भार, आकार, लम्बाई आदि में परिवर्तन होते हैं। किशोरों के समुचित विकास पर उसके आस-पास के वातावरण का भी प्रभाव पड़ता हैं यदि किशोर के स्वाभाविक विकास हेतु शुद्ध वायु, स्वच्छता, किशोर के पहनने के कपड़े, रहने का स्थान स्वच्छ तथा सेवन किया गया भोजन, भोजन में पोष्टिकता हो तो उनका शारीरिक विकास अत्यंत द्रुरस्थ गति से होता हैं यदि किशोरावस्था के किशोरों को प्रर्याप्त मात्रा में पोष्टिक भोजन न मिले तो इस स्थिति में किशोरों का शारीरिक विकास उतना नही होता, जितना कि होना चाहिए। इस परिपक्व अवस्था में ग्रामीण क्षेत्र के किशोरों को उनके पारिवारिक वातावरण, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक स्थिति एवं स्वास्थ्य का प्रभाव निश्चित रूप से पड़ता है।

इस अध्ययन हेतु 'ग्रामण क्षेत्र के किशोर एवं किशोरियों के स्वास्थ्य संबंधी समायोजन का अध्ययन' किया गया। शोध कार्य में न्यादर्श के लिए रूप में कुक्षी तहसिल के ग्रामीण क्षेत्र के शासकीस विद्यालयों से 40 किशोर एवं 40 किशोरियों का चयन दैव निदर्शन विधि द्धारा किया गया हैं। तथ्य संकलन के लिए डॉ. आर. के. ओझा (2013) द्धारा निर्मित समायोजन मापनी का उपयोग किया गया। तथ्य विश्लेषण सांख्यिकीय विधि टी-परीक्षण की सहायता से किये गये अध्ययन के परिणाम बताते हैं कि ग्रामीण क्षेत्र के किशोर एवं किशोरियों का स्वास्थ्य संबंधी समायोजन में सार्थक अन्तर पाया गया।

प्रस्तावना – किशोरावस्था अत्यंत संक्रमणकाल की अवस्था है।इस अवस्था में किशोर स्वयं को बाल्यावस्था तथा प्रौढ़ावस्था के मध्य अनुभव करता है तथा अपने व्यवहार को नियंत्रित करने मे कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इस अवस्था में अनेक प्रकार के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक एवं व्यवहारिक परिवर्तन व विकास दिखाई देते है। इन परिवर्तनों के कारण उनकी रूचियों, इच्छाओं आदि भी परिवर्तित होते है।

किशोरावस्था में किशोर-किशारियों का सामाजिक परिवेश अत्यंत विस्तृत हो जाता है। विभिन्न परिवर्तनों के साथ-साथ उनके सामाजिक व्यवहार में भी परिवर्तन आना स्वाभाविक हैं इस अवस्था में होने वाले अनुभवों तथा बदलते सामाजिक संबंधों के फलस्वरूप किशोर- किशोरियां नए-नए तरिके से सामाजिक वातावरण में समायोजित करने का प्रयास करते हैं क्योंकि सामाजिक विकास के द्धारा ही बालक- बालिकाऐं सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप स्वयं को व्यवथित कर समायोजन की और उत्प्रेरित होते है।

किशोरावस्था बालक-बालिकाओं की अवस्था 12-18 वर्ष के बीच मानी जाती है, विकास एवं वृद्धि की विभिान्न अवस्थाओं में किशोरावस्था अत्यधिक महत्वपूर्ण मानी जाती है इस अवस्था में बालक न तो बच्चा और न ही प्रौढ़ होता है, जीवन की इस अवस्था को तुफान, तनाव एवं संघर्ष की अवस्था कहा जाता हैं।

किशोर के व्यक्तित्व विकास के लिए स्वास्थ्य की महत्वपूर्ण भूमिका होती है उनमें बौद्धिकता, सामाजिकता एवं संवेगात्मक परिपक्वता का विकास तभी उपयुक्त हो सकता है जब बालक शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ्य होगा। मानसिक स्वास्थ्य किशोरों में सामाजिक कौशल सहकारिता, सहयोग, सहानुभूति, सामाजिक की गतिशीलता की प्रवति उत्तम ढ़ंग से जाग्रत रहती है।शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य से किशोरों को सभी प्रकार के समायोजन में मदद मिलती है क्योंकि यह एक प्रकार की संतुलित मनोदशा कि अवस्था है, जिसमें किशोर अपने जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में सामाजिक, पारिवारिक आदर्शो एवं मान्यताओं के अनुरूप व्यवहार को बनाए रखता है। जिसके कारण अपने लक्ष्यों प्राप्त करने में सफलता प्राप्त होती है।

अध्ययन के उद्देश्य:-

1. ग्रामीण क्षेत्र के किशोर बालक-बालिकाओं के स्वास्थ्य संबंधी समायोजन के स्कोर का माध्य ज्ञात करना।

अध्ययन की परिकल्पना:-

1. ग्रामीण क्षेत्र के किशोर बालक-बालिकाओं के स्वास्थ्य संबंधी समायोजन के स्कोर के माध्य में **कोई सार्थक अंतर नही** होगा।

साहित्य का पुनरावलोकन:-प्रस्तुत अध्ययन के लिये अनेक शोध पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन किया तथा उनमें से विगत वर्षो में किये गये कुछ प्रमुख अध्ययन इस प्रकार हैं-

1. **दिलीप कुमार झा (2019)**-ने गाजियाबाद में 'ग्रामीण और शहरी छात्रों के समायोजन स्तर एवं व्यक्तित्व गुणों का तुलनात्मक अध्ययन' पर शोध कार्य किया। इनके द्धारा न्यादर्श के रूप में 400 छात्र-छात्राओं का चयन किया गया। तथ्य संकलन के लिए उपकरण के रूप में डॉ. वी. के. मित्ताल एंव डॉ. एस.पी. कुलश्रेष्ठ द्धारा निर्मित समायोजन मापनी एंव व्यक्तित्व मापनी का उपयोग किया गया। अध्ययन के निष्कर्ष में ज्ञात हुआ

* शोधार्थी (गृह विज्ञान) शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

कि ग्रामीण एवं शहर छात्रों के पारिवारिक, सामाजिक एवं स्वास्थ्य समायोजन स्तर में काई सार्थक नही पाया गया अर्थात शहरी छात्रों में विद्यालयीन समायोजन स्तर ग्रामीण से अधिक हैं।

2.लक्ष्मी सिंह एवं डॉ.विजय शुक्ला(2018)- ने भोपाल जिले के 'शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों के समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन' पर शोध कार्य किया। न्यादर्श के रूप में कक्षा 9 वीं एवं 10 वीं के 300 छात्र-छात्राओं का चयन किया गया। तथ्य संकलन के लिए उपकरण के रूप में डॉ. ए. के. सिन्हा द्वारा निर्मित समायोजन मापनी का उपयोग किया गया। अध्ययन के निष्कर्ष में ज्ञात हुआ कि शासकीय एवं अशासकीय विद्यालयों के छात्रों के संवेगात्मक, सामाजिक शैक्षिक एवं सम्रग समायोजन का स्तर समान है।

3.प्रेम प्रकाश पाण्डेय 2016- ने हरियाणा राज्य के रोहतक जिले में उच्चतर माध्यमिक स्तर में पड़ने वाले छात्र एवं छात्राओं के समायोजन स्तर का तुलनात्मक अध्ययन किया। न्यादर्श के रूप में 100 विद्यार्थियों का चयन किया गया। तथ्य संकलन के लिए उपकरण के रूप में एम.एल.एस सक्सेना द्वारा निर्मित समायोजन मापनी का उपयोगकियागया।प्रदंत्तों विश्लेषण हेतु उपयुक्त सांख्यिकीय प्रविधियों का उपयोग कर अध्ययन से प्राप्त परिणामों में पाया कि गृह, स्वास्थ्य, सामाजिक एवं भावनात्मक समायोजन में कोई सार्थक अंतर नही पाया गया केवल भावनात्मक समायोजन में सार्थक अंतर पाया गया।

शोध विधि-

निदर्शन का चुनाव- इस शोध कार्य हेतु कुक्षी तहसिल के ग्रामीणक्षेत्र की शासकीय स्कूलों से किशोरावस्था के 40 किशोर एवं 40 किशोरियों का चयन दैव निदर्शन पद्धति के अनुसार किया गया। इस प्रकार कुल 80 किशोर एवं किशोरियों से डॉ. आर. के. ओझा द्वारा विकसित समायोजन परीक्षण को भरवा कर तथ्य एकत्रित किये गये।

परिणाम, विश्लेषण तथा विवेचन- प्रस्तुत शोध का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र के किशोर एवं किशोरियों के पारिवारिक एवं स्वास्थ्य संबंधी समायोजन के स्कोरों का माध्य ज्ञात करना था जिसे ज्ञात करने हेतु प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण टी-परीक्षणकी सहायता से किया गया। इसके परिणाम तालिकाओं में इस प्रकार दिये गये है-

प्रस्तुत शोध कार्य के लिए पूर्व किशोरावस्था के किशोर एवं किशोरियों के द्वारा किया जाने वाले समायोजन मापन के लिए डॉ. आर. के. ओझा द्वारा विकसित समायोजन परीक्षण का उपयोग किया गया हैं। इस परीक्षण के चार भाग हैं। इनमें से प्रस्तुत शोध पत्र के लिए हमने केवल पारिवारिक एवं स्वास्थ्य संबंधी समायोजन के स्कोरों को ही सम्मिलित किया गया हैं। इसके प्रत्येक भाग में 35 कथन दिए हैं उत्तरदाताओं को प्रत्येक कथन के सामने दो विकल्प 'हॉं' तथा 'नही' में से एक को चुनना था यदि वें कथन में दी गई बातों से सहमत थे तो 'हॉं' के सामने वाले खाने में सही का निशान लगाना था तथा यदि उनका उत्तर नकारात्मक था अर्थात् कथन में दी गई बातों से वें असहमत थे तो 'नही' के सामने वाले खाने में सही का चिन्ह लगाना था। प्रत्येक 'हॉं' के लिए 1 अंक दिये गये हैं तथा 'नही' के लिए 0 अंक दिए गये हैं। इस प्रकार यह परीक्षण पूर्णत: नकारात्मक परीक्षण हैं प्रत्येक 'हॉं' का अर्थ समायोजन में कमी दर्शाता हैं तथा प्रत्येक 'नही' का अर्थ हैं की व्यक्ति समायोजन अच्छा कर रहा हैं इसलिए तालिका में उच्च अंक कम समायोजन के तथा निम्न अंक अच्छे समायोजन को दर्शाता हैं।

तालिका क्रमांक-1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तलिका क्रमांक 1 से स्पष्ट हैं कि, ग्रामीण क्षेत्र के किशोर बालक-बालिकाओं के स्वास्थ्य संबंधी समायोजन के स्कोर में किशोरों का मध्यमान 19.03 एवं किशोरियों का मध्यमान 19.26 हैं, और टी मूल्य 2.38 हैं तथा df=78हैं, जोकि 0.01 स्तर पर सार्थक हैं, जिससे ज्ञात होता हैं कि किशोर एवं किशोरियों के पारिवारिक समायोजन के स्कोर में सार्थक अंतर हैं अत: शून्य परिकल्पना **'ग्रामीण क्षेत्र के किशोर बालक-बालिकाओं के स्वास्थ्य संबंधी समायोजन के माध्य के स्कोर में कोई सार्थक अन्तर नही हैं'** को अस्वीकार किया जाता हैं इसलिये कहा जा सकता हैं कि प्रस्तुत अध्ययन के तथ्य विश्लेषण से स्पष्ट होता हैं कि किशोर बालक-बालिकाओं का स्वास्थ्य संबंधी समायोजनमें सार्थक अंतर पाया गया।

ग्राफ क्रमांक-1

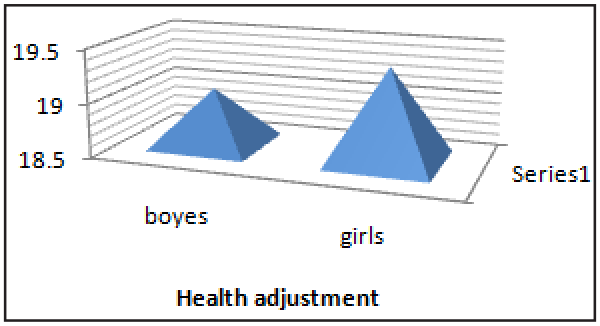

निष्कर्ष-प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ हैं कि ग्रामीण क्षेत्र के किशोर-किशोरियों के स्वास्थ्य संबंधी समायोजन में सार्थक अन्तर पाया गया हैं जिसका कारण यह हैं कि ग्रामीण क्षेत्र के किशोर-किशोरियों को अनेक स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिसमें भोजन की आदतें,जातीय, भौगोलिक स्थिति, धार्मिक ,समाजिक, मनोवैज्ञानिक, आहार संबंधी नितियां एवं शिक्षा आदि। अधिकांश ग्रामीण क्षेत्र के अभिभावक अशिक्षित होने के कारण स्वास्थ्य संबंधी समस्यों को समझ नही पाते है जिस कारण किशोर अनेक बीमारियों से ग्रसित होते हैं जिसका प्रभाव उनके विकास एवं समायोजन पर पड़ता है। वर्तमान में भी ग्रामीण क्षेत्र के किशोर कुपोषण का शिकार होते हैं इन समस्याओं के कारण उन्है व्यवहारिक एवं किसी भी प्रकार का समायोजन करने में कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है। नकारात्मक समायोजन से तनाव, चिन्ता, क्रोध आदि का प्रभाव उनके शारीरिक एवं मानसिक स्वस्थ्य व समायोजन पर पड़ रहा है जिससे किशोर बालक-बालिकाओं को अपने भविष्य में असफलता का सामना करना पड़ता हैं।

सुझाव-

1. ग्रामीण क्षेत्र के किशारों को उनकी आयु के अनुसार अभिभावकों व शिक्षकों को उनमें होने वाले परिवर्तनों की जानकारी प्रदान की जान चाहिए।
2. ग्रामीण क्षेत्र के किशोरों के सोच- विचारों एवं व्यवहारों में बदलाव लाना चाहिए जिससे की वह समाज के विकास में सहायक हो।
3. किशोरों की आयु, शिक्षा का स्तर तथा परिपक्वता के साथ- साथ स्वास्थ्य संबंधी शिक्षा प्रदान करना चाहिए।
4. स्वास्थ्य एवं जीवन में समायोजन की सहायता के लिए विद्यालयों में समय-समय पर कार्यशाला का आयोजन कर मार्गदर्शन दिया जाना चाहिए।
5. किशोरों के साथ बैठकर चर्चा करके, विभिन्न मुद्दों पर बातचीत करके,

अपने विचारों को व्यक्त कर उनकी जिज्ञासा एवं प्रश्नों को हल करना चाहिए।

6. किशोरों को अतिरिक्त समय को उपयोगी बनाने के लिए विभिन्न कार्यक्रम के दौरान रोजगारन्मुखी व्यवसायिक शिक्षा प्रदान करना चाहिए।
7. ग्रामीण क्षेत्रों में स्वस्थ्य शिक्षा, परिवार कल्याण कार्यक्रमों का प्रचार-प्रसार करना चाहिए।
8. ग्रामीण क्षेत्रों में हर स्तर में स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओं की प्रशासकीय व्यवस्था में सुधार लाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. बी.हरलोक.एलिजाबेथ (1967), विकास मनोविज्ञान, प्रकाशक-हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित, पाठ-8,पेज न.297.
2. बर्मन, श्रीमती गायत्री (2005), किशोरावस्था ,प्रकाशक-शिवा प्रकाशन इन्दौर, पाठ-6,11,13,19 पेज न. 62-288.
3. पाटनी डॉ. श्रीमती मंजू (1999), गृह विज्ञान, प्रसार शिक्षा, प्रकाशक-शिवा प्रकाशन, पेज न. 120, 121.
4. शर्मा.बी.एल एवं सक्सेना .बी.एम (2011), गृह विज्ञान शिक्षण, प्रकाशक- आर.लाल बुक डिपो, पाठ-2,पेज न.89-92.
5. डॉ.आर.के.ओझा (2013), समायोजन परीक्षण, राष्ट्रीय मनोवैज्ञानिक निगम भार्गव भवन कचहरी घाट आगरा.
6. Chouhan.Dr.Ekta - Adjustment of higher secondary students of NCR(national capital region).the internation journal of indian psychology,2016,Vol.3, No.64,165-174.
7. www.adjustmentdisorder.org.

तालिका क्रमांक-1 : ग्रामीण क्षेत्र के किशोर बालक-बालिकाओं के स्वास्थ्य संबंधी समायोजन के माध्य, मानक विचलन तथा टी-मूल्य:-

क्षेत्र	लिंग	माध्य	मानक विचलन	मानक त्रुटि	टी-मूल्य	सार्थकता 0.01स्तर
स्वास्थ्य संबंधीसमायोजन	किशोर	19.03	5.32	.834	2.38	सार्थक
	किशोरियों	19.26	6.09	.903		

✱✱0.01 स्तर पर सार्थक हैं

✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱✱

तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान - क्रियायोग

डॉ. सविता वशिष्ठ*

प्रस्तावना – तप क्रियायोग का प्रथम अंग है। तप के साथ स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान के संयुक्त होने पर सम्पूर्ण क्रियायोग बनता है।[1] नियमों में भी तप को पतंजलि ने मध्य में रखा है , इसका कारण है कि तप का योग की साधना के क्रम में अत्यधिक महत्व है। जिस प्रकार लोहा चांदी सोना आदि स्थूल भौतिक धातुओं की शुद्धि तभी हो पाती है , जब उन्हें अग्नि में भली प्रकार तपाया जाए। उसी प्रकार चित्त में अनादि काल से विद्यमान रूपी क्लेश इनके प्रभाव से विषयों की वासना तथा जन्म जन्मांतर की की कर्मवासनायँ , इन सबका विनाश तप के बिना नही हो पाता। तप ही एक ऐसा उपाय है जो इन तमाम क्लेशों को, कर्म की वासनाओं को ,विषयों के प्रति आकर्षण को नष्ट कर देता है।[2] सर्दी गर्मी, भूख प्यास, सुख-दुख, यश अपयश तथा हर्ष शोक सब ही द्वन्दों में सम रहना तप है। श्रीमद्भगवद्गीता में शारीरिक, वाचिक और मानसिक भेद से तप के तीन प्रकार माने गए हैं। उसके अनुसार गुरु ,ब्राह्मण, देवों एवं विद्वानों की पूजा ,पवित्रता, कोमल व्यवहार, ब्रह्मचर्य का पालन एवं हिंसा का पूर्ण त्याग शारीरिक तप कहा जाता है।[3] इसी प्रकार उद्‌वेग उत्पन्न करने वाले वचनों का प्रयोग ना करना, सत्य प्रिय और हितकारी वचन ही बोलना तथा स्वाध्याय करना अर्थात तप एवं वेद उपनिषद् आदि का अभ्यास वाणी का तप कहा जाता है।[4] मन को चंचलता रहित तथा राग द्वेष आदि के विकारों से रहित रखना सौम्य भाव रखना मुनि जनों जैसी भावना रखना स्वयं पर पूर्ण नियंत्रण रखना तथा विचारों की पूर्ण पवित्रता यह मानसिक तप माना जा आता है।[5] शरीर, वाणी और मन से किए जाने वाले उपर्युक्त प्रकार के तप को पुन: स्तर और उद्देश्य आदि के आधार पर सात्विक, राजस और तामस भेद से तीन प्रकार का माना जा सकता है। यदि किसी तप में विवेक के बिना आग्रह भरा हुआ है और स्वयं को अधिक से अधिक कष्ट देने के लिए अथवा किसी दूसरे को हानि पहुंचाने के उद्देश्य से जो तप किया जाता है वह तब तामसिक तप है।[6] जो तपश्चर्या सत्कार ,मान, सम्मान और पूजा प्राप्त करने के लिए अथवा दंभ पूर्वक की जाती है जो अस्थिरऔर कुछ काल के लिए की जाती है वह राजस तपश्चर्या है।[7] इसके विपरीत अत्यंत श्रद्धा पूर्वक बिना किसी फल की कामना से पूर्व तक शारीरिक बौद्धिक और मानसिक तप करना सात्विक है।[8] इस प्रकार तप नियमों का एक प्रकार है, नियम नित्य पालन करने योग्य आचार हैं, इनका पालन साधक का स्वभाव बन जाना चाहिए। इसीलिए भगवान कृष्ण ने ब्राह्मण के स्वभाव वश होने वाले कर्मों में क्षमा,कोमलता, शम, दम ,ज्ञान-विज्ञान और आस्तिकता के साथ तब और शौच को भी रखा है। अत: पूर्वोत्तक तप स्वयं जब मन ,वचन और शरीर का स्वभाव बन जाए तभी समझना चाहिए कि तप की सिद्धि हो गई है।[9]

स्वाध्याय- स्वाध्याय का अर्थ है अध्ययन। नवीन अर्थात पहले से जिस विषय को नहीं जानते हैं अथवा कम जानते हैं ऐसे विषय को जानने के लिए गुरु मुख से, अथवा गुरु के सदृश सिद्ध पुरुषों एवं विद्वानों के मुख से, साधना से संबंध अथवा जिस भी विषय को जानने की इच्छा हो उस विषय की चर्चा या उपदेश सुनना उससे संबंधित साहित्य पुस्तक ,पत्र पत्रिका आदि पढ़ना, उपनिषद, श्रीमद्भगवद्गीता, धम्मपद, बाइबिल आदि ग्रंथों को पढ़ना उन पर चर्चा करना स्वाध्याय है। साधना संबंधी मंत्रों प्रणव मंत्र , अर्थात ओमकार मंत्र का तथा इसी प्रकार विविध परंपरा में प्रचलित विविध मंत्रों का निरंतर अथवा किसी विशेष मात्रा में जप भी स्वाध्याय कहा जाता है।

मंत्र का जप करते हुए उसके अर्थ की भी भावना करना ,उसका चिंतन करना आवश्यक होता है।[10] स्वाध्याय की पूर्णता का तात्पर्य है सुने हुए ,पढे हुए ग्रंथों अथवा जप किए जा रहे मंत्रों का भली प्रकार तात्पर्य समझना, उस पर अन्य सामान तथा भिन्न विचार के लोगों के साथ चर्चा करना, तथा उसके अनुसार मन वचन और कर्म से वैसी ही भावना करना अर्थात स्वाध्याय के अनुरूप अपने विचारों में और संस्कारों को बनाने, उसके अनुरूप वचन बोलने तथा वैसा ही जीवन बनाने का प्रयत्न करना। शुद्ध आचरण तथा संपूर्ण भावना के अभाव में स्वाध्याय का लाभ नहीं मिल पाता। विचार और आचार का संस्कार ही स्वाध्याय का पहला परिणाम है ,अथवा स्वाध्याय ही सफलता का सोपान है। इसके बाद मंत्र द्वारा जिस देव का स्मरण किया जा रहा है अथवा जो कुछ हमारी साधना का लक्ष्य है उसकी प्राप्ति है।[11] स्वाध्याय का सबसे प्रथम और स्पष्ट परिणाम यह होता है कि साधक के विचारों में साधना के विषय में दृढ़ता आती है, श्रद्धा बढ़ती है, निष्ठा पुष्ट होती है, जिसके फलस्वरूप साधक साधना के मार्ग से विचलित नहीं होता। वह पूरे विश्वास के साथ अपने साधना पथ पर अग्रसर होता रहता है। स्वाध्याय के द्वारा साधना के अनेक अलग-अलग मार्गों की जानकारी भी साधक को मिलती है और वह इस योग्य हो जाता है कि अपने सर्वोत्तम और सबसे उत्तम साधना का मार्ग जान सके, अपने पथ प्रदर्शक के गुरु के चुनाव करने में सुविधा हो जाती है। वैसे तो गुरु ही शिष्य के स्वाध्याय की पूर्णता का सबसे बड़ा साधन है किंतु गुरु के अभाव में स्वाध्याय गुरु के अभाव को भी अनेक अंशों में पूर्ण करता है। इस प्रकार दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। मंत्र जाप रूप स्वाध्याय से भी साधक को मार्गदर्शक गुरु प्राप्त होता है। कई बार तो मंत्र साधना करने वालों के समक्ष अज्ञात शक्ति प्रकट होकर उसका मार्गदर्शन करती है।

ईश्वर प्राणिधान शब्द सामान्य रूप से दो अर्थों में प्रयोग में आता है। प्रथम है- ईश्वर के नाम ओमकार का जप और उसके अर्थ की भावना करना। इसे स्वाध्याय में भी रखा जा सकता है। इस शब्द का मुख्य अर्थ है संपूर्ण

* असिस्टेंट प्रोफेसर (संस्कृत) जैन कन्या पाठशाला पी. जी. कॉलेज, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) भारत

रूप से ईश्वर को समर्पण। सामान्यतया धार्मिक समाज में अपनी आय का कुछ भाग अथवा कोई भी पदार्थ प्राय: खाने के सामान भगवान की प्रतिमा के सामने अर्पित करके समाज में बांटते हुए प्रसाद के रूप में ग्रहण करने की परंपरा प्रचलित है। ईश्वर प्रणिधान में अपनी समस्त क्रियाएं क्रियाओं के फल तथा धन संपत्ति आदि सभी कुछ परम गुरु को समर्पित कर देना उसके प्रति ममता को अर्थ यह मेरा है ऐसी भावना को छोड़ देना होता है। इसलिए भगवान कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए सभी कर्म ,खाना-पीना, यज्ञ, दान ,पुण्य ,तपश्चार्य आदि सबकुछ अर्पित कर देने का निर्देश दिया है ।[12]
यह समर्पण दो प्रकार से किया जा सकता है-

कर्तापन का त्याग ,कर्तव्य भाव का विसर्जन सब कुछ परमपिता परमात्मा की प्रेरणा से हो रहा है उसके द्वारा ही बलात कराया जा रहा है।[13] ऐसा मानकर उस ब्रह्मा के कर्तापन को स्वीकार करना। इसका दूसरा प्रकार है संपूर्ण मनोयोग से कर्म करते हुए भी उसके फल की, परिणाम की इच्छा का पूरी तरह त्याग कर देना।[14] ईश्वर प्राणिधान के स्वरूप का ही पालन करने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता में राजा निमि को उपदेश देते हुए परम संत कवि ने कहा है कि तुम शरीर, वचन ,अथवा बुद्धि और अहंकार के कारण अथवा जन्म जन्मांतरों के स्वभाव के कारण जो भी कर्म कर रहे हो उस सब को परम पुरुष नारायण को समर्पित कर दो।[15] समस्त सुख दुख के भोग को प्रभु की कृपा मानकर अनासक्त भाव से भोगना और मन ,वचन और शरीर से संपन्न होने वाला समस्त क्रियाओं को परम परम प्रभु को समर्पित कर देना कर्तव्य के अहम भाव का संपूर्णत्या विसर्जन कर देना, यह ईश्वर प्रणिधान का रहस्य है।

यह संपूर्ण समर्पण यद्यपि यहाँ द्वितीय योगङ्ग के एक उप अंग के रूप में वर्णित है,किंतु इसे संपूर्ण योग भी कहा जाए तो अनुचित न होगा। स्वयं भगवान पतंजलि ने भी ईश्वर प्रणिधान को समाधि सिद्धि का हेतु माना है।[16] अर्थात ईश्वर प्रणिधान की साधना में, अहंता ममता के संपूर्णत्या त्याग पूर्वक समस्त कर्मों को प्रभु को पूर्णतया समर्पण में सिद्धि प्राप्त हो जाने पर एक प्रकार से साधना की पूर्णता हो जाती है। कैवल्य का भी लाभ साधक हो जाता है।[17] वैष्णव धर्म में तो एकमात्र प्रपत्ति, को संपूर्णता समर्पण को ही मुक्ति का साधन माना है। उस परंपरा में भगवान श्री कृष्ण के साक्षात वचन को ही इस प्रसंग में प्रमाण के रूप में स्वीकार किया जाता है।[18] इसे निर्विवाद रूप से स्वीकार किया जाना चाहिए कि यह प्रपत्ति जिसे योग शास्त्र में ईश्वर प्रणिधान कहा गया है साधना की अत्यंत समुन्नत कोटी है। इसकी सिद्धि हो जाने पर क्योंकि अहंता ममता नहीं रह जाती, अत: कर्म का बंधन भी नहीं रह सकता। अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश इन चारों की निवर्त्ति इसके द्वारा सहज भाव से हो जाती है और इन चारों की निवृत्ति हो जाने पर अविद्या भी छिन्न हो जाती है ,फलत: योगी साधना की सर्वोच्च कोटि पर अनायास पहुंच जाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. योगसूत्र, 2/1
2. वशिष्ठसंहिता, 1/54
3. श्रीमद्भगवद्गीता, 17/14
4. श्रीमद्भगवद्गीता, 17/15
5. श्रीमद्भगवद्गीता, 17/16
6. श्रीमद्भगवद्गीता, 17/19
7. श्रीमद्भगवद्गीता, 17/18
8. श्रीमद्भगवद्गीता, 17/17
9. श्रीमद्भगवद्गीता, 18/42
10. योगसूत्र, 1/27-28
11. योगसूत्र, 2/44
12. श्रीमद्भगवद्गीता , 9/27
13. कूर्मपुराण, 2/16
14. कूर्मपुराण, 2/16
15. भागवत , 11/2/36
16. योगसूत्र , 2/45
17. श्रीमद्भगवद्गीता, 9/28
18. श्रीमद्भगवद्गीता, 18/92

****

पश्चिमी निमाड़ (खरगोन जिला) में पर्यटन की संभाव्यता का केंद्र महेश्वर

डॉ. अशोक कुमार झा*

शोध सारांश – 'बाकी जगह कुछ-कुछ और मध्य प्रदेश में सब कुछ' पर्यटन के लिये कहा गया यह कथन पुर्नत: सत्य है कारण जहाँ एक और महाकाल एवं ओंकारेश्वर जैसे तीर्थ स्थल है वहीं भौगोलिक रूप से विधंयन व सतपुड़ा-श्रैणियों के मध्य असंख्य प्राकृतिक परिदृष्य जबलपुर का धुआंधार जलप्रपात, पंचमड़ी के मनोरम दृश्य राष्ट्रीय उदयान एवं अभ्यारण, लौक संस्कृति आदि ने सदैव से अपनी ओर आकर्षित किया है। इसी परिपेक्ष में भारत के मध्यप्रदेश राज्य में पश्चिमी निमाड़ खरगोन जिले में महेश्वर पर्यटन केन्द्र अपने ऐतिहासिक, भौगोलिक व धार्मिक एवं हस्तशिल्प कला के लिये विश्वभर में जाना जाता है।

इन्हीं आयामों के विकास की संभाव्यता का मूल्यांकन करने हेतु प्राथमिक स्त्रोत पर आधारित तथ्यों को प्रकाश में लाया गया है। इन तथ्यों में पर्यटन केन्द्र का आकर्षण पर्यटन केन्द्र पर पर्यटक आगमन आधारभूत सुविधायें एवं पर्यटन विकास की संभावना को दृष्टिगत किया गया है।

पर्यटन का अर्थ एवं परिभाषा – Tourism ट्यूरिज्म का संबंध Tours टूर से है जो लैटिन भाषा से लिया गया हैं। Tornos का अर्थ एक औजार से है जो पहिए की भांति गोलाकार होता है

यह एक गोलाकार पिन है का अर्थ निकलता है। इसी Tornos शब्द से यात्रा चक्र या टूर एक मुक्त यात्रा का विचार सूचित हुआ है। जो कि आधुनिक पर्यटन का मुख्य आधार है। वर्ष 1643 में इस शब्द का प्रयोग विभिन्न स्थानों की यात्रा मनोरंजन भ्रमण पर्यटन तथा विभिन्न राष्ट्रों व क्षेत्रों के स्थलो के भ्रमण अथवा यात्रा करने के लिये किया गया था।

सांस्कृतिक साहित्य में पर्यटन के लिये तीन शब्दों का प्रयोग किया गया है जिसका उद्गम मूल शब्द **'अटन'** से हुआ है जिसका तात्पर्य किसी अन्य स्थान के लिए घर से प्रस्थान करना होता है।

1. पाराटन – जिसका तात्पर्य ज्ञान तथा आनंद के लिए बाहर जाना है।

2. देशाटन – जिसका तात्पर्य मुख्य रूप से आर्थिक लाभ के लिए बाहर जाना है।

3. तीर्थाटन – जिसका तात्पर्य धार्मिक महत्व के स्थानों की यात्रा करना होता है।

ऑक्सफोर्ड शब्दकोष के अनुसार – Tourism is the Commercial organization and operation of holiday and visits to places of interest.

रैन्ड्रसोज फ्राइड ने कहा है कि– 'पर्यटन आधुनिक अर्थशास्त्र का चतुर्थ आयाम है।'

पर्यटक की परिभाषा

शब्दकोश के अनुसार – पर्यटक का दृश्यावलोकन करने वाला व्यक्ति है जो यात्रा करता है पर्यटक कहलाता है।

विश्व पर्यटन संघटन के अनुसार – पर्यटक वो है जो अपने निवास से किसी अन्य स्थान पर कम से कम 24 घंटे या एक रात रहता है और किसी लाभप्रद कार्य के उद्देश्य के अतिरिक्त किसी अन्य ध्येय से जो नीचे शीर्षको में प्रतिवादित है भ्रमण करता है।

1. अवकाश (मनोरंजन, छुट्टी, स्वास्थ्य, अध्ययन, धर्म एवं खेलकूद)
2. कारोबार, परिवार, मिशन व सभा।

अध्ययन क्षेत्र – पश्चिमी निमाड़ जिला खरगोन में महेश्वर जो कि पर्यटन परिपथ का अंग भी है जिसे पर्यटन विभाग भारत सरकार ने चिन्हिंत किया हुआ हैं।

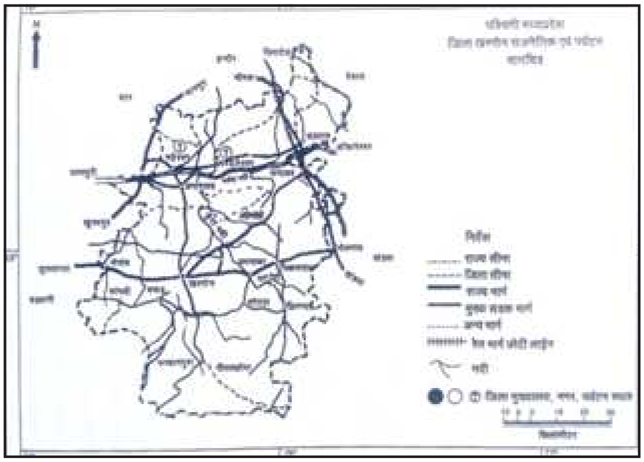

इंदौर-महेश्वर-ओंकारेश्वर-मांडू-उज्जैन यह परिपथ अवस्थित है। जिले के अवस्थिति देखे तो महेश्वर खरगोन जिले कि तहसील है। यह जिला $21^{0}22'$ तथा $22^{0}34'$ उत्तरी अक्षांस तथा $75^{0}16'$ से $76^{0}16'$ पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है जिसका क्षेत्रफल 8611 वर्ग कि.मी. है।

भौगोलिक स्वरूप – यह जिला देखे तो तीन भू-भागो में फैला हुआ है मध्य में नर्मदा नदी के सामानांतर नर्मदा घाटी का सुस्पष्ट कटिबंध है। दक्षिण तथा पशिचम सीमा पर सतपुड़ा पर्वत श्रेणी तथा उत्तर पूर्वी सीमा की विन्ध्य कगार का संकरा कटिबंध है। उत्तरी सीमा का पूर्वी भाग विन्ध्य पठार के दक्षिणी कगार द्वारा रेखांकित हैं। सीमा का निर्माण करने वाली जल विभाजक

* पूर्व अतिथि विद्वान, शासकीय महाविद्यालय, खिलचीपुर, जिला -राजगढ (म.प्र.) भारत

रेखा नर्मदा नदी की सहायक छोटी नदियों को चम्बल नदी तंत्र के जल प्रवाहों से प्रथक करती है।

संक्षिप्त इतिहास – महेश्वर के संक्षिप्त इतिहास पर प्रकाश डाले तो महेश्वर को महिसमती के नाम से जाना जाता है। मार्केण्डेय पुराण और लिंग पुराण से यह ज्ञात होता है कि निमाड़ को अवन्ति साम्राज्य में मिला दिया गया था जिसकी राजधानी उज्जयिनी थी। पश्चिमी निमाड़ पर प्रारंभिक सातवाहन नरेशों का राज्य था अमिर वंश, कलचुरी, आठवीं शताब्दी के प्रारंभ में गुर्जर परिहार राजवंश के पश्चात परमार वंश, 1296 ईर्स्वी के आसपास अलाउद्दीन खिलजी ने खान देश पर आक्रमण कर पश्चिमी निमाड़ को मुगल शासन के आधिन किया स्त्रहवीं शताब्दी के अंतिम वर्षो में मराठों ने और 1767 ने माता अहिल्या बाई ने राज्य का बागडोर सम्भाला उन्होंने होलकर के शासन को तीस वर्षो तक अद्धितीय योग्यता और बुद्धिमानी के साथ शासन किया इस दौरान महेश्वर को नागरिक राजधानी बनाई। अंतत: यशवंतराव होलकर प्रथम ने ब्रिटिश शासन से संधि करनी पड़ी।

महेश्वर में पर्यटन स्थल – महेश्वर खरगोन जिले की तहसील है जो इंदौर सम्भाग के अंतर्गत आता है। महेश्वर कि भौगोलिक स्थित 21^{0} उत्तरी अक्षांश से 23^{0} उत्तरी अक्षांश व $74^{0}30'$ पूर्वी देशांतर से 81^{0} पूर्व देशांतर के मध्य नर्मदा नदी के उत्तर तट पर बसा हुआ सुंदर नगर है। यह स्थान माता अहिल्या कि कर्म भूमि के रूप में भी देखा जाता है इनके शासन काल में राजनैतिक तथा वाणिज्यिक दोनो प्रकार की गतिविधियों का संचालन यहाँ से किया गया।

महेश्वर में दर्शनिय स्थलों में भवानी माता का मंदिर महेश्वर किला, राजबाड़ा, अहिल्येश्वर शिवालय विठोजी की छत्री राजराजेश्वर शिवालय, दहन स्थल व अन्य छत्रियाँ।

महेश्वर न केवल धार्मिक अथवा ऐतिहासिक दर्शनीय स्थल के साथ महेश्वर एक प्राकृतिक पर्यटन स्थल भी है। यहां नर्मदा नदी का प्रवाह पूर्व से पश्चिम की और है। महेश्वर किले के नीचे नर्मदा कल–कल करता जल मन को मोह लेता है। प्रात: सुर्य उदय और संध्या में सूर्यास्त का नजारा नर्मदा तट पर बैठकर देखना अपने आप में आलौकिक दृश्य प्रस्तुत करता है। यहाँ पर्यटन नौकायान का आनंद उठाते है। यहाँ पर्यटक विकास निगम द्धारा एक घाट को बनवाया गया है जो बहुत सुंदर हैं। नदी के दक्षिण भाग में किसी प्रकार का घाट का निर्माण वहीं हुआ है। यहाँ रेत के तटबंध है और पर्यटन नाव के द्धारा उस पार जाकर रेत पर बैठकर महेश्वर किले के घाट कि सुंदरता को निहारते नही थकते। घाट से 150 मीटर दूर सहस्त्र धारा दिखाई देता हैं।

महेश्वर के हथकरघा उद्योग – महेश्वर हथकरघा उद्योग के किले न केवल देश बल्कि विदेशों में भी जाना जाता है यहां पर हाथ से बना हुआ सुंदर महेश्वरी साड़ियों के कारखाने है। महेश्वर किले में भी एक कारखाना लगा हुआ हैं। देवी अहिल्याबाई के शासनकाल में स्थापित इस कारखाने में हेण्डलूम की कलात्मक साड़ियाँ बनाई जाती है। महेश्वरी साड़ियों की यह विशेषता है कि यह प्राय: सूती की होती है। और अधिकांश प्राकृतिक रंगों के प्रयोग से बनाई जाती है। साड़ी के पललू और बॉर्डर बहुत आकर्षक डिजाईन में होते हैं। जिस कारण ये अधिक महंगी भी होती है। परंतु उच्च गुणवत्ता के कारण इसकी मांग हमेशा से बनी रहती है। यहां पर्यटकों की सुविधा के लिये कारखाना प्रबंधन ने एक दुकान किले में स्थित कारखानो में भी खोली है जहां से पर्यटक बिना किसी मोलभाव और गुणवत्ता की ठगी से बचते हुए साड़ी एवं अन्य वस्त्र खरीद सकते है। साथ ही इसे अपने सामने बनते हुए भी देख सकते है।

पर्यटन केन्द्र महेश्वर में पर्यटकों का आगमन –ऐतिहासिक, धार्मिक और प्रकृतिक पर्यटन केन्द्र सदैव से पर्यटनो को अपनी और आकर्षित करता रहा है। पिछले कुछ दशक से यहां का सौंदर्य फिलमी दुनिया से भी अछुता नहीं रहा यहां कई सिनेमा कि सुटिंग हो चुकी है। तालिका क्रमांक 1 से यहाँ आने वाले घरेलु एवं विदेशी पर्यटको की आगमन प्रवृत्ति को दर्शाया गया है।

तालिका क्र. 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1 में दिए आँकड़ों के अनुसार पर्यटकों का सर्वाधिक आगमन वर्ष 1995–1996 में हुआ जब 166227 पर्यटन महेश्वर भ्रमण पर आये यह संख्या वर्ष 1994–1995 की तुलना में 144 प्रतिशत की वृद्धि के साथ दर्ज की गई जो उपलब्ध आँकड़ों में सर्वाधिक रही। यह वृद्धि स्थिर नहीं रही और आगामी वर्षो में पर्यटकों के आगमन में हासेमी प्रवृत्ति दिखाई दी। यहां घरेलू–पर्यटक धार्मिक एवं प्राकृतिक सौन्दर्य देखने हेतु आते हैं जबकि विदेशी पर्यटक अध्ययन, शोध कि रूचि से महेश्वर आते है। आगे के वर्षो में पर्यटक आगमन में बढ़ोतरी हुई और 2000 में पर्यटन आगमन 85685 पर्यटन पहुंचे। इसके पश्चात पुन: पर्यटक आगमन से प्रकृति को दिखाई दी जो अध्ययन वर्षो में पाई गई।

अध्ययन क्षेत्र में पर्यटन से जुड़ी समस्याएँ – अध्ययन क्षेत्र में पर्यटन से जुड़े समस्या को देखे तो यह सड़क मार्ग से तो अवश्य जिला एवं संभाग मुख्यालय से जुड़ा है परंतु आवागमन में सार्वजनिक साधन का आभाव देखा गया है। ठहरने हेतु उच्च स्तर के होटलो का आभाव है खान–पान कि व्यवस्था प्राय: उच्च स्तर कि नहीं है। सुरक्षा व्यवस्था आदि का आभाव देखा गया है।

निष्कर्ष एवं सुझाव – महेश्वर पर्यटन कि अनेक आयामो को लिये हुऐ है। जिनमें विकास कि अपार संभावनाएं हे। केवल मात्र प्रबंधकीय दृढ़ता कि आवश्यकता है। यहां जल क्रिड़ा से जुड़े कई खेलो को प्रोत्साहन दिया जा सकता है। जिससे आकर्षण और बड़ेगा साथ हि स्थानीय शिल्प कला को प्रोतसाहित कर स्थानीय संस्कृति को उजागर किया जा सकता है जिससे महेश्वर का पर्यटन विकास संभव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. A.A. Abbasi : Geographical Basis of Tourism Pangea Publication, Indore 1997
2. अमेटा पंकज : मालवा के परमार शासको की राजस्व व्यवस्था, ऐकेडमी कोर, इंडियन व्यूमोसे मेस्टिम एंड सिग्नमोग्राफी, इंदौर, 2001
3. गुप्ता कमल : इंदौर, ओंकारेश्वर महेश्वर, मांडू दर्शन, प्राची पब्लिकेशन, इंदौर
4. गुप्ता पापियादास : पर्यटन एक अध्ययन, हिन्दी ग्रंथ आकदमी, 2004
5. कपूर विमल कुमार :पर्यटन भूगोल, कैलाश पुस्तक सदन, 1997
6. मुंशी अशोक कुमार : माण्डू दर्शिका, भैरव प्रकाशन, धार, 2001
7. रावत ताज : पर्यटन विकास के विविध आयाम्, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
8. श्रीवास्तव प्रेमनारायण: मध्यप्रदेश जिला गनेटियर पश्चिम निमाड़ खरगोन एवं बड़वानी, प्रथम संस्करण 1970, पूरम 1994
9. शुकल अजीत कुमार :उत्तर प्रदेश में पर्यटन उद्योग तिवारी पब्लिकेशन शाहदरा दिल्ली, 1991
10. तिवारी विनय कुमार :दर्शनीय मध्य प्रदेश, सलिल पब्लिसर्स भोपाल
11. वर्मा राजेन्द्र : मध्यप्रदेश जिला गजेटियर जिला धार प्रथम संस्करण, 1994
12. समाचार पत्र : दैनिक भास्कर, नईदुनियाँ

तालिका क्र. 1 : पर्यटन केन्द्र महेश्वर में घरेलू एवं विदेशी पर्यटक आगमन की प्रवृत्ति 1994-2003

वर्ष	घरेलू पर्यटक संख्या	वृद्धि प्रतिशत	विदेशी पर्यटक	वृद्धि प्रतिशत	कुल योग	प्रतिशत
1994-95	68,000	-	125	-	68125	-
1995-96	165885	143.90	342	173.6	166227	144.0
1996-97	59300	-64.2	395	15.4	59695	-64.0
1997-98	43000	-27.4	610	54.4	43610	-26.9
1998-99	56675	31.8	1040	70.4	57715	32.3
1999-2000	83520	47.3	2165	108.1	85685	48.4
2000-2001	38190	-54.2	1063	-50.9	39253	-54.1
2001-2002	52125	36.4	685	-35.5	52810	34.5
2002-2003	39475	-24.2	198	-71.0	39673	-24.8

स्त्रोत: मध्यप्रदेश पर्यटन विकास निगम, भोपाल

****

Study on Physico- Chemical Analysis of the River Ganga Water from up and down stream at Kanpur

Yajuvendra Singh* Anand Sharma**

Abstract - Present study an extensive investigation of Physico-chemical parameters of water samples of Ganga River at Kanpur. Water samples under investigations were collected from sampling stations up and down stream of river Ganga at Kanpur. In present study observed the different Physico-chemical parameters like pH, temperature, turbidity , total hardness(TH) , Iron , Chloride , total dissolved solids(TDS)),total suspended solids (TSS), dissolved oxygen (DO), biological oxygen demand(BOD), chemical oxygen demand(COD), Ca^{2+}, Mg^{+2} , $SO4^{-2}$, NO_3^-, total alkalinity (TA) in samples. The Physico-chemical parameters in samples were compared with standard values recommended by world health organization (WHO).

Key Words - Physico-chemical parameters.

Introduction - Rapidly increasing population, rising standards of living and exponential growth of industrialization and urbanization have exposed the water resources, in general, and rivers, in particular, to various forms of degradation. Many Indian rivers,including the Ganga in several stretches,particularly during lean flows, have become unfit even for bathing. Realizing that the rivers of the country were in a serious state of degradation, a beginning towards their restoration was made with the launching of the Ganga Action Plan (GAP) in 1985.

The Ganga basin lies between East longitudes 73°30 and 89° 0 and North latitudes of 22°30 and 31°30, covering an area of 1,086,000 sq km, extending over India, Nepal and Bangladesh. It has a catchment area of 8,61,404 sq. km in India, constituting 26% of the country's land mass and supporting about 43% of population (448.3 million as per 2001 census).

In Uttar Pradesh, the district Kanpur lies between 80°21'' East longitudes and 26°28'' North Longitude. Kanpur is the highly populated city along the river Ganga in UP. The sewage generation in Kanpur is approximately 400 million liters per day (MLD) and this sewage is discharged through hundred of drains that and into the river. The industrial city Kanpur has many industries and factories situated within the city area. Out of these industries and factories, many of them are releasing contaminants and pollutants directly into the Ganga River. However, one of the major sources of pollution of Ganga River in Kanpur is leather tanneries. Kanpur is also known as the leather city of the India due to the large number of leather tanneries and related industries situated there.

The city requires immediate measures to check pollution and protect health of residents of the city. In Novermber, 2018, when the state government declared that it has completely stopped the Sisamau drain in Kanpur from discharging sewage into the Ganga, this decision was very much welcomed by the citizens and environmentalists alike. The Sisamau drain was the century-old drain, known as Asia's biggest in most of the government documents. This drain was used to discharge 140 million litres, enough to fill 28,000 water tankers, into the river on daily basis. In 2016, the central government launched Namami Gange Programme, under this programme, the Sisamau drain was the biggest drain-tapping initiative undertaken at a cost of more than Rs 60 crore. In this process, the government diverted the sewage with the help of pipelines to two sewage treatments plants (STPs) on the outer area of the city — 80 million litres / day (MLD) to Bhingawan STP and 60 MLD / day to Jajmau STP. The treated effluents from Bhingawan are discharged into the Pandu river, which is a tributary of the Ganga, while the effluents from Jajmau are dumped into the fields in adjacent villages. However, when analysis was done on the result of this process, it was found that the discharge from the Bhingawan STP does not meet the quality parameters. The effluent from the Jajmau STP plant is also of poor quality. Further, in February 2019, a report by the state government's Ganga Pollution Control Unit (GPCU) at Kanpur it was revealed that the BOD and TSS in the discharge do not meet the standard norms.

MATERIALS AND METHODS

For present study sampling sites (**Bithoor, Ganga Barrag, ParamathGhat, SarsiayaGhat, Rani Ghat, MiaskarGhat, Jajmau, DhoriGhat**) have been selected along the complete stretch (up and downstream) of river Ganga in the Kanpur. The sampling from River Ganga will be carried two years. The sample will be collected from surface and cen-

* Research Scholar (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalya, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalya, Bhopal (M.P.) INDIA

ter layers.

The water sample will be collected from the bottom and center layer with the help of runner's water sampler. Water sample collected from all sampling sites will be analyzed for following Physico-chemical parameters as per APHA, AWWA & WPCF (1985), NEERI (1986).

Physical Parameters

- **Temperature** : The temperature of water samples recorded by a thermometer.
- **pH** : pH will be determined by a digital pH meter.

Chemical parameters

- **Dissolved Oxygen** : It will be determined immediately as per Winkler's method with Azide modification.
- **BOD** : Will be determined after incubating the collected sample at 20^0 for 5 days.
- **COD** : Will be determined by potassium dichromate open reflux condenser method .
- **Total Hardness** : Will be measured titrimetrically
- **Alkalinity** : Will be measured titrimetrically

Heavy Metals Analysis - Will be measured by Atomic Absorption Spectrophotometer (AAS)

Anions

- **Chloride** : Will be measured titrimetrically
- **Nitrate** : Will be measured spectrophotometrically
- **Phosphate** : Will be measured spectrophotometrically

The data obtained from analysis will be analyzed using various statistical techniques and will be presented in suitable tabular forms. To find out the suitability of water for the human consumption and other domestic purposes water analysis and assessment is very necessary. In the process of water analysis and assessment, the specialized sampling and sample handling procedures are required. The site of sampling is selected randomly by considering its source, location and the population.

Results and Discussion - The ranges of values of different parameters during the period of our study are presented in table-1. A study of the table shows that there is considerable deterioration of the river Ganga water quality in the downstream region mainly due to the industrial units and municipal effluents entering into the river Ganga water. Variation of all the parameters which were taken into the consideration in our study, they are discussed as follows:

Table -1 : Physico-chemical characteristics of water of River Ganga at Kanpur

PARAMETERS	Range U/S	Range D/S
Temperature	20.0 – 27.5	21.0 – 28.0
pH	7.1-8.2	7.4-10.8
Turbidity	09-170	10-220
TDS	82-188	120-302
TSS	10-1560	25-1650
Hardness	36-104	47-127
Calcium	17 – 59	21 – 62
Magnesium	1.9 – 16	5.5 – 16.2
EC	115-269	239-511
DO	5.8-8.6	3.7-8.0
COD	7.4-29	12-30
BOD	2.0-7.2	7.5-17.5
Chloride	16-63	20-69
Sulphate	11-19	43-156
Total Alkalinity	40-104	50-114
Iron	0.8-2.7	2.3-4.2
NO_3-N	0.19-0.9	6.2-16.5

Temperature: The average range of water temperature recorded is 20 degree centigrade to 27.5 degree centigrade in the upstream and 21.0 to 28.0 degree centigrade in the downstream reason. The minimum values at both the sides were observed in the month of December and the maximum value was recorded between June to August.

pH: The variation of pH in the upstream water was from 7.2 to 8.1 and in the downstream water from 7.3 to 10.7. The high pH value of water in the downstream reason and its large variation was related to the Industrial effluents discharged from industrial units which varied from time to time depending upon the production schedule of the industrial units.

Turbidity: Generally, it was observed that the upstream water was more transparent than the downstream water. In upstream water turbidity was ranging from 8.0 to 175 NTU whereas in downstream from 10.0 to 210 NTU.

Total Dissolved Solids and Total Suspended Solids : During the period of our study, TDS value varies from 80 to 190 mg per litre in the upstream samples and 110 to 300 milligram per litre in the downstream samples which indicates that the industrial effluent water contains much dissolved solids. Similarly total suspended solids at the upstream locations were fairly low except in the rainy season i.e. July, August and September, when they are added to the river through the runoff water and where it varies between 910 milligram per litre to 1500 milligram per litre. However, in the downstream samples it was slightly greater and it varied from 20 milligram per litre to 1600 milligram per litre.

Total Hardness: We know that hardness is the property of water which prevents the formation of leather soap and also increases the boiling point of water. The maximum value of total hardness was found to be 128 milligram per litre in downstream region. Hardness was always higher in the summer period when the flow of river was less and the rate of evaporation was high.

Calcium and Magnesium: The concentration of calcium and magnesium ranges from 16.0 to 58.0 milligram per litre and 1.8 to 17.0 milligram per litre in the upstream samples and the same parameters vary from 20.0 to 61.0 milligram per litre and 6.5 to 15.2 milligram per litre in the downstream samples respectively.

Electrical Conductivity: It was raised from 114.0 to 268.0 ì mho/cm in the upstream water and from 238.0 to 512.0 ì mho/cm in the downstream water. The higher values in the downstream reason are obviously cost by the industrial discharge from the industrial units.

Dissolved Oxygen: The value of DO ranges from 5.4 to 8.4 milligram per litre and 3.6 to 7.9 mg/l in the upstream

and downstream samples respectively. It has been found that high organic content leads to oxygen depletion. Relatively higher values of DO are only due to increased solubility of oxygen.

Chemical Oxygen Demand: Chemical Oxygen Demand ranges between 7.2 to 28.0 milligram per litre and was observed at both the sides and this is due to the mixing of runoff water positively correlated with chloride content, hardness but no such correlation was observed in downstream location.

Biochemical Oxygen Demand: The range of BOD values in the upstream and downstream water were 2.1 to 7.1 milligram per litre and 7.4 to 17.6 mg/l respectively.

Chloride: Due to the discharge of domestic sewage and industrial effluents to water bodies, the concentration of Chloride increases.It showed marked variation during the study period with a range of 15 to 64 mg/l and 21 to 68 mg/l respectively in the upstream and downstream water. Higher chloride concentration in the downstream is due to the industrial effluent and domestic sewage which contains a good amount of chloride.

Sulphate: It ranges from 42.0 to 155.0 milligram per litre. On the other hand, in case of upstream samples sulphate ranges from 10.0 to 18.0 milligram per litre.

Total alkalinity: The alkalinity values of all the samples collected from the study area were found within the permissible limit. During the study period, it varied from 39.0 to 102 milligram per litre in the upstream and 48.0 to 112.0 in the downstream samples.

Iron: Iron was exceeded the allowable limit throughout the year in both upstream and downstream water samples and it is obvious because iron containing Industrial effluents falls into the river Ganga.

Nitrate-Nitrogen (NO_3-N): The Nitrate – Nitrogen ranges from 0.18 to 0.9 mg/l in the upstream samples and 6.1 to 15.5 mg/l in the downstream water samples. It registered a sharp increase at downstream samples and this is due to the discharge of effluent containing nitrate from industrial unit.

Conclusion - The study area belongs to Kanpur district which is the most important industrial city in the state of Uttar Pradesh. Many industrial units of small and large scale are situated there.It was observed that the variation of the Physico-chemical characteristic of water in the upstream path was dependent upon metrological factors life volume of water flow in the river, temperature and in the downstream part, the dependence was mainly on the quality and quantity of the industrial fuel and discharge into the water.The water DO, pH and temperature shows diurnal variation in upstream and downstream water of river Ganga. Highly significant and positive correlation was found between Turbidity – TSS, TDS – EC, Total Hardness – Calcium, BOD, Total Hardness – Magnesium. WQI found to be more than 100 in all the samples collected from both the sides throughout the period of study of the sampling area which indicates that the water quality of River Ganga is under stress of severe pollution.

References :-

1. B. Pandey,H. Chaudhary, International Research Journal of Engineering and Technology, 2019,6(5), 6806-6809.
2. R.Anupama, International Journal of Advanced Chemistry Research, 2019, 2(1), 01-04.
3. A.Iqbal, C.Sadhana, journal of Emerging tech. and innovative Research 2019, 6(6), 391-398.
4. B. Deoli Kanchan, A. Aaron, Ind J Global Ecol Environ. 2017, 5(3), 133-143.
5. A. Shanmugasundharam et al.,Appl Water Sci. 2015.
6. Bartarya SK, Deoli Kanchan B. Global J Eng Design Technol. 2012, 1(1), 11-22.
7. V. Rishi, A.K. Awasthi, Indian Journal of Plant Sciences, 2015,4(1),78-86.
8. J. Futter et al.,Environmental science processes and impacts, 2015.
9. S. Hasan, Internatioanl Journal of Advance Research in ScienceEngineering and Technology,2015, 2(1).
10. R. Pandey et al., Advances in applied science research, 2014, 5(4),181-186.
11. D. Raghuvanshi et al. Bulletin of Environment, Pharmaclogyand Life science, 2014.
12. P. Anjum et al., International Journal of computational Engineering Research, 2013, 3(4), 134-137.
13. M.K. Bhatnagar et al., Journal of Environmental Research and Development, 2013, 8(1), 56-59.
14. K. Naseema et al., Journal of Applied Chemistry,2013, 5(3), 80-90.

****

Synthesis, Characterization and Antimicrobial Properties of Some Bivalent Metal Complexes with 2-hydroxy-1-naphthaldehyde derived Schiff Base

Rajiv Kumar Singh* Dr. Anand Sharma**

Abstract - The N- and O- donor Schiff base derived from 2-hydroxy-1-naphthaldehyde with thiourea and its bivalent metal complexes of Co(II), Ni(II) and Zn(II) have been synthesized. Schiff base ligand and its metal complexes have been characterized by microanalysis, molecular weight detrminations, molar conductance measurements, UV-vis., IR and ^{1}H-NMR spectral studies. The IR spectral data suggest the involvement of naphtholic oxygen after deprotonation and azomethine nitrogen in coordination to the central metal ion. The free ligand and its complexes have also been assessed in-vitro against a variety of fungal and bacterial strains.

Keywords: Schiff base, 2-hydroxy-1-naphthaldehyde, Bivalent metal complexes, Spectral analysis, Anti-microbial studies.

Introduction - Schiff base is a premium class of ligand in modern coordination chemistry with a variety of uses such as they have been equipped for synthesizing extremely stable complexes with transition metal.[1] Moreover the field of Schiff bases is rapidly evolving in metal coordination chemistry in light of extensive variety of potential utilization of their biological, analytical and catalytical action.[2-6] Metal ions play a key role in the actions of drugs. They are involved in specific interactions with antibiotics, proteins, membrane components, nucleic acids, and other biomolecules. Many drugs possess modified pharmacological properties in the form of the metal complexes. Transition metal ions possess an important role in the design of metal-based drugs and such complexes are more effective against infectious diseases compared to the uncomplexed drugs.

During the last few decades, metal-nitrogen chemistry on account of a number of important factors has become a centre of attraction for the chemists and, therefore, an astonishing number of complexes having metal-nitrogen bonds have been synthesized.

In present a broad literature study reveals that no work has been done for the synthesis of Schiff base metal derivative with the condensation of 2- hydroxyl-1-naphthaldehyde and thiourea, hence it engrossed our attention regarding synthesis, structure elucidation and biological action of the compounds.

Experimental: Cobalt chloride hexahydrate, nickel chloride hexahydrate, zinc chloride and thiourea were purchased from E.Merck and used without further purification. 2-hydroxy-1-naphthaldehyde was obtained from Hi-media and used as received. All other chemicals and solvents used were of AR grade.

Synthesis of Schiff base ligand (HL): A mixture of of 2-hydroxy-1-naphthaldehyde (0.75 mol,15 ml) and thiourea (0.75 mol,15 ml) in ethanol was heated under refluxed for 2.5 hours at 65-70^{o}C. The solution was cooled at room temperature to obtained the pale yellow crystals of the Schiff base. These were washed with ethanol, dry ether and subsequently dried over anhydrous $CaCl_2$.

Synthesis of metal complexes: The complexes were synthesized by refluxing the reaction mixture of metal salts (ethanol and double distilled water) and respective ligand in 1:2 molar ratios in benzene or ethanol for 2 to 3 hours.On cooling, the resulting coloured complex precipitated out, which was filtered by suction, washed several times with ethanol and finally by ether and dried over anhydrous $CaCl_2$ in the desiccator. The purity of the compounds was checked by TLC using silica gel G.

Physical Measurements and Analytical data: Microanalysis of carbon, hydrogen and nitrogen of the compounds were carried out on Carlo Erba 1108 elemental analyzer. Metal contents were analyzed by AAS technique. Chloride was determined by standard procedure reported in the literature.[7] IR spectra were recorded on Perkin-Elmer infrared spectrophotometer in the range 4000-400 cm^{-1}using KBr pallates. Electronic spectra of the complexes were recorded on a Helious-alpha spectrophotometer. The ^{1}H-NMR spectra of the compounds were recorded on a Bruker Avance 300 MHz in $CDCl_3$ or DMSO-d_6 using TMS as an internal standard. Molar conductance was measured at room temperature in DMSO using a dip type cell electrode. The molecular weights were determined by Rast camphor

* Research Scholar (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalya, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalya, Bhopal (M.P.) INDIA

method.

Antimicrobial studies: The antibacterial activity of compounds were evaluated by disc diffusion method against Escherichia coli and Staphylococcus aureus. Streptomycin was used as reference standard. The antifungal activity of the compounds were screened against two pathogenic fungi, Candida albicans and Aspergillus niger by the agar plate technique using Fluconazole as standard.[8]

Results and discussion: The observed molar conductance (8.9 to 18.6 ohm^{-1} cm^2 mol^{-1}) of all the complexes in 10^{-3} M dimethyl sulfoxide solutions indicate they are non-electrolytes and their monomeric nature has been confirmed my molecular weight determinations.[9] The resulting complexes are non-hygroscopic, airstable and coloured solids. The analytical results of the ligand and its metal complexes are enlisted in Table-1.

Table-1 (see in last page)

Infrared spectra: In order to study the binding mode of Schiff base to the central metal ion in complexes, the IR spectra of the free ligand is compared with the spectra of corrosponding complexes. The important absorption frequencies of the ligand with its complexes and their assignments are enlisted in Table-2.

Table-2 (see in last page)

The IR spectra of the metal complexes show significant changes compared to the Schiff base ligand. A medium intensity band at 1625 cm^{-1} due to the √(C=N) mode of azomethine group. This band shifts to lower wave numbersby 10-15 cm^{-1} in all the complexes, suggesting the coordination of the azomethine nitrogen to the metal ion. This is further substained by the presence of a new band at 493-467 cm^{-1} assignable to √(M-N).[10] The characteristic naphtholic √(O-H) mode due to the presence of hydroxyl group at ortho position in the free ligand was observed at 3430 cm^{-1}. A band at 1298 cm^{-1} due to √(C-O) phenolic in the ligand spectrum has been shifted to the higher wave number in the spectra of the complexes. Such shift of √(C-O) band most probably supports the formation of M-O bond. The complexes also showed medium intensity bands at appropriate positions in the far infrared region 578-586 cm^1 and 493-467 cm^{-1} due to √(M-O) and √(M-N) modes respectively.[11-13] The presence of coordinated water molecules in Co(II) and Ni(II) complexes is revealed by apperance of a broad band around 3500-3600 cm^{-1} due to √(O-H) mode.[14] The overall IR data suggests the monofunctional bidentate nature of the ligand in the complexes.

^{1}H NMR Spectra: In the ^{1}H NMR spectrum of the Schiff base ligand, a singlet was observed at 9.50 ppm which can be assigned for azomethine proton. This peak has shifted to the downfield region in the complexes indicating that the coordination of azomethine (›C=N-) to the metal ion. This ligand also show a signal for the naphtholic (-OH) proton at 13.72 ppm. This signal shifted downfield in the spectra of complexes indicating the coordination of oxygen of the –OH group with metal ion. The multiplets between 6.80-8.89 ppm are assigned to the naphthylidene aromatic protons.[15]

Electronic spectra: The electronic spectra of the complexes were measured in DMSO. The Co (II) complex exhibits three characteristic bands at 11094, 18680 and 23650 cm^{-1} assignable to the $^4T_1g(F) \rightarrow {}^4T_2g(F)$, $^4T_1g(F) \rightarrow {}^4T_1g(P)$ and $^4T_1g(F) \rightarrow {}^4A_{2g}(F)$ electronic transitions and thus the octahedral geometry can be attributed to it. The electronic spectra of Ni (II) complex display three absorption bands at 11550, 17500 and 24600 cm^{-1}. These have been assigned respectively to the transition $^3A_2g(F) \rightarrow {}^3T_2g(F)$, $^3A_2g(F) \rightarrow {}^3T_1g(F)$ and $^3A_2g(P) \rightarrow {}^3T_{1g}(P)$ also corresponding to the octahedral geometry.[16-18] The Zn (II) complex do not exhibits any characteristic d-d transitions and may have tetrahedral geometry.

Thus, on the basis of all above studies the expected structures of the Schiff base and its complexes may be represented as shown in Fig.-1

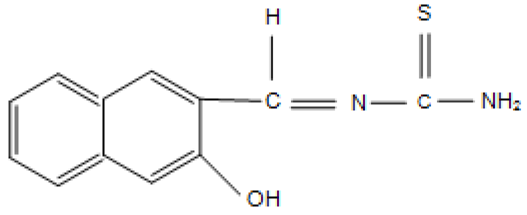

Schiff Base (HL)

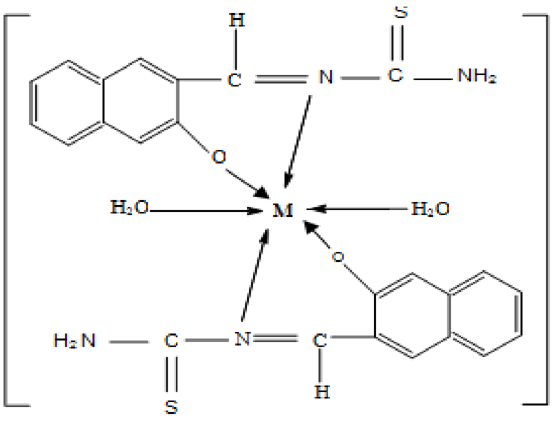

M= Co(II)and Ni (II)

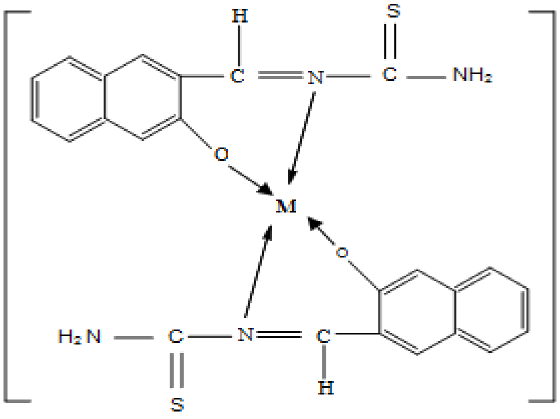

M= Zn (II)

Fig.- 1: Prososed structure of the Schiff base ligand and its metal complexes

Antimicrobial activity: The free ligand and its respective metal complexes were tested for their *in-vitro* growth inhibition against standard strains including two bacteria namely, Escherichia coli,Staphylococcus aureus and two fungi namely, Candida albicans, Aspergillus niger. The results were compared with those of the standard drug Streptomycin for bacteria and Fluconazole for fungi. The results are summarized in Table-2.

Table – 3 (see in next page)

Conclusion - A series of Co(II), Ni(II) and Zn(II) complexes were synthesized with neutral bidentate O, N- donor Schiff base ligand (LH) derived from 2-hydroxy-1-naphthaldehyde with thiourea and characterized by various physical spectroscopic techniques. The results reveles that Co(II) and Ni(II) complexes have an octhedral geometry and Zn(II) complex has a tetrahedral geometry through the involvement of naphtho oxygen atom and azomethine nitrogen atom. The antimicrobial data of these compounds reveals that the complexes show remarkable activity than the parent ligand.

Acknowledgment - The authors are grateful to the Principal, Govt. M. V. M., Bhopal (M.P.) for providing the laboratory facilities the work needed to be accomplished and SAIF, CDRI, Lucknow for spectral analysis. We are also thankful to BIMR, Gwalior (M.P) for help in testing antimicrobial activity**.**

References:-

1. G. Kumar, Indian. J. Chem., 2019, 1085.
2. P. C. Giorgio, Chem. Soc. Rev., 2004, 33, 410.
3. H. A. El-Borae, J. Therm. Anal. Calor., 2005, 81, 339.
4. Z. M. Zaki, S. Haggag and A. A. Sayed, Spectr. Lett., 1983, 31, 757.
5. M. Kalita, P. Gogoi, P Braman, B. Sarma and R. D. Kalita, polyhedron, 2014, 74, 93.
6. G. Achar, C. R. Shahini and S. A. Patil J. Organometal Chem., 2017, 883, 28.
7. A. I. Vogel, A Text Book of Quantitative Inorganic Analysis, ELBS, London, 1978.
8. A. L. Barry, The antimicrobial susceptibility tests,Principle and Practices, 1976.
9. K. Poonia, M. Swami, A. Chaudhary, R. V. Singh, *Indian J. Chem*., 2008, 47, 996.
10. H. Keypour, A. Shooshtari, M. Rezaeivala, M. Bayat, H. A. Rudbari, Inorg. Chim. Acta, 2016, 440, 139.
11. Y. Prashanthi, Shiva Raj,J. Sci. Res.,2010, 2, 114.
12. V. M. Naik, M. I. Sambrani, N. B. Mallur, *Indian J. Chem.*, 2008, 47, 1793.
13. K. Nakamoto, Infrared Spectra of Inorganic and Coordination Compounds, Wiley Interscience, New York, 1970, p- 424.
14. Y. Prashanti, S. Raj, *J. Sci. Res.*, 2010, 2, 114.
15. R. M. Silverstein, G. C. Bassler, C. T. Morril, Wiley John and Sons, 1981, 4, 241.
16. S. Chandra, A. Kumar, *J. Indian Chem. Soc.*, 2006, 83, 993.
17. C. J. Ballhausin, Introduction to ligand field theory, New York, Mc Graw Hill, 1967.
18. N. S. Al-Radadi, E. M. Zayed, G. G. Mohamed and H. A. Salam, Jour. of Chem., 2020, 02, 12.

Table-1 Analytical data of Schiff base ligand and its metal complexes

Compound	Color	M.P.(^{0}C)	Yield (%)	Molecular weight Found / (Calcd.)	Found / (Calcd.)%			
					C	H	N	M
LH ($C_{12}H_{10}N_2OS$)	Pale Yellow	80	87	229 (230)	62.067 (62.60)	4.31 (4.34)	12.067 (12.17)	–
$Co(L)_2 (H_2O)_2$	Peach	219	89	558 (552.93)	50.51 (52.09)	3.08 (3.97)	10.20 (10.12)	9.84 (10.64)
$Ni(L)_2 (H_2O)_2$	Brown	318	88	542 (552.69)	53.05) (52.10)	3.34 (3.98)	10.10 (10.13)	10.50 (10.61)
$Zn(L)_2$	Dirty Brown	225	82	512 (523.38)	55.56 (55.02)	3.34 (3.43)	10.80 (10.69)	11.89 (12.49)

Table-2 IR absorption frequencies of Schiff base ligand and its metal complexes

Compounds	√(O-H) Naphtholic	√(C=N) Azomethine	√(C-O)	√(O-H) Coordinated water	√(M-O)	√(M-N)
LH($C_{12}H_{10}N_2OS$)	3430 br	1625 s	1298 m	-	-	-
$Co(L)_2$ $(H_2O)_2$	-	1620 s	1310 m	3500 br	586 w	467 w
$Ni(L)_2$ $(H_2O)_2$	-	1618 s	1308 m	3600 br	588 w	493 w
$Zn(L)_2$	-	1610 s	1314 m	-	578 w	478 w

Table – 3 Antimicrobial data of Schiff base ligand and its metal complexes

Inhibition zones (mm)

	Gram positive	Gram negative	Fungai	
Compound	StaphylococcusAureus	Escherichiacoli	Candida albicans	Aspergillusniger
LH ($C_{12}H_{10}N_2OS$)	22	21	20	21
$Co(L)_2$ $(H_2O)_2$	24	23	24.5	25
$Ni(L)_2$ $(H_2O)_2$	25	23.5	23	25.5
$Zn(L)_2$	24.5	24	12.5	22
Straptomycin	30	28	_	_
Fluconazol	_	_	25	26

****

उत्तर प्रदेश में हरित क्रान्ति का पर्यावरण पर प्रभाव

डॉ. विकल कुमार *

प्रस्तावना – हमारा देश प्राचीन काल से ही कृषि प्रधान देश रहा है। उस समय लोगों का मुख्य व्यवसाय पशुपालन तथा स्थानान्तरणशील कृषि था, जो बढ़ती जनसंख्या के कारण बंजर भूमि को भी कृषि योग्य बनाते चले गये।

अब तेजी से बढ़ती जनसंख्या और घटती कृषि भूमि से पैदावार कम पड़ने लगी तो सिंचाई, शंकर बीज, उन्नत तकनीक तथा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग कर अधिक पैदावार लेने की होड़ शुरू हुई जो 1965–66 में आई हरित क्रान्ति का रूप ले ली।

हरित क्रान्ति से आशय खाद्य फसलों के ऐसे बीजों के विकास एवं उपयोग से है जिस कारण फसलों के उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई है। 'हरित क्रान्ति' शब्द के प्रतिपादक USA के डॉ0 विलियम गैड (William Gadd) तथा इस संकल्पना का प्रादुर्भाव सर्वप्रथम णडअ में राकफेलर एवं फोर्ड फाउन्डेशन के निदेशक डॉ0 नार्मन अर्नेस्ट बोरलॉग के प्रयासों से हुआ, जिन्हें 1970 में विश्व का शान्ति नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया, जबकि भारत के सन्दर्भ में इसका प्रयोग सन् 1966 में डॉ0 एम0 एस0 स्वामीनाथन के प्रयासों के फलस्वरूप हुआ।

भारत में हरित क्रान्ति की शुरूआत 1966–67 में माना जाता है, जो गेहूँ की बौनी प्रजातियों (सोनोरा 64 तथा लरमा रोसो) द्धारा प्राप्त हुई। 1959 ई0 में फोर्ड फाउन्डेशन के कृषि वैज्ञानिकों द्धारा भारत की कृषि में सुधार हेतु प्रस्तुत रिपोर्ट (अप्रैल 1959) के परिणामरूवरूप 1960–61 में देश के चयनित 7 प्रदेशों (आन्ध्र प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, तमिलनाडु, पंजाब, राजस्थान व उत्तर प्रदेश) के 7 जिलों (क्रमश: पश्चिमी गोदावरी, शाहाबाद, रायपुर, तंजाबूर, लुधियाना, पाली व अलीगढ़) में सघन कृषि जनपद कार्यक्रम (IADP- Intensive Agriculture District Programme) का प्रारम्भ किया गया, जो सफल रहा। इस कार्यक्रम की सफलता को देखते हुए अक्टूबर 1965 में सघन कृषि क्षेत्र कार्यक्रम (IAAP-Intensive Agriculture Area Programme) के रूप में इसे देश के 144 जिलों में फैला दिया गया। जिसके द्धारा किसानों को ऋण, अनुदान, उन्नत बीज, उर्वरक, कृषि यंत्र आदि उपलब्ध कराये गये। हरित क्रान्ति जहाँ एक ओर राष्ट्रीय विकास का मूलाधार रहा है, वहीं यह एक चुनौती के रूप में भी खड़ी है और जब तक भारतीय कृषि के स्वरूप में गत्यात्मक परिवर्तन नहीं होता तब तक भारत की सर्वांगीर्ण विकास के सपनों को साकार नहीं किया जा सकता।

उद्देश्य – प्रस्तुत लेख का उद्देश्य अध्ययन क्षेत्र में हरित क्रान्ति द्धारा पर्यावरण प्रभावों का उल्लेख करना है। अध्ययन की इसी मूलभावना को लेकर शोधपत्र प्रस्तुत किया गया है तथा पर्यावरणीय प्रभावों जैसे– मृदा ह्रास (लवणीयता एवं क्षारीयता), मृदा प्रदूषण, जल लग्नता, मृदा अपरदन, खेतों का छोटा आकार, जल प्रदूषण, भूमिगत जलस्तर में गिरावट आदि पर सूक्ष्म अध्ययन करना है।

विधि तंत्र – प्रस्तुत शोध पत्र में उत्तर प्रदेश में हरित क्रान्ति का पर्यावरण पर प्रभावों को तलाशने के लिए व्यक्तिगत सर्वेक्षण एवं प्राथमिक आँकड़ों पर आधारित तथ्यों तथा द्धितीयक आँकड़ों के साथ ही कुछ पूर्व में प्रकाशित व अप्रकाशित राजकीय व गैर राजकीय स्रोतों को आधार बनाया गया है।

अध्ययन क्षेत्र – उत्तर प्रदेश राज्य का गठन 24 जनवरी 1950 को तथा पुनर्गठन 01 नवम्बर 1956 को हुआ, इसका अक्षांशीय विस्तार 23^{0} 52' N से 30^{0} 24' N अक्षांश तथा 77^{0} 50' पूर्वी देशान्तर से 48^{0} 38' पूर्वी देशान्तर तक है। जिसका कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 2,40,928 वर्ग किमी है। जो भारत के सम्पूर्ण क्षेत्रफल का 7.33% है। उत्तर प्रदेश भारत में क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश के बाद चौथा स्थान रखता है। कुल जिलों की संख्या 75 है।

उत्तर प्रदेश की जलवायु उष्ण कटिबन्धीय मानसूनी है। राज्य में जनवरी माह का औसत तापमान 12.5^{0}C – 17.5^{0}C जबकि मई–जून में 27.5^{0}C – 32.5^{0}C के बीच रहता है। वार्षिक वर्षा 75 से 150 सेमी तक होती है, जिसका 90% भाग दक्षिणी–पश्चिमी मानसून से प्राप्त होता है, जो जून से सितम्बर तक होती है।

उत्तर प्रदेश राज्य जनसंख्या की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा राज्य है। यहाँ की कुल जनसंख्या 19,92,81,477 (2011) है जिसकी 83.5% (1375775 व्यक्ति) जनसंख्या गाँव में व 16.95% (280841 व्यक्ति) जनसंख्या नगरों में निवास करती है। राज्य की साक्षरता 72.70% (1017087 व्यक्ति) है। जिसमें पुरूष साक्षरता 80.91% (603596 पुरूष) एवं स्त्री साक्षरता 63.33% (413491 स्त्री) है।

उत्तर प्रदेश राज्य उत्तर में हिमालय तथा दक्षिण में प्रायद्धीपीय भारत के मध्य गंगा मैदान का भाग है। यह हिमालयी नदियों द्धारा जाये गए जलोढ़कों द्धारा निर्मित मैदानी भाग है। जिसका अधिकांश भाग खादर (Khadar नवीन जलोढ़ मैदान) तराई, भाभर तथा बांगर (Bangar प्राचीन जलोढ़ मैदान) के रूप में हैं। जो अपने उपजाऊपन के लिए प्रसिद्ध हैं।

उत्तर प्रदेश में हरित क्रान्ति की कृषि विशेषताएं – भारत में स्वतंत्रता के तुरन्त बाद प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही कृषि विकास को प्राथमिकता दी गई, जिसमें नहर सिंचाई के विकास प्रक्रिया के साथ–साथ रासायनिक उर्वरकों एवं मशीनीकरण पर भी बल दिया गया फिर भी कृषि क्षेत्र में तीव्र वृद्धि नहीं हो सकी क्योंकि कृषि सम्बन्धी संरचनात्मक तत्वों का सही विसरण नहीं हो सका।

*असिस्टेण्ट प्रोफेसर (भूगोल) आदर्श कन्या स्ना0 महाविद्यालय, जियापुर बरूआ जलांकी, टाण्डा, अम्बेडकरनगर (उ.प्र.) भारत

विश्व बैंक के सहयोग से सन् 1977 में राष्ट्रीय बीज कार्यक्रम देश के 9 राज्यों- पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आन्ध्र प्रदेश तथा राजस्थान में शुरू किया गया। इस प्रकार भारत में हरित क्रान्ति एक नियोजित कृषि विकास का प्रयास है।

1959 ई0 में फोर्ड फाउन्डेशन के द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के परिणामस्वरूप 1960-61 ई0 में चयनित देश के सात प्रदेशों में उत्तर प्रदेश भी शामिल था जहाँ सघन कृषि जनपद कार्यक्रम (IADP) चलाया गया जो सफल भी रहा।

उत्तर प्रदेश में हरित क्रान्ति का प्रभाव फसलों के कुल उत्पादन व उत्पादकता से लगाया जा सकता है। Statical Data Book के अध्ययन से ज्ञात है कि राज्य में खाद्यान्न फसल सर्वाधिक उत्पादकता (सन् 1996-2000 तक) राज्य के 15 जिलों (मुजफ्फरनगर, बागपत, मेरठ, गाजियाबाद, गौतमबुद्धनगर, बुलन्दशहर, अलीगढ़, हाथरस, शाहजहाँपुर, आगरा, रामपुर, पीलीभीत, फर्रूखाबाद, कन्नौज एवं औरैया) में अति उच्च है जो सिंचाई, ऋण सुविधाओं, रासायनिक उर्वरक, कृषि यंत्रों द्वारा ही सम्भव हुआ है। जबकि ललितपुर, महोबा, बांदा, चित्रकूट, सोनभद्र एवं श्रावस्ती जैसे जिलों में उत्पादकता बेहद कम है जिनपर उच्चावच, जलवायु, सिंचाई सुविधाओं में प्रतिकूल स्वभाव के कारण ही है।

कृषि को बढ़ावा देने और किसानों की आय बढ़ाने के मद्देनजर सरकार ने किसानों को नई तकनीकों को अपनाने पर जोर देती रही है। लेकिन किसानों का खेती करने का परम्परागत तौर-तरीका, वैज्ञानिक तकनीकों को न अपनाया जाना आदि रहा है जिसके कारण किसान संतुष्ट दिखाई नहीं पड़ते हैं।

हरित क्रान्ति का पर्यावरण पर प्रभाव - हरित क्रान्ति एक ओर जहाँ देश से भुखमरी मिटाने में वरदान सावित हुई वहीं दूसरी ओर तमाम पार्श्व प्रभावों के चलते आज अभिशाप साबित हो रही है। प्रदेश में ही नहीं बल्कि पूरे देश में समाज के प्रत्येक क्षेत्र में इसका प्रभाव देखने को मिला है।

हरित क्रान्ति ने देश में पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण को सर्वाधिक प्रभावित किया है। तेजी से कृषि भूमि की बढ़ती मांग ने जंगलों का सफाया कर दिया। जिसका परिणाम है कि प्रदेश में वनावरण मात्र 6.88% (16582 km^2) ही रह गया है जो कि पर्यावरण व पारिस्थितिकी की दृष्टि से एक बड़ी क्षति है।

इसी तरह कृषि क्षेत्र में भी शंकर बीजों व रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग ने जहाँ उत्पादन में वृद्धि की लेकिन पौष्टिक देशी प्रजातियाँ विलुप्त सी हो गयी है। साथ ही रासायनिक खादों-नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश से युक्त खादों के प्रयोग से मृदा में मौजूद सूक्ष्म तत्वों जैसे जिंक, मैग्नीज, कॉपर, मालिवेडनम, बोरान आदि की मात्रा को अवशोषित कर घटा देता है।

स्वास्थ्य क्षेत्र भी हरित क्रान्ति के दुष्प्रभाव से सिंचाई के लिए नहरों तथा बॉधों के निर्माण तथा धान के कृषि क्षेत्रफल में विस्तार के कारण मच्छरजनित संक्रमण बीमारियों जैसे-मलेरिया, मस्तिष्क ज्वर तथा फाइलेरिया के प्रकोपों में लगातार वृद्धि हुयी है। जिससे प्रदेश के तराई के जिले काफी प्रभावित हुए हैं। रासायनिक खाद यूरिया के अत्यधिक प्रयोग के कारण खाद्यान्नों में पोटैशियम की मात्रा कम हो जाती है। जिससे उच्च रक्तचाप के नियंत्रण के साथ हृदय को भी स्वस्थ रखता है।

हरित क्रान्ति के प्रभाव से प्रदेश में आर्थिक असंतुलन की स्थिति पैदा हुई है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जिलों जैसे-मेरठ, हाथरस, अलीगढ़, फर्रूखाबाद, कन्नौज, इटावा, एटा, औरैया, बदायूँ, मुरादाबाद, बरेली, हरदोई आदि जिले जहाँ बहुत अधिक लाभान्वित हुए हैं वहीं तराई, दक्षिणी उत्तर प्रदेश व पूर्वी उत्तर प्रदेश के जिलों में विकास कम या गति अत्यन्त धीमी है।

निष्कर्ष- हरित क्रान्ति अपने पार्श्व प्रभावों के कारण आज वरदान से अभिशाप बन चुकी है। जल प्रदूषण, भूमि ह्रास, जैव विविधता ह्रास, वन ह्रास, भूमिगत जलस्तर में गिरावट, मच्छर जनित बीमारियों का बढ़ता खतरा, सामाजिक असमानता, क्षेत्रीय असंतुलन आदि समस्यायें हरित क्रान्ति की ही देन है। अतः इस क्रान्ति से होने वाली हानियों ने इसके फायदों को दरकिनार कर दिया है। निःसंदेह आज हरित क्रान्ति पूरे प्रदेश के लिए लाल क्रान्ति बन चुकी है। अतः आज समय की माँग है कि हम सतत् कृषि को अपनायें जिसमें संसाधनों के संरक्षण के साथ पर्यावरण संरक्षण पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है। सतत् कृषि को अपनाकर हम हरित क्रान्ति के पार्श्व प्रभावों से मुक्ति पा सकते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Brown (1971) : evaluation the social impact of green revolution
2. Harrar (1971) : impact of green revolution and its achievements
3. Stanley (1972) : green revolution technology in countries of Africa and Asia
4. Byers (1972) : gains of green revolution technology in India
5. Acharya (1973) : The impact of green revolution on labour employment
6. Chopra (1984) : green revolution in India- A study of Punjab, Haryana, UP and Bihar
7. Thakur & Padmadeo (2008) : impact of green revolution technology of food production and food security in India.

****

निमाड़ अंचल के जनजातीय समाज का सांस्कृतिक एवं भाषाई अनुशीलन

डॉ. मनजीत अरोरा* प्रमिला सेनानी**

प्रस्तावना – भाषायी एवं सांस्कृतिक दृष्टि से मध्यप्रदेश 'निमाड़ अंचल' के खरगोन, खण्डवा, बड़वानी धार तथा अलिराजपुर व झाबुआ जिले इसके अन्तर्गत आते है। प्रत्येक समाज की अपनी रीति-रिवाज परम्पराएँ एवं संस्कृति होती है। जनजातीय समाज की भी अपनी संस्कृति है। मध्यप्रदेश के निमाड़ बघेलखण्ड, बुन्देलखण्ड और मालवा अंचलों की संस्कृति प्राचीन तथा समृद्ध है। माना जा सका है, कि उपर्युक्त सभी अंचलों की विभिन्न संस्कृति का विकास मुख्यत: स्थानीय स्तर पर हुआ है।

शोध क्षेत्र निमाड़ के सामान्य परिचय के प्रमुख आयामों में उसका नामकरण भौगोलिक परिदृश्य प्रशासनिक,आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थितियाँ तथा मानव संसाधन सम्मिलित है।

मध्यप्रदेश के पुनर्गठन (1 नवम्बर, 1956) के पश्चात् चार दशकों तक निमाड़ की प्रशासनिक संरचना अपरिवर्तित रही, जिसमें विगत दस वर्षो में बदलाव किया गया है।

सांस्कृतिक सीमांकन – सांस्कृतिक सीमांकन का नियंता बहुसंख्य समाज होता है, उसी के कारण और प्रभाव से किसी क्षेत्र या अंचल के खान-पान, जीवन-शैली संस्कारों और भाषा में एकरूपता होती है। इस एकरूपता को आसानी से समझा तथा अनुभव किया जा सकता है। लेकिन उसे प्रशासनिक या प्राकृतिक सीमाओं की तरह प्रदर्शित करना सम्भव नहीं होता, इस एकरूपता आधारित क्षेत्र को सांस्कृतिक क्षेत्र कहतें हैं। सांस्कृतिक क्षेत्रों की सीमाये हमेशा अस्पष्ट होती हैं। कहा जा सकता है, कि एक अंचल की संस्कृति, भाषा तथा विशेषता धीरे-धीरे अपनी पहचान खोकर दूसरी भाषायी या सांस्कृतिक इकाई में बदल जाती है। उनके बीच का अस्पष्ट क्षेत्र मिश्रित संस्कृति तथा मिश्रित भाषा का क्षेत्र होता है। यह स्वाभाविक स्थिति है। सामान्यत: इस आधार पर सांस्कृतिक सीमाओं को परिभाषित किया गया है।

सांस्कृतिक आधार पर भारत या मध्यप्रदेश का पहला सीमांकन कब हुआ ज्ञात नही, पर जब अंग्रेज भारत आये तो उसका सामना भारत के विभिन्न अंचलों की सांस्कृतिक एवं भाषायी विविधता से हुआ। सम्भव है, उन्हें इन विविधताओं को समझने की आवश्यकता अनुभव हुई हो। विलियन कैरे ने भाषायी-सर्वेक्षण कराया था। सन् 1843 के बाद, जार्ज ए.ग्रियर्सन ने भारत के विभिन्न क्षेत्रों की भाषा पर विचार कर विभिन्न भाषायी क्षेत्रों की सीमाओं का अनुमान लगाया। इस सीमांकन का आधार भाषा की समानता के अतिरिक्त खान-पान, जीवन-शैली तथा सांस्कृतिक एकरूपता रहा होगा। माना जाता है, कि मध्यप्रदेश में मोटे तौर पर निमाड़, बघेलखण्ड, बुन्देलखण्ड और मालवांचल समाहित हैं।

निमाड़ का सांस्कृतिक अंचल – निमाड़ शब्द की व्युत्पत्तिा के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। अनेक विद्धानों ने इसके नाम का आधार खोजने का प्रयास किया है। एक अनुमान के अनुसार यह नाम नर्मदा तट पर बसी उसकी राजधानी (नेमावर) के कारण पड़ा। रामानारायण उपाध्याय के अनुसार अनुमान है, कि यह उत्तार और दक्षिण भारत का संधिस्थल होने से आर्य और अनार्यो की मिश्रित भूमि रहा होगा। इस नाते इसका नाम निर्माय (नीम-आर्य) पड़ा होगा। सम्भव है, निर्माय का नाम बदलते-बदलते निमाड़ हुआ हो। निमाड़ नाम के पीछे एक और कारण हो सकता है, यह क्षेत्र मालवा से नीचे की ओर बसा है। मालवा से निमाड़ की ओर जाने में लगातार घाट उतरना या नीचे आना होता है, इस प्रकार निम्नगामी होने से इसका ननाम निमानी और बाद में बदलकर निमाड़ हो गया हो। कुछ लोगों के अनुसार यह नाम इस क्षेत्र में प्रचुरता से मिलने वाले नीम के वृक्षों के कारण था। पूर्वी निमाड़ के गजेटियर (1971, पेज 1) के अनुसार मूलरूप से पूर्व में गंजाल नदी तथा पश्चिम में हिरनफाल तक का नर्मदा घाटी का क्षेत्र निमाड़ कहलाता है।

लोक संस्कृति – लोक संस्कृति व्यापक शब्द है। यह बहुसंख्य समाज के स्तर पर अंकुरित हो, पनपती हो और लगभग पूरे समाज को संस्कारित करती है। नर्मदा प्रसाद गुप्त (1995) के अनुसार वह इतिहासकारों द्धारा प्रतिपादित संस्कृति के स्थान पर लोक मानस एवं लोक-आचरण से पल्लवित होती है। लोक मूल्यों से संस्कारित संस्कृति में समयानुकूल और परिस्थितिजन्य परिवर्तन होते रहते हैं। ये परिवर्तन उसकी अनुपयोगी सामाजिक मान्यताओं तथा अवांछित मूल्यों को विलुप्त करते जाते हैं। लोक संस्कृति कलकल करती सदानीरा नदी के निर्मल तथा स्वच्छ जल की तरह है। कुछ लोगों का मानना हैं, कि लोक मूल्यों तथा लोक-संस्कृति का सही स्वरूप दरबारी लेखकों द्धारा लिखे दस्तावेजों के आधार पर लिखी इतिहास की पुस्तकों के स्थान पर, लोक काव्यों तथा लोक साहित्य में मिलता है। वास्तव में लोक संस्कृति, मानव सभ्यता से जुड़ा बहुसंख्य समाज का इतिहास है। वह बहुसंख्य समाज की ऊर्जा से पल्लवीत होता है। वह गरीबी-अमीरी और वर्ग भेद के ऊपर है। लोक संस्कृति का पोषण किसी वर्ग विशेष सम्राट या बादशाह के द्धारा नहीं होता। वह बहुसंख्य समाज के संस्कारों, मान्यताओं तथा आचरण का प्रतिनिधित्व करती हैं। वह समाज के संस्कारों की धरोहर का प्रााामाणिक एवं स्वीकार्य दस्तावेज हैं।

लोक संस्कृति में किसी बात को समझाने के लिये व्यवहृत शब्द ही संस्कृति है। रामानारायण उपाध्याय के अनुसार जब कोई व्यक्ति किसी विशेष प्रकार से रहने का अभ्यस्त हो जाता है, और लाख कठिनाईयों के बावजूद

* प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययन शाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अपने मार्ग से विचलित नहीं होता तो लोग कहते हैं, कि वह नहीं बदलेगा, ये उसके संस्कार हैं। अर्थात् व्यक्ति विशेष के कार्य, जहाँ संस्कार कहलाते हैं। वहीं वे जब समष्टिगत स्वरूप ग्रहण कर लेते हैं, तो संस्कृति कहलाते हैं। लोक संस्कृति की अनेक विधाएँ हैं। ये विधाएँ, विविध रूपों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराती है। वे रहन-सहन, खान-पान, वस्त्रभूषण, आचार-विचार, रीति-रिवाज, धर्म तथा आस्था, विश्वास और मान्यताओं, उत्सवों, मेलों, गीतों, तमाशों, कथाओं, कहावतों, नृत्य, संगीत, कलाओं, भाषा और बोलियों के माध्यम से अपनी पहचान सुनिश्चित करती है तथा अपनी अस्तित्व का एहसास कराती हैं। लोक संस्कृति का परिचय भौगोलिक, प्रशासनिक या राजनीतिक सीमाओं द्वारा दिया जाना सम्भव नहीं है।

लोक साहित्य, वास्तव में मनुष्य की अनादिकाल से चली आ रही जीवन यात्रा के अनुभव का अमृत है। इस अमृत की खोज मनीषियों के लिये शोध और चिन्तन का विषय रहा है। विद्वानों के अनुसार लोक साहित्य को दो भागों में बाँटा जा सकता है। पहला भाग लोक कथाओं, लोक गीतों और कहावतों का समृद्ध संसार है, तो दूसरा भाग उस समृद्ध संसार की संकलित सामग्री के सम्पादन, अनुसंधान और अध्ययन का अथाह सागर। रामानारायण उपाध्याय के अनुसार पहला भाग यदि सर्च (Search) है, तो दूसरा भाग रिसर्च (Research) है। पहले भाग की जड़े ग्रामों में बसती है, इसलिए उन्हें समझने के लिये लोक साहित्य के विद्यार्थी को लोक या ग्रामीण समाज से जीवन्त सम्पर्क स्थापित करना होता हैं। यही युक्ति लोक संस्कारों में जल विज्ञान तथा प्रकृति को जानने तथा समझने के लिए आवश्यक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पं. रामानारायण उपाध्याय - निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास, विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर, संस्करण-1980
2. डॉ. शिवकुमार तिवारी एवं डॉ. कगल शर्मा - मध्यप्रदेश की जनजातियाँ, समाज एवं व्यवस्था - मध्यप्रदेश हिन्दी, ग्रन्थ अकादमी भोपाल, संस्करण-1984
3. पूर्वी निमाड़ के गजेटियर - 1971, पृ. क्र.-1

****

Perceptions Of Branch Managers Towards Credit Risk Management System In Public Sectors Banks In India (With Special Reference To Indore City)

Dr. Sanjay Sharma* Dr. Rekha Lakhotia**

Abstract - Today, Credit Risk Management has emerged as a big challenge for the banking system in India. Therefore, it is attempted to make a study on perception of bank manager on Credit Risk Management System of their bank to oversee the management of nonperforming loans/assets. The study is based upon secondary data recovered from Report of Progress of banking in India, Websites, Journals and Articles. The scope of the study is limited to analysis of nonperforming assets of public sector banks covering the period of 2007-2016. In the first case, banker's opinion has been analyzed to observe the scenario of the management of credit risk in the selected public sector banks in India and the impact of credit risk management on profitability and liquidity of the selected public sector banks.
Keywords - Managers, Credit Risk Management, Public Sector Banks, India.

Introduction - In this liberalization period, credit Risk Management has got much importance in the Indian Economy. The main challenges faced by the banking sector today are the challenge of identifying the risk and managing it. The risk is imbibed nature of the banking business. The main role of bank is of intermediate for those having resources and requiring resources. For risk management various risks like credit risk, market risk or operational risk have to be converted into one composite measure. Therefore, it is necessary that measurement of credit risk should be in tandem with other measurements of operation and market risk so that the requisite composite estimate can be worked out. So, in banking sector credit risk management is being most important task of all. The importance of the credit risk management and its impact on profitability has motivated us to pursue this study.

Literature Review:

Serwadda (2018) The paper is set to break down the effect of credit risk the board on the budgetary presentation of business banks in Uganda for a time of 2006–2015 utilizing board information for an example of 20 business banks. The examination utilizes return on resources as needy variable and non performing advances, development in premium income and advance misfortune arrangements to add up to advances as credit hazard measures. Auxiliary information is sourced from the Bank scope information base, African advancement bank and the national bank of Uganda. The examination utilizes clear insights, relapses and relationship investigation. Relapse models are to appraise the greatness of noteworthiness of credit hazard the executives on the exhibition of business banks in Uganda. The investigation uncovered that credit hazard the board impacts on the presentation of Ugandan business banks. The outcomes depicted that banks' presentation was conversely impacted by non performing credits which may open them to huge extents of illiquidity and money related emergency. In this manner given such outcomes, the analyst prescribes that banks need to upgrade their credit risk the executives strategies not exclusively to procure more benefits yet in addition to keep up a subjective resource portfolio and consideration be given to non performing advances, advance misfortune arrangement to add up to advances and development in premium income that were discovered to be huge. Banks need to configuration suitable credit approaches that must deal with all vital conditions before propelling credit to their clients and furthermore create solid credit organization advisory groups and groups that must lead proper and sound advance examination assessments and which should likewise screen the advances all through the necessary cycles directly from stretching out an advance to a client up to the fulfilment of advance reimbursements in order to relieve credit risk.

Isanzu (2017) The study aim was to analyze the effect of credit risk on the monetary presentation of Chinese banks. Auxiliary information was gathered from five biggest business banks in the nation for the time of a long time from 2008 to 2014. The investigation utilized nonperforming advances, capital ampleness proportion, debilitated advance hold, and advance disability charges as proportions of credit risk and for a proportion of money related execution return on resource was utilized.

*Associate Professor, Indore Management Institute and Research Centre, Indore (M.P.) INDIA
** Associate Professor, Department of Commerce IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA

Information investigation was finished utilizing a decent board information relapse model, and the examination discoveries uncover nonperforming advance and Capital sufficiency have a critical effect of on money related execution of Chinese business banks; accordingly, the need to control credit risk is vital for bank budgetary execution.

Research Purpose: The purpose of the research is to analysis the perception of bankers on credit risk management system in public sector banks and its overall impact on the financial performance of the bank. And to identify the loop holes in the banks operating structure, in managing the loans given to the various sector. We try to study and analyze banks internal risk rating system, borrower's credit worthiness, sources of borrower's repayment, major reason for NPA in banks, NPAs level in each segment, channels for NPA used by the banks, factors responsible for NPA, Strategies must be apply to minimize credit risk management in banks and challenges faced by the financial institutions in implementation of credit risk management policies

Research Question.

RQ.1 what are the perceptions of branch managers towards Credit Risk Management System?

RQ.2 determine the factors responsible for the Non-Performing Assets analysis the of the Public Sector banks in India as per managers of the banks?

RQ.3 describes the causes of NPA and gives the suggestive measures to control the NPA in Public Sector banks in India?

Research Objectives:

1. To study the perceptions of branch managers towards Credit Risk Management System
2. To find out the factors responsible for the Non-Performing Assets analysis the of the Public Sector banks in India as per managers of the banks;
3. To indentify the causes of NPA and give the suggestive measures to control the NPA in Public Sector banks in India

Research Methodology - Credit risk management is expected to have a direct and significant relationship to banks performance. The study adopts descriptive methodology in order to ascertain the views of bankers to know their opinion on the Credit Risk Management system in their financial institution/banks and major reason for NPA in banks, NPAs level in each segment, channels for NPA used by the banks, factors responsible for NPA, Strategies must be apply to minimize credit risk management in banks. For this, it was considered important to undertake a detailed study of Credit Risk Management System based on primary data collected through field survey of branch managers of selected Public Sector Banks and make an in-depth analysis of data to arrive at feasible solutions for the problem. In this respect, it is considered a descriptive study.

Type of Study: Descriptive

Sampling Design: Judgmental for selecting sample for bank managers

Number of Respondents: 100

Selection of the Banks: According to their total assets

Number of Banks: Top Ten

Reason for Choosing Public Sector Bank: own nearly 80 per cent market share

Data Collection Tool: Primary data is collected through a questionnaire.

Pilot Study:A pilot study was conducted among the ten academicians and ten bank managers having an experience of more than 2 years in credit risk managementsystem in their banks and finally the interview schedule was modified based on the feedback received from the respondents. Further, a number of discussions were made with the academicians and bank managers of selected public sector banks in order to make suitable corrections in the interview schedule.

Major Findings:

Perception of Bank Managers who has at least 2 years credit management experience.

- **A.** On Internal credit risk most of the managers used credit score given by the crisil.
- **B.** Previous loan transactions in the same bank are mostly used as a Sources of Collection of Information about the Credit Worthiness of the Borrowers.
- **C.** Income/Salary and Income Tax Assessment is considered as Sources of Repayment of Borrowers of Sample Branches as per the perception of bankers.
- **D.** Wilful borrowers are the reason for non-payment of loan and advances
- **E.** Loan given for agriculture and business is proved to be the main contributor in NPA.
- **F.** Compromise Settlement Scheme, Enforcement of security interest under SARFAESI Act, 2002, Visit to Borrowers Business premises /Residence, Recovery Camps and one time settlement are the prominent channel for the recovery of NPA in banks.

G. Six factors are extracted from the factor analysis. They are:

1. Lack of Persuasion in risk management and Monitoring
2. Trained staff
3. Internal and external control
4. Legal and political factor
5. Misuse of Fund and Unrealistic project
6. Economic downturn and wilful defaulters

H. Strategies must be apply to minimize credit risk management as per Bank Managers Perception are:

1. Hiring training of bank staff
2. Technology Implementation
3. Feasibility of the Project
4. Borrower's Credibility
5. Be alert during Loan Processing
6. Technical & Financial Viability
7. Regular Monitoring of Project and Performing Asset
8. KYC norms should be taken seriously
9. Multi-tier credit approval processes

Conclusion and suggestions - The banking system in India is dominant as it contains more than half of assets of

the financial system. Bank in the Indian scenario are undergoing through a pretty through fast modification attributable to the money system reforms. There is a cut trough with one another therefore the development of methods has become greatly essential.

Banks currently days became profit oriented. The good barrier within the creating profit is that the increment of non-performing loans or assets of the banks. To beat the downside, banks should management their credit risk. So, NPA problem will be avoided up to some extent. Credit risk being the foremost essential and inescapable risk for the industrial banks that must be taken care of and managed properly. Banks to achieve success and profitable, they need to develop methods during a thanks to manage credit risk. As providing loan to the client is one the most necessary operation, banks got to manage credit risk to create the money offered with them.

References :-

1. Arora, S. (2013). Credit Risk Analysis in Indian Public Sector Banks-An Empirical Investigation. Asia-Pacific Finance and Accounting Review, 1(2), 25.
2. Arunkumar, R. &Kotreshwar, G., (2005). "Risk Management in Public Sector Banks (A Case Study of Public and Private Sector Banks)", Review Committee Ninth Capital Market Conference Indian Institute of Capital Market (December 19-20, 2005) Mumbai.
3. Bhaskar, P. J. (2014). Credit Risk Management in Indian Banks. International Journal of Advance Research in Computer Science and Management Studies l, 2(1), January (2014).
4. Cibulskiené, D., &Rumbauskaité, R. (2012). Credit Risk Management Models of Public Sector Banks: their Importance for Banking Activities. Social Research, (2), 27.
5. *Dash M. K. & Kabra G.*, The Determinants of Non-Performing Assets in Indian Public Sector Banks – An Econometric Study, Middle Eastern Finance & Economics (Euro journals Publishing Inc.), 2010
6. Goyal, K. A, Risk Management in Indian Banks –Some emerging issues. Int. Eco. J. Res., 2010 1(1) 102-109.
7. Gumparthi, S., Khatri, S., &Manickavasagam, V. (2011). Design and development of credit rating model for public sector banks in India: Special reference to small and medium enterprises. Journal of Accounting and Taxation, 3(3), 105.
8. Mallikarjuna.T.K and Maregoud, R. (2012), "Risks in Public Sector Banking: Identification and Management", Indian Streams Research Journal, Vol.2, pp.1-4.
9. Mishra, B. M., & Dhal, S. (2010). Pro-cyclical management of banks' non-performing loans by the Indian public sector banks. BIS Asian Research Papers.
10. Nayan, J. and. Kumaraswamy, M. (2014), "Retail Credit Risk Management in Indian Public Sector Banks", Global Journal for Research Analysis, Vol: 3, Issue: 8 August.
11. Serwadda, I. (2018),"Impact of Credit Risk Management Systems on the Financial Performance of Commercial Banks in Uganda". Acta Universitatis Agriculturae et Silviculturae Mendelianae Brunensis, 66(6): 1627–1635.

****

चंद्रकांत देवताले की कविताओं में समकालीन यथार्थ

डॉ. मुकेश भार्गव *

प्रस्तावना – चंद्रकांत देवताले का जन्म 07 नवंबर, 1936 मध्यप्रदेश के बैतूल जिले के ग्राम जोलखेड़ा में एक मध्यवर्गीय परिवार में हुआ था। प्रारंभिक शिक्षा एवं उच्च शिक्षा इंदौर में हुई फिर उन्होंने मुक्तिबोध पर सागर विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की। साठोत्तरी हिंदी कविता के प्रमुख हस्ताक्षर चंद्रकांत देवताले उच्च शिक्षा में अध्यापन कार्य से संबंधित रहे।

चंद्रकांत देवताले सशक्त हस्ताक्षर कवि हैं। हिंदी एवं मराठी दोनों भाषाओं से जुड़े हुए कवि थे। अपने प्रिय कवि मुक्तिबोध की तरह चंद्रकांत देवताले मराठी भाषा से आँगन की भाषा की तरह बरताव करते थे। उनका व्यक्तित्व अभाव और संघर्षो में तपकर निखरा है। इसीलिए उनकी अनुभूतियों में अभिव्यक्ति की दृष्टि से प्रमाणिकता दिखाई देती है। उनकी भाषा सरल, ग्राह्य है। उनकी कविताओं में यथार्थवाद परिलक्षित होता है। उन्होंने अपने साहित्य सृजन में हमेशा समाज, राष्ट्र, राजनीतिक आदि को महत्तव दिया ताकि एक सभ्य समाज का निर्माण हो सके।[1]

'भूखंड तप रहा है', काव्य संग्रह एक प्रसिद्ध काव्य है। इस काव्य-संग्रह में **'मेरे पास छिपाने के लिए कुछ नहीं'**, कविता में अपने भीतर किसी दुराव-छिपाव या आडंबर युक्त बातें नहीं हैं। वे हमेशा इस छद्म से दूर रहे हैं। वस्तुत: जीवन एक खुली किताब की तरह है। उनके पास अपने आवश्यक प्रमाण पत्र एवं महत्तवपूर्ण कागजात हैं, जो नौकरी पाने का एक ठोस जरिया मात्र है। वे इस कविता में कहते हैं-

'इस अमलतास वाली कविता में थे,
ताजे बबूल के काँटों-सी भरी मेरी कमजोरियाँ,
यह मेरी ताकत का सबूत, समुद्र,
वह मेरी यकीन आग का दरवाजा,
सचमुच मेरे पास छिपाने को कुछ नहीं हैं।'[2]

इस कृति में कवि ने अपनी कमजोरियों का भी उल्लेख किया है, लेकिन इसके विपरीत मेरे पास अपने संपन्न कहने लायक ढेर सारी बातें हैं, वही उसकी प्रेरणा के स्त्रोत हैं। उनके पास यकीन करने योग्य कोई आग का दरिया नहीं है।

त्रिभुवन के माध्यम से मनुष्य-जाति के आदिम युग से लेकर आधुनिक समय तक की यात्रा के बदलाव को परिस्थितियों को कवि ने बड़े ही सुंदर ढंग से लिखा है। उदा.-

'जेटमान के धुएँ को पीछा करती है, दृष्टि को,
रोककर सोचता है त्रिभुवन,
त्रिभुवन मुड़कर कई बार पीछे देखो,
कहा था एक दिन सयाने ने,
तब से वह रूककर बीच-बीच में,
देखता है दूर तक अपने सामने उसे,
भूख के जंगल को यहीं छोड़,
इंद्रजालिक छायाओं में,
सूरज का इंतजार करती हुई अनगिनत आदिम आँखें,
गुफाएँ और उनके भीतर,
लेती हुई नर आकृतियाँ,
अग्नि की छत्रछाया के नीचे खड़ी तैल,
स्नात युवतियाँ,
चट्टान पर उकेरती पशुओं के चेहरे।'[3]

चंद्रकांत देवताले की कविता ने वास्तव में समाज के अभावग्रस्त गरीब-मजदूरों की दयनीय दशा का सफलता चित्रण किया है। उनकी दयनीय दशा को वास्तव में हम उसके द्वारा कविता की निम्न पंक्तियों में दृष्टव्य हैं-

'जन्म के साथ ही शुरू हो गया था,
साँप-सीढ़ी का खेल,
चोट बादाम शाही,
पीछे देख भाट खाई,
उसने हमेशा पीछे देखा,
और एक चाबुक खाया सटाक से,
सीढ़ी तक पहुँचने के पहले वह,
साँप के मुँह पर आ गया,
और नीचे गिर पड़ा धड़ाम से।'[4]

'साँप और सीढ़ी का खेल' अंग्रेजों ने व्यापार के बहाने देशी राजाओं को छला और उनको सत्ता से बेदखल करके उन्होंने अंग्रेजों की हुकूमत कायम की। अंग्रेजों ने देश की जनता में **'फूट डालो और शासन करो'** की नीति अपनाई। इस तरह जनता के साथ दगाबाजी कर उन्हें छलने के यथार्थ का वर्णन हैं।

चंद्रकांत देवताले की कविताओं में सिर्फ सामाजिक विसंगतियों, अत्याचारों, भ्रष्टाचार का ही वर्णन नहीं बल्कि एक उज्जवल सुखदायी शक्तिमय भविष्य की आस व चमक भी हैं। उदाहरण -

'थककर उसने बेटी को खत लिखा,
दिन के उजाले में भी,
थोड़े से और उजाले की प्रतिक्षा है मनुष्यों को,
इसी उजाले के बिना कैद है बच्चों तक की खुशी,
कसी हूँ अब तक घोड़ों की नालद में।'[5]

इस प्रकार हमने देखा कि चंद्रकांत देवताले की **'भूखंड तप रहा है'** कविता एक आधुनिक गद्य की वैचारिकता और मध्यवर्गीय व्यक्तित्व की आत्मा जगत से संपन्न कविता है।

चंद्रकांत देवताले की कविताओं में समकालीन समाज का यथार्थ

* संविदा व्याख्याता, तुलनात्मक भाषा एवं संस्कृति अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

चित्रण, किया है, क्योंकि कवि समाज का ही एक अंग होता है। इसलिए साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रित संबंध है। साहित्य के द्वारा ही सामाजिक अनुभव, सामाजिक रूढ़ियों और परंपराओं को ग्रहण कर पाठकों को हस्तांतरित करता हैं।

अज्ञान, अशिक्षा, गरीबी, शारीरिक और आर्थिक रूप से त्रस्त आम लोगों की पीड़ाओं को कवि ने अपनी रचनाओं मे उकेरा है। अभावों से भरी जिंदगी की पीड़ा का चित्रण निम्न पंक्तियों में द्दष्टव्य है-

'उन करोड़ों कमजोर लोगों से
जिनकी आँखों में जलता हुआ जंगल
नींद में रोटी छीनते कुत्तो
पाँवों में घास की गंध पर जमी हुई फफूँद
चेहरे पर यातना का
खुदा हुआ रोजनामचा।'[6]

आम लोगों के पास ऐसी अभावग्रस्त जिंदगी जीने के विरूद्ध ताकत नहीं है। अत: आदमी बेबस और लाचार दिखाई देता है।

'लकड़बग्घा हँस रहा है' कविता में कवि ने गरीबी और अमीरों के बीच वास्तविक यथार्थ का वर्णन किया है। एक ओर अमीरों के बच्चों के लिए बगीचे, खाने को अंडे, सेव, आकर्षक स्कूल, आईसक्रीम आदि सारी संपन्न घरों की वस्तुएँ हैं, तो दूसरी ओर आम गरीबों के बच्चे कीचड़, धूल और गंदगी से सने फटी चड्डी पहनकर, अड्डे ढूँढते या किसी होटलों में कप-बसियाँ धोते हुए मिलते हैं, का कवि ने बड़े ही मार्मिक ढंग से यथार्थ चित्रण किया हैं। उदाहरण द्दष्टव्य है-

'थोड़े से बच्चों के लिए,
एक बगीचा है,
उनके पाँव दूब पर दौड़ रहे हैं,
असंख्य बच्चों के लिए,
कीचड़-धूल और गंदगी से पटी,
गलियाँ हैं जिनमें वे,
अपना भविष्य बना रहे हैं,
एक मेज है,
सिर्फ छ: बच्चों के लिए,
और उनके सामने,
उतने ही अंडे और उतने ही सेव हैं,
एक कटोरदान है सौ बच्चों के लिए,
और हजारों बच्चे,
एक हाथ में रखी आधी रोटी को,
दूसरे से तोड़ रहे हैं,
सिर्फ कुछ बच्चों के लिए,
एक आकर्षक सकून,
और प्रसन्न पोशाकें हैं,
बाकी बच्चों का हुजूम,
टपरों के नसीब में उलझ गया है,
उनकी फटी चड्डी,
उन्हें सीधा होने से रोक रही हैं,
ढेर सारे बच्चे,
सार्वजनिक दीवारों पर गालियाँ लिख रहे हैं,
ढेर सारे बच्चे होटलों में,
कप बासियाँ रगड़ रहे हैं,
उनके चेहरे मोमनों की तरह दयनीय हैं,
और उनके हाथों और पाँवों की चमड़ी है,
हाथ और पाँव का साथ छोड़ रही हैं,
अखबार के चेहरे पर जिस वक्त,
तीन बच्चे आईसक्रीम खाते,
हँस रहे हैं,
बीस पैसे में सामान ढोने के लिए,
लुका-छिपी करते बच्चों के पुट्ठों पर,
पुलिस वालों की बेतें उमच रही हैं।'[7]

गरीब-दलितों के अत्याचारों की कथा तो स्वाधीनता के इतने वर्षों बाद भी जारी है। उनकी स्त्रियों पर बलात्कार आम हुए हैं **'लकड़बग्घा हँस रहा है'** में इनका विवरण प्रतिकों के रूप में व्यक्त किया हैं। उदाहरण-

'औ लकड़बग्घा हँस रहा है,
हत्यारे सिर्फ मुआतिल आज भी,
और घुस गए हैं अन्याय की लंबी सुरंग में,
वे कभी भी निकल सकते हैं साबुत,
और किसी मुकाम पर।'[8]

दलितों की स्त्रियों के साथ बलात्कार और फिर उनकी निर्मम हत्या दबंग लोगों का खेल है। फिर कानून की झूठी लड़ाई लड़ते-लड़ते कानून के साथ वकीलों और पैसों के सहारे खिलवाड़ करना उच्चवर्ग को शौक रहा है।

सत्तासीन लोग कानून की खुलेआम धज्जियाँ उड़ा रहे हैं। राजतंत्र में सामंत ही सत्ता के केंद्र बन बैठे हैं। जनता की योजनाओं को हड़पकर धनिक बनते सत्ताधारी अपने लिए गुंडे भी पालते हैं ताकि उनके खिलाफ कोई आवाज न उठा सके का यथार्थ चित्रण करती कविता की पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं-

'प्रजातंत्र की रथयात्रा निकल रही है,
औरतों और बच्चों को रौंदा जा रहा है,
गुंडों और नोटों की ताकत से हतप्रभ लोग,
खामोश खड़े हैं।'[9]

आर्थिक तंगई का एक भयावह रूप हमारे सामने है। प्रस्तुत है उनकी कविता का उदाहरण-

उनकी खुरदुरी हथेलियों पर,
नहीं बची है कोई रेखा,
उँगलियों में लोहे की छड़ जैसी,
ताकत पैदा हो गई है।

अत: हम कह सकते हैं कि चंद्रकांत देवताले की कविताओं में वास्तविक यथार्थ परिलक्षित होता हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भूखंड तप रहा है : चंद्रकांत देवताले, पृष्ठ-11
2. भूखंड तप रहा है : चंद्रकांत देवताले, पृष्ठ-13
3. भूखंड तप रहा है : चंद्रकांत देवताले, पृष्ठ-23
4. भूखंड तप रहा है : चंद्रकांत देवताले, पृष्ठ-55
5. भूखंड तप रहा है : चंद्रकांत देवताले, पृष्ठ-34
6. लकड़बग्घा हँस रहा है : चंद्रकांत देवताले, पृष्ठ-78
7. लकड़बग्घा हँस रहा है : चंद्रकांत देवताले, पृष्ठ-66
8. आग हर चीज में बताई गई थी : चंद्रकांत देवताले, पृष्ठ-87
9. प्रतिनिधि कविताएँ : चंद्रकांत देवताले, पृष्ठ-63

धार जिले में ग्रामीण महिला साक्षरता का वितरण

प्रो. किरण मण्डलोई * डॉ. एम. एल. नाथ **

प्रस्तावना – किसी भी देश, प्रदेश के विकास को परखने का सर्वोत्तम उपाय वहां की महिलाओं की शिक्षा से आंकलन लगाया जा सकता है। महिलाएँ परिवार रूपी गाड़ी की धुरी है। महिलाओं का शिक्षित होना अति आवश्यक है क्योंकि वे ही परिवार को शिक्षित करती है। इसीलिए गाँधीजी ने कहा था कि 'एक लड़की की शिक्षा एक लड़के से अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि लड़के को शिक्षित करने पर वह अकेला शिक्षित होता है परंतु एक लड़की की शिक्षा से पूरा परिवार शिक्षित होता है।' शिक्षा आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है, पथ-प्रदर्शक है, निर्माण है, एवं विकास है।

अध्ययन क्षेत्र : धार जिला मध्यप्रदेश के पएिती भाग में 22°43' से 23°10' उत्तरी अक्षांश एवं 74°28' से 75°42' पूर्वीदेशांतर के मध्य स्थित है। धार जिले की संरचना पर्वतीय, पठारी एवं मैदानी होने के कारण शिक्षा काफी पिछड़ी हुई है। किसी भी क्षेत्र के विकास के लिए वहां भौतिक एवं आर्थिक संसाधन बहुत अधिक प्रभावित करते है। शिक्षा भी इन्हीं संसाधनों के कारण पिछड़ जाती है।

उद्देश्य : भारत में आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी क्षेत्रों की तुलना में शिक्षा का स्तर कम है। शासन की विभिन्न योजनाओं कार्यक्रमों एवं प्रोत्साहनों के उपरान्त भी महिला साक्षरता का प्रतिशत कम क्यों है।

महिला साक्षरता का वितरण प्रतिरूप : भारत में भी विश्व के अन्य देशों की साक्षरता का प्रादेशिक वितरण असमान है। आर्थिक दृष्टि से उन्नत क्षेत्रों में साक्षरता सामान्य से अधिक एवं पिछड़े क्षेत्रों में कम पाई जाती है। किसी भी देश में साक्षरता का मापदण्ड प्रति व्यक्ति आय या प्रति व्यक्ति सकल राष्ट्रीय उत्पाद (G.N.P.) का उच्च होना ही नहीं है, अपितु उच्च शिक्षा के लिए प्रति व्यक्ति आय उच्च होने के साथ-साथ वहां के सामाजिक वातातरण की भी आवश्यकता होती है।

तालिका क्रमांक : 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका क्रमांक 1 से स्पष्ट है कि धार जिले की विकासखण्डों में से सर्वाधिक महिला साक्षरता धार विकासखण्ड में 45.40 प्रतिशत है। इसी प्रकार सबसे कम महिला साक्षरता बाग विकासखण्ड में 24.80 प्रतिशत है। सर्वाधिअसाक्षर महिलाएँ बाग विकासखण्ड में 75.20 प्रतिशत एवं सबसे कम असाक्षर महिलाएँ धार विकासखण्ड में 54.60 प्रतिशत है। धार विकासखण्ड जिला मुख्यालय होने के कारण यातायात एवं शिक्षा की व्यापक सुविधाएँ उपलब्ध है। बाग विकासखण्ड दुर्गम पहाड़ी, पर्वतीय एवं वनाच्छादित क्षेत्रों में स्थित होने के कारण यातायात, विद्यालयों तथा पर्याप्त शिक्षकों की सुविधाओं का न होना एवं महिला शिक्षा के प्रति जागरूकता की कमी है।

तालिका क्रमांक 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका क्रमांक 2 से स्पष्ट है कि धार जिले की कुल 08 तहसील के 13 विकासखण्ड में कुल 1535 ग्रामों को निर्धारण किया गया है। किन्तु उनमें से 1477 ग्राम निवासित एवं 58 ग्राम निवासरहित है। शोध अध्ययन में 1477 ग्रामों को शामिल किया गया है।

धार जिले में ग्रामवार महिला साक्षरता के वितरण को पांच भागों में बांटा गया है :-

1) जिले में अति उच्च साक्षरता (80 से अधिक) 08 ग्रामों में अर्थात् सबसे कम 0.54 प्रतिशत पायी गयी है।
2) उच्च साक्षरता (60-80 प्रतिशत) 88 ग्रामों में अर्थात 5.96 प्रतिशत।
3) मध्यम साक्षरता (40-60 प्रतिशत) 636 ग्रामों अर्थात 43.06 प्रतिशत।
4) निम्न साक्षरता (20-40 प्रतिशत) 624 ग्रामों में अर्थात 42.25 प्रतिशत।
5) जिले में अति निम्न साक्षरता (0-20 प्रतिशत) 121 ग्रामों में अर्थात 8.19 प्रतिशत ग्रामों में ही पायी गई है।

इससे स्पष्ट है कि जिले में 40-60 प्रतिशत महिला साक्षरता वाले ग्रामों की संख्या सर्वाधिक है और 80 प्रतिशत से अधिक साक्षरता वाले ग्रामों की संख्या बहुत कम है। अधिक साक्षरता वाले ग्राम जिला मुख्यालय, तहसील मुख्यालय एवं सड़कों के किनारे बसे होने के कारण ग्रामीण महिला साक्षरता अधिक है। जिन ग्रामों में महिला साक्षरता की कमी है वे ऐसे ग्राम है जो पहाड़ों, जंगलों जैसे दूर्गम स्थलों पर बसे हुए है। इन ग्रामों के आवास भी बिखरे हुए है, अत: यहाँ महिला साक्षरता प्रभावित होती है।

महिला साक्षरता के वितरण को प्रभावित करने वाले कारण : उच्चावच नदी परितंत्र, परिवहन एवं अभिगम्यता द्धारा साक्षरता प्रभावित होती है। भौगोलिक कारकों के साथ-साथ सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक कारण भी साक्षरता को प्रभावित करते है।

1) भौगोलिक कारक : धार जिला भौगोलिक दृष्टि से देश के हृदय स्थल मध्यप्रदेश के पएिमी भाग में स्थित है। जिले में पर्वत, पठार, मैदान एवं घाटियां होने के कारण साक्षरता प्रभावित होती है।

2) आर्थिक कारक : अध्ययन में पाया गया है कि पर्वतीय व पहाड़ी क्षेत्रों की आर्थिक स्थिति अत्यंत दयनीय है। यहां के लोग शिक्षा से अधिक रोजगार व मजदूरी पर विश्वास करते है। बच्चों को स्कूल भेजने की बजाए छोटी-मोटी मजदूरी करने भेज देते है ताकि उनके घर के सदस्यों का भरण-पौषण हो सके। आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण महिला साक्षरता

* सहा प्राध्यापक (भूगोल) शा.स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.) भारत
** पूर्व निदेशक, उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, भोपाल (म.प्र.) भारत

प्रभावित होती है।

3) सामाजिक कारक : भारत जैसे विकासशील देशों में आज भी अधिकांश समाजों में महिलाओं के शिक्षित होने के बावजूद सामाजिक दबाव के कारण आत्मविश्वास की कमी है। जिले में अध्ययन के दौरान पाया गया कि अधिकांश महिलाएँ पढ़ी-लिखी भी है किन्तु उनमें जागरूकता की कमी के कारण भेदभाव, हिंसा, बलात्कार, जाति प्रथा, पर्दा प्रथा, दहेज प्रथा, बाल विवाह, प्रजननता, नशे की स्थिति में पारिवारिक झगड़े, मानसिक प्रताड़ना आदि का शिकार होना पड़ता है। इस कारण महिला साक्षरता प्रभावित होती है।

4) राजनीतिक कारक : क्षरता के वितरण में राजनीतिक कारक का भी महत्वपूर्ण स्थान है। अध्ययन में यह पाया गया कि अधिकांश गांवों में प्राथमिक स्कूल तो प्रत्येक मोहल्ले में है परंतु माध्यमिक स्कूल सरपंच के घर के पास या उसके ही मोहल्ले में बनवाए गए है। वहां के स्कूल भी इन्हीं नेताओं के भरोसे चलते है। जिले में पर्वतीय व जनजातीय क्षेत्रों में बिखरे आवास होने के कारण घर दूर-दूर बने होते है। ऐसे क्षेत्रों में इस दूरी के कारण स्कूलों की स्थापना करने में काफी कठिनाइयां होती है। अत: महिला साक्षरता प्रभावित होती है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि जनसंख्या की निर्धनता, असाक्षरता, सामाजिक एवं आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने अर्थात् महिलाओं के सर्वागीण विकास के शासन द्वारा अथक प्रयासों के उपरांत भी महिलाएँ पुरूषों के समान सक्षम नहीं दिखाई दे रही है। शिक्षा के माध्यम से महिलाओं को विकसित, सशक्त एवं प्रगतिशील समाज की मुख्यधारा से जोड़ने के लिए महिलाओं से जुड़ी समस्याओं पर विचार करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सर्वे ऑफ इण्डिया 2011
2. https://www.census2011.co.in
3. निगम भावना (2004-05), 'उज्जैन जिले में ग्रामीण महिला साक्षरता का भौगोलिक अध्ययन'
4. पंडा बीपी. (2004), जनसंख्या भूगोल, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
5. कुमार प्रमिला एवं शर्मा कमल (2015), मध्यप्रदेश : एक भौगोलिक अध्ययन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादती, भोपाल

तालिका क्रमांक : 1 - जिला धार : विकासखण्डवार महिला साक्षरता 2011 (प्रतिशत)

विकासखण्ड

	बदनावर	सरदारपुर	तिरला	धार	नालछा	गंधवानी	बाग	कुक्षी	डही	निसरपुर	मनावर	बाकानेर	धरमपुरी
साक्षरता	43.00	31.40	33.60	45.40	37.90	29.50	24.80	34.00	30.40	42.00	38.90	40.90	41.70
निरक्षर	57.00	68.60	66.40	54.60	62.10	70.50	75.20	66.00	69.60	58.00	61.10	59.10	58.30

स्त्रोत : सर्वे ऑफ इण्डिया 2011

तालिका क्रमांक 2 - जिला धार : विकासखण्ड ग्रामीण महिला साक्षरता एवं ग्रामों का वितरण (प्रतिशत)

क्रं.	विकासखण्ड का नाम	साक्षरता वितरण एवं ग्रामों की संख्या					ग्रामों का योग
		0-20	**20-40**	**40-60**	**60-80**	**80 से अधिक**	
1	बदनावर	03	48	87	25	02	165
2	सरदारपुर	32	102	53	04	00	191
3	तिरला	13	79	43	10	00	145
4	धार	01	11	73	11	01	97
5	नालछा	20	73	74	11	02	180
6	गंधवानी	21	90	31	03	00	145
7	बाग	18	56	45	01	00	90
8	कुक्षी	05	20	21	01	00	47
9	डही	03	44	14	00	00	61
10	निसरपुर	03	12	38	03	01	57
11	मनावर	01	26	65	02	01	95
12	बाकानेर	01	25	70	07	00	103
13	धरपुरी	02	26	51	11	01	101
	योग	**121**	**624**	**636**	**88**	**08**	**1477**

स्त्रोत : https://www.census2011.co.in एवं शोधार्थी द्वारा परिकलित

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

Studies on Incidence of Insecticides on Vegetables Grown in Jaipur & Dausa Districts of Rajasthan

J. P. Singh* S. Mehra**

Introduction - Growth rate of India's agricultural production has turned out to be among the higher most countries in the world during the last decade. No doubt, the impact of green revolution was so dramatic that India became a role model for many developing countries. As a result of green revolution,the total food grain production increased tremendously.All this has been possible as a result of adoption of good quality seeds,enhanced use of fertilisers and plant protection practices. Among many crop protection practices synthetic chemicals contributed so much. Due to increased use of such chemicals a threat has imposed for environment and human health.

Area of study - Jaipur and Dausa districts were selected as study area.Thes districts belong to semi arid eastern plains(III A) of the different Agro climatic zones in Rajasthan. For the convenience of study the selected both the districts were divided in three regions, i.e. Agro Ecological Region I,II,III.

Materials and Methods-

(A) Survey – Villages and farmers were selected for vegetables sample collection. Three villages were randomly selected from each blocks of the two districts. 200 gms. of each of brinjal, ladyfinger, cabbage , tomato and cauliflower were collected for the analysis of insecticide contamination .

(B) Laboratory method – Gas Chromatography-ECD technique was applied for analysis of collected samples.

Extraction & Analysis – 5ml. of extraction was used for analysis through Gas Chromatography-ECD technique. After that concentration determination was worked out with following formula.

$$\text{Insecticide residue} = \frac{\text{Peak region of sample} \times \text{Conc. of standard solution} \times \text{Final volume of ext.}}{\text{Peak region of standard solution} \times \text{injected volume of sample} \times \text{wt. of sample.}}$$

Results – residues of monocrotophos, chloropyriphos, endosulphan and quinalphos were reported in tomato samples collected from Agro Ecological Region I. Similarly brinjal samples were found contaminated with endosulphan& cypermethrin, cabbage with Fenvelrate& Quinalphos. Fenvelrate was reported in cauliflower samples and ladyfinger with endosulphan, Quinalphos & Cypermethrin (Table 1).

Table- 1 (see in next page)

Vegetable samples were also collected also collected from Ago Ecological Region II and were analysed for insecticide residues. Fenvelrate was reported in Cauliflower, quinalphos&fenvelrate in Cabbage , chlpropyriphos in tomato and endosulphan residues in brinjal (Table 2).

Table- 2 (see in next page)

As Ago Ecological Region III is concerned production of vegetables is comparatively low in comparision to AER I & AER II. Endosulphan residue was reported in ladyfinger sample only while most of the other vegetable samples were free from insecticide contamination (Table 3).

Table- 3 (see in next page)

References:-

1. A Solaimalai, P.T. Ramesh and M. Baskar 1988, Pesticide and Environment M Environmental contamination&Bioreclamation, Today & Tomorrow's Printers & Publishers, New Delhi.
2. Bakare, N., John PJ & Bhatnagar P. 2000, Evaluation of organochlorine insecticides residue levels in locally marketed vegetables of Jaipur city, Rajasthan, India. J Environ Bio. 23(3): 247-52.
3. Beena Kumari V.K. Madan,R. Kumar & T.S. Kathpal 2003, Monitoring of seasonal vegetables for pesticide residues. Envi. Monit. Assess. Vol. 74(3), 263-270.
4. Dhaliwal, G.S. and R. Arora, 1996. Principles of Insect pest Management. National Agricultural Technology Information Centre, Ludhiana. 374p.
5. Jaya Madhuri R and Rangaswamy V. 2006, Effect of selected insecticides on population and N2 fixing efficiency of Azospirillum sp. in Groundnut soils. J. Ecotoxicol. Environ Monit. 16 (2) 157-169.
6. Gupta, P.K. 2004, Pesticide exposed…. Indian scene. Toxicology; 198(1-3), 83-90.
7. Karabhantanal, S.S. and Awaknavar, J.S. 2006, Residues of â-cyfluthrin 2.5 EC in Tomato fruits, J.Ecobiol. 19 (1): 09-13.
8. Kasturi Das 2004. Organic farming. To combat pesticide residue- Agriculture information com. Htm.
9. Khandelwal, M.K. and Sita Ram2005. Consumption

*Associate Professor, R. R. Government College, Alwar (Raj.)INDIA
** Research Scholar (Geography) Rajasthan University, Jaipur (Raj.) INDIA

pattern of patricide in Semi-arid Agro eco system of Rajasthan. Ph. D Thesis. University of Rajasthan, Jaipur (Rajasthan).

10. Kumari, B; V.K. Madan, T.S. Kathpal 2008. Status of insecticide in Haryana, India, Environ monit assess. 136: 239-244.
11. Mayank Bharti and Ajay Taneja 2003. Monitoring of organochlorine pesticide residues in summer & winter vegetables from Agra, India- A case study. Envi. Monit Assess. Vol. 110, (1-3), 341-346.
12. Mukherjee I 2003. Pesticide residues in vegetables in and around Delhi. Envir Monito Assess. Vol. 86(3), 265-71
13. Ponnusankar, s; Juno Joel and Suresh B, 2008. Survey on agrochemical poisoning at Ooty, South India. J. of Environ. Monit 18 (1) 69-75.

Table- 1 : Present scenario of pesticides on vegetables in AES (I)

S. No.	Vegetables (No. of samples collected)	Insecticide detected (No. of contaminated samples)		Remaining insecticide amount (Range in ppm)		Total number of samples contaminated with various pesticides	Percentage of Contaminated samples	Max. Residue Limit	Valuesbeyond Max. residue Limit
		2009-10	2010-11	2009-10	2010-11				
1	Tomato (38)	Monocrotophos (3) Chlorpyriphos (1) Endosulfan (5) Quinalphos (1) N.D. (13)	Monocrotophos (1) Endosulfan (3) Cypermethrin (1) N.D. (10)	0.0109-0.0231 0.0110 0.0091-0.0193 0.0100	0.0192 0.0012-0.0191 0.0260 0.0030-0.0297	15	39.47	0.02 PPM 1.00	-
2	Brinjal (17)	Endosulfan (6) Cypermethrin (1) N.D. (05)	Endosulfan (6) N.D. (03)	0.0024-0.0292 0.0036	0.0030-0.0297	09	52.94	-	-
3	Cauliflower(25)	Fenvelerate (2) N.D. (09)	N.D. (14)	0.0020-0.0131	-	02	08.00	-	-
4	Cabbage (13)	N.D. (07)	Fenvelerate (1) Quinalphos (1) N.D. (04)	-	0.0620 0.0030	02	15.38	-	-
5	Lady finger (18)	Endosulfan(2) Cypermethrin (1) Quinalphos (1) N.D. (13)	Endosulfan (3) Cypermethrin (2) Monocrotophos (1) N.D. (05)	0.0099-0.0210 0.2031 0.0491	0.0510-0.187 0.0270-0.0310 0.0040	10	35.71	-	-

ND =Not Detected

Table- 2 : Present scenario of pesticides on vegetables in AES (II)

S. No.	Vegetables (No. of samples collected)	Insecticide found (No. of contaminated samples)		Remaining insecticide amount (Range in ppm)		Total number of samples contaminated with various pesticides	Percentage of Contaminated samples	Max. Residue Limit	Valuesbeyond Max. residue Limit
		2009-10	2010-11	2009-10	2010-11				
1	Cauliflower (09)	Endosulfan (1) N.D. (03)	Endosulfan (1) Fenveleratel(2) N.D. (02)	0.006	0.0140 0.0260-0.0350	4	44.44	-	-
2	Cabbage (12)	Quinalphos (1) N.D. (09)	Fenvelerate (1) N.D. (03)	0.0100	0.0040	2	16.16	-	-
3	Tomato (15)	Endosulfan (3) N.D. (06)	Endosulfan (2) Chlorpyriphos (1) N.D. (03)	0.0270-0.0660	0.0190-0.0260	6	40.00	-	-
4	Brinjal (12)	Endosulfan (2) N.D. (10)	Endosulfan (1) N.D. (02)	0.0012-0.0047	0.0160	3	25.00	-	-

ND =Not Detected

Table- 3 : Present scenario of pesticides on vegetables in AES (III)

S. No.	Vegetables (No. of samples collected)	Insecticide found (No. of contaminated samples)		Remaining insecticide amount (Range in ppm)		Total number of samples contaminated with various pesticides	Percentage of Contaminated samples	Max. residueLimit	Values beyond Max. residue Limit
		2009-10	2010-11	2009-10	2010-11				
1	Lady finger (09)	N.D. (08)	Endosulfan (1)	-	0.0140	1	11.11	-	-
2	Tomato (06)	N.D. (02)	N.D. (04)	-	-	-	-	-	-

ND =Not Detected

****

समकालीन साहित्यकारों के साथ मनोहर श्याम जोशी

प्रभात सिंह*

शोध सारांश – मनोहर श्याम जोशी के समकालीन साहित्यकारों में सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय', नागार्जुन, रघुवीर सहाय, शिवमंगल सिंह 'सुमन' मुक्तिबोध, माचवे, भवानी प्रसाद मिश्र, धर्मवीर भारती, नरेश मेहता, ममता कालिया, कृष्णा सोबती, राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश, यशपाल, ईलाचन्द जोशी, जैनेन्द्र, काशीनाथ सिंह, नामवर सिंह, रामविलास शर्मा प्रकृत विद्वानों एवं विदुषियों के समकालीन प्रवृत्तियों का प्रभाव रहा है। अमृतलाल नागर तो जोशी जी के पुरोधा मार्गदर्शक गुरू और प्रेरणा प्रदायक रहे है। पत्र सम्प्रेषण, प्रेस, रेडियो, टी.वी. वृत्तचित्र, फिल्म, विज्ञापन, सम्प्रेषण, कहानी, नाटक, उपन्यास, संस्मरण, फिचर फिल्म आदि समकालीन साहित्य का ऐसा माध्यम नहीं जिसके लिए उन्होंने सफलतापूर्वक लेखन कार्य न किया हो। खेलकूद से लेकर दर्शनशास्त्र तक ऐसा कोई विषयान्तर्गत साहित्यिक क्षेत्र नहीं जिस पर मनोहर श्याम जोशी ने कलम न चलायी हो।

शब्द कुंजी – समकालीन, साहित्यकार, मनोहर श्याम जोशी।

प्रस्तावना – मनोहर श्याम जोशी का लेखक संघ की गोष्ठियों में आने-जाने से उनका साहित्यिक दायरा बढ़ा। उनकी आरंभिक कहानियाँ 'प्रतीक' और 'हंस' जैसी पत्रिकाओं में छपीं। लखनऊ में ही वे अमृतलाल नागर के संपर्क में आए, जिनकी क़िस्सागोई से वे प्रभावित रहे। उन दिनों वे लखनऊ में यशपाल के यहाँ भी गोष्ठियों में आते-जाते थे। लखनऊ विश्वविद्यालय में ही अपने समकालीन कवियों रघुवीर सहाय और कुंवर नारायण के संपर्क में आए। रघुवीर सहाय से उनकी काफ़ी घनिष्ठता बाद में दिल्ली आकर हुई। रघुवीर सहाय से ही उन्हें आजीविका के लिए 'फ्रीलांसिंग' करने का सूत्र हाथ लगा। लखनऊ विश्वविद्यालय के उस दौर का काफ़ी प्रभाव जोशी जी के लेखन पर रहा है। इसकी सनद उनके उपन्यासों और संस्करण-साहित्य से दी जा सकती है।

सैंतालीस साल की उम्र तक कविताएँ और कहानियाँ लिखते रहने के बावजूद उनका बायोडाटा मूलत: पत्राकारितामय ही रहा। 1981 में उनका पहला उपन्यास छपकर आया 'कुरु-कुरु स्वाहा'। ज़बर्दस्त क़िस्सागोई, ट्रेजी-कॉमिक का चक्कर, खिलंदड़ी भाषा। उस उपन्यास ने उन्हें एक नई पहचान दी। अपने पहले उपन्यास से ही हिन्दी के अग्रणी उपन्यासकारों में उनका शुमार होने लगा। 1984 में दूसरे उपन्यास 'कसप' के प्रकाशन ने उनका दर्ज़ा और ऊँचा ही किया। दोनों ही उपन्यासों को हिन्दी के प्रमुख उपन्यासों में गिना जाता है।

1983 में एक और विधा में उन्होंने 'अभिव्यक्ति का खतरा' उठाया। भारतीय टेलीविजन के पहले सोप-ओपेरा 'हम लोग' के लेखक के रूप में उनका नाम भारतीय टेलीविजन के इतिहास में अमर हो गया। उसके बाद 'बुनियाद', 'मुंगेरीलाल के हसीन सपने', 'हमराही', 'कक्काजी कहिन', 'ज़मीन-आसमान', 'गाथा' जैसे धारावाहिकों के लेखक के रूप में उन्होंने लेखन की उस विधा का विस्तार ही किया। इस दौरान कई फ़ीचर फ़िल्मों का लेखन भी उन्होंने किया। टेलीविज़न-माध्यम को लोकप्रिय बनाने में उनके लेखन का कितना योगदान है, यह आज भी शोध का विषय बना हुआ है। 'बड़की', 'छुटकी', 'मास्टर हवेलीराम', 'लाजोजी', 'वृषभान', 'देवकी भौजाई', 'कक्काजी' जैसे पात्र घर-घर बस गए। इस लोकप्रिय-माध्यम में उन्होंने लेखक की पहचान पैदा की, उसका क़द बनाया। यह उम्मीद जगाई कि कम-से-कम एक 'लोकप्रिय' माध्यम ऐसा है, जो लेखक को अभिव्यक्ति का माकूल 'स्पेस' देता है।

टेलीविज़न-लेखन के लिए उन्हें दो बार 'अपट्रॉन अवॉर्ड' से नवाज़ा जा चुका है और एक बार 'ओनिडा पिनैकल लाइफ़टाइम अचीवमेंट अवॉर्ड' भी मिल चुका है। साहित्य में कुछ ख़ास ईनाम-इक़राम मिले नहीं, पर पाठकों का प्यार उन्हें भरपूर मिला है। हालाँकि मनोहर श्याम जोशी उस तरह के लेखकों की श्रेणी में आते हैं, जो अपने लेखन से कभी संतुष्ट नहीं रहे। उनका सूत्रवाक्य रहा है, 'मैंने अपनी अपेक्षाओं से कमतर लिखा।'

विश्लेषण – मनोहर श्याम जोशी के प्रेरणा स्रोतों में अमृतलाल नागर, सच्चितानन्द हीराचन्द वात्सायन 'अज्ञेय' का नाम आदर के साथ स्मरण किया जाता है। अन्य आत्मीय समकालीन साहित्यकारों में श्रीकान्त वर्मा, मोहन राकेश, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, सुरेश अवस्थी, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, शिवानी, हरिवंशराय बच्चन, नामवर सिंह, प्रभाकर माचवे, सुमित्रानन्दन पंत, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', शबाना आजमी, रामकुमार वर्मा, बाबा वैद्यनाथ मिश्र, नागार्जुन, गिरिजा कुमार माथुर, रामधारी सिंह 'दिनकर', फिल्मकार कमल हसन, कवि रघुवीर सहाय, राजेन्द्र यादव, अभिनेत्री रेखा, कन्हैयालाल नन्दन, अक्षय कुमार जैन, रामनिवास जाजू, नागेन्द्र, भवानी प्रसाद मिश्र प्रभृत समकालीन साहित्यकार एवं फिल्म संसार के हस्तियाँ उनके प्रमुख सहयोगी रहे हैं।

इन समग्र विद्वानों के फलस्वरूप मनोहर श्याम जोशी जी अमृतलाल नागर और अज्ञेय जी के आशीर्वाद को अपने साहित्य सृजन के लिए ऋणत्व भाव स्वीकार करते है। मैंने सदा निस्संकोच स्वीकार किया है कि मुझे कलम पकड़ना अमृतलाल नागर ने सिखाया और अतिरिक्त दीक्षा सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' से मिली।

अपने सहयोगी प्रेरकों में अर्नेस्ट हेमिंग्वे, जॉन स्टीनबेक, ई.एल. डॉक्ट्रो, सॉल बेलो, गोगोल दॉस्तोव्यस्की, टॉमस मान, काफ़्का, ग्राहम ग्रीन, गुंटर

*शोधार्थी (हिन्दी विभाग) अ.प्र. सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

ग्रास, बोर्खेज़, गाब्रियेल गार्सिया मार्केस, मारियो वर्गास ल्योसा, उम्बर्तो इको, डिलन थॉमस, टी.एस. इलियट। विदेशी साहित्यकारों की रचनाओं का जोशी पर प्रत्यक्ष, परोक्ष दोनों रूपों में प्रभाव देखा जाता है।

साहित्यगुरू अमृतलाल नागर तथा भगवतीचरण वर्मा के अनुरूप समकालीन सृजनात्मकता के परिवेश में मनोहर श्याम जोशी का अभिमत है कि 'यह मेरा सौभाग्य था कि मेरे साहित्यिक गुरू अमृतलाल जी नागर यानी आप दृश्य-श्रव्य स्मृति के धनी हो, की दृश्य-श्रव्य कल्पना अद्भुत थी। जब मैं लखनऊ में उनका चेला बना तब नागरजी सिनेमा जगत से साहित्य में लौटे थे।' नागरजी को पहला ड्राफ्ट बोलकर शिष्यों से लिखवाने की आदत थी। यद्यपि वह सिनेमा से विरक्त होकर आए थे और हम शिष्यों को पटकथा लेखन सिखाने से साफ इनकार करते थे तथापि पटकथा लेखन की शैली का उन पर इतना गहरा असर था कि उनके बोले हुए 'बूंद और समुद्र' को कागज पर उतारना गोया पटकथा लेखन के बुनियादी तत्वों से परिचित होना था। पात्रों, परिस्थितियों और घटनाओं का सजीव वर्णन, पात्रों की पृष्ठभूमि और मन:स्थिति के अनुसार संवाद, घटनाओं के माध्यम से चरित्र निरूपण और चरित्रों के घात-प्रतिघात से पैदा हुई घटनाएं-पटकथा के ये तमाम नुस्खे मुझे नागरजी की वृतांत शैली में मिले। भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में भी आप पटकथा का प्रभाव देख सकते हैं। वह भी बॉलीवुड में रह चुके थे।

ललित कलाओं के मामले में मेरी रूचि रघुवीर से थोड़ी भिन्न थी। वह शान्ति निकेतनी था और मैं आधुनिकताप्रिय। आकाशवाणी में अपनी ड्यूटी बजाकर हम दोनों अक्सर पैदल ही नई दिल्ली की सड़कें नापा करते थे। नई दिल्ली उस जमाने तक भी बेहद सुन्दर नगरी थी और उसमें चहलकदमी और बतकही करने का एक अपना ही आनन्द था और इस आनन्द के लिए हम दोनों के एक शब्द भी गढ़ा था- बांकी टॉकी।

कुछ ही समय बाद वात्स्यायन जी आकाशवाणी छोड़कर चले गये और रघुवीर को हिन्दी एकांश की नौकरी, जो उसे महज अंग्रेजी समाचारों का हिन्दी अनुवादक बन जाने के लिए अभिशप्त कर रही थी, बेहद खलने लगी। सुना जा रहा था कि सीधे हिन्दी में ही बुलेटिन तैयार करवाने की योजनाएं बन रही हैं लेकिन वह काम किसी उपसम्पादक को तो मिलने वाला था नहीं। वात्स्यायन जी के जाने के बाद प्रकाशन विभाग से हमारे मित्र प्रयाग नारायण त्रिपाठी इस काम के लिए सहायक सम्पादक के रूप में लाये जा चुके थे।

मनोहर श्याम जोशी बाबा नागार्जुन से प्रभावित होकर 'ट-टा प्रोफेसर', 'क्याप' जैसे आंचलित उपन्यासों की बह रही प्रबल धारा में अपना सबसे सशक्त अस्तित्व स्थिर रखते हुए आंचलिक (कुमाऊंनी) साहित्य का सृजन किए हैं। मनोहर श्याम जोशी ने प्रेरणा तो 'जादुई यथार्थवाद' से ली, लेकिन उसे अपने देश की परंपरा में खोजा। वैदिक साहित्य, पुराण, महाभारत में जादुई यथार्थवाद ही तो है। उनकी खोज का फल यह हुआ कि उनके उपन्यासों को देशज रूप मिल गया। द्विवेदी जी के उपन्यासों का रूप संस्कृत आख्यान परंपरा के मेल में है तो जोशी का औपन्यासिक रूप ठेठ देशज है। इसमें पुनर्जन्म, पूर्वदीप्ति, दिवास्वप्न, आत्मालाप, तिलस्म, मिथक, परीलोक सब कुछ है। आधुनिकबोध भी है और उत्तार-आधुनिकताबोध भी।

शिवप्रसाद सिंह की 'दादी-माँ' इस ढंग की पहली कहानी है। मार्कंडेय के 'गुलरा के बाबा' का जीवट बहुत कुछ रोमनी होकर भी अद्भुत है। इन सभी समकालीन साहित्यकारों के प्रभाव में जोशी जी थे।

इसी परम्परा को मौलिकता के साथ नयी चिन्तनधारा से जोड़ते हुए मनोहर श्याम जोशी ने कसप, कुरूकुरू स्वाहा, ट-टा प्रोफेसर, हमजाद तथा क्याप जैसी रचना का सृजन किया है।

निष्कर्ष - उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि, हर रचनाकार के जीवन में कभी ऐसा दौर आता है, जब वह अपना स्वर बिल्कुल सही-सही साध पाता है और उसकी पुकार तमाम तरह की सामाजिक गूंजों की नुमाइन्दगी तो करती ही है, स्वयं की सहृदय समाज में भी तमाम तरह की अनुगूंजें पैदा करा पाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. छवि संग्रह-7, जीवनी, कथन-मनोहर श्याम जोशी, महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र.
2. वही, पृष्ठ 7.
3. पटकथा लेखन - एक परिचय, पृष्ठ 12-13, मनोहर श्याम जोशी
4. रघुवीर सहाय : रचनाओं के बहाने एक स्मरण, पृष्ठ 53, मनोहर श्याम जोशी.
5. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास, पृष्ठ 488, डॉ. बच्चन सिंह.
6. वही, पृष्ठ 490.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

खरगोन जिलें में 'स्वास्थ्य सुविधाओं का वितरण' एक भौगोलिक अध्ययन

डॉ.आर.आर.आर्य *

शोध सारांश - किसी भी देश में स्वास्थ्य का अधिकार (आर्टिकल 47)नागरिकों का पहला बुनियादी अधिकार होता है। स्वस्थ नागरिक ही एक स्वस्थ व विकसित देश के निर्माण कारी तत्व होते है। हमारी तो सदियों से धारणा रही है कि 'पहला सुख निरोगी काया' परन्तु यह दुर्भाग्य पूर्ण है कि इस ओर आम नागरिक और शासन-प्रशासन सचेत नहीं है। हमारा देश स्वास्थ्य सेवाओं पर सकल घरेलू उत्पादन यानी जीडीपी को सबसे कम खर्च करने वाले देशों में शुमार है। भारत स्वास्थ्य सेवओं में जीडीपी का महज 1.3 प्रतिशत खर्च करता है। प्रदेशप्रदेश के कुल बजट का 2.5 प्रतिशत हिस्सा स्वास्थ्य सेवाओं पर व्यय होता है। राज्य में प्रति व्यक्ति 143.29 रूपये खर्च किये जाते है। इससे अंदाजा लगाया जा सकता है कि प्रदेश के जिलों को कितना बजट मिल पाता होगा। यही कारण है कि अध्ययन क्षेत्र में स्वास्थ्य सुविधाएं स्वयं उपचार के लिए मोहताज है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानकों के आधार पर जहां प्रति एक हजार जनसंख्या पर 01 डॉक्टर होना चाहिए। वहां भारत में 07 हजार की आबादी पर ,प्रदेश में 13 हजार जनसंख्या पर एक डॉक्टर तथा खरगोन जिले में प्रति 10 हजार आबादी पर औसतन 1 डॉक्टर उपलब्ध है। वही स्थिति अस्पतालों में उपलब्ध शैयाओं की है,जिले में प्रति हजार आबादी पर औसतन 4.78 बिस्तर उपलब्ध है। निजी अस्पतालों की संख्या निरन्तर बढ़ते जा रही है। इसके अतिरिक्त जिले में पोषण आहार एवं उचित पेयजल की भी कमी है,जिससे बच्चे और महिलाए कुपोषण के शिकार होते है,वहीं जिले में सिकलसेल की बीमारी भी निरन्तर फैलते जा रही है। नि:संदेह,अच्छी सेहत ही सबसे बड़ा खजाना है। सेहत को लेकर कोई भी असावधानी मृत्यु के करीब ले जा सकती है। इसलिए आम नागरिकों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता की भी आवश्यकता है। तथा शासन को भी इस ओर जवाबदेही लेनी चाहिए।

प्रस्तावना - वर्तमान समय में भूगोल भी उन विषयों के अन्तर्गत आता है,जिनमें रोगो का विस्तृत अध्ययन किया जाता है। यह सर्वविदित है कि, विश्व स्तर पर विभिन्न रोगों के क्षेत्रीय वितरण स्वरूप पर भौगोलिक पर्यावरण का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। रोगों के प्रकार एवं सघनता को जानने के लिए क्षेत्रीय अध्ययन काफी महत्वपूर्ण होता है और यही स्वास्थ्य भूगोल की मूल विषय-वस्तु है। इसे इस तरह से भी परिभाषित किया जा सकता है - यह वह अध्ययन है, जिसमें रोगों के साथ उनकी भौगोलिक संबद्धता और उन कारणों का भी पता लगोने की कोशिश की जाती है , जो रोगों के उद्‌भाव एवं फैलाव (विस्तार)के लिए उत्तरदायी है।

स्वास्थ्य सेवा, जिसे स्वास्थ्य संरचना (Health Infrastructure) भी कहते है, का अभिप्राय, स्थापित संस्थाओं की स्थायी देशव्यापी प्रणाली जैसे अस्पताल, स्वास्थ्य केन्द्र, उपकेन्द्र, स्वास्थ्य प्रयोगषालाएं, प्रषिक्षण और अनुसंधान संस्थाएं आदि से है। इन सभी का मुख्य उद्देश्य जनसंख्या की विभिन्न स्वास्थ्य आवश्यकताओं और मांगों की पूर्ति करना है और इस तरह से व्यक्ति और समुदाय को स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध कराना है।

स्वास्थ्य सुविधा, जो अब जन अधिकार माना जाता है , शासन का एक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व माना जाता है। इस सुविधा को सभी लोगों को बिना जाति, धर्म के भेदभाव के, शहरी और ग्रामीण, धनी या अमीर को उपलब्ध कराना शासन का उत्तरदायित्व है।

हमारे देश एवं प्रदेश में आर्थिक असमानता के कारण स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता में भी काफी विषमता है। निजी अस्पतालों की वजह से संपन्न लोगों को तो गुणवत्ता युक्त स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध हो जाती है, किन्तु गरीब एवं निर्धन लोगों के संबंध में यह स्थिति काफी चिंताजनक बनी हुई है। देश-प्रदेश एवं जिले में महिलाएं एवं बच्चे बड़ी संख्या में कुपोषण के शिकार है।

परिकल्पना - शिक्षा एवं स्वास्थ्य किसी भी देश के विकास का आधार है। प्रस्तुत शोध में अध्ययन क्षेत्र में उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाओं के वितरण का अध्ययन वर्तमान कोरोना वायरस के बढ़ते प्रकोप के कारण बिगड़ते हालात और समस्याओं के परीक्षण करने के सन्दर्भ में किया गया है। यह शोध पत्र इस दिशा में सहायक सिध्द होगा।

अध्ययन उद्देश्य :

1. अध्ययन क्षेत्र में उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाओं के वितरण का अध्ययन करना।
2. जिले के प्रमुख रोगों एवं भौगोलिक वातावरण का अध्ययन करना।
3. क्षेत्र में स्वास्थ्य जागरूकता का अध्ययन करना।

अध्ययन विधि - प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए द्वितीयक आंकड़ों का विश्लेषण, तालिका,मानचित्र तथा आरेख का उपयोग किया जाएगा,जिससे समस्या का विश्लेषण हर दृष्टिकोण से किया जा सकें। जिससे साधारण अध्ययनकर्ता भी आसानी से समझ सकें।

अध्ययन क्षेत्र - शोध अध्ययन हेतु मध्यप्रदेश के खरगोन जिले का चयन किया गया है। यह जिला मध्यप्रदेश की दक्षिणी-पष्चिमी सीमा पर स्थित है यह 21 डिग्री 22 मिनट से 22 डिग्री 33 मिनट उत्तरी अक्षांश तक तथा 75 डिग्री 19 मिनट पूर्वी देशांतर से 76 डिग्री 14 मिनट पूर्वी देशांश के मध्य स्थित है। जिले की कुल जनसंख्या 18,73,046 है,तथा क्षेत्रफल 6541.870 वर्ग किमी है। यह जिला औसत समुद्र तल से लगभग 283 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है।

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

शोध विश्लेषण एवं परिणाम – विकासशील देशों में आज भी स्वास्थ्य की दशा निम्न कोटि की है,अमुमन यही स्थिति प्रदेश के जनजातीय बाहुल्य जिलों की भी है। जिले की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या को उपयुक्त स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध नहीं है। यहां स्वास्थ्य सुविधाएं आमजन के पहुंच से दूर प्रतित होती है।

अल्मा आटा सम्मेलन (सन् 1977-78 कजाकिस्तान) में सन् 2000 तक सबके लिए स्वास्थ्य की आवश्यकता पर बल दिया गया था,स्वास्थ्य का ऐसा स्तर प्राप्त करना,जो प्रत्येक व्यक्ति को सामाजिक और आर्थिक रूप से उपयोगी जीवन व्यतीत करने के योग्य बना सके,के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए 'प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधा' को मुख्य आधार बनाने पर बल दिया गया था।

अल्मा आटा घोषणा के अनुसार प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधा में निम्नांकित घटकों का क्रियान्वयन समन्वित रूप से किया जाना चाहिए। ये घटक जिले में नदारद दिखायी देते है,जो निम्नलिखित है –

1. प्रचलित स्वास्थ्य समस्याओं और उनकी रोकथाम और नियंत्रण के उपायों के बारे में जनता को शिक्षित करना।
2. खाद्यपूर्ति और उपयुक्त पोषण को प्रोत्साहन।
3. सुरक्षित जल की पर्याप्त पूर्ति और बुनियादी स्वच्छता।
4. मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य सुविधा और परिवार नियोजन।
5. प्रमुख संक्रामक रोगो से प्रतिरक्षा।
6. स्थानिक रोगो की रोकथाम और नियंत्रण।
7. सामान्य रोगों और चोटों का उपयुक्त उपचार।
8. अत्यावश्यक औषधियों की उपलब्धता।

तालिका क्रमांक – 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1 का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि जिले में स्वास्थ्य सुरक्षा पूरी तरह भगवान भरोसे दिखाई देती है जिले की कुल जनसंख्या 18,73,046 में विकासखण्डवार प्रति 10 हजार व्यक्तियों पर शैयाओं का विश्लेषण किया गया है,जिसमें सबसे अधिक बड़वाह में प्रति 10 हजार व्यक्तियों पर केवल 3.91 शैयाएं उपलब्ध है,दूसरे क्रम पर सेगांव विकासखण्ड है,जहां पर 3.59 तथा तीसरे स्थान पर महेष्वर विकासखण्ड में 3.05 शैयाएं प्रति 10 हजार व्यक्तियों पर उपलब्ध है,जबकि सबसे कम कसरावद विकासखण्ड में प्रति 10 हजार व्यक्तियों पर 1.42 शैयाओं की व्यवस्था है। इन तथ्यों से स्पष्ट होता है कि स्वास्थ्य के सम्बंध में बहुत दयनीय स्थिति दिखाई देती है। जिसके संभावित कारणों में स्वास्थ्य जैसी महत्वपूर्ण सुविधाओं का कम बजट रखना,चिकित्सकों की भर्ती समय पर नहीं किया जाना,नये अस्पतालों की कमी तथा चिकित्सा महाविद्यालयों की कमी आदि है। वित्तीय वर्ष 2019-20 में प्रदेश सरकार ने कुल बजट में 2.5 प्रतिशत स्वास्थ्य विभाग के लिए रखे है,वहीं 143.29 रूप्ये प्रति व्यक्ति खर्च किये जाते है,जो बहुत ही न्यूनतम है। इससे कल्पना कर सकते है कि जिलों को कितना स्वास्थ्य बजट दिया जाता होगा।

वहीं प्रति 10 व्यक्तियों पर चिकित्सकों की संख्या का भी विश्लेषण किया गया है,इस क्षेत्र में भी गंभीर स्थिति दिखाई देती है। जिले में केवल दो विकासखण्डों जिसमें खरगोन में 3.71 तथा महेश्वर में 1.22 चिकित्सक प्रति 10 हजार व्यक्तियों पर सेवाएं दे रहे है,जो अत्यंत ही चिंता का विषय है। शेष 08 विकासखण्डों में प्रति 10 हजार जनसंख्या पर एक भी डॉक्टर उपलब्ध नहीं है। वर्तमान कोरोना महामारी में प्रशासन ने कैसे निपटा होगा कल्पना से परे है। संकट की इस घड़ी में चिकित्सकों को कवेल कोरोना वायरस की जांच में ही लगाया गया। सामान्य मरीजों का कोई उपचार ही नहीं किया गया। केवल गंभीर मरीजों का भी प्राथमिक उपचार किया गया अर्थात आपरेषन या आईसीयू सुविधाएं नहीं दी जा सकी।

इन समस्याओं का समाधान उचित स्वास्थ्य की देख-भाल,स्वास्थ्य जागरूकता और मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध करवाकर किया जा सकता है।

तालिका क्रमांक – 2 (अगले पृष्ठ पर देखे)

तालिका 2 में जिले मे उपलब्ध चिकित्सा सुविधाओं के वितरण का अध्ययन किया गया है। जिलें में विकासखण्ड मुख्यालयों पर 12 एलोपैथिक चिकित्सालय उपलब्ध है जबकि इन विकासखण्डों के गांवों एवं कस्बों में 54 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 364 उप स्वास्थ्य केन्द्र, 36 आयुर्वेदिक ,होम्योपैथिक और यूनानी अस्पताल है तथा 648 शैयाएं उपलब्ध है। जनसंख्या की दृष्टि से जिले के तीन बड़े विकासखण्ड क्रमशः बड़वाह, कसरावद एवं झिरन्या है,जहां दो लाख से अधिक जनसंख्या पायी जाती है। बड़वाह विकासखण्ड को छोड़कर इन शेष दो विकासखण्डों में अन्य विकासखण्डों की अपेक्षा स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी है,जबकि जनसंख्या अधिक पायी जाती है। इसी प्रकार 1 लाख से 2 लाख तक की जनसंख्या महेश्वर, भीकनगांव, खरगोन, गोगावां, तथा भगवानपुरा विकासखण्ड है। वहीं 1 लाख से कम जनसंख्या वाले दो विकासखण्ड सनावद और सेगांव है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि जिले में स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव है,जनसंख्या के अनुपात में सुविधाएं नगण्य है। जिसके कारण कई ग्रामीणों की असमय मृत्यु हो जाती है। एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि ये अस्पताल सम्पूर्ण सुविधाओं से सुसज्जित भी नहीं है। इन चिकित्सालयों में चिकित्सकों, लेब टैक्निशियन और नर्सिंग स्टॉफ की पूर्ण कमी है।

अध्ययन क्षेत्र के अस्पतालों में पर्याप्त बिस्तरों की व्यवस्था भी नहीं है। केवल जिला मुख्यालय पर 268 बिस्तर है, बड़वाह विकासखण्ड में 100 बिस्तर तथा महेश्वर 60 शैयाऐ उपलब्ध है। जबकि शेष अस्पतालों में 50 बिस्तर से भी कम है। इन तथ्यों से अनुमान लगाया जा सकता है कि इन्सान की कीमत पशु से भी कम प्रतित होती है।

स्वास्थ्य सुविधाओं के बजट में वृद्धिकर इन समस्याओं का समाधान निकाला जा सकता है,वहीं प्राचीन उपचार पध्दति को अपनाकर भी स्वास्थ्य सुविधाओं के दबाव को कम किया जा सकता है।

जिलें में पाये जाने वाले प्रमुख रोग – जिले के तीन विकासखणडों से गांव, भगवानपुरा और झिरन्या तहसील में सबसे अधिक आदिवासी जनसंख्या निवास करती है। ये तीनों विकासखण्ड सतपुड़ा पर्वत माला की तलहटी में स्थित है। यहां आज भी स्वास्थ्य के प्रति जागरूता का अभाव है,वहीं मूलभूत सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं है। ग्रामीण नदी-नालों से पेयजल लेने के लिए मजबूर है। परिणास्वरूप वर्षाकाल में हैजा और मलेरिया का विशेष प्रकोप रहता है, वहीं नवीन अध्ययनों में पाया गया कि इन तहसीलों में सिकलसेल्स की षिकायते बहुतायत में पायी गयी। इस क्षेत्र में डॉक्टर हितेश मुजाल्दे विगत 5 वर्षो से शोध कर रहे है। उनका अध्ययन कहता है कि इन तहसीलों के बच्चे एवं महिलाएं ज्यादातर ग्रसित है। वर्ष 2018-19 में भगवानपुरा तहसील के पीपलझोपा ग्राम में स्वास्थ्य शिविर आदिवासी समाज संगठन लगाया गया था,जिसमें 200 लोगों का स्वास्थ्य सिकल सेल परीक्षण किया गया जिसमें 70 मरीज सिकलसेल्स के पाएं गए जिसमें महिलाओ संख्या अधिक थी। इसी प्रकार सम्पूर्ण जिले में प्रमुख रूप से हैजा एवं मलेरिया की शिकायते अधिक पायी जाती है।

कुष्ठ रोग भी जिले की एक प्रमुख बीमारी है। स्वास्थ्य विभाग इस रोग

के रोकथाम में निरन्तर लगा हुआ है। पिछले पांच वर्षों में विभाग ने सर्वे कर आंकडें एकत्रित किए है,उसके अनुसार वर्ष 2015-16 में 388 कुष्ठ रोगी थे,जो वर्ष 2019-20 में बढ़कर 517 हो गये है।

आवश्यक सुझाव :

1. अध्ययन क्षेत्र में सिकल सेल्स की जांच एवं उपचार के लिए विषेष पैकेज दिया जाय।
2. स्वास्थ्य बजट पर्याप्त रखा जाय।
3. अस्पताल सर्वसुविधा सम्पन्न हो।
4. निजी अस्पतालों के शुल्क पर अंकुश लगाया जाय।
5. आमजन को मूलभूत सुविधाएं उपलब्ध करवाई जाय।
6. पर्यावरण संरक्षण की प्राथमिकता को कानून लागू किया जाय।
7. नये अस्पताल खोले जाय और चिकित्सकों एवं अन्य स्टॉफ की भर्ती की जाय।
8. अध्ययन क्षेत्र में सिकल सेल्स की जांच एवं उपचार के लिए विशेष पैकेज दिया जाय।

निष्कर्ष - विश्व स्वास्थ्य संगठन ने प्रति हजार व्यक्तियों पर एक डॉक्टर का प्रावधान किया है,लेकिन देश में प्रति सात हजार जनसंख्या पर एक डॉक्टर है,वहीं अध्ययन क्षेत्र में खरगोन एवं महेश्वर को छोड़कर प्रति 10 जनसंख्या पर एक भी डॉक्टर नहीं है। यह कितना दुर्भाग्य पूर्ण है। वही स्थिति अस्पतालों में उपलब्ध बिस्तरों की है। जबकि यहां दोनो ही उपचार के लिए महत्वपूर्ण संसाधन है। जिले में मुख्य रूप से मलेरिया और हैजा विषेषकर वर्षाकाल में फैलता है,अत: इसकी रोकथाम के लिए पर्याप्त संसाधन जुटाना स्वास्थ्य विभाग के लिए चुनौतिपूर्ण कार्य है। जनजातियों में फैलती सिकलसेल की बीमारी भी पैर पसार रही है,समय रहते इसकी रोकथाम नहीं की गई तो लाखों लोग असमय ही काल के गाल में समा जायेंगे।

हमारी प्राचीन अवधारणा रही है 'पहला सुख निरोगी काया' जब तक हम अपने स्वास्थ्य के प्रति गंभीर नहीं होंगे,शासन-प्रशासन अपनी जवाबदेही नहीं लेंगे तब तक स्वास्थ्य सुधार होना संभव नहीं होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. चौबे कैलाश (2001)- स्वास्थ्य/चिकित्सा भूगोल , 'पर्यावरण और स्वास्थ्य' मध्यप्रदेश ग्रन्थ अकादमी भोपाल,पृष्ठ क्रमांक 14
2. जिला सांख्यिकी पुस्तिका खरगोन वर्ष 2018-19।
3. पेट्ज,शमूएल एस,एट अल (2017)- जलवायु परिवर्तन और वैश्विक खाद्य प्रणाली: खाद्य सुरक्षा और अल्पोषण पर संभावित प्रभाव सार्वजनिक स्वास्थ्य के वार्षिक समीक्षा 38.1 259-277
4. Health Care website

तालिका क्रमांक - 01 : खरगोन जिलें में शैयाएं एवं चिकित्सक अनुपात 2018-2019

क्र.	विकास खण्ड	जनसंख्या	प्रति दस हजार व्यक्तियों शैयाओं की संख्या	प्रति दस हजार जनसंख्या पर चिकित्सकों की संख्या
1.	बड़वाह	14.87	3.91	0.67
2	महेश्वर	10.47	3.05	1.22
3	कसरावद	11.74	1.42	0.54
4	सेगांव	4.45	3.59	0.95
5	भीकनगांव	9.37	1.70	0.45
6	खरगोन	6.04	11.84	3.71
7	गोगांवा	6.00	2.66	0.80
8	भगवानपुरा	10.30	1.55	0.57
9	झिरन्या	10.77	1.48	0.29
		औसत	4.78	1.02

स्रोत -जिला सांख्यिकी पुस्तिका वर्ष - 2018-19

खरगोन जिलें में कुल जनसंख्या पर शैयाएं एवं चिकित्सक अनुपात 2018-2019

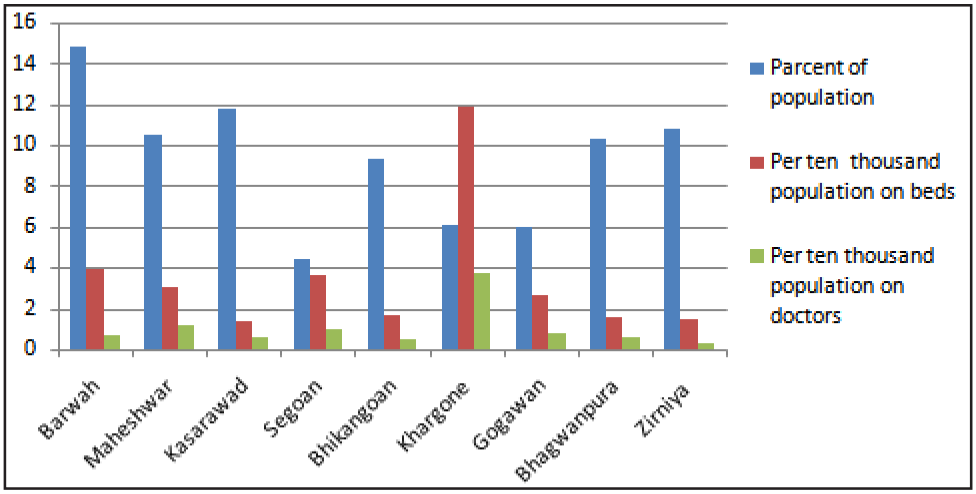

तालिका क्रमांक – 02 : जिला खरगोन – चिकित्सा सुविधाओं का वितरण 2018-19

क्र.	विकास खण्ड	जनसंख्या	एलोपैथिक चिकित्सालय /औषधालय	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	उप स्वास्थ्य केन्द्र	आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक, यूनानी	कुल सुविधाएं	उपलब्ध शैयाएं
1	बड़वाह	278531	2	11	56	04	73	100
2	सनावद	78713	1	00	00	00	01	40
3	महेश्वर	196278	2	11	41	06	60	60
4	कसरावद	219959	1	05	39	07	52	30
5	सेगांव	83487	1	02	22	02	27	30
6	भीकनगांव	175563	1	04	45	04	54	30
7	खरगोन	113162	1	07	30	05	43	268
8	गेगांवा	112458	1	06	28	03	38	30
9	भगवानपुरा	192996	1	05	52	03	61	30
10	झिरन्या	201756	1	03	51	02	57	30
	कुल		12	54	364	36	466	648

स्रोत -जिला सांख्यिकी पुस्तिका वर्ष - 2018-19

जिला खरगोन – कुल चिकित्सा सुविधाओं का वितरण

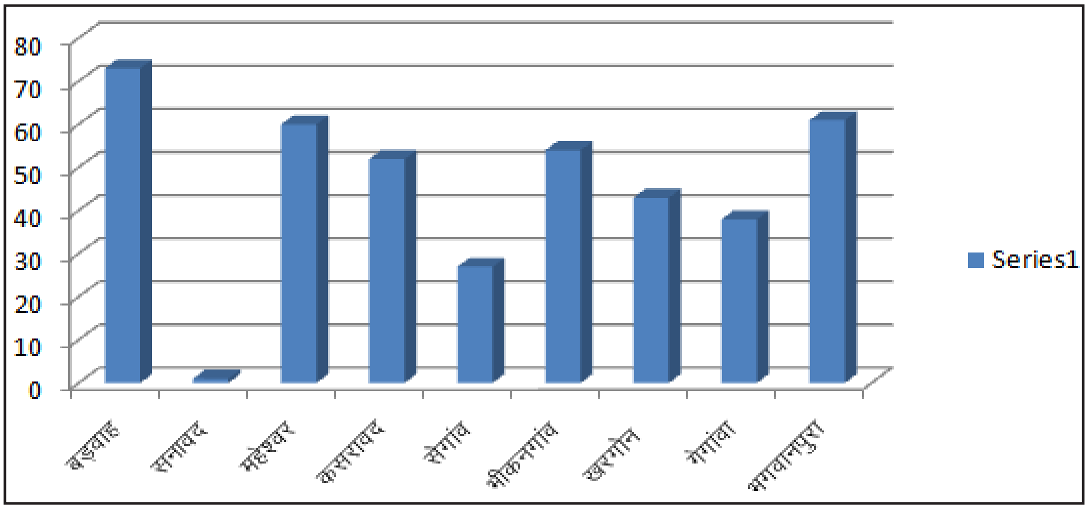

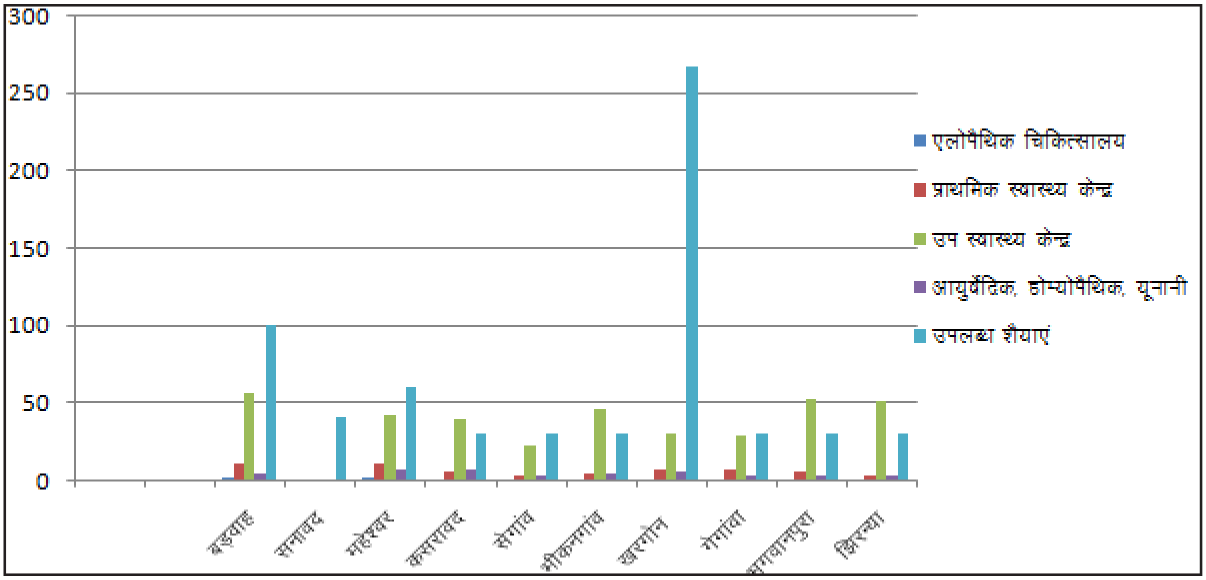

****

Impact of Patient's Chronic Disease on Spouse

Paridhi Bansal*

Abstract - The present study gives information about the impact of patient's illness on spouse. Marriage is one of the most important social institutions of our society especially in India and is considered to be a union for seven births. This is the most enduring relationship one has. This paper is based on cross sectional research conducted on the spouses of 100 patients having chronic diseases such as Parkinson's, Dystonia, Paralysis, Dementia and Muscular dystrophy. 20 families were studied for each of the diseases mentioned above in the city of Bhopal. The study is an descriptive study with a qualitative approach based on data collected through interview schedule method and observation method. Secondary data was collected from journals, books, newspapers etc. to gain wider perspective about the topic. Participants were selected through purposive sampling method.

The present study concluded that the chronic illness of patient affects the life partner of patient in various ways. In some cases relationships comes out stronger when they go through difficult times together but in most cases it was seen that patient illness caused negative impact on the spouse may it be physical or psychological. Therefore, it is needed that this condition should be carefully dealt with as patient is not the only one affected but the person caring for the patient suffers some major issues too.. A little chaos can disturb the equilibrium of the entire society. The present study has tried to suggest some relevant strategies and implications to address this issue.

Key words- Caregiver, Care giving burden ,Chronic diseases, Equilibrium, Family, Institution, Society, Spouse.

Introduction - Chronic disease is disease that persists over a long period of time According to a report of world health organisation about 20% of Indian population suffer from chronic diseases and out of which 7 percent of diseases are very severe and around 84% caregivers are family members and 76 % of them are spouses and rest are paid nurses and others.

A caregiver can be of any age or gender. According to a report in the Hindustan times that 64% women serve as major caregivers in Indian families compared to men. Usually, we neglect spouses perspective by overlooking at the pain of only the patient.When a person is diagnosed with chronic illness may it be spouses, children or parents entire family suffers. Yes, the disease affects the patient only but the effects of the disease are not limited to the patient. Spouses are majorly affected when a person is diagnosed with chronic diseases. Patients goes through various changes may it be physical or psychological and so does the spouse. Sometimes, they may come out stronger as a unit out of pain and sometimes the tie weakens or even breaks. Spouses being care givers have to adjust to the newly developed roles of caregiver such as handling work, kids, house hold chores and various other things. Marriage is an important social institution and especially in India It's a union for seven births so one can wonder how big this issue is.

Even in the best marriage spouses may feel alone, helpless, distressed, emotionless etc. Lack of intimacy is one such issue. Being humans we crave for love and when one can't find it they became frustrated and try to vent emotions in a unhealthy way. In India we believe love and marriage to be a sacred thing. People don't break things just because they are going south. It's often seen that people stay in unhappy relationships even if it's killing them or sometimes may go out for physical pleasure but may never accept it due to the stigma attached in our society unlike foreign countries. Intimacy is often not discussed or refrained from talking in our society as we are taught to keep quiet about certain things. Communication is also a big issue which widens the gap between couples. It's often seen that as the disease progress people tends to stop talking which makes them even more emotionally distant. Every coin has two sides, it should be noted that in some cases it was seen that people with long and happy marriages felt communication is not a big issue as they are aware of each other's choices. when care giving frustration rises spouses may turn to other things that may give them some moments of relief. Those things can be anything from music to social media to activities away from the patient. social media is today's weapon used by most people to vent emotions. Though this may cause even more damage to them and their personality. Sticking to mobiles can disrupt both mental and physical health or sometimes it may help in staying connected to the outside world as going out in such families is not a everyday thing. Entire life of care givers turns upside down. One can wonder how difficult it

*Research Scholar, Barkatullah University, Bhopal (M.P.) INDIA

might become to put you needs at bay and the needs of patient before anything else. The family systems theory is a theory introduced by Dr. Murray Bowen that suggests that individuals cannot be understood in isolation from one another, but rather as a part of their family, as the family is an emotional unit. It explains how much pain of one person can affect the life of another. Physical limitations, no shared activities make spouses emotionally distant and turn the role of spouse into a mere caretaker or caregiver. "

Research Methodology

Objectives - The study seeks to examine the reflection of patient's chronic diseases on his/her spouse. The study examines variables such as gender and care giving, communication adjustment to newly developed roles, bonding, social life, emotional changes, changing intimacy and its impact, etc. and seeks to find effective measures to combat this situation.

Review of Literature

1. J Rees (2001) studied "Quality of life: impact of chronic illness on the partner."The study concluded that life partners spend more time with patients as compared to other caregivers which makes their situation more difficult and effective measures are needed to control this situation.
2. Ravenson TA, Majerovitz SD (1991 **)** studied "the effects of chronic illness on the spouse-social resources as stress buffers."The study concluded that adaptation becomes very difficult in illness related stress. Spouses with greater networks suffered lesser depression than spouses with lesser social network.
3. E Eriksson (2019) studied "living with a spouse with chronic illness."The study concluded that care giving impacted both physical and psychological status of caregivers. Formal network were of bigger support than informal ones.

Research is a systematic process, which uses scientific methods to generate new knowledge that can be used to solve a query or improve on the existing system.

Definations:

Clifford Woody - Research comprises defining and redefining problems, formulating hypothesis or suggested solutions, collecting, organising and evaluating data; making deductions and reaching conclusions; and at last carefully testing the conclusion to determine whether they fit the formulating hypothesis.

Area Of The Study - The study is conducted in the city of Bhopal the capital city of the Indian state Madhya Pradesh and is also one of the greenest cities in India. It is the 16th largest city in India and 131st in the world.

Tools And Techniques Of Data Collection - As the research followed in most of the social sciences, the present study is based on both primary as well as secondary data. Primary data was collected with the help of Interview Method And Observation Method. Whereas, Secondary data was collected from books, journals, dissertations etc., related to the topic which have been mentioned in the references.

Source Of Data Collection, Research Design And Sampling Procedure - Research design proposed for the study is descriptive research design and the research process is based on conclusive and exploratory research as quantitative data is used to reach the results. This study is based on data collected from 100 families of patient's with various long term bedridden diseases such as Dementia, Parkinson's, Paralysis, Dystonia and Muscular dystrophy. 20families were interviewed with each disease mentioned above. For the purpose of collecting data ad information a sample of 100 families were taken from the city of Bhopal. The sampling used was random purposive sampling as the data was collected from various patients with chronic diseases scattered in the city of Bhopal. The results were then calculated from simple mean method based on the data analyzed in MS excel.

Case Study

Wife : Let's call her A

Husband : Let's 'call him B

"A" was diagnosed with Parkinson's disease in the year 2006. "B" has been the major caregiver of his wife since then. When B was asked about how life changed after the onset of A's disease, he told me how challenging it was to be a care giver. He expressed how constant care giving made him stressed, angry, and dissatisfied. When asked about how the relationship with his wife changed after her illness, he told how much he misses the support of his life partner now. The relationship changed from a beautiful love story full of romance and love to a mere responsibility. He told that he hardly talks about anything that is bothering him personally or professionally to his wife due to her worsening condition which makes him more distant. He feels emotionally distant from his wife and accepted that he at times wished for his wife's death which made him felt guilty too. He expressed that he finds more comfort in relationship in the outside world. He said he has no hope now and have accepted god's will. He have no social life now which make him more frustrated and sometimes makes him abuse his wife for such condition then realising her helplessness. Its a cycle of pain, frustration and guilt for him. It's a never ending journey of sorrow.

Analysis Of Primary Data And Results - Interviewees were asked certain questions and following data have been collected and then analysed through mean calculation method in Microsoft excel.

Table-1 : Did Your Spouses' Diagnosis Impacted Intimacy Or Do You Miss Physical Intimacy

S.	Answer	No.	%
1	YES	86	86%
2	NO	14	14%
	TOTAL	100	100%

Table 2 : Do You Seek Comfort In Outisde World For Physical Satisfaction Or Have You Ever Been Physically Attracted To Someone After Your Partner's Diagnosis

S.	Title	No.	%
1	YES	12	12%
2	NO	88	88%
	TOTAL	100	100%

Table 3 : Your Views On Others Creating Relations In Similar Conditions

S.	Answer	No.	%
1	I Mind	46	46%
2	I Don't Mind	54	54%
	Total	100	100%

Results and Findings:

1. Table 1 concluded that 86% spouses miss physical intimacy while others didn't experience any such thing.
2. Table 2concluded that 88 % people claimed that they never made any relations outside to fulfill physical or emotional needs while 12 % answered yes.
3. Table 3 concluded that 54 spouse felt that they find no wrong in establishing relations in the outside world while others didn't find it right thing to do.

Conclusion - It is evident from the research findings that the impact of chronic illness of the patient is very muchvisible on their spouses. Disease happens to one but its load is felt by many especially the spouses. Both positive and negative effects were observed but without any doubt negatives outweighed thepositives. Positives were some of the spouses felt their love grew in adversity and relationship cameout stronger, they starting valuing partner more etc. Negatives are as follows : lack ofcommunication, emotional distress, conflict intimacy issues, bonding , feeling more of a care giver less of spouse, frustration, clinging more to relations outside the family. Care givers experience both physical and mental distress from having care giving burden, no social life to any time for health. The Caregivers are trying to find ways to adjust in adverse situations without breaking down.

So, it can be concluded that need of the hour is to take a step in finding solutions for such families as they belong to our society and with the increasing percentage of such chronic conditions, entire working of the society can be disturbed. It is necessary to take steps to combat this situation before we lose our grip on it. Proper awareness, counseling, therapies and various other efforts can bring about a positive change. **ALL IT TAKES TO GET STARTED IS TO TAKE A STEP.**

Suggestions:

1. Relationships suffer when there is no communication so, it's needed to communicate effectively with the spouse as well as other family members or friends to vent painful emotions.
2. Counseling at personal as well as marital level should be focused. Watch for depression. Sadness is okay but not depression.
3. Do not isolate, find a support group. If one can't go out friends and relatives can be invited to home according to the patient's condition. Find activities to vent stress out. If there is no time then go for online support groups, a little joy can be very helpful in difficult times. Join activities as per the time you have. Activities can be anything that sooths your mind for a while.
4. If you are unable to handle care giving ask for help. You are not needed to do things all by your own. Acknowledge the fact that relationships can't go back to normal but can be modified according to the circumstances.
5. Responsibilities should be divided properly within the family so that spouse does not have to bear the full load.
6. Awareness about diseases and mental illness should be increased as sometimes due to lack of information people get stuck in a dark place for their entire life.
7. Regular health check ups of patient's care givers are must as they go through extreme mental and physical pain.
8. Better technology can be of big help to the care givers. for example, IIT Madras students designed standing wheelchair to ease lifting burden for the caregivers.

References :-

1. Anderson, M . (1975) , Sociology Of The Family ; Penguin Books , London.
2. Allan, G . (1979) , Friendship And Kinship ; Allen & Unwin, New York.
3. Ahuja , R . (2000) , Criminology ; Rawat Publications, New Delhi.
4. Allen , J . (1903) , As A Man Thin keth ; Koncept Books, Dehradun.
5. Denholm, D .B . (2012) , The Care giving Wife's Handbook; Hunter House Publishers , California.
6. Eiser . K . (2018 , Jan 2) Effects Of Chronic Illness On Children And Families . Retrieved On march 4 , 2019 From https://www.cambridge.org/core/journals/advances-in-psychiatric-treatment/article/effects-of-chronic-illness-on-children-and-their-families/1276067FDB82FEA0240DD6A311C44931.
7. Lewis, FM . (1990), Strengthening family supports : cancer and the family ; Oxford Publications, Oxford.
8. Sheehy, G . (2010) , Passage Of Care giving; William Morrow, Texas
9. Robb, k . (2017 , jan 4) . In Sickness and in Health : Intimacy & Parkinson's. Retrieved On Feb 4th , 2019 From https://www.parkinson.org/Living-with-Parkinsons/Managing-Parkinsons/Advice-for-the-Newly-Diagnosed/In-Sickness-and-In-Health-Intimacy-and-Parkinsons.

****

मध्यप्रदेश में जनजातीयों का सामाजिक एवं आर्थिक विकास - एक अध्ययन

प्रो.श्रीमती प्रीति चौरे *

शोध सारांश – किसी भी समाज की उन्नति तभी हो सकती है जब वह समाज सामाजिक एवं आर्थिक विकास हो इसके लिए उसे डॉ. अम्बेडकर के कथन अनुसार 'यह अनुभव से सिद्ध है अधिकार का संरक्षण कानून से नही हो सकता बल्कि समाज की नैतिक चेतना से होता है।'

शब्द कुंजी – मूल जनजाति, सामाजिक, आर्थिक।

प्रस्तावना – मनुस्मृति में राज्य दर्शन को प्रतिपादित किया गया है लेकिन राज्य दर्शन की तुलना मे भी मनुस्मृति को अपनी सामाजिक व्यवस्था के लिए अधिक ख्याति प्राप्त है मनुस्मृति में सामाजिक संगठन के सिद्धांतों विभिन्न वर्णो के कर्तव्यों तथा सामाजिक, व्यवस्था के संदर्भ में राज्य के दायित्वों, आदि की विस्तार के साथ विवेचना की गई है। मनुस्मृति में वर्णित सामाजिक व्यवस्था के दो प्रमुख अंग है -वर्ण व्यवस्था और आश्रम व्यवस्था मनुस्मृति में इस बात पर अधिक बल दिया गया है कि वर्ण व्यवस्था और आश्रम व्यवस्था के अनुसार जीवन व्यतीत करने पर ही जीवन के लक्ष्य धर्म,अर्थ,कर्म और मोक्ष की सिद्धि सम्भव है। मनु ने धर्म और कर्म के आधार पर समाज को चार वर्गो में बॉटा है और इन चार वर्गो को वर्ण का नाम दिया है जिसमें ब्राहम्ण,क्षत्रिय,वैश्य,शुद्र है।

भारत की 407 मिलियन जनसंख्या में से 66.29 प्रतिशत मिलियन अनुसूचित जाति समुदाय की है जो ग्रामीण वर्ग की एक अच्छी प्रतिशतता है सामाजिक व्यवस्था में निम्न स्थान पाने के कारण युगों युगों से अस्पृष्यता ष्षोपण की शिकार रही है।अनुसूचित समुदाय के भी कुछ समुदाय ऐसे भी है जिन्हें मुख्य समुदाय कहा जाता है जैसे मेहतर,भंगी, चमार,होचला, मरिगा, माला आदि जाति ये सब अनुसचित जाति की आबादी का एक बडा भाग है और ये हर गॉव कस्बे में पाये जाते है उदाहरण के लिये भंगी और चमार ही देष की कुल अनुसूचितजाति की संख्या का अछूत होने की परंम्परा का 30 प्रतिशत भाग है और शुरू से ही अस्वच्छ व्यवसाय और तुच्छ कार्यो से जुडे माने जाते है ।

भारतीय दर्शन– स्वामी विवेकानंद दलित के लिये सबसे प्रबल उद्‌भावकों में थे और उन्होनें अपने दलित दर्शन से स्वतंत्र भारत की दलित नीति की आधारशिला रख दी थी उन्होनें धर्म आध्यात्मिकता,पूर्व-पश्चिम मिलन,ज्ञान विज्ञान आदि के समान ही दलित समाज को भी जड़ और पाखंडी पुरातनता से मुक्त कर नया रूप देने के लिए पुरे राष्ट्र को ललकार रहे थे। स्वामी विवेकानंद जैसे जाति भेद को जोडने एवं मनुष्य मात्र की समानता का संसार ही लेकर पैदा हुए थे। वे विराट जनसमूह के नवभारत को जनक मानते थे उनका विश्वास था कि आने वाला समय दलितों का होगा।

सामाजिक भागीदारी – भारतीय समाज में दलित का अपना अलग ही महत्व है वे अपनी आजादी के लिये हमेशा ही संधर्षरत रहे है। दलित विकास के लिये भारतीय संविधान की अनुसूचि की धारा 320 में दलितों के विकास के लिये प्रावधान किया गया है के वे भी मुख्यधारा में आये और अपना विकास करे। इसके लिये डॉ भीमराव अम्बेडकर ने दलित विकास के लिये अनेक प्रयास किये जिसके परिणाम स्वरूप आज दलित अपने अस्तित्व को पहचान रहे है। डॉ अम्बेडकरवाद को दलित विमर्श का वैचारिक आधार बताते हूए दो टूक शब्दों में कहा कि अम्बेडकर का बौद्धधर्म स्वीकार करना काई भूल नही थी बल्की दलितों को सत्ता में भागीदारी के लिये सुविचारित ढंग से उठाया गया एक राजनैतिक कदम था ।

महात्मा ज्योति बा फुले एक सामाजिक सुधार के रूप में जाने जाते है वे महिलाओं के शिक्षित होने के पक्ष थे ओर वे राजनीति में दलित को समान अधिकार दिलाने के लिये प्रयासरत रहते थे फुले स्वयं नगरपालिका के सदस्य के रूप के काम कर चुके थे इसलिये वे चाहते थे कि दलितों को भी राजनीति में सहभागी बनाया जाय।

संवैधानिक व्यवस्था– 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्र हुआ और 26 जनवरी 1950 को यह एक गणतंत्र देश बना। स्वतंत्र भारत का संविधान सभा द्वारा निर्मित संविधान 26 जनवरी 1950 को लागु हुआ जिसकी प्रस्तावना में भारत को 'सर्वप्रभुता सम्पन्न,समाजवादी,धर्मनिरपेक्ष,लोकतंत्रातिक गणराज्य' घोपित किया गया है। सर्वव्यापी वयस्क मताधिकार पर आधारित लोकतंत्रिक शासन प्रणाली को भारत में अपनाया गया। संविधान के भाग 3 में नागरिको को कतिपय मूल अधिकार प्रदान किये है जिनका उद्देश्य नागरिकों के आत्म विश्वास का मार्ग प्रशस्त करना है व्यवहार में भी नागरिक इन मूलभूत स्वतंत्रताओं तथा अधिकारों का उपयोग करते रहे है। इन अधिकारों का किसी प्रकार से दुरूपयोग न हो इसकी देखरेख करने के लिये सर्वोच्च न्यायालय ने भी सक्रिय भूमिका निभाही है।

भारत में लोकतंत्र स्थिापित करने का एक ही मार्ग है और वह है संविधान के बनाए रास्ते पर चलते हूए हर व्यक्ति,समूह एवं संगठन उसे अपना व्यक्तिगत,सामूहिक व सांगठनिक घोपणा पत्र स्वीकार कर संविधान की सर्वोच्चता को स्वीकार करके ही नागरिक समाज का निमार्ण किया जा सकता है और बहुसंख्यक अपनी पिछड़ी सामाजिक,आर्थिक एवं शैक्षणिक पृष्ठभूमि के कारण अपने अधिकारों के प्रति जागरूक नही है उन्हें प्रात करने का प्रयास नही करते हैं तो इन परिस्थितियों में नागरिक समाज का निमार्ण नही

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) श्री नीलकंठेश्वर शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,खण्डवा (म.प्र.) भारत

हो सकता है। नागरिक समाज का लोकतंत्र की बुनियाद है जिसमें सभी व्यक्तियों को अपने व्यक्तित्व के विकास करने का समान अवसर उपलब्ध हों।

जातिगत व्यवस्था– भारतीय संदर्भ में जाति व्यवस्था के कारण कई तरह की विकृति समाज की व्यवस्थापन पद्धति में दिखाई देती है। स्वतंत्रता के बाद शिक्षा व्यवस्था सुधार, रोजगार की उपस्थिति व महात्मा गॉधी के विचारो के प्रासंगिता एवं डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने संविधान में जगह देने के कारण आज हमारे समाज में दलित व्यवस्था में काफी सुधार है। महात्मा गॉधी के हरिजन रूपी दलितो की उत्तरोतर वृद्धि के लिये जहॉ सरकार ने कई व्यवस्था की है। वही दूसरी ओर भारत में शिक्षा के विस्तार व जागरूगता के फैलाव के कारण भारतीय समाज में समरसता आई है।

अनुसूचित जातियॉ युगो –युगो से विभिन्न प्रकार के समाजिक भेदभाव और आर्थिक वंचनो के अधिन रही है। संविधान निमार्ताओं ने निवार्चन, निकायों सार्वजिनक सेवा ओर शैक्षणिक पाठ्यक्रमों मे आरक्षण की नीति के तहत उन्हे शासन मे उनका न्यायोचित हिस्सा देकर सामाजिक और आर्थिक शोषण के विरूध उन्हें संरक्षण देकर तथा उनके सामाजिक और आर्थिक विकास में तेजी लाने के लिये अधिक और विशिष्ट वित्तिय आबटन की व्यवस्था करके उन्हे राष्ट्र की मुख्य धारा में शामिल करने के योग्य बनाया है।

संविधान के अनुच्छेद 46 के संदर्भ में यदि हम बात करे तो समाज के निर्बल वर्ग में विशेष रूप से अनुसूचित जनजातीयॉ सदियों से ही देश की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था में सबसे निचले स्तर पर जीवनयापन करने के लिये मजबुर रही है। इनकी आर्थिक प्रगति के चरण विभिन्न रहे है। अत: इनकी स्थिति के अनुसार कार्यक्रम तय करना अनिवार्य समझा गया और राष्ट्रीय कार्यक्रम की मान्यता दी गई है – विभिन्न मूल्यांकन रिपोर्टो से एवं अनुसूचित जनजातीयों के संदर्भ में किये गये अध्ययनों से ज्ञात होता है कि जनजातीयों के विकास के मार्ग में बहुत सी रूकावटें या बाधाऍ है–

1. जनजातीय वर्ग अपनी पुरानी संस्कुति को छोड नही पाते है और न ही नवीनता को ग्रहण कर पाते है।
2. जनजातीय क्षेत्र में कार्य करने वाले लगनशील कार्यकर्ताओं का अभाव है या जो है भी उनमें उचित प्रेरणा की कमी है।
3. जनजातीयों मे जागरूकता की कमी है।
4. जनजातीय रूढीवादी परम्परा के साथ जीवन का निर्वाह करना।
5. शिक्षा सामाजिक परिवर्तन एवं विकास का एक महत्वपूर्ण कारण है जिसकी जनजातीयों में कमी है।
6. जनजातीयों की परम्परागत कठोरता ,पारिवारिक दुर्बलता,उदासीनता अंधविश्वास अंदूरदर्शिता उनके विकास में बधाक है।
7. सामाजिक तानाबाने के कारण जनजातीय वर्ग आगे बढने में संकोच करता है।
8. वह अपने सामाजिक दायरे मे रहकर विकास की सोचता है आज के आधुनिक युग में उसे उसी रफ्तार से आगे बढना होगा।

निष्कर्ष– कोई भी जनजाति हो, माना जाता है कि जनजाति समाज रूढ़ीवादी होता है और किसी भी प्रकार के नवीन परिवर्तन और साधनों को आसानी से स्वीकार नहीं करता। इनके संरक्षण के लिए संविधान में व्यवस्था होने के साथ ही देश और प्रदेश की राज्य सरकारों ने इनकी प्राचीन संस्कृति को सहेजने के साथ ही उन्हें मुख्य धारा में जोड़ने के लिए जो प्रयास किए है उससे जनजातियों में भी अब जागरूकता आयी है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कटारसिंह 2013 ग्रामीण विकास सिद्धातं नीतियॉ एवं प्रबंध
2. शुक्ला नरेन्द्र 2001 क्षेत्रीय विषमता ओर सामाजिक आर्थिक विकास
3. बंसत निरगुणे 1997 लोक संस्कृति
4. श्यामाचरण दुबे 2010 विकास का समाज शास्त्र
5. रामाचरण शर्मा1995 आर्य सस्कृति की खोज
6. डॉ रामगोपल सिंह2000 भारतीय समाज एवं संस्कृति पत्रिका 15,22,29 अक्टू.13

****

प्रेमचन्द की सामाजिक विचारधारा

शिप्रा वर्मा *

शोध सारांश – समाजिक विचारधारा का प्रार्दुभाव सामाजिक अनुभवों पर आधारित होता है। यह विचारधारा एक चिंतक के दृष्टिकोण को भी दर्शाती है। इसी विचारधारा से सामाजिक चेतना का भी उदय होता है। भारतीय परम्परा तथा संस्कृति की पृष्ठभूमि में जिन सामाजिक चिंतको का नाम लिया जा सकता है उनमें प्रेमचन्द बहुत महत्वपूर्ण हैं। सामाजिक यथार्थ का सटीक वर्णन उनकी लेखनी में मिलता है। कलम के इस सच्चे सिपाही ने सामाजिक विसंगतियों को बखूबी उकेरा है। इस प्रकार समाज की समस्यायों को निवारणार्थ एक चिंतक के दृष्टिकोण से व्यक्त विचारधारा सामाजिक विचारधारा कहलाती है।

प्रस्तावना – प्रेमचन्द के सामाजिक विचार उनकी विविध कहानियों, उपन्यासों आदि के माध्यम से हमारे सम्मुख आते हैं। वे भारतीय समाज के जागरूक साहित्यकार थे । प्रेमचन्द्र के विचार उनके विभिन्न भाषणों, वार्ताओं के माध्यम से भी व्यक्त हुये हैं। उनके पात्रों के संवाद स्वयं उनके निजी विचारों को दशर्ति हैं।

क. प्रेमचन्द के नैतिक सिद्धांत – प्रेमचन्द गांधी जी के अहिंसा के सिद्धांत से प्रभावित थे। अहिंसा और विश्व बन्धुत्व को भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र मानते थे। अहिंसा का अर्थ वे मन, वचन एवं कर्म के विस्तृत रूप में मानते थे– 'हिंसा का भूत हमारे सिर पर सवार हुआ और हमारा सर्वनाश हुआ। केवल मौखिक अहिंसा से काम नही चल सकता। हमें मनसा, वाचा, कर्मण अहिंसा का अनुयायी होना पडेगा।'1 प्रेमचन्द अहिंसा को इसी क्रियाशक्ति के रूप में स्वीकार करते हैं। अत: नई सभ्यता की अपेक्षा उस प्राचीन सभ्यता के अच्छे गुणों को व्यवस्थित जीवन के लिए अपनाना अनिवार्य है। नैतिक सिद्धांतों की श्रृखला में ही सत्य की विचारधारा को भी महत्वपूर्ण बताया है। सत्य को सर्वश्रेष्ठ धर्म माना गया है प्रेमचन्द का मानना है 'धर्म का रहस्य जानने वाले लोग सत्य को ही सर्वश्रेष्ठ धर्म बताते हैं। सत्य ही परमपद ब्रह्म है। सत्य पर ही धर्म टिका हुआ है। सत्य ही नित्य वेदराशि है और सत्य से ही परम ब्रह्म की प्राप्ति होती है।' 2 प्रेमचन्द सत्य के इस धर्म को समाज के हित में देखते हैं। इसी कड़ी में प्रेमचन्द शांति का भी सर्मथन करते हैं। शांति के द्धारा ही विश्व प्रेम की भावना प्रबल हो सकती है। उनका विश्वास है 'हम प्रेमी हैं प्रेम करते हैं– समूचे विश्व से। हमने विश्व शांति का डंका पीट दिया हैं देखो कैसे विश्व शांति नही होती पर प्रेम सच्चा हो डंके में चोट हो।' 3 प्रेमचन्द शांति नीति को सफलता का मंत्र मानते हैं।

स्वदेशी के सम्बंध में प्रेमचन्द की धरणा नितांत स्पष्ट है स्वदेशी आंदोलन की सफलता के लिए वे शिक्षित तथा सभ्य लोगों को लाने हेतु प्रयासरत रहे। उनका विचार था 'मन से, वचन से, कर्म से स्वदेशी हो जाना एक कच्चा धागा भी विलायती न खरीदना यही एक महामंत्र है।'4 उनके अनुसार यही विकास का मूलमंत्र है।

ख. वर्ण व्यवस्था की अवधारणा – प्रेमचन्द समानता के सर्मथक रहे हैं। समाज में सभी समान रूप से उत्पन्न होते हैं अत: सभी को समान अधिकार मिलने चाहिए। भारतीय वर्ण व्यवस्था में असामाजिकता को ब्राह्मणवाद ने अधिक बढ़ावा दिया। यह वर्ग समाज में अंधविश्वास के आधार पर जनता को शोषित करता रहा है। उनके अनुसार ब्राह्मण का आदर्श त्याग तथा सेवा है। 'ब्राह्मण का मेरा आदर्श सेवा और त्याग है। पाखंड और कटुता और सीधे–सीधे हिंदू समाज के अंधविश्वास का फायदा उठाना उनका धंधा है और इसलिए मैं उन्हे समाज का एक अभिशाप समझता हूँ।'5 अस्पृश्यता समाज में भिन्नता पर आधारित वह व्यवस्था है जिससे समाज में द्धेष, घृणा का वातावरण बनता है। प्रेमचन्द की लेखनी इन निर्बल, गरीब वर्ण की दशा को बखूबी दर्शाती है। उस समय का वतावरण शोषण के चरम पर था। पशुबल के आधार पर दूसरों के अधिकारों का अपहरण निश्चित ही सामाजिक पतन की स्थिति है। प्रेमचन्द मानते हैं 'बड़प्पन दूसरों को नीच समझने में नहीं अपितु सज्जनता और शिष्टता में है।'6 प्रेमचन्द का यह दृढ विश्वास है कि अस्पृश्यता की भावना जब तक हिन्दू समाज से विदा नहीं होती तब तक समाज का उद्धार नहीं हो सकता।

ग. शिक्षा सम्बंधी अवधारणा – प्रेमचन्द के अनुसार वह शिक्षा व्यर्थ है जो सामाजिक चेतना को जागृत न कर सके। वे ऐसी शिक्षा प्रणाली के सर्मथक नहीं है जो व्यक्ति को आत्मसेवी, स्वार्थी या अभिमानी बनाती है। शिक्षा वह है जो सहयोग एवं विश्वास का वातावरण निर्मित कर सके–'मेरा आशय उस शिक्षा से है जो सर्वांग पूर्ण हो जिसमें मन, बुद्धि, चरित्र और देह सभी के विकास का अवसर मिले, वह शिक्षा जो सिर्फ अक्ल तक सीमित रह जाये अधूरी है।' 7

घ. नारी विषयक अवधारणा – यदि किसी राष्ट्र का स्तर जानना है तो वहाँ नारी की स्थिति ज्ञात कर लेनी चाहिए। नारी की स्थिति ही वह धुरी है जिसके चारों ओर समाज का स्तर घूमता है। वैदिक युग की नारी पूजित थी। बाद के समय में धीरे–धीरे नारी पर कई पाबंदिया लगायी जाने लगी। प्रेमचन्द ने अपनी रचनाओं में शहरी और ग्रामीण दोनों स्त्रियों का यथार्थ चित्रण किया है। प्राचीन संस्कृति जो नारी को जकड़ कर रखती है उसका खण्डन करते हुये वे नवीन विचारों को प्रमुखता देते हैं। नारी के वैवाहिक जीवन की विड़म्बनाओं पर भी उन्होने कटाक्ष किया है। कन्या विवाह, विधवाओं की समस्या की सामाजिक कुरीतियों को उन्होने खारिज किया है। दहेज प्रथा ने भारतीय विवाह पद्धति को आर्थिक प्रश्न बना दिया है। प्रेमचन्द ने जब शादी की वजह ढूढने के लिए कुछ साक्षात्कार किये तो यह ज्ञात हुआ कि

*असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी) डॉ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, अनौगी, कन्नौज (उ.प्र.) भारत

कई युवक तथा अभिभावक विवाह की आधारशिला सौदेवाजी ही मानते हैं। स्त्री केवल इतना ही विचार रख सकती है 'वह रूपवती है, गुणशील है, चतुर है, कुलीन है तो हुआ करे, दहेज हो तो सारे गुण दोष हैं।'8 प्रेमचन्द ने सामाजिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री के विविध चित्रों को प्रस्तुत किया है।

ड. महाजनी सभ्यता की अवधारणा – प्रेमचन्द का युग ऐसा था जब देश एक तरफ अंग्रेजी दासता से बद्ध था और दूसरी ओर महाजनी व्यवस्था ने गरीब किसान वर्ग को आक्रान्त कर रखा था। जमीदारों के रूप में एक निर्मम वर्ग तैयार हो रहा था जो किसानों पर अत्याचार करता था। शोषण का दूसरा रूप पूँजीपति वर्ग के रूप में था जिसका मूल उद्देश्य धनलिप्सा वृत्ति थी। जमींदारों के निरन्तर शोषण से त्रस्त होकर किसान जब शहर पहुँचता था तो पूँजीपति वर्ग उसके शोषण के लिए तत्पर रहता था शोषक वर्ग द्वारा शोषित वर्ग के दर्द के विषय में वे कहते हैं 'समाज का संगठन आदि काल से आर्थिक भित्ति पर होता चला आ रहा है। मनुष्य को क्रितदास बनाकर उसकी मानसिक, आत्मिक और दैहिक शक्ति का अपहरण कर लिया जाता है। सम्पत्ति के लिए ही व्यक्ति गेरूए वस्त्र धारण कर लेता है घी में आलू तथा दूध में पानी मिलाता है।'9 प्रेमचन्द देश में बढते पूँजीवाद का विरोध करते हैं। उन्होने इस दूषित व्यवस्था को नष्ट करने हेतु साहित्य में इसके चित्र प्रस्तुत किये हैं।

ढ. प्रेमचन्द की समाजवादी अवधारणा – प्रेमचन्द समाजवाद की पहली सीढी साम्यवाद को मानते हैं। उनकी समाजवादी व्यवस्था वह है जहाँ संघर्ष वर्ग भेद तथा वैयक्तिक सम्पत्ति को कोई महत्व नहीं दिया जाता। वे उस नीति का सर्मथन करते हैं जिसमें यह कहा गया था 'भारत के गरीब से गरीब आदमी को भी दैहिक तथा मानसिक भोजन और समान अवसर मिले।'10 प्रेमचन्द अपने सामाजिक दृष्टिकोण में निधनों के पक्ष का समर्थन करते हुए पूँजीवाद का विरोध करते दिखायी देते हैं। प्रेमचन्द भारत में अभाव का साम्राज्य देख रहे थे तो निश्चय ही उनके मन में एक सुखद समाज का विचार था।

इस प्रकार प्रेमचन्द की समाज के प्रति विभिन्न स्तरों पर धारणा को स्पष्ट करते हुये उनके सामाजिक विचारों का विश्लेषण किया गया है। उनके विचार मानवतावाद से प्रेरित है। वे एक ऐसे विचारक थे जिनके पास अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व था। प्रेमचन्द ने बार-बार इस तथ्य पर बल दिया है कि जब तक समाज की व्यवस्था झूठ और आडम्बर पर चलेगी समाज की व्यवस्था में वर्ग भेद बना रहेगा। इसी कारण वे व्यवस्था को नष्ट करने हेतु निरन्तर प्रयत्नशील रहे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. विविध प्रसंग भाग-3 पृ0 79
2. प्रो0 रवीन्द्रनाथ मुखर्जी : सामाजिक विचारधारा पृ0 73
3. विविध प्रसंग अमृतलाल नागर भाग-2 पृ0 297
4. विविध प्रसंग अमृतलाल नागर भाग-3 पृ0 169
5. संम्पादन-अमृतराय : चिट्ठी पत्री भाग-1 पृ0 88
6. विविध प्रसंग अमृतलाल नागर भाग-2 पृ0 469
7. कुछ विचार, प्रेमचन्द, पृ0 71-72
8. निर्मला : प्रेमचन्द, पृ0 55
9. विविध प्रसंग भाग-2 पृ0 334
10. वही, पृ0 200

****

भारतीय ग्रामीण एंव नगरीय जातिगत संस्तरण मे परिवर्तन

डॉ. ऋतु श्रीवास्तव*

प्रस्तावना – प्रत्येक समाजिक व्यवस्था चाहे वह ग्रामीण हो या नगरीय, संस्तरण पर आधारित होती है अर्थात् प्रत्येक समाज के लोगो की समाजिक स्थिति श्रेष्ठता और भिन्नता पर आधारित है। लोग किसी से श्रेष्ठ और किसी से निम्न होते है। इस समाजिक संस्तरण के अर्न्तगत लोगो के कार्य उनकी समाजिक भूमिकाये तथा दूसरो की तुलना मे उनकी समाजिक स्थिति निर्धारित कर दी जाती है। इसके कारण लोग विभिन्न भागो मे बट जाते हैं। समान स्थिति वाले वर्ग तथा उची–नीची स्थिति वाले वर्ग।

सामान्यत: आर्थिक एंव धार्मिक स्थिति, शिक्षा, पद तथा आयु के आधार पर व्यक्तियो की ऊची–नीची तथा समानता वाली सामाजिक स्थिति का निर्धारण होता है। इन आधारो पर निर्धारित संस्तरण मे परिवर्तन हो सकता है क्योकि इसके अन्तर्गत निर्मित वर्ग खुले होते हैं। कर्म योग्यता और परिश्रम के द्वारा व्यक्ति अपनी समाजिक स्थिति मे परिवर्तन कर सकता है।

भारत में जाति–व्यवस्था केवल एक परम्परागत समाजिक संस्था ही नही है, बल्कि ग्रामीण सामाजिक स्तरीकरण का प्रमुख आधार भी है। सभी समाजिक संस्थाओ मे जाति–व्यवस्था का प्रभाव इतना व्यापक तथा इतना आन्तरिक रहा है कि इसके आभाव मे ग्रामीण समाजिक संरचना की समुचित विवेचना नही की जा सकती।

जाति –व्यवस्था जन्म के आधार पर व्यक्ति की –व्यवस्था जन्म के आधार पर व्यक्ति की परिस्थिति, भूमिका, सुविधाओ तथा निर्योग्यताओ का निर्धारण करती है। जाति–व्यवस्था से सम्बंधित कोई भी विश्लेषण करते समय ग्रामीण जाति–व्यवस्था ही हमारे अध्ययन का प्रमुख आधार होती है।

सामाजिक स्तरीकरण के रूप मे जाति–प्रथा अत्यधिक प्रबल है। नगरो की अपेक्षा भारतीयो ग्रामों मे जाति अधिक प्रभावकारी है। आस्कर लेविस :– (Oscar Lewis) के अनुसार,'कुछ भी हो, इन सब प्रवृत्तियो के बावजूद भी ग्रामो में जाति–प्रथा अभी भी बहुत शक्तिशाली है।'

गांवो में व्यक्ति की स्थिति का निर्धारण जाति द्वारा होता है। जाति–प्रथा का अस्तित्व भारत के ग्रामीण सामाजिक–संरचना की एक प्रमुख विशेषता रही है। ग्रामीण भारत की समाजिक संरचना मे जााति के महत्व का उल्लेख करते हुए प्रो0 ए.आर.देसाई ने लिखा है कि,'जातीय भिन्नताएं पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन के तरीको में भिन्नताओ को निश्चित करती है। इसके द्वारा ग्रामीण क्षेत्रो मे रहने वाले लोगो के आवास तथा सास्कृतिक प्रतिमानो का निर्धारण होता है। अनेक प्राशासकीय कार्यो को भी जाति के आधार पर बांटा जाता है। इसके अतिरिक्त जाति ने सांस्कृतिक प्रतिमानो, विभिन्न समूहो के स्तरो को भी विकसित किया है।'

इस प्रकार सम्पूर्ण सामाजिक ढांचा एक शुण्डाकार (Pyramid) के समान दिखाई पड़ता है। जिसका आधार असंख्य अछूत तथा शिखर के कुछ ब्राह्म्णो द्वारा निर्मित किया गया है।

आत भारतवर्ष मे लगभग 3000 से भी ज्यादा जातिया और उपजातिया है और उनके अध्ययन के लिए हट्टन के अनुसार, विशेषज्ञो की एक सेना की आवश्यकता होगी।

समाजशास्त्रियों और मानवशास्त्रियो ने जाति–प्रथा का विभिन्न दृष्टिकोणों से अध्ययन करने का प्रयत्न किया है। कुछ विद्वानो ने जाति प्रथा की उतपत्ति को समझाया है तो कुछ ने जाति–प्रथा की गतिशीलता की ओर ध्यान आकर्षित किया है। ऐसे भी अनेक विद्वान है, जिन्होने समाजिक व्यवस्था में जाति–प्रथा के महत्व या कार्यो का निरूपण किया है।

वास्तविकता यह है कि सामाजिक स्तरीकरण अथवा सामाजिक विभाजन का कोई न कोई रूप प्रत्येक समाज मे पाया जाता है। जिन आदी समाजो में सभी व्यक्तियों की समाजिक और आर्थिक स्थिति को समान समझ लिया जाता है, उनमें भी दूसरे व्यक्यियो की तुलना में मुखिया के अधिकार और उसकी समाजिक प्रस्थिति कहीं ऊर्ची होती है। व्यक्ति शक्ति और सम्पत्ति के आधार भी आदिम समाजो मे ऊंच–नीच का विभेद सदैव पाया जाता रहा है।

वर्तमान समाजो मे भी व्यक्तिगत कुशलता, योग्यता, सम्पत्ति, प्रजाति, धर्म अथवा संस्कृति के आधार पर सामाजिक स्तरीकरण का एक रूप अवश्य देखने को मिलता है। अनेक विद्वान यह मानते है कि विभिन्न समूहों के बीच ऊंच–नीच का यह विभाजन इसलिए उपयोगी है इसके फलस्वरूप सभी व्यक्ति अपनी योग्यता और कुशलता को बढ़ाकर निम्न से उच्चस्तर की ओर उठने का प्रयत्न करते हैं।

ऊंच–नीच का पहला विभाजन विभिन्न वर्गो का निर्माण करता है, जबकि दूसरे प्रकार का विभाजन जातिगत विभाजन के रूप में होता है।

इन्ही को खुला हुआ स्तरीकरण (Open Stratification) तथा बन्दस्तरीकरण (Close Stratification) कहा जाता है। भारतीय जाति–व्यवस्था बन्दस्तरीकरण का सबसे स्पष्ट उदाहरण है।

वर्तमान समय में स्तरीकरण के पुराने स्वरूप बदल रहे हैं। औद्योगीकरण के कारण विभिन्न जातियो के लोग एक–साथ उद्योगो में काम करते है। जिससे जातिगत सिथिलता बढ़ती जा रही हैं। वर्तमान समय में विभिन्न जातियो के बीच समाजिक–दूरी कम हो रही है। अब कोई भी किसी भी जाति को अपने से उच्च मानने के लिये तैयार नहीं हैं।

डॉ0 के0 एल0 शर्मा ने राजस्थान के छ: गांवो के अध्ययन के आधार पर यह बताया की उच्च–जाति अधिक शिक्षित है तथा आर्थिक दृष्टि से भी निम्न जातियों की तुलना मे अधिक अच्छी स्थिति में हैं।

* प्रवक्ता (समाजशास्त्र) आर्दश कन्या पी0जी0 कालेज, जियापुर बरूआ जलांकी टाण्डा, अम्बेडकर नगर (उ.प्र.) भारत

डॉ. शर्मा का यह निषकर्ष ग्रामीण भारत में स्तरीकरण के स्वरूप अवश्य प्रकाश डालता है। किन्तु आज नीची जातियो मे भी शिक्षा का प्रसार हो रहा हैं तथा उन्हे राज्य के द्धारा अनेक सुविधाये प्रदान की गयी हैं।

वर्तमान समय में अन्तर्जातीय सम्बन्ध किसी न किसी अंश में निश्चित रूप से बदल रहे है, अर्थात् विभिन्न जातियो के मध्य स्थापित होने वाले सम्बन्धो को निरन्तरता एंव परिवर्तन के सम्बन्ध में यह ज्ञात होता है कि अन्तर्जातीय सम्बन्ध ही सामाजिक स्तरीकरण के स्वरूप को निश्चित करते हैं।

अन्तर्जातीय सम्बन्धो के अध्ययन के आधार पर ही ग्रामीण भारत को वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे वास्तविक रूप से समझा जा सकता हैं। भारतीय समाज की जातिव्यवस्था अपने मे एक अनूठी व्यवस्था हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. Dubey shymaeharan : Indias changing village
2. Hutton, J. H. : Caste in india
3. Lewis, Osear : Easte and the jajmani system
4. Srinivas, M. N. : Indian villages
5. Sharma, K. L. : The changing rural stratification
6. Wiser, W. H. : The hindu jajmani system
7. Majumdar, D. N. : Rural profile

****

ग्रामीण विकास में जनकल्याणी योजनाओं का प्रभाव

डॉ. प्रीतम सिंह ठाकुर *

प्रस्तावना – ग्रामीण विकास का निहितार्थ ग्रामीण जीवन के सर्वांगीण विकास से लिया जा सकता है। इसमें ढाँचागत विकास अर्थात् परिवहन के साधन, बिजली, पानी की आपूर्ति, सूचना तकनीक की सुविधा, आवासीय सुविधा का विकास, स्वास्थ्य एवं शिक्षा की सुविधाएँ, रोजगार के सुअवसर, उत्पादों के विपणन की व्यवस्था और बैंकिंग आदि को सम्मिलित किया जा सकता है।ग्रामीण विकास कोई स्थैतिक प्रक्रिया नहीं वरन् यह एक सतत् प्रक्रिया है तथा इसके लिए निरन्तर प्रयास आवश्यक हैं। लोकतांत्रिक शासन पद्धति में कुलीन तंत्रात्मक और राजतंत्रात्मक पद्धतियों की अपेक्षा आमजन के स्वर, इच्छाएँ और अनिच्छाएँ अधिक सशक्तता से स्पष्ट सुनाई देते हैं। इसलिए इस पद्धति के सुचारू संचालन के लिए जनहितकारी नीतियों को केन्द्रस्थ करना प्रथम ध्येय होता है। अर्वाचीन राज्यों का स्वरूप प्रशासनिक होने से जनता की अपेक्षा होती है कि राज्य ही उनके सुखद भविष्य को दृष्टिगत रखकर उनके हित-अहित का न केवल निर्धारण करे अपितु जनता के मार्गदर्शक की भूमिका का निर्वहन करे। इसी ध्येय के साथ स्वतंत्रता के बाद से भारत में महात्मा गाँधी के 'ग्राम स्वराज' के स्वप्न को साकार करने के निमित्त अनेक नीतियाँ, कानून, योजनाएँ तथा कार्यक्रम निर्मित एवं क्रियान्वित किए गए हैं। देश में लोकतांत्रिक रूप में सत्ता को विकेन्द्रीकृत करते हुए पंचायतीराज संस्थाओं को संवैधानिक स्तर प्रदान कर दिया गया, लेकिन अभी भी ग्रामीण स्थानीय स्वशासन की यह इकाईयाँ पूर्ण रूप से प्रभावी नहीं बन पाई हैं।

नेहरूवादी समाजवाद की प्रकल्पित आर्थिक नीतियों से जब 1990 के पश्चात् विचलन प्रारंभ हुआ, तब बाजारवादी शक्तियों के कुचक्र से घिरे भारतीय ग्रामों और उनके अधोसंरचनात्मक विकास को निरन्तरता प्रदान करने के लिए ग्रामीण विकास मंत्रालय अपने भारी-भरकम बजट के साथ अस्तित्व में आया। आर्थिक उदारीकरण तथा संरचनात्मक बदलावों को देखते हुए तथा विशेषकर ग्रामीण गरीबों को एक सुरक्षा तंत्र उपलब्ध कराने के लिए नए कार्यक्रम शुरू करके तथा मौजूदा कार्यक्रमों को अद्यतन करके ग्रामीण विकास को सर्वोत्तम वरीयता दी गई। ग्रामीण विकास मंत्रालय ने ग्रामीण भारत से गरीबी व भूख मिटाने तथा ग्रामीणजनों के सर्वांगीण विकास हेतु कई जनकल्याणकारी योजनाओं को प्रारंभ किया।

ग्रामीण विकास के लिए सबसे अनिवार्य है कि ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी व बेरोजगारी का निर्धारित अवधि में उन्मूलन तथा ग्रामीणजन आर्थिक दृष्टि से सशक्त हों। ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने हेतु ग्रामीण अंचलों में छोटे-छोटे उद्यम स्थापित करके सम्पन्नाता और खुशहाली लाने के उद्देश्य के साथ रोटी, कपड़ा और मकान मानव की बुनियादी आवश्यकताएँ हैं, लेकिन मकानों की कमी के संबंध में आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्गों और दलितों की दशा विशेष रूप से दयनीय है। पिछले तीन दशकों से केन्द्र सरकार व राज्य सरकारें आवास की कमी को दूर करने के लिए प्रयत्नशील हैं। सरकार ने 1998 में राष्ट्रीय आवास नीति की घोषणा की और इंदिरा आवास योजना के माध्यम से कमजोर वर्गों को आवास उपलब्ध कराने हेतु प्रयत्न शुरू किया गया था जिसके वर्तमान स्वरूप को बदलकर प्रधानमंत्री आवास योजना के नाम से सभी को पक्का मकान 2021 तक किये जाने के संकल्प के साथ योजना की शुरूआत की गई।

भारतीय कृषि-प्रधान अर्थव्यवस्था में अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती है। शासन के हरसंभव प्रयास के बावजूद भी भारत की एक प्रमुख समस्या उसके एक व्यापक जनसमूह में व्याप्त बेरोजगारी की है। ग्रामीण क्षेत्रों में यह समस्या अत्यन्त व्यापक एवं जटिल है। समाज में उत्पादक रोजगार में कमी के कारण लोगों की आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पाती हैं। वे अल्प-पोषण एवं कुपोषण के कारण विभिन्न रोगों के शिकार बन जाते हैं। उनकी कार्य-क्षमता कम हो जाती है। भारत सरकार ने बेरोजगारी विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्र में व्याप्त बेरोजगारी को दूर करने के लिए अनेक कार्यक्रम प्रारंभ किए। सन् 1989 में जवाहर रोजगार योजना प्रारम्भ कर बेरोजगारी, को कम करने के प्रयास किए गये। केन्द्रीय सरकार द्वारा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के माध्यम से नवीन बुनियादी ढांचे के सृजन, गाँवों के सड़क संपर्क, जल संवर्द्धन आदि में सुधार करने के उद्देश्य से वर्ष 2005 में पारित राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के तहत ही राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना (MNREGS) का संचालन हो रहा है। 2 अक्टूबर 2010 से इसे महात्मा गांधी के नाम पर महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा) कर दिया गया। अधिनियम के तहत ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले परिवारों को एक वित्तीय वर्ष में 100 दिवस के सुनिश्चित रोजगार मांगने का अधिकार उपलब्ध कराया गया है।

ग्रामीण विकास से ही देश के सर्वांगीण विकास को साकार किया जा सकता है। सरकार स्वतंत्रता पश्चात् से विभिन्न जनकल्याणकारी योजनाओं के माध्यम से सतत् प्रयत्नशील है कि सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से ग्रामीणजनों का विकास हो एवं इसके लिए प्रतिवर्ष भारी बजट ग्रामीण विकास के लिए दिया जाता है। लेकिन, क्या इतने प्रयासों के बाद इन महत्वपूर्ण योजनाओं का प्रभाव ग्रामीण विकास को संभव कर पाया है ? ग्रामीण विकास विभाग की महत्वाकांक्षी योजनाओं से ग्रामीणों की महती आवश्यकता, रोजगार, आवास, सड़क आदि की पूर्ति हो पाई है ? सरकार की इन महत्वपूर्ण योजनाओं का ग्रामीण विकास में कितना सकारात्मक प्रभाव पड़ा है ? के अलावा अवलोकन, सर्वेक्षण एवं प्रत्यक्ष उदाहरणों के आधार पर सुझाव आदि देकर अध्ययन से ग्रामीण विकास विभाग के

* जनपद पंचायत, अमरवाडा, छिंदवाडा (म.प्र.) भारत

कार्यक्रमों में आवश्यक सुधार लाने हेतु चिंतन किया गया जिससे विभाग की जनकल्याणकारी योजनाओं का लक्ष्य प्राप्त हो सके और ग्रामीणों का सर्वांगीण विकास की संकल्पना संभव हो सके।

अध्ययन का उद्देश्य :

अध्ययन के निम्नानुसार उद्देश्य है :-

1. ग्रामीण विकास विभाग की योजनाओं का क्रियान्वयन एवं संचालन का अध्ययन करना।
2. ग्रामीण विकास विभाग की योजनाओं से ग्रामीण जीवन में आये बदलाव का अध्ययन करना।
3. मनरेगा (महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गांरटी एवं प्रधानमंत्री आवास योजना) के सफल क्रियान्वयन हेतु आवश्यक सुझाव देना।

शोध कार्य की परिकल्पना - सामाजिक अनुसंधान के अंतर्गत तथ्यों का वस्तुनिष्ठ रूप से अध्ययन करने में परिकल्पना एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। परिकल्पना एक ऐसा आधार प्रस्तुत करती है जिससे शोध कार्य में सत्यता की संभावना बढ़ जाती है। शोध की दिशा का वेग एवं परिमाण निर्धारित करने के लिये परिकल्पनाओं का निर्माण आवश्यक होता है। अत: प्रस्तावित शोध कार्य में निम्नलिखित परिकल्पनाएँ निर्धारित की गई -

1. ग्रामीण विकास विभाग की योजनाओं से ग्रामीणों के लिए आवश्यक है।
2. महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गांरटी एवं प्रधानमंत्री आवास योजना के सफल संचालन एवं क्रियान्वयन हेतु प्रावधानों में सुधार की आवश्यकता है।

शोध प्रविधि - अनुसंधान या शोध कार्य की सफलता इसी बात पर निर्भर रहती है कि, अनुसंधानकर्ता अपने अध्ययन विषय के संबंध में कितने वास्तविक निर्भर योग्य सूचनाओं और तथ्यों को एकत्रित करने में सफल होता है। और उसकी यह सफलता सूचना प्राप्त करने के स्त्रोतों की विश्वसनीयता पर निर्भर करती है। और इस विश्वसनीयता को प्राप्त करने के कई प्रकार होते हैं। प्रस्तावित शोध प्रबंध समंक संकलन हेतु प्राथमिक एंव द्वितीयक स्त्रोतों का चयन किया गया है।

प्राथमिक समंक - शोध कार्य को मध्यप्रदेश प्रांत के छिंदवाड़ा जिले के चार आदिवासी विकासखण्ड से 5-5 ग्रामें से 10 मनरेगा एवं प्रधानमंत्री आवास के हितग्राही/मजदूरों कका चयन कर प्रश्नावली/अनूसूची, साक्षात्कार अनुसूची एवं समूह चर्चा से प्राथमिक समंक के आधार पर कुल 200 उत्तरदाताओं पर अध्ययन केन्द्रित किया जायेगा तथा उनकी गणना हेतु सारणीकरण, अवलोकन कर उन्हें विश्लेषित किया गया।

द्वितीयक समंक संकलन - द्वितीयक समंक वे सूचनाऐं एवं आँकड़े होते हैं जो कि अनुसंधान के पहले ही किसी अनुसंधान के लिए, किसी अनुसंधानकर्ता द्वारा संग्रहित कर लिए गए हों।

इस प्रकार शोधार्थी द्वारा अपने शोध विषय से संबंधित समंक संकलन हेतु द्वितीयक स्त्रोत जैसे :- प्रकाशित/अप्रकाशित लेख, पुस्तक, रिपोर्ट, पत्र-पत्रिकाऐं, इंटरनेट, समाचार पत्र, सांख्यिकीय पुस्तिका, आत्मकथा, डायरी आदि का प्रयोग किया जाएगा जिससे शोध विषय से संबंधित समस्या एवं उससे संबंधित जानकारी इन तथ्यों के माध्यम से प्राप्त की जा सके साथ ही शुद्ध एवं विश्वसनीय निष्कर्ष प्राप्त किए जा सके जो समाज कार्य हेतु उपयोगी सिद्ध हो सके और ही शोध विषय प्रासांगिक बन सकें।

प्रस्तुत अध्ययन में इन योजनाओं के प्रभावों का मूल्यांकन निम्नानुसार किया जा सकता है।

- ग्रामीण विकास के कार्यक्रमों से आज ग्रामीण संस्कृति परिवर्तित हो रही है। आज गाँव में भौतिक सुख-सुविधाओं का महत्व बढ़ रहा है। पैसे की ताकत दिखावे के उपयोग की ओर ले जा रही है। आज गाँव का आम आदमी पहले जैसा भोला-भाला और गंवार नहीं है, बल्कि वह अपने हित साधन में चतुर और गुटबाजी में कुशल बनता जा रहा है। आज ग्रामों में किसी भी तरह अनुचित दबाव एवं बल प्रयोग ग्रामवासी स्वीकार नहीं करते। ऐसे व्यवहार का ग्रामवासियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है । ग्रामों में प्रजातांत्रिक तथा उदारवादी नेतृत्व को विकसित करने में पंचायती राज बी मुकर्जी तथा हरजिन्द्र सिंह सामुदायिक विकास योजना को महत्वपूर्ण माना हैं। इसके परिणामस्वरूप ग्रामों में राजनीतिक जागरूकता एवं राजनीतिकरण की प्रक्रिया का विकास हुआ।

रोजगार गारंटी कार्यक्रम अथवा स्वरोजगार योजनाओं का सफल क्रियान्वयन ग्रामीण निर्धन एवं वंचित वर्गों के उत्थान में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। एस.एन. श्रीनिवास ने अपने अवलोकन के आधार पर बताया है कि पंचायतीराज की शुरूआत ने निम्न जातियों, हरिजनों को आत्म सम्मान तथा शक्ति की एक नवीन अनुभूति प्रदान की है। रेजलॉफ उत्तरप्रदेश के एक गाँव के अपने अध्ययन के आधार पर निष्कर्ष निकाला है कि पंचायतों के प्रारंभ तथा चुनावों के फलस्वरूप विभिन्न जातियों की शक्ति संरचना में परिवर्तन आया है । आन्द्रे बेले पंचायती राज के लागू किये जाने से सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार मिलने से तथा विकास के अन्य कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप परंपरागत शक्ति संरचना टूटने लगी है ।

आवश्यक सुझाव - ग्रामीण क्षेत्रों की प्राथमिकताओं का निर्धारण एवं वहां की समस्याओं के कारगर समाधान के लिए भारत में प्रशिक्षित और समर्पित नौकरशाही का अभाव है। राजनीतिक दलों और जनप्रतिनिधियों की राजनीतिक प्रतिबद्धता में कमी दिखाई पड़ती है। ऐसी विषम परिस्थितियों में ग्रामीण विकास कार्यक्रमों का निर्धारण, निर्माण और क्रियान्वयन काफी चुनौतीपूर्ण हो जाता है। वर्तमान में भारतीय परिदृष्य की उन चुनौतियों की विवेचना करना समीचीन हो जाता है साथ ही ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में कमियों को चिन्हित करना भी आवश्यक को जाता है ताकि उनके समाधान कारक उपाय खोजे जा सकें।

1. योजना के लिए पात्र हितग्राही का चयन; हितग्राहियों द्वारा आवश्यक प्रपत्रों/जानकारियों को सम्पूरित कर प्रकरण तैयार करना एक ऐसा कार्य है जिसमें विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है। यही एक मुख्य वजह होती है जब क्रियान्वयन एजेंसियां महत्वपूर्ण होकर प्रभावी भूमिका अदा करने लगती है और हितग्राहियों का चयन उनकी इच्छा/अनिच्छा पर निर्भर हो जाता है।
2. कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी ईंधन के लिए वनों पर निर्भरता व्याप्त है। जबकि वनों के संरक्षण के लिए ईंधन के वैकल्पिक साधनों को तलाशा जाना समय की मांग है। क्योंकि आज वास्तविकता यह है कि धरती संकट में है ऐसी बात करने वाले धरती की फिक्र सबसे कम करते हैं क्योंकि धरती की फिक्र भी आप करें और विकास का यह मॉडल भी चलाएँ, यह साथ-साथ संभव नहीं है। धरती की फिक्र अगर आप करते हैं तो आपको विकास का अपना मॉडल बनाना होगा और दूसरे मॉडल की तरफ देखकर ललचाना छोड़ना होगा। धरती के सारे संसाधन सीमित है और पता नहीं कितने-कितने हजार-लाख वर्षों की रहस्यमयी तकनीक से प्रकृति ने उन्हें बनाया है। हमें वह सब बना-बनाया मिला है। तो हम उसका मनमाना इस्तेमाल करने में पागलों की

तरह जुटे हैं।

3. पंचायत राज द्धारा चलाये जा रहे कार्यक्रमों के क्रियान्वयन से ग्रामीण विकास की संभावनाओं में वृद्धि हुई है तथा ग्रामीण जनता में जागृति आई है। उन्हें अपने अधिकारों का ज्ञान हुआ है, तथा वे अपने अधिकारों के प्रति सचेष्ट हुए हैं। तथापि ग्राम पंचायतों का कार्य निष्पादन अपेक्षानुरूप नहीं है। पंचायतें आत्मपोषित होने के स्थान पर परजीवी बनती जा रही है।
4. बहुत सारे विभाग तथा कार्यकारी संगठन होने के कारण विकास एवं कल्याणकारी योजनाओं तथा कार्यक्रमों की संख्या भी अथाह है। स्थिति यह बन चुकी है कि ग्रामीण विकास तथा निर्धनता उन्मूलन के लिए देश में लगभग 135 योजनाएँ विकासखण्डों के माध्यम से क्रियान्वित हो रही हैं। पंचायती राज, पशुपालन, ग्राम विकास, सिंचाई कृषि, जल संग्रहण, सहकारिता, उद्योग, शिक्षा, समाज कल्याण, महिला एवं बाल विकास तथा स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभागों की अनेक योजनाओं के लक्ष्य उद्देश्य, लक्षित वर्ग तथा रणनीति न्यूनाधिक मात्रा में एक समान है।
5. विकास कार्यक्रमों के सफल क्रियान्वयन में मस्टररोल, अंकेक्षण, दैनिक मजदूरी तथा उपयोगिता प्रमाण पत्रों (U.C.) के समायोजन की समस्या आती है। सैद्धांतिक रूप से सरकारी कार्यों में दैनिक मजदूरी पर लगे एक श्रमिक को 60 रूपये मजदूरी का भुगतान किया जा सकता है। जबकि वास्तविकता यह है कि वर्तमान में भारत में 80 रूपये से लेकर 100 रूपये तक की मजदूरी पर ही दिहाड़ी श्रमिक उपलब्ध हो पाते है। इस समस्या का समाधान यही है कि मस्टररोल में कुछ श्रमिकों के फर्जी नाम अंकित किए जाएँ। निसंदेह इससे विकास कार्यों तथा कल्याणकारी कार्यक्रमों की मूल भावना आहत होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल, डॉ.जी.के. – सामाजिक परिवर्तन, आगरा बुक डिपो, आगरा, 1987.
2. भारद्धाज, ए.एन. – अस्पृष्यता एवं मानवता, किताब घर, नई दिल्ली, 1987.
3. चन्द्र, अविनाश – वैश्वीकरण से ग्रामीण भारत पर संकट तब हम क्या करें ?, सर्व सेवा संघ, प्रकाशन, वाराणसी, 2003.
4. धुर्वे, जी.एस.–जाति, वर्ग और व्यवसाय, राजपाल ए.ड सन्स, नई दिल्ली, 1961.
5. डॉ.एस.अखिलेश (संपादक) एवं डॉ.संध्या शुक्ल – महिला सशक्तिकरण, दशा एवं दिशा, गायत्री पब्लिकेशन रीवा, 2010.
6. दाहमा, डॉ. ओ.पी. –ग्रामीण समाजशास्त्र, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 1978.
7. दवे, रमन कुमार– वैश्वीकरण और भारतीय अर्थव्यवस्था, आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर. 2005.
8. दुबे, श्यामा चरण–मानव और संस्कृति, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1960.
9. Elwin,V, : The Religion of an Indian Tribe. Oxford University Press, London.1955.
10. गुप्त, विश्वप्रकाश, मोहनी गुप्ता – भारत में सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2006.
11. गुप्ता, रमणिका–आदिवासी कौन, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2008.
12. हरमन, एस. एडवर्ड, रॉबर्ट, डब्ल्यू. मैक्चेस्नी – भूमंडलीय जनमाध्यम, ग्रंथ शिल्पी (इंडिया), प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली, 2006.
13. झुनझुनवाला, भरत – भारतीय अर्थव्यवस्था 'समीक्षात्मक अध्ययन', राजपाल ए.ड सन्स, नई दिल्ली, 2007.
14. जोशी, रामशरण – आदिवासी समाज और शिक्षा, ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली, 2004.
15. जैन, बी.एम. – रिसर्च मैथ्डोलॉजी, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1999.
16. जैन, डॉ.राजेश – आर्थिक विकास में मानवीय साधन, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1996.
17. जैन, नीरज – वैश्वीकरण या पुन: औपनिवेशीकरण ?, गार्गी प्रकाशन सहारनपुर 2004.
18. Jain, L.C.: “Gross Without Root : “Rural Development under Govt. Auspices,” New Delhi, 1985 .
19. जयसिंह – भारत 2013, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत परिसंघ, नई दिल्ली.
20. जयसिंह, ग्रामीण भारत के सर्वोन्मुखी विकास 'एक परिदृश्य' संजय प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003.
21. जयसिंह, – भूमण्डलीकरण के भँवर में भारत, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2005.
22. खाखा, श्रीमती तरसिला – ग्रामीण विकास, सिंघई पब्लिशर्स ए.ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, रायपुर (छत्तीसगढ़), 2011.
23. काबरा, कमल नमन–भूमण्डलीकरण विचार, नीतियाँ और विकल्प, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, 2005.
24. कोली, लक्ष्मीनारायण – 'रिसर्च मैथ्डोलॉजी', बाय.के.पब्लिशर्स, आगरा, 2003.
25. कुमार, शैलेन्द्र – विश्व व्यापार संगठन भारत के परिप्रेक्ष्य में, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000.
26. कटारिया, डॉ.सुरेन्द्र – ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज, आर बी एस ए, पब्शिर्स, जयपुर, 2003.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

वर्तमान परिदृष्य में महिलाओं की स्थिति और दर्जा

डॉ. शिल्पी शर्मा *

प्रस्तावना – महिलाएं समाज का एक अभिन्न अंग है। अतीत से ही महिलाओं का समाज में सर्वोपरि स्थान रहा है। महिलाएं माता, पत्नी एवं बहन के रूप में सृष्टि की रचना करती है, उन्हें सुख और समृद्धि का प्रतीक माना जाता है भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति में महिलाओं का विशिष्ट स्थान रहा है। किंतु जो दर्जा प्रारंभ में महिलाओं को प्राप्त था शनैः शनैः उसमें ह्रास होने लगा। महिलाओं को समाज में दोयम दर्जा दिया जाने लगा, जो महिलाएं कभी परिवार, समाज में पुरूषों के समान निर्णायक रहा करती थी। अब कालांतर में वे घर के भीतर सीमित हो गई। फिर शुरू हुआ महिलाओं पर निरंतर कारित होने वाले अपराधों, अत्याचारों का सिलसिला। जिसने महिलाओं से उसकी शक्ति, आत्मष्विास एवं अस्तित्व की पहचान छीन ली। महिला अब नि:सहाय, निरापराध, मूख दर्शक बन गई और यह स्थिति दिन–ब–दिन बढ़ती गई।

इन समस्त स्थितियों के पीछे और कोई नहीं हमारे अपने समाज, समाज की रूढ़ियॉ, परम्परायें, मान्यताएं जिम्मेदार रही है। जो मर्यादा, सभ्यता के नाम पर महिलाओं पर निरंतर अपनी इच्छाएं थोपती रही हैं। शायद यह इसलिये कि समाज की पुरूषवादी वैचारिकी ने महिलाओं को सदैव कमजोर, असहाय, अबला के रूप में आंकलन किया है। प्रकृति के सभी मनुष्यों चाहे वह स्त्री हो अथवा पुरूष समान बनाया है। समान शक्तियां प्रदान कि फिर ये स्त्री–पुरूष वादी सोच का जन्म कहा से हुआ। ये हमारे समाज की उपज है। जिसमें परिवार के दोनों कर्णधारों में पुरूष को सर्वश्रेष्ठ एवं महिला को कमजोर के रूप में प्रतिष्ठित किया। इस प्रकार महिलाओं के साथ भेदभाव की कहानी जन्म के साथ आरंभ हो गई और तो और भ्रूण के रूप में गर्भ में ही हिंसा एवं अत्याचार शुरू हो जाता है। अर्थात् महिलाओं के संघर्ष और अपने स्वतंत्र अस्तित्व की कहानी सरल नहीं जन्म से लेकर जीवन तक निरंतर वह अपनी पहचान और स्थिति को प्राप्त करने की जैसे होड़ में लगी दिखाई देती है और इस प्रतिस्पर्धा में स्वयं से अपने परिवार समाज से अपना हक मॉगती जान पड़ती है।[1] निरंतर तिरस्कार आलोचना का शिकार होकर भी वह हार नही मानती लेकिन दूसरा पक्ष देखने पर जान पड़ता है कि समय बदला, परिस्थितियॉ बदली लेकिन महिलावादी बहुसंख्यक पुरूषवादी सोच में खासा बदलाव नजर नहीं आता। एक तरफ महिलााओं के आत्मसमान, आत्मनिर्भरता, समानता एवं न्याय की दुहाई दी जाती है तो दूसरी ओर महिलाओं पर आये दिन अत्याचार किये जाते है। वे शोषण की अमानवीय क्रूरतम पुरूष मस्तिष्क की असहनीय हिंसा का प्रतिक्षण प्रतिदिन शिकार हो रही है और यह निरंतर बर्बर होती है। महिलाओं के सम्मान, स्वाभिमान के सामने रोड़े बहुत है। कभी समाज में सम्मान प्राप्त करने कभी आर्थिक असमानताओं से लड़ने कभी राजनीतिक अधिकारों में बराबरी के लिये पुरूष प्रधान वर्ग से लड़ती नजर आती है।

देश की आधी आबादी होने के बावजूद भी वह अपने समान अधिकारों से वंचित है समय के साथ–साथ बदलाव भी आवश्यक होता है और यही वह अवधारणा है । जिसके समाज के एक बहुसंख्यक वर्ग को सशक्त करने का मार्ग प्रशस्त किया। सशक्तिकरण किसका, क्यूँ और कैसे जैसे सवालों ने महिलाओं की समानता एवं अधिकारों की पहल को ओर तेज कर दिया।[2]

समाज सुधार आंदोलनों, नारीवादी आंदोलनों, पश्चिमी देशों की समान संस्कृति ने नारी मुक्ति के द्वार खोल दिये। बात जब भारतीय नारी और उनके अधिकारों की होती है। तो भारतीय संविधान इसका सबसे बड़ा प्रमाण है जो महिला समानता, स्वतंत्रता, न्याय एवं अधिकारों का पक्षधर है। स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान के निर्माण के साथ ही लैंगिक समानता का सिद्धांत भारतीय संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार, मूल कर्त्तव्यों एवं राजनीति निर्देशक सिद्धांतो में निहित है। संविधान ने न केवल महिलाओं को अधिकार प्रदान किये बल्कि उन्हें फलीभूत करने के लिये कानूनों एवं विधियों की व्यवस्था भी कि ताकि महिलाओं को न केवल अधिकारों का ज्ञान हो बल्कि कानूनों के माध्यम से वे अपने प्रति होने वाले अन्याय, शोषण, असमानता, भेदभाव का विरोध कर एक समान नागरिक के जैसे जीवन यापन कर सकें एवं स्वतंत्रता पूर्वक अपने असित्व को बना सके।

अध्ययन की आवश्यकता – महिलाओं के सशक्तिकरण की आवश्यकता क्यों है। इसको समझने के लिये पहले यह जानना जरूरी हो जाता है कि समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा होने के बावजूद भी उन्हें सशक्त क्यों किया जाना चाहिये। सशक्त का संबंध निर्बलता से जुड़ा होता है। आज समाज का बहुत बड़ा भाग अपने मानवाधिकारों से निश्चिय ही वंचित है। तब सषक्तिकरण का मामला और ज्यादा संवेदनशील हो जाता है। जब बात महिलाओं की होती है अर्थात् जो वर्ग अपने मूलभूत सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, शैक्षणिक, धार्मिक अधिकारों से वंचित होता है। तो इन्हें मनुष्य होने के नाते अधिकार प्रदान किये जाना संविधान, समाज, सरकार का कर्त्तव्य बन जाता है। ताकि वह वर्ग भी समाज में अपना वास्तविक हक प्राप्त कर सके। अतएव आज महिलाओं के हितार्थ महिलाओं की स्थिति का अध्ययन वर्तमान महिला परिप्रेक्ष्य में ज्यादा प्रासंगिक हो जाता है।

महिलाओं की स्थिति – महिलाओं की स्थिति सदैव एक समान नहीं रही है। समय परिस्थिति एवं वातावरण के परिवर्तन स्वरूप इनके पद सम्मान एवं प्रतिष्ठा में परिवर्तन होता आ रहा है। किसी भी समाज, सभ्यता एवं देश के विकास का मूल्यांकन वहा की आधी आबादी अर्थात् महिलाओं से किया जाता है। महिलाओं के विकास एवं उनकी प्रास्थित पर हम ध्यान केंद्रित करते है। तो दो तथ्य निकलकर सामने आते है, एक यह कि प्राचीन काल से लेकर मध्य काल और मध्य काल से लेकर आधुनिक काल तक महिलाओं

* अतिथि व्याख्याता (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, घंसौर (म.प्र.) भारत

की स्थिति में काफी उतार-चढ़ाव देखे गये है। समाज ने कभी सम्मान देकर उन्हे गौरवान्वित किया तो कभी अपमानित कर उसका तिरस्कार किया। कुशल गृहणी, उद्यमी, श्रम शक्ति होने पर भी उनकी क्षमता, प्रतिभा, साहस एवं कार्यो को वह स्थान नहीं दिया गया जो वास्तव में उनका अधिकार है।[3] श्रम की अनदेखी क्षमता का शून्य आंकलन आलोचनाओं की परिपाठियों ने महिलाओं से उनके होने का हक छीन लिया।

सामाजिक तौर पर महिलाओं को त्याग, सहनशीलता व शर्मीलेपन का ताज पहनाया गया है। जिसके भार के तले दबी महिलाओं ने अपने असित्व को भुला दिया। केवल भारत में ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया के ज्यादातर देशों की महिलाएं भेदभाव का शिकार होती आयी है। सभी स्तरों पर निर्णय लेने की प्रक्रिया से बाहर रखी जाती है। इसका प्रारंभ से ही सामाजिक संरचना में पितृसत्तात्मक सोच का होना है। जिसमें पुरूषों को महिलाओं से श्रेष्ठ समझा जाता है। जहां संसाधनों पर निर्णय लेने की प्रक्रिया पर और विचारधारा पर पुरूषों का नियंत्रण होता है। इस प्रकार महिलाओं पर हिंसा सामाजिक व्यवस्था का अंग बन गया। संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार प्रत्येक तीन में से एक महिला हिंसा का शिकार होती है और ज्यादातर हिंसा परिवार के भीतर लड़ी जाती है। महिलाएं मानव विकास सूचकांक में पुरूषों से पिछड़ी है। जीवन-प्रत्याशा, स्वास्थ्य, पोषण, समान वेतन, स्वामित्व, सम्पत्ति में भी वह दूसरे पायदान पर है। इतना ही नहीं हिंसा, छेड़छाड़, यौन उत्पीड़न, दुष्कर्म के साथ भय में जीती है।[4] विवाह से पहले और विवाह के बाद भी मानसिक, शारीरिक यातनाओं से गुजरना पड़ता है।

अब यह सर्वज्ञात है कि महिलाएं समाज का अभिन्न अंग है एक बड़ा हिस्सा है बाद इसके भी उनके साथ हिंसा, अन्याय होता है। ये स्वीकारा भी जाने लगा है और इसकी भर्त्सना भी की जाने लगी है। नीतिगत वक्तव्य महिलााओं की सुरक्षा के प्रति अधिक संवेदनशील दिखाई दे रहे है। सरकारी-गैर सरकारी संगठनों के द्वारा महिलाओं की स्थिति में सुधार के प्रयास किये जा रहे है। उन्हें अवसर प्रदान किये जा रहे है ताकि वे अपनी खोई स्थिति सम्मान एवं वर्चस्व पुन: प्राप्त कर सके और एक गरिमापूर्ण जीवन जी सके।

भारतीय संविधान एवं महिला अधिकार - भारतीय संविधान में महिला विशेष कानूनों एवं प्रावधानों का उल्लेख किया गया है। ऐसे विभिन्न कानून समय-समय पर सरकार द्वारा बनाए और संशोधित किये जाते है तथा योजनाओं, नीतियों को प्रतिपादित किया जाता है। जिनके मूर्त परिणाम दृष्टिगत हो और महिलाओं के जीवन पर सकारात्मक प्रभाव पड़े। बेशक, महिला सशक्तिकरण एक जटिल मुद्दा है। जिसके असंख्य संकेतक है। मौजूदा शोध पत्र महिलाओं के आर्थिक, सामाजिक कायाकल्प के उद्देश्य से सरकार द्वारा की जाने वाली पहल पर केंद्रित है। जब स्वास्थ्य, शिक्षा, सुरक्षा, वित्तीय अधिकार सहित अन्य प्रकार की सुरक्षा के मामले में महिलाओं की हालत मे सुधार होगा, तभी उन्हें सशक्त माना जाएगा।

संविधान ने मौलिक अधिकारों के भाग 3 में यथा विभिन्न अधिकारों के माध्यम से जैसै समानता का अधिकार (अनु. 14-18) स्वतंत्रता का अधिकार (अनु. 19-22) तथा शोषण के विरूद्ध अधिकार (अनु. 23-24) के माध्यम से उन्हें सशक्त बनाने का प्रयास किया तथा राजनीति निर्देषक तत्वों में महिलाओं के लिये समान अवसर, न्याय, पोषण सम्पत्ति एवं गरिमा का उल्लेख किया। इनके अतिरिक्त भारतीय दण्ड संहिता एंव भारतीय साक्ष्य अधिनियम के माध्यम से भी महिला के प्रति कारित हिंसा की सुरक्षा प्रदान की। विभिन्न कानूनी प्रावधानों के द्वारा भी महिलाओं के लिये स्वास्थ्य एवं सुरक्षित, सामाजिक वातावरण तैयार किया जैसे समान कार्य हेतु समान वेतन 1976 अधिनियम, मातृत्व अवकाश संशोधित अधिनियम 2016, घरेलू हिंसा अधिनियम 2005, दहेज निषेध अधिनियम, उत्तराधिकार अधिनियम, विवाह अधिनियम, भरण पोषण अधिनियम, कार्य स्थल पर यौन उत्पीड़न अधिनियम 2013 आदि।[5] उपरोक्त संवैधानिक प्रावधानों का एकमात्र लक्ष्य महिलाओं की सुरक्षा तथा उन्हें बराबरी का हक दिलाना हैं।

वर्तमान में अनेक ऐसे महिला अधिकारों पर बहस चल रही हैं। जिन पर महिलाओं को कोई अधिकार था ही नहीं लेकिन सर्वोच्च न्यायालय के नारी गरिमा से जो ऐसे निर्णय सामने आ रहे हैं जो कानूनी रूप से महिलाओं के सषक्तिकरण का अनूठी सराहनीय पहल हैं।

तीन तलाक, धार्मिक संस्थान में महिलाओं के प्रवेश की स्वीकृति ऐसे कई ज्वलंत मुद्दे है।[6] जो महिलाओं को समान मानवीय अधिकार के हिमायती हैं।

महिला कानूनों का वर्तमान प्रभाव - महिलाओं के प्रति समाज के नजरिये को बदलने के निरंतर प्रयास किये जा रहे हैं जिससे महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है। महिलाओं ने संविधान में प्रदत्त अधिकारों के बुते शैक्षिक राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, प्रशासनिक, खेलकूद आदि विविध क्षेत्रों में उपलब्धियों के नये आयाम तय किये। आज महिलाएं आत्मनिर्भर, स्वनिर्मित, आत्मविश्वासी है। जिसने पुरूष प्रधान चुनौती पूर्व क्षेत्रों में भी अपनी योग्यता प्रदर्शित की है।[7] वह केवल कुशल ग्रहणी, शिक्षिका न बनकर, डॉक्टर, इंजीनियर, पायलेट, वैज्ञानिक, तकनीकि, सेना, पत्रकारिता, खेल जैसे नवीन क्षेत्रों का अपना रही है। राजनीति, सामाजिक, आर्थिक क्षेत्रों में भी वह अपनी योग्यता एवं नेतृत्व का संचालन कर रही है। 21वीं सदी में अब महिलाओं का दोयम् दर्जा अब पुरूष प्रधान समाज में बराबरी का हो गया है।[8] वह व्यापार, निजी क्षेत्र, उद्यम में नये अवसर का लाभ उठा रही है। भूमंडलीय की बयार अब नारी के हिस्से आ गई है। आज महिला उन क्षेत्रों में अपने कौशल का प्रदर्शन कर रही है।[9] जहां होने की शायद कभी समाज ने कल्पना भी न की हो।

आज महिलायें स्वतंत्र विचारधारा के द्वारा अपने प्रति होने वाले अत्याचार हिंसा एवं शोषण को समाज के सामने लाने लगी, उनकी हिचकिचाहट से पर्दा उठ गया है। हाल का 'मी टू कैम्पन' इस बात का ताजा उदाहरण कि अपने प्रति होने वाली शारीरिक हिंसा, शोषण, धमकी का विरोध महिलाएं बिना किसी पारिवारिक, सामाजिक अवधि के दर से सार्वजनिक तौर पर कर रही है।

संवैधानिक प्रयासों के बूते न केवल वे समान हो रही बल्कि सशक्त एवं आत्मनिर्भरता की नई इबारत लिख रही है। अब पिता की सम्पत्ति में समान अधिकार से लेकर भरण पोषण, समान तलाक, स्वेच्छा से जीवन साथी चुनने एवं स्वतंत्र रोजगार प्रदत्त कर रही है। क्योंकि आज महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति में पहले से काफी बदलाव आया है। वे शिक्षा के साथ जागरूक हो रही है और अपने अधिकारों को समझ कर अन्याय के खिलाफ संगठित हो गई है। महिलाओं के प्रति घृणित कार्य करने वाले दोषी को कड़ी सजा का प्रावधान किया गया है। विभिन्न महिला केंद्रित कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है। जिससे वे लाभान्वित हो रही है।

समस्याएं - एक ओर जब संवैधानिक कानूनों, सरकारी प्रयासों का मूल्यांकन करने पर यह तथ्य सामने आता है कि महिलाओं की वर्तमान दशा एवं दिशा में काफी सकारात्मक बदलाव आ रहे है। वे घर की चारह दीवारी से

निकल अपनी योग्यता स्थापित कर रही है। आज लड़का-लड़की वाली सोच में अंतर आया है। बेटी बचाओं-बेटी पढ़ाओं जैसै कार्यक्रमों ने महिला सशक्तिकरण को काफी सार्थक किया है। सबरीमाल मंदिर प्रवेश हो या शनि सिंगनापुर में पूजा का अधिकार, तीन तलाक हो या लीव-इन-रिलेशनशिप महिलाओं को बिना किसी रूकावट अधिकार प्रदान किये जा रहे है। जो महिलाओं की स्थिति एवं उसके दर्जे को कही ज्यादा व्यापक बना रहा है।[10]

किंतु महिला विकास एवं सक्षर सशक्तिकरण का एक दूसरा पक्ष शायद भयावह ही है। जहां महिलाओं को केवल 'स्त्री' माना जाता है 'मनुष्य' नहीं। निरंतर महिलााओं पर कारित होने वाले अपराध इस बात के साक्षी है कि शिक्षित होने के बावजूद भी बहुसंख्यक महिलायें अपने कानूनी अधिकारों से अनभिज्ञ है। इसके पीछे भी दो कारक हो सकते है। एक घर, परिवार, समाज की मर्यादा खोने का और दूसरा सुरक्षा तंत्र की अनदेखी। कानून तो है पर क्या वे कारगर भी है शायद नहीं। महिलाओं पर होने वाली हिंसा या शोषण के अधिकार प्रकरणों संज्ञान में नहीं लिया जाता तथा कई मामलों में ऐसे ही निपटा दिया जाता है। महिलाओं को आत्मग्लानी के कारण स्वंय दोषी मानकर आत्महत्या जैसे अपराध करने पड़ते है।[11] कार्य स्थल में महिलाएं आये दिन शारीरिक, मानसिक हिंसा एवं शोषण का शिकार होना पड़ता है। प्रतिदिन अखबारों के पेज महिला हिंसा, भेदभाव, शोषण से भरे पड़े है और आरोपी खुले घूमते नजर आते है। साथ ही सामाजिक, पारिवारिक आलोचनाओं का भी शिकार होना पड़ता है। आज मासूम बच्चियॉ अपने घर, पड़ोस, समाज, सार्वजनिक स्थलों तक में सुरक्षित नहीं है। सरकारी नौकरियों पंचायतों में भी प्रतिनिधित्व के बावजूद इनके साथ समानता का व्यवहार पुरूष प्रधान समाज के गले नहीं उतरता।

प्रत्येक क्षेत्र में उन्नति, प्रगति के साथ देश समाज को गौरवान्वित करने वाली महिलाओं को आज भी महिला होने का बहुत बड़ा मूल्य चुकाना पड़ता है। यही वास्तविकता है।

निष्कर्ष - महिलाओं का विकास एवं सशक्तिकरण एक जटिल एवं लम्बी प्रक्रिया है। आज महिलाएं अपने अधिकारों को जान एवं समझ चुकी है। वे स्वंय भी अपने आप को समाज का नागरिक मान रही है। सरकारी योजनाओं, संवैधानिक प्रयासों ने महिलाओं की स्थिति में बहुत परिवर्तन किये है। जो महिलाएं कभी सर में घूंघट लिये अपने स्वतंत्र निर्णय से वंचित थी। आज आजाद होकर अपने विचारों एवं कार्यो को संधारित कर रही है और ऐसा होना भी चाहिये क्योंकि अगर इन्हें अधिकारों से वंचित रखा गया तो देश एवं समाज का वास्तविक विकास अवरूद्ध हो जायेगा। इसके लिये और ठोस कारगार कदम उठाये जाने बाकी है और ये मात्र सरकार संविधान से संभव नही होगा। इसके लिये सामाजिक वैचारिकी में परिवर्तन की आवश्यकता है साथ ही स्वंय महिलाओं को अपने सशक्तिकरण का प्रयास करना होगा। मुझे लगता है कि महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में हालिया घटनाक्रम काफी उत्साह जनक है। महिलाओं को सुरक्षित और अनुकूल माहौल की जरूरत है। जिससे सशक्तिकरण को बढ़ावा मिलेगा। क्योंकि महिलाओं में अपार संभावनाऐं है।

'देश का है अंत:करण, सिर्फ और सिर्फ महिला सशक्तिकरण'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. आहुजा राम, भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत प्रकाशन, जयपुर, वर्ष 1999, पृ. 7.
2. रामकुमार डॉ., नारी के बदले आयाम, अजुर्न पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, वर्ष 2005, पृ. 13.
3. त्रिपाठी मधुसदन, महिला विकास, ओमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2010, पृ. 10.
4. पुनिया अनुशा, घर से बाहर तक सुरक्षा के कानून, योजना अगस्त 2018, सूचना भवन, नई दिल्ली.
5. नायर, लीना, महिला सशक्तिकरण सरकार का दृष्टिकोण, योजना, सितम्बर 2016, पृ. 13.
6. भसीन, कमला, भारतीय संदर्भ में नारी सशक्तिकरण, योजना, सितम्बर 2018, पृ. 09.
7. श्रीवास्तव, संजय, महिला सशक्तिकरण की बदलती तस्वीर, कुरूक्षेत्र, जनवरी 2016, सूचना प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, पृ. 25.
8. कुमार मनीष, महिला सशक्तिकरण दशा और दिशा, बी.के., नई दिल्ली, 2011, पृ. 07.
9. सारस्वत स्वतिल, महिला विकास एक परिदृश्य, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृ. 15,16.
10. http://www.hindi kidvniya.com.in

****

भारत में महिलाओं की स्थिति एवं मानव अधिकार

डॉ. पल्लवी नंदी *

प्रस्तावना – विश्वव्यापी मानव अधिकार आंदोलन की आधारशिला है – संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार की घोषणा 10 दिसम्बर, 1948 तथा इसी श्रृंखला में संयुक्त राष्ट्र द्वारा घोषित मानव अधिकार शिक्षा दशक 1995-2004 में विश्व के सभी देशों में मानव अधिकार शिक्षा संबंधी ठोस एवं यशस्वी कार्यक्रम प्रारंभ किये गये। इस महत्वपूर्ण दशक का सर्वोपरि महान उद्देश्य है – सम्पूर्ण मानव जाति को मानव अधिकार में शिक्षित करना है। यद्यपि महिला सशक्तिकरण और उत्थान के लिए सभी ओर से प्रयास जारी रहे है। देश की स्वतंत्रता के साथ ही भारतीय संविधान की प्रस्तावना और विभिन्ना प्रावधानों में महिलाओं को पुरूषों के समान ही अधिकार देने का प्रयास किया गया है। समय-समय पर महिलाओं को आगे लाने संबंधी विधेयक भी पारित करवाये गये हैं। महिलाओं के उत्थान के लिए केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा महिला आयोग, मानव अधिकार का गठन किया गया। परंतु वस्तुस्थिति यह है कि मानव अधिकार के विभिन्ना प्रावधानों और केन्द्र और राज्य सरकारों के सरकारी प्रयास, सरकारी योजनाओं के संचालन एवं क्रियान्वयन के उपरांत भी अभी तक नारी-जगत् में जागृति का संचार नहीं हो पाया है। केन्द्र और राज्य सरकारें विधेयक पारित करवाने के साथ महिलाओं के विकास संबंधी विभिन्ना कानून बनाकर अपने दायित्वों की इतिश्री समझ लेते हैं। समाज और शासन इसे अपना कर्त्तव्य मानें और इन कानूनों को लोक व्यवहार का हिस्सा बनाने का ईमानदारी से प्रयास करें तो ही महिलाओं के मानव अधिकार की रक्षा हो सकेगी और योजनाओं के संचालन का उद्देश्य पूरा हो सकेगा अन्यथा सारे सरकारी प्रयास और योजनाएँ केवल नाममात्र की रह जायेगी।

मनुस्मृति में स्त्रियों की विवेचना करते हुए मनु ने स्पष्ट लिखा है कि जहाँ स्त्री की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं और जहाँ उनकी प्रतिष्ठा नहीं होती वहाँ समस्त क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं। हमारे देश में महिलाओं की परिस्थितियाँ बदलते समय के साथ-साथ उतार चढ़ाव से परिपूर्ण है। प्राचीन व्यवस्था में नारियों को उच्च स्थिति प्राप्त थी। उन्हें सुख वैभव, शान्ति शक्ति व ज्ञान का प्रतीक माना जाता था। कहीं नारी की पूजा रणचंडी दुर्गा के रूप में हुई है तो कहीं मां सरस्वती के रूप में। नारी सुन्दरता की प्रतीक होने के नाते तारीफ का पात्र रही है। यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता: अर्थात् जहां नारियों की पूजा होती हैं वहाँ देवता निवास करते हैं। लेकिन धीरे-धीरे नारियों के स्थान में परिवर्तन होता गया। पुरूषों ने नारियों को दुर्बल समझकर उनके अधिकार व कार्य सीमा पर हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया। इसके परिणामस्वरूप एक समय ऐसा भी आया जबकि नारियों की सीमा घर की चारदीवारी तक सीमित होकर रह गई। परिवार में कन्या का जन्म अशुभ माना जाने लगा। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पष्चात् भारतीय समाज में नारियों की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। भारतीय समाज में आज की महिलाएँ हर क्षेत्र में पुरूष के साथ कदम-से-कदम मिलाकर कार्य कर रही हैं।

स्थूल रूप से मानव अधिकार वह मौलिक तथा अन्यसंक्राम्य (Inalienable) अधिकार है जो मनुष्यों के जीवन के लिए आवश्यक है मानव अधिकार वह अधिकार है जो प्रत्येक मानव के हैं क्यांकि वह मानव है चाहे वह किसी भी राष्ट्रीयता, प्रजाति या नस्ल, धर्म, लिंग का हो। अत: मानव अधिकार वह अधिकार है जो हमारी प्रकृति में अनतनिर्हित है तथा जिनके बिना हम मानवों की भांति जीवित नहीं रह सकते हैं। मानवीय अधिकार तथा मौलिक स्वतंत्रताएं हमें अपने गुणों, ज्ञान, प्रतिभा तथा अन्तर्विवेक का विकास करने में सहायक होते है।

भारत की स्वतंत्रता के साथ ही आवश्यक हो गया था कि मानव अधिकारों की सुरक्षा के लिए आवश्यक कदम उठाये जाये और महिलाओं के विकास, सुरक्षा और आर्थिक सदृढ़ीकरण के लिए सरकारी योजनाओं में आवश्यक प्रावधान किये जाये। सरकारी योजनाओं के लिए पंचवर्षीय योजनाओं में महिला सशक्तिकरण के लिए प्रयास किया जाना भी जरूरी था और यही कारण रहा कि विभिन्ना पंचवर्षीय योजनाओं में महिलाओं के विकास के लिए प्रावधान किया गये है लेकिन इसके साथ ही एक दशक सन् 2000 से 2010 का कार्यकाल महत्वपूर्ण माना जाता है इसमें महिला सशक्तिकरण तथा महिलाओं के मानव अधिकार की सुरक्षा के लिए अहम् प्रयास किये गये जिसमें सरकारी योजनाओं और संबंधित संस्थाओं का योगदान बेहतर माना जा सकता हैं

भारत की अर्थव्यवस्था का एक बड़ा हिस्सा भारत के योजना आयोग द्वारा विकसित, कार्यान्वित और इसकी देख-रेख में चलने वाली पंचवर्षीय योजनाओं पर आधारित है। यद्यपि प्रारंभिक पंचवर्षीय योजनाओं में महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान नहीं किए गए थे किन्तु छठवी पंचवर्षीय योजना से महिलाओं को सशक्त करने के लिए अलग से ही योजना में प्रावधान किया जाने लगा। केन्द्र सरकार ने सभी पंचवर्षीय योजनाओं में महिला सशक्तिकरण के हेतु योजनाओं का क्रियान्वयन किया गया जिसे महिलाओं को सशक्त एवं आत्मनिर्भर बनाये जा सके।

परिकल्पना :

1. महिलाओं शिक्षित एवं जागरूक किये बिना उनको सशक्त करना संभव नहीं है।
2. महिलाएँ अपने मानव अधिकार एवं कानूनी प्रावधानों के साथ सरकारी योजनाओं के प्रति कम जागरूक है।

उद्देश्य :

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) डेनियलसन महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.) भारत

1. महिलाओं के विकास के संचालित होने वाली योजनाओं के प्रावधानों में सुधार हेतु आवश्यक सुझाव देना।
2. उन चरों को ज्ञात करना जिनके कारण महिलाओं को मानव अधिकार अथवा सरकारी योजनाओं का लाभ नहीं मिल पाता।

निदर्शन प्रक्रिया – प्रस्तुत शोध कार्य हेतु महिला वर्ग से निदर्शन अपेक्षित है। अध्ययन में सभी वर्ग का अभिमत सम्मिलित हो इसके लिए छिंदवाड़ा सहित जिले के ग्राम की महिलाओं को भी सम्मिलित किया गया। शोध कार्य को मध्यप्रदेश प्रांत के छिंदवाड़ा जिले के अमरवाड़ा नगरपालिका क्षेत्र के 5 वार्डो से 20 कुल 100 महिला उत्तरदाता पर अध्ययन केंद्रित चयन की सूची के आधार पर निदर्षन विधि से तथा प्रत्येक क्षेत्रों से यादृच्छिक प्रतिचयन (Random Sampling) के आधार पर व्यक्त मतदाताओं पर अपना अध्ययन केन्द्रित कर प्रत्येक प्रत्येक मतदाताओं से साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से तथ्यों को एकत्रित किया गया। इन तथ्यों को एकत्रित करते समय पक्षपात्, पूर्वाग्रह, मिथ्या झुकावों आदि से तथ्यों को दूर रखा जायेगा और प्रत्यक्ष अवलोकन तथा पर्यविक्षण के आधार पर प्राप्त आंकड़ों को पुष्ट करने का प्रयास किया गया है।

इस सम्पूर्ण अध्ययन के बाद कुछ बहुत महत्वपूर्ण निष्कर्ष आये है – महिलाओं को पुरूषों के समकक्ष माने जाने संबंधी प्राप्त तथ्यों पर प्रकाष डालने से ज्ञात होता है कि आज की आधुनिकता के बावजूद भी अधिकतर महिलाएँ इस बात को मानती है कि उन्हें पुरूषों के समान दर्जा प्राप्त नहीं है। महिलाओं को पुरूषों के समान बराबरी न होने के कारण महिला पुरूष के समकक्ष नहीं है।

1. महिलाओं के आर्थिक विकास से जुड़े काम किये जाने संबंधी प्रश्नों के जबाव से स्पष्ट होता है कि महिलाओं को पुरूषों के समान न मानने के बीच सबसे बड़ा कारण महिलाओं द्धारा आर्थिक सहयोग न करना है लेकिन यदि वह आर्थिक सहयोग में जुड़कर काम करती है तो इससे उसको पुरूष के समान ही मान–सम्मान भी मिलता है और परिवार की आर्थिक मजबूती भी सुद्दढ़ होगी। अधिकांश उत्तरदाता भी इसका समर्थन करते है।
2. कन्या भ्रूण हत्या संबंधी प्राप्त तथ्यों पर प्रकाश डालने से ज्ञात होता है कि कन्या भ्रूण हत्या संबंधी जानकारी अधिकतर लोगों को है और उत्तरदाता यह भी मानते है कि कन्या भ्रूण हत्या में महिलाओं की भी सहमति होती है अत: महिलाएँ स्वयं भी नहीं चाहती है कि उनके घर में कन्या जन्म ले।
3. कन्या भ्रूण हत्या के कारण संबंधी तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि लोगों में आज भी लड़कों की चाहत बनी है और इसके साथ ही दहेज प्रथा, गरीबी तथा लड़कियों को बोझ माना जाता है यह सभी कारण है कि लोगों कन्याओं को जन्म लेने से पूर्व ही मार देते है।
4. लिंग परीक्षण संबंधी आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि अधिकांश उत्तरदाताओं को यह ज्ञात है कि लिंग परीक्षण कराया जाना कानूनी अपराध है लेकिन अधिकतर लोग इस लिंग संबंधी जानकारी के लिए बच्चों का लिंग परीक्षण गर्भावस्था में कराते है जिससे कन्या भ्रूण हत्या की संख्या बढ़ रही है।
5. मताधिकार संबंधी तथ्यों पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि अध्ययन में शामिल किये गये उत्तरदाताओं में से अधिकतर उत्तरदाताओं ने अपना मत का उपयोग किया है। अत: कहा जा सकता है कि महिलाओं को अपने मत संबंधी अधिकार का ज्ञान है।
6. दहेज प्रथा को समाप्त किये जाने संबंधी प्रयासों के संबंध में प्राप्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि महिलाएँ यह मानती है कि दहेज प्रथा के उन्मूलन के लिए किये गये प्रयास काफी नहीं है इसमें सुधार की आवश्यकता है क्योंकि आज के आधुनिक समाज में दहेज प्रथा को समाप्त नहीं किया जा सका है।
7. महिलाओं के साथ होने वाली घरेलु हिंसा के संबंध में प्राप्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि अधिकतर महिलाओं को घरेलु हिंसा संबंधी जानकारी है और महिलाओं को घरेलु हिंसा का शिकार भी होना पड़ा है लेकिन उनको घरेलु हिंसा के दौरान आवश्यक कानूनी सहायता नहीं मिली है।

महिलाओं के मानव अधिकार तथा उसमें सरकारी प्रयासों को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए निम्न सुझाव दिया जाना आवश्यक है :–

1. भारत पुरूष प्रधान देश रहा है। भारत में परम्परात्मक रूप से पितृसत्तात्मक संयुक्त परिवार व्यवस्था पाई जाती है जिसमें परिवार के पुरूष सदस्यों को तो अनेक अधिकार एवं सुविधाएँ प्राप्त है किन्तु स्त्रियों को अधिकांश सुविधाओं से वंचित रखा जाता है जिससे महिलाएँ घरेलू हिंसा व मानसिक उत्पीड़न का शिकार रहती है। इसके लिए पुरूष वर्ग को भी जागरूक करने की आवश्यकता है और जागरूकता के साथ घरेलु हिंसा के लिए कडे क़ानूनी प्रावधान किये जाने की आवश्यकता है जिससे महिलाओं के मानव अधिकार की सुरक्षा की जा सके।
2. भारतीय सामाजिक व्यवस्था तथा सामाजिक परम्पराओं के अनुरूप महिलाएँ आज भी पुरूषों पर निर्भर, स्त्री अशिक्षा, अज्ञानता, दहेज प्रथा, बाल बिवाह, पर्दा प्रथा, रूढ़िवादिता आदि के कारण महिलाएँ का कार्यक्षेत्र घर तक ही सीमित है और उनके मानव अधिकारों का भी हनन होता है जिससे वह अपने अधिकारों की रक्षा करने में असहज महसूस करती है अत: इस सामाजिक परम्परा को बदलने के लिए कानूनी दखल दिया जाना आवश्यक है। कानूनी प्रावधानों से इस परम्परा को बदला जा सकता है जिससे महिलाओं को उनके कानूनी अधिकार मिल सके।
3. लैंगिक असमानता को दूर करना सामाजिक संरचना के संदर्भ में अनिवार्य है क्योंकि जो समाज इस दिशा में पिछड़ जाता है वह किसी भी प्रकार विकास नहीं कर पाता है और समाज में लैंगिक असमानता को दूर किऐ बिना मानव अधिकारों की रक्षा की बात सोचना गलत साबित होगा। पुरूषवादी सामाजिक सोच के साथ इस असमानता को दूर करने के लिए सामाजिक एवं कानूनी रूप से प्रयास किये जाने चाहिए जिससे महिलाओं को पुरूषों के समान मान–सम्मान एवं अधिकार मिल सके।
4. आज भी इस आधुनिक युग में महिलाएँ रूढ़िवादी मान्यताओं व अंधविश्वासों की जंजीरो में जकड़ी हुई है। इन जंजीरों को स्वयं महिलाएँ ही तोड सकती है क्योकि एक महिला ही दूसरी महिला के दर्द को अच्छी तरह से समझ सकती है। बुजुर्ग महिलाओं को चाहिये कि वह अपनी बहुओं तथा बेटियों को आगे आने के लिये प्रोत्साहित करें।
5. कन्या भ्रूण हत्या को प्रतिबंधित करने के लिए लिंग परीक्षण आदि पर जो कानून बनाये गये है उन प्रावधानों को कड़े करते हुए कठारे निर्णय लिये जाने की आवश्यकता है, लिंग परीक्षण को रोका जा सके और कन्या भ्रूण हत्या पर कठोरता से रोक लगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Agrawal, Nandita : Women Education and Population in India, Chugh Publications, Deli, 1994.
2. Agrawal S.P., Women Education in India, Historical Review : Present Status and Perspective Plan with Statistical Indicators, Concept Publishing company, New Delhi, 1993.
3. मिशेलाइन, आर. एशे, द हिस्ट्री ऑफ ह्यूमन राइट्स, ओरियन्ट लाँगमैन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 2004।
4. मनोरंजन, मोहेते, पार्श्वनाथ मुखर्जी पिप्ल्स राइट्स सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1998।
5. रॉय संजय के, रिफ्यूजी एण्ड ह्यूमन राइट्स, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 2001।
6. सिंह रामगोपाल, रेस्ट्रोरेशन ऑफ ह्यूमन राइट्स एण्ड डिग्नीटी टू टेलिट्स, मानक पब्लिशर्स, नई दिल्ली, (2004)
7. सिंह उज्जल कुमार, ह्यूमन राइट्स, सेज पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2008।
8. सिन्हा, पी.सी., ग्लोबल सार्स बुक ऑन ह्यूमन राइट्स वाल्यूम 1,2, कनिष्का
9. प्रेस, नई दिल्ली, 2006।
10. सुब्रहम्ण्यम एस.एस. ह्यूमन राइट्स इन्टरनेशनल चेलेन्जेस, मानस, पब्लिकेशन नई दिल्ली, 1997।
11. यूविन, पिटर, ह्यूमन राइट्स एण्ड डेवलपमेन्ट, कुमारियन प्रेस, ब्लूमफिल्ड, 2005।
12. विजापुर अब्दुर्लाहिम, प्रिस्पेक्टिव ऑन ह्यूमन राइट्स, साउथ एशिया पब्लिशर्स, जंगपुरा, 1999।

****

नारी अबला नहीं सबला है

सौ.मुल्ला जाहिदा असलम*

प्रस्तावना –

कोमल है कमजोर नहीं तू
शक्ति का नाम ही नारी है,
जग को जीवन देनेवाली
मौत भी तुझसे हारी है।

नारी इस शब्द में औरत का रूप परिपूर्ण होता है। नर को आरी – नर का हथियार जो नर को अपने जीवन के जीने के मकसद को पूरा करने के लिए इस्तेमाल में लाया जाता है। ईश्वर ने ही नारी को दुय्यम स्थानपर रखा है, फिर इन्सान तो इन्सान है। ईश्वर ने नारी की निर्मिती इन्सान के बाएँ फसली से की है। एक अकेला इन्सान औरत के बिना अधूरा सा लगा ईश्वर को, इसलिए उसके ही अंग का आधा हिस्सा निकालकर एक सुंदर खुबसूरत प्रतिकृति बनाई वो कहलाई अर्धांगिनी। खुद ईश्वर ने सोचा कि इतनी कम मिट्टी में इतनी कोमल खुबसूरत मूरत तो बनी, तो इसमें कुछ ऐसा डाला जाए जिससे इसका महत्तव बना रहे। इसलिए ईश्वर ने इसमें अपनी शक्तियाँ डाली – जैसे की – सुंदरता, सहनशीलता, निर्मिती, दया, क्षमा और प्रेम की प्रचुर मात्रा से बनी नारी...।

हर युग में नारी –अगर थोडासा पीछे मुडके देखे तो इतिहास के पन्नों में देखेंगे कि, नारी सतयुग से कलयुग तक सिर्फ छली गई है।

अबला नारी हाय तेरी यही कहानी
आँचल में दूध और आँखों में पानी।

अपनी सत्यता का परिचय, पवित्रता का परिचय देने के लिए खुद भगवान राम ने भी सीता की अग्निपरीक्षा ली। अपने पति के लिए द्रौपदी को वस्त्रहीन होना पड़ा। नल के विरह में कई सालों तक दमयंती को वनों भटकना पड़ा। समाज से प्रताडित होना पड़ा कुंती को। चौदा साल का असली वनवास भुगतना पड़ा उर्मिला को। लक्ष्मण के बिना ये तो रहा सतयुग। मध्युग में भी समाज की दुष्ट परिकल्पनाओं में झुलसना पड़ा नारी को। नारी का जन्म ही अशुभ माना जाता था। उसे पैदा होते ही जिंदा जमीन की हवाले किया जाता था। घर की प्रतिष्ठा को कम करती थी। नारी समाज को कुप्रथाओं की बली चढती थी। पति के मृत्यूपर जिंदा आग में कूदना पडता था। नारी को घर से बाहर निकलना मुश्किल था। पति के मृत्यू की सजा भुगतने के लिए उसके बाल काटकर उसको बदसूरत किया जाता था।

हर आँगन की शोभा नारी
उसमें बसती दुनिया सारी
जब नारी में है शक्ति सारी
फिर भी नारी क्यों है बेचारी?

'चूल और मूल' इस परिकल्पना में डूबा समाज औरत को हीन भाव से देखता था।

सतियों के नाम से तुझे जलाया
मीरा के नाम पे जहर पिलाया...।

जिसकी कोख से जन्म लेता था, उसी की कोख में छुरा भी इन्सान ही मारता था। शिक्षा के क्षेत्र में पहला कदम उठानेवाली फातिमा शेख और सावित्रीबाई फुले को कीचड और गोबर भी झेलना पडा।

कलयुग की तो बात न पूछो – हम जैसे विज्ञानयुग, कम्प्युटर युग की ओर जाने लगे हमारे अंदर मशीनी दिल–दिमाग पैदा हुआ है। हमारे अंदर के जजबात भी मर गए है। आज नर में पशु भी समाविष्ट हुआ है और आज भी दिल्ली जैसे हादसे में निर्भया मर जाती है।

नारी का अपना स्थान/वजूद –

बिखरा पड़ा है तेरे ही घर में तेरा वजूद
बेकार महफिलों में तुझे ढूंढता हूँ मैं।

नारी अपनी सशक्त मनोधारणा से लडती रही तब से लेकर आजतक। अपने हक के लिए आवाज उठाई। लडना पड़ा हर बार। उसे अपने अंदर की शक्ति का एहसास हुआ, अपने आपको साबित किया। घर के दहलीज से जैसे बाहर कदम रखा समाज का रूप बदल गया। खेतों–खलिहानों से दिल्ली की तख्ततक पहुँची नारी उसका उदा.है अपनी इंदिरा गांधी, प्रतिभा पाटिल। सभी क्षेत्रों में अपनी छाप छोड दी है। खेल के मैदान में सानिया मिर्झा, सायना नेहवाल, एवरेस्ट की ऊँचाई ही नहीं बल्कि आसमान की ऊँचाई नापनेवाली कल्पना चावला और सुनीता विल्यम। आज हमारे इतिहास के पन्नों में अपना नाम लिख रही हैं। मेरी कॉम, अरूणा असफअली, मादाम कामा, रजिया सुलताना, राणी लक्ष्मीबाई, डॉ.आनंदीबाई, किरण बेदी, सुरेखा भोसले, युसुफजाई मलाला ऐसी एक ना अनेक महिलाएँ अनेक क्षेत्रों को अपने कर्तव्यपरायणता से चमका रही है। घर की सेवा से लेकर देश की सेवा में भी ये पीछे नहीं हैं।

ये भारत की नारी है
फूल नहीं चिंगारी है।

इसतरह हर क्षेत्र में नारी ने अपना वजूद छोडा है।

समाज में नारी का स्थान – हमारी पुरूष प्रधान संस्कृति आज भी नारी को पीडित कर रही है। समाज के मुठ्ठीभर रूढीवादी परम्परा के समर्थक अपनी नकारात्मक सोच के चलते लड़की की स्वतंत्रता को परस्पराविरोधी क्यों मान बैठते है ? आज नारी ने अपना अस्तित्व खोज निकाला है। अपनी समस्याओं से जुझ रही है। अपने हर रिश्ते को सही मायने में निभा रही है। अपना घर, परिवार, रिश्ते, दफ्तर, गाँव, राज्य और अपने देश की परिसीमाओं की ऊँचाई पर पहुँचाने के लिए लड़ रही है खुद से और समाज से।

* सहायक प्राध्यापक, शाहीन हायस्कूल, कराड (महा.) भारत

आज की स्थिति देखी जाए तो हमारा समाज नारी को सरपर ले भी रहा है और दूसरी तरफ पैरों तले कुचल भी रहा है। नारी का सम्मान सही मायने में तब होगा जब हमारा समाज अपनी मानसिकता को खुद बदलेगा। सुंदरता को देखना, परखना, उसका उपभोग लेना प्रकृति का नियम है। जो भावनाएँ पुरूष में स्थित होती है, स्त्री में भी वही होता है। लेकिन औरत अपने भावनाओं पर वक्तपर काबू पाती है। समाज में रहते हुए सभी नियमों का पालन करती है। लेकिन पुरूष यह नहीं कर पाता। यह तभी संभव होगा जब हर पुरूष जिस तरह अपने पत्नी, माँ, बेटी, बहन को देखकर अपना कर्तव्य निभाता है। उसी तरह समाज में भी हर औरत के प्रति वह कर्तव्यदक्ष रहेगा तभी बदलाव आएगा।

नारी सबलीकरण –

यंत्र पूज्यंते नारी
तत्र वसते दैवतरू

आज नारी को इस बात का एहसास कराने की आवश्यकता है कि वह अबला नहीं सबला है। स्त्री–आग और ज्वाला होने के साथ–साथ शीतल जल भी है। आज नारी को सिर्फ आवश्यकता है आत्मविश्वास की। यदि उसने खुद के इच्छा शक्ति को मजबूत बना लिया तो कोई भी उसे रोक नहीं पाएगा। अपनी ऊर्जा, क्षमताओं को जानने परखने की उसे जरूरत है। काश! ऐसा हो जाता तो दिल्ली गैंगरेप जैसे काण्ड नहीं होते। समाज में छिपे दरिन्दों की विकृत मानसिकता का हर सबला मुँहतोड जबाब दे सकती है। यम जैसे महाकाल को हरानेवाली सावित्री हममें मौजूद है, तो आजकल के महाकाल की क्या बात? इसलिए उसे स्वयं को पहचानना होगा। साथ ही समाज के स्त्री पुरूष दोनों की रूढीवादी विचारधारा का परित्याग करना होगा। पूरी दुनिया में आधी आबादी महिलाओं की हैं। इसके बावजूद हजारों वर्ष की चली आ रही परम्परा बदस्तुर जारी है। सारे नियम कानून महिलाओं पर लागू होते हैं। जितनी स्वतंत्रता लडकों को मिल रही है, उतनी लडकियों को क्यों नहीं? बराबरी का ढिंढोरा पीटनेवाले तो है, लेकिन महिलाओं पर लगनीवाली पाबंदियों को कम करनेवाला कोई नहीं है। लडकों जैसा जीवन यदि लडकियाँ जीना चाहती हैं तो उन्हें नसीहतें दी जाती है। इनके स्वतंत्रता जैसे मौलिक अधिकारों की धज्जियाँ उडाई जाती है। क्या लडकियाँ उतनी प्रतिभाशाली और बुध्दिमान नहीं जितनी की लडके? वर्तमान में लगभग हर क्षेत्र में लडकियाँ अपने हुन्नर से लडकों के आगे निकल चुकी है और यह क्रम अब जारी है। आवश्यकता है कि समाज का हर वर्ग जागृत हो और नारी को प्रोत्साहित कर उसे आगे बढने का अवसर प्रदान करें।

नारी सशक्तिकरण – नारी सशक्तिकरण समाज का विकास है। हम नारियों को सशक्तिकरण इस मायने में नहीं चाहिए कि हम सशक्त नहीं, बल्कि इस मायने में चाहिए कि हम अपने अंदर निहित शक्ति को बाहर लाए, उसका सकारात्मक उपयोग करके दुनिया को दिखाएँ कि हम सचमुच सशक्त है। नारी को अपने अलग–अलग रूपों से गुजरना होता है। पुरूष तो एक घर का चिराग जलाता है। लेकिन नारी दो–दो घरों को रोशन करती हैं। कभी बेटी, कभी पत्नी, कभी बहन, कभी बहू, कभी माँ, तो कभी प्रेमिका। हर वक्त एक मजबूत सहारा होती है नारी...।

नारी को अपनी पहचान, अपना चरित्र एवं अपनी प्रतिष्ठा खोने न देना है। अपने आपको बगीचे की तरह न संवारना है कि, वहाँ हर कोई टहल सकें। बल्कि खुले विस्तृत आकाश की तरह संवारना है जहाँ हर किसी की पहुँच संभव न हो। जिस तरह बोन्साई के जडों व शाखाओं को बार–बार काटकर बढने तथा फैलने से रोका जाता है और अपने शोक के लिए खुबसूरत बनाया जाता है। उसी तरह समाज नारी को भी बढने और फैलने से रोकता है। हमें इस जड़ मानसिकता को भी मारना होगा। इससे ऊपर उठकर समानता के साथ नारी को समाज के आगे लाना होगा, यही बदलाव आज जरूरी है।

दुनिया में वो न्यारी है
नारी सबको प्यारी है।

बदलाव के साथ बदलना होगा वर्ना बदलाव हमें खुद बदलेगा। हम स्त्री–पुरूष को अपने–अपने सीमित और संकीर्ण दायरे से बाहर निकालकर मानवता के विस्तृत दायरे में देखना होगा एवं काम करना होगा। तभी नारी–पुरूष समेत समस्त समाज, पूरे विश्व व पूरी मानवता का भला होगा। गाँव, देहात से लेकर शहरी वातावरण में रहनेवालों को आपनी सोच में बदलाव लाना होगा। महिलाओं को जीने के पूरे अधिकार सम्मानपूर्वक मिलने चाहिए। जनमानस की रूढीवादी मानसिकता ही सबसे बड़ी बाधा है। जो स्त्री विरोधी कार्यो, मसलन, भ्रूणहत्या, दहेज प्रथा में आडे आती है। इसलिए कानून व सख्त सजाओं की आवश्यकता है। जब महिलाएँ स्वयं जागरूक होगी तो वे समय–समय पर ज्वाला, रणचण्डी, गंगा, कावेरी, नर्मदा, जमना का रूप धारण कर अपने शक्तिस्वरूपा होने का एहसास दिलाएगी। उस विकृत समाज के जहाँ घृणित मानसिकता के लोग अपनी गिध्द दृष्टि जमाए बैठे है। उन्हें जरूरी है कि स्त्री को स्वतंत्र, स्वावलंबी बनने का अवसर स्वखुशी दिया जाए। न भूले कि नारी अबला नहीं सबला है। किसी के रहम की मोहताज नहीं।

नारी किसी भी स्तर पर कमजोर नहीं है। वह जागृत होकर पुरूषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने में आगे आ रही है। नारी शक्ति को देख हमारे संविधान ने 50%आरक्षण मंजूर कर दिया है। नारी सहनशीलता की प्रतिमूर्ति है, पर उन्हें अपने ऊपर होनेवाले अत्याचार के खिलाफ आगे आना चाहिए। हमें महिलाओं का सिर्फ एक दिन नहीं बल्कि सदैव सम्मान करना चाहिए। आज नारी ने अपनी ताकद से अपना अस्तित्व तो बना लिया है। लेकिन जिस तरह पुरूष नारी के बिना अधूरा है, वैसे नारी भी पुरूष के बिना अधूरी है। पुरूष को खुद आधारस्तंभ बनकर नारी को आगे बढने का हौसला देना होगा। तभी इस समाज ही नहीं, पूरे विश्व में क्रान्तिपूर्ण बदलाव आएगा और नारी खुली हवा में साँस ले सकेगी।

मुझे देख ये न सोचो कि क्या हूँ ?
मैं वो रोशनी हूँ, हर जर्रे को चमकना सीखाती हूँ।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रतिमा चतुर्वेदी, भारत में सामाजिक समस्याएँ, वाइकिंग बुक्स, जयपुर, प्र.स. 2011
2. उमा शुक्ल, भारतीय नारी अस्मिता की पहचान, लोकभारती प्रकाशन,इलाहाबाद, सं. 2009
3. डॉ.सीता मिश्र, साठोत्तरी महिला उपन्यासकारों के उपन्यासों में पात्रों का परिवर्तित मूल्यबोध, अन्नपूर्णा प्रकाशन, कानपुर, प्र.स. 2010
4. दुर्गेशनंदिनी, हिंदी उपन्यासों में सामाजिक परिप्रेक्ष्य, क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नईदिल्ली, प्र.स. 2010

****

पर्यावरण संरक्षण एवं संवैधानिक प्रावधान (भारत की राजनीति के संदर्भ में)

डॉ. अभिजीत सिंह*

शोध सारांश – भारत का संविधान न केवल एक सक्रिय तत्व, अपितु विगत अनेक दशकों से विभिन्न चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में अनेकों बार जनित एवं विकसित हुआ है। भारतीय परिदृश्य में, पर्यावरण संरक्षण का विषय, न केवल भूमि के मौलिक कानून की अवस्था के लिए उठाया गया है, बल्कि इसे मानव अधिकारों के दृष्टिकोण के साथ भी सम्बद्ध किया गया है और अब इसे एक सुव्यवस्थित तथ्य माना जाता है कि यह मूल मानव अधिकार है हर व्यक्ति को, पूरी मानवीय गरिमा के साथ प्रदूषण मुक्त वातावरण में रहना है। हमारे संविधान की प्रस्तावना समाजवादी समुदाय की व्यवस्था करती है जिसका उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण को प्रोत्साहन देना है। मूलभूत कर्तव्यों के अनुसार भी पर्यावरण की रक्षा सभी नागरिकों का दायित्व है।नीति निर्देशक सिद्धांत भी कल्याणकारी राज्य के निर्माण के आदर्शों की दिशा स्पष्ट करते हैं। स्वस्थ वातावरण एक कल्याणकारी राज्य के आवश्यक तत्वों में से एक है। अनुच्छेद 47 में कहा गया है कि पोषण के स्तर को बढ़ाने और नागरिकों के जीवन स्तर एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार हेतु पर्यावरण के संरक्षण और सुधार सम्बंधी विषयों का समावेश है। संविधान के अनुच्छेद 48-ए में कहा गया है कि पर्यावरण की रक्षा, सुधार और देश के वनों एवं वन्य जीवन की रक्षा करने का प्रयास राज्य द्वारा किया जाएगा।

अत: वर्तमान शोध पत्र के माध्यम से भारतीय संविधान के विभिन्न प्रावधानों द्वारा पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता को प्रकट करने का प्रयास किया गया है। साथ ही, राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में इसके वर्तमान परिदृश्य का चित्रण भी शोध-पत्र में किया गया है।

शब्द कुंजी – पर्यावरण संरक्षण, भारतीय संविधान, अनुच्छेद।

प्रस्तावना – वर्तमान में मानव विकास हेतु इस स्तर पर पहुँच गया है कि उसे अपने पर्यावरण की ओर दृष्टिपात करने का समय ही नहीं है। उसने विस्मृत कर दिया है कि उसे पृथ्वी पर ही निवास करना है। विश्व में प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह बच्चा हो या वृद्ध अपने पर्यावरण के प्रति सजगता, जागरूकता, चेतना और पर्यावरण अनुकूलन को विकसित करने की आवश्यकता है और तभी इस गंभीर समस्या का समाधान किया जा सकता है।भारत प्राचीन समय से ही पर्यावरण संरक्षण को लेकर सदैव सजग रहा, इसी कारण संवैधानिक स्तर पर भी पर्यावरण संरक्षण की आरे धयान दिया गया। देश में पर्यावरण के अनुकूल एक समृद्ध संस्कृति भी रही है यही कारण है कि देश में प्रत्येक स्तर पर पर्यावरण संरक्षण के प्रति धयान दिया गया और संविधान निर्माताओं ने इसका ध्यान रखते हुए संविधान में पर्यावरण का स्थान सुनिश्चित किया। पर्यावरण को संवैधानिक स्तर पर मान्यता देते हुए इसे सरकार और नागरिकों के संवैधानिक दायित्व से जोड़ा गया।

संविधान में पर्यावरण संरक्षण के लिये कुछ प्रावधान किए गए हैं। संविधान देश का सर्वोच्च तथा मौलिक कानून है तो समस्त व्यक्तियों, राज्यों पर बाध्यकारी रूप से लागू होता है। प्रारंभ में पर्यावरण संरक्षण के संबंध में प्रावधान नहीं था लेकिन अनुच्छेद 47 द्वारा स्वास्थ्य की उन्नति हेतु राज्य का कर्त्तव्य अधिरोपित कर पर्यावरण सुधार किया गया। संसद द्वारा 42वें संवैधानिक संशोधान द्वारा पर्यावरण संरक्षण के लिये अधिनियमों को पारित करके संविधान के भाग 4 में राज्य के नीति निर्देशक एवं मूल कर्त्तव्यों में सम्मिलित किया गया है इसके अंतर्गत कहा गया है –

1. राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अनुच्छेद 48 में कहा गया है कि राज्य पर्यावरण सुधार एवं संरक्षण की व्यवस्था करेगा तथा वन्य जीवन को सुरक्षा प्रदान करेगा।
2. संविधान के भाग 4 क के अनुच्छेद 51 में मूल कर्त्तव्यों में प्राकृतिक पर्यावरण की जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी अन्य जीव भी हैं इनकी रक्षा करें और उनका संवर्धान करें तथा प्राणि मात्र के प्रति दया भाव रखें।
3. भारतीय संविधान के अनुच्छेद-21 में कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को उन गतिविधियों से बचाया जाना चाहिए, जो उसके जीवन, स्वास्थ्य और शरीर को हानि पहुँचाती हो।
4. भारतीय संविधान के अनुच्छेदों 252 व 253 को काफी महत्त्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि वे पर्यावरण को धयान में रखकर कानून बनाने के लिये अधिाकृत करते हैं।

भारतीय संविधान में प्रदूषण मुक्त पर्यावरण हेतु अनेक प्रावधान व्यापक रूप से विद्यमान है। किसी भी कानून की वैधाता के लिये यह अति आवश्यक हो जाता है कि केवल अधिनियम द्वारा संरक्षण न प्राप्त हो बल्कि संविधान द्वारा प्रदान किए गए अधिकारों के अधीन बनाया गया हो। भारतीय संविधान में न केवल पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा निहित है, बल्कि पर्यावरण असंतुलन से होने वाले दुष्प्रभावों से भी रक्षा की तरफ धयान दिया है।

पर्यावरण संरक्षण-शासकीय प्रयास – संसद द्वारा भी पर्यावरण संरक्षण के लिये अनेक अधिनियम पारित किए गए हैं –

1. वन्य जीवन संरक्षण अधिनियम (1972)
2. जल प्रदूषण नियंत्रण अधिनियम (1974)
3. वायुप्रदूषण नियंत्रण अधिनियम (1981)
4. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम (1986)

* सहायक प्राध्यापक, महात्मा गाँधी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, करेली, जिला नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

5. खतरनाक अपशिष्ट प्रबंधन एवं निष्पादन अधिनियम (1989)
6. ध्वनि प्रदूषण नियमन एवं नियंत्रण अधिनियम (2000)
7. भारतीय दंड संहिता (1860)
8. इकोवार्म स्कीम

संसद ने पर्यावरण संरक्षण अधिनियम पारित करके सराहनीय प्रयत्न किए हैं। पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने भी पर्यावरण संरक्षण में महत्त्वपूर्ण अतुलनीय योगदान दिया है। वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के इन धयेयों में वनस्पतियों, वन रोपण, जीव जंतुओं और वन्य जीवों का संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण एवं निवारण, पर्यावरण की सुरक्षा सुनिश्चित करना शामिल है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सरकारी प्रयास किए जा रहे हैं।

1. केंद्र सरकार द्वारा 1988 में गोविंद वल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्था की स्थापना।
2. भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास बोर्ड की स्थापना 1985 में की गई।
3. केंद्र ने 1988 ई. में राष्ट्रीय वन तथा वन्य जीव संबंधी नीति का निर्माण किया गया।
4. केंद्र सरकार ने कुछ वन्य क्षेत्रों को संरक्षित कर दिया है।
5. केंद्र सरकार द्वारा 1985 ई. में गंगा को स्वच्छ रखने के उद्देश्य से गंगा सत्ता की स्थापना की गई।
6. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम (1986) के अंतर्गत केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण एवं निवारण बोर्ड की स्थापना की गई।
7. केंद्र सरकार द्वारा राष्ट्रीय पर्यावरण फेलोशिप की स्थापना 1995 ई. में की गई।

इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय पर्यावरण नीति (2006) विकसित की गई इसके साथ-साथ जन जागरण, सचल पर्यावरणीय प्रयोगशाला, पर्यावरण संबंधी आंदोलन, जिसमें चिपको आंदोलन 1970 के दशक में चलाया गया जिसका उद्देश्य हिमालय क्षेत्र के वन एवं जैव विविधाता को बनाया था। शांत घाटी आंदोलन तथा नर्मदा बचाओ आंदोलन इन सभी का उद्देश्य पर्यावरण की रक्षा करना था।

संसद के साथ-साथ न्यायपालिका ने संवैधानिक प्रावधान का पर्यावरणीय संदर्भ में निर्वाचन करके पर्यावरण संरक्षण एवं सुधार करने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। न्यायालय ने अनुच्छेद 14 और 21 के निर्वाचन द्वारा मानव स्तर और इस पर पड़ने वाले पर्यावरणीय प्रभावों को नए आयाम दिए हैं।

उपसंहार – वर्त्तमान समय में मनुष्य प्रगति की ओर उन्मुख है। वह प्रतिदिन वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी क्षेत्र में उन्नति कर विकास की ओर बढ़ता जा रहा है वहीं दूसरी ओर विकास की गति कष्टकारी सिद्ध होती जा रही है और इसी विकास के कारण पर्यावरण प्रभावित होकर प्रदूषित होता जा रहा है। वनों की कटाई, वनस्पतियों और जीवों के संबंधों में कमी, औद्योगीकरण एवं शहरीकरण में वृद्धि, विज्ञापन तथा तकनीकी का अप्रत्याशित प्रसार और जनसंख्या विस्फोट तथा परमाणु भट्टियों में पैदा होने वाली रेडियोधर्मी ईंधन की राख, रासायनिक प्रदूषक और इलेक्ट्रॉनिक उपकरण जनित प्रदूषक सामग्री के विस्तार से जो पारिस्थितिकी परिवर्तन प्रदूषण के रूप में सामने आ रहे हैं, उससे प्रकृति का संतुलन बिगड़ गया है। प्रकृति दोहन के कारण जो स्थितियाँ उत्पन्न हो रही हैं, उसमें प्रकृति कब तक मनुष्य का साथ दे पाएगी यह अनुमान लगाना कठिन नहीं है। विकसित देश जिस आर्थिक विकास का लाभ उठा रहे हैं वह भूतकाल में मानवीय पर्यावरण आज से पचास वर्ष पूर्व से ही पर्यावरणविद मानव और प्रकृति के बिगड़ते संबंधों के बारे में सचेत किए जा रहे हैं, लेकिन उपभोग के नाम पर औद्योगीकरण दिनों दिन बढ़ता जा रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ. भार्गव रणजीत, 'भारतीय पर्यावरण इतिहास' के झरोखे से
2. पुष्पेश पंत, '21वीं शताब्दी में अन्तरराष्ट्रीय संबंध' मैकग्रा हिल एजुकेशन, नई दिल्ली, 2014
3. आर.सी. अग्रवाल, 'भारतीय संविधान का विकास तथा राष्ट्रीय आंदोलन', एस. चंद एंड कंपनी लिमिटेड, नई दिल्ली, 2000
4. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी, 'भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व', प्रथम संस्करण, 1981

****

भारत में बसे पारसी समुदाय के धार्मिक सिद्धान्तों का अध्ययन

डॉ. आमोद शर्मा *

शोध सारांश – लगभग आठवीं शताब्दी में भारत में पारसी धर्म का आविर्भाव देखा गया। पारसी धर्म को 'जोरोस्टर धर्म' भी कहा जाता है। क्योंकि संत जोरोस्टर ने इसकी शुरूआत की थी। संत जोरोस्टर को ऋग्वेद के अंगिर, बृहस्पति आदि ऋषियों का समकालिक माना जाता है। परन्तु ऋग्वेद ऋषियों के विपरीत जोरोस्टर ने एक संस्थागत धर्म का प्रतिपादन किया। सम्भवत: किसी संस्थागत धर्म के वह प्रथम पैगम्बर थे। इतिहासकारों का मत है कि वे 1700-1500 ई. पू. के बीच सक्रिय थे। वे ईरानी आर्यो के स्पीतमा कुटुम्ब के पौरूषहस्प के पुत्र थे। उनकी माता का नाम दुधधोवा (दोग्दों) था। 30 वर्ष की आयु में उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ। उनकी मृत्यु 77 वर्ष 11 दिन की आयु में हुई।

शब्द कुंजी – ऋग्वेद, अग्नि, बृहस्पति, स्पीतमा

प्रस्तावना – जोरोस्टर, पारसी धर्म के संस्थापक थे, इन्होंने अद्वैतवाद (केवल एक परमेश्वर में विश्वास) और पूर्णत: नैतिक जीवन का उपदेश दिया। वे मूर्ति पूजा और आडंबरपूर्ण धार्मिक अनुष्ठानों के विरोधी थे। पारसी धर्म के सिद्धान्त मुख्यत: दो धार्मिक ग्रन्थों में लिखे हुए है। इनमें पहली पुस्तक का नाम अवेस्ता अथवा जेन्द अवेस्ता है। यह चौथी से छठी शताब्दी के बीच में एकत्रित किए गए लेखों का संग्रह है। दूसरे ग्रन्थ में जरस्थुस्ट्रा को समर्पित पाठ है। आरम्भ में ये पाठ मूलत: मौखिक परम्परा से संबंधित थे। गाथाएँ, संख्या में पांच हैं। इनमें से पहली चार नीति-विषयक और दार्शनिक है। इनमें 'अहूरा-माजदा' का सर्वव्यापी और सर्वशक्तिमान स्वरूप का वर्णन मिलता है। इनमें दुरात्माओं की गतिविधियाँ द्वारा पैदा की गई अशुभ समस्याओं का समाधान भी दिया गया है। पाँचवीं गाथा जोरोस्टर की पुत्री के विवाह के अवसर पर गाई गई प्रशस्ति है, ये गाथाएँ अवेस्ता में लिखी हुई है जो कि वैदिक संस्कृत से बहुत मिलती जुलती है। पारसी धर्म में अहूरा माजदा को सर्वोच्च ईश्वर माना जाता है। उसे ही स्वर्ग और पृथ्वी, दिन और रात, प्रकाश और अंधकार का रचयिता माना जाता है। इन्हें जीवन की अच्छाई और बुराई की शक्तियों के बीच संघर्ष के रूप में समझा गया है।

पारसी धर्म में आंगरा मैन्यू को दुरात्मा माना गया है। मनुष्य को अच्छाई और बुराई में अन्तर समझना चाहिए। जोरोस्टर ने नीति शास्त्रीय द्वैतवाद का प्रचार किया जिसमें अच्छी और बुरी आत्माओं के अस्तित्व का वर्णन है। उन्होंने अच्छी व बुरी भावनाओं से प्रेरित होने वाली मानवीय क्रियाओं के मतभेद पर विशेष ध्यान दिया है।

विचारों, भाषा और कर्मो की पवित्रता का अभिप्राय अच्छाई करने के दृढ़ संकल्प से है। कोई भी कार्य जो इस, भावना से प्रेरित नही होता है वह बुरे कामों की ओर प्रवृत्त हो जाता है। अत: मनुष्य का प्रथम कर्तव्य है कि वह धर्मपरायण जीवन व्यतीत करें। हर व्यक्ति को अपने ईष्ट अहूरा माजदा के साथ-साथ दुरात्माओं के विरूद्ध संघर्ष करना चाहिए। उसमें बहुत सदात्माएँ उसकी मदद करेंगी। पारसी धर्म की यह मान्यता है कि जो व्यक्ति धर्मपरायण जीवन व्यतीत करता है उसे स्वर्ग मिलता है। इसे विचार, भाषा और कर्म में अमिट पवित्रता का स्वरूप बताया गया है। यदि कोई मनुष्य अपवित्र जीवन व्यतीत करता है तो उसे दुरविचारों, दुष्कर्मो और शारीरिक यात्नाओं से भरा अनंत नर्क भोगना पड़ता है। पारसियों का विश्वास है कि आत्मा मृत्यु के पश्चात् भी जीवित रहती है। अहूरा माजदा के निरीक्षण में निर्णय दिवस पर आत्मा की नियति का फैसला होता है। जिस तरह सनातन धर्म के अन्दर विचार, भाषा और कर्म की पवित्रता को बनाये रखने को कहा जाता है। उसी तरह पारसी धर्म के आदर्शो में भी यही सब बाते सम्मिलित है।

पारसी धर्म की एक महत्वपूर्ण विशेषता है कि यह जीवन में ब्रहम्चर्य, सन्यास, विरक्ति, आत्मत्याग का उपदेश नही देता है। यह व्यक्ति के विचार, भाषा और कर्म में दृढ़ पवित्रता चाहता है। इस धर्म के अनुसार व्यभिचार, बलातकार इत्यादि कर्म परित्याज्य माने गये है। (हिन्दू धर्म में भी व्यभिचार व बलात्कार जैसे पाप कर्मो को दण्डनीय कर्म माना गया है।)

पारसी धर्म में पवित्रता का अग्नि के साथ घनिष्ठ संबंध है। पारसियों के लिए अग्नि की पूजा करना पवित्रता, शक्ति, जल, प्रकाश, और तेज का प्रतीक है। अग्नि अहुरा माजदा का प्रतीक है। पारसियों के मंदिर अग्नि के आकार के बने होते है। और इनकी तीन श्रेणियाँ होती है, अताश बेहराम, अगिआरिश और दादगाह। यह व्यवस्था उनकी पवित्रता पर आधारित है। यदि एक बार पवित्र अग्नि मंदिर में प्रतिष्ठापित कर दिया जाता है तो उसे सदैव प्रज्जवलित रखा जाता है। जिस प्रकार हिन्दु धर्म में यज्ञ की अग्नि में आहुति दिये बिना कोई भी अनुष्ठान पूर्ण नहीं होता उसी तरह पारसी अग्नि मंदिर में होने वाली हर पूजा अनुष्ठान में चन्दन की लकड़ी से प्रज्जवलित अग्नि का विशेष महत्व है।

बहुत से अग्नि मंदिर पारसियों के लिए तीर्थ यात्रा के स्थान है। सबसे प्राचीन अग्नि 'ईरानशाह' के नाम से जानी जाती है। जो 1300 वर्षो से अधिक समय से जल रही है। यह उद्वदा (ईरान) में है। प्रत्येक पारसी के घर में जली पवित्र अग्नि रखी जाती है। अग्नि मंदिर के पुजारी 'अवेस्ता' पवित्र धर्मग्रंथ में से दिन में पांच बार पाठ करते है। प्रत्येक घर में हर पारसी से यह अपेक्षा की जाती है कि वह दिन में पांच बार प्रार्थना करें। पवित्र धर्म ग्रंथों का अनुवाद जिसमें अवेस्ता का अनुवाद भी सम्मिलित है, 1820 में पुरा हुआ था। यह 'पहलवी' (प्राचीन भाषा) से गुजराती में किया गया था। पारसी धर्म में धार्मिक कार्यो के लिए व्रत का महत्व नहीं माना गया है। हिन्दू धर्म में जिस तरह तीर्थ यात्रा का महत्व बताया गया है व हिन्दू धर्म के लोग अलग-

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) अरिहंत कॉलेज, इन्दौर (म.प्र.) भारत

अलग मंदिरों की यात्रा कर अपनी तीर्थ यात्रा पूरी करते है, उसी तरह पारसी धर्म के लोग भी अपने धर्मो के मंदिर की यात्रा कर अपनी तीर्थ यात्रा सम्पन्न करते है।

जोरोस्टर की गाथाएँ जोरोस्टर मत के बारे में जानकारी प्राप्त करने का अन्य स्त्रोत है। ये समाज का वह चित्रण प्रस्तुत करती है जिसमें कृषि कार्य करना, पशुपालन, पशुओं के झुण्डों के साथ स्नेह दर्शाया गया है। इनकी धार्मिक प्रार्थना बेहराम येश्त में गाय के प्रति श्रद्धा का प्रमाण मिलता है। पारसी धर्म का पहलू (गाय का सम्मान) हिन्दू धर्म से प्रभावित हैं क्योकि हिन्दू धर्म में भी गाय को पवित्र माना जाता है।

निष्कर्ष – पारसी धर्म के विश्वासों का जीवन की दिनचर्या से घनिष्ठ संबंध है और इसका पालन करना पारसी समुदाय के प्रत्येक सदस्य का कर्त्तव्य माना जाता है। हिन्दू धर्म के वेद जिस प्रकार हमें अनुशासन व श्रेष्ठतम कर्म की प्रेरणा और परमात्मा की उपासना करके अपना जीवन उत्तम बनाने का मार्ग प्रशस्त करते है। उसी तरह पारसी धर्म में ग्रन्थों में भी यही उपदेश प्रदान किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Bharucha Dadabhai, SE : A Brief sketch of the Zoroastrian religion and custom, 1998.
2. Coyaji Goocheher, D : Our Zarathushti religion : some relevant point. 1984.
3. Karaka, D.F. : History of the Parsis including their manners, custums, Religion and present Position, 1993.
4. Lang samule : The Religious system of Parsis : Bombay Education Society, 1903.
5. Masani, R.P. : The Religion of the Good life Zoroastrianism, New Delhi,2002.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

कृषि आधारित उद्योगों की संरचना (राजस्थान के विशेष संदर्भ में)

डॉ. शशि सांचिहर* डॉ. परस राम तेली**

प्रस्तावना – औद्योगिक विकास व उसका जटिल स्वरूप जो वर्तमान में दिखाई दे रहा है वह द्वितीय विश्व युद्ध के बाद की घटना है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से ही तकनीकी व शैगोलिक दृष्टि से औद्योगिक गतिविधि पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है। औद्योगिक भूगोल का ही एक क्षेत्र है जिसमें कृषि आधारित उद्योगों का अध्ययन किया जाता है। जिसमें कृषि आधारित उद्योगों के सभी पहलुओं पर विचार किया जाता है। उद्योगों के उत्पादन व अधिक लाभ हेतु इस प्रकार का वर्णन किया जाता है कि कम लागत पर अधिक उत्पादन हो तथा अधिक मानव आवश्यकता की पूर्ति हो सके ऐसा विचार किया जाता है।

पर्यावरण भौगोलिक, भूगर्भिक एवं जैविक अन्र्तसम्बन्धों का एक जाल है, जो कि जीवन एवं पृथ्वी के मध्य संबंध स्थापित करता है। यह समस्त जीव-जन्तुओं के आवास एवं उनको प्रभावित करने वाली परिस्थितियों को भी इंगित करता है। पर्यावरण के मुख्य घटक वायुमण्डल, स्थलमण्डल, जलमण्डल एवं जैवमण्डल हैं।

मानव अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए पृथ्वी के वातावरण से विभिन्न प्रकार की वस्तुएं प्राप्त करता है इन वस्तुओं में सबसे महत्वपूर्ण है 'कृषि' । मानव की सम्पूर्ण क्रियाएं संसाधनों पर निर्भर करती है मानव स्वयं संसाधन होने के साथ-साथ इनकी सम्पूर्ण आर्थिक क्रियाए, सांस्कृतिक, प्राकृतिक एवं तकनीकी संसाधनों पर निर्भर करती है। इन आर्थिक क्रियाओं पर जल, मिट्टी, भूमि की बनावट, जलवायु, वनस्पति खनिज संसाधन, भौगोलिक स्थिति, यातायात की सुविधा, जनसंख्या का घनत्व आदि वातावरण के विभिन्न अंगों का प्रभाव पड़ता है। जिसमें पर्यावरणीय एवं सामाजिक आर्थिक प्रभाव प्रमुख है।

मानव इन संसाधनों का उत्पादन, उपयोग व प्रबंधन अपने क्षेत्र में राज्य एवं राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं को सुदृढ़ करने के लिए करता है। किन्तु अनायास ही पर्यावरणीय क्षति कर बैठता है अर्थात संसाधनों का सुनियोजित तरीके से प्रबंध तथा विकास किया जा सके, जिससे दुरूपयोग एवं अनावश्यक क्षति को रोका जा सकना संसाधन संरक्षण के अन्तर्गत आता है।

किसी भी प्रदेश के औद्योगिक विकास को समझने के लिए वहाँ की जलवायु को समझना आवश्यक होता है। जलवायु पर ही कृषि आधारित रहती है। राजस्थान की जलवायु अर्द्धशुष्क प्रकार की जलवायु कहलाती है जो पूर्णत: मानसून पर निर्भर रहती है। राजस्थान में वर्षा मुख्यत: जुलाई से सितम्बर के मध्य होती है लेकिन अरावली के मानसून आगमन दिशा के समानान्तर होने के कारण अधिकांश क्षेत्र सुखा रह जाता है क्योंकि अरावली पर्वतमाला से मानसून का कोई अवरोध नहीं होता, अत: मानसून राजस्थान से बिना वर्षा किए गुजर जाता है। राजस्थान का पश्चिमी बड़ा भाग लगभग 60 प्रतिशत सुखें से ग्रसित है। जिसमें कृषि उपज भी प्रभावित होती है। राजस्थान के पश्चिमी रेगिस्तानी क्षेत्र में कृषि उत्पादन नगण्य है। शेष 40 प्रतिषत में कृषि की पैदावार होती है। इस क्षेत्र में प्राप्त कृषि उपज को उद्योगों में भेजा जाता है।

कृषि आधारित उद्योग औद्योगिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। मनुष्य के प्रमुख प्राथमिक आर्थिक क्रियाकलाप जो पूर्णत: प्रकृति पर निर्भर है उसमें कृषि का स्थान महत्वपूर्ण है। कृषि से प्राप्त उपज को संशोधित करने हेतु कच्चे माल को उद्योगों में भेजा जाता है। प्रकृति से प्राप्त कच्ची वस्तुओं का विनिर्माण उद्योगों में होता है। पिछले कुछ वर्षों में तकनीकी में उन्नति से प्राथमिक व्यवसायों की उत्पादकता बढ़ गई है। उन्नत तकनीक का प्रयोग करके कृषि की उत्पादकता को भी प्रभावित किया गया है। कृषि में विभिन्न प्रकार से रासायनिक उर्वरक, उन्नत बीज, रासायनिक कीटनाशकों व मशीनों के प्रयोग से उपज को अधिक विकसित किया गया है। अधिक उत्पादन होने पर उसे उद्योगों तक पहुँचाया जाता है। इन उद्योगों में कृषि से प्राप्त कच्चें माल को संशोधित करके विभिन्न वस्तुओं का निर्माण किया जाता है जो मनुष्य के दैनिक जीवन में उपयोग हेतु प्रयुक्त होती है। उदाहरण के लिए कपास से सूती वस्त्रों का निर्माण, तिलहन को संशोधित करके तेल का निर्माण आदि।

इन उद्योगों के विकास हेतु समय-समय पर सरकार द्वारा विभिन्न प्रयास किये जाते है जैसे कि कृषि व खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों की स्थापना, विस्तार तथा आधुनिकीकरण हेतु 11वीं पंचवर्षीय योजना के अर्न्तगत विकेन्द्रीयकरण करते हुए इकाई से संबंधित बैकों के माध्यम से आवेदन प्रस्ताव प्राप्त किए गए एवं प्लांट व मशीनरी का 25 या अधिकतम 50 लाख रूपये तक की सहायता भारत सरकार द्वारा उपलबध कराई गई।

खाद्य प्रसंस्करण व कृषि आधारित उद्योगों को बढ़ावा देने के लए राज्य सरकार द्वारा '**Vision Document 2019**' तैयार कराया गया। जिसे राज्य के संबंधित विभागों, कार्यालयों तथा उद्योग संघों को भिजवाकर राज्य की स्थिति व संभावनाओं से अवगत कराया गया। भारत सरकार व राज्य सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं से भी अवगत कराया जा रहा है।

मानव सभ्यता के आरम्भिक काल से लेकर आज तक के विकसित, वैज्ञानिक एवं तकनीकी युग में कृषि एक प्रमुख व्यवसाय रही है। भूगोल विषय के अन्तर्गत भूगोल की प्रमुख शाखा के रूप में कृषि भूगोल का अध्ययन वर्तमान में गहनता से किया जा रहा है। कृषि की उत्पत्ति कब,

*प्राचार्या, राजकीय महाविद्यालय, नाथद्वारा (राज.) भारत
** अध्यापक, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, वल्लभ (राज.) भारत

कहां, कैसे हुई आज भी यह खोज का विषय है। इस संदर्भ में पुरातत्व वेदों, मानवशास्त्रियों, वनस्पति शास्त्रियों, जीव विज्ञान वेत्ताओं आदि ने इसके उद्‌भव एवं विकास दशाओं से सम्बन्धित अध्ययन किये है।

अत: कृषि मानव का मुख्य आधारभूत संसाधन माना गया है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। कृषि का उद्देश्य प्रकृति प्रदत्त उपादानों का उपयोग करके मानव की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करना है। भारत में अधिकांश लोग कृषि कार्य में संलग्न है। यद्यपि सभी पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि को विशेष महत्व दिया गया है। जिसके कारण व्यापार, उद्योग एवं यातायात का विकास हुआ है। वर्तमान में बढ़ती जनसंख्या के अनुपात में कृषि भूमि कम होने से खाद्यान्नों की आपूर्ति निरन्तर कम हो रही है। इसके लिए कृषि भूमि से अतिरिक्त उत्पादन प्राप्त करने के प्रयास किया जाना आवश्यक है।

हरित क्रांति का प्रभाव हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश इत्यादि पर व्यापक स्तर पर देखा जा सकता है परन्तु राजस्थान में इसका प्रभाव नगण्य हैं। विगत कुछ वर्षो से इस क्षेत्र के लोगों का आर्थिक व्यवसाय कृषि ही रहा है, जो राज्य की जनसंख्या, विकसित यातायात, संचार के साधन व बाह्य सम्पर्क आदि के कारण कृषि को अत्यन्त प्रभावित करते है।

शोध का स्वरूप – राजस्थान में कृषि, उद्योग एवं आर्थिक विकास के लिए कृषि आधारित उद्योगों की तत्काल आवश्यकता हैं। कृषि आधारित उद्योग कम निवेश में अच्छी आय प्रदान करने में सफल रहे। कृषि आधारित उद्योग से कृषि उपज को अच्छे मूल्य प्राप्त होने की सम्भावना बनी रहती है। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग द्वारा ग्लोबल बाजार में घरेलु वस्तुओं की पहुँच सम्भव हो सकें।

शोध उद्देश्य – इस शोध का मुख्य उद्देश्य कृषि आधारित उद्योगों के विकास का पता लगाना है।

1. राजस्थान में कृषि आधारित उद्योगों की स्थिति का अध्ययन करना।
2. कृषि आधारित उद्योगों में कार्यशील जनसंख्या की सामाजिक व आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना।

सम्बन्धित साहित्य का स्त्रोत – अनुसंधान कार्य के लिये सम्बन्धित सूचनाओं के पर्याप्त तथा उपयुक्त स्त्रोतों का प्राप्त होना एवं प्रयुक्त होना दोनों ही अनिवार्य है। सम्बन्धित साहित्य को मुख्य रूप से दो स्त्रोतों से प्राप्त किया जा सकता है। शोधकर्त्ता ने प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों ही प्रकार के स्त्रोतों का प्रयोग अपने शोध कार्य में किया है।

प्रत्यक्ष स्त्रोत – शोध में निम्नांकित प्रत्यक्ष स्त्रोतों का उपयोग किया जाता है–सामयिक पत्र –पत्रिकाओं में उपलब्ध साहित्य, ग्रन्थ, जर्नल, निबन्ध, पुस्तिकाएं, वार्षिक पुस्तके तथा बुलेटिन,स्नातक, अधिस्नातक तथा विद्या वाचस्पति उपाधि के शोध प्रकाशन, विविध– जैसे शिक्षा प्रशासन के प्रकाशन।

अप्रत्यक्ष स्त्रोत – शोध में निम्नांकित अप्रत्यक्ष स्त्रोतों का उपयोग किया गया–शिक्षा के विश्वकोश, शिक्षा सूची पत्र, शिक्षा शोध सार, संदर्भ ग्रन्थ सूची एवं निर्देशिकाएं, शब्द कोश, अन्य विविध स्त्रोत।

राजस्थान में कृषि आधारित उद्योगों का विकास

तालिका 1 – पल्प एंड पेपर इंडस्ट्री ऑफ इंडिया

कागज, पेपरबोर्ड और अखबारी कागज का अनुमानित उत्पादन

मिलियन टन	2010 –11	2011 –12	2012 –13	2013 –14
क्षमता	12.70	13.55	13.50	18.40
घरेलू उत्पादन	10.10	10.90	11.80	14.49
निर्यात	0.53	0.55	0.58	0.56
आयात	1.58	2.34	1.98	2.58
घरेलू बाजार, उपभोग (उत्पादन आयात–निर्यात)	11.35	12.60	13.20	16.51

वर्ष 2010–11 में 12.70 मिलियन टन उत्पादन क्षमता थी, जो बढ़कर 2013–14 में 18.40 मिलियन टन हो गया। इसमें घरेलु उत्पादन वर्ष 2010–11 से 10.10 मिलियन टन से बढ़कर 2013–14 में 14.49 मिलियन टन हो गयी। इसके निर्यात की बात की जाये तो 2010–11 में 0.53 मिलियन टन होता था, जो 2013–14 में 0.56 मिलियन टन रहा। आयात की बात की जाये तो वर्ष 2010–11 से 158 मिलियन टन से बढ़कर वर्ष 2013–14 में 2.58 मिलियन टन हो गयी।

तालिका 2 **(अन्तिम पृष्ठ पर देखे)**

भारत में वर्ष 2013–14 में खाद्य उत्पादन 1430532 लाख व्यक्ति तथा कुल रोजगार का 38.00 प्रतिशत रोजगार में लगेगा तथा दूसरे नम्बर पर वर्ष 2013–14 में रोजगार देने वाला वस्त्र उद्योग था जो 13,08,845 लाख या 36.73 प्रतिशत लोगों को रोजगार देना।

निष्कर्ष – कृषि आधारित उद्योग से अभिप्राय ऐसे कृषि उत्पादों से हैं जिसमें उचित उत्पाद तैयार किये जा सकें। साथ ही आय के अवसर, रोजगार, तथा आर्थिक विकास के सम्पूर्ण वितरण विकसित तथा विकासशील देशों में होता रहा हैं। संसाधनों के उचित उपयोग से कृषि आधारित उद्योगों की सुविधा उपलब्ध होती हैं। साथ ही उत्पादन प्रबन्ध, कृषक आय, बाजार का विस्तार, राष्ट्रीय आय में मुल्य वृद्धि और रोजगार उत्पन्न करना जैसे आधारों पर कृषिगत उद्योगों से तय होते हैं। राजस्थान में कृषि आधारित उद्योगों में मुख्य तथा खाद्यान्न मिल उत्पादन उद्योग जैसे चावल, तेल एवं आयल मिल, शुगर उद्योग, खाद्य प्रसंस्करण उद्योग, जुट उद्योग, मधुमक्खी उद्योग, कपड़ा उद्योग प्रमुख हैं। कृषि आधारित उद्योगों में खाद्य उत्पादों की स्थिति देखा जाये तो उत्पादन की प्रवृत्ति 2014–15 में 143.16 मिलियन टन रहा। राजस्थान में वर्ष 2014–15 में कृषि आधारित उत्पादन की कुल कीमत 1945.15 लाख रही। कृषि आधारित उद्योग का 2012–2015 के बीच औसत वृद्धि 1.86 प्रतिशत रही। राजस्थान में उद्योग संघ की न्युन वृद्धि दर का प्रमुख कारण ज्ञान में कमी, प्रमुख मानव शक्ति, औद्योगिक दुर्घटनाएँ, आधारभूत सरचनाएँ, तथा साख सुविधाएं आदि। राज्य में उद्योगों की वृद्धि के विस्तृत अवसर है परन्तु कृषिगत उद्योगों के सम्पूर्ण विकास में अभी और प्रयास की आवश्यकता हैं।राजस्थान में कच्चा माल की उपलब्धता और जनभागीदारी कृषि आधारित उद्योगों में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। अगर ग्रामीण विकास आर्थिक और सामाजिक विकास की ताकत के रूप में देखा जाता हैं–

छोटे और सीमान्त कृषक, भूमिहीन किसान तथा व्यवसायिक छुट ग्रामीण विकास को बढ़ावा देने में सहायक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

तालिका 2 –भारत में कृषि आधारित उद्योगों में श्रेणीवार रोजगार

भारत में कृषि आधारित उद्योगों में श्रेणीकरण योजना

वर्ग	2007 -08	2008 -09	2009 -10	2010 -11	2011 -12	2012 -13	2013 -14
खाद्य उत्पादों और पेय पदार्थों का निर्माण	1265122 (38.03)	1345623 (38.70)	1375844 (38.76)	1398570 (37.50)	1410102 (38.00)	1428573 (37.50)	1430532 (38.00)
तम्बाकू उत्पादों का निर्माण	475698 (14.30)	423567 (12.18)	510254 (14.37)	535644 (14.36)	565987 (15.25)	575694 (14.36)	571937 (15.25)
वस्त्र का निर्माण	1264589 (38.01)	1365822 (39.29)	1285922 (36.23)	1374300 (36.86)	1325800 (35.73)	1304863 (34.99)	1308845 (36.73)
चमड़े के उत्पादों का निर्माण	142988 (4.22)	152641 (4.39)	166840 (4.70)	174590 (4.68)	165900 (4.47)	172785 (4.68)	173480 (4.47)
कागज और कागज उत्पादों का निर्माण	177891 (5.34)	188590 (5.42)	210200 (5.92)	245630 (6.58)	242561 (6.53)	255930 (6.58)	252173 (6.53)
संपूर्ण	3326288 (100.00)	3476243 (100.00)	3549040 (100.00)	3728734 (100.00)	3710350 (100.00)	3728734 (100.00)	3710359 (100.00)

****

अर्थव्यवस्था में ग्रामीण उद्यमी महिलाओं की सहभागिता

डॉ. ढालेश्वरी राणा*

प्रस्तावना – समाज के सम्पूर्ण विकास के लिए मनुष्य जीवन का उद्यमशील होना एक आवश्यक एवं महत्वपूर्ण अंग है। उद्यमशीलता मात्र धन सृजन का एक तरीका ही नहीं है वरन् व्यक्तित्व विकास एवं समग्र सामाजिक, आर्थिक विकास का गुरूमंत्र है। उद्यमशीलता पूर्ण जीवनशैली मनुष्य को आत्मनिर्भर एवं सशक्त बनाती है।

यदि हम सम्पूर्ण समाज की बात करें तो हम जीवन रूपी नैया को चलाने के लिए स्त्री एवं पुरूष की बराबर सहभागिता है लेकिन महिलाओं की आर्थिक सशक्तता की बात करें तो हम देख रहे हैं कि महिलाएं आत्मनिर्भर होती जा रही हैं और उद्यमिता को बढ़ावा देने में इनका सहयोग सराहनीय है। यदि हम समाज के उत्थान का अंदाजा लगाना चाहते हैं तो बात आती है कि उस समाज में महिलाओं की स्थिति कैसी है। इस पर ही सभी का ध्यान आकृष्ट हो जाता है और तब महिलाओं की ऊँची स्थिति को पाकर समाज भी गौरवान्वित महसूस करता है।

उद्यमिता एक निरंतर जारी रहने वाली प्रक्रिया है और उद्यमी वह व्यक्ति है जिसके अंदर कार्य करने की जिज्ञासा, कुशलतापूर्वक संचालन, ये सभी बाते उसकी कार्यशैली में समाहित होती है। कुछ लोग उद्यमिता का अर्थ एक नये व्यवसाय को शुरू करना ही समझते हैं जबकि ऐसा नहीं है हमारी दिनचर्या में हम जो भी कार्य या व्यवसाय करते हैं उसमें ही लगन, ईमानदारी, वफादारी कर्तव्यनिष्ठ होकर प्रत्येक कार्य जैसे, ब्यूटी पार्लर, सिलाई–कढ़ाई, बुटिक सेंटर, टिफिन सेंटर, बेकरी, झूलागृह, अगरबत्ती निर्माण, मोमबत्ती निर्माण, बड़ी पापड़ अचार, मुरब्बा, जेम जैली, सरबत ये सभी स्वरोजगार में ग्रामीण महिलाएँ कर्तव्यनिष्ठा के साथ रोजगार को बढ़ावा दे रही हैं। जिसके चलते सीमित रोजगार के अवसरों के कारण देश की बढ़ रही बेरोजगारी की समस्या को निदान रूप देने में एक महत्वपूर्ण कदम है।

ग्रामीण महिला बहनें अपने आपको रोजगार से जोड़कर अपने जीवन का प्रतिभापूर्ण उपयोग कर सकती हैं। जरूरी नहीं है कि शैक्षणिक स्तर के आधार पर ही स्वरोजगार को अपनायें। स्वरोजगारी या उद्यमी व्यक्ति के लिए कुछ नीति निर्देशक सिद्धांतों को अपनाना जरूरी होता है। लेकिन यह जरूरी नहीं है कि सब कुछ किताबों में ही लिखा मिल जाये। बहुत सारी चीजें हमे जिंदगी की किताब से भी लेनी पड़ती है।

इस प्रकार उद्यमिता के क्षेत्र में ग्रामीण बहनों का सहयोग नींव का पत्थर साबित हो रहा है। उद्यमिता विकास को प्रोत्साहित करते हुए अनुकूल वातावरण निर्मित कर रही हैं। हमारी ग्रामीण बहने जो स्वयं के विकस के साथ–साथ मोहल्ला, गांव, शहर और प्रदेश से भारत के समग्र विकास में सहभागी होकर महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर रही हैं। महिलाओं का यह छोटा सा प्रयास बड़े अभियान का रूप धारण कर रहा है और यह देश के आर्थिक विकास में बहुत बड़ा योगदान होगा।

कृषक हस्तशिल्प में संलग्न कारीगर तथा द्वितीयक या निम्न सेवाओं में संलग्न व्यक्ति इस अर्थव्यवस्था के तीन प्रमुख अंग है इन तीनों वर्गो में महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण रही है कृषि हस्तशिल्प से संबंधित वस्तुओं के उत्पादन एवं विक्रय में महिलाओं ने परंपरागत रूप से सक्रिय योगदान दिया है अधिकतर बाजार स्थानीय प्रवृत्ति के थे या उन तक सरलता से पहुचा जा सकता था। प्राचीन भारत में महिलाओं को आर्थिक जीवन में भाग लेने का जितना अवसर प्राप्त था वह मध्ययुगीन भारत में निरंतर कम होता चला गया।

परिवर्तनशील औद्योगिक व्यवथा में नवीन आर्थिक मुल्यों का उदय हुआ जिसमें आर्थिक लाभ सफलता और अर्जनात्मक उपलब्धि पर बल दिया जाने लगा। जिसमें महिलाओं की स्थिति में सुधार होने लगा। स्त्रियों की समान सहभागिता केवल स्त्रियों के विकास की ही नहीं वरन् सम्पूर्ण देश के विकास की एक आवश्यक पूर्व शर्त है। स्पष्ट है कि मानवीय संसाधनों का विकास राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए नितान्त आवश्यक है। यह कार्य तभी संभव है जब स्त्रियों को आर्थिक जीवन में भाग लेने का पूर्ण अवसर प्राप्त हो। देख रहे है कि वर्तमान समय में स्त्रियों की भूमिका को पुर्नपरिभाषित करने की आवश्यकता है। विवाह की आयु, परिवार का आकार, नगरीकरण, जनसंख्या स्थानान्तरण, मुल्य वृद्धि, जीवन स्तर की उच्चता, और निर्णय प्रक्रिया में अपेक्षाकृत अधिक सहभागिता इत्यादि परिवर्तन के ऐसे क्षेत्र है जो महिलाओं की भूमिका में परिवर्तन की अपेक्षा करते है। सामाजिक संकटों में निवारण और सामाजिक व्यवस्था में संतुलन बनाये रखने के लिए महिलाओं की भूमिका में परिवर्तन आवश्यक है ऐसा न होने पर सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया सुचारू रूप से संचालित हो पाना मुश्किल है।

असंगठित क्षेत्रों में महिला श्रमिकों की बड़ी संख्या कार्यरत हे परंपरागत रूप से भारतीय समाज में महिला कार्मिकों का एक महत्वपूर्ण भाग कृषि क्षेत्र में संलग्न रहा है। असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत महिलाओं का स्वरोजगार मुख्यत: छोटे–छोटे धंधे, खाद्य सामग्री की तैयारी या अन्य छोटे रोजगार जैसे बीड़ी बनाना दियासलाई बनाना अगरबत्ती बनाना इन सभी रोजगारों में महिलाएं संलग्न है और देश के विकास में महिलाओं की भागीदारी अत्यंत आवश्यक है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि महिलाओं की भागीदारी के अभाव में

* अतिथि विद्वान (अर्थशास्त्र) शासकीय चंद्रविजय महाविद्यालय, डिण्डौरी (म.प्र.) भारत

कोई भी समाज, राज्य, राष्ट्र के सम्पूर्ण विकास की कल्पना संभव नही है क्योंकि इनमें विकास सन्निहित है

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. महिला सशक्तिकरण–भारतीय परिप्रेक्ष्य में डॉ. पंकज शर्मा, डॉ. पाठक, पृ. 229 अध्ययन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रिब्यूटर्स, नई दिल्ली।
2. भारतीय नारी सामाजिक अध्ययन, डॉ. राजकुमार, अर्जुन पब्लिकेशन नई दिल्ली।
3. नायक श्रीमति कमला– कामकाजी महिलाएं एवं उनकी व्यथा, नारी चिंतन आदित्य पब्लिशर्स जगदेश्वरी माता काम्प्लेक्स पाठक वार्ड, बीना 2006 पेज 47।

****

Influence of Types of Hospital, Educational Qualification and their Interaction on Personality Factor Q_3 (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses

Dr. Anjali Pandey*

Abstract - The aim of the present study was to find out the impact of types of hospital on Personality of nurses. For this a sample of 300 Nurses with diploma or degree as Educational Qualification of Government and Private Hospital was randomly selected. Sixteen Personality Factor questionnaire by R.B Cattlle (Hindi Adoptation) by S.D Kapoor was used. It was found that there was impact of type of hospital on Personality Factor Q_3 (Undisciplined Vs Controlled). Those working in Government hospital were found to be significantly more Self -disciplined to than those working in Private hospital.
Keywords - Nurses, Types of Hospital, Educational Qualification, Personality Factor.

Introduction - The development of science and technology has made life easy for all. The researches in the field of medicine and health care have identified many new illnesses resulting in specialized treatment of them. With the increase in number of specialized treatments, new scope for hospitals has emerged. This requires large number of paramedical staff to help in the health care service of the patients. This has also led to opening of multispecialty hospitals which require even more nurses. In the Pre-research spade work done for finding a suitable topic for research, no study was found relating on this topic. That is why this study was undertaken.

Objective - To study the influence of Types of Hospital, Educational Qualification and their interaction on Personality Factor **Q_3 (**Undisciplined Vs Controlled).

Hypothesis - There is no significant influence of Types of Hospital, Educational Qualification and their interaction on Personality Factor **Q_3 (**Undisciplined Vs Controlled).

Sample - A sample of 150 Nurses each was selected randomly from Government and Private Hospitals. They were stratified on the basis of Educational Qualification in Diploma and Degree holders.

Test- Sixteen Personality Factor questionnaire by R.B Cattlle (Hindi Adaptation) by S.D Kapoor

Method - Through random sampling four hospitals were selected (two government and two private hospitals). The nurses of the selected hospitals were administered upon a structured Sixteen Personality Factor questionnaire by S.D Kapoor by the researcher. The scoring was done and the score were analysed.

Analysis and Discussion of Results - The objective was to study the influence of Types of Hospital, Educational Qualification and their interaction on **Personality Factor Q_3 (**Undisciplined Vs Controlled) of Nurses. There were two Types of Hospital, namely, Government and Private. Diploma in Nursing and Graduation in Nursing were the two levels of Educational Qualification of Nurses. Thus the data were analyzed with the help of 2X2 Factorial Design ANOVA

Table 1 : Types of Hospital wise N, Mean, SD of Personality Factor Q_3 (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses

Types of Hospital	N	Mean	SD
Government Hospital	150	6.00	1.59
Private Hospital	150	5.37	1.59

Table2 : Educational Qualification wise N, Mean, SD of Personality Factor Q_3 (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses

Educational Qualification	N	Mean	SD
Diploma	150	5.78	1.62
Degree	150	5.45	1.63

Table 3 : Summary of 2x2 Factorial Design ANOVA of Personality Factor Q_3 (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses

Source of Variance	df	SS	MSS	F-value
Types of Hospital (A)	1	22.19	22.19	8.72**
Educational Qualification (B)	1	5.40	5.40	2.12
A X B	1	0.10	0.10	0.04
Error	296	10490.00	2.55	
Total	299			

** Significant at 0.01 level

1a Influence of Types of Hospital on Personality Factor Q_3 (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses

From Table 3, it can be seen that the F-value is 8.72 which is significant at 0.01 level with df= 1/296. It shows that the

*Assistant Professor (Psychology) Sainath Institution Katni, Affiliated RDVV Jabalpur (M.P.) INDIA

mean scores of **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses working in Government and Private Hospital differ significantly. So there was a significant influence of Types of Hospital on **Personality Factor Q_3 (**Undisciplined Vs Controlled) of Nurses. Thus, the null Hypothesis that there is no significant influence of Types of Hospital on **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses is rejected. Further the mean score of **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses working in Government Hospitals is 6.00 which is significantly higher than those working in Private Hospitals whose mean score of **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled**)** is 5.37. It may, therefore, be said that Nurses working in Government Hospitals were found to be more Self-disciplined as compared to those working in Private Hospitals.

1b Influence of Educational Qualification on Personality Factor Q_3 (Undisciplined Vs Controlled) of nurses

From Table 3, it can be seen that the F-value for Educational Qualification is 2.12 which is not significant. It shows that the mean scores of **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled**)** of Nurses belonging to Diploma and Graduation levels did not differ significantly. So there was no significant influence of Educational Qualification on **Personality Factor Q_3** of Nurses. Thus, the null Hypothesis that there was no significant influence of Educational Qualification on **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled**)** of Nurses is not rejected. It may, therefore, be said that **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled**)** of Nurses was found to be independent of Educational Qualification of Nurses.

1c Influence of Interaction between Types of Hospital and Educational Qualification on Personality Factor Q_3 (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses

From Table 3, it can be seen that the F-value for the interaction between Types of Hospital and Educational Qualification is 0.04 which is not significant. It shows that the mean scores of **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses working in Government and Private Hospitals having Diploma and Graduation level qualification did not differ significantly. So there was no significant influence of interaction between Types of Hospital and Educational Qualification on **Personality Factor Q_3 (**Undisciplined Vs Controlled) of Nurses. Thus, the null Hypothesis that there was no significant influence of interaction between Types of Hospital and Educational Qualification on **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled**)** of Nurses is not rejected. It may, therefore, be said that **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled) of Nurses was found to be independent of interaction between Types of Hospital and Educational Qualification of Nurses.

The result of **Personality Factor Q_3** (Undisciplined Vs Controlled) shows that there was significant influence of type of Hospital on personality factor **Q_3** (Undisciplined Vs Controlled). Nurses working in Government Hospitals were found to be Controlled as compared to those working in Private Hospitals This could be due to the fact that in government hospitals nurses have to work in a defined setup with well defined hierarchy in place.

Conclusions :

1. There is significant influence of Types of Hospital on Personality Factor **Q_3** (Undisciplined Vs Controlled). Nurses working in Government Hospitals were found to be more self-disciplined as compared to those working in Private Hospitals.
2. There is no significant influence of Educational Qualification on Personality Factor **Q_3** (Undisciplined Vs Controlled).
3. There is no significant influence of Types of Hospital, Educational Qualification and their interaction on Personality Factor **Q_3** (Undisciplined Vs Controlled).

Reference:-

1. Personal Research.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

The Importance Role of Information Literacy for Library Readers in New Normal

Deepak Malviya* Prof. Kishor John**

Abstract - This times we are living in the present day is changing very quickly, and with this modernize and revolutionize, the surroundings of the library or situation is also changing converse about library history, first Tamrapatra, Chamrapatra, and Inscriptions where the articles were reserved safe, the print media is currently in the non-print media virtual electronic form etc. It all to be achievable on the basis of information literacy, information literacy filled the gap between the library and library readers. Important contribution of information literacy in the life of a documentation reader is also an attempt to understand their good organization, thinking, comprehension, efficiency etc. Through this paper, the entire process of how their whereabouts fluctuate is mentioned in this paper. In the different reviews of Information literature, they have been understood and studied by the author so that their information can be easily accessed through information literacy. Information detonation, library resources, library readers, quality of information, attributes of information, principles of information, beliefs regarding information etc. are briefly discussed in this research paper.
Keywords - Information Literacy, Library resources, Library readers and its safety, Quality of information, Information Communication Technology e-Learning and COVID-19.

Introduction - Library is a knowledge centers that's why the Importance Role of Information Literacy for Library Readers in new normal for library have to engage in recreation and contribute an important role in motivating for library readers to study and read books by creating a good reading environment to them Which helps in developing the reading habits in library users Provide early involvement to infants and toddlers aged birth to three with developmental delays or a medical condition likely to lead to a developmental delay. Strong library service and the impact this has on library user's wider discipline experience. It is Importance of a Portfolio is a living and changing collection of records that reflect your undertakings, skills, experiences and attributes. Library of Quotes on the Importance of Libraries information and ideas is requirement that any information literacy have a library and that libraries be staffed by highly qualified state certified library media specialists. Library is indispensable for student centered teaching and learning processes such as project method the library occupies a very important place in the world. Library is a provider of information resources selected to meet the curriculum and information needs of the any kind of information. This report complements those findings by explaining why libraries are so important to students, research scholar, teachers and others success and proposing steps for ensuring they continue to make a vital contribution. Promote Library Events Create a blog that promotes library events and programs. Areas are subdivided into dramatic block art library manipulative and science learning centers. Libraries can be a great place to improve literacy by running all sorts of fun and helpful things and where you can The purpose of this study was to explore the impact of library and library users access on student, libraries patrons and other people who use library for reading planned access to the library and it is important for teachers and administrators to the Foundation Reading Report. The library is a central point for all kinds of reading cultural activities access to information, knowledge, building, deep thinking and lively discussion etc.

Need for information literacy for library readers - These days, even in the era of information explosion, the library has its own special significance. Where we fulfill the requirement of library readers through; books, general, encyclopedia, dictionary, Gazetteer, Maps, Atlas, Paper, and N-List's Membership INFLIBNET e-Library, online library etc. and currently the library is a center for providing tick information.

Libraries occupy yourself a vital role in providing people with reliable content. They encourage and promote the process of learning and greedy knowledge. The book worms can get loads of books to read from and enhance their knowledge. Moreover, the variety is so wide-ranging that one mostly gets what they are looking for. Furthermore, they help the people to get their hands on great educational

*Ph.D Research Scholar, Department of Education and Skill-Development, Library & Information Science BRAUSS, Mhow (M.P.) INDIA
** University Professor, Library & Information Science BRAUSS, Mhow (M.P.) INDIA

material which they might not find otherwise in the market. When we read more, our social skills and academic performance improves. Most importantly, libraries are a great platform for making progress. When we get homework in class, the libraries help us with the reference material. This, in turn, progresses our learning capabilities and knowledge. It is also helpful in our overall development.

Review of literature:

1. A study by Conducted by **Lance, K. C., Rodney, M. J., & Hamilton-Pennell, C. (2000).** This study aims to build upon earlier research selection a link connecting student academic achievement and the school library core curriculum. With the move to standard based education, which focuses on what students have educational (proficiencies) rather than what is educated (coverage of content), the school librarian is in a only one of its kind arrangement to help students build up the information literacy skills which will smooth the progress of them to achieve standards.

2. This study was shown by **Grafstein, A. (2002).** article which propose a control and discipline based come within reach of to teaching information literacy argue that the conscientiousness for teaching information literacy should be shared throughout an academic organization rather than limited to the library an outline of the complementary liability of librarian and classroom faculty in teaching in succession literacy is presented over the past decade information literacy has been in an quarter of on the increase interest to librarian A guideline based approach to information literacy.

3. Research paper was investigated by **Shenton, A. K. (2011).** In this paper we classify ways in which the subsequent Life is being used by librarians, and describe our teaching of LIS students in subsequent Life, and the value of subsequent Life for sustainable long-lasting qualified Development .This issue presents the first group of papers from the World Library and Information Congress in Gothenburg which were chosen for publication by the Editorial working group from 34 recommended by Section Committees. If the future of both the virtual world online education movement is well underway, and librarians have become major participants by developing services and resources for this novel information ground. The benefits to students include extraordinary access to geo-distant tutors, professionals and experts in every playing field bendy meeting times experiencing content in only one of its kind forms and acquiring virtual globe information literacy.

4. Paper was the study has been highlighted by **Farmer, L., & Stricevic, I. (2011).** This brief paper summarizes in this strength of mind, we are thrilled to publish by Research to Promote Literacy and Reading in Libraries, our second publication expected exclusively at librarians and related organizations who want to find ways to foster literacy within the global humanity. Literacy is crucial to the acquisition, by every child, youth and adult, of essential life skills; we consider that libraries are uniquely located to help literacy and reading. It is a part of their assignment. And it is a mission of all types of libraries, from public to special, research, university and national. In response, librarians may say, at least to themselves, I'd worship to do unnecessary to promote literacy and reading, but it's not a priority need.

5. Purpose of the study was introduced by **Tewell, E. (2016).** This study based on puts resistant spectatorship in conversation with information literacy and critique one illustration of a main information discovery system, Google Search, from a resistant position related to The hypothesis of resistant spectatorship posits that folks interacting with media and information may have the organization or rule to be in conflict to, refuse, or reconstruct the message they encounter instead of passively accepting it. in addition, this study argues that, within academic libraries, the practice of serious in order literacy, a pedagogical approach aligned with the concept of resistant spectatorship, is an ideal mode for hopeful students to become anti readers of information in its more and more corporate-mediated forms.

Objectives - This paper focuses on "The Importance Role of Information Literacy for Library Readers in New Normal" the main objectives following are to:

1. To identify useful e-resources and their management.
2. To explore the growth of online education learning.
3. To explore possibilities for new initiatives.
4. To find gap between library and library readers.

Research Methodology - This study is theoretical and short-term paper tries to understand the Importance Role of Information Literacy for Library Readers in New Normal with no use library in the era of a crisis and pandemics such as the corona virus (Covid-19). The tribulations related with online learning with the help of E-Library and possible solutions were also recognized based on previous to studies. The information literacy was conducted to understand various strengths, weaknesses, opportunities, and challenges associated with Library Readers social distancing and online mode of learning during this critical place. The research tool used for analyzing the data which collective from different sources for this study is a content analysis and the research method is descriptive research. We have taken into kindness the qualitative aspects of the research study.

This paper is completely based on the secondary data. A systematic review was done in part for the collected literature.

Secondary sources of data used following are:

1. News paper and Journals.
2. Reports and Research papers.
3. Search engines.
4. Library websites like INFLIBNET, DELNET, and NISCARE etc.

Strengths - Information literacy authenticity well-built for library readers these strengths of the online learning modes can rescue us from these durable times. It is faculty, research scholar, student and others -centered and offers a great deal of give in terms of time and location. The e-

learning and online learning methods enable us to change our actions and processes based on the needs of the library readers. There are ample of online tools available which is significant for a ready to lend a hand and well-organized learning environment. Educators can use a combo of audio, videos, and text to reach out to their library readers in this time of crisis to maintain a human touch to their lectures.

Weaknesses - Today we are living in digital world but due to some reason for weaknesses for Library Readers are E-learning has certain weaknesses in the form that it can slow down the information literacy and communication between the library and library reader (learner and the educator both) that is, direct communication and human touch are lost. Users can face many technical difficulties that hinder and slow-down the teaching–learning process. Time and location flexibility, though it is the strength of online learning these aspects are fragile and create problems. Student's no serious behavior in terms of time and flexibility can cause a lot of problems. All students and learners are not the same; they vary in degrees of their capabilities and confidence level. Some do not feel comfortable while learning online, leading to increased frustration and confusion. Inadequate compatibility between the design of the technology and component of psychology required by the learning process; and inadequate customization of learning processes can obstruct the education process and creates an imbalance.

Opportunity - A library is a place where a Library Readers can sit in a quiet environment and not only get a lot of information related to his subject but also all that information is accurate and complete truth if the Library Readers understand the information he/her wants. That is, he can easily get his information literate through the book through the General through the magazine, through the Encyclopedia, through the Gazetteers, Yearbooks etc. through the references, they can get his information in a very easy way Will contribute to its future construction. This is the biggest opportunity for library readers.

Challenges - The biggest challenge for Library Readers before us is that unless our readers who use the library will not understand the library material then they will not be able to get the correct information from them, that is to say that the library reader should be well-versed about the information literacy in relation to the library information is essential because what the reader is seeking, what is his demand, till he does not get it in the right form, then sitting and using it in the library is nothing more than a waste of time. Therefore, the biggest dare is that the reader who comes for that should get the same there; it is also a big challenge for the library and library staff. Here the first-Book are for Use, second-Every reader his here books. and third Law is every books its reader of Dr. S.R Ranganathan are applicable Library law which help the reader to make the book or other important documents available in the library at his convenience.

Suggestions:

1. Information literacy now a day most helpful whenever you get out of the house for Reading books and other material for visiting library for Library Readers than followed instruction of, wear a mask, handkerchief or hotpot, which covers the nose completely.
2. If the Library Readers will be inform literate, and then it means to call them all the convenience. Generals of the book related to the library will be able to easily take advantage of this facility sitting at home through newspapers and other material online medium such as mobile laptop computer iPods. Only information can be possible through information literacy.
3. If a Library Readers does his/her work through the information latest, then social distancing will also remain in this corona period and there will also be infected by this epidemic.
4. In this epidemic, it is most important to maintain a distance of more than 2 yards or 2 yards from each other this is information literacy awareness.
5. Take special care help for information literacy of safety precautions because these are two things which can not only protect us from corona virus but also other diseases.

Conclusion - Librarians and information centers are playing important role in society in lock down period due to Covid19. In such situation, it is an opportunity to the librarians to design suitable information literacy programmes that are imparted online to the students and researchers so that, they can use online resources that are subscribed by individual academic libraries, consortia and open sources. Hence, it is highly recommended to the librarians and information professionals to impart information literacy to the user community in particular and society in general, so that, they can use the information sources that are available across the web. Constant change is emerging as the new normal to survive and thrive in organizations and individuals. Creating an online information literacy course for faculty may seem daunting, as it requires moving into the realms of instructional de-sign and faculty development. However, it can bring great benefits for both librarians and course instructors. At Ohio State, the Teaching Information Literacy course helps to enhance the visibility of the University Libraries as a partner in teaching and learning. While there are no plans for Ohio State librarians to stop providing instruction to students, instructor development programming is an additional way that librarians can sup-port students' information literacy. Determine if such a course is aligned with the strategic directions for your library. If you are going to put in the work, you will want to be sure that it will help your library to support its goals. Think about how you will gain the interest of your target audience. At Ohio State, we are lucky to be able to offer the course as a teaching endorsement. While not all libraries will have a similar option, there may be other ways that you can incentivize instructors to participate. Ensure enough time for design and development, including learner and context analysis, so that

you can develop a course that will work for your learners and your institution. Conduct formative assessment. If possible, get the opinion of a few librarians. Keep in mind that participants will be instructors who want practical guidance for how they can improve their teaching. Be sure that they will come away with real strategies that they can use in their courses

In the closing stages, I want to say that information literacy is important for both the library Staff and the Library Readers using the library, because what kind of information do we need, when should we not reach our destination until we can identify it. therefore, whether it is a library, library staff or library reader who uses the library, information literacy the stage an important role. To get information, it is necessary to be information literate. Being literate here means taking you to the right direction, so the library Information literacy is as important for the user and library as it is for the reader for books.

References:-

1. Lance, K. C., Rodney, M. J., & Hamilton-Pennell, C. (2000). Measuring Up to Standards: The Impact of School Library Programs & Information Literacy in Pennsylvania Schools.
2. Grafstein, A. (2002). A discipline-based approach to information literacy. *The Journal of Academic Librarianship*, *28*(4), 197-204.
3. Shenton, A. K. (2011). Uniting information literacy promotion and reader development in schools: Two forms of library-based intervention. *IFLA journal*, *37*(1), 62-68.
4. Farmer, L., & Stricevic, I. (2011). *Using Research to Promote Literacy and Reading in Libraries: Guidelines for Librarians. IFLA Professional Report No. 125*. International Federation of Library Associations and Institutions. PO Box 95312, 2509 CH, The Hague, Netherlands.
5. Tewell, E. (2016). Toward the resistant reading of information: Google, resistant spectatorship, and critical information literacy. *portal: Libraries and the Academy*, *16*(2), 289-310.
6. https://eric.ed.gov/?id=ED446771 on date 23-10-2020 time 12.02 am.
7. https://books.google.co.in/books?hl=en&lr=&id=H8pnDQAAQBAJ&oi=fnd&pg=PR3&dq=The +Importance+ Role+of+Information+Literacy+for+ Library+Readers&ots=GXnna8MJ&sig= OGtMqZ0kQQqOQst2poq1zR293FE&redir_esc=y#v =onepage&q=The%20Importance%20Role%20of%20Information%20Literacy%20for%20 Library%20Readers&f=false
8. https://www.google.com/search?q=source+of+information+literacy&sa fe=active&rlz=1C1GCEK_enIN860 IN860&sxsrf=ALeKk02zsGZSLygB7YV0PTxgZfh1tfss3Q:1604031974051&source=lnms&tbm=isch&sa=X&ved=2ahUKEwj84pXgvNvsAhVKzTgGHff6AIMQ_AUoAXoECBkQAw&biw=1366&bih= 625#imgrc=99pZ7ML178yCDM
9. https://www.google.com/search?q=socialnetworking+appsides+image&tbm=is ch&ved=2ahUKEwiit8i4xdvsAhWdg0sFHZM5B3IQ2cCegQIABAA&oq= social networking+appsides+image&gs_lcp=CgNpbWcQA1C03AJY_ECYInnAmgAcAB4AIABvgGIA bIEkgEDMC4zmAEAoAEBqgELZ3dzLXdpei1pbWfAAQE&sclient=img&ei=ApbX6KuN52HrtoPk_OckAc&bih=568&biw=1349&rlz=1C1GCEK_enIN860IN860&safe=active&hl=en# imgrc=5Geo7zT2xi-_UM

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

खरगोन जिले में शिक्षा एवं जन स्वास्थ्य सुविधाओं की स्थिति का एक भौगोलिक अध्ययन

डॉ. सुरेश अवासे*

प्रस्तावना – स्वास्थ्य एवं शिक्षा एक ऐसा क्षेत्र है, जिसके महत्व को सभी स्वीकार करते हैं। वैज्ञानिक सिद्धांतों एवं विधियों के अधिकाधिक प्रयोग के परिणामस्वरूप स्वास्थ्य एवं शिक्षा के ज्ञान की आवश्यकता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। स्वास्थ्य एवं शिक्षा जैसे विषय ने शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। स्वास्थ्य प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है। प्रजातंत्र को सफल बनाने के लिए उत्तम स्वास्थ्य वाले शक्तिशाली नागरिकों का होना अनिवार्य है। अस्वस्थ शरीर मनुष्य के हर कार्य क्षेत्र में बाधा उत्पन्न करता है, आधुनिक युग में वैज्ञानिक तकनीक तथा औद्योगिक प्रगति के कारण जीवन में व्यस्तता तथा जटिलता बढ़ती जा रही है। स्वस्थ मनुष्य समाज की रीढ़ की हड्डी समझा जाता है, स्वास्थ्य एवं शिक्षा में केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य ही नहीं बल्कि यदि हम देखें तो उसमें सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा विद्यालय स्वास्थ्य दोनों सम्मिलित हैं। स्वास्थ्य एवं शिक्षा वह प्रक्रिया है जो एकत्रित किए गए ज्ञान का अनुभव कराती है, जिसका उद्देश्य ज्ञान द्वारा शिक्षा और व्यवहार पर प्रभाव डालना है, जो व्यक्ति और लोगों के स्वास्थ्य से जुड़े हैं। स्वास्थ्य शिक्षा उन समस्त अनुभूतियों का योग है जो स्वास्थ्य से सम्बन्धित आदत आचरण एवं ज्ञान को प्रभावित करती है। मनुष्य अपनी प्रगति के लिए पर्यावरण से ना केवल समायोजन करता है,अपितु उसके संसाधनों का दोहन कर उसका विरूपण भी करता रहा है। उससे जीवन के सभी पक्ष प्रभावित होते हैं, इन्हीं में से एक पक्ष मानव स्वास्थ्य भी है। मनुष्य के क्षेत्रीय एवं कार्य प्रतिरूपों का अध्ययन एवं व्याख्या स्वास्थ्य भूगोल एवं चिकित्सा भूगोल में किया जाता है, जो कि भूगोल की एक नवीनतम शाखा है। इस शाखा में मनुष्य के स्वास्थ्य सम्बन्धी तथ्यों को रखा गया है, जो समग्र भूगोल की विषय सामग्री का एक भाग है, जो की पूर्णत: भौगोलिक तथ्यों पर आधारित है तथा जिससे पर्यावरण प्रभावित होता है और पर्यावरण मनुष्य पर प्रभाव डालता है। मनुष्य समाज के अंग हैं और व्यक्तियों के समूह से ही समाज बनता है। व्यक्तियों की स्वच्छता समाज की स्वच्छता है। व्यक्ति को शरीर को स्वस्थ रखने के लिए केवल पौष्टिक आहार की ही आवश्यकता नहीं बल्कि स्वास्थ्य का ध्यान रखना भी आवश्यक है। एक व्यक्ति तभी स्वस्थ रह सकता है, जब वह निवास स्थान, शरीर और वस्त्र साफ रखे व्यक्ति को स्वस्थ जीवन निर्वाह करने के लिए पानी, हवा, सन्तुलित भोजन व्यायाम, विश्राम एवं पर्याप्त निद्रा भी आवश्यक है। मानव स्वास्थ्य के लिए चिकित्सकीय सुविधा आज की अनिवार्य आवश्यकता है। रोगों का सम्बन्ध जहां एक ओर व्यक्ति से है, वहीं स्थान और क्षेत्र से भी है।

शोध के निम्नांकित उद्देश्य हैं :

1. तहसील स्तर पर स्वास्थ्य एवं शिक्षा का विकासात्मक परिवर्तन का अध्ययन किया गया है।
2. शोध कार्य के माध्यम से आदिवासी एवं सामान्य क्षेत्रों का अध्ययन किया गया है।
3. अध्ययन क्षेत्र की शिक्षा वृद्धि, बेहतर स्वास्थ्य एवं दशाब्दिक वृद्धि दर एवं प्रतिरूपों का अध्ययन किया गया है।
4. अध्ययन क्षेत्र में स्वास्थ्य एवं शिक्षा का तुलनात्मक अध्ययन किया गया ।
5. अध्ययन क्षेत्र में जनसंख्या का वितरण एवं जनसंख्या घनत्व का पता लगाया गया।
6. नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य तथा शिक्षा के स्तर का अध्ययन किया गया है।

अ) अध्ययन क्षेत्र : पश्चिम निमाड़ (खरगोन) जिलें का गठन 1 नवम्बर सन् 1956 को मध्यप्रदेश के गठन के साथ गठित किया गया खरगोन जिले का इतिहास उतना ही प्राचीन है, जितना की भारत में मध्यप्रदेश का है। यह सतपुड़ा एवं विन्ध्यांचल पर्वत के भाग के दक्षिण उत्तरी भाग में स्थित है। खरगोन जिला इन्दौर संभाग के अन्तर्गत आता है। जिले के उत्तर में धार इन्दौर व देवास, दक्षिण में महाराष्ट्र पूर्व में खण्डवा, बुराहनपुर तथा पश्चिम में जिला बड़वानी स्थित है। खरगोन जिला म.प्र. राज्य की दक्षिणी–पश्चिमी सीमा में 21^{0} 22 से 22^{0} 35 उत्तरी आक्षांश तथा 74^{0}25 से 76^{0}14 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है।

इस जिले की पूर्व से पश्चिम की चौड़ाई लगभग 186 कि.मी. एवं उत्तर से दक्षिण की लम्बाई 263 कि.मी. है। जो समुद्र सतह से 300 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है एवं क्षेत्रफल 6541.870 वर्ग किलो मीटर है। जो म.प्र.राज्य के कुल क्षैत्रफल का 2.14 प्रतिशत भाग है।

* सहायक प्राध्यापक (भूगोल) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत

निर्मित परिकल्पनाएँ – प्रस्तुत शोध के परिणामों को ज्ञात करने के लिये निम्न शोध परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया है।

1. उच्च व निम्न ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में स्वास्थ्य एवं शैक्षणिक सेवाओं में अंतर पाया गया है।
2. ग्रामीण व नगरीय बस्तियों की साक्षरता वृद्धि दर में अंतर देखा गया है।
3. जैसे-जैसे हम नगरीय क्षेत्र से ग्रामीण क्षेत्र की और बढ़ते हैं, तो बेहतर स्वास्थ्य एवं उच्च शिक्षा का अभाव पाया गया है।
4. सामान्य क्षेत्रों की तुलना में आदिवासी क्षेत्रो में शिक्षा के प्रतिशत में कमी पाई गई है।
5. बेहतर स्वास्थ्य के लिये मानवों को शिक्षा की आवश्यकता होती है, इस तरह स्वास्थ्य एवं शिक्षा में घनिष्ट संबंध पाया गया है।
6. शिक्षा एवं स्वास्थ्य के विकास के लिये आवंटित वित्तीय संसाधनों का वितरण जनसंख्या आकार के आधार पर किया गया।

उपरोक्त सभी परिकल्पनाए सत्य पाई गई है।

स्वास्थ्य सुविद्याओं की स्थिति – आदिवासी उपयोजना क्षेत्र के स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार पर भी काफी ध्यान दिया गया है। इसके अन्तर्गत सबसिडिपरी हेल्थ सेन्टर, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, लघु स्वास्थ्य केन्द्र, उपस्वास्थ्य केन्द्र एवं अस्पताल स्थापित किये गये है। परन्तु जिले के सन्दर्भ में देखे तो ज्ञात होता है कि भौगोलिक स्थिति एवं जनसंख्या अनुपात में यह सुविद्याएँ नगण्य है। जैसा की तालिका क्रमांक 1.0 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक 1.0 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1.0 से स्पष्ट होता है कि विकासखण्ड वार सबसे अधिक स्वास्थ्य सुविद्याएँ महेश्वर विकासखण्ड में उपलब्ध करायी गई हैं जिसका प्रमुख कारण शिक्षा एवं स्वास्थ्य जागरुकता है तथा गैर आदिवासी बहुल्य तहसील होना प्रमुख है।जबकि सबसे कम चिकित्सा सुविद्याएँ सेगाँव विकासखण्ड को प्रदान की गई है, जिसका प्रमुख कारण जागरूकता का अभाव तथा आदिवासी बहुल्य विकासखण्ड होना पाया गया है।

तालिका क्रमांक 1.2 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

तालिका 1.2 से स्पष्ट होता है कि जिले में स्वास्थ्य कर्मचारियों की बड़ी कमी पायी गयी है, यहाँ 1171 प्रति व्यक्ति पर एक स्वास्थ्य कर्मचारी है, यदि हम चिकित्सा अधिकारियों की बात करें तो वह भी गंभीर स्थिति पायी गई है, 14520 प्रति व्यक्तियों पर केवल एक स्वास्थ्य अधिकारी कार्यरत है। तहसील स्तर पर सबसे अधिक स्वास्थ्य कर्मचारी खरगोन तहसील में पदस्थ हैं, क्योंकि यहाँ जिला मुख्यालय है जबकी सबसे कम स्वास्थ्य कर्मचारी झिरन्या तहसील में पाँच है क्योंकि यह आदिवासी बहुल्य दुरस्थ तहसील है। जहाँ सुविद्याएँ अधिक होगी वहाँ डॉक्टर की संख्या भी अधिक होती है। फलत: प्रति डॉक्टर जनसंख्या कम होती है। आदिवासी क्षेत्रों में स्वास्थ्य केन्द्र बन जाते हैं, डॉक्टरों के पद स्वीकृत हो जाते हैं, परन्तु वहाँ वे जाना नही चाहते। फलस्वरूप यहाँ के अस्पतालों, प्राथमिक केन्द्रों आदि में डॉक्टर की सदैव कमी बनी रहती है, और प्रति डॉक्टर, लोगों की संख्या बहुत अधिक होती है, कई ग्रामीण क्षेत्रों में अस्पताल कंपाउंडर के भरोसे संचालित हो रहे हैं अत: वहाँ इलाज कैसे किया जाता होगा सहज अन्दाजा लगाया जा सकता है। यद्यपि स्वास्थ्य सुविद्याओं का अभाव है, तथापि आदिवासी झाड़-फूँक एवं ओझा पर कम निर्भर है वैसे आन्तरिक क्षेत्रों में (झिरन्या, गोगावाँ, भगवानपुरा) में आज भी आदिवासी अपनी प्राचीन पद्धति से ही इलाज करते हैं।

शिक्षा की स्थिति – खरगोन जिले का कुल ग्रामीण जनसंख्या का कुल साक्षारता 60.2 प्रतिशत है। तथा नगरीय जनसंख्या का साक्षरता 83.0 प्रतिशत है। आज भी जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का स्तर काफी निम्न है। शिक्षा के क्षेत्र में सरकार द्वारा कई विभिन्न प्रकार के प्रयास किये जा रहे हैं। और जिसके माध्यम से शिक्षा का विस्तार किया जा रहा है। शिक्षा के विस्तार के अभी भी महत्वपूर्ण कदम उठाने की अति आवश्यकता है ताकी आदिवासियों को पर्याप्त शिक्षा के साधन उपलब्ध हो सके जिससे शिक्षा के स्तर में सुधार कर सकें।

तालिका क्रमांक 1.3 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

शिक्षा का स्तर तालिका क्रमांक 1.3 से स्पष्ट होता है कि जिले में शैक्षणिक संस्थाओं में सर्वाधिक प्राथमिक शाला 2545 माध्यमिक शाला 815 हाई स्कूल 136 और हायर सेकण्डरी संस्थाओं की संख्या 95 हैं एवं व्यावसायिक की संख्या 10 है। उच्च शिक्षा में जिले में महाविद्यालयों की कुल संख्या 07 है। वर्तमान स्थिति में आदिवासियों के पिछड़ेपन का महत्वपूर्ण कारक आदिवासियों में शिक्षा का अभाव है जिसके कारण ये लोग एक अंधकार मय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। इस अंधविश्वास, सामाजिक बुराइयों, आर्थिक समस्याओं से छुटकारा मात्र शिक्षा द्वारा ही संभव हैं।

शिक्षा के प्रति रुचि का अभाव होने के कारण शिक्षा पर ध्यान नहीं देते। तात्कालीन आवश्यकतायें इतनी होती है कि शिक्षा पर इनका ध्यान नहीं जाता। शिक्षा के पिछड़ेपन का एक महत्वपूर्ण कारण इनका संकुचित दृष्टिकोण है। इन लोगों की मानसिकता इस तरह की बन चुकी है कि पढ़ लिख कर कौन सी नौकरी मिल जायेगी। इनकी यही संकीर्ण मानसिकता इन लोगों के पिछड़ेपन का कारण बन गयी है। अभी भी इन आदिवासियों के शिक्षा के प्रति रुचि कम है। अत: भगवानपुरा, झिरन्या, सेगॉव में अनिवार्य रूप से उच्च शिक्षा हेतु महाविद्यालय की स्थपना शासन स्तर पर तत्काल करने की व्यावस्थ करें। इस रूचि को बढ़ावा देना अतिआवश्यक है तभी आदिवासी बहुल्य क्षैत्रों में इनका सम्पूर्ण विकासत्माक परिर्वतन संभव है।

अध्ययन क्षेत्र की समस्याएँ – प्रस्तुत अध्ययन से निम्नलिखित समस्याएँ उभर कर सामने आयी है।

1. आदिवासी क्षेत्रों का विकास होने के बावजूद कई क्षेत्रों में प्राथमिक विद्यालय एवं स्वास्थ्य, कृषि केन्द्र पशुऔषधालय केन्द्र, अनुपलब्ध है। नगरीय क्षेत्रों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य एवं शैक्षणिक सुविद्याओं का अभाव पाया जाता है, जिसके कारण ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य एवं शिक्षा का प्रतिशत कम पाया जाता है।
2. अध्ययन क्षेत्र लगभग आधे से ज्यादा जंगलों एवं पहाड़ी क्षेत्रों से घिरा होने के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में यातायात एवं संचार के साधनों का अभाव पाया जाता है जिससे शासन की जनकल्याणकारी योजनाओं के प्रसार-प्रसार में कमी देखी गई है। शिक्षा स्वास्थ्य सड़क पेयजल, प्रकाश, आदि अदिवासियों की प्रमुख समस्याऐं है। आदिवासियों के विकास में उन्हें सभी आयामों में शिक्षा के सभी स्तरों में समान सुविद्या की कमी। सामान्य क्षेत्रों की तुलना में आदिवासी क्षेत्रों में पहुँच का कम होना। शिक्षा के लिए बालकों की अपेक्षा बालिकाओं की ओर कम ध्यान देना।

अध्ययन क्षेत्र का नियोजन एवं प्रबन्धन – किसी भी क्षेत्र का नियोजन एवं प्रबन्धन उस क्षेत्र की उभरती हुई समस्या को ध्यान में रख कर किया जाता है। किसी भी क्षेत्र के नियोजन के लिए भूगोलवेताओं एवं समाज शास्त्रियों के दृष्टिकोण के आधार पर किया जाना चाहिए। भूगोलवेता का

क्षेत्रीय नियोजन एवं समाज शास्त्री का परिक्षेत्रीय नियोजन ग्रामीण विकास के लिए अधिक तर्क संगत एवं प्रभावी है।

1. सामाजिक आर्थिक, स्वास्थ्य एवं शिक्षा ग्रामीण विकास का आधार माने जाते हैं इसलिए शासन द्वारा जन कल्याकारी योजनाओं का निर्माण ग्रामीण क्षेत्र को केन्द्रित कर बनाना चाहिए जिससे ग्रमीण क्षेत्रों का समुचित विकासात्मक परिवर्तन हो सके।
2. आदिवासी बहुल्य क्षेत्रों के विकासात्मक परिवर्तन को बढ़ावा देने हेतु यह आवश्यक है कि स्वास्थ्य एवं शिक्षा सड़क यातायात बिजली, पेयजल, आवास, कृषि, उद्योग, व्यापार, व्यवस्था को चुस्त-दुरूस्त किया जाये। इसके साथ-साथ अन्य सुधारों की भी आवश्यकता है।
3. स्वतंत्र रूप से बने आवास गृहों को तोड़कर फलियों में मिला देना चाहिए। फलियों को एक आर्दश ग्राम में परिवर्तित कर वहाँ शिक्षा एवं स्वास्थ्य तथा अन्य महत्वपूर्ण सुविद्याऐ उपलब्ध कराई जाये इनमें पशुओं और मुर्गियो को अलग से रखने का स्थान निर्धारित होना चाहिए।
4. अध्ययन क्षेत्र के ग्रामीण अधिवासों को नियोजित कर विकसित किए जाने चाहिए। जनसंख्या के आधार पर स्वास्थ्य एवं शैक्षणिक, कृषि, यातायात, व्यापार, कुटीर उद्योग, सेवाओं का विकास करना चाहिए। ऐसे गाँव जिनकी जनसंख्या 700 से कम है, उन्हे लगभग तीन ग्राम मिलाकर उनकी दूरी के अनुसार केन्द्रित कर स्वास्थ्य सेवाओं का विकास करना चाहिए। शिक्षा के माध्यम से ग्रामीण विकास सम्भव है, इसलिए जिले के भगवानपुरा झिरन्या एवं सेगाँव में महाविद्यालय की स्थापना होनी चाहिए।

शोध कार्य के प्राप्त परिणाम निम्नलिखित हैं – स्वास्थ्य एवं शिक्षा पर विभिन्न विकास योजनाओं और आर्थिक संसाधनों के निम्नलिखित परिणाम है।

1. ग्रामीण एवं नगरीय स्तर पर अध्ययन से संबंधित विकासात्मक कार्यो का मूल्यांकन के साथ-साथ समाज के सम्पूर्ण ढांचे में होने वाली दशाब्दिक वृद्धि से उनके परिवर्तन के कारणों का पता लगाया गया है।
2. जनता की अधिकाधिक सहभागिता सुनिश्चित की जाये जिससे स्वास्थ्य एवं शिक्षा को प्रभावित करने वाले कारक जैसे आर्थिक विकास, अर्थव्यवस्था, निम्न जीवन स्तर, यातायात सेवाएं, संचार सेवाएं, स्वास्थ्य सेवाओं का प्रसार, शैक्षणिक सेवाओं का प्रसार, स्वास्थ्य एवं शिक्षा की लागत आदि का नियोजन एवं प्रबंधन किया जा सकेगा।
3. उपलब्ध जानकारी से भविष्य में होने वाले विकास की रूपरेखा तैयार की जा सकेगी एवं विकास योजनाओं का केन्द्रीकरण किया जा सकेगा।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध के अध्ययन में खरगोन जिले के आदिवासी बहुल्य क्षेत्र का विकासात्मक परिवर्तन का अध्ययन किया गया है। विकास वह प्रक्रिया है जो सामाजिक आर्थिक परिवर्तन लाती है। इससे सम्बन्धित जानकारी और प्रवृत्ति में भी परिवर्तन लाती है, स्वास्थ्य एवं शिक्षा है। किसी भी देश का समाजिक विकास आर्थिक प्रगति तथा राजनैतिक प्रौढ़ता उसके नागरिक की शिक्षा पर निर्भर करती है। खरगोन जिले में दशाब्दिक जनसंख्या वृद्धि दर के आंकड़ो में भिन्नता पाई गई है। यह दर परिवर्तित होती रही, परन्तु जनसंख्या में लगातार वृद्धि होती रही। वर्ष 2001 में जनसंख्या वृद्धि 18.85 प्रतिशत थी तो वही वर्ष 2011 में 22.46 प्रतिशत रही है। जिले में तहसीलवार औसत जनसंख्या वृद्धि दर में परिवर्तन हुआ है। वर्ष 1991-2001 के मध्य जनसंख्या वृद्धि दर 18.76 प्रतिशत रही एवं 2001-2011 के मध्य 11.प्रतिशत है। सामाजिक आर्थिक अर्थव्यवस्था, निम्न जीवन स्तर, यातायात सेवाऐं, संचार सेवाऐ, स्वास्थ्य शिक्षा, सेवाओं का प्रसार आदि स्थानिक विकास को प्रभावित करते है। सामाजिक आर्थिक विकास दोनो एक दूसरे के पूरक है। इस प्रकार दोनों में घनिष्ट सम्बन्ध पाया जाता है। आदिवासी बहुल्य क्षेत्र का विकासात्मक परिवर्तन सामने आए है। वर्ष 2011 में स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 379 खरगोन जिलें में शैक्षणिक संस्थाओं की संख्या 3672 है। खरगोन जिले में स्वास्थ्य सेवाओं एवं शैक्षणिक संस्थाओं के विकास में परिवर्तन तो हुआ है परन्तु यह परिवर्तन संतोषजनक नहीं है। साक्षरता के विकास से स्पष्टत: विकासात्मक परिवर्तन सामने आए है। वर्ष 2001 में जिले में कुल साक्षरता दर 63.41 थी जो बढ़कर वर्ष 2011 में 64.0 प्रतिशत रही, जिसमें ग्रामीण साक्षरता 60.42 एवं नगरीय साक्षरता 78.83 प्रतिशत है एवं 2011 के अनुसार ग्रामीण साक्षरता 60.2 एवं नगरीय साक्षरता 83.0 प्रतिशत है। चयनित ग्रामों में स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 17 एवं शिक्षा केन्द्र की संख्या 37 और उच्च शिक्षा हेतु शासकीय महाविद्यालयों की संख्या 07 है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. कंवर रमेश चन्द्र (2011) :'आरोग्य शास्त्र एवं स्वास्थ्य शिक्षा', अमित ब्रदर्स पब्लिकेशन,नागपुर, पृ.चिकित्सा भूगोल पृ. 5
2. सिंघई जी.सी. (1993) :'चिकित्सा भूगोल', वसुन्धरा प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 4.
3. चौबे कैलाश (2001) : 'स्वास्थ्य एवं चिकित्सा भूगोल', मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृ. 1, 2.
4. सिंघई जी.सी. (2006) : 'चिकित्सा भूगोल', वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर, पृ. 5.
5. अग्रवाल जे.सी. : 'भारत में प्रौढ़ शिक्षा', विद्या विहार प्रकाशन, पृ. 19.
6. श्रीवास्तव मुकेश,शर्मा पुष्पलता (2016) :'शिक्षा के दार्शानिक दृष्टिकोण', राखी प्रकाशन, आगरा, पृ. 2-9.
7. चिकित्सा भूगोल : अर्थ एवं विषय वस्तु, पृ. 29.
8. प्रो.शुक्ल हीरालाल (1997): आदिवासी अस्मिता और विकास म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल (म.प्र.) पृष्ठ संख्या-49
9. डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा (1980): आदिवासी विकास एक सैद्धांतिक विवेचना म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल पृष्ट संख्या-123
10. डॉ. दिलीपसिंह: (1997) भील जनजाती की व्यावसायिक गतिशीलता का समाज विज्ञान अध्ययन पृष्ट संख्या-39

तालिका क्रमांक 1.0 : विकासखण्ड वार चिकित्सा सुविद्यायें 2019-20

विकासखण्ड	एलोपैथिक चिकित्सालय औषधालय	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	उप- स्वास्थ्य केन्द्र	आयुर्वेदिक होम्योपैथिक यूनानी	कुल	उपलब्ध सेवायें	
						एलोपैथिक चिकित्सालय औषधालय	अन्य पद्धति के चिकित्सालय
बड़वाह	3	11	33	4	51	60	-
महेश्वर	2	11	37	6	56	30	-
कसरावद	1	5	26	7	39	30	-
सैगाँव	1	2	19	2	24	30	-
भीकनगाँव	1	4	36	4	45	30	-
खरगोन	1	8	30	5	44	300	30
गोगाँवा	1	6	23	3	33	30	-
भगवानपुरा	1	5	37	3	46	30	-
झिरन्या	1	3	35	2	41	30	-
कुल	12	55	276	36	379	570	30

स्त्रोत:- मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी खरगोन

तालिका क्रमांक 1.2 : तहसील वार चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी कर्मचारी

तहसील	चिकित्सा अधिकारी	संक्रामक रोग निवारक	स्वास्थ्य निरीक्षक	नर्स	कम्पांडर	अन्य स्वास्थ्य कर्मी	योग
बड़वाह	23	6	105	23	29	78	264
महेश्वर	20	4	75	15	27	108	249
कसरावद	16	-	69	5	19	48	157
सैगाँव	8	-	55	3	10	24	100
भीकनगाँव	10	-	60	4	13	32	119
खरगोन	30	20	90	93	22	13	394
गोगाँवा	9	-	56	4	14	33	116
भगवानपुरा	8	-	60	7	13	29	117
झिरन्या	5	-	45	3	8	23	84
कुल	129	30	615	157	155	514	1600

स्त्रोत:- मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी खरगोन

तालिका क्रमांक 1.3 : खरगोन जिला शेक्षणिक संस्थाओं का विवरण -2019

क्र.	जिला/ तहसील	प्राथमिक विद्यालय	माध्यमिक विद्यालय	हाई स्कूल	हायर सेकेण्डरी	महाविद्यालय	व्यवसायिक संस्था	अन्य
		2019	2019	2019	2019	2019	2019	2019
1	महेश्वर	263	95	17	15	1	2	
2	कसरावद	320	121	16	14	1	1	
3	बड़वाह	417	142	23	17	2	1	
4	सेगाँव	184	54	9	5	-	-	
5	भगवानपुरा	452	99	15	6	-	1	
6	झिरन्या	366	84	9	7	-	1	
7	भीकनगाँव	263	96	14	8	1	1	
8	खरगोन	139	76	20	15	2	2	
9	गोगावां	141	48	13	8	-	1	
जिले का योग		2545	815	136	95	7	10	

****

The Future of school & College Education under National Education Policy 2020

Mr. Bijay Kumar Yadav* Dr. Gurpreet Singh**

Introduction - India has about 688,000 primary schools, 110,000 secondary schools and 342 universities (211 State, 18 Central, 95 deemed universities) 13 institutes of national importance, 17,000 colleges and 887 polytechnics.

Education leads a country towards national progress and economic development. The National Education Policy was framed in 1986 and modified in 1992.

Among the major reforms of NEP 2020 the 10+2 structure in the schooling system has been replaced by a 5+3+3+4 structure. NEP is a comprehensive framework to guide the development of education in the country. The need for a policy was first felt in 1964 when Congress MP Siddheshwar Prasad criticized the then government for lacking a vision and philosophy for education. NEP 2020 has replaced10+2 system by 5+3+3+4 system. Foundation -al Stage (in two parts, that is, 3 years of Anganwadi/pre-school + 2 years in primary school in Grades 1-2; both together covering ages 3-8), Preparatory Stage (Grades 3-5, covering ages 8-11) Middle Stage (Grades 6-8, covering ages 11-14).

Key Points of NEP 2020 :

1. New Policy aims for Universalization of Education from pre-school to secondary level with 100 % GER in school education by 2030.
2. NEP 2020 will bring 2 crore out of school children back into the main stream.
3. New 5+3+3+4 school curriculum with 12 years of schooling and 3 years of Anganwadi/ Pre-schooling.
4. Emphasis on Foundational Literacy and Numeracy, no rigid separation between academic streams, extracurricular, vocational streams in schools ; Vocational Education to start from Class 6 with Internships.
5. Teaching upto at least Grade 5 to be in mother tongue/ regional language.
6. Assessment reforms with 360 degree Holistic Progress Card, tracking Student Progress for achieving Learning Outcomes.
7. GER in higher education to be raised to 50 % by 2035 ; 3.5 crore seats to be added in higher education.
8. Higher Education curriculum to have Flexibility of Subjects.
9. Multiple Entry / Exit to be allowed with appropriate certification.
10. Academic Bank of Credits to be established to facilitate Transfer of Credits.
11. National Research Foundation to be established to foster a strong research culture.
12. Light but Tight Regulation of Higher Education, single regulator with four separate verticals for different functions
13. Affiliation System to be phased out in 15 years with graded autonomy to colleges
14. NEP 2020 advocates increased use of technology with equity; National Educational Technology Forum to be created
15. NEP 2020 emphasizes setting up of Gender Inclusion Fund, Special Education Zones for disadvantaged regions and groups
16. New Policy promotes Multilingualism in both schools and HEs; National Institute for Pali, Persian and Prakrit, Indian Institute of Translation and Interpretation to be set up

Key Points of School Education :

1. New Policy aims for universalization of education from pre-school to secondary level with 100 % Gross Enrolment Ratio (GER) in school education by 2030.
2. NEP 2020 will bring 2 crore out of school children back into the main stream through open schooling system.
3. The current 10+2 system to be replaced by a new 5+3+3+4 curricular structure corresponding to ages 3-8, 8-11, 11-14, and 14-18 years respectively. This will bring the hitherto uncovered age group of 3-6 years under school curriculum, which has been recognized globally as the crucial stage for development of mental faculties of a child. The new system will have 12 years of schooling with three years of Anganwadi/ pre schooling.
4. Emphasis on Foundational Literacy and Numeracy, no rigid separation between academic streams, extracurricular, vocational streams in schools ; Vocational Education to start from Class 6 with

*Research Scholar (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Supervisor (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

Internships

5. Teaching up to at least Grade 5 to be in mother tongue/ regional language. No language will be imposed on any student.
6. Assessment reforms with 360 degree Holistic Progress Card, tracking Student Progress for achieving Learning Outcomes
7. A new and comprehensive National Curriculum Framework for Teacher Education, NCFTE 2021, will be formulated by the NCTE in consultation with NCERT. By 2030, the minimum degree qualification for teaching will be a 4-year integrated B.Ed. degree .
8. Higher Education
9. Gross Enrolment Ratio in higher education to be raised to 50 % by 2035 ; 3.5 crore seats to be added in higher education.
10. The policy envisages broad based, multi-disciplinary, holistic Under Graduate education with flexible curricula, creative combinations of subjects, integration of vocational education and multiple entry and exit points with appropriate certification. UG education can be of 3 or 4 years with multiple exit options and appropriate certification within this period.
11. Academic Bank of Credits to be established to facilitate Transfer of Credits
12. Multidisciplinary Education and Research Universities (MERUs), at par with IITs, IIMs, to be set up as models of best multidisciplinary education of global standards in the country.
13. The National Research Foundation will be created as an apex body for fostering a strong research culture and building research capacity across higher education.
14. Higher Education Commission of India(HECI) will be set up as a single overarching umbrella body the for entire higher education, excluding medical and legal education. HECI to have four independent verticals – National Higher Education Regulatory Council (NHERC) for regulation, General Education Council (GEC) for standard setting, Higher Education Grants Council (HEGC) for funding, and National Accreditation Council(NAC) for accreditation. Public and private higher education institutions will be governed by the same set of norms for regulation, accreditation and academic standards.
15. Affiliation of colleges is to be phased out in 15 years and a stage-wise mechanism is to be established for granting graded autonomy to colleges. Over a period of time, it is envisaged that every college would develop into either an Autonomous degree-granting College, or a constituent college of a university.

Others

1. An autonomous body, the National Educational Technology Forum (NETF), will be created to provide a platform for the free exchange of ideas on the use of technology to enhance learning, assessment, planning, administration.
2. NEP 2020 emphasizes setting up of Gender Inclusion Fund, Special Education Zones for disadvantaged regions and groups
3. New Policy promotes Multilingualism in both schools and higher education. National Institute for Pali, Persian and Prakrit , Indian Institute of Translation and Interpretation to be set up
4. The Centre and the States will work together to increase the public investment in Education sector to reach 6% of GDP at the earliest.

Higher Education

Increase GER to 50 % by 2035 - NEP 2020 aims to increase the Gross Enrolment Ratio in higher education including vocational education from 26.3% (2018) to 50% by 2035. 3.5 Crore new seats will be added to Higher education institutions.

Holistic Multidisciplinary Education - The policy envisages broad based, multi-disciplinary, holistic Under Graduate education with **flexible curricula**, **creative combinations of subjects**, **integration of vocational education** and **multiple entry and exit points with appropriate certification**. UG education can be of 3 or 4 years with multiple exit options and appropriate certification within this period. For example, Certificate after 1 year, Advanced Diploma after 2 years, Bachelor's Degree after 3 years and Bachelor's with Research after 4 years.

An **Academic Bank of Credit** is to be established for digitally storing academic credits earned from different HEIs so that these can be transferred and counted towards final degree earned.

Multidisciplinary Education and Research Universities (MERUs), at par with IITs, IIMs, to be set up as models of best multidisciplinary education of global standards in the country.

The National Research Foundation will be created as an apex body for fostering a strong research culture and building research capacity across higher education.

Regulation - Higher Education Commission of India(HECI) will be set up as a single overarching umbrella body the for entire higher education, excluding medical and legal education. HECI to have four independent verticals – National Higher Education Regulatory Council (NHERC) for regulation, General Education Council (GEC) for standard setting, Higher Education Grants Council (HEGC) for funding, and National Accreditation Council(NAC) for accreditation. HECI will function through faceless intervention through technology, & will have powers to penalize. HEIs not conforming to norms and standards. Public and private higher education institutions will be governed by the same set of norms for regulation, accreditation and academic standards.

Rationalised Institution - Higher education institutions will be transformed into large, well resourced, vibrant multidisciplinary institutions providing high quality teaching, research, and community engagement. The definition of

university will allow a spectrum of institutions that range from **Research-intensive Universities** to **Teaching-intensive Universities** and **Autonomous degree-granting Colleges.**

Affiliation of colleges is to be phased out in 15 years and a stage-wise mechanism is to be established for granting **graded autonomy** to colleges. Over a period of time, it is envisaged that every college would develop into either an Autonomous degree-granting College, or a constituent college of a university.

Capable Faculty - NEP makes recommendations for motivating, energizing, and building capacity of faculty through **clearly** defined, independent, transparent recruitment, freedom to design curricula/pedagogy, incentivizing excellence, movement into institutional leadership. Faculty not delivering on basic norms will be held accountable.

Reference:-

1. Personal Research.

****

The Future of Legal Education under National Education Policy 2020

Mr. Bijay Kumar Yadav* Dr. Gurpreet Singh**

Introduction - The legal education in India, particularly after the rise of National Law Universities (NLUs) has often been criticized for nurturing privilege and remaining inaccessible to most. Even a cursory examination of the system is enough to demonstrate that the criticism is not devoid of merit. One, the medium of instruction in these Universities is compulsorily English, which prevents a large number of people from pursuing legal education in the NLUs. For people who manage to secure admission to an NLU, it is at times difficult to cope up with the syllabus due to language barrier and lack of remedial classes for English. Two, education at an NLU is expensive and cannot be afforded by all unless they take education loans.

The National Education Policy 2020, apart from other objectives, also lays down certain reforms to be made in the legal education sector. The NEP primarily suggests three reforms to be made to the current legal education framework. One, it discourages the practice of stand-alone institutes and states that no new stand-alone institutes shall be permitted unless special circumstances arise. It further proposes that existing stand-alone universities shall become multi-disciplinary by 2030, either by creating new departments or through creating clusters. While this recommendation is not exclusively directed towards law institutes, NLUs shall be vastly impacted due to their isolated existence. Two, it recommends a bilingual approach for law institutes. Three, it seeks the formation of a new legal education policy to make professional education in law globally competitive. These reforms are being touted by certain commentators as a positive step in the direction of easing some problems in the NLU based education. A deeper analysis of the recommendation, however, reveals flaws in design and possible implementation.

The recommendation regarding stand-alone institutes appears to hold some merit in the context of NLUs. The 5 year law course run by the NLUs are criticized for not providing adequate multi-disciplinary approach. It is argued that study of law is incomplete without command over at least one other subject – as was the case with three year law courses. A multi-disciplinary institute could provide law students with the opportunity to interact with students and scholars from different fields and thus develop a more varied understanding of law. But, how far the idea is practically implementable, shall have to be seen. Few issues that could hinder the process of making residential institutes like NLUs interdisciplinary are lack of physical space, and lack of financial support. Physical infrastructure and financial aid from the governments have played an important role in making inter-disciplinary institutes like JNU and IITs a success.

Most NLUs are, however, already facing space crunch and are unable to house the existing batch of students within the campus. Opening new faculties within them would then either limit their access to people within the region or would force people to take up residents outside campus – which in our social set-up brings complications of its own. Second, most NLUs are running in a self-sufficient model with limited funding from the state governments. In such case, forcing them to open up new departments could further drive up their costs and hence decrease accessibility. Cluster model could possibly function better for these institutes. The policy however does not elaborate on how these clusters shall operate.

The second recommendation is regarding bilingual teaching in state law universities. While the idea of promoting bilingual learning in law universities is commendable, it nevertheless has certain lacunae. The policy is directed towards state institutes offering legal education, which makes it applicable to NLUs. As envisaged in the draft NEP, the methodology of appointing bi-lingual teachers based on the regional language of the place could help translating legal materials for the purpose of students familiar with the regional language and also for higher courts of law which function mostly in English. However, it solves the problem of language barrier for NLU students only to a limited extent. While it can certainly help a student who is studying at an NLU situated in her region, it fails to take into account people who could be taking admission in different states. A student from Tamil Nadu who got admission to an NLU in Bihar could neither be well-versed in English, nor familiar with Hindi, the regional language.

Similarly, a person from Delhi seeking admission to

*Research Scholar (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Supervisor (Law) Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

an NLU in Maharashtra could have problems in both English and Marathi. In order to cater to the issue, it is necessary not merely to introduce bilingual education, but to also start extra classes/ remedial classes for English- which is the most common language used in the legal field. De-emphasizing English in favour of regional languages is not the solution for legal education in India – especially considering inter-state students.

The draft policy, however, ignores all other aspects of law and tends to over-emphasize on culture, tradition, and mythology. One cannot speak of Constitutional values and what constitutes our classical legal texts (such as *Manusmriti*) in the same breath. While culture and tradition of a place are important for developing its legal principles, it needs to be taken into account that cultures, traditions and the society evolves. Also, culture and traditions cannot be presumed to be a homogenous concept, as projected by the draft NEP's wordings. Cultures and traditions should be appreciated in their diversity. The draft NEP's failure to take these factors into account is alarming, to say the least.

It is noteworthy that the policy when dealing with legal education – makes no recommendation towards making law schools more inclusive. It remains silent on questions of caste, and gender – both in graduate level training as well as in post-graduate studies. Not only does it ignore this vastly raised concern, its recommendations can potentially enhance the concerns further. On the whole, the NEP policy on legal education, like most of its other recommendations, is quite like a pie in the sky – agreeable to contemplate but improbable to be realized in the manner of contemplation.

The NEP-2020 welcomes some revisions as it establishes a single regulatory body for higher education institutions, discontinues M.Phil programs, and provides for multiple entries and exit points in degree courses. It likewise suggests low stakes board exams and a common entrance exam for universities across the nation. This was necessitated due to the dearth of quality institutions and unreasonable entrance requirements such as high cut-off marks.

Moreover, a centralized education system leading to social exclusion and dilution of the Right to Education Act is only the tip of the iceberg; the government stated that it is proposing to improve the quality and autonomy of higher education, however, is a completely backward move, it is dismantling the University Grants Commission ['UGC'] which is a core structural and regulatory body for higher education. This will only accelerate the commodification and centralization of education, which is perilous considering the probability of the ruling party thrusting its ideological and capital requirements. This is in fact, not the first time such a move was attempted. The Atal Bihari Vajpayee Government tried to usher similar reforms but was met with strong opposition. The contemporary education reforms have come into being only because they were passed through the backdoor without the consent of the parliament and a proper code of conduct.

The advent of the National Law Universities ['NLUs'] for legal education in India has often been censured for fostering entitlement and remaining inaccessible and isolated to most of the law aspirants. A cursory glance examination of the system is enough to exemplify that the criticism is not bereft of merit. Voices have been pedestaled on multiple occasions to increase the diversity in and of NLUs.

Most of these concerns were at the earliest expressed by late Prof. Shamnad Basheer, who through the establishment of Increasing Diversity by Increasing Access to Legal Education ['IDIA'] attempted to equip and intercept some of these issues. However, these points of concern have suffered the consequences and costs of insufficient and slow institutional reforms. Moreover, a deeper analysis of recommendation, however, reveals flaws in design and possible implementation. The revised NEP as it elaborates, states, "It is the function of legal education to transmit the foundational values of Indian democracy to learners to give legal studies the necessary social relevance and acceptability."

It is noteworthy that the policy when dealing with legal education makes no recommendation towards making law schools more comprehensive. It remains tranquil on both the questions of caste and gender in graduate as well as in postgraduate studies. Its recommendations can potentially enhance concerns.

Reference:-

1. Personal Research.

****

21वीं सदी में भारत-इजरायल संबंध: प्रमुख बाधाएँ

स्वाति शर्मा*

शोध सारांश – भारत इजरायल संबंध उन दो लोकतांत्रिक देशों के द्विपक्षीय संबंधों को इंगित करता है जो सैद्धान्तिक विचारधारा में मतभेद होने के कारण लम्बे समय तक दूरस्थ अजनबी बने रहे। 1990 के पश्चात् की परिवर्तित परिस्थितियों ने दोनों देशों को करीब लाने का काम किया। सन् 1992 में कूटनीतिक संबंधों की स्थापना के पश्चात् दोनों देश संबंधो की नई उड़ान भर रहे हैं। वर्तमान में दोनों देशों के संबंध तेजी से आगे बढ़ रहे हैं। किन्तु अनेक चुनौतियाँ दोनों देशों के संबंधों के पूर्ण विकास पर विराम लगाती है। फिलिस्तीन मुक्ति संघर्ष में भारत की भूमिका अरब इजरायल संघर्ष के परिप्रेक्ष्य में भारत की नीति, ईरान के साथ इजरायल के कटुता पूर्ण संबंध, चीन की भारत को हासिये पर लाने की नीति एवं इजरायल से चीन के प्रगाढ़ संबंध भारत इजरायल संबंधों में बाधा उपस्थित करने का कार्य करते है।

प्रस्तुत शोध पत्र के प्रारम्भिक भाग में 21वीं सदी में भारत-इजरायल के मध्य सहयोग के क्षेत्रों का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है उसके पश्चात् भारत इजरायल संबंधों के मध्य की उन चुनौतियों की जांच पड़ताल करने का प्रयास किया गया है जिन्होंने लम्बे समय तक दोनों देशों के सम्बंधों को विकसित नहीं होने दिया एवं वर्तमान में भी दोनों देशों के संबंधों को सीमित करते है। साथ ही इन बाधाओं को दूर करने के सुझावों का उल्लेख भी प्रस्तुत शोध पत्र में किया गया है।

प्रस्तावना – किसी भी देश की विदेश नीति में उस देश के राष्ट्रीय हित सर्वोपरि होते हैं। कोई भी देश अपनी विदेश नीति को घरेलू बाध्यताओं एवं अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के अनुरूप बदलता एवं दुरूस्त करता हैं। ताकि उसके राष्ट्रीय हितों को तत्कालीन सरकार की विचारधारा के अनुरूप सर्वश्रेष्ठ तरीके से साधा जा सके। भारत और इजरायल संबंधों के संदर्भ में भी यह बात सही साबित होती है। भारत एवं इजरायल लगभग एक ही समय में ब्रिटिश दासता से मुक्त हुए। दोनों देशों में लोकतांत्रिक व्यवस्थाएँ पाई जाती है। दोनों ही देश समृद्ध संस्कृति एवं सभ्यता के धनी है। दोनों ही देश पड़ोस प्रायोजित आतंकवाद से पीड़ित है।

किन्तु दोनों देशों ने विभिन्न कारणों से लम्बे समय तक कूटनीतिक संबंध स्थापित नहीं किये। किन्तु 1992 की परिवर्तित वैश्विक परिस्थितियों ने दोनों देशों को एक दूसरे से निकट संबंध स्थापित करने हेतु प्रेरित किया। 1992 के पश्चात् भारत-इजरायल संबंधों में तेजी से विकास हुआ है। परस्पर पूरक क्षमताओं वाले देश भारत एवं इजरायल एक दूसरे के अनुभवों से सीखते हुए साथ-साथ आगे बढ़ते हुए विकास कर रहे है। वर्तमान में दोनों देश अपने संबंधों को तकनीकी हस्तांतरण तक सीमित न रखकर विकास की दीर्घकालिक भागीदारी तक ले जाने हेतु सहमत है।

विकसित होते भारत-इजरायल संबंध न केवल एशिया बल्कि सम्पूर्ण विश्व राजनीति में महत्त्वपूर्ण बदलाव लाने की सामर्थ्य रखते है किन्तु दोनों देशों के गहराते संबंधों के बावजूद दोनों देशों के द्विपक्षीय संबंधों में अनेक बाधाएँ उपस्थित है जो दोनो देशों के संबंधों के अधिकतम विकास को रोकती हैं।

भारत के पड़ोस में स्थित चीन की विस्तारवादी नीति एवं बढ़ता प्रभुत्व भारत के लिए सामरिक चुनौती उपस्थित करता हैं वही ईरान की बढ़ती साख इजरायल के लिए गंभीर खतरा है। अत: भारत के ईरान, फिलिस्तीन एवं अरब देशों के साथ घनिष्ठ संबंध भारत-इजरायल के संबंधों में बाधा उपस्थित करते हैं, वही इजरायल के चीन के साथ घनिष्ठ रक्षा एवं व्यापारिक संबंध, इजरायल की रक्षा नीति पर अमेरिकी प्रभुत्व एवं दोनों देशों के निवेश संबंधी नियमों में भिन्नता भी भारत-इजरायल संबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने का कार्य करती है।

प्रस्तुत शोध पत्र के प्रथम भाग में भारत इजरायल संबंधों के इतिहास एवं भारत-इजरायल के विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग का वर्णन किया गया है। इसके पश्चात् 21वीं सदी में भारत-इजरायल संबंधों के समक्ष उपस्थित प्रमुख चुनौतियों का विश्लेषण किया गया है एवं अंत में दोनों देशों को इन बाधाओं से पार पाने हेतु कुछ सुझावों का उल्लेख किया गया है।

भारत-इजरायल संबंधों का इतिहास – भारत की विदेश नीति की प्रमुख प्राथमिकताओं एवं साझेदारियों ने लम्बे समय तक भारत इजरायल संबंधों के विकास में बाधा उत्पन्न की। भारत एवं इजरायल को लगभग एक वर्ष के भीतर आजादी मिली थी लेकिन भारत ने लम्बे समय तक इजरायल से कूटनीतिक संबंध स्थापित नहीं किए। भारत के इजरायल से संबंध स्थापित न होने में अनेक कारको ने महत्तवपूर्ण भूमिका निभाई। भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति, फिलिस्तीन का समर्थन करने की नीति, अरब देशों में निहित हित एवं शीत युद्ध के दौरान सोवियत संघ की ओर झुकाव के कारण भारत ने इजरायल से दूरी बनाए रखी। साथ ही महात्मा गांधी एवं पं. जवाहर लाल नेहरू का दृष्टिकोण भी यहूदी राज्य के विरूद्ध था। महात्मा गांधी एवं नेहरू विश्व के अन्य देशों में यहूदियों पर हुए अत्याचारों के कारण उनसे सहानुभूति तो रखते थे किन्तु धर्म के आधार पर यहूदी राज्य (इजरायल) के गठन का विरोध करते थे।

अत: भारत ने मई 1949 में इजरायल की संयुक्त राष्ट्र में सदस्यता का विरोध किया हालांकि 1950 के अंत में इजरायल को सरकारी तौर पर मान्यता दे दी। मगर पूर्ण रूप से दोनों देशों के संबंध स्थापित होने में 1992 तक का समय लगा। भारत ने शुरू से ही अरब शरणार्थियों के हितो का

* शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.) भारत

पुरजोर समर्थन किया जिसका प्रदर्शन वर्षो तक संयुक्त राष्ट्र में भारतीय प्रतिनिधियों की रायो से होता रहा है।

हालांकि भारत ने ऐसा इजरायल के अस्तित्व की सच्चाई को स्वीकार करते हुए किया। भारत ने अरब राष्ट्रों में फिलिस्तीन शरणार्थियों को तुरंत सहायता पहुंचाने एवं उन्हें वही स्थायी रूप से बसाने की चेष्टाओं का समर्थन किया। भारत प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई के दौर में 1978 की कैम्प डेविड संधि के समय अरबों के साथ खड़ा रहा। हालांकि उन दिनों इजरायली नेता मोशे दयान भारत के दौरे पर आए मगर इस दौरे को बहुत महत्तव नहीं दिया गया। फिर 1980 में इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस की वापसी हुई तब भी अरबों के लिए समर्थन जारी रहा। नई दिल्ली में पीपुल्स लिबरेशन ऑरगेनाइजेशन के कार्यालय को पूर्ण रूप से कूटनीतिक दर्जा प्रदान किया गया। यासिर अराफात ने 1980 एवं 1982 में भारत के सरकारी दौरे किए। उन दिनों 1982 में इजरायली वाणिज्य दूत को एक विवादपूर्ण साक्षात्कार देने के कारण देश से निकाल दिया गया। विदेशो में अपने सकारात्मक विचारो के लिए पहचाने जाने वाले प्रधानमंत्री राजीव गांधी के सत्ता में आने के बाद इजरायल के बारे में सोच में धीरे-धीरे अंतर आने लगा। इजरायल से कुछ अनौपचारिक संधियां भी हुई।[1]

इसके पश्चात् 1990 के परिवर्तित अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम यथा सोवियत संघ के विघटन, अमेरिका के नेतृत्व में एक ध्रुवीय विश्व का उदय, भारत के आर्थिक विकास हेतु अमेरिका की आवश्यकता एवं रक्षा उद्योग के आधुनिकीकरण हेतु नये रक्षा भागीदार की आवश्यकता ने भारत को अमेरिका के करीबी मित्र इजरायल से पूर्ण कूटनीतिक संबंध स्थापित करने हेतु प्रेरित किया एवं 1992 में भारत ने पी.वी. नरसिम्हा राव के कार्यकाल में इजरायल से पूर्ण कूटनीतिक संबंध स्थापित किये।

21वीं सदी में भारत-इजरायल संबंध - 1992 में भारत इजरायल संबंधों के उन्नयन के पश्चात् कृषि एवं जल प्रबंधन, सुरक्षा व तकनीक दोनों देशों के द्विपक्षीय संबंधों का प्रमुख आधार है। इजरायल कृषि, जल प्रबंधन, जल पुनर्चक्रण, अपशिष्ट प्रबंधन एवं जैव प्रैद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नत तकनीक से युक्त देश है। अत: भारत इन क्षेत्रों में इजरायल के सहयोग से अपना विकास कर रहा है। दोनों देश व्यापार, शिक्षा एवं पर्यटन के क्षेत्र में भी संबंधों को बढ़ाने की संभावनाओं को तलाश रहे है। वर्तमान में भारत-इजरायल निम्न क्षेत्रों में सहयोग कर रहे है।

राजनयिक संबंध - जनवरी 1992 में भारत द्वारा इजरायल से पूर्ण राजनयिक संबंध स्थापित होने के पश्चात् दोनों देशों के संबंधों का तीव्रगति से विकास हुआ। दोनों देशों के मध्य मंत्रिस्तरीय वार्ताऐं हो रही है। इन वार्ताओं का दायरा कृषि एवं जल प्रबंधन, सुरक्षा, व्यापार एवं वाणिज्य तक फैला हुआ है। राजनयिक संबंधों की स्थापना के पश्चात् दोनों देशों में मंत्रिस्तरीय एवं आधिकारिक यात्राओं में वृद्धि हुई है। विशेषकर 21वीं सदी में तो दोनों देशों के मध्य अधिकारिक यात्राओं की बाढ़ सी आ गई है। 2000 में तत्कालीन केन्द्रीय गृहमंत्री लाल कृष्ण आडवाणी एवं विदेश मंत्री जसवंत सिंह, 2005 में केन्द्रीय कृषि मंत्री शरद पंवार, 2008 में पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, 2014 में गृहमंत्री राजनाथ सिंह, 2015 में राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी, 2016 में विदेश मंत्री सुषमा स्वराज एवं 2017 में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी इजरायल की यात्रा पर जा चुके है।

वही 2001 में इजरायल के भूतपूर्व प्रधानमंत्री शिमोन पेरेज, 2003 में इजरायल के प्रधानमंत्री एरियल शेरॉन, 2004 में इजरायल के उपप्रधानमंत्री व विदेश मंत्री सिल्वान शालोम, 2006 में इजरायल सुरक्षा परिषद् के प्रधान इलान मिगराही, 2016 में इजरायल के राष्ट्रपति रूवेन रिवलिन व 2018 में इजरायल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू भारत का दौरा कर चुके हैं।

कृषि संबंध - कृषि के क्षेत्र में सहयोग के लिए भारत और इजरायल ने एक द्विपक्षीय करार किया। 2015-18 के लिए द्विपक्षीय कार्ययोजना इस समय प्रचालन के अधीन है। इसका उद्देश्य डेयरी एवं पानी जैसे नए क्षेत्रों में सहयोग का विस्तार करना है। 2012-15 की पिछली योजना में हरियाणा, महाराष्ट्र, राजस्थान, गुजरात आदि विभिन्न राज्यों में कृषि सहयोग का विस्तार हुआ है। इन राज्यों में कृषि में 15 उत्कृष्टता केन्द्र पहले ही चालू हो चुके है।

बागवानी यंत्रीकरण, संरक्षित खेती, उपवन एवं कैनोपी प्रबंधन, नर्सरी प्रबंधन, सूक्ष्म सिंचाई तथा फसल पश्चात् प्रबंधन में विशेष रूप से हरियाणा एवं महाराष्ट्र में इजरायल की विशेषज्ञता एवं प्रौद्योगिकी से भारत को बहुत लाभ हुआ है। इजरायल की ड्रिप सिंचाई प्रौद्योगिकी एवं उत्पादों का अब भारत में बड़े पैमाने पर उपयोग हो रहा है। इजरायल की कुछ कम्पनियाँ और विशेषज्ञ अधिक दुग्ध उत्पादन में अपनी विशेषता के माध्यम से डेयरी फार्मिंग के प्रबंधन एवं सुधार के लिए अपनी विशेषज्ञता उपलब्ध करा रहे है।[2]

आर्थिक एवं वाणिज्यिक संबंध - 21वीं सदी में भारत-इजरायल के मध्य द्विपक्षीय व्यापार का तेजी से विस्तार हुआ है। 2013-14 में द्विपक्षीय व्यापार 6.06 अरब डॉलर था जो 2009-10 के 57 प्रतिशत से अधिक था। 2013-14 में भारत के पक्ष में 1.44 अरब डॉलर झुका हुआ था। भारत इजरायल को मुख्यत: खनिज, ईंधन तेल, मोती और रत्न का निर्यात करता है। जबकि इजरायल से भारत परंपरागत तौर पर मुख्यत: प्राकृतिक एवं कृत्रिम मोती और रत्न का आयात करता है।[3]

इस प्रकार पिछले 10 वर्षो से भारत-इजरायल का द्विपक्षीय व्यापार 5 से 6 अरब डॉलर के आसपास अटका हुआ है। इजरायल भारत के फ्लैगशिप कार्यक्रमों मेक इन इण्डिया, डिजिटल इंडिया, स्किल इंडिया में भी सहयोग कर रहा है। इजरायल ने भारत के मेक इन इण्डिया कार्यक्रम के साथ मेक विद् इण्डिया के प्रति भी अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त की है।

रक्षा संबंध - रक्षा सहयोग भारत-इजरायल के द्विपक्षीय संबंधों का प्रमुख आधार स्तंभ है। भारत को अपने शत्रु पड़ोसी देशों एवं आतंकवाद का मुकाबला करने हेतु इजरायल के सहयोग की आवश्यकता थी वही इजरायल के रक्षा उद्योग के लिए भारत महत्तवपूर्ण देश है। इजरायल भारत को उन्नत रक्षा सामग्री, हथियार एवं उपकरणों का निर्यात करता है जिसमें मुख्य रूप से मानव रहित विमान, मिसाइले आदि प्रमुख है।

स्टॉक होम इंटरनेशनल पीस रिसर्च इंस्टीट्यूट के मुताबिक इजरायल के लिए भारत शीर्ष हथियार खरीददारों मे से एक है। भारत के रक्षा व्यापार में अमेरिका (14 प्रतिशत), रूस (68 प्रतिशत) के बाद इजरायल की 7.2 प्रतिशत की हिस्सेदारी थी।

वैसे इन दोनों देशों के बीच सहयोग के शुरूआती संकेत 1962 में भारत-चीन युद्ध के दौरान देखने को मिले थे, जब इजरायल ने भारत को सैन्य सहायता प्रदान की थी, इजरायल ने पाकिस्तान के साथ दो युद्धों के दौरान भी भारत की सहायता की। भारत के असैन्य हवाई वाहनों (यूएवी) का आयात भी अधिकांश इजरायल से होता है। इजरायल से खरीदे गए 176 यूएवी में से 108, खोजी यूएवी और 68 हेरोन यूएवी है।

अप्रैल 2017 में भारत और इजरायल ने एक उन्नत मध्यम दूरी की सतह से हवा में मार करने वाली मिसाइल प्रणाली के लिए दो अरब डॉलर के सौदे पर हस्ताक्षर किऐ थे जो भारतीय सेना को 70 किमी. तक की सीमा के

भीतर विमान, मिसाइल और ड्रोन को मार गिराने की क्षमता प्रदान करता है। भारत ने इस साल मई में इजरायल निर्मित स्पाइडर त्वरित प्रतिक्रिया युक्त सतह से हवा में मार करने वाली मिसाइल का सफलतापूर्वक परीक्षण किया था। भारतीय वायुसेना इस प्रणाली को अपनी पश्चिमी सीमा पर तैनात करने की योजना बना रही है।[4]

आतंकवाद मुकाबला करने हेतु भी भारत-इजरायल एक दूसरे का सहयोग कर रहे है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सहयोग – इजरायल विश्व के आधुनिकतम तकनीको से युक्त देशों मे से एक है। अत: भारत एवं इजरायल विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में संयुक्त शोध एवं विकास पर बल दे रहे है। दोनों देशों के बीच विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में कई प्रकार के समझौता ज्ञापनों पर हस्ताक्षर हुए जैसे- अन्तरिक्ष प्रौद्योगिकी। जनवरी 2014 में भारत और इजरायल द्वारा भारत-इजरायल सहयोग निधि (कोऑपरेटर फण्ड) को स्थापित करने के लिए गहन अध्ययन किया जा रहा है। इसका उद्देश्य संयुक्त वैज्ञानिक और तकनीकी सहयोग के जरिये नवाचारों को बढ़ाना है।[5]

सांस्कृतिक एवं शैक्षिक संबंध – इजरायल में भारत को मजबूत सांस्कृतिक परम्पराओं वाले एक प्राचीन देश के रूप में पहचान मिली हुई है। इजरायल की युवा पीढ़ी भारत को एक आकर्षक, वैकल्पिक टूरिस्ट डेस्टिनेशन के रूप में देखती है। पर्यटन व्यवसाय एवं प्रयोजनों के लिए हर साल 35 हजार इजरायली भारत आते है। 40000 से अधिक भारतीय हर साल इजरायल की यात्रा करते है। वे मुख्य रूप से तीर्थयात्री है जो पवित्र स्थानों को देखने जाते है। दूतावास इजरायल में अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन करता है जिसमें व्याख्यान, प्रदर्शन, कार्यशालाएँ, पाकशाला कार्यक्रम, फोटोग्राफी प्रतियोगिता शामिल हैं। इजरायल में आयोजित पहले अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस में 1500 से अधिक लोगों ने भाग लिया।

तेल अवीव विश्वविद्यालय, हिब्रू विश्वविद्यालय तथा हाइफा विश्वविद्यालय में भारत से संबंधित अनेक पाठ्यक्रम पढ़ाए जाते हैं। पूर्वी एवं दक्षिण पूर्व एशियाई अध्ययन विभाग में भारतीय अध्ययन के लिए एक चेयर स्थापित करने के लिए भारत ने तेल अवीव विश्वविद्यालय के साथ एक एमओयू पर हस्ताक्षर किए है जिसके तहत एक सेमेस्टर के लिए भारतीय प्रोफेसर वहां जाते हैं। संकाय सदस्यों के आदान प्रदान के लिए कुछ निजी एवं सार्वजनिक भारतीय विश्व विद्यालयों ने इजरायल के विश्वविद्यालयों के साथ करार किया है जिसके तहत् इजरायल के प्रोफेसर भारत में एक सेमेस्टर के दौरान पढ़ाते है।[6]

भारत-इजरायल संबंधों की प्रमुख बाधाएँ – भारत इजरायल संबंधों को अनेक बाधाएँ सीमित करने का कार्य करती है। इन बाधाओ का उल्लेख निम्न प्रकार से है।

इजरायल-फिलिस्तीन संघर्ष – इजरायल के अधिकांश खाड़ी देशों से कटु संबंध है। भारत ने भी घरेलू राजनीतिक परिवेश के कारण लम्बे समय तक इजरायल के साथ कूटनीतिक संबंध स्थापित नहीं किए क्योंकि भारत की अधिकांश मुस्लिम आबादी फिलिस्तीन के मुद्दे पर इजरायल की नीति का विरोध करती है। अत: भारत ने अपनी मुस्लिम आबादी के नाराज होने के भय से लम्बे समय तक इजरायल के साथ संबंध स्थापित नहीं किये इजरायल-फिलिस्तीन संघर्ष को समझने हेतु हमें फिलिस्तीन के विभाजन की पृष्ठभूमि समझनी होगी।

1917 में प्रथम विश्व युद्ध के दौरान जब ऑटोमन साम्राज्य हारने की कगार पर था तब ब्रिटिश विदेश मंत्री सर आर्थर बैलफोर ने यहूदियों को युद्ध की समाप्ति के पश्चात् फिलिस्तीन में बसाने का वायदा किया। पहले विश्व युद्ध के बाद फिलिस्तीन में एक नई सरकार का गठन हुआ। इस दौरान बड़ी संख्या में फिलिस्तीन में यहूदी शरण लेने लगे यहां इस समय यहूदियों की कुल आबादी सिर्फ 3 फीसदी थी लेकिन अगले तीस साल में यह बढ़कर 30 फीसदी तक पहुंच गई। यहूदियों ने यहां आकर अरब लोगों से जमीन खरीदनी शुरू कर दी और यहां यहूदी बस्तियों की स्थापना करनी भी शुरू कर दी। इसी दौरान 1936 में ब्रिटिश सरकार के खिलाफ अरबो ने बगावत शुरू कर दी। इस बगावत को खत्म करने के लिए ब्रिटेन की सरकार ने यहूदी लड़ाको का साथ दिया।[7]

इस विद्रोह के पश्चात् ब्रिटेन की सरकार ने यहूदियों के फिलिस्तीन आने पर पाबंदी लगाई जिससे यहूदी ब्रिटेन के खिलाफ हो गए। 1947 में यूएन में एक नया रिजोल्यूशन हुआ कि यहां यहूदियों को अपना एक देश मिलना चाहिए, जिस पर इजरायल को समर्थन मिला। इस रिजोल्यूशन के बाद इजरायल को दो भागों में बांट दिया गया एक हिस्सा था यहूदी राज्य और एक था अरब राज्य। लेकिन बड़ी समस्या थी जेरूसलम क्योंकि यहां आधी आबादी यहूदियों की थी और आधी आबादी मुसलमानों की थी। इसलिए यूएन ने फैसला दिया कि जेरूसलम को अन्तर्राष्ट्रीय सरकार के द्वारा चलाया जाए।[8]

भारत फिलिस्तीन के धर्म के आधार पर विभाजन का विरोधी था। अत: भारत ने सदैव ही इजरायल का विरोध एवं फिलिस्तीन की क्षेत्रीय अखण्डता का समर्थन किया। 1948 में इजरायल राज्य की घोषणा हुई और इसी के साथ अरब-इजरायल संघर्ष प्रारम्भ हुआ। इन संघर्षो के परिणाम स्वरूप इजरायल ने संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा दी गई जमीन से अधिक भूमि का अधिग्रहण कर लिया। फलस्वरूप फिलिस्तीनियों को अपने ही क्षेत्र में अधिकारों से वंचित होना पडा क्योंकि अब वे इजरायल सेना के नियंत्रण के अधीन थे।

इसने राजनीतिक वातावरण को परिवर्तित कर दिया। इसी दौरान हमास का जन्म हुआ जो कि पी.एल.ओ. से भी ज्यादा खतरनाक थी। पी.एल.ओ. इजरायल से समझौते के पक्ष में था जबकि हमास का मानना था कि इजरायल देश का अस्तित्व ही नहीं है। हम उसे राष्ट्र नहीं मानते है।

1993 में ओस्लो करार के तहत इजरायल और फिलिस्तीन या यू कहे इजरायल के पीएम येट्सचाक राबिन और पीएलओ के नेता यासिर अराफात के बीच समझौता हुआ। इन दोनों ही नेताओं को नोबेल पीस अवार्ड मिला था। इस समझौते के तहत पीएलओ ने इजरायल को एक राष्ट्र के तौर पर मान्यता दी और इजरायल की सरकार ने पीएलओ को मान्यता दी।[9]

यद्यपि इस समझौते के पश्चात् भी इस क्षेत्र में शांति स्थापित नहीं हो पाई एवं वर्तमान में भी इस क्षेत्र में संघर्ष जारी है।

हालांकि वर्ष 2003 में एरियल शेरोन के भारत दौरे के विरूद्ध केवल कुछ ही वामपंथी दलों और मुस्लिम संगठनों ने आवाज उठाई तथापि फिलिस्तीनी मसला भारत में एक लोकप्रिय कारक रहा है। शेरोन का स्वागत करते हुए भारत सरकार ने भी यह स्पष्ट किया कि वह फिलिस्तीनियों के लिए न ही अपने परम्परागत समर्थन में कमी लाएगा, न ही फिलिस्तीनियों के नेता के रूप में यासिर अराफात को छोडेगा। अराफात की मृत्यु तक भारत ने उन्हें फिलिस्तीनी राष्ट्र के प्रतीक के रूप में देखा और इस प्रकार उनकी भूमिका को शेरोन सरकार जो अराफात को भगाकर उसकी जगह दूसरे फिलिस्तीनी नेतृत्व को बढ़ावा देने की थी, के बिल्कुल विरूद्ध मध्य पूर्व में

किसी भी शांति प्रक्रिया के लिए केन्द्रीय समझा। अराफात की मृत्यु के बाद फिलिस्तीन के नेतृत्व का मसला संभवत: भारत और इजरायल के बीच विवाद की जड़ के रूप में नहीं बना रहेगा।

21वीं सदी में भारत की अधिकांश सरकारों ने व्यावहारिक नीति का अनुसरण करते हुए इजरायल के साथ मजबूत कृषि, रक्षा एवं वाणिज्यिक संबंधों की स्थापना की है। भारत अब इजरायल की फिलिस्तीन मसले पर सार्वजनिक निंदा करने से बचता है। विगत 25 वर्षो में सभी भारतीय सरकारों ने शांतिपूर्ण इजरायल के साथ स्वतंत्र एवं संप्रभु फिलिस्तीन का समर्थन कर संतुलित विदेश नीति का परिचय दिया है।

किन्तु आने वाले समय में फिलिस्तीन मामला भारत इजरायल संबंधों में फिर से खटास उत्पन्न कर सकता है क्योंकि इजरायली प्रधानमंत्री नेतन्याहू फिलिस्तीन के वेस्ट बैंक पर कब्जा करने की योजना बना रहे है। अगर ऐसा होता है तो भारत के लिए अपनी घरेलू परिवेश के मद्देनजर इजरायल से मधुर संबंध बनाए रखने में मुश्किले उत्पन्न हो सकती है।

अरब जगत् के संदर्भ में भिन्न दृष्टिकोण – भारत–इजरायल संबंधों में अरब देशों के साथ भारत के मधुर संबंध एक अन्य चुनौती है। 1948 में इजरायल का उदय पश्चिम एशिया की एक महत्तवपूर्ण घटना थी। इजरायल के उदय के साथ ही अरब–इजरायल संघर्ष प्रारम्भ हुआ। जहाँ यहूदी फिलिस्तीन को अपनी मातृभूमि मानते थे एवं वही बसने हेतु कृतसंकल्प थे। वही अरब देश फिलिस्तीन को अपनी भूमि मानते थे।

अत: इजरायल एवं अरब देशों के मध्य 1948, 1956, 1967 एवं 1973 में युद्ध हुए। इन युद्धों में इजरायल ने संयुक्त राष्ट्र द्वारा स्वीकृत जमीन से अधिक जमीन पर कब्जा कर लिया जिस कारण अरब देशों से इजरायल के संबंध ओर बिगड़ते गए। 1956, 1967 और 1973 के अरब–इजरायल युद्ध में भारत ने अरबों का पक्ष लिया।

1956 के स्वेज संकट के समय भारत ने मिस्त्र पर इजरायली हमले की आलोचना की। इस समय भारत–इजरायल संबंधों में गिरावट आई। जून 1967 के छ: दिवसीय अरब–इजरायल युद्ध में भारत ने अरब देशों का पक्ष लिया और इजरायल पर दोषारोपण किया। उल्लेखनीय है कि इस समय भारतीय राजनीति में स्वतंत्र दल और जनसंघ ने इजरायल समर्थक नीति पर बल दिया। 1973 के योम किम्पूर युद्ध में भी भारत ने मिस्त्र और सीरिया का समर्थन किया। हालांकि इस समय युद्ध की शुरूआत मिस्त्र और सीरिया ने की थी लेकिन भारत का मानना था कि इस क्षेत्र में तनाव का कारण इजरायल द्वारा अधिग्रहीत अरब क्षेत्रों को खाली करने से मना करना है।[10]

अरब इजरायल संघर्ष में भारत द्वारा अरब देशों का सदैव समर्थन करने के बावजूद अरब देशों ने कश्मीर मुद्दे पर सदैव पाकिस्तान का समर्थन किया। वही दूसरी ओर 1962 के भारत चीन युद्ध एवं 1965, 1971 एवं 1999 के भारत–पाकिस्तान युद्ध में इजरायल ने भारत का साथ दिया। इस प्रकार भारत ने सदैव आँख मूंदकर अरब देशों का समर्थन किया किन्तु भारत द्वारा अरब देशों का समर्थन करने का प्रमुख कारण इन देशों में निहित भारत के राष्ट्रीय हित है। भारत के अरब देशों से घनिष्ठ ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संबंध है। साथ ही अरब देशों की सामरिक दृष्टि से महत्तवपूर्ण स्थिति ने भी भारत की नीति में महत्तवपूर्ण भूमिका निभाई। मध्य–पूर्व के ये देश भारत के विस्तारित पड़ोस का भाग है।

भारत की खाड़ी नीति का आर्थिक आयाम बहुत महत्तवपूर्ण है। जी.सी.जी. देश तथा पश्चिम एशिया और दक्षिण अफ्रीका के देश भारत के विशालतम व्यापारिक भागीदार है। भारत और इस क्षेत्र के बीच द्विपक्षीय व्यापार 2014–15 में 180 बिलियन यूएस डॉलर से अधिक था। यह क्षेत्र भारत की ऊर्जा संबंधी आवश्यकताओं के एक बड़े भाग की पूर्ति करता है तथा भारत के कच्चे तेल में कुल आयात के 60 प्रतिशत से अधिक तथा भारत की एल एन जी आवश्यकताओं के 85 प्रतिशत से अधिक भाग का योगदान देता है।[11]

जी.सी.सी. में भारतीय सबसे बड़े प्रवासी समुदाय है जिनकी संख्या लगभग 40 से 50 लाख है। यू.ए.ई. की कुल आबादी का लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा भारतीय प्रवासियों का है और उनकी बहरीन, ओमान, कतर में उल्लेखनीय तादाद है। भारत अपने खाड़ी प्रवासियों से लगभग 6 अरब डॉलर प्रतिवर्ष विदेशी मुद्रा कमाता है।[12]

अत: भारत अपने राष्ट्रीय हितों के मद्देनजर अरब देशों की कीमत पर इजरायल से मधुर संबंध स्थापित नहीं कर सकता है।

किन्तु 21 वीं सदी में भारत–इजरायल संबंधों में अरब जगत महत्तवपूर्ण चुनौती नहीं है। 21वीं सदी में अधिकांश अरब देश इजरायल के साथ मधुर संबंध स्थापित कर रहे है। मिस्त्र एवं जॉर्डन के साथ इजरायल के राजनयिक संबंध है। फिलिस्तीन मुद्दा अरब देशों में प्रभावशीलता खो चुका है। इसी तरह इजरायल के प्रति अरब देशों के दृष्टिकोण में परिवर्तन होता रहा तो अरब विश्व भारत–इजरायल संबंधों में चुनौती उपस्थित नहीं करेगा।

ईरान के संबंध में भिन्न दृष्टिकोण – भारत–ईरान के मैत्रीपूर्ण संबंध भी भारत–इजरायल संबंधों में गतिरोध उत्पन्न करने का कार्य करते है। भारत के ईरान के साथ ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक संबंध है। वर्तमान में इस्लामिक जगत पर पाकिस्तान के प्रभाव का प्रतिकार करने की भारत की आवश्यकता, भारत की अफगानिस्तान तक पहुंच, भारत की ऊर्जा की मांग एवं ईरान के विशाल ऊर्जा संसाधन, मध्य एशिया की बढ़ती भू–राजनीतिक महत्ताता एवं आर्थिक एवं व्यापारिक संबंधों को मजबूत करने की इच्छा भारत–ईरान के हितों के बढ़ते अभिमुखीकरण के लिए उत्तरदायी है।

भारत का ईरान में अवसंरचना क्षेत्र के विकास में पर्याप्त हित निहित है। यह अफगानिस्तान और मध्य एशिया के लिए अत्यधिक अपेक्षित संयोजनता उपलब्ध कराएगा। भारत ने ईरान मे चाबहार पत्तान के विकास के लिए एक समझौता ज्ञापन पर भी हस्ताक्षर किए है जिसमें कंटेनर और बहुउद्देशीय टर्मिनलों के रूप में भारत द्वारा दो डेडिकेटेड बर्थ का विकास शामिल होगा। भारत ईरान और अफगानिस्तान के बीच चाहबहार पर करार के शीघ्र ही निष्पादित हो जाने की आशा हैं।[13]

भारत ईरान संबंधों के विपरीत ईरान–इजरायल के संबंध शत्रुतापूर्ण हैं। भारत–ईरान के निकट संबंध भारत–इजरायल के द्विपक्षीय सैन्य संबंधों की प्रगति में बाधा उत्पन्न करते है।

पहले इजरायल–ईरान के संबंध मधुर थें। वर्ष 1979 में ईरान की क्रांति ने कट्टरपंथियों को सत्ता में आने का मौका दिया और तभी से ईरानी नेता इजरायल को मिटाने की बात करते रहे हैं। ईरान इजरायल के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता है और उसका कहना है कि इजरायल ने मुसलमानों की जमीन पर अवैध कब्जा कर रखा है।[14]

ईरान के राष्ट्रपति महमूद अहमदीनेजाद ने तेहरान में आयोजित द वर्ल्ड विदाउट जियोनिज्म सम्मेलन में इजरायल के विरूद्ध तीखी आपत्तिाजनक टिप्पणियां करते हुए कहा था कि इजरायल को विश्व के नक्शे से मिटा देना चाहिए। राष्ट्रपति महमूद अहमदीनेजाद के वक्तव्य की विश्व स्तर पर तीव्र आलोचना हुई।[15]

इजरायल ईरान को आतंकवाद प्रायोजित करने वाला देश मानता है।

ईरान लेबनान में हिजबुल्लाह, फिलिस्तीन में हमास तथा सीरिया में बशर-अल-असद को समर्थन प्रदान करता हैं। इस प्रकार ईरान विभिन्न आतंकवादी संगठनों को समर्थन प्रदान कर इजरायल के लिए चुनौती उपस्थित करता है। ईरान के परमाणु कार्यक्रम ने भी ईरान इजरायल संबंधों को जटिल बनाने का कार्य किया हैं। क्योंकि इजरायल का मानना है कि ईरान बिजली के लिए घोषित परमाणु कार्यक्रम की आड़ में परमाणु हथियार विकसित कर रहा है।

इजरायल को भय है कि इजरायल द्वारा भारत को दी जाने वाली उन्नत रक्षा सामग्री एवं तकनीक ईरान के हाथ न लग जाए। इजरायल भारतीय अधिकारियों के समक्ष अपनी चिंता व्यक्त कर चुका है कि परमाणु शक्ति सम्पन्न ईरान इजरायल के अस्तित्व के लिए खतरा उत्पन्न कर सकता है।

अत: भारत को ईरान एवं इजरायल के साथ अपने संबंधों में संतुलन बनाए रखना होगा क्योंकि भारत-इजरायल के घनिष्ठ संबंधों के कारण जहां ईरान के पाकिस्तान एवं चीन के निकट जाने का भय है वही भारत-ईरान के निकट संबंधों के कारण भारत को अपने प्रमुख रक्षा सहयोगी से हाथ धोना पड़ सकता है।

चीन के संबंध में मतभेद – भारत की स्थापना के बाद से ही भारत ने चीन के साथ मित्रतापूर्ण संबंधों पर बल दिया किन्तु चीन ने विश्वासघात करते हुए 1962 में भारत पर आक्रमण किया और अपनी विस्तारवादी नीति के अनुरूप भारत के अनेक क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया। तब से भारत-चीन संबंध कटु बने हुए है। अरूणाचल प्रदेश एवं सिक्किम भी दोनों देशों के मध्य विवाद का कारण बने हुए है।

दूसरी और इजरायल चीन संबंधों पर नजर डाली जाए तो चीन के इजरायल के साथ घनिष्ठ संबंध है। दोनों देश व्यापार, वाणिज्य, रक्षा एवं प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण के क्षेत्र में एक दूसरे का सहयोग कर रहे है। चीन द्वारा इजरायल से आधुनिकतम प्रौद्योगिकी युक्त उपकरणों को प्राप्त करना भारत के सामरिक हितों के प्रतिकूल है।

अत: भारत ने भी 1990 के दशक से चीन के साथ संबंधों को सामान्य करने पर बल दिया। वर्तमान में भारत एवं चीन के व्यापारिक संबंधों का तेजी से विकास हुआ है किन्तु व्यापारिक संबंधों के सुधार के बावजूद चीन कश्मीर मसले पर पाकिस्तान का समर्थन करता है। पाक अधिकृत कश्मीर में चीन की उपस्थिति भी भारत के लिए सामरिक चुनौती उपस्थित करती है।

चीन-पाकिस्तान इकोनॉमिक कॉरिडोर चीन का अहम् प्रोजेक्ट हैं। ये पाकिस्तान के ग्वादर बंदरगाह से समुद्र के रास्ते चीन के झिंजियोंग तक पहुंचने की एक बड़ी परियोजना हैं। 2442 किमी. लम्बे प्रोजेक्ट के जरिए चीन समुद्री रास्ते पाकिस्तान से दूरी कम करना चाहता है। इसके जरिए कच्चे तेल, नेचुरल गैस, जैसी चीजों का ट्रासपोर्ट करने की योजना है।[16]

भारत सीपीईसी को अपनी सम्प्रभुता एवं क्षेत्रीय अखण्डता के लिए खतरा मानता है। दरअसल सीपैक गलियारा पाक प्रशासित कश्मीर व गिलगित बाल्तिस्तान से गुजर रहा है। जिसे भारत अपना हिस्सा मानता है।[17]

चीन भारत के पड़ोस में बंदरगाहों एवं नौ सैनिक अड्डों का निर्माण कर भारत को घेरने की योजना बना रहा है। वास्तव में चीन भारत के सामरिक एवं आर्थिक शक्ति के रूप में उदय को रोकने हेतु निरन्तर प्रयासरत हैं।

एशिया में भारत की शक्ति को संतुलित करने एवं अपना वर्चस्व बढ़ाने हेतु चीन इजरायल के साथ निकट संबंध स्थापित कर रहा है। वास्तव में चीन अपने वैश्विक वर्चस्व को इजरायल की तकनीकी क्षमता, सामरिक सामर्थ्य एवं क्षेत्रीय महत्तव के साथ एकीकृत करने का प्रयास कर रहा है। चीन के साथ इजरायल का संबंध और कारोबार अच्छा है। चीन के साथ इजरायल का कारोबार जहां 13 अरब डॉलर का है वही भारत के साथ 5 अरब डॉलर का।[18] इजरायल भी चीन के साथ अपने संबंधों में वृद्धि कर एशिया में अपनी साख बढ़ाना चाहता है। साथ ही इस बात से भी भली भांति वाकिफ है कि चीन के साथ मधुर संबंध स्थापित कर संयुक्त राष्ट्र संघ में फिलिस्तीन मुद्दे पर इजरायल चीन का समर्थन प्राप्त कर सकता हैं।

वर्तमान में इजरायल चीन को उन्नत सैन्य सामग्री एवं प्रौद्योगिकी प्रदान कर रहा है। भारत की सदैव इस बात की चिन्ता रहती है कि इजरायल द्वारा चीन को दिये जाने वाली उन्नत सैन्य प्रौद्योगिकी पाकिस्तान के कट्टरपंथी गुटों के हाथ न लग जाए।

चीन का बढ़ता हुआ वर्चस्व अमेरिका के वैश्विक प्रभुत्व के लिए भी गम्भीर चुनौती उपस्थित कर रहा है। अत: चीन इजरायल संबंधों पर अमेरिका की नजर सदैव बनी रहती है किन्तु फिर भी भारत को चीन-इजरायल के निकट रक्षा सहयोग के बारे में सचेत रहने की आवश्यकता है। अत: चीन इजरायल के निकट संबंध भारत-इजरायल संबंधों में बाधा उपस्थित करते है।

संयुक्त राज्य अमेरिका की भूमिका – 1990 में सोवियत संघ के विघटन के पश्चात् भारत को अपने रक्षा उद्योग के आधुनिकीकरण के लिए पश्चिमी देशों के सहयोग की आवश्यकता थी क्योंकि भारत के प्रमुख रक्षा सहयोगी सोवियत संघ में अब इतनी क्षमता नहीं थी कि वह भारत को आधुनिकतम प्रौद्योगिकी युक्त रक्षा सामग्री उपलब्ध करा सके। परिणामस्वरूप 1992 के पश्चात् भारत के रक्षा व्यापार में इजरायल अमेरिका व यूरोपीय संघ जैसे पश्चिमी देशों का आगमन हुआ। जिसके कारण इजरायल के समक्ष प्रतिस्पर्धात्मक चुनौती उत्पन्न हो गई। चूंकि अमेरिका को इजरायल के रक्षा संबंधों के निर्धारण का अधिकार प्राप्त है। अत: भारत-इजरायल के रक्षा संबंध इस बात से भी निर्धारित होते है कि अमेरिका इन संबंधों को किस दिशा में अग्रसर करना चाहता है।

यद्यपि अमेरिका ने सामान्यत: हाल के वर्षो में इजरायल से भारत को उच्च प्रौद्योगिकी वाले सैन्य निर्यातों के लिए अनुमोदन प्रदान किया है तथापि यह अमेरिकी प्रौद्योगिकी अथवा वित्तीय इनपुट वाली प्रणालियां देने के पक्ष में नहीं हैं। अमेरिका ने इजरायल के एयरो एंटी मिसाइल प्रणाली को भारत को निर्यात करने पर असहमति व्यक्त की है जिसके चलते इस मामले पर भारत इजरायल वार्ताएँ लंबित पड़ी है।[19]

तथापि इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि भारत-इजरायल के निकट रक्षा संबंध अमेरिका की इच्छा से ही परिपक्व हुए है किन्तु इसे अमेरिका का कूटनीतिक चातुर्य ही कहा जा सकता हैं। क्योंकि भारत-इजरालय के संबंध बढ़ाकर एवं भारत-अमेरिका-इजरायल धुरी बनाकर अमेरिका चीन की शक्ति को संतुलित करना चाहता है जो भविष्य में अमेरिका की वैश्विक शक्ति के लिए चुनौती उपस्थित कर सकता है।

भारत इजरायल द्विपक्षीय संबंधों का मुख्य आधार रक्षा संबंध है एवं एक बार अमेरिका के बाजार भारत के लिए खुल जाने पर इजरायली रक्षा उत्पाद भारत के लिए तुलनात्मक रूप से अपना आकर्षण खो सकते है।

प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के संबंध में मतभेद – भारत और इजरायल के मध्य तकनीकहस्तांतरण एवं प्रस्तावित मुक्त व्यापार समझौते से संबंधित मुद्दों पर मौलिक भिन्नताएँ है। भारत इजरायल के मध्य द्विपक्षीय निवेश संधियों में मौजूद भिन्नताएँ भी दोनों देशों के द्विपक्षीय व्यापार के अधिकतम विकास में बाधाएँ उपस्थित करती है। द्विपक्षीय निवेश संधि के भारतीय

मॉडल में विदेशी निवेशक के अन्तर्राष्ट्रीय मध्यस्थता से दावा प्राप्त करने के अधिकार पर अनेक प्रक्रियात्मक प्रतिबंध आरोपित किये गये है जबकि इजरायल के मॉडल में विदेशी निवेशक को अन्तर्राष्ट्रीय मध्यस्थता से दावा प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है। अत: दोनों देशों के द्विपक्षीय निवेश संधि मॉडल की मौलिक भिन्नताएँ इनके द्विपक्षीय व्यापार में अनेक चुनौतिया उपस्थित करती है।

इस प्रकार भारत–इजरायल संबंधों में अनेक बाधाएँ इस सदी में उपस्थित है। आवश्यकता इस बात की है कि भारत व इजरायल राजनीतिक परिपक्वता का परिचय देते हुए एक दूसरे के साथ अपने संबंधों को आगे बढ़ाएँ एवं विश्व के अन्य देशों के साथ अपनी साझेदारियों को अपने संबंधों में बाधा उपस्थित न करने दे।

साथ ही भारत को अपने ऊर्जा आवश्यकताओं की पूर्ति के स्त्रोतों का विविधीकरण करना होगा जिससे भारत की अरब देशों एवं ईरान पर निर्भरता कम हो सके। इजरायल एवं चीन के व्यापारिक संबंध भारत–इजरायल के व्यापारिक संबंधों की तुलना में अधिक तीव्र गति से विकसित हो रहे है। अत: भारत को इजरायल के साथ अपने व्यापारिक संबंधों को प्राथमिकता देनी होगी। साथ ही इजरायल को भी भारत की चीन संबंधी चिंताओं को दूर करने का आश्वासन देना चाहिए।

निष्कर्ष – इस प्रकार 21वीं सदी में एशिया की दो प्रमुख शक्तियाँ भारत व इजरायल के द्विपक्षीय संबंधों का तेजी से विकास हो रहा है। दोनों देश कृषि व जल प्रबंधन, रक्षा, व्यापार व वाणिज्यआदि क्षेत्रों में अपने द्विपक्षीय संबंधों को नया आयाम प्रदान कर रहे है किन्तु दोनों देशों को सजगता के साथ अपने संबंधों को आगे बढ़ाना होगा। क्योंकि दोनों देशों के संबंधों में अनेक बाधाएँ उपस्थित है। यद्यपि अरब जगत अब भारत–इजरायल संबंधों में गतिरोध उत्पन्न करने वाला प्रभावी कारक नहीं रह जाता। भारत को फिलिस्तीन मुद्दे पर भी संतुलित दृष्टिकोण अपनाना होगा क्योंकि जब अरब देश ही फिलिस्तीन के मसले को छोड़कर इजरायल के साथ राजनयिक संबंधों की स्थापना पर बल दे रहे है, तो भारत के लिए अपने राष्ट्रीय हितो का बलिदान देकर नैतिक सिद्धान्तों के आधार पर फिलिस्तीन का समर्थन व इजरायल का विरोध करने का कोई औचित्य शेष नहीं रहा जाता। अत: भारत को इजरायल–फिलिस्तीन के मध्य संघर्ष समाधान हेतु सकारात्मक भूमिका निभानी होगी। जिससे इजरायल के साथ भारत के संबंधों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े एवं फिलिस्तीनियों के अधिकारों की भी रक्षा हो सके। साथ ही भारत को ईरान के साथ अपने संबंधों को लेकर इजरायल की शंकाओं का निराकरण करना होगा वही इजरायल को भी चीन के साथ अपने संबंधों को लेकर भारत की चिंताओं का समाधान करने का प्रयास करना चाहिए। भारत को इजरायल के साथ अपने व्यापारिक संबंधों को बढ़ाने का वरीयता देनी होगी जिससे भारत चीन–इजरायल के बढ़ते संबंधों को संतुलित कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ए.यू. आसिफ– भारत– इजरायल संबंध की जड में कौन, चौथी दुनिया, दिसम्बर 30, 2014,पृ.स. 4–5
2. https://mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/Israel_13_01_2016_hindi.pdf
3. राहुल लाल, भारत–इजरायल के गहराते संबंधों का अच्छा प्रभाव होगा, प्रभा साक्षी, नवम्बर 17, 2016
4. आखिर क्यों है इजरायल भारत के लिए महत्त्वपूर्ण, आइए समझे, एनडीटीवी इण्डिया, जुलाई 5, 2017, पृ.स. 2
5. भारत–इजरायल के बीच सम्बंध, अक्टूबर 14, 2018, पृ.स. 3
6. https://mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/Israel _13_01_2016_hindi.pdf
7. अंकुर, क्या है इजरायल–फिलिस्तीन विवाद, क्यों गाजापट्टी येरूशलम रहते है चर्चा में वन इंडिया जुलाई 4, 2017, पृ.स. 3
8. अंकुर, क्या है इजरायल–फिलिस्तीन विवाद क्यों गाजापट्टी येरूशलम रहते है चर्चा में वन इंडिया जुलाई 4, 2017, पृ.स. 4
9. अंकुर, क्या है इजरायल–फिलिस्तीन विवाद क्यों गाजापट्टी येरूशलम रहते है चर्चा में वन इंडिया जुलाई 4, 2017, पृ.स. 5
10. डॉ. अनूप कुमार गुप्ता, भारत की इजरायल नीति का बदलता स्वरूप, विश्व मामलों की भारतीय परिषद्, नई दिल्ली 2015, पृ.स. 20
11. एम. गणपति, भारत की विदेश नीति में थिंक वेस्ट, विदेश मंत्रालय, भारत सरकार, अप्रेल 11, 2016, पृ.स. 8
12. हर्ष वर्धन पंत, भारतीय सुरक्षा एवं विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन दिल्ली 2018, पृ.स. 184
13. एम. गणपति, भारत की विदेश नीति में थिंक वेस्ट, विदेश मंत्रालय, भारत सरकार, अप्रेल 11, 2016, पृ.स. 7
14. इजरायल–ईरान की लड़ाई के इतिहास से जुड़े तीन बड़े सवाल, अमर उजाला हिन्दी, मई 12,2018, पृ.स. 2
15. डॉ. आदित्य कुमार सिंह, भारत इजरायल संबंध, अध्ययन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2019, पृ.स. 79
16. दैनिक भास्कर, जुलाई 4 2020,पृ.स. 7
17. दृष्टि करंट अफेयर्सटुडे, सितम्बर 2017, पृ.स. 36
18. दृष्टिकोण मंथन, 16–31 जुलाई 2017, पृ.स. 4
19. हर्ष वर्धन पंत, भारतीय सुरक्षा एवं विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन दिल्ली, 2018, पृ.स. 206

****

बालश्रम : बाल्यवस्था व बाल अधिकारों का हनन

उसमान आतिफ * अजरा बी **

शोध सारांश – इस लेख में बाल मजदूरी या बालश्रम जैसे अभिशाप के बारे में लिखा गया है, बाल मजदूरी हमारे देश का एक ऐसा कड़वा सच है जो भारत में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी बाल मजदूरी एक बड़ा मुद्दा है, जिसके बारे में प्रतिएक व्यक्ति को जागरूक होना अति आव्यश्यक है। बालश्रम को समाप्त करने के किए हमें अपनी नैतिक जिम्मेदारी को समझना होगा। इस लेख के माध्यम से बालश्रम से छुटकारा पाने के लिए जागरूक करने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तावना – बचपन क्या है? बचपन मनुष्य के जीवन की 2–6 वर्ष की अवस्था को कहते हैं। बचपन जिंदगी का सबसे अच्छा सफर होता है, क्योंकि बचपन में न तो कोई फिक्र होती है, और न ही कोई भय होता है बस हर समय बिना सोचे समझे शरारत करते रहने का नाम ही बचपन है, लेकिन दुर्भाग्यवश कुछ बच्चों को बचपन में ही गरीबी लाचारी का सामना करना पड़ता है। आज के समय में बालश्रम बच्चों के बचपन और खुशियों के बीच एक अभिशाप बन गया है।

अब हमें यह जानना जरूरी होगा कि बालश्रम क्या है? बालश्रम को हम इस प्रकार समझ सकते हैं, जिसमें कार्य करने वाला वयक्ति अपनी आयु सीमा से छोटा होता है, यह आयु कानून द्वारा निर्धारित कि गई आयु सीमा से कम होती है। बालश्रम बालक के विकास पर बहुत ही नकारात्मक प्रभाव डालता है, तथा बालक की इच्छाओं का दमन करने वाला होता है।

कॉल व ब्रोस के अनुसार –'कॉल व ब्रोस ने इस अवस्था को जीवन का अनोखा काल कहा है, क्योकि इस अवस्था में बालक के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक ओर संवेगात्मक आदि सभी पक्षों में अनेक अनोखे परिवर्तन होते हैं, उसका वातावरण काफी व्यापक हो जाता है।'

बालश्रम के प्रकार : पूरे विश्व में बालश्रम के कई प्रकार देखने को मिलते हैं जैसे–

1. बंधुआ मजदूर
2. गली मोहल्ले के बच्चे
3. यौन शोषण में इस्तेमाल होने वाले बच्चे
4. व्यक्तिगत लाभ के लिए प्रयोग किए जाने वाले बच्चे
5. समाज द्वारा तिरस्कृत बच्चे आदि

बालश्रम के कारण–

1. गरीबी के कारण
2. जनसंख्या वृद्धि के कारण
3. नशे के लत के कारण
4. माता–पिता का अशिक्षित होना
5. सामाजिक आर्थिक पिछड़ापन
6. सस्ते मजदूरों को प्राप्त करने की चाहत
7. पारिवारिक रीति रिवाज
8. शैक्षिक संस्थानो की कमी
9. निजी स्वार्थ के लिए

बालश्रम के दुष्प्रणाम – यह तो स्पष्ट है कि बालश्रम बच्चों के लिए बहुत ही हानिकारक है, इसके कई दुष्प्रणाम स्पष्ट रूप से देखने को मिलते हैं जैसे –

1. बालश्रम का सबसे ज्यादा असर बच्चों के विकास पर होता है, बाल मजदूरी से बच्चों का शारीरिक एवं मानसिक विकास अवरुद्ध हो जाता है जिस उम्र में बच्चों को खेल कूद कर, शिक्षा लेकर अपना विकास करना चाहिए उस उम्र में उन्हें मजदूरी करना पड़ती है।
2. बाल मजदूरों का उनके मालिकों द्वारा ज्यादा शोषण किया जाता है, बाल मजदूर कम मजदूरी लेकर ज्यादा काम करने के लिए राजी हो जाते हैं, एवं उनसे मनचाहा काम करवा लिया जाता है।
3. बालश्रम के कारण ऐसे बच्चों कि शिक्षा बहुत प्रभावित हो जाती है।
4. बालश्रम में कुछ कार्य ऐसे हैं जिन से बालकों के जीवन पर भी खतरा उत्पन्न हो जाता है।
5. बालश्रम से राष्ट्र की कुल उत्पादकता पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है।
6. बालश्रम से समाज के विभाजन की प्रक्रिया एवं लैंगिक विभेदीकरण को बढ़ावा मिलता है।
7. बालश्रम से समाज विरोधी गिरोह बालकों का कई प्रकार से शोषण करते हैं।

भारत में बाल अधिकार – भारत का सदैव ही यह प्रयास रहा है कि सभी बच्चों को समान अधिकार ओर विकास की राह मिले क्योंकि सभी बच्चों को हर प्रकार के खतरे व जोखिम के हालात से बचने का अधिकार है। भारत में 20 नवम्बर को बाल अधिकार दिवस मनाया जाता है।

बालकों के लिए भारतीय संविधान में विशेष अधिकार सुनिश्चित किए गए हैं :

1. अनुच्छेद 21–क : 6–14 साल की आयु वाले सभी बच्चों की अनिवार्य और नि:शुल्क शिक्षा।
2. अनुच्छेद 24 : 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को जोखिम वाले कार्य करने से सुरक्षा।
3. अनुच्छेद 39–घ : आर्थिक आवश्यकताओं के कारण जबरन ऐसे कामों में भेजना जो आयु या समता के उपयुक्त नहीं हैं, सुरक्षा से।
4. अनुच्छेद 39–च : बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय माहौल में स्वस्थ

*प्रवक्ता (डी.एल.एड) हिन्दी, अल–बरकात इन्सटीटयूट ऑफ एजूकेशन, अलीगढ (उ.प्र.) भारत
** प्रवक्ता (डी,एल.एड) शैक्षिक मूल्याकंन, क्रियात्मक शोध एंव नवाचार, अल–बरकात इन्सटीटयूट ऑफ एजूकेशन, अलीगढ (उ.प्र.) भारत

विकास के अवसर और सुविधाएं मुहैया करना और शोषण से बचाना।

भारत में बालश्रम के खिलाफ राष्ट्रीय कानून – बालश्रम को रोकने के लिए भारत सरकार ने विभिन्न धाराओं के अंतर्गत कई कानून बनाए हैं जैसे–

1. 14 साल से कम उम्र का कोई भी बच्चा किसी फैक्ट्री या खदान में काम करने के लिए नियुक्त नहीं किया जाएगा और न ही किसी अन्य खतरनाक नियोजन में नियुक्त किया जाएगा (धारा 24)।
2. राज्य अपनी नीतियां इस तरह निर्धारित करेंगे की श्रमिकों, पुरुषों और महिलाओं का स्वास्थ्य तथा उनकी क्षमता सुरक्षित रह सके और बच्चों की कम उम्र का शोषण न हो तथा वे अपनी उम्र व शक्ति के प्रतिकूल कम में आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रवेश करे (धारा 39–ई)।
3. बच्चों को स्वस्थ तरीके से स्वतंत्र व सम्मान जनक स्थिति में विकास के अवसर तथा सुविधाएं दी जाएंगी और बचपन व जवानी को नैतिक व भौतिक दुरुपयोग से बचाया जाएगा (धारा 39–एफ)।
4. संविधान के लागू होने के 10 साल के भीतर राज्य 14 वर्ष तक की उम्र के सभी बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने का प्रयास करेंगे (धारा 45)।

भारत सरकार की नीतियां और कार्यक्रम – 1987 में भारत सरकार ने राष्ट्रीय बालश्रम नीति को स्वीकर्ति दी क्योंकि यह भारत के विकास और रणनीतियों का एक अंग था इस नीति का संकल्प यह था– बच्चों के लाभ के लिए हर संभव विकास कार्यक्रमों पर ध्यान केन्द्रित करना और योजनाएँ बनाना। राष्ट्रीय बालश्रम नीति को बालश्रम कानून 1986 के लागू होने के बाद स्वीकृत किया गया।

श्रम एवम नियोजन मंत्रालय श्रमिकों के पुनर्वास के लिए 1988 से ही राष्ट्रीय बालश्रम परियोजनाओं के माध्यम से ही राष्ट्रीय बालश्रम नीति को कार्यान्वित कर रहा है। राष्ट्रीय बालश्रम नीति की रणनीति में अनौपचारिक शिक्षा तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण देने के लिए विशेष विद्यालय स्थापित करने के अतिरिक्त आमदनी और रोजगार पैदा करने के अवसर, लोगों में जागरूकता पैदा करने और बालश्रम के बारे में सर्वेक्षण तथा मूल्यांकन करने का काम शामिल है। कई वर्षो तक राष्ट्रीय बालश्रम नीतियों को चालू रखने से सरकार को मिले अनुभवों का परिणाम यह हुआ है, कि 9वीं पंचवर्षीय योजना, (1997–2002) में परियोजनाओं को जारी रखते हुए स्तरीकरण किया गया। काँच, चूडी, पीतल, ताला, कालीन, स्लेट, टाइल, माचिस, आतिशबाजी और रत्न उद्योग जैसे खतरनाक उद्योग में कम करने वाले बच्चों के पुर्नवास के लिए पूरे देश में करीब एक सौ राष्ट्रीय बालश्रम योजनाएँ शुरू की गयीं।

सरकार द्वारा की गई पहल :

1. सरकार बालश्रम को पूरी तरह से समाप्त करने के लिए बहुस्तरीय रणनीति का पालन कर रही है।
2. सरकार ने बालश्रम अधिनियम,1986 में संशोधन किया है, और बालश्रम अधिनियम, 2016 को अधिनियमित किया है।
3. सरकार ने बालश्रम (निषेध और विनिमय) संशोधन नियम, 2017 भी तैयार किया है।
4. सरकार द्वारा सन 2017 में पेंसिल पोर्टल बनाया गया है, जो बालश्रम को खत्म करने के लिए प्रभावी प्रवर्तन मंच है, जिस पर काफी शिकायतें दर्ज की गई हैं।
5. राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग की स्थापना अभी तक का एक बड़ा कदम था। यह महिला और बाल विकास मंत्रालय की देख–रेख में काम करता है।

राष्ट्रीय बालश्रम योजनाओं के लाभ :

1. 2018–19 के दौरान राष्ट्रीय बालश्रम परियोजना स्कीम के तहत 66,169 बालश्रमिकों को बचाया गया, पुर्नवासित किया गया और मुख्य धारा में लाया गया।
2. पिछले तीन वर्षो के दौरान कुल 1,44,783 बालश्रमिकों को बचाया गया और उनका पुर्नवास किया गया।
3. बचपन सूचांक ग्लोबल चाइल्डहुड रिपोर्ट 2019 के तीसरे छोर के अनुसार,176 देशों में भारत 1000 में से 769 स्कोर के साथ 113वें स्थान पर है।
4. 28 मई 2019 को 'सेव द चिलड्रन' द्वारा जारी किया गया सूचांक यूनाइटेड किंगडम (13 ज्ञ) आधारित गैर–लाभकारी संगठन हैं, जो बाल अधिकारों के लिए काम करता है।
5. विभिन्न देशों ने बाल मृत्यु दर, कुपोषण, शिक्षा की कमी, बालश्रम, जल्दी शादी, किशोर जन्म मतभेद द्वारा विस्थापन और बाल हत्या जैसे 8 मापदण्डों को तय किया है।

बालश्रम के संदर्भ में आगे की राह :

1. बालश्रम को रोकने के लिए बच्चों की शिक्षण के प्रति ध्यान देने के लिए माता पिता को जागरूक किए जाए।
2. सरकार द्वारा चलाई गई योजनाओं के क्रियान्वयन में कहाँ कमी रह गई है, यह जानने का प्रयास किया जाए।
3. जनसंख्या शिक्षा को प्रभावशाली बनाया जाए जिससे जनसंख्या पर नियंत्रण किया जा सके ताकि बालश्रम को रोकने में जनसंख्या शिक्षा अपनी अहम भूमिका अदा कर सके।
4. भारत में चलते फिरते स्कूलों में वृद्धि की जाए ताकि गरीब और बेसहारा बच्चे शिक्षा प्राप्त कर सकें और बालश्रम से छुटकारा मिल सके।
5. बालश्रम को रोकने के लिए समाज को अपनी नैतिक जिम्मेदारी समझनी होगी। कम पैसों के लालच में हमें अपने घरों, कारखानों और दुकानों आदि पर छोटे बच्चों को काम पर नहीं लगाना चाहिए।
6. यौन शोषण से संबन्धित काम करने वाले लोगों के लिए कठोर कानून बनाना चाहिए और इनका पालन भी कठोरता से तथा शीघ्रता से करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Gangrade,K.D. 1998. Child labour in India Department of social work. Delhi: Delahi University
2. Government of India 1929. Report of the Royal commission on labour culcutta central Publication Branch.
3. Government of India. 1954. Child Labour in india Shimla Labour Bureau.New Delhi ministry of Labour.
4. Benjamin J 1990. Child Labour : The Quest for Socio-Economic Inquiry. Third Concept, December ,pp. 33-36
5. Chakaraborty S 2006. Child Labour in Rural Context : concern, Causes and Cure. New Delhi : Mital Publications.
6. Hazarika P 2004. Child Labour in India. New Delhi : Akansha Publishing House.
7. Goyal, R.K. 1987. " Child Labour in India." Indian Labour Journal.28(2):355-373
8. ILO, 1997, Child Labour "Targeting the Intolerable. Geneva : International Labour Organization

Zn (micronutrient) Status of the Soil of Hoshangabad (Madhya Pradesh)

Priyanka Rai* Dr. S.K. Udaipure**

Abstract - Zn is considered as 4th important yield limiting nutrient in India, after N,P,K from the regular soil analysis data. Indian soils are found to be deficient in Zn and the Zn deficiency is likely to increase in future. Areas with low soil available Zn are often regions with widespread Zn deficiency in humans. Zn malnutrition and deficiency is alarming and is gaining attention in recent years. Application of Zn to soil and crops is one of the simple and easiest way to mitigate or alleviate Zn deficiency human. Soil Zn status of hoshangabad various factors that responsible for Zn deficiency in the soil of hoshangabad.
Keywords - Hoshangabad, Zinc, deficiency.

Introduction - Zn is the one of the essential micronutrient for plant growth and development. Through it is required in small quantity, it is crucial for plant development. In plants Zn is a key constituents of many enzymes and protein and plays a major role in wide range of processes such as growth, enzymatic reactions, metabolic processes, oxidation reduction reactions, hormones production and internode elongation.

Zn is known to exist in soil in three forms viz. water soluble, replaceable and non replaceable. Soils very widely in their Zn supplying capacity, regardless of the amount of Zn present in non replaceable. Factor that affect their capacity, include organic matter, type of clay, replaceable bases, carbonates, phosphates, soil micro-organism and soil reaction (Joshi 1956, Raheja and Yawalkar 1959). With increased use of chemical, fertilizers and introduction of high yielding varieties for increased production, interest has increased in the use of micronutrient elements as their removal increases with the high crop yields optained.

Material and Methods :

Organic Carbon - Toanalyse the soil sample, we have air dried each soil sample in a room temperature. Then we have crushed each sample through mortor to get the fine soil. At first we have take 1 gm of soil in a flask then added 10ml of 1N $K_2Cr_2O_7$ in the flask, also added 5ml of H_3PO_4 to make a solution. Now add 10ml of H_2SO_4 for oxidise the soil carbon. Then we wait until before all carbon get oxidized with the $K_2Cr_2O_7$. It will take 30 min to cool down the solution after adding the sulfuric acid. Now we have taken 10ml of solution to titrate with the ferrous ammonium sulfate to measure excess chromate. To calculate the carbon content, we have subtracted the excess chromate from the original chromate to get the consumed chromate during the analysis period. The consumed chromate represent the amount of carbon in the soil. To get the total % of carbon content we have divided the carbon content with the taken soil and multiply it with 100.

Soil pH - panama PX-136 digital soil pH meter with accessories including pH buffer solution, pH electrode was used for soil pH value of sampling sites. The electrode is directly pushed into the soil to the desired depth and the pH is recorded. The digital soil pH meter has the features- pH range, Resolution, Temperature compensation, sampling time, calibration, zero potential for pH value, power supply.

calcium and magnesium are extracted from the soil by mixing 10ml of 1N ammonium acetate, pH7 with a 1 gm scoop of air dried soil, and shaking for 5minutes. The filtered extract is analysed with an inductively coupled plasma atomic emission spectrometer for calcium and magnesium. Zn was determine by directly feeding tried digest in atomic absorption spectrophotometer.

Observation - Study fields are Hoshangabad, SeoniMalwa, Pipariya and Sohagpur. We collect the sample from field:

1. Hoshangabad

Soil sample	pH	Calcium carbon ate (%)	Organic carbon (%)	Available Zn (mg/kg)
1	6.43	2.11	0.85	2.21
2	6.18	2.27	1.05	2.30
3	7.51	1.53	0.76	2.01
4	7.32	1.86	0.92	2.08
5	7.51	1.48	0.82	2.00
6	7.30	1.90	1.02	2.08
7	6.86	2.04	0.96	2.11
8	7.37	1.71	0.94	2.06
9	7.45	1.71	0.75	2.02
10	7.67	1.38	0.68	1.90

*Department of Chemistry, Govt. Narmada Mahavidhyalaya, Hoshangabad (M.P.) INDIA
** Department of Chemistry, Govt. Narmada Mahavidhyalaya, Hoshangabad (M.P.) INDIA

2. Seoni Malwa

Soil sample	pH	Calcium carbon ate (%)	Organic carbon (%)	Available Zn (mg/kg)
1	7.34	1.84	0.94	1.70
2	6.40	2.37	1.19	2.00
3	6.38	2.06	0.89	2.05
4	7.54	1.43	0.85	1.68
5	6.31	1.54	1.46	2.12
6	7.28	1.88	1.00	1.48
7	7.15	1.23	0.56	1.73
8	7.73	2.08	0.80	1.48
9	7.02	1.28	0.64	1.96
10	7.76	1.47	0.77	1.43

3. Pipariya

Soil sample	pH	Calcium carbon ate (%)	Organic carbon (%)	Available Zn (mg/kg)
1	7.48	1.56	0.78	2.03
2	6.15	2.24	1.08	2.32
3	6.40	2.08	0.88	2.24
4	7.28	1.92	1.04	2.08
5	7.30	1.88	0.94	2.13
6	7.36	1.71	0.94	2.06
7	7.65	1.39	0.69	1.95
8	7.43	1.73	0.77	2.03
9	7.46	1.52	0.82	2.03
10	6.84	2.06	0.98	2.13

5. Sohagpur

Soil sample	pH	Calcium carbon ate (%)	Organic carbon (%)	Available Zn (mg/kg)
1	6.43	2.34	1.16	1.90
2	6.33	1.52	1.43	2.10
3	7.32	1.86	0.96	1.86
4	7.74	2.08	0.80	1.48
5	6.33	2.09	0.92	2.07
6	7.52	1.45	0.86	1.69
7	7.02	1.30	0.60	1.93
8	7.25	1.90	1.01	1.50
9	7.12	1.25	0.56	1.75
10	7.76	1.46	0.88	1.53

Result and Discussion - Data in table1 indicate that the available of Zn was found to be lowest in sample 10 with 1.90 mg/kg where as sample 2 gave 2.30. in table 2 available of Zn was found to be lowest sample10 with 1.43mg/kg where as sample 5 gave highest 2.12 mg/kg.but availability of Zn in table 3 (lowest in sample7 with 1.95mg/kg and highest in sample2 with 2.32) and table 4(lowest in sample4 with 1.48mg/kg and highest in sample2 with 2.10mg/kg). availability of Zn generally decreases with increasing pH but in several cases no significant relationship is observed. Since the soils had a narrow range of pH(peech,1941 and camp,1945), (wear and sommer,1948). Table indicate a possibility of some inter relationship between availability of Zn and calcium carbonate content of the soils. Woltz et al (1953) found that application of ground lime stone resulted in greater fixation of Zn. Olofsson reported increased availability with higher calcium carbonate content but some time did not observe any relationship. There is positive corelation indicating the availability of Zn to increasing amount of organic matter.

References:-

1. Camp,A.F.(1945) *Soil Sci*. 60, 157
2. Joshi, S.G.(1956). *Journal of soc. sci. vol* 4,147.
3. Lindsay, W.L., Norvell, W.A. (1978). Development of a DTPA Soil Test for Zinc, Iron, Manganese, and Copper. *Soil Science Society of America Journal.* Vol. 42, 421-428.
4. Peech, M.(1941) *Soil Sci*. vol. 51, 475.
5. Raheja, P.C. & Yawalkar, K.S.(1947). *Soil Sci. vol.* 51, 475.
6. Sadaphal, M.N. & Das, N.B.(1961). *J. Indian soc.soil sci.*vol. 9, 97 & 258.
7. Woltz et al. (1953). *Soil Sci*. 76, 115.
8. Vietset al.(1953) Argon. J. vol. 45, 559.

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

Need of Right To Education Act In India : A Study

Geetaben Ramjibhai Makwana*

Abstract - This paper examines the status of Right to Education Act in India. The Right to Education Act, a fundamental right provides for free and compulsory education for every child between the age group of 6-14 years. While the Act has made the State responsible for educating each and every child, it has restricted the agencies that can provide education. Section 19 of the Act states "Where a school established before the commencement of this Act does not fulfill the norms and standards specified in the RTE schedule, it shall take steps to fulfill such norms and standards specified in the schedule at its own expenses within a period of 3 years from the commencement of the Act". According to this, both the recognized and unrecognized schools will have to meet the new norms for recognition under the RTE Act. The unrecognized schools would additionally have to meet the present State norms for recognition.
Key words - RTE Act, Right to Education Act ,Free Education.

Introduction - In 2002, through the 86th Amendment Act, Article 21(A) was incorporated. It made the right to primary education part of the right to freedom, stating that the State would provide free and compulsory education to children from six to fourteen years of age.1 Six years after an amendment was made in the Indian Constitution, the union cabinet cleared the Right to Education Bill in 2008.2 The Right of Children to Free and Compulsory Education Act or Right to Education Act (RTE), which was passed by the Indian parliament on 4 August 2009, describes the modalities of the provision of free and compulsory education for children between 6 and 14 in India under Article 21A of the Indian Constitution. India became one of 135 countries to make education a fundamental right of every child when the act came into force on 1 April 2010. The bill was approved by the cabinet on 2 July 2009. Rajya Sabha passed the bill on 20 July 2009 and the Lok Sabha on 4 August 2009. It received Presidential assent and was notified as law on 3 Sept 2009 as The Children's Right to Free and Compulsory Education Act. The law came into effect in the whole of India except the state of Jammu and Kashmir from 1 April 2010, the first time in the history of India a law was brought into force by a speech by the Prime Minister. In his speech, Manmohan Singh, Prime Minister of India stated that, "We are committed to ensuring that all children, irrespective of gender and social category, have access to education. An education that enables them to acquire the skills, knowledge, values and attitudes necessary to become responsible and active citizens of India." People are not aware even about their fundamental rights. Youth is the future of the Nation and their empowerment through RTE. In ancient times youth was not compelled to study but at present times he has to study to deal with the present world as illiterate person may be deceived or may not know his right and duties towards society and family.

What Is Right to Education Act - The Act is completely titled **"The Right of Children to Free and Compulsory Education Act"**. It was passed by the Parliament in August 2009. When the Act came into force in 2010, India became one among 135 countries where education is a fundamental right of every child.

1. The 86th Constitutional Amendment (2002) inserted Article 21A in the Indian Constitution which states:

a. "The State shall provide **free and compulsory education to all children of 6 to 14** years in such manner as the State, may by law determine."

2. As per this, the right to education was made a fundamental right and removed from the list of Directive Principles of State Policy.
3. The RTE is the consequential legislation envisaged under the 86th Amendment.
4. The article incorporates the word "free" in its title. What it means is that no child (other than those admitted by his/her parents in a school not supported by the government) is liable to pay any kind of fee or charges or expenses which may prevent him or her from pursuing and completing elementary education.
5. This Act makes it obligatory on the part of the government to ensure admission, attendance and completion of elementary education by all children falling in the age bracket six to fourteen years.
6. Essentially, this Act ensures free elementary education to all children in the economically weaker sections of society.

Objectives of The Study - The present study was undertaken to achieve the following objectives

1. To study the historical development of Right to

*Assistant Professor, Anand College of Legal Studies, SRKSM Campus, Near Grid, Anand (Gujarat) INDIA

Education in India.
2. To critically analyze the provisions under the Right of Children to free and Compulsory Education Act 2009.
3. To suggest the effective ways of implementing the provisions under the Act.

Research Methodology - It is a documentary study. It is based on official documents. The conclusion made in the study was based on Primary and Secondary sources. The Secondary sources were different books and Journal published by different writers and scholars. The Primary sources are Government Report and Books.

Historical Perspective Of Rte-2009 Act. - Article 21A of the Constitution (Eighty - Sixth Amendment) Act, 2002.

1. **December 2002 -** 86th Amendment Act (2002) via Article 21A (Part III) seeks to make free and compulsory education a Fundamental Right for all children in the age group 6-14 years.
2. **October 2003 -** October 2003 A first draft of the legislation envisaged in the above Article, viz., Free and Compulsory Education for Children Bill, 2003, was prepared and posted on this website in October, 2003, inviting comments and suggestions from the public at large.
3. **2004 -** Subsequently, taking into account the suggestions received on this draft, a revised draft of the Bill entitled Free and Compulsory Education Bill, 2004
4. **June 2005 -** The CABE (Central Advisory Board of Education) committee drafted the 'Right to Education' Bill and submitted to the Ministry of HRD. MHRD sent it to NAC where Mrs. Sonia Gandhi is the Chairperson. NAC sent the Bill to PM for his observation.
5. **14th July 2006 -** The finance committee and planning commission rejected the Bill citing the lack of funds and a Model bill was sent to states for making the necessary arrangements. (Post-86th amendment, States had already cited lack of funds at State level)
6. **2009 Right of Children to Free and Compulsory Education Bill, 2008**, passed in both Houses of Parliament in 2009. The law received President's assent in August 2009.
7. **1 April 2010 -** Articles 21-A, the RTE Act come into effect.

Salient Features Of The Rte Act, 2009 - The RTE Act, 2009 provides for: It is compulsory and free!

1. **Compulsory –** It is obligatory for the Government to provide free and compulsory elementary education, up to Class 8th, to each and every child in India in a neighborhood school within 1 km.
2. **Free–** It means that no child shall be liable to pay any kind of fee or charges or expenses which may prevent him or her from pursuing and completing elementary education. The free education includes the provision of textbooks, uniforms, writing materials, special materials for children with disabilities, in order to reduce the burden of school expenses.
3. **Minimum standards are set- RTE** Act lays down norms and standards relating to Pupil Teacher-Ratios (number of children per teacher), classrooms, separate toilets for girls and boys, drinking water facility, number of school-working days, working hours of teachers, etc. Each and every elementary school (Primary school + Middle School) in India has to comply with these minimum standard set by the RTE Act.
4. **Admission for all**- RTE Act mandates that an out of school child is admitted to an age appropriate class and provided with special training to enable the child to come up to age appropriate learning level.
5. **Quantity and Quality of Teachers**- RTE Act provides for rational deployment of teachers by ensuring that the specified Pupil-Teacher-Ratio is maintained for each school and there is no urban-rural imbalance.
6. The Act mandates appointment of appropriately trained teachers, i.e. teachers with the requisite entry and academic qualifications.
7. **No discrimination and No harassment**- RTE Act prohibits physical punishment and mental harassment; discrimination based on gender, caste, class and religion; screening procedures for admission of children; capitation fee; private tuition by teachers and running of schools without recognition.
8. **All-round development- RTE** Act provides for development of curriculum, which would ensure the all-round development of every child. Build a child's knowledge, human potential and talent.
9. **No detention- RTE** Act mandates that no child can be held back or expelled from school until Class 8th. The Act has mandated the Continuous Comprehensive Evaluation (CCE) method to ensure grade appropriate learning outcomes.
10. **By the people, for the children**- School Management Committees (SMCs) play a crucial role in strengthening participatory democracy and governance in elementary education. All schools covered under the Act shall constitute a School Management Committee consisting of head teacher, local elected representative, parents, community members, etc. The committees have been empowered to monitor the functioning of schools and to prepare school development plan.
11. **Justiciable- RTE** Act is justiciable and is backed by a Grievance Redressal (GR) mechanism that gives opportunity to people to take action against non compliance of various provisions of the Act.
12. **Private schools included- RTE** Act mandates all the private schools to reserve 25 percent of the seats for children belonging to socially disadvantaged and economically weaker sections. This provision of the Act is aimed at furthering social inclusion for a better India.

These are some of the salient features of the Act. The brief study of the provisions highlights that the Act is very much inclined towards providing the ample opportunity for the children to complete the elementary education. This is also the basic human right provided to all the children.

Critical Evaluation Of The Act - The Act is criticized on the ground that it has excluded the children of the age- group of 0-06 from its ambit. This is the age of the child when the critical development of the child take place. At this stage if

the child is not provided the ample opportunity to grow and develop then it won't be advantageous to the child. Another problem is that in absence of the proper pre-schooling and keeping it outside the preview of RTE will allow unregulated system of pre-school education. Consequently, large section of the society will be deprived of availing the opportunity under the Act. Secondly, the quality of education is yet another concern. Implementation of Article 21 –A of the Constitution in its true spirit requires that quality education should be made available to the citizens. It is quite evident that the large portion of the curriculum which is taught to the students is alien to the average child. There is a need to adopt more non- formal education which is learner centric and based on activities. Thirdly, there is a mushrooming of private schools now-a-days. They have good infrastructure and are also delivering as per the expectations of the parents. Consequently, most of the parents prefer private schools as compared to the government schools. The problem of quality education basically lies with the government schools, which remains unaddressed even after passing of the RTE Act. Fourthly, the Act provides that there will be sharing of the funds between the central and the state for the effective implementation of the Act. There is a significant shortage of fund for the purpose of implementation. Fifthly, the Act is criticized on the ground that No Detention Rule under the Act will not allow the quality education to be provided to the children.

Suggestions - The Right of Children to free and Compulsory Education Act, 2009 is a landmark development in area of providing the basic human right to the children. The children in absence of ample opportunity become victim of social evils. Child labor is so rampant in the country. If children are engaged in studies at the tender age there will be proper development of their personality. Therefore, it is essential to effectively implement the Act. Following are the suggestions for the effective implementation of the Act-2009,

1. The privatization of education should be regulated. The private schools should strictly instruct to reserve 25 % seats for the weaker and disadvantaged group of students.
2. There is a need to bring more awareness amongst the parents, teachers and students regarding the Act. In absence of information amongst the people the Act cannot be implemented effectively.
3. There must be more allocation of funds to the state governments for implementing the Act. The government schools in absence in sufficient funds are not able to abide by the norms laid down under the Act.
4. There must be proper incentives for the parents and the students who are abiding by their fundamental duty as laid down under Article 51-A of the Constitution.
5. There must be ban on the private tuitions and referrals. Although the RTE Act provides that the teachers should not engage themselves in the private tuitions, there must also be prohibition on teachers referring students for private tuitions.
6. More scholarships must be introduced to encourage the students belonging to the weaker section of the society to pursue their studies.
7. Theremust be proper monitoring agencies to monitor the effective implementation of the Act.
8. The Act also lacks effective auditing. An Auditing mechanism like that of MANREGA is required to monitor the status of implementation of the Act.

Conclusion - For the effective implementation of the RTE Act the courts in India have also shown a very activist approach. The Supreme Court decisions in Mohini Jain Case and Unnikrishnan Case have given the momentum to enforce this Constitutional Right of education for all the children. With the enactment of the RTE Act India has moved forward to a right- based framework that casts a legal obligation on the Centre and the state to implement this fundamental right guaranteed under Article 21-A of the Constitutions. The Act is also aligned to the international norms on the right to education. The Act ensures the education rights which are available, accessible, acceptable and adaptable to all. In order to meet the challenges and surmount the hurdles that come in the way of the implementation of the Act it is needed to concentrate all efforts with full dedication and commitment.

References :-

1. Coomans, F. (2007). Identifying the Key Elements of the Right to Education: A Focus on Its Core Content. Retrieved from http://www.crin.org/docs/Coomans-Core ContentRighttoEducationCRC.pdf
2. Dey, N., & Beck, B. (2011). The Right of Children to Free and Compulsory Education Act 2009: Teachers Perception. Journal of Educational Research (EDUSEARCH). Vol.2, Number-2, 83- 90.
3. Economic and Political Weekly (2012): "The Right to learn: Two Years after the Right to Education Act, the government needs to focus on quality",16 April, Vol. XLVII No 16.
4. Press Information Bureau (2009) The Right of Children to Free and Compulsory Education Act, 2009 notified. Retrieved from http://pib.nic.in/release/release.asp?relid=52370
5. Puar, Surjit Singh (2012). Right To Education Act: A Critical Analysis. International Journal of Educational and Psychological Research (IJEPR) Volume 1, Issue 2, pp: 27-30.
6. Sripati, V. &Thiruvengadam A. K. (2004) India: Constitutional amendment making the right to education a Fundamental Right. International Journal of Constitutional Law, Oxford Journals, 2, 1,148-158 Retrieved from http://icon.oxfordjournals.org/content/2/1/148.abstract.
7. Tilbury, D. (2011), Education for Sustainable Development, An Expert Review of Processes and Learning, UNESCO.
8. Tomasevski, K. (2004), 'Manual on Rights-Based Education', Global Human Rights Requirement made Simple, UNESCO, Bangkok.

हिन्दी पत्रकारिता का दायित्व एवं दशा का विश्लेषात्मक अध्ययन

डॉ. हेमन्त सिंह कंवर *

शोध सारांश – पत्रकारिता भी समाज व राष्ट्र का दर्पण है। यह समाज में घटित अनेक घटनाओं की समीक्षा, समसामयिक समस्याओं का विवेचन करने के साथ-साथ मानव समुदाय की जिज्ञासा को भी शान्त करती है। सत्यान्वेषण, ज्ञानवृद्धि तथा विचारों का उन्नयन पत्रकारिता के परम लक्ष्य है। पत्रकारिता आधुनिक वैज्ञानिक चेतना का सुखद परिणाम है। भारतवर्ष भाषा, साहित्य और सांस्कृतिक चेतना की दृष्टि से विश्व का सबसे प्राचीन राष्ट्र है। पत्रकारिता का संदर्भ भी प्राचीन है। आज की बहुआयामी पत्रकारिता ने स्वयं को इतना समृद्ध कर लिया है कि वह आम आदमी के जीवन का आवश्यक अंग बन गई है। राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान पत्रकारों और साहित्यकारों ने सिद्धांतों की रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहूतियॉ दी थी, लेकिन आज की व्यावसायिक मानसिकता ने उन्हें विकृत कर दिया है।

मुख्य शब्द – सत्यान्वेषण, ज्ञानवृद्धि, विचारों का उन्नयन, पत्रकारिता।

प्रस्तावना – हिन्दी पत्रकारिता को आरम्भ हुए करीब दो सौ वर्ष हुए है, किन्तु इसी अंतराल में उसने उल्लेखनीय उपलब्धियॉ तय कर ली है। सन् 1826 में कोलकाता से जब हिन्दी का पहला समाचार पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' प्रकाशित हुआ तब हिन्दी जगत ने इस बात की भी आशा नहीं की थी कि अंग्रेजी पत्रकारिता को चुनौती देने के लिए कभी हिन्दी पत्रकारिता भी सक्षम होगी। लेकिन ऐसा हुआ और इसी बात का प्रमाण है कि आज हिन्दी में प्रकाशित होने वाले समाचार पत्र-पत्रिकाओं की संख्या न केवल अन्य भाषाओं के समाचार पत्र पत्रिकाओं से कही अधिक है बल्कि इनकी प्रसार संख्या भी उनसे अधिक है। हिन्दी में कई-कई संस्करणों, पत्रों की संख्या भी निरंतर बढ़ रही है। हिन्दी पत्रकारिता के 968 वर्ष पुराने इतिहास में आज व्यापक परिवर्तन आ चुके है। आज संपूर्ण पत्र-पत्रिकाएं आम जनता के बीच अपनी विशिष्ट महत्ता को स्थापित कर चुकी है। समय के साथ बदलते प्रतिमानों और मूल्यों का अवलोकन करके प्रत्येक पत्र अपनी विषयवस्तु को लोंगो के सामने प्रस्तुत करते है।

विषयवस्तु – पत्रकारिता के लिए अंग्रेजी में 'जर्नलिज्म' शब्द का उपयोग होता है जो जर्नल से निकला है, जिसका शाब्दिक अर्थ 'दैनिक' दिन-प्रतिदिन के क्रिया-कलापों सरकारी बैठकों का विवरण जर्नल में रहता था जर्नल से बना जर्नलिज्म अपेक्षाकृत व्यापक शब्द है समाचार पत्रों और विविध कालिक पत्रिकाओं के संपादन एवं लेखन और तत्सबंधी कार्यो को पत्रकारिता के अन्तर्गत रखा गया।

स्वाधीनता संग्राम के के समय गांधी जी सहित देश के अनेक बड़े नेताओं ने जन-जागृति के लिए हिन्दी पत्रों की सहायता ली थी। उस समय पत्रकारिता को एक मिशन समझा जाता था परन्तु आज के व्यवसायिक दौर में यह पूरी तरह से प्रोफेशन बन चुकी है। बदलते समय के साथ पत्रकारिता की पूरी शैली बदल गयी है। तात्पर्य यह है कि अखबार ब्रांड बन गये है और पत्रकार कामगार। इस माहौल में पत्रकारिता के मिशन को जिन्दा रखने या फिर उसे नेपध्य में डाल देने का पूरा दारोमदार नयी पीढ़ी पर ही है। क्या इस बात की काई गुंजाईस है कि नयी पीढ़ी उन मानदंडों पर टिकी रहकर पत्रकारिता का दायित्व निभायें, जो उसे विरासत के उदाहरणों और पूर्ववर्ती पीढ़ी में विचारों के बतौर मिलता रहा है। आज के समय में हिन्दी पत्रकारिता पहले की तुलना में काफी समृद्ध हो चुकी है – साधन, संसाधनों की दृष्टि से भी और पत्रकारों को मिलने वाले वेतनमान की दृष्टि से भी। हिन्दी पत्रकारिता से जुड़े पत्रकारों की छवि में भी बदलाव आया है। फटी चप्पल, खादी का मैला-कुचैला कुर्ता, बढ़ी हुई दाढ़ी और कंधे पर एक झोला लिए हिन्दी अखबारों के दीन-हीन पत्रकार के स्थान पर अब अच्छी पर्सनालिटी और अप-टू-डेट गेट अप वाले पत्रकार ही ज्यादा नजर आते है। पाठकों की रूचि और मांग के अनुसार हिन्दी पत्रकारिता ने अपना कलेवर भी बदला है, किन्तु उस क्रम में वह अपनी भाषा और अस्मिता को अंग्रेजी रंग में रंगती जा रही है। हिन्दी में अंग्रेजी के ऐसे शब्दों की भरमार दिखती है जिनके अच्छे और आसान हिन्दी शब्द सहज उपलब्ध है। हिन्दी पत्रकारिता की अपनी अलग भाषा है तो उसे अंग्रेजी के सहारे की जरूरत क्यों पड़ती है, इस दिशा में हिन्दी पत्र जगत से जुड़े लोग को चिंतन करना चाहिए।

पत्रकारिता का दायित्व – भारत में पत्रकारिता को समाज के प्रति महान दायित्व रखने का निर्वाह करना पड़ता है। समाज के विस्तृत परिक्षेत्र को देखने पर यह जान पड़ता है कि उसका प्रत्येक क्षेत्र पत्रकारिता के अंतर्गत आ सकता है। इस प्रकार पत्रकारिता के निम्न दायित्व हो सकते है।

1. समाज को उचित दिशा देना-निर्देश देना।
2. गरीबी उन्मूलन अभियान को बल देना।
3. नवीन आर्थिक योजनाओं से जनता को परिचित कराना।
4. सामाजिक कुरीतियों को विश्लेषित करना।
5. धार्मिक और सांस्कृतिक पहलुओं पर विचार करना।
6. राजनैतिक अधिकारों के विषय में समान्य जनता को सचेत करना।
7. सरकारी नीतियों का प्रचार-प्रसार करना।
8. नई-नई शिक्षा नीतियों और उपलब्धियों को जनता के बीच ले जाना।
9. महिला जगत से संबंधित समस्याओं का गुण दोष परक विवेचन करना।
10. बाल कल्याण कार्यक्रमों के बारे में जनता को अवगत कराना।
11. दलितोव्यान समस्या का विश्लेषण।
12. देश की अखंडता की रक्षा करना और राष्ट्रीयता का पाठ पढ़ाना।

* सहायक प्रध्यापक (हिन्दी विभाग) शासकीय मुकुट धर पाण्डेय कॉलेज, कटघोरा, कोरबा (छ.ग.) भारत

आज की पत्रकारिता का दायित्व क्षेत्र दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। इसलिए उपर्युक्त दायित्वों के अतिरिक्त भी अनेक क्षेत्र और विषय विद्यमान है। जिनके बारे में पत्रकारिता को अपना दृष्टि प्रकट करना पड़ता है। जैसे – जॉत-पॉत तोड़ने के लिए अंतर्जातीय विवाह, स्त्री-पुरूषों के समान अधिकार, विवाह- विच्छेद के प्रश्न, शिक्षा के क्षेत्र में फैला भ्रष्टाचार, नवयुवकों और नवयुवतियों में बढती नशीली वस्तुओं और मादक पदार्थो का उपयोग आदि अनेक ज्वलंत विषयों आजकल पत्र-पत्रिकाओं में खुले आम वर्णन किया जाता है। इसके अतिरिक्त राजनैतिक, भाषागत, साहित्यिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक, और आदर्शगत समस्याओं एवं विचारों के बहस क्षेत्र में जाना और उस पर अपना निर्णय देना समचार-पत्रों का मुख्य कार्य है।

पत्रकारिता का महान् दायित्व है। भारतीय क्रांति और उत्क्रांति की सफलता का दायित्व पत्रकारिता पर है। भारत ने अतीत में मानव समाज को अपनी विकास यात्रा में उललेखनीय सहायता एवं सहयोग प्रदान किया है। आशा की जाती है कि वह भविष्य मे मानव समाज के उत्थान में अपना दायित्व पूरा करता रहेगा। वर्तमान में अनेक संकट मानव-समाज के समक्ष है। विश्व आज ऐसे ऐतिहासिक युग से गुजर रहा है जो विनाशकारी है। भूमण्डल के इस विशाल रंगमंच पर भारत को अपना दायित्व सफलता से निभाना है। इस नवरचना में उसे कुशल शिल्पी की भांति अपने और विश्व के भविष्य को कुशलता तथा सावधानी से बनाना है। उक्त आवश्यकता की पूर्ति करने का उत्तरदायित्व पत्रकारिता पर अपेक्षाकृत सर्वतोधिक है। उसे गॉव की झोंपड़ियों से लेकर शहरों की गगनचुम्बी अट्टालिकाओं तक के जीवन को आमूल आलाडित करना है। पत्रकारिता को भारत के कण-कण में सजीवता और स्पंदन नवस्फूर्ति और जागरण, सक्रियता और गतिशीलता का मंत्र फूंकना है। प्रसिद्ध हिन्दी कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा के अनुसार -'पत्रकारिता एक रचनाशील विद्या है। इसके बगैर समाज को बदलना असंभव है। अत: पत्रकारों को अपने दायित्व और कत्ताव्यों का निर्वाह निष्ठापूर्वक करना चाहिए क्योंकि उन्ही के पैरों के से इतिहास लिखा जाएगा।'

पत्रकारिता को शिक्षा का प्रचार करना चाहिए और उसे शिक्षा की नई-नई उपलब्धियों को सामान्य जनता तक पहुंचाना चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में जो कठिनाइयां है उनको भी उजागर करने का दायित्व भी उसका ही है। पत्रकारिता को महिला जगत की दहेज-प्रथा और तलाक जैसी समस्याओं के गुण और दोषों पर भी प्रकाश डालते रहना चाहिए। इसी प्रकार बाल कल्याण जैसे विषयों को बहुत प्रकाशित करना चाहिए। हमारे देश की जनसंख्या बहुत तीव्र गति से बढ रही है। आप के साधन सीमित है। अत: पत्रकारिता को इस ओर भी जनता का ध्यान आकर्षित करना चाहिए, ताकि जनसंख्या की वृद्धि को रोका जाए। इस दिशा में उसे सरकार द्वारा चलाए जा रहे परिवार नियोजन कार्यक्रम का अच्छा प्रचार करना चाहिए।

पत्रकारिता की दशा – आज के इस बात पर चर्चा बेहद लाजिमी है कि पत्रकारों के लिखने की शैली, उनकी ज्ञान और संवेदनशील मुद्दों पर उनकी परख के बाद अखबारों के विविध समाचारों और आलेखों से जो समझ बनती है, उनमें कही न कही बाजारवाद दिखता है। मिशन जैसी बातें अब पीछे धकेली जा चुकी है। फास्ट फूड की तरह समाचार परोसें जाने लगे है। संवेदनशील मुद्दों पर भी लेखन शैली में उस विशिष्टता का अभाव है, जो पूरी स्थिति को पाठकों के समझ आंखिन देखी अंदाज में प्रस्तुत कर सके।

इस छिछलेपन के पीछे नयी पीढ़ी की अधीरता तो है ही, पठन-पाठन से कटना, रातों-रात बहुत कुछ पाने की तमन्ना और प्रोफेशनलिज्म जैसे कुरेदने-कचोटने वाले तत्व है। पत्रकारिता में विविध विषयों और संदर्भो की बाबत रिपोर्टिंग और फीचर में अपनी तथ्यगत प्रतिभा दिखाने की जरूरत पड़ती है। इसमें नयी पीढ़ी हर जगह फिट नही हो पाती। उन्हें स्वाध्याय, शब्द क्षमता बढ़ाने की कोशिश करनी होगी,साथ ही अपने वरिष्ठ और गुरूजनों का मार्गदर्शन पाने के प्रति भी सचेष्ट रहना होगा। तभी वे इस बाजारवादी पत्रकारिता के बीच भी एक मिशन की तरह काम कर सकेंगे।

आज पत्रकारिता की प्रवृत्ति साहित्य की ओर हो रही है, यह प्रसन्नता की बात है ऐसा होना चाहिए। आज पत्रकार समाज के सबसे सजग, समर्थ और विश्वसनीय प्रहरी माने जाते है, इन पर राष्ट्रभाषा हिन्दी की अनूठी क्षमता को अक्षुण्ण और प्रवाहमान बनाए रखने का दायित्व है। पत्रकारिता के क्षेत्र में व्यवसाय और मिशन का द्वंद्व आज उत्कर्ष पर है, यह मूलत: यथार्थ और आदर्श का संघर्ष है। समय के साथ पत्रकार का महत्व एवं प्रतिष्ठा कम होती गई है। समाचार पत्रों की संपन्नता को, उनकी प्रसार शक्ति को पत्रों के मालिक अपने अन्य स्वार्थो के लिए इस्तेमाल कर सकते है। यह संकट भारत में ज्यादा है, क्योंकि यहॉ समाचार-पत्र प्रतिष्ठानों में ऐसे पूँजीपतियों की पूंजी लगी होती है जो दूसरे उद्योगों के भी मालिक है। वे लोग समाचार पत्रों से अर्जित मुनाफा जान बुझकर ऐसे उद्योगों में लगाया करते है जो घाटे में चल रहे हों। यह सर्वविदित है कि आर्थिक सवालों पर एवं निजी क्षेत्र और सार्वजनिक क्षेत्र को लेकर चलने वाली बहस में पत्र-पत्रिकाओं का रूख पूंजी परस्त ही रहता आया है मालिको का राजनैतिक स्वार्थ उलझा होने के करण अनेक पत्रिकाओं की हालत बद से बदतर होती जा रही है। प्रतिष्ठान की नराजगी का भय, अंधविश्वासों में जनता की आसक्ति, धार्मिक कट्टरता का भय, रूढ़ियों को चुनौती देने से पाठको एवं विज्ञापनदाताओं के रूठने की आशंका तथा तथा मालिकों के नुकसान की चिंता – ये सारी चीजें पत्रकारों को स्वतंत्रतापूर्वक अपना दायित्व निभाने से रोकनी है। तमाम विषम परिस्थितियों के बीच अपनी सार्थकता के साथ यदि पत्रकारिता को जीवित रहना है तो हम सबको मिल-जुल कर किसी ऐसे उपाय की तलाश करनी होगी कि पत्रकारिता के व्यावसायिक पहलू की वास्तविकता को स्वीकार करते हुए भी उसे अपने व्यापक सामाजिक दायित्व के प्रति जागरूक रखा जा सके। अत: आवश्यक है कि पत्रकार पत्रकारिता के मिशन को निजी हित से उपर रखे। पत्रकारिता एक चुनौती भरा कार्य है, इसके बावजूद पत्रकारिता सामाजिक सारोकारी से जुड़ी हुई है।

वैज्ञानिक खोंजो से नई-नई उपलब्धियॉ हो रही है उनके विषय मे जनता को जानकारी देने का दायित्व भी पत्रकारिता का ही है। यदि इस प्रकार की जानकारी पत्रकारिता देती रहे तो इन नई खोंजो से सामाजिक क्रांति आ सकती है। हरिजनों और दलितों वर्ग को उठाने का दायित्व भी पत्रकारिता को लेना चाहिए। सरकार के द्वारा इनके उद्धार हेतु जो कार्यक्रम बनाये जाते है उनका प्रचार और प्रसार पत्रकारिता के माध्यम से सरल हो जाता है। इनके अतिरिक्त देश की एकता और अखंडता की रक्षा करना तथा राष्ट्रीयता को शिक्षा प्रदान करना पत्रकारिता का पुनीत कर्त्ताव्य है। ऐसा करके ही पत्रकारिता अपने दायित्व को पूरा कर सकती है। पत्रकारिता और शिक्षा का आस-पास में चोली दामन का सम्बन्ध है। यदि शिक्षितों की संख्या में वृद्धि न होती तो पत्रकारिता का उद्‌भव एवं विकास अंसभव था। प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति शिक्षा को समाप्त कर दिया गया। परन्तु कुछ बुद्धिमान एवं उदार अंग्रेज शासकों तथा ईसाई मिशनरियों ने भारत में शिक्षा के महत्व और अनेक कठिनाईयों के होते हुए भी हिन्दी के प्रबुद्ध वर्ग ने इस ओर प्रयास किया। कानपुर निवासी पं. जुगल किशोर शुक्ल द्वारा प्रथम हिन्दी पत्र उदन्त मार्तक नामक पत्र 30 मई 1820 में कलकत्ता से प्रकाशित

किया गया यह पत्र उन्होंने भारतीयों के हितों की सुरक्षा के लिए निकाला था।

पत्रकारिता में सिद्धांतों का विशिष्ट महत्व है। स्वाधीनता से पूर्व पत्रकारिता का स्वरूप सीमित था, साधन सीमित थे लेकिन आदर्श बडे थे। आज पत्रकारिता के साधन और स्वरूप असीमित है लेकिन आदर्श अस्पष्ट। पत्रकारिता में हुए निरंतर विकास ने पत्रकारिता को एक व्यावसाय बना दिया है। आजादी से पूर्व पत्रकारिता मिशन था गुलामी से मुक्ति। अधिकांश पत्र, पत्रकार इसी उद्देश्य को लेकर पत्रकारिता के साथ जुड़े थे। देश को स्वतंत्र कराने में पत्रकारिता के योगदान को नकारना असंभव है। आज आजादी के इतने वर्षो के बाद पत्रकारिता को अन्य बातों के साथ पुन: एक लक्ष्य सामने रखना है और वह है देश को मिली आजादी की नींव मजबूत करने में योगदान देना। राष्ट्र-निर्माण तथा राष्ट्रीय एकता के साथ-साथ देश की अखडंता को बचाए रखना। पत्रकारिता के लिए आवश्यक है जिसे किसी भी अध्याय में या शिक्षण-संस्थान द्वारा पढ़ाया नहीं जा सकता। यह भीतर की भावना है जिसे सदैव सांस लेते रहना है क्योकि पत्रकार होना किसी भी अन्य व्यवसाय की तुलना में कम ठीक नहीं है।

एक नये विश्व समुदाय के निर्माण हेतु जनसंख्या एवं पत्रकारिता की अहम् भूमिका है। पत्रकारिता न केवल जनभावना की अभिव्यक्ति है बल्कि वह चौथा खम्भा है, जनता का सजग प्रहरी भी है। पत्रकारिता को आधुनिक समाज में चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, संपादक मात्र प्रबंधक बनकर रह गया है। संपादक को मालिक का बंधक बनकर रह जाना पत्रकारिता के समूचे अस्तित्व के ह्रास का द्योतक है।

राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान पत्रकारों और साहित्यकारों ने सिद्धांतों की रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुतियॉ दी थी, लेकिन आज की व्यावसायिक मानसिकता ने उन्हें विस्तृत कर दिया है।

पत्रकारिता नये विचारों का अग्रदूत तथा उन्नायक है यही कारण है कि आज के जन-जीवन में इसका विशेष स्थान है और मानव समाज पर इसका अभूतपूर्व प्रभाव है। इस विशेषता के कारण ही यह भावुक, आदर्शवादी और साहसी नवयुवकों को आकृष्ट कर रही है। और जब यह विशेषता बनी रहेगी तब तक आकृष्ट करती रहेगी। इसमें उन्ही नवयुवकों को आना चाहिए जो साहसी, परिवर्तनीय, ईमानदार प्रतिभाओं के हो। चूंकि उनके ऊपर राष्ट्र और समाज का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। एक समय था, जब पत्रकारिता एक मिशन समझी जाती थी, परन्तु आज यह एक व्यवसाय बन गई है। किन्तु इसके बाद भी पत्रकार का बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है। उसे गॉव की झोपड़ियों से लेकर गगनचुम्बी अट्टालिकाओं के जीवन को अमूल आलोकित करना है। उसे राष्ट्र के कण-कण में सजीवता, स्पन्दन, नवस्फूर्ति, जागरण, सक्रियता और गतिशीलता का मंत्र फूंकना है। ऐसे कठिन कार्य को केवल वही व्यक्ति निभा सकता है जिसमें अभूतपूर्व साहस, कर्मठता, दृढ़ता और घोर परिक्रमा करने के गुण हों।

उपसंहार – पत्रकारिता समाज के विचारों और साहित्य की संवाहिका हैं। जो समाज और साहित्य के इतिहास में अपना स्थान प्रतिष्ठित करने के साथ-ही-साथ साहित्य और इतिहास का निर्माण भी करती है। ग्रंथों में समाहित साहित्य से जो कार्य संभव नहीं हैं उस कार्य को पत्र-पत्रिकाओं के साहित्य ने संभव करने का हमेशा प्रयास किया है। वर्तमान जीवन के बहुआयामी विस्तार और विकास से सुपरिचित होने के लिए पत्रकारिता अपरिहार्य है। पत्रकारिता अतीत को उद्घाटित करने के साथ आज प्रत्येक मनुष्य की सांस और धड़कन को विश्लेषित करती है। विश्व के साहित्य, विज्ञान, भूगोल, इतिहास, मनोविज्ञान आदि को प्रस्तुत करने तथा खेलकूद, संगीत, नृत्य, फिल्म आदि को लोकप्रिय बनाने में पत्रकारिता का स्थान सर्वोच्च है।

पत्रकारिता एक ऐसी आंख है जो संपूर्ण समाज और उसमें व्याप्त स्थितियों को एक साथ देख लेती है तथा उसे प्रतिबिम्ति करती है। भारतीय पत्रकारिता ने आरम्भ में तद्युगीन जीवन को नवचेतना का मंत्र दिया। इस नवचेतना से सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और दैनिक जीवन ने अंगड़ाई ली। सुप्त चेतना जागृत हो उठी जिसने साहसिक संघर्षो की प्रेरणा दी। और राष्ट्र को पराधीनता से छुटकारा दिलाया। एक नये विश्व समुदाय के निर्माण हेतु जनसंख्या एवं पत्रकारिता की अहम् भूमिका है। पत्रकारिता न केवल जनभावना की अभिव्यक्ति है बल्कि वह चौथा खम्भा है, जनता का सजग प्रहरी भी है। पत्रकारिता को आधुनिक समाज में चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, संपादक मात्र प्रबंधक बनकर रह गया है। संपादक को मालिक का बंधक बनकर रह जाना पत्रकारिता के समूचे अस्तित्व के ह्रास का द्योतक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. पत्रकारिता की रूपरेखा – श्रीपाल शर्मा पृष्ठ संख्या – 3, सुमीत इन्टरप्राइजेज, नई दिल्ली।
2. पत्रकारिता का अवलोकन – एम. सी. पंत पृष्ठ संख्या – 5
3. हिन्दी पत्रकारिता का विकास – एन. सी. पंतत्र पृष्ठ संख्या 16,17, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
4. हिन्दी पत्रकारिता का विकास – एन. सी. पंतत्र पृष्ठ संख्या 18 राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
5. हिन्दी पत्रकारिता का विकास – एन.सी.पतंत्र पृष्ठ संख्या 18, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
6. पत्रकारिता की रूप रेखा – श्री पाल शर्मा, पृष्ठ संख्या – 10 सुमित इन्टरप्राइजेज नई दिल्ली।
7. हिन्दी पत्रकारिता स्वरूप और संदर्भ – विनोदगोदरे
8. आ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली भाग।
9. पत्रकारिता की लक्ष्मण रेखा – डॉ.आलोक मेहता
10. हिन्दी पत्रकारिता का वर्तमान – डॉ. सिद्धेश्वर कश्यप
11. जनसंघार और हिन्दी पत्रकारिता – डॉ. अर्जुन तिवारी
12. Nautiyalgreen.blogspot.in
13. Absmassindia. Blogspot.in
14. Amarmediasr.blogspot.in
15. https://hi.m.wikipedia.org
16. https://www.atpeducation.com
17. https://hi.wikipedia.org/wiki/हिन्दीपत्रकारिता

****

बिलासपुर जिले के बैग दुकानों का आर्थिक सर्वेक्षण (तहसील करगी रोड कोटा के संदर्भ में)

प्रिंस कुमार मिश्रा*

प्रस्तावना – व्यवसाय एवं उद्योग देश के अर्थव्यवस्था की रीढ़ होती है। व्यवसाय सभी प्रकार की वस्तुओं व सेवाओं का किया जाता है, ये वस्तुएं या सेवाएं जरूरतमंद होती है। व्यवसाय एवं उद्योग जगत का देश के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है, व्यावसायिक विकास ही वास्तविक आर्थिक विकास एवं उन्नति का प्रतीक है, भारत जैसे विकास की सीढ़ियों पर बढ़ते देशो में रोजगार की भारी कमी है।

इस सर्वेक्षण में बैग (bag) व्यवसाय एक बहुत ही सफल व्यवसाय कही जा सकती है। क्योकि हमारे जीवन में बैग का कई प्रकार से उपयोग है जैसे आफिस बैग, फैशन बैग, लगेज बैग स्कूल बैग आदि। महत्वपूर्ण योगदान देते है, तथा इस सर्वेक्षण द्वारा हम इसकी जानकारी प्राप्त करते है।

प्रस्तुत क्षेत्र में सर्वेक्षण को लिखते समय इस बात का ध्यान रखा रखा गया है, कि उसकी लेख सामग्री, सरल एंव रोचक रहे।

सर्वेक्षण का उद्देश्य– सर्वेक्षण में बिना उद्देश्य निर्धारण के सफलता प्राप्त नही किया जा सकता है, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए इस सर्वेक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए है–

1. बैग(Bag) व्यवसाय को प्रारंभ करने की प्रक्रिया संबंधी जानकारी हेतु।
2. बैग(Bag) व्यवसाय के व्यवसायियों की आर्थिक स्थिति की जानकारी एकत्र करना।
3. सर्वेक्षण द्वारा ग्राहको की रूचि का ज्ञान प्राप्त कर उनके अनुसार पुस्तकों को स्टोर करना तथा मांग को पूरा करना है।
4. बैग(Bag) व्यवसाय में सुधार एवं परिवर्तन हेतु आवश्यक सुझाव प्राप्त करना।
5. विपणन व्यवस्था की जानकारी प्राप्त करना।
6. केन्द्र की लाभदायकता का अध्ययन करना।
7. उत्पादन की लागत एवं लाभ की जानकारी प्राप्त करना।

सर्वेक्षण का महत्व – सर्वेक्षण के द्वारा सही आकड़ो की प्राप्ति तथा वास्तविक बाजार के वातावरण की जानकारी है इस आधार पर महत्व निम्नानुसार–

1. **विश्वसनीय आकडे –** सर्वेक्षण के माध्यम से व्यक्ति प्रत्यक्ष संबंध द्वारा सूचनाएं व अन्य जानकारियां सही प्राप्त करता है।

2. **लागत व लाभ के लिए –** सर्वेक्षण के द्वारा बैग व्यवसाय के लागत व लाभ का ज्ञान प्राप्त किया गया है।

3. **महत्वपूर्ण तथ्यो की प्राप्ति –** सर्वेक्षण के माध्यम से महत्वपूर्ण आवश्यक तथ्यो की जानकारी मिलती है।

4. **समस्या हेतु सुझाव का विकल्प –** सर्वेक्षण के माध्यम से विभिन्न समस्या को ज्ञात कर निवारण हेतु सुझाव प्रस्तुत किया जाता है।

5. **गुण व कौशल का विकास –** सर्वेक्षण कार्य सम्पन्न करने के दौरान सर्वेक्षणकर्ता के गुण व कौशल का विकास होता है।

6. **भावी संभावना का ज्ञान –** सर्वेक्षण के माध्यम से भावी समय में उक्त सम्भावनाओं के बारे में जानकारी एंव उसकी कीमत की जानकारी मिल जाती है।

7. **नवीन ज्ञान की प्राप्ति –** सर्वेक्षण एक से अधिक जगह का करने से विभिन्न जगहों की जानकारी प्राप्त होती है तथा नए–नए चीजों जैसे– ग्राहकों की पसंद रहन–सहन, व्यवसाय करने के तरीके, इत्यादि।

इस अध्ययन में बैग के मूल्य से लेकर इसके स्थिति के बारे में जानकारी बहुत ही महत्वपूर्ण है।

बैग व्यवसाय की जितनी वर्तमान में आवश्यकता है उतना ही आगे भी महत्व कम नहीं होगी।

सर्वेक्षण की विधि :

1. स्वंय के द्वारा सर्वेक्षण विधि
2. प्रत्यक्ष अवलोकन विधि
3. प्रश्नावली तैयार करना
4. विभिन्न सूचना विधि

1. सर्वेक्षण विधि– इस विधि में हम स्वंय के द्वारा सर्वेक्षण करते है, अर्थात जो भी जानकारी प्राप्त की जाती है, वह स्वंय जाकर इकट्ठा की जाती है। इसमें जो भी जानकारी प्राप्त होती है, जिससे गलती और हानि की संभावना कम होती है।

2. प्रत्यक्ष अवलोकन विधि– वह विधि होती है जो कि किसी जानकार व्यक्ति से जानकारी प्राप्त की जाती है। जैसे – बहुत सारी दुकानों में से कुछ दुकानो का सर्वेक्षण करना 'सेम्पल सर्वे' कहा जाता है।

3. प्रश्नावली – प्रश्नावली के द्वारा सुचनाएं प्राप्त की गयी।

4. विभिन्न सूचना विधि– बैग दुकानों की जानकारी हम विभिन्न सूचनाओं द्वारा भी प्राप्त करते है। इसमें साधनो द्वारा भी जैसे– टी.वी., पेपर, मैगज़ीन, विज्ञापन, पर्चे, कार्ड पेपर आदि।

सर्वेक्षण की सीमाएं– व्यवसाय से संबंधित आवश्यक जानकारी एकत्रित करने के लिए मैने संबंधित व्यवसाय का सर्वेक्षण कर जानकारियां एकत्रित की है किन्तु सर्वेक्षण के दौरान एक सीमा में रहकर कार्य करना होता है, अत: सर्वेक्षण की सीमाएं निम्न है–

1. मालिक अपने दुकान की बिक्री के बारे में सही जानकारी प्रस्तुत नहीं

* शोधार्थी (वाणिज्य विभाग) डॉ. सी. वी. रामन् विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

करते है।

2. दुकानदारो द्धारा लाए जाने वाली कंपनियो एवं स्थानों की वास्तविकता में गोपनीय बनाए रखते है।
3. अधिकृत दुकान मालिक कर संबंधी बातो का जिक्र करने से बचते है।
4. दुकानदार सही एवं वास्तविक तथा प्राप्ति एवं भुगतान संबंधी जानकारी देने से बचते है।
5. हमें सर्वेक्षण के दौरान उन्ही बातो को सत्य मान कर अध्ययन करना पड़ता है, जो कि व्यवसायियों द्धारा हमें उपलब्ध कराई जाती है।
6. व्यवसायी वर्ग अपने माल की क्रय-विक्रय की जानकारी देने में संकोच करते है जबकि यह व्यवसाय की सफलता को प्रभावित करने वाला एक तथ्य है।

करगी रोड कोटा का सामान्य परिचय- करगी रोड(कोटा) बिलासपुर जिला के छत्तीसगढ़ राज्य का एक विकासखण्ड है, यह छत्तीसगढ़ की न्यायधानी बिलासपुर से 32 कि.मी. उत्तर में स्थित है। करगीरोड का नाम ग्राम करगी जाने के मार्ग के कारण पड़ा, प्राचीन समय में ग्राम करगी मे राजा निवास करते थे। करगीरोड में व्यवहार न्यायलय तथा जनपद कार्यालय स्थित है। शिक्षा- बिलासपुर जिला में करगीरोड शिक्षा के केन्द्र के रूप में भी उभरा है। यहाँ मुख्य रूप से डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय स्थित है, इसके अलावा 2 अन्य महाविद्यालय भी है। व्यावसायिक षिक्षा के लिए 1 मिनी आई. टी. आई. भी स्थित है। प्रमुख रूप से 12 विद्यालय भी स्थित हैं।

1. करगीरोड में औद्योगिक क्षेत्र में स्लीपर उद्योग महत्वपूर्ण हैं।
2. पर्यटन- करगीरोड में प्रमुख रूप से घोंघा जलाशय, कोटेश्वर महादेव मंदिर, दलहा पहाड़ है इसके अलावा करगीरोड क्षेत्र में अन्य दर्शनीय व पर्यटन स्थल भी स्थित हैं।
3. छत्तीसगढ़ राज्य की स्थापना के पश्चात् करगीरोड क्षेत्र के विकास में भी वृद्धि हुई है, यहां पर व्यापारिक, औद्योगिक, शिक्षण संस्थान आदि का प्रमुख रूप से निर्माण तथा विस्तार किया गया है।

चंडीमाता चौक का सामान्य परिचय- करगीरोड (कोटा) में चंडीमाता चौक एक चौराहा के रूप में स्थित है, जो जय स्तम्भ चौक के बाद आता है, यह करगीरोड (कोटा) नगर के मध्य में स्थित है। इस चौक में माता चंडी का मंदिर स्थित होने के कारण इसे 'चंडीमाता चौक' कहते है।

इस चौक में पहला रास्ता सीधा रेल्वे स्टेशन को जाता है, दूसरा रास्ता बाएॅ तरफ से तहसील की ओर जाता है। यह स्थान छोटा होने के बाद भी यहां निम्न प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध है-

1. चिकित्सा हेतु इस चौक में दॉतो का अस्पताल स्थित है।
2. सौंदर्य प्रसाधन की दुकानें स्थित है।
3. किराने की दुकानें स्थित है।
4. दवाई की दुकानें स्थित है।
5. शिक्षा हेतु इस चौक के पास 2 विद्यालय व 1 छात्रावास है।

अन्य सुविधाएं- दो ए.टी.एम. व दो फोटो स्टूडियों, तथा अन्य कई होटल इत्यादि स्थित है।

चंडीमाता चौक में बैग व्यवसाय- बैग (एक बोरी के रूप में क्षेत्रीय रूप से जाना जाता है) यह गैर-कठोर कंटेनर के रूप में एक उपकरण है। बैग हमारे दैनिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है, चाहे वह हमारे स्कूल का स्कूल बैग, खरीददारी के लिए शॉपिंग बैग, सामान के लिए लगेज बैग, ऑफिस के लिए ऑफिस बैग आदि।

चंडीमाता चौक के आसपास व्यवसाव का व्यापक क्षेत्र है तथा बहुत सारे स्कूल, व्यवसायिक संस्थान व अपार जनसंख्या होने के कारण व्यापार का अच्छा स्तर हैं।

इस व्यवसाय के कारण जीवन स्तर में वृद्धि होती है, तथा नई-नई जानकारी प्राप्त होती है, बैग के प्रयोग के आधार पर इसका व्यवसाय निरंतर चलते आ रहा है।

व्यवसाय एवं उद्योग जगत राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास के लिए महत्वपूर्ण होते है, व्यावसायिक विकास ही आर्थिक विकास की उन्नति का प्रतीक है।

बैग व्यवसाय में पूंजी, लागत व प्रबंध की व्यवस्था- प्रत्येक प्रकार के व्यवसायों को पूंजी लागत एवं प्रबंध की व्यवस्था प्रभावित करती है, अत: व्यवसाय के सफल संचालन हेतु इनकी व्यवस्था उचित ढ़ग से की जानी चाहिए। इस बात को निम्नलिखित बातों के माध्यम से समझा जा सकता है-

पूंजी- प्रत्येक व्यवसाय को सफल बनाने के लिए उचित पूंजी की व्यवस्था करना परम् आवश्यक होता है, पूंजी व्यवस्था के अंतर्गत सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि स्थिर पूंजी एवं कार्यशील पूंजी का अनुपात निर्धारण उचित रुप में किया जाता जाए। कोई भी नया व्यवसाय प्रारंभ करने से पूर्व व्यवसाय की प्रकृति भावी सम्भावनाओं को ध्यान में रखते हुए पूंजी निवेश की व्यवस्था की जानी चाहिए ।

लागत- व्यवसाय में पूंजी लगाने के बाद आवश्यक होता है। उससे संबंधित होने वाले लागतो की व्यवस्था करना इन लागतों के अन्तर्गत माल क्रय संबंधी लागते होती है साथ ही साथ कुल माल मार्ग में लाते समय क्षय ग्रस्त हो जाते है। उनकी लागतों को भी व्यवसायी द्धारा वहन किया जाता है। इसके अलावा परिवहन संबंधी लागते विशपन संबंधी लागते, कर्मचारियों के वेतन संबंधी लागते नगर निगम बिजली, पानी, कर संबंधी लागते एवं जो दुकान किराया लागत भी व्यवसाय द्धारा वहन किया जाता है।

प्रबंध व्यवस्था- प्रत्येक व्यवसाय में अच्छी प्रबंध व्यवस्था उसकी सफलता का प्रतीक माना जाता है। प्रबंध व्यवस्था से आशय एक व्यवसायी द्धारा कर्मचारियो के संबंध में जो प्रबंध व्यवस्था की जाती है।

जैसे-कर्मचारियों के परिश्रमिक संबंधी कार्य समयान्तराल संबंधी एवं खान-पान संबंधी व्यवस्था करना एवं इसके अलावा ग्राहको से संबंधित (उचित व्यवहार व सत्कार संबंधी) प्रबंध व्यवस्था भी व्यवसायी द्धारा की जाती है।

चंडी माता चौक में संचालित बैग व्यवसाय का आर्थिक विश्लेषण -

1. **स्थान विशेष पर अधिक बिक्री-** अगर व्यवसाय एक जैसे है तो यह संभव है कि किसी विशेष स्थान में ब्रिकि अधिक हो जैसे कोटा में चंडी माता चौक ऐसा क्षेत्र है जो व्यवसाय का उचित क्षेत्र है।
2. **मजदूरी देना-** चंडी माता चौक क्षेत्र में देखा गया है कि 2 से 3 काम करने वाले होते है जिन्हे मजदूरी या महीने में 10000 से 15000 तक के वेतन दे दिए जाते है।
3. **विज्ञापन-** विज्ञापन की आवश्यकता किस व्यवसाय में नही पड़ती है इस व्यवसाय में भी विज्ञापन के लिए धन खर्च किया जाता है इस व्यवसाय द्धारा पाम्प्लेट एवं समाचार पत्रों के माध्यम से विज्ञापन दिया जाता है।
4. **बिजली बिल-** दुकानों में कई कार्य बिजली के उपकरणो से दिए जाते है एवं लाइटिंग के कारण बिजली बिल कॉपी आता है, जिनका भुगतान इन दुकान वालो का करना पड़ता है।
5. **दुकान की साज-सज्जा-** ग्राहको को आकर्षित करने के लिए इन दुकानो में काफी साज-सज्जा करनी पड़ती है एवं इसमें काफी खर्च भी

आता हैं।

6. क्रमागत बढ़ते आय से– यदि लाभ अधिक होता है तो माल और स्टॉक भी अधिक रखा जाता है एवं एक साथ माल लेने में उनका दाम कम पड़ता है जिससे कम दाम होने के कारण ब्रिकी भी अधिक होती है और आय भी बढ़ती है।

7. स्टॉक की उपलब्धता– एक ही दुकान पर सभी प्रकार की वस्तुएं तथा आवश्यकता अनुसार प्राप्त हो जाने पर ग्राहक आकर्षित होते है।

समस्याएं - हर व्यवसाय में जोखिम रहती हैं, जहां जोखिम रहती है वहां समस्याएं भी रहती है अत: लाभ प्राप्त के साथ–साथ विभिन्न प्रकार की समस्याओ का सामना करना पड़ता है जिसका वर्णन निम्न प्रकार है–

1. संतुष्टि ग्राहको की की समस्या– आज परिवर्तन व बदलाव के दौर में किसी भी व्यवसायी द्वारा अपने ग्राहको को पूरी तरह संतुष्ट कर पाना संभव नहीं है, उन्हे ग्राहको की संतुष्ट संबंधी समस्या का सामना करना पड़ता है।

2. पर्याप्त स्टॉक ना होना– प्रत्येक बैग दुकान में ग्राहको की पसंद व आवश्यकतानुसार पुस्तक उपलब्ध नहीं हो पाते जिससे ग्राहको को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

3. बचा हुआ माल वापस न होना– ग्राहको की रूचि व पसंद में परिवर्तन के कारण बचा हुआ माल थोका व्यापारियों द्वारा वापस न लेने की समस्या उत्पन्न हो जाती है जिससे उस बचे हुए माल से संबंधित लागतो व वहन भी व्यवसायी द्वारा ेिया जाता हैं।

4. पूंजी की समस्या– व्यवसाय के संचालन में पूंजी की महत्वपूर्ण भूमिका होती है अर्थात व्यवसाय के सफल संचालन के लिए पूंजी पर्याप्त मात्रा में होनी चाहिए किन्तु पूंजी के अभाव में व्यवसायी के सामने ऋण लेने संबंधी औपचारिकता की समस्या उत्पन्न होती है तथा व्यवसाय संचालन में विलंब होती है।

5. प्रतिस्पर्धा की समस्या– एक क्षेत्र में एक ही प्रकार के व्यवसायी के संचालन से व्यवसायियो के सामने प्रतिस्पर्धा की समस्या आती है जिसमें पहले से स्थापित व्यवसाय के आधार पर अपने व्यवसाय को भी उसी स्तर तक बनाने की स्पर्धा का सामना करना पड़ता है।

6. कीमत निर्धारण संबंधी समस्या– एक व्यवसायी को अपने लाभ स्तर तथा ग्राहको को कीमत स्तर को ध्यान में रखते हुए वस्तुओ का कीमत निर्धारण किया जाना चाहिए।

7. मोबाइल एवं इन्टरनेट के आने से समस्या– आजकल हर चीज जानकारी मोबाइल में नेट द्वारा प्राप्त कर लिया जाता है। जिससे पुस्तक पर प्रभाव पड़ता है, लोग घर बैठे जानकारी प्राप्त कर लेते है और पसंद के हिसाब से घर मांगवा लेते है।

बैग व्यवसाय का आर्थिक सर्वेक्षण –

चंडी माता चौक में संचालित बैग दुकान का सर्वेक्षण

आकांक्षा बैग स्टोर

नाम	– आकांक्षा बैग स्टोर
पता	– चंडी माता चौक करगी रोड, कोटा बिलासपुर (छ.ग.)
व्यवसायी का नाम	– राजेश गुप्ता
स्थापना	– 2003–04
प्रारंभिक पूंजी	– 2,00,000
कर्मचारियों की संख्या	– 04
पारिश्रमिक	– 4000
मासिक लाभ	– 25,000 से 30,000
वार्षिक लाभ	– 2,80,000 से 4,50,000
एक दिन में ग्राहको की संख्या	– 30–40

स्त्रोत– मेरे द्वारा किया गया सर्वेक्षण पूर्णत: मौलिक एवं अप्रकाशित है।

स्नेहा बैग स्टोर

नाम	– स्नेहा बैग स्टोर
पता	– मेन रोड चंडी माता चौक, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.)
व्यवसायी का नाम	– लक्ष्मी साहू
स्थापना	– 2008–09
प्रारंभिक पूंजी	– 1,00,000
कर्मचारियो की संख्या	– 03
पारिश्रमिक	– 3500
मासिक लाभ	– 15,000 से 20,000
वार्षिक लाभ	– 3,50,000
एक दिन में ग्राहको की संख्या	– 20–30

स्त्रोत– मेरे द्वारा किया गया सर्वेक्षण पूर्णत: मौलिक एवं अप्रकाशित है।

बैग व्यवसाय के लिए आवश्यक तत्व – बैग व्यवसाय प्रारंभ करने से पूर्व कुछ तथ्यो पर ध्यान देना आवश्यक है जो इस प्रकार है–

पूंजी संरचना– पूंजी संरचना प्रत्येक व्यवसाय में दो प्रकार की होती है।

1. स्थाई पूंजी संरचना– बैग व्यवसाय में मुख्यत: स्थाई पूंजी के रूप में भवन फर्नीचर ,काउन्टर, टेबल, कुर्सी, ए. सी, कूलर, पंखे, सी.सी.टी.वी. कैमरा कम्प्युटर आदि के लिए स्थाई पूंजी लगाई जाती है। यह लगभग वर्तमान समय के अनुसार 05 लाख 10 लाख तक होनी चाहिए ।

2. कार्यशील पूंजी संरचना– बैग व्यवसाय के लिए कार्यशील पूंजी जैसे– बैग, वेतन, पैकेजिंग, परिवहन लागत, विज्ञापन लागत, घर पहुंच सेवाएं आदि प्रकार की मदों पर कार्यशील पूंजी लगाई जाती है वर्तमान समय के अनुसार लगभग 5लाख से 10लाख तक की पूंजी लग जाती है।

क्षेत्र– किसी भी दुकान को प्रारंभ करने के पूर्व इस तथ्य पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि उस दुकान को ऐसे क्षेत्र में स्थापित किया जाए जिससे अधिक मात्रा में बिक्री व लाभ प्राप्ति हो सके।

ख्याति– दुकान में विक्रय की सफलता उसकी ख्याति पर निर्भर करती है अत: दुकान की ख्याति ऐसी होनी चाहिए जिससे ग्राहक अधिक मात्रा में उस ओर आकृष्ट हो सके।

योग्यता– एक बैग व्यवसाय को संचालित करने हेतु व्यक्ति को व्यवसायी क्षेत्र में जुड़ा हुआ होना चाहिए तथा उस क्षेत्र में कार्य का अनुभव व पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

कर्मचारी– एक अकेला व्यवसायी व्यवसाय को संचालित नहीं कर सकता। अत: उसे कार्य करने हेतु कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ती है।

ग्राहको की सुविधाएं– एक अच्छा व्यवसायी वही है, जो लाभ प्राप्ति के साथ–साथ अपने ग्राहको से भी अच्छे संबंध स्थापित करे एवं उन्हें सुविधाएं उपलब्ध कराएं।

बैग व्यवसाय में रखे जाने वाले बैग की जानकारियां – बैग व्यवसाय में बैग से संचालित मुख्यत: निम्न प्रकार की वस्तुएं से संबंधित बैग रखा जाता है, जो अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित है–

1. स्कूल बैग– सर्वेक्षण द्वारा यह पाया गया है कि दुकानो में विभिन्न प्रकार के बैग की मांग ज्यादा रहती है। इसमें विभिन्न ग्राहक अपनी पसंद के अनुसार विभिन्न प्रकार के बैग की मांग करते है।

2. लगेज बैग- लगेज बैग में वस्तु की गुणवत्ता पर अधिक ध्यान दिया जाता है। गुणवत्ता के आधार पर ग्राहको द्वारा लगेज बैग का चयन किया जाता है।

3. ऑफिस बैग- ऑफिस बैग वर्तमान समय में विभिन्न आकार -प्रकार के आते है इसमें भी ब्राण्ड पर विशेष महत्व दिया जाता है। विभिन्न अधिकारी कर्मचारी अपने आवश्यकता के आधार पर विभिन्न ब्राण्ड के बैग की मांग करते है।

4. महिलाओं के पर्स - फैशन के बदलते दौर में महिलाओं की मांग व रूचि को ध्यान में रखते हुए विभिन्न डिजाइनों के बैगों का संग्रह महिलाओं के लिए विशेष तौर पर किया जाता है।

सुझाव- व्यवसाय के अंतर्गत व्यवसायी के सम्मुख अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न होती है, इन समस्याओ के समाधान हेतु उचित रूप से व्यवसाय में प्रबंध, नियोजन, नियंत्रण, समन्वय आदि की उचित व्यवस्था द्वारा समस्या का समाधान किया जा सकता है एवं इससे संबंधित सुझाव निम्नानुसार है-

1. वस्तुओ की जानकारी- प्रत्येक व्यवसायी द्वारा अपने ग्राहको के वस्तुओ से संबंधित सही जानकारियां जैसे- अच्छे तथा शुद्ध व सही लेखको की किताब एवं सभी विषयो के किताबो की जानकारी एवं हिन्दी, अंग्रेजी, का ज्ञान कराया जाना चाहिए।

2. विज्ञापन द्वारा प्रचार-प्रसार- व्यापार की सफलता उसके विज्ञापन पर निर्भर करती है, ज्यादातर नई वस्तुओ के बारे में हमें जानकारी विज्ञापन द्वारा प्राप्त होती है। आजकल अखबार, टी.वी, पर्चे, कार्ड, पोस्टर आदि के माध्यम से विज्ञापन व प्रचार-प्रसार किए जाने है, जिससे ग्राहको को नए छुट ऑफर व दुकान संबंधी जानकारियां प्राप्त होती है।

3. प्रतिस्पर्धा का सामना - वर्तमान परिपेक्ष के अनुसार बाजार में प्रतिस्पर्धा बहुत बड़ी मात्रा में विद्यमान है, ऐसे में व्यवसायी को ऐसी नियोजन नीति अपनानी चाहिए, जिससे वह बाजार में प्रतिस्पर्धा का पूर्ण रूप से सामना कर सके।

4. स्टॉक व्यवस्था- व्यवसायी के समक्ष यह समस्या भी आती है कि ग्राहको को रूची व आवश्यकतानुसार स्टॉक में वस्तुएं उपलब्ध नही होती ऐसी स्थिति में व्यवसायियो को अधिकतर मात्रा में स्टॉक रखना चाहिए जिससे वह अपने ग्राहको के इच्छा को संतुष्टि प्रदान कर सके।

5. मितव्यतापूर्ण व्यवहार- एक व्यवसायी द्वारा अपने व्यवसाय को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने ग्राहको तथा कर्मचारियों के साथ मितव्ययितापूर्ण व विनम्र भाव के साथ व्यवहार करे।

6. दुकानों की साज-सजावट- ग्राहक वही ज्यादा जाना पसंद करते है जहां दूर से देखने में ही दुकान आकर्षित लगे। इसके लिए बाहरो में बड़े-बड़े नेमप्लेट के साथ उस व्यवसाय से संबंधित जानकारी बाहर बोर्ड पर लगाना चाहिए।

7. ग्राहको को माल वापसी सुविधा- अक्सर दुकानों के बाहर यह लिख दिया जाता है कि बिका हुआ माल वापस नहीं हो सकता ऐसे में ग्राहक यदि गलती से दूसरा सामान ले जाते है तो उसे वापस लेने हेतु सुविधा देनी चाहिए तथा उसके बदले दूसरा सामान खरीदने की सुविधा प्रदान करना चाहिए इससे ग्राहक का व्यवसायी के प्रति विश्वास बना रहता हैं।

चंडीमाता चौक में संचालित बैग व्यवसाय के लिए भावी संभावनाएं - वर्त्तमान परिवेक्ष को ध्यान में रखते हुए बैग व्यवसाय के सर्वेक्षण द्वारा इस व्यवसाय के भावी विकास की निम्न संभावनाएं देखने को मिलती है-

1. उपभोक्ता के आवश्यकतानुसार रूचि पर विशेष ध्यान दिया जाता है तथा माल शुद्ध व पर्याप्त मात्रा में रखकर अच्छा लाभ प्राप्त किया जा सकता है।
2. इन व्यवसायों के द्वारा रोजगार के विभिन्न अवसरों के सहजन की संभावनाएं प्राप्त होती है।
3. बदलते फैशन के क्षेत्र में तथा समय को ध्यान में रखते हुए भावी मांग में होने वाली कमी व वृद्धि का अनुमान लगाकर व्यवसाय के लिए उचित रणनीति तैयार की जानी चाहिए।

निष्कर्ष - इस व्सवसाय का सर्वेक्षण करने से यह जानकारी होती है कि यह एक सफल बैग व्यवसाय के संचालन के लिए ग्राहको की रूचि, ग्राहको की आवश्यकता, ग्राहको की संतुष्टि एवं व्यावसायियों का ग्राहक के प्रति मधुर संबंध आदि तत्व व्यवसाय को लाभप्रद व सफल बनाते है।

यह सर्वेक्षण इस तथ्य पर आधारित है कि पूर्व में अध्ययन की गई प्रकल्पनाओं की सहायता की जांच हुई अथवा नहीं सर्वेक्षण से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर आधारित है।

करगीरोड में बैग व्यवसाय के सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त जानकारियों द्वारा समय के साथ-साथ बदलाव एवं रूची में काफी परिवर्तन आया है तथा इसके अनुरूप व्यवसायी ग्राहको को वस्तुएं उपलब्ध करा कर ख्याति व लाभ प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि करगीरोड (कोटा) मे इस व्यवसाय के विकास की पर्याप्त संभावनाएं है तथा यह व्यवसाय रोजगार की दृष्टि से लाभप्रद सिद्ध हुआ है तथा इस क्षेत्र में बैग व्यवसाय का भविष्य उज्जवल है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **Mahapatra, A. and C.P. Mitchell (1997)** : "Sustainable development of non-timber forest products: Implication for forest management in India", in Forest Ecology and Management, Vol. 94 (1-3), Pg. 15-29, June 30, 1997.
2. **Ojha, H. and B. Bhattarai (2003) :** "Learning to manage a complex resource: a case of NTFP assessment in Nepal", in *International Forestry Review*, Vol. 5(2), Pg. 118-127
3. **Pattanayak, S. K., E. O'Sills (2001):** "Do tropical forests provide natural insurance? The microeconomics of non-timber forest products collection in the Brazilian Amazon", Land Economics, Vol. 77, No. 4, Pg. 596-612
4. **Tewari, D. D. and J. Y. Cambell (1996):** "Increased development of non-timber forest products in India: some issues and concerns", Unasylva 187, Vol. 47, pp 26-31.
5. **गौतम, राजेन्द्र सिंह एवं शर्मा, दीपक (2003)** : लाइवलीहुड प्रमोशन थ्रू नॉन टिंबर फॉरेस्ट प्रोडक्ट: केस ऑफ छत्तीसगढ़ स्टेट।
6. **शुक्ला, डॉ. शान्ता :** छत्तीसगढ़ का सामाजिक आर्थिक विकास : **नेशनल पब्लिकेशन दिल्ली**
7. **भगवान सिंह वर्मा:** छत्तीसगढ़ का इतिहास म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
8. **राठोर जाडिया :** आर्थिक विकास एवं नियोजन, **सूर्या पब्लिकेशन**
9. wwww.dmgfpfed.org
10. http://cgmfpfed.org/hi/NWFP%20Mart.php
11. https://www.mygov.in

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

संगीत के पर्याय तानसेन

डॉ. शुक्ला ओझा *

प्रस्तावना – मानव जीवन में संगीत का अहम स्थान सदा ही रहा है। संगीत के स्वर विश्वव्यापी हैं। संगीत संस्कृति का मापदण्ड है। प्राचीन काल से ही ग्वालियर भारत वर्ष की संगीत कला एवं ज्ञान का केन्द्र रहा है।[1] इस संगीत की नगरी ने संसार को अनेक बेशकीमती रत्न प्रदान किये हैं जिनमें एक सर्वोत्कृष्ट अनमोल हीरा तानसेन है जिसका मूल्य असंख्य कोहिनूर से भी बढ़कर है। उसे संगीत का पर्याय कहे या संगीत को उसका पर्याय। लोग कहते हैं कि वो पैदा ही संगीत के लिये हुआ था। शायद खुद संगीत भी उसकी साधना से निखरने-संवरने के लिये उतरा होगा इस नीरस धरती पर। तानसेन .... इस नाम के साथ ही कल्पनाओं में जाग पड़ते हैं सुर और साधना के असंख्य दीप। शायद ये तानसेन की सुर साधना का ही असर है कि यह नाम लेते ही सुरों की झंकार बहती मालूम होती है हवाओं में। बेजान दीवारें भी गुनगुनाती सी लगती हैं। मन के भीतर बिखर जाता है, अनायास ही संगीत का सावन।[2]

अनुश्रुतियों के अनुसार तानसेन का मूल नाम त्रिलोचन था जो संक्षिप्तीकरण के बाद तन्नू या तन्ना हो गया। कालान्तर में तान या संगीत में प्रवीण होने के उपरांत जब तोमर राजसभा में उन्होंने अपनी कला एवं ज्ञान को प्रदर्शित किया, उसी समय उन्हें तानसेन नाम का संबोधन प्राप्त हुआ। मान राजा के उल्लेख वाले पद में उनका उल्लेख तानसेन के नाम से ही दिया गया है। यद्यपि फारसी भाषा के कुछ इतिहास ग्रंथों के विवरणानुसार विक्रमादित्य तोमर ने उन्हे 'तानसेन' की उपाधि दी थी तथापि उन्होंने स्वयं को तानसेन कहना ही उचित समझा क्योंकि सिंह की तान रंजक न होकर भयावह होती है। डॉ. हरिहर निवास द्विवेदी का मत है कि राजा मानसिंह की संगीत सभा में ध्वनि साध्य एवं गुण के आधार पर उनका नाम तानसेन कर दिया गया।[3] इनके पिता का नाम मकरन्द एवं माता का नाम कमला था।[4] इनका जन्म ग्वालियर में हुआ तथा शैशव ग्वालियर से 28 किमी. दूरी पर स्थित ग्राम बेहट में बीता तथा यही इनकी प्रारंभिक अभ्यास स्थली बना जहाँ इन्होंने अपने पिता एवं गुरू मकरन्द से संगीत एवं पद रचना की शिक्षा प्राप्त की। ऐसा माना जाता है कि उन्होंने प्रारंभिक शिक्षा अपने पिता मकरन्द से तथा उच्च शिक्षा स्वामी हरिदास से प्राप्त की थी।[5] किन्तु डॉ. द्विवेदी इससे पूर्णत: सहमत नहीं है। उनके मतानुसार उन्होने ग्वालियर से ध्रुपद गायन में पूर्णता प्राप्त की थी एवं वे बैजू के शिष्य एवं तानसेन के गुरू भाई थे।[6]

ऐसा बृहस्पति का मानना है जिसका उल्लेख उन्होंने अपने ग्रंथ में किया कि स्वामी हरिदास उन्हें गुरू के रूप में सर्वमान्य है। तानसेन से संबंधित यह तथ्य सर्वमान्य में बहुतायत से प्रचलित है कि बेहट का शिव मन्दिर, जहाँ वे राजाभ्यास किया करते थे, वह उनके गायन के प्रभाव से एक ओर झुककर टेढ़ा हो गया था।[7] जो आज भी उसी रूप में उपस्थित है तथा प्रतिवर्ष ग्वालियर में सम्पन्न होने वाले तानसेन समारोह की अन्तिम सभा यही सम्पन्न होती है।

तानसेन ने उस समय के अनेक विख्यात राजदरबारों में अपनी कला एवं योग्यता के आधार पर सम्मान प्राप्त किया। जिनमें ग्वालियर के तोमर राजवंश के संगीत प्रेमी शासक राजा मानसिंह, राजा विक्रमादित्य सिंह, रीवा के राजा रामचन्द्र एवं मुगल सम्राट अकबर विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उत्तर भारत में संगीत के विकास के इतिहास में ग्वालियर नरेश राजा मानसिंह तोमर का शासनकाल (1486 से 1516 ई.) अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। इस घराने में संगीत की ध्रुपद नामक एक नवीन शैली की आधारशिला रखी जिसे तानसेन का जादूभरा स्पर्श पाकर बड़ी लोकप्रियता प्राप्त हुयी।[8] बहुत छोटी उम्र में राजा मानसिंह के दरबार में आने के पश्चात इन्होंने वहीं संगीत साधना की तथा उन्होंने राजा मानसिंह पर भी कुछ पद अपनी रागमाला में लिखे[9] जैसे-'छत्रपति राजा मान चिरंजीव रहो जौलों ध्रुव-मेरू-तारौ।' उनके प्रारंभिक पदों पर बख्शू का अत्यधिक प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। डॉ. द्विवेदी का मत है कि राजा मान की रंगशाला में उन पर सर्वाधिक प्रभाव तानतरंग का था जिनके नाम पर ही उन्होंने अपने पुत्र का नाम तानतरंग रखा था।'[10] यहाँ रहते हुये उनका सम्पर्क बख्शू, तानतरंग, गोपाललाल, बैजू, महमूद लोहंग, चर्चू इत्यादि[11] उनके उत्तराधिकारी विक्रमादित्य तोमर को मानसिंह की समृद्ध रंगशाला भी विरासत में प्राप्त हुयी जो तानसेन एवं अन्य संगीतज्ञों के साथ शोभायमान थी।[12]

पानीपत के प्रथम युद्ध (1526 ई.) में राजा विक्रमादित्य की पराजय के उपरान्त तानसेन ग्वालियर में ही बने रहे। बाबर के काल में ग्वालियर में शेख मोहम्मद गौस का प्रभामण्डल अत्यधिक विकसित दिखाई देता है। यहाँ का हाकिम अबुल फतह जो शेख गूरान के नाम से भी प्रसिद्ध था वह भी कुशल संगीतज्ञ था। इस समय तानसेन का इन दोनों से सम्पर्क बना रहा। 1540 ई. में शेरशाह सूरी के हाथों हुमायूँ की पराजय के साथ सूर वंश का शासन प्रारंभ हुआ। शेरशाह का उत्तराधिकारी इस्लामशाह अच्छा संगीतज्ञ तथा ध्रुपद गायन शैली का प्रेमी था उसके लिये कुछ ध्रुपद भी मिलते हैं। इसी प्रकार अगला शासक मुहम्मद आदिल शाह प्रवीण संगीतज्ञ था एवं उसके लिखे ध्रुपद भी मिलते हैं। वह संगीत जगत में 'अदली' के नाम से जाना जाता था। मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूंनी के अनुसार तानसेन और बयाजीद (बाज बहादुर) दोनों आदिल को अपना गुरू मानते थे।[13] आदिल तानसेन का गुरू तो नहीं था परन्तु उसके साथ तानसेन का सम्पर्क था। अगले सूरवंशी शासक इब्राहीम ने तानसेन को आगरा बुलाने का बहुत प्रयास किया, किन्तु उन्होंने अस्वीकार कर दिया। ग्वालियर में तानसेन शेख मोहम्मद गौस के शिष्य बने, ऐसा विवरण मुहम्मद करम इमाम ने सर्वप्रथम अपने ग्रंथ 'मअदन्-उल-मौसीकी' में दिया है। तानसेन के

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (इतिहास) डॉ0 भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

व्यक्तित्व पर उनका भी गहन प्रभाव पड़ा। सूर शासकों की संगत में आदिलशाह के दरबार में तानसेन ने खुसरों पद्धति ग्वालियर के तत्कालीन सूबेदार असकरण से ध्रुपद शैली तथा विष्णुपद शैली का ज्ञान प्राप्त कर लिया था।[14] इस प्रकार तानसेन को राजरागिनी का प्रारंभिक ज्ञान उनके पिता मकरन्द पाण्डे ने दिया था।[15] उसका विकास के सतत रूप से अपने सम्पर्क में आये संगीतज्ञों से मिलने वाले ज्ञान से करते रहे और अन्ततः ज्ञान एवं सम्मान के उस सर्वोच्च स्तर तक पहुँचे जहाँ रीवा नरेश रामचंद बघेल की राजसभा में पण्डित माधव ने अपने ग्रंथ वीरभानूदय में तानसेन की प्रशंसा में लिखा कि 'तानसेन के समान गायन में न तो पूर्व में कोई गायक हुआ, ना ही भविष्य में होगा और न ही वर्तमान में है।' उनका यह स्थान भारतीय संगीत की अमूल्य धरोहर है। तानसेन ने गोपाचल की वंदना में भी एक ध्रुपद की रचना की थी।[16]

रीवा के बघेला नरेश रामचंद बघेला स्वयं ध्रुपद गायन शैली के मर्मज्ञ थे तथा उनके दरबार में संगीत क्षेत्र की श्रेष्ठ मणियाँ उपस्थित थीं। तानसेन उनके पास 1557-58 में पहुँचे। उनसे संबंधित तानसेन के सात-आठ पद ही उपलब्ध हैं, उन्हीं के आधार पर यह ज्ञात होता है कि वहाँ तानसेन के द्वारा गाये गये प्रथम पद 'गये मेरे सब दुख, देखे हैं आप दरस' ने ही उन्हें अपार प्रसिद्धि प्रदान की। बदायूंनी लिखते हैं कि राजा रामचन्द्र ने उन्हें एक करोड़ स्वर्ण मुद्राये पुरूस्कार में दीं। तानसेन ने एक पद में राजा रामचन्द्र को राजन प्रथम एवं स्वंय को तानसेन प्रथम भी कहा है। रीवा में भी उन्हें वैसा ही सम्मान प्राप्त हुआ जैसा ग्वालियर नरेश महाराजा मानसिंह तोमर ने रंगशाला के प्रतिष्ठित संगीतज्ञों को प्रदान किया था। तानसेन की कीर्ति सुनकर मुगल सम्राट अकबर ने अपने सेनापति जलाल खां कुर्ची को भेजकर तानसेन को मुगल दरबार में बुला लिया। राजा रामचंद्र को परिस्थितिवश शाही फरमान का पालन करना पड़ा एवं उन्होंने मुगल सम्राट के लिये विशिष्ट उपहारों के साथ तानसेन को समुचित वाद्ययंत्रों एवं बहुमूल्य पुरस्कारों के साथ भेज दिया।[17]

मुगलकालीन प्रसिद्ध इहिसकार अबुल फजल लिखते हैं कि अकबर के दरबार में हिन्दू, ईरानी, तूरानी, कश्मीरी स्त्री-पुरूष गायक थे जिने सात विभागों में बाँटा गया था, सप्ताह में प्रतिदिन एक विभाग दरबार में अपना गायन प्रस्तुत करता था।[18] सन 1562 में तानसेन मुगल दरबार में पहुँचे। उनके विनम्र एवं सरल स्वभाव के कारण सम्राट ने उन्हें संगीत विभाग का प्रधान बना दिया। अबुल फजल के अनुसार वे उस समय के ग्वालियर के कलावन्तों में सर्वश्रेष्ठ थे। इस समय तक तानसेन प्रौढ़ अवस्था प्राप्त कर चुके थे तथा उनमें विरक्त भाव भी बढ़ता जा रहा था। मुगल दरबार में उनके प्रथम पद के गायन पर अकबर ने उन्हें दो करोड़ दाम (जिनका मूल्य दो लाख रूपये के बराबर था) उपहार में दिये।[19] अकबर के दरबार में तानसेन सत्ताइस वर्षो तक रहे। अकबर ने अपने दरबार में अलग-अलग कार्यक्षेत्रों के सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों को 'नवरत्न' में सम्मिलित किया था जिनमें बीरबल, मानसिंह, टोडरमल, हकीम हुमाम, मुल्ला दो प्याजा, मलिकुशरा फैजी, अबुल फजल व अब्दुल रहीम खानखाना के साथ नवरत्न मणिमाला के नवम अर्थात् सुमेरू संगीत सम्राट तानसेन थे।[20] इसी प्रकार अबुल फजल ने आइने अकबरी में अकबर के दरबार के छत्तीस प्रमुख संगीतज्ञों का विवरण दिया है जो अकबर की छत्तीसी कहलाती थी। इसमें प्रथम क्रम पर तानसेन का नाम अंकित करते हुये अबुल फजल लिखते हैं- 'मिया तानसेन, ग्वालियर निवासी जिनके समान अन्य कोई गायक भारत में पिछले एक हजार वर्ष से नहीं हुआ।' सम्राट अकबर ने उन्हें कंठाभरणवाणी विलास की उपाधि प्रदान की थी। तानसेन की योग्यता के जितने ऐतिहासिक प्रमाण मिलते हैं उससे कहीं अधिक जनश्रुतियों में तानसेन जीवित हैं। बाल्यावस्था में गूंगे तानसेन के मुख से स्वरहरी निकलने, उनके गायन से बेहट का मंदिर तिरछा होने, भक्त कवि सूरदास से उनकी भेंट, उनके द्वारा दीपक राग का गायन एवं गायन से उत्पन्न जलन को एक धोबिन द्वारा मेघ मल्हार गाकर जलन शान्त करना जैसी अनेक किवदंतियाँ उनके बारे में प्रसिद्ध हैं।

तानसेन ध्रुपद गायन में सर्वश्रेष्ठ थे। उन्होंने कुछ पुराने रागों में परिवर्तन कर नवीन रागनियों को जन्म दिया। उन्होंने ही सर्वप्रथम राग मल्हार में कोमल गांधार और निषाद के दोनों रूपों का प्रयोग किया। उन्होंने तानसेन की 'मिया की तोड़ी' का भी अविष्कार किया। दीपक राग एवं तानसेन तो एक दूसरे के पर्याय बन चुके थे। संगीत के क्षेत्र में इतनी ऊँचाई प्राप्त करने वाले तानसेन की एक और विशेषता यह थी कि उन्होंने पुत्रों के साथ-साथ अपनी पुत्री सरस्वती को भी संगीत कला में सिद्धहस्त बनाया। उनके तीनों पुत्रों तानतरंग, विलास एवं सूरतसेन ने भी तानसेन की संगीत परम्परा को आगे बढ़ाने में भरपूर योगदान दिया। तानसेन जिनके बारे में यह मान्यता प्रचलित है कि वे अपनी गायन कला से मस्त हाथियों एवं जंगली जीवों को अपने वश में कर लेते थे।[21] उनके उत्तराधिकारियों का यह योगदान प्रशंसनीय है। तानसेन के व्यक्तित्व की एक अन्य विशेषता यह भी है कि वे जितने महान संगीतकार थे उतने ही सफल रचनाकार भी थे। जहांगीरकालीन ग्रंथ इकबालनामा में यह उल्लेख है कि तानसेन के दो हजार से अधिक पद प्रचलित थे। शाहजहाँ के काल के दो हजार से अधिक पद प्रचलित थे। शाहजहाँ के काल में बख्शू के पदों का संग्रह करने वाले अजम खां ने भी यही बात दोहराई है किन्तु वर्तमान में उनके मात्र 400 पद ही उपलब्ध हैं जिसमें उनके व्यक्तित्व की छाप स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती है। उनके समस्त पद विषम है।[22] इन पदों में संगीत विधान दर्शाया गया है। वे मूर्च्छना पद्धति के भी पंडित थे और मुकाम पद्धति के भी।[23] जगन्नाथ कविराय ने तानसेन को जगत गुरू कहा है। उनके द्वारा ध्रुपद लिखकर तानसेन को दिखाने के उल्लेख प्राप्त होते हैं।[24] तानसेन ने स्वयं अपने आप को कवि कहा है और दुर्गा भवानी से कवित्व का वरदान मांगा है। जहांगीर ने भी उनके कवि रूप की प्रशंसा अपनी आत्मकथा में की है। जहांगीर के शब्दों में 'मेरे पिता की सेवा में जो कवि थे, उनमें तानसेन अत्यंत प्रमुख था, जिसकी समझ का अन्य कोई नहीं था।'[25]

बढ़ती आयु के साथ तानसेन का ध्यान प्रभुवंदन में केन्द्रित होने लगा था। अप्रैल 1589 को उनकी मृत्यु हो गयी। सम्राट अकबर के आदेशानुसार उनकी अंतिम यात्रा में समस्त गायक एवं वादक विवाहोत्सव जैसा मधुर गीत गाते हुये सम्मिलित हुये। इस प्रकार का सम्मान पहुँचे हुये सन्तों को दिया जाता है, तानसेन भी उनसे किसी प्रकार कम न थे। अकबर ने कहा कि तानसेन की मृत्यु ने मधुर तान को मौन कर दिया। उनकी अंतिम इच्छा के अनुरूप तानसेन का अंतिम संस्कार ग्वालियर में मोहम्मद गौस के मकबरे के पास किया गया। डॉ. द्विवेदी के शब्दों में 'ग्वालियर की गोद का अमूल्य रत्न खो गया, ग्वालियर की तान निस्वर हो गयी, भारत के संगीत सूर्य का अवसान हो गया।' बचपन से हिन्दू रीति-रिवाज युक्त वातावरण में पले तानसेन पर जीवन के उत्तरार्द्ध में सूफी सन्त शेख सलीम चिश्ती, मोहम्मद गौस के सानिध्य से गहन सूफियान प्रभाव पड़ा। उनके इस सांस्कृतिक सौहार्द्र युक्त व्यक्तित्व का उनकी याद एवं सम्मान में ग्वालियर में प्रतिवर्ष आयोजित होने वाले तानसेन समारोह पर स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है। सन् 1924 से प्रतिवर्ष दिसम्बर में आयोजित होने वाले इस तानसेन समारोह का प्रारंभ मराठा संत ढोलीबुआ महाराज की हरिकथा एवं मौलाद से होता है।

चार दिवसीय इस समारोह की अन्तिम सभा तानसेन की साधाना स्थली बेहट में सम्पन्न होती है तथा प्रतिवर्ष एक प्रतिष्ठित संगीत साधक को 'तानसेन सम्मान' प्रदान किया जाता है। यही कारण है कि तानसेन आज भी जीवंत हैं। उनका नाम भारतीय शास्त्रीय संगीत में ही नहीं अपितु विश्व संगीत के आकाश में एक दैदीप्यमान नक्षत्र की भांति सदैव जगमगाता रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. करकरे, ईश्वरचंद्र – ग्वालियर गौरव, पृष्ठ क्रमांक–29
2. पाठक, दिनेश – आलेख – धरा मेरू सब डोलिहैं तानसेन की तान– अहा जिंदगी दिसम्बर 2012, पृष्ठ क्र. 114
3. द्विवेदी, हरिहर निवास– तानसेन, पृष्ठ क्र. 02
4. रागमाला की हस्तलिखित प्रति – बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी में नस्ती (1) पृष्ठ 10, पत्रक 181
5. मजपुरिया संजय – ग्वालियर का इतिहास और उसके दर्शनीय स्थल, पृष्ठ क्रमांक–21
6. कैलाशचन्द्र वृहस्पति –मुसलमान एवं भारतीय संगीत , पृष्ठ क्र. 103
7. भारतीय गजेटियर मध्यप्रदेश, ग्वालियर , पृष्ठ क्र. 455
8. भारतीय गजेटियर मध्यप्रदेश, ग्वालियर, पृष्ठ क्र. 379
9. व्यास कृष्णानंद देव– संगीत रागकल्प द्रुम– भाग 2, पृष्ठ क्र. 321
10. द्विवेदी हरिहर निवास– तानसेन, पृष्ठ क्र. 11
11. वृहस्पति, कैलाशचन्द्र – ध्रुवपद और उसका विकास, पृष्ठ क्र. 197
12. द्विवेदी, हरिहर निवास – ग्वालियर के तोमर, पृष्ठ क्र. 130
13. मुल्ला अब्दुल कादिर बदायूंनी– मुन्तखबुत्तवारीख, भाग 1, पृष्ठ क्र. 257
14. श्रीवास्तव, मीना– आलेख ग्वालियर का नायाब नक्षत्र, संगीत सम्राट तानसेन, जर्नल ऑफ एशिया फॉर डेमोक्रेसी एण्ड डबलपमेंट, पृष्ठ क्र. 87
15. गौरी, गुलाब खां – ग्वालियर का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ क्र. 190
16. चतुर्वेदी, सुलोचना– खुसरो–तानसेन, पृष्ठ क्रमांक 129
17. अबुल फजल, अकबरनामा – बेवरिज कृत अंग्रेजी अनुवाद भाग 2, पृष्ठ क्रमांक 280
18 अबुल फजल, आइन–ए–अकबरी– बेवरिज कृत अनुवाद पृष्ठ क्र. 681
19. इकबालनामा जहांगीरी– बेवरिज कृत अनुवाद पृष्ठ क्र. 289
20. द्विवेदी – हरिहरनिवास – तानसेन, पृष्ठ क्रमांक 53
21. बांगरे अरूण – ग्वालियर की संगीत परम्परा, पृष्ठ क्र. 184
22. वर्मा, प्रेमलता– सहसरस– पृष्ठ क्र. 133
23. कैलाशचन्द्र वृहस्पति एवं सुमित्रा कुमारी – संगीत चिंतामणि, पृष्ठ क्रमांक 373
24. द्विवेदी, हरिहर निवास – मानसिंह और मान कुतुहल, पृष्ठ क्र. 135
25. जहांगीर– तुजुके जहांगीर – रोजर्स अनुवाद, पृष्ठ क्र. 413

****

अंग्रेजी दुर्भावना के शिकार भारतीय हस्तशिल्प उद्योग

डॉ. प्रवीण ओझा*

प्रस्तावना – भारत में अंग्रेजी शासन की स्थापना के समय एवं उसके प्रारंभिक वर्षो में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण लक्ष्य ग्राम स्वावलम्बन था। ग्रामीण समुदाय की यह आर्थिक स्थिति आत्मनिर्भर कृषि एवं हस्तशिल्प उद्योगों पर आधारित थी। इन कुटीर उद्योगों का मूल आधार स्थानीय श्रम एवं साधानों से उत्पादित सामान का स्थानीय उपयोग था। ए.आर. देसाई के मतानुसार– 'गृहशिल्प एवं कृषि के सहज सरल संयोजन एवं तदजन्य अर्थतंत्र के कारण गाँव अपना सन्तुलन सुरक्षित रख सकता था।' मोरलैण्ड के अनुसार– 'भारत के उद्योग पश्चिमी यूरोप के देशों की तुलना में अधिक विकसित थे।' पौलासरात टेरी, बर्नियर जैसे विदेशी यात्रियों के विवरण इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि मुगलकाल में भारत विश्व का औद्योगिक केन्द्र माना जाता था। बर्नियर के अनुसार – 'भारतवर्ष को छोड़कर और कोई भी ऐसा देश नहीं था जहां पर इतनी विभिन्न प्रकार की वस्तुऐं पायी जाती थीं। इसे मुगल राज्य का ही नहीं वरन् पड़ौसी राज्यों का तथा यूरोप का भी गोदाम कहा जाता था।' अंग्रेजी शासन में उनके औपनिवेशिक हितों को ध्यान में रखकर इन हस्तशिल्प उद्योगों के संबंध में जिन नीतियों का अवलम्बन किया उन्होंने ग्रामीण क्षेत्र में कृषि एवं इन उद्योगों के मध्य स्थापित प्राचीन सन्तुलन को तोड़ दिया। साथ ही ग्रामीण अर्थव्यवस्था के आत्मनिर्भर स्वरूप का अन्त कर उसे औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का रूप प्रदान कर दिया। एक ओर कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की आधार स्तंभ थी तो दूसरी ओर हस्तशिल्प पर आधारित इन कुटीर उद्योगों पर अर्थव्यवस्था का एक बड़ा भाग आधारित था। ये न केवल स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे वरन् विदेशों को निर्यात करने हेतु उत्कृष्ट कलात्मक वस्तुओं का निर्माण भी करते थे। जैसे– ढाका का मलमल जगत प्रसिद्ध था और लन्दन और पेरिस के दरबारों में इसकी बहुत माँग थी।

डॉ. राधाकमल मुखर्जी के अनुसार इन उद्योगों को चार वर्गो में वर्गीकृत किया जा सकता है प्रथम कृषकों की शिल्पकला पर आधारित उद्योगों जैसे– सूत कातना, कपड़ा बुनना, गुड, डलिया बनाना इत्यादि। ये काम कृषक कृषि कार्य से बचे हुए समय में करते थे तथा ये उद्योग उन्हें प्रच्छन्न बेरोजगारी से बचाते थे। द्वितीय वे स्वतंत्र शिल्पकार थे जो बढ़ई, कुम्हार, लोहार के रूप में उत्पादन कार्य में रत थे। तृतीय श्रेणी उच्च शिल्पकारों द्वारा संचालित उद्योगों की थी जिनके उत्पादनों की विशेष मांग पर निर्यात होता था जैसे– रेशमी वस्त्र, कालीन, धातु उद्योग इत्यादि। चतुर्थ श्रेणी में नगरों के कुटीर उद्योग आते थे जो देश के विविध भागों एवं विदेशों की माँग की पूर्ति हेतु उच्च कोटि का उत्पादन करते थे जैसे– ढाका की मलमल, कश्मीर के ऊनी शॉल, हाथीदांत का कलात्मक कार्य, बहूमूल्य आभूषण उद्योग इत्यादि।

अंग्रेजों के आगमन से पहले भारतीय अर्थव्यवस्था दो प्रमुख स्त्रोतों – कृषि और ग्रामोद्योगों पर आधारित थी। कृषि का महत्व अधिक था यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार स्तंभ थी, परन्तु अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण हिस्सा कुटीर और ग्रामोद्योगों पर निर्भर था जो सन्तुलित एवं आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था का निर्माण करते थे। उस समय भारत में कुटीर उद्योग इतने अधिक विकसित थे कि उन्हें देखकर अंग्रेज भी विस्मित रह गये थे। औद्योगिक कमीशन 1918 ने अपनी रिपोर्ट में लिखा था कि 'इस देश का औद्योगिक विकास यदि यूरोप से अधिक उन्नत देशों की तुलना में श्रेष्ठ नहीं तो घटिया भी नहीं था। औद्योगिक कमीशन के प्रतिवेदन की भाषा साम्राज्यवादी थी क्योंकि वे अपने अधीनस्थ देश की स्पष्ट शब्दों में प्रशंसा करना नहीं चाहते थे किन्तु यह प्रतिवेदन कुटीर उद्योगों की सफल स्थिति को इंगित करता है। भारतीय वस्तुओं की मांग यूरोपीय बाजारों में अत्यधिक होने के कारण यूरोप के व्यापारी भारत से व्यापार हेतु आकर्षित हुये क्योंकि यह उनके लिये बहुत लाभपूर्ण था। अंग्रेज व्यापारी भारतीय व्यापार पर एकाधिकार स्थापित करना चाहते थे जिसके लिये उन्होंने समस्त नैतिक एवं अनैतिक साधनों का प्रयोग करने से कोई परहेज नहीं किया। उनका एकमात्र उद्देश्य अधिकाधिक धन कमाना था। उनकी इस धनलोलुपता की नीति का भारतीय कुटीर उद्योगों पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ा। सन् 1757 में प्लासी का युद्ध जीतने के पश्चात प्राप्त राजनीतिक सत्ता एवं अधिकारों का प्रयोग उन्होंने इंग्लैण्ड के व्यापारिक एवं औद्योगिक लाभ हेतु किया। ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के व्यापारिक हितों के समक्ष भारतीय हित गौण या नगण्य हो गये। इनका भारतीय कुटीर उद्योगों पर विपरीत प्रभाव पड़ा। कुटीर उद्योगों के विनाश की कहानी वस्त्रोद्योग से प्रारंभ होती है। कालान्तर में इसका दुष्प्रभाव सभी उद्योगों पर पड़ा एवं वे नष्ट होते चले गये। चौपड़ा एवं दास के अनुसार – 'इस प्रकार की स्थिर एवं शान्त आर्थिक स्थिति में अंग्रेज अपनी साम्राज्यवादी शोषण की प्रणाली लाये जिसने धीरे–धीरे भारत की आर्थिक स्थिरता नष्ट कर दी।'

अंग्रेजों के आगमन के पूर्व बुनकरों (जुलाहों) को कपास खरीदने से लेकर उसे बनाकर मण्डियों में बेचने तक की सम्पूर्ण प्रक्रिया में स्वतंत्रता प्राप्त थी। कम्पनी शासन में बुनकरों को नियमों एवं कानूनों के आर्थिक जाल में जकड़ना शुरू किया गया एवं धीरे–धीरे बुना हुआ कपड़ा खरीदने की प्रक्रिया पर कम्पनी का एकाधिकार स्थापित कर दिया गया। गुमाश्ते एवं जांचदार बुनकरों के लिये अत्याचारी बनकर आये तथा वे उनसे बलपूर्वक अनुबंध पत्र पर हस्ताक्षर करवाने लगे। अब बुनकरों की स्थिति गुलामों के सदृश्य हो गयी। कम्पनी ने सुनियोजित तरीके से हथकरघा उद्योगो को नष्ट किया तथा बुनकर बेरोजगार होकर काम की खोज में अन्यत्र जाने पर विवश हुए। डॉ. आर. गाडगिल के अनुसार– 'पुराने हस्तशिल्पों का ह्ास भारत के आर्थिक संक्रमण की सर्वाधिक नाटकीय घटना है। इनका वस्तुत: बड़ा आकस्मिक और सर्वग्राही विध्वसं हुआ।' इसका प्रत्यक्ष कुप्रभाव भारतीय कृषि पर दृष्टिगोचर होता है। आर.पी. दत्त के शब्दों में – 'लाखों, करोड़ों

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) बी.एल.पी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत

बर्बाद कारीगरों, जुलाहों, सूत कातने वालों, कुम्हारों, चर्मकारों, लोहा गलाने वालों, बढ़इयों आदि के पास, चाहे वे शहर के हो या देहात के, सिवाय इसके कोई चारा न था कि वे कृषि पर निर्भर लोगों की तादाद बढ़ायें। भारत में पहले कृषि और उद्योगों को समन्वित रूप विद्यमान था, लेकिन अब वह ब्रिटिश पूंजीवाद का (कृषि प्रधान) उपनिवेश मात्र रह गया। इस प्रतिकूल प्रभाव कृषि उत्पादन पर भी पड़ा। 'सोने की चिड़िया' नाम से अलंकृत देश की गणना अन्तत: गरीब देशों की श्रेणी में होने लगी। अब भारत के विदेशी व्यापार का स्वरूप ही बदल गया। अभी तक भारत जो उच्च कोटि के माल का निर्यातक एवं उसके मूल्य के रूप में प्राप्त सोने, चांदी का आयातक देश था अब वह कच्चे माल का निर्यातक एवं इंग्लैण्ड में निर्मित वस्तुओं का आयातक बना दिया गया। शोषण का यह क्रम 18वी शताब्दी के पूर्वाद्ध से लेकर 19वी शताब्दी तक अनवरत कायम रहा।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के समीक्षक विलियम वोल्ट्स ने 1762 में लिखा – 'आजकल देश का आन्तरिक व्यापार जिस ढंग से चल रहा है, वह सारा का सारा व्यापार और एक खास मात्रा में इस देश द्वारा यूरोप के लिये दिया गया निवेश, वास्तव में अनवरत दमन का दृश्य प्रस्तुत करता है। देश के प्रत्येक बुनकर एवं वस्तु निर्माता ने इसके कठोर घातक प्रभावों को अनुभव किया है। प्रत्येक वस्तु के उत्पादन को एकाधिकार का रूप दे दिया गया है, जिसमें अंग्रेज बनियों एवं काले गुमाश्तों के साथ मिलकर, मनमाने ढंग से यह फैसला कर लिया जाता है कि प्रत्येक वस्तु निर्माता कितनी-कितनी मात्रा में माल देगा और उसके बदले में कितनी कीमत वसूल करेगा।'

18वी शताब्दी में इंग्लैण्ड की संसद ने अनेक कानून पारित कर भारतीय वस्त्र के उपयोग एवं आयात पर प्रतिबंध लगा दिया। 1700 ई0 में सर्वप्रथम रंगे एवं छपे हुये भारतीय वस्त्रों पर प्रतिबंध लगाया गया। इस प्रतिबंध के बाद भी इंग्लैण्ड में भारतीय वस्त्र की खपत कम न होने पर उस पर 15 प्रतिशत आयात कर लगा दिया गया। सन् 1920 में एक कानून द्वारा भारत में बने अच्छे किस्म के सूती व रेशमी कपड़ों के आयात पर प्रतिबंध लगा दिया गया। 1700 ई. से 1721 ई. का काल विभिन्न आदेशों द्वारा रंगे व छपे हुये भारतीय सूती वस्त्रों को इंग्लैंण्ड में पहुँचने से रोका गया। यहाँ तक कि उन पर 70 प्रतिशत से 80 प्रतिशत तक चुंगी भी लगा दी गयी जिससे वह ब्रिटिश माल का मुकाबला ही न कर सके। रमेश चन्द्र वरमानी के लेख 'भारत में ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विविध चरण' के अनुसार भारत की लूट से संचित पूंजी ने इंग्लैण्ड की औद्योगिक क्रान्ति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। ब्रिटिश उद्योगों द्वारा बड़े पैमाने पर उत्पादन करने में से पूंजीवादी अर्थव्यवस्था व्यापार, उपनिवेशवादी अर्थव्यवस्था का विस्तार हुआ जिन्होंने भारत में प्रतिकूल आर्थिक शक्तियों को जन्म दिया जो भारतीय हस्तशिल्प के पतन की कारक बनीं। कच्चे माल के दोहन ने इसे और अधिक गति प्रदान की। 1813 ई0 में भारत से 90 लाख पौण्ड की कपास निर्यात की गयी जो 1855 ई0 में बढ़कर 8 करोड़ 80 लाख पौण्ड हो गयी। इसी प्रकार इंग्लैंण्ड निर्मित सूती कपड़े की भारत में सन् 1813 में खपत जो 8 लाख गज थी वह 1835 ई0 में बढ़कर 5 करोड़ 10 लाख गज हो गयी। दूसरी ओर भारतीय सूती वस्त्र की खपत 12 लाख 50 हजार गज से घटकर 3 लाख 6 हजार गज रह गयी। इसी प्रकार की स्थिति सभी हस्तशिल्प तथा कुटीर उद्योगों की हुयी।

सन् 1833 में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार को समाप्त कर दिया गया तथा स्वतंत्र व्यापार की नीति का अनुसरण किया गया। पंजाब के लाला मुरलीधर के शब्दों में – 'स्वतंत्र व्यापार राष्ट्रों के मध्य समान एवं उचित व्यवहार सब एक धोखा था। व्यापार के क्षेत्र में इसका अर्थ भारत की दरिद्रता में वृद्धि तथा पूंजीवादी इंग्लैण्ड को और अधिक सशक्त बनाना था।' अंग्रेजी शासन की आयात-निर्यात कर नीति ने कुटीर उद्योगों की रीढ़ ही तोड़ दी।

1840 ई0 में इंग्लैण्ड में निर्मित सूती और रेशमी कपड़े पर 3.5 प्रतिशत और ऊनी कपड़ों पर 2 प्रतिशत कर लगता था जबकि भारतीय सूती कपड़े पर 10 प्रतिशत, रेशमी कपड़े पर 20 प्रतिशत और ऊनी कपड़े पर 30 प्रतिशत कर लगाया गया। भारतीय हस्तशिल्प में सूती वस्त्र उद्योग विशेष रूप से अंग्रेजों के निशाने पर रहा। सर्वप्रथम भारतीय कारीगरों को कच्चे माल कपास से वंचित किया गया। कम्पनी के कर्मचारियों ने एक निजी कम्पनी खोलकर 25,00,000 रूपये में सारी कपास खरीद ली। कारीगरो को पहले जो कपास 16 से 18 रूपये प्रतिमन मिलती थी वह अब 28 से 30 रूपये प्रतिमन के हिसाब से मिलने लगी थी। अंग्रेजो के इन्हीं सब प्रयासों का परिणाम था कि 1844 ई0 में भारतीय कपड़े का निर्यात घटकर मात्र 63 हजार गज रह गया। इन नीतियों का परिणाम यह निकला कि भारत के पारस्परिक उद्योगों के अनेक केन्द्र नष्ट हो गये। कृषि पर जनसंख्या का दबाब बढ़ा। भारतीय अर्थव्यवस्था के औद्योगिक स्वरूप को नष्ट कर उसका ग्रामीणीकरण एवं कृषि का व्यावसायीकरण कर दिया गया। 1891 ई0 में कृषि पर आधारित जनसंख्या का प्रतिशत 61.1 प्रतिशत था जो 1921 ई0 में बढ़कर 73 प्रतिशत हो गया। यह कुटीर उद्योगों के विनाश का कारण बना। ब्रिटिश प्रशासकों ने ब्रिटिश उद्योगपतियों, व्यापारियों के दबाब में आकर इंग्लैण्ड में निर्मित उत्पादों को बेचने के लिये भारत के कुटीर एवं हस्तशिल्प उद्योगों को योजनाबद्ध ढंग से नष्ट कर दिया। जिसके परिणामस्वरूप भारत में गरीबी, भुखमरी, अकाल, ऋणग्रस्तता जैसी समस्याओं ने विकराल रूप धारण कर लिया। बी.डी. बसु के अनुसार – 'ब्रिटिश सरकार ने अपने उद्योगों को पल्लवित करने के लिये अनेक ऐसे कदम उठाये जिनकी वजह से एक के बाद एक देशी उद्योग लगातार खत्म होने लगे।' इसी प्रकार प्रमिला सूरी ने अपने लेख -'ब्रिटिश उपनिवेशवाद का उद्योग, वित्त और व्यापार पर प्रभाव' में लिखा है कि ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार ने अपनी सुनिश्चित योजना के द्वारा भारतीय औद्योगिक विकास में बाधा उत्पन्न की जिसका अधिकांश भारतीय जनता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। इस नीति के प्रमुख अंग थे- मुक्त रूप से भारत में ब्रिटिश व्यापार का प्रारंभ, भारतीय माल पर ब्रिटेन में भारी करारोपण, कच्चे माल की लूट, सीमा शुल्क एवं परिवहन करों का बोझ, रेलवे का निर्माण एवं ब्रिटिश हित में उपयोग, भारत में रहने वाले अंग्रेजों के हितों का विशेष ध्यान रखना, प्रदर्शनियों का आयोजन, भारतीय कारीगरों को अपने रोजगार की गुप्त बाते बतलाने को बाध्य करना इत्यादि। इसी अंग्रेजी दुर्भावना का शिकार भारतीय हस्तशिल्प उद्योग बने। होरेस बिल्सन के अनुसार- 'उन्होंने राजनीतिक प्रभुता और अनीति की मदद से अपने भारतीय प्रतियोगियों को दबाये रखा तथा अन्ततोगत्वा पूरी तरह समाप्त कर दिया।'

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गाडगिल डी.आर. – दि इंडस्ट्रियल ऐवोल्यूशन ऑफ इण्डिया इन रीसेन्ट टाइम्स, पृष्ठ-06
2. बोल्ट्स, विलियम – कन्सीडरेशन्स ऑन इण्डियन अफेयर्स, पृष्ठ-195
3. बैरिक, बिलियम – 1834-1835
4. बुल्फ, एच. – कोऑपरेशन इन इण्डिया, पृष्ठ-03
5. औद्योगिक कमीशन रिपोर्ट-1918

ग्वालियर में पर्यटन उद्योग के विकास हेतु सुझाव

डॉ. वसुधा अग्रवाल *

प्रस्तावना – पर्यटन उद्योग वृहद सेवा उद्योग है जो भारतीय अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण रोजगार जनक क्षेत्र है। सकल राजस्व एवं विदेशी मुद्रा के अर्जन के दृष्टिकोण से इस उद्योग का अत्यधिक महत्व है। विश्वस्तरीय धरोहरों एवं पर्यटन स्थलों से परिपूर्ण अत्यंत सुरक्षित राष्ट्र होने के कारण यहाँ पर्यटन उद्योग की एक-एक इकाई को विकसित करना अपेक्षित है। जब स्थानीयस्तर पर इसके विकास के प्रयास किये जायेंगे तभी राष्ट्रीय स्तर पर इसका विकास संभव है।

भारत वर्ष के प्रमुख राज्य मध्यप्रदेश की ऐतिहासिक नगरी के रूप में विख्यात ग्वालियर में पर्यटन उद्योग यहाँ की अर्थव्यवस्था का अहम हिस्सा है। इसमें अभी भी निरन्तर विकास एवं सुधार की आवश्यकता है अन्यथा इससे समय के अनुरूप आवश्यकताओं की पूर्ति करने की उम्मीद करना व्यर्थ है। अधिक शासकीय प्रयासों, जन सहयोग एवं जन भागीदारी के विकास के माध्यम से इस उद्योग को और अधिक विस्तार देना संभव है तभी यह भविष्य में स्थानीय आर्थिक विकास एवं विदेशी मुद्रा की प्राप्ति का सशक्त साधन बन सकता है। कुछ ऐसे सुझाव जिन्हें कार्यरूप में परिवर्तित कर इस उद्योग को जन उद्योग का रूप प्रदान किया जा सकता है, उन पर गौर करना समीचीन होगा। किसी भी क्षेत्र के पर्यटन उद्योग के विस्तार में शासकीय नीति की भूमिका विशिष्ट होती है। ग्वालियर में पर्यटन उद्योग के विकास हेतु इससे संबंधित स्थलों, बाजार की मांग, सेवाओं का विस्तार करना अपेक्षित है। उस मांग के अनुरूप आपूर्ति एवं पूंजी निवेश बढ़ाना, लागत एवं लाभ का उचित आंकलन कर पर्यटन के विस्तार की नीति अपनाकर शासन ने यहाँ जो नीति अपनायी है उसे और अधिक विस्तार दिया जाना अपेक्षित है। यही ऐतिहासिक, धार्मिक, पारिस्थितिक (ईको) एवं वन्यजीवों से संबंधित पर्यटन की अपार संभावनाएँ हैं उन्हें ध्यान में रखकर इसे विस्तार देना होगा। यहां स्थित साप्ताहिक, मासिक, वार्षिक प्रकृति के पर्यटन स्थलों की पहचान कर उनके अनुरूप नीति का चयन किया जाये जैसे दतिया में पीताम्बरा पीठ पर साप्ताहिक, शनिचरा में शनिचरी अमावस्या पर, दिसम्बर माह में तानसेन समारोह एवं ग्वालियर व्यापार मेले हेतु, रतनगढ़ माता पर वार्षिक रूप से बड़ी संख्या में पर्यटक पहुँचते हैं जिनके उचित प्रबन्धन एवं नीति निर्धारण शासन का दायित्व है। नवीन पर्यटन स्थलों की पहचान कर वहां की आवश्यकता के अनुरूप कार्यवाही करने से अच्छे परिणाम आयेंगे जैसे मुरैना जिले का बटेसर आज संरक्षण कार्यवाही के कारण ही प्रसिद्ध पर्यटन स्थल वन गया है। यदि शासन ग्वालियर क्षेत्र में पर्यटन से संबंधित विभिन्न विभागों जैसे पर्यटन, पुरातत्व, नगर निगम, पुलिस, विद्युत, जल संसाधन इत्यादि में उचित तालमेल स्थापित कर नवीन योजनाएं बनवाता है, उनके लिये बजट का समुचित प्रबन्ध कर उनका क्रियान्वयन करवाता है तो यहां के पर्यटन उद्योग का स्वरूप ही बदल जायेगा। नगरों के सौन्दर्यीकरण से, पर्यटन स्थलों पर पर्याप्त सुरक्षा प्रबंधों से, पर्यावरण संरक्षण के साथ पर्यटन के साथ-साथ इस क्षेत्र में निजी सहभागिता के विकास द्वारा भी पर्यटकों को आकर्षित किया जा सकता है जिससे इस क्षेत्र में आय, रोजगार बढ़ने के सकारात्मक परिणाम सामने आयेंगे।

सामान्यत: पर्यटक पर्यटन हेतु उन्हीं स्थलों का चयन करते हैं जहाँ आधारभूत संरचनात्मक सुविधाऐं उपलब्ध हों जैसे- होटल, कैटरिंग, गाइड, यातायात के साधन, ट्रेवल कम्पनी एवं सुरक्षा प्रबंध इत्यादि। ग्वालियर में यद्यपि फाइव स्टार से टू स्टार तक स्तर के होटल एवं अन्य आवास सुविधाएँ जैसे गेस्ट हाउस, धर्म शालाएँ आदि उपलब्ध है तथापि ये अभी अपर्याप्त हैं। इनके अतिरिक्त पर्यटकों के लिए हॉस्टल, अल्पकालीन आवास, पेइंग गेस्ट जैसे विकल्प भी खुले हों जैसे शुद्ध भोजन, नाश्ता, पेयजल, मेडिकल आदि की सुविधाएं उचित दर पर पर्यटक को मिल सकें। पर्यटन स्थल तक पहुँचाने वाली सड़कों का उचित रखरखाव, यातायात के साधनों में वृद्धि एवं इस क्षेत्र में कार्यरत कर्मचारियों को पर्यटकों के साथ सम्मानपूर्ण व्यवहार करने एवं स्वच्छता के निर्देश भी इस उद्योग के विकास में सहायक होंगे। पर्यटन स्थलों पर मनोरंजन की सुविधाऐं जैसे मल्टीप्लैक्स, सिनेमाघर, शॉपिंग काम्पलेक्स, माल्स, इन्टरनेट, रीचार्ज वाउचर्स, कोरियर्स आदि भी उपलब्ध होना चाहिये। ग्वालियर में सालासर मॉल का बन्द होना जहाँ निराशाजनक था वहीं डी.डी. मॉल के बाद डी.बी. मॉल का सफल संचालन सकारात्मक संकेत है जहाँ निकटवर्ती क्षेत्रों के असंख्य पर्यटक प्रतिदिन देखे जा सकते हैं।

ग्वालियर में पर्यटन उद्योग के विकास की महती आवश्यकता है कि यहां परम्परागत पर्यटन के साथ-साथ पर्यटन की नवीन दिशाओं में भी विकास करना होगा। यहाँ ईको पर्यटन बढ़ावा देने हेतु नलकेश्वर सफारी पैकेज, तपोवन एवं देवरी सेन्टर का विकास आदि सराहनीय कदम हैं। इस दिशा की सभी कठिनाईयों का निराकरण कर त्वरित विकास किया जाये। ग्रामीण पर्यटन भी यहाँ एक नया क्षेत्र है जहाँ विकास की संभावनाएं हैं। बाल पर्यटन पर भी ध्यान केन्द्रित करना होगा जैसे बाल मनोरंजन स्थलों, चिड़ियाघर, वोट क्लब, वाटर पार्क आदि का विकास किया जाना चाहिये। धार्मिक पर्यटन बढ़ाने हेतु यहाँ के प्रसिद्ध धार्मिक स्थलों जैसे सोनागिरि, दाताबन्दी छोड़ गुरूद्वारा, रतनगढ़ माता मंदिर, शनिचरा, दतिया के पीताम्बरा पीठ इत्यादि में जब श्रद्धालुओं की बड़ी संख्या के एकत्र होने का अनुमान होता है उस समय प्रशासनिक तैयारियों पर विशेष रूप से ध्यान देना होगा जिससे रतनगढ़ हादसे जैसी अमंगलकारी घटनाओं से पर्यटन पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभाव को रोका जा सके। यहाँ स्थित समाधियाँ, छतरियाँ, मकबरे यहाँ डार्क टूरिज्म को बढ़ाने में मददगार हैं। यहाँ स्थित

* विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक, डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर(म.प्र.) भारत

अंग्रेजों तथा फ्रांसीसियों की कब्रों की पहचान कर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उनका प्रचार कर यहाँ उनके रिश्तेदारों के रूप में आने वालों से विदेशी पर्यटक की संख्या को बढ़ाया जा सकता है।

यहाँ पर्यटन का बाजारोन्मुखी विकास होना अपेक्षित है, तभी यहाँ के स्थानीय जन को रोजगार के अवसर एवं उत्पादित माल की मांग में वृद्धि संभव होगी। यही पर्यटन के विकास हेतु राजस्थान मॉडल को अपनाना होगा जहां छोटी से छोटी वस्तु या स्थल को उचित प्रबंधन पर्यटकों को आकर्षित करने योग्य बना दिया जाता है। यहाँ पर्यटन के विस्तार हेतु प्रारंभिक चरण में छह स्थलों पर इनकी जानकारी उपलब्ध करवाने हेतु क्विक रिस्पोंस सिस्टम लगाने की योजना बनायी गयी जिसमें ग्वालियर, दुर्ग, तानसेन का मकबरा, लक्ष्मीबाई की समाधि, जयविलास पैलेस, गूजरी महल और सूर्य मंदिर को सम्मिलित किया गया था, इस योजना को और अधिक विस्तार दिया जा सकता है। यहाँ के त्वरित विकास हेतु नवीनतम तकनीक जैसे- इन्टरनेट, वाट्सऐप, फेसबुक, ट्विटर, टचस्क्रीन, थ्रीडायमेंशन का व्यापक प्रयोग इस क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सकता है। यह त्वरित विकास उचित प्रबंधन द्धारा ही संभव है। इसके लिये प्रारंभिक समंक एकत्र कर उपलब्ध मानवीय संसाधनों एवं प्राकृतिक एवं पुरातत्व सम्पदा का अधिकतम प्रयोग कर पूर्वानुमान के आधार पर कार्य योजना बनायी जाये जिसके क्रियान्वयन में विज्ञापन एवं प्रचार-प्रसार के माध्यम से बड़े स्तर पर उत्सवों का आयोजन कर यहाँ पर्यटन उद्योग को बढ़ाया जा सकता है यहां का ग्वालियर व्यापार मेला एवं तानसेन समारोह इसके उत्तम उदाहरण हैं। इन अवसरों पर आपदा प्रबंधन एवं स्वच्छता पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये। वर्तमान समय में कोरोना जैसी विषम परिस्थिति में ये सावधानियाँ और भी अधिक अपेक्षित हैं।

यहां पर्यटन उद्योग के विकास में आम जन की भूमिका का महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। जन जागरूकता अभियानों, प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से जन जागरूकता एवं जन भागीदारी को बढ़ाने के प्रयास किये जाने चाहिये। पर्यटकों के लिये आचरण संबंधी नियमों को सूचना पटल पर लगाना होगा तथा साथ ही गाइड बस, ऑटो रिक्शा चालकों, दुकानदारों, पुलिस विभाग के कर्मचारियों को पर्यटकों के साथ सम्मानजनक एवं सहयोगी व्यवहार करने हेतु प्रेरित करना होगा। अतिथि देवो भव का भाव इसे विस्तार देने हेतु उपयोगी होगा। चौराहों, स्मारकों, चिड़ियाघर के जानवरों को आमजन द्धारा गोद लेने हेतु जो योजनाऐं यहाँ संचालित हैं, वे सराहनीय हैं। इनके माध्यम से पर्यटन उद्योग के क्षेत्र में जनभागीदारी बढ़ाकर यदि शासन एवं आमजन के सामंजस्य से कार्य किया जाये तो निसंदेह रूप से यहाँ इस उद्योग का भविष्य उज्जवल है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. हरिदत्त - पर्यटन
2. चन्देल, रूपसिंह - दक्षिण भारत के पर्यटन स्थल
3. शर्मा, वैदेही - भारतीय अर्थव्यवस्था में पर्यटन की भूमिका
4. व्यास, आर.के.- पर्यटन- उद्भव एवं विकास
5. यात्रा प्रबंधन संस्थान, ग्वालियर से प्राप्त जानकारी।

****

पुरुषो के शारीरिक विकास में मंगल ग्रह की भूमिका

अभिषेक आर्य *

प्रस्तावना – ज्योतिषशास्त्र के अनुसार,मानव शरीर की संरचना नवग्रहो द्धारा प्रभावित होती है। सभी ग्रह शरीर निर्माण में पृथक-पृथक भूमिका निभाते हैं। प्रस्तुत शोधकार्य पुरुषो के शारीरिक विकास में मंगल ग्रह की भूमिका पर आधारित है।

उद्देश्य – पुरुषो के शारीरिक विकास में मंगल ग्रह की भूमिका ज्ञात करना।

परिसीमा – शारीरिक विकास से आशय पुरुषो के उन शारीरिक अंगो के विकास से है जिन पर मंगल का स्पष्ट स्वामित्व है। शोध हेतु शरीर के उन्ही अंगो पर विचार किया गया है जो मंगल ग्रह द्धारा प्रभावित होते हैं।

पुरुषो का शारीरिक विकास और मंगल ग्रह – मंगलग्रह मेष एवं वृश्चिक राशि का स्वामी है। मेष राशि मस्तिष्क का एवं वृश्चिक राशि गुह्य अंगो का प्रतिनिधित्व करती है। जब किसी पुरुष की कुंडली में मंगल विशेष बलशाली होता है तब उसके मस्तिष्क की क्षमता अच्छी होती है। किसी भी विषय से संबंधित बातों को वह अन्य लोगो की अपेक्षा जल्दी समझता और सीखता है। ऐसे पुरुष को प्राय: तेज़ दिमाग का व्यक्ति कहा जाता है।

शरीर की सप्तधातुओं में मज्जा का कारकग्रह मंगल माना गया है अर्थात मांसपेशियों पर मंगल का अधिपत्य है। जन्मचक्र में मंगल की शुभ स्थिति के फलस्वरूप पुरुषो की मांसपेशियो में उभार व बल प्राप्त होता है। जिन पुरुषो की कुंडली में मंगल बलवान होता है वे कुछ दिनो की कसरत में ही मांसपेशियो की वृद्धि प्राप्त कर शीघ्र हृष्ट-पुष्ट हो जाते है। इसके विपरीत जिन पुरुषो की कुंडली में मंगल बलहीन अवस्था में होता है उन पुरुषो को मांसपेशियो की वृद्धि हेतु विशेष परिश्रम करना पड़ता है तथापि अपेक्षाकृत कम लाभ प्राप्त होता है।

मंगल को सत्व अर्थात पराक्रम और बल का कारक भी माना गया है। कुंडली में यदि मंगल लाभदायक स्थिति में हो तो पुरुष के अंदर शारीरिक शक्ति की प्रचुरता होती है। वह शारीरिक शक्ति प्रधान कार्यो में अच्छा प्रदर्शन करता है। ऐसा व्यक्ति निडर भी होता है। इसके विपरीत यदि पुरुष की कुंडली में मंगल कमज़ोर स्थिति में हो तो ऐसा व्यक्ति शारीरिक श्रम से बचने का प्रयास करता है और इस प्रकार के कार्यो में अच्छा प्रदर्शन नही कर पाता। ऐसा पुरुष कुछ डरपोक भी होता है।

फलदीपिका नामक ग्रंथ के अनुसार मंगल वीर्य का कारक ग्रह है। वैसे तो वीर्य का कारक ग्रह शुक्र को माना जाता है किंतु यहाँ मंगल को वीर्य का कारक ग्रह इसलिये माना गया है क्योंकि वीर्य में शुक्राणु होते है जिनका उत्पादन अंडकोषो में होता है। अंडकोष वृश्चिक राशि के क्षेत्र में आते है अत: मंगल के अधीन है। वीर्य की सार्थकता उसके शुक्राणुओ के कारण ही होती है। जिनकी कुंडली में मंगल बलवान स्थिति में होता है उन पुरुषो के शुक्राणु पुष्ट व प्रचुर होते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि पुरुषो की प्रजनन क्षमता को मंगल विशेषरूप से प्रभावित करता है।

उत्तरकालामृत नामक ग्रंथ में पतलेपन का कारक मंगल को माना गया है एवं फलदीपिका में मंगलप्रधान पुरुष को पतली कमरवाला कहा गया है। यहाँ पतलेपन से तात्पर्य स्थूल शरीर का अभाव है अर्थात जिनका मंगल प्रबल होता है वे प्राय: स्थूलकाय नही होते। उनमे मांस की अधिकता तो होती है किंतु अनावश्यक वसा (चर्बी) का अभाव होता है जिस कारण वे नैसर्गिक रूप से पतले होते है। वे जब चाहे तब कसरत द्धारा अपना वजन आसानी से घटाने में समर्थ होते हैं।

निष्कर्ष – पुरुषो के शारीरिक विकास में मंगल की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शरीर का सबसे महत्वपूर्ण अंग मस्तिष्क मंगल द्धारा नियन्त्रित होता है। शरीर की मांसपेशियो का विकास मंगल के कारण ही संभव हो सकता है। शारीरिक शक्ति और बल भी उन्ही पुरुषो को प्राप्त होते हैं जिनकी कुंडली में मंगल प्रबल होता है। शुक्राणुओ के उत्पादन में भी मंगल की विशेष भूमिका है। मंगल के बलिष्ट होने पर अंडकोष स्वस्थ होते है एवं उचित मात्रा में शुक्राणुओ को उत्पन्न कर पुरुष को प्रजनन हेतु समर्थ बनाते हैं। शरीर में अनावश्यक वसा को नियन्त्रित करने में भी मंगल की भूमिका होती है। अत: मस्तिष्क की क्षमता, मांसपेशियों का विकास, शारीरिक शक्ति एवं प्रजनन क्षमता को प्रभावित कर मंगल पुरुषो के शारीरिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. फलदीपिका/रंजन पब्लिकेशन्स,दिल्ली/वर्ष 2009/पृष्ठ 15, 19,23,26.
2. उत्तरकालमृत/रंजन पब्लिकेशन्स/वर्ष 2010/पृष्ठ 126, 127,128.
3. बृहत्पाराशरहोराशास्त्र/चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी/वर्ष 2009
4. चमत्कार चिंतामणि/मोतीलाल बनारसीदास,दिल्ली/वर्ष1992/पृष्ठ 137-202.

* शोधार्थी, महर्षि पाणिनि संस्कृत एवं वैदिक विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

Chemical Investigation of Catharanthus Roseus ANTI CANCEROUS THERAPIES

Dr. Sushama Singh Majhi*

Abstract - Ayurveda the science of life which has been time tested and undispeuted deals with various health problems adopting holistic approach. The therapies based on Herbal dimension potency yet scattered. Here an effort is being made to put faith in the knowledge about anticancer herbal therapy. The study aim at the main tissues leaf flower and root of the plant the leaf and root transcriptomes of Catharanthus Roseus substance produced by living organism biological activity for use in pharmaceutical drug discovery and drug design. Catharanthus Roseus plant are important in the treatment of life threatening conditions. Catharanthus Roseus is highly preferred by the majority of the healers, and that the form is exclusively used to treat cancer.
Keyword - Catharanthus Roseus, therapies, pharmaceutical, living organism.

Introduction - Biologic and Gene Therapy, A number of drugs are now being developed that use the patient's own immune system to prevent or fight off cancer. Monoclonal antibodies are genetically designed infection fighters that target specific antigens-foreign particles that the immune system then attacks, Trastuzumab, a so-called monoclonal antibody, is designed to target and block the receptor encoded by the HER-2/neu, gene, which is responsible for cancer cell growth in about 30% of breast cancer patients. A crude (untreated) extract from any one of these sources typically contains novel, structurally diverse chemical compounds, which the natural environment is a rich source of Chemical diversity in nature is based on biological and geographical diversity, so researchers travel around the world obtaining samples to analyze and evaluate in screens or bioassays. The therapeutic categories most often recommended in western herbal practice.

Diets: Live foods (purifying diet) : Wheat grass juice, carrot juice, raw fruits, vegetables; avoid cooked foods. Macrobiotic diet : brown rice, millet, other grains, vegetables, mostly cooked; avoid raw foods, sugar. Building diet : Fish, chicken (20%), whole grains (40%), lightly cooked vegetables (30%), concentrated foods-dairy, nuts, seeds (5%), comfort foods (5%)

"Blood purifiers" - Red clover compound (Syzygium aromaticum family myrtacae Eng Clove Essiac Nicotiana tabacum Linn solanaceae, Hoxey formula

Protein-shock (mitogen) therapy- Enderlein therapy Mistletoe, poke, venoms, camivora, 1 Compound Q

"Herbal Chemotherapy" - (herbal bone-marrow transplant)" Reishi, Shitake, Majtake, Trametes Astragalus (spleen tonic), Ligustrum

External preparations : Escarotic salves, anti-cancer herbs Sanguinaria Chaparral Euphorbia euphorbia nerifolia Linn Common Milk Hedge Castor oil Ricinuscummunis Linn euphorbiaceae

Pharmacognosy provides the tools to identify select and process natural products destined for medicinal use. Usually, the natural product compound has some form of biological activity and that compound is known as the active principle - such a structure can act as a lead compound (not to be confused with compounds containing the element lead). Many of today's medicines are obtained directly from a natural source. On the other hand, some medicines are developed from a lead compound originally obtained from a natural source. This means the lead compound:

Catharenthus Roseous

Cultivation - The Madagascar periwinkle is very easy to cultivate, and can be propagated by seed or by cuttings, but is sensitive to over-watering. A tender plant, it does not withstand frosts and is best grown indoors in temperate climates. It thrives well in hot and humid environments, in full sun or partial shade and flowers all year round in hot climates.

*Assistant Professor (Chemistry) Govt. Motilal Vigyan Mahavidyalaya, Bhopal (M.P.) INDIA

Catharanthus roseus is easily propagated by apical semi-ripen cuttings in light, free-draining compost. Best results are when bottom heat and high humidity are provided. Propagation by seed at 22-25°C, kept in the dark until germination. Over 80% of Madagascar's 14,883 plant species are found nowhere else in the world, including five plant families that are found only here. The plant family Didiereaceae, composed of four genera and 11 species, is limited to the spiny forests of southwestern Madagascar. Four-fifths of the world's Pachypodium species are endemic to the island. Three-fourths of Madagascar's 860 orchid species are found here alone, as are six of the world's eight baobab species. The island is also home to around 170 palm species, three times as many as are found on mainland Africa; 165 of these are endemic. Many native plant species are used as effective herbal remedies for a variety of afflictions. This includes the Madagascar periwinkle, from which the drugs vinblastine and vincristine have been derived to effectively treat Hodgkin's disease, leukemia and other cancers. Thetraveler's palm, endemic to the eastern rain forests, is highly iconic of Madagascar and is featured in the national emblem as well as the Air Madagascar logo. Like its flora, Madagascar's fauna is diverse and exhibits a high rate of endemism. Lemurs have been characterized as "Madagascar's flagship mammal species" by Conservation International. In the absence of monkeys and other competitors, these primates have adapted to a wide range of habitats and diversified into numerous species. As of 2008, there were officially 99 species and subspecies of lemur, 39 of which have been described by zoologists between 2000 and 2008. They are almost all classified as rare, vulnerable, or endangered. At least 17 species of lemur have become extinct since man arrived on Madagascar, all of which were larger than the surviving lemur species. The biodiversity of fauna in Madagascar extends beyond prosimians to the wider animal population. A number of other mammals, including the cat-likefossa, are endemic to Madagascar. Over 300 species of bird have been recorded on the island, of which over 60% (including four families and 42 genera) are endemic. The few families and genera of reptile that have reached Madagascar have diversified into more than 260 species, with over 90% of these being endemic (including one endemic family). The island is home to two-thirds of the world's chameleon species, including the smallest one known to date, and researchers have proposed that Madagascar may represent the origin of all chameleon species. Endemic fishes on Madagascar include two families, 14 genera and over 100 species, primarily inhabiting the island's freshwater lakes and rivers. Although invertebrate species remain poorly studied on Madagascar relative to other wildlife, researchers have found high rates of endemism among the known species. All 651 species of terrestrial snail are endemic, as are a majority of the island's butterflies, scarab beetles, lacewings, spiders and dragonflies.

References :-

1. Newman DJ, Cragg GM, Snader KM. Natural products as sources of new drugs over the period 1981-2002. J Nat Prod. 2003;66:1022-103 7. PubMed DOI: 10.1021 /np03 00961.
2. Koehn FE, Carter GT. The evolving role of natural products in drug discovery. Nat Rev Drug Discov. 2005;4:206-220. PubMed DOI: 10.1038/nrd1657.
3. Paterson I, Anderson E A. The renaissance of natural products as drug candidates. Science. 2005; 310:451-453. PubMed DOI: 10.1126/science. 1116364.
4. Balunas MJ, Kinghorn AD. Drug discovery from medicinal plants. Life Sci. 2005;78:431-441. PubMed DOI: 10.1016/j.lfs.2005.09.012
5. Jones WP, Chin Y-W, Kinghom AD. The role of pharmacognosy in modern medicine and pharmacy. Curr Drug Targets. 2006; 7:247-264.
6. Drahl C, Cravatt BF, Sorensen EJ. Protein-reactive natural products. Angew Chem Int Ed Engl. 2005;44:5788-5809. PubMed DOI: 10.1002/ anie.200500900
7. Watt IM, Breyer- Brand wijk MG(1962). The medicinal and poisonous plant of southern and eastern Africa second edition, Livingstone, London.

****

प्राचीन भारतीय राज्य सम्बन्ध संचालन की प्रक्रिया में मण्डल सिद्धान्त का निरूपण

डॉ. जे. के. संत *

प्रस्तावना – किसी भी राज्य का प्राथमिक कर्तव्य देश की बाह्य आक्रमणों से रक्षा करना होता है। इस बाह्य आक्रमण के भय तथा उसके विरूद्ध सतर्कतामूलक उपायों के अवलम्बन के कारण कूटनीति की कला तथा वैदेशिक सम्बन्धों का उदय हुआ है। अतएव प्राचीन भारतीय शास्त्र में परराष्ट्र सम्बन्ध संचालन की प्रक्रिया का निरूपण पाया जाता है। नीचे क्रमश: इनका अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है।

मण्डल सिद्धान्त– विभिन्न राज्यों में किस प्रकार के पारस्परिक सम्बन्ध होते हैं इस विषय पर प्राचीन भारत के प्रमुख राजशास्त्रियों ने अपने मत प्रकट किये हैं। इन मतों के अनुसार यह सम्बन्ध विभिन्न राज्यों के मण्डल के आधार पर आश्रित होते हैं। जिस सिद्धान्त के आधार पर इन मण्डलों का निमार्ण होता है वह सिद्धात मण्डल सिद्धान्त के नाम से सम्बोधित किया गया है। मनु ने सर्वप्रथम मण्डल सिद्धान्त के महत्व को अभिव्यक्त किया है। राजा कों मंत्रिपरिषद की बैठकों में अपने मंत्रियों से किन–किन विषयों में चर्चा करनी चाहिये, इन विषयों का उल्लेख करते हुये मनु ने इन विषयों में मण्डल प्रचार को भी सम्मिलित किया है।[1]

मण्डल की मुल प्रकृतियाँ– राज्यों की स्थिति एवं उनके पारस्परिक सम्बन्धों के आधार पर मनु ने इन राज्यों को मोटे तौर से चार प्रकार का बतलाया है। ये चारों प्रकार के राज्य मध्यम, विजिगीशु, उदासीन और शत्रु नाम से सम्बोधित किये गये हैं।[2] मनु ने इन राज्यों को मण्डल की मूल प्रकृति के नाम से पुकारा है। इन्ही राज्यों के आधार पर मण्डल का निर्माण होता है। उल्लेखनीय है कि एक स्थान पर मनु ने मित्र के स्थान पर विजिगीशु शब्द का प्रयुक्त किया है। आगे दूसरे स्थान पर मध्यम न होकर मित्र शब्द पाया जाता है। इसी में थोडा आगे मध्यम शब्द भी रखा हुआ है। तात्पर्य यह कि मानव धर्मशास्त्र में विजिगीशु, मित्र, शत्रु, मध्यम तथा उदासीन शब्द पाये जाते हैं। मनु ने इन चारों मूल प्रकृतियों की व्याख्या नहीं की है, किन्तु कौटिल्यादि विचारकों ने इनकी विशद व्याख्या की है। यहाॅ विजिगीशु (विजय की अभिलाषा रखने वाले) को केन्द्र माना गया है। जो अपने राज्य का विस्तार करना चाहता है, जो राज्य के सातों सत्वों से सम्पन्न हैं। जो महोत्साही और उद्योगशील है, वह विजिगीशु कहलाता है।[3] अस्तु विजिगीशु को केन्द्र मानकर इन चारों मूल प्रकृतियों का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है।

शत्रु राज्य– धर्मशास्त्रों में (विजिगीशु) राजा का समीपवर्ती राज्य अरि राज्य बतलाया गया है और अरि का मित्र भी अरि राज्य माना गया है। किसी राज्य के चारों ओर उस राज्य की सीमा से सटे हुये जो राज्य स्थित होते हैं कौटिल्य ने उन्हें शत्रु राज्य माना है। कौटिल्य ने शत्रु के तीन प्रकार बताये हैं– (1) प्रकृति शत्रु (2) सहज शत्रु और (3) कृत्रिम शत्रु। अपने राज्य के समीप वाला राज्य स्वभाव से ही शत्रु राज्य कहलाता है, इसे प्रकृति शत्रु भी कहते हैं, अपने वंश में उत्पन्न दायभागी सहज शत्रु कहलाते हैं।[4] स्वयं विरोध करने से या विरूद्ध होने से जो बन जाता है, वह कृतिम शत्रु कहलाता है।[5] इस प्रकार हम देखते हैं कि विजिगीशु की सीमाओं पर रहने वाले राजा अरि कहलाते हैं। इससे प्रकट होता है कि अरि कई हो सकते हैं। किन्तु इस विषय में नीतिवाक्यामृत का यह कथन सदैव स्मरणीय है कि यह कोई नियत नहीं है कि पडोसी सदा ही अरि होता है, और दूर का राजा मित्र ही। सनिध्य एवं दूरी शत्रुता एवं मित्रता के नहीं हो सकते, बल्कि उद्देश्य ही मुख्य है, जिसके फलस्वरूप मित्र या शत्रु बनते हैं। यही कारण है कि सोमदेव सूरि ने अरि की परिभाषा में कहा है कि जो राजा किसी राजा के अकल्याण में रत है और प्रतिकूल आचरण करता है, वह उस राजा का अरि कहालाता है।[6] शेष बातों में सोमदेव सुरि के विचार कौटिल्य की ही भाॅति हैं।

मित्र राज्य – राज्य की भूमि के पश्चात शत्रु राज्य होता है, उसके आगे शत्रु राज्य की सीमा पर स्थित राज्य मित्र राज्य कहलाता है और ऐसे राज्य का राजा मित्र राजा होता है। मित्र राजा के भी तीन प्रकार होते हैं–

1. शत्रु राज्य के आगे वाला समीपी राजा प्रकृतित: मित्र होता है।
2. माता–पिता से सम्बन्ध रखने वाले (सम्बन्धीगण) सहज मित्र कहलाते हैं।[7]
3. धन और जीविका के लिये आश्रय ग्रहण करने वाला पुरूष कृत्रिम मित्र कहलाता है।[8]

सोमदेव सूरि ने कौटिल्य के मत का ही समर्थन किया है।[9] किन्तु कामन्दक ने मित्र के चार प्रकार बताये हैं– औरस, कृतसम्बन्ध, वंशक्रमागत और व्यसन रक्षित।[10] कौटिल्य ने नित्य मित्र पर प्रकाश डालते हुये लिखा है– जो लोभ अथवा स्वार्थ के बिना ही पूर्व सम्बन्ध की रक्षा में तत्पर रहता है वह नित्य मित्र होता है।[11] इसी प्रकार सोमदेव का कथन है कि जो बिना स्वार्थ के अपने मित्र की रक्षा में प्रवृत्त रहे वह नित्य मित्र कहलाता है।

मध्यम राज्य – मध्यम राज्य उसे कहते हैं जिसका राज्य विजिगीशु तथा अरि राज्य की सीमा से सटा हुआ और दोनो अर्थात विजिगीशु तथा उसके शत्रु को सहायता दे सकता हो, या दोनो से भिड़ने में समर्थ हो। ऐसे राज्य के राजा को मध्यम राजा कहते हैं। सोमदेव सुरि के शब्दों में – जो राजा अनियत मण्डल है और जो विजिगीशु तथा विजिगीशु के शत्रु राजा इन दोनों से अधिक बलवान है, परन्तु कारणवश मध्यस्थ(मौन) स्थिति में बैठा हुआ है, वह मध्यम अथवा मध्यस्थ राजा है।[12]

उदासीन राज्य – उदासीन राज्य उसे कहते हैं जो विजिगीशु के राज्य की सीमा से बहुत दूर राज्य करता हो, जो राज्य तत्वों से सम्पन्न हो और उपर्युक्त

* सहायक प्राध्यापक (राजनीतिशास्त्र) शासकीय तुलसी महाविद्यालय, अनुपपुर (म.प्र.) भारत

तीनों प्रकारों को सहायता दे सकता हो या उससे भिड़ सकता हो।[13] कुल्लूकभट्ट उक्त विवेचन को नहीं मानते। उनके अनुसार उदासीन वह शक्तिषाली राजा है जिसका राज्य विजिगीशु के सम्मुख हो, पीछे हो या दूर हो और जो किसी कारणवश या विजिगीशु के कार्यकलापों के कारण उदासीन हो उठा हो। कौटिल्यादि विचारकों ने इनकी विशद व्याख्या की है। राज्यों के चार-सूत्रीय वर्गीकरण के उपरान्त कौटिल्य ने राज्य-मण्डल की रूपरेखा प्रस्तुत की है। इस मण्डल में विजिगीशु राज्य सहित कुल 12 राज्य हैं। विजिगीशु राज्य के सामने के ओर पॉच राज्य हैं, पिछले भाग में चार राज्य हैं जबकि शेष दो राज्य कहीं भी स्थित हो सकते हैं।

1. जो राजा राज्यों के समूह को विजित या नियन्त्रित करने की इच्छा रखता है, उसे विजिगीशु कहते हैं। उसके राज्य के चारों ओर विद्यमान राज्यों के समूह को ही उसका मण्डल कहते हैं।
2. विजिगीशु राज्य का निकटतम् पड़ोसी जो उसके सामने विद्यमान होता है, उसका स्वाभाविक शत्रु होता है क्योंकि वह उस के प्रति ईर्ष्यालु होता है। इसे कौटिल्य ने अरि की संज्ञा दी है।
3. अरि राज्य के आगे का राज्य उसका शत्रु होता है और प्रकारान्तर से विजिगीशु का मित्र होता है। कौटिल्य इसे मित्र कहता है।
4. मित्र का पड़ोसी राज्य उसका शत्रु होता है और अरि का मित्र होता है। कौटिल्य इसे अरि-मित्र कहता है।
5. अरि-मित्र का पड़ोसी राज्य उसका शत्रु और प्रकारान्तर से मित्र का मित्र होता है। कौटिल्य ने इसे मित्र-मित्र का नाम दिया है।
6. मित्र-मित्र का पड़ोसी राष्ट्र उसका शत्रु परन्तु अरि-मित्र का मित्र होता है। कौटिल्य इसे अरि-मित्र मित्र का नाम देता है।
7. विजिगीशु के ठीक पीछे का पड़ोसी राज्य पार्ष्वनिग्रह कहलाता है। यही उसका शत्रु होता है। पार्ष्वनिग्रह का अर्थ होता है, पीठ का शत्रु।
8. पार्ष्वनिग्रह का पड़ोसी राज्य उसका शत्रु होता है और प्रकारान्तर से विजिगीशु का मित्र होता है। इसे आक्रन्द कहते हैं जिसका अर्थ होता है- पीठ का मित्र।
9. आक्रन्द के पृष्ठ भाग में स्थित राज्य आक्रन्द का शत्रु और प्रकारान्तर से विजिगीशु का शत्रु होता है। इसे पार्ष्वनिग्रह सार कहते हैं।
10. मण्डल का अगला राष्ट्र अर्थात पार्ष्वनिग्रह सार का पड़ोसी राष्ट्र उसका शत्रु और प्रकारान्तर से विजिगीशु राष्ट्र का मित्र होता है। इसको आक्रन्द सार कहते हैं अर्थात आक्रन्द का मित्र।

उपरोक्त 10 राज्यों के अतिरिक्त कौटिल्य 2 अन्य राज्यों की भी चर्चा करता है। इन्हें वह मध्यम और उदासीन कहता है। मध्यम राज्य विजिगीशु और उसके अरि, दोनों का मित्र होता है। यह मध्यम की भूमिका का निर्वाह करता है। उदासीन राज्य वह है जो मण्डल के किसी भी राज्य का पक्ष नहीं लेता।

उपाय- राजमण्डल की इन प्रकृतियों में अपने को श्रेष्ठ व शक्तिसम्पन्न कायम रखने के लिये विजिगीशु को कतिपय उपायों का सहारा लेने का सुझाव मनु ने दिया है। राजा को अपने परम उद्देश्य की सिद्धि के लिये इन उपायों को आवश्यक माना गया है। मनु के भॉति प्राचीन भारत के प्राय: सभी राजशास्त्रियों ने इन उपायों के चार भेद स्वीकार किये हैं। मानवधर्मशास्त्र में इन चारों उपायों का उल्लेख करते यह व्यवस्था दी गई है कि विजयाभिलाषी राजा को चाहिये कि वह दुष्ट पुरूषों को राम आदि उपायों के द्वारा अपने वश में करे। यदि वह प्रथम तीन उपायों (साम, दान और भेद) से वष में न हो तो चौथे उपाय दण्ड से उसका दमन करना चाहिये।

(1) साम उपाय- शत्रु अथवा बिगडे हुये मित्र को समझा बुझाकर अपने अनुकूल करना साम उपाय कहलाता है। कामन्दक ने साम उपाय के पॉच भेद बतलाये हैं-

1. परस्पर उपकारों का कीर्तन,
2. परस्पर गुण कर्म की प्रशंसा,
3. परस्पर सम्बन्ध का आख्यान,
4. भविष्य के कार्यो का प्रकाशन करना, और
5. मधुर तथा साधु वाणी में- 'मैं तुम्हारा हूॅ' ऐसा कहकर स्वार्पण कर देना।

समवाणी के प्रति कामन्दक का कथन है कि जिस वाणी से दूसरे को उद्वेग न हो वह सामवाणी कहलाती है। सामवाणी सरल सत्य और प्रिय स्तुति बतलायी गयी है।[14] मनु आदि सभी प्राचीन राजविदों ने कहा है कि जहॉ तक सम्भव हो राजाओं को साम उपसय का अवलम्बन करना चाहिये।

(2) दान उपाय - शत्रु अथवा बिगडे हुये मित्र को शान्त करने के निमित्त आष्वासन पूर्ण वचन भूमि, धन-धन्य आदि के दान का आश्रय लिया जाना दान उपाय कहलाता है। कामन्दक ने दान उपाय के भी पॉच भेद बतलाये हैं-

1. अपने शत्रु अथवा बिगडे हुये मित्र को जो धन धान्य, द्रव्य देय है दनकों ज्यों का त्यों लौटा देना,
2. अपना जो धन - धान्य अथवा अपनी जो भूमि आदि शत्रु के अधिकार में आ गई है, उसके दान का अनुमोदन करना,
3. पहले न दिये हुये अपने द्रव्य अथवा अपनी भूमि को प्रदान करना,
4. राज्य से वह (शत्रु राजा) स्वयं धन-धान्य, भूमि आदि ग्रहण कर ले एवं
5. शत्रु से लूट में प्राप्त हुये धन-धान्य आदि का छोड़ देना अथवा जो कुछ ग्रहण किया जाता है उसमें से कुछ छोड़ देना।[15] कौटिल्य ने भी दान उपाय के ये ही पॉच उपाय बताये हैं।[16] जिससे प्रतीत होता है कि कामन्दक ने कौटिल्य के मत को ही अपने शब्दों में व्यक्त कर दिया है।

(3) भेद उपाय - जिस उपाय को अपनाने से मित्र अथवा शत्रु राजा में भेद उत्पन्न हो जाय वह भेद उपाय कहलाता है। इन भेद उपाय को लोगों में भेद (फूट) उत्पन्न करने का साधन माना जाता है। कामन्दक ने भेद उपाय के तीन प्रकारों का उल्लेख किया है-

1. शत्रु के स्नेही एवं उसके प्रति राग रखने वालों में भेद उत्पन्न करने का प्रयास किया जाना,
2. शत्रु से संघर्ष पैदा करना, व
3. शत्रु के समक्ष तर्जना उपस्थित कर शत्रु एवं उसके सहायकों में भय उत्पन्न करना।[17] इसीलिये व्यवहार में भेद शब्द का अर्थ आपस के ऐक्य का विच्छेद माना गया है।

(4) दण्ड उपाय- शत्रु के द्वारा किये जाने वाले अपकार के हेतु उसे दण्डित करने के लिये साधनों का अपनाना दण्डोपाय कहा जाता है। कामन्दक ने इस दण्ड के भी तीन भेद बताये हैं-

1. शत्रु का वध कर देना,
2. उसका धन हरण कर लेना, एवं
3. शारीरिक विशेष कष्ट देना।[18]

मनु ने राष्ट्र की वृद्धि हेतु साम और दण्ड इन दो उपायों की प्रशंसा की है। मनु ने इन चार उपायों में से प्रथम तीन का पृथक- पृथक अथवा आवश्यकतानुसार सबका एक ही साथ प्रयोग किया जाना उचित माना है।

उल्लेखनीय है कि मनु दण्ड उपाय का प्रयोग विवशता का उपाय मानते हैं। इस विषय में मानवधर्मशास्त्र की व्यवस्था विशेष न्यायसंगत प्रतीत होती है। सामत्र दान, और भेद इनमें से एक-एक से अथवा तीनों से शत्रु पर विजय पाने का प्रयत्न करना चाहिये, युद्ध से नहीं। इन तीनों उपायों के द्वारा जब सिद्धि प्राप्त न हो तब दण्ड का आश्रय लेना उचित है।

कौटिल्य ने भी इन उपायों के चार प्रकारों का उल्लेख किया है। वह इन्हीं चार उपायों के आश्रित कार्य की सिद्धि मानते हैं और यह भी बतलाते हैं कि किन परिस्थितियों में किस उपाय का आश्रय लेने से राजा का कल्याण हो सकता है। उनका मत है कि दुर्बल राजाओं को साम और दान उपायों से ही वष में करना चाहिये। किन्तु जो शत्रु (राजा) बलवान हो उनकों भेद और दण्ड से वश में करना चाहिये।[19] महाभारत में भी इन उपायों का विवरण मिलता है।[20] शुक्र के अनुसार भी साम, दान भेद और दण्ड उपाय के चार भेद हैं जिनका प्रयोग सोच विचार कर करना चाहिये।[21] इन उपायों का महत्व प्रतिपादित करते हुये शुक्र ने कहा है कि लोहा बहुत कठोर होता है, परन्तु यह भी उपाय से पिघल जाता है।[22] लोक में यह प्रसिद्ध है कि पानी आग को बुझा देता है, किन्तु यदि उपाय से काम लिया जाये तो आग से समस्त जल सुखाया जा सकता है।[23] मदोन्मत हाथियों के मस्तक पर भी उपाय के द्वारा पैर रखा जाता है। उपाय से तो सर्प, गज और सिंह भी वश में आते देखे गये हैं। भूमि पर रहने वाले मनुष्य उपाय से स्वर्ग पहुँच जाते हैं। उपाय से तो वज्र का भेदन किया जा सकता है। कामन्दक ने साम, भेद, और दण्ड के अतिरिक्त माया, उपेक्षा तथा इन्द्रजाल इन तीनों को भी उपाय की श्रेणी में रखा है। इस प्रकार राजा की इस प्रकार राजा की विजय हेतु कामन्दक ने सात उपायों का विधान किया है।[24]

निष्कर्ष – मण्डल सिद्धान्त इस अवधारणा पर आधारित है कि राज्यों के मध्य युद्ध अवश्यम्भावी है। राज्य अपने क्षेत्र में विस्तार और शक्ति में वृद्धि के लिये आपस में संघर्ष करते हैं। पड़ोसी हमेशा एक-दूसरे के शत्रु होते हैं। पड़ोसी राज्य एक-दूसरे की शक्ति और खुषहाली से ईर्ष्या करते हैं। विजय की कामना करने वाले राज्य को अपने पड़ोसी राज्य पर कभी भरोसा नहीं करना चाहिए। समान शत्रुता राज्यों को गठबन्धन बनाने के लिये प्ररित करती है। एक समान शत्रु के विरूद्ध दो राज्य सहज ही हॉथ मिला लेते हैं। इस सिद्धान्त का उद्देश्य राज्यों के मण्डल में शक्ति सन्तुलन की स्थापना करना है। विजय के कामना करने वाले राज्य को अपनी स्थिति मजबूत करने के लिये अन्य राज्यों के मध्य विद्यमान आपसी द्वेष का बुद्धिपूर्वक इस्तेमाल करना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अनुरागापरागौ च प्रसारं मण्डलस्य च।। मनु, 7/154
2. मध्यमस्य प्रचारं विजगीशोश्च चैष्टितम्।
   डदासीन प्रचारं च शत्रीश्चैव प्रयत्नत:।। मनु, 7/155
3. कामन्दकीय0, 8/6
4. भूभ्यनन्तर: प्रकृत्यिमित्र: तुल्याभिजनसहज:। अर्थ0, 6/2 वार्ता 25
5. विरूद्धो विरोधयितावाकृत्रिम:।। अर्थ0, 6/2 वार्ता 26
6. नीतिवाक्यामृत, समु0, 29 वार्ता 24
7. भूम्येकान्तरं प्रकृति मित्रं माता पितृ सम्बद्धं सहजम्। अर्थ0, 6/2 वार्ता 27
8. धनजीवितहेतो राश्रितं कृत्रिममिति। अर्थ0, 6/2 वार्ता 28
9. नीतिवाक्यामृत, समु0, 23 वार्ता 1-4
10. औरसंकृतसम्बद्धं तथा वंश क्रमागतम्।
    रक्षितं व्यसनेश्यश्व मित्रं ज्ञेयं चतुर्विधम्।। कामन्दकीय0, 4/74
11. अर्थ0, 7/9 श्लोक 51
12. नीतिवाक्यामृत, समु0, 29, वार्ता 22
13. अर्थ0, 6/2, वार्ता 30
14. कामन्दकीय0, 17/16
15. कामन्दकीय0, 17/6-7
16. अर्थ0, 9/6, वार्ता 27
17. कामन्दकीय0, 17/19
18. कामन्दकीय0, 7/17
19. भेद दण्डाभ्यां बलवत:। अर्थ0, 7/16, वार्ता 4
20. चारमन्त्रवलादानै: सामदानविभदेनै:।
    क्षय व्ययभयोपायै: प्रकर्शन्तीतरेतरम्।। शांतिपर्व, 107/12
21. सामदानभेददण्डांशिचन्तनीया: स्व युक्तिभि:। शुक्र0,4/23
22. अयोभेद्यमनुपायेन द्रवतामुपनीयते।शुक्र0,4/1126
23. शुक्र0,4/1127
24. सामदानष्च दण्डष्च भेदश्चेति चतुष्टयम्
    मयोपेक्षेन्द्र जालं च सप्तोमाया: प्रकीर्तिता:।। कामन्दकीयव, 17/3
25. यूनीफाइड राजनीति विज्ञान द्वितीय वर्ष- नन्दलाल

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

मुंशी प्रेमचंद की कहानियों में चित्रित दलित जीवन

डॉ.झेलम झेंडे*

प्रस्तावना – दलित शब्द का तात्पर्य होता है दमित, कुचला हुआ, दबा हुआ या शोषित तथा ऐसा व्यक्ति जिसे समाज में कोई स्वतंत्रता न हो। प्राचीन काल में भारतीय समाज में कर्म के आधार पर वर्ण व्यवस्था स्थापित की गयी थी। भारतीय समाज चार वर्णो में विभाजीत किया गया-ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र। बाद में यह व्यवस्था जन्म के आधार पर स्थापित हो गयी। दलित शब्द हजारों वर्षो तक अस्पृश्य या अछुत समझी जानेवाली उन शोषित जातियों के लिए सामूहिक रूप से प्रयुक्त होता रहा जो हिंदू धर्म शास्त्रों द्वारा हिंदू समाज व्यवस्था में सबसे निचले स्थर स्थित है और बौध्द ग्रंथ में पाँचवे स्थान पर है। संवैधानिक भाषा मे इन्हें अनुसुचित जाती कहा जाता है। इसमें समाज में शोषक वर्ग और शोषित वर्ग ऐसे दो वर्ग उजागर हुए।

हिंदी साहित्य में दलितवादी साहित्यिक चिंतन प्रेमचंदजी से शुरू हुआ। प्रेमचंदजी ने हमेशा समाज हित चाहा। इस कारण उनकी कहानियों में विलक्षन आशावाद और विश्वास देखा जा सकता है। प्रेमचंद एक ऐसे लेखक थे जिन्होंने हिंदु समाज में व्यास भेदभाव की कडी आलोचना की। सर्वप्रथम प्रेमचंदजी ने अपने कहानियों द्वारा दलित साहित्य का प्रकाशित किया और जाति, वर्ण, धर्म आदि के खिलाफ संघर्ष किया। उन्होंने गहरी संवेदनाशीलता के साथ दलितों के जीवन में समाहित अंतरालों को भरने हेतु उनकी शक्ति पर असीम आस्था व्यक्त की। प्रेमचंद एक ऐसे कथाकार है जिन्होंने पहली बार भारतीय समाज में नारकीय यातना सहते दलितों को अपनी कहानियों का विषय बनाया। प्रेमचंदजी की कफन, मंदिर, ठाकुर का कुआं, घासवाली, दूध का दाम, शूद्रा आदि कहानियों में दलित समाज चित्रण दिखाई देता है।

प्रेमचंदजी की कहानियों में दलित – प्रेमचंदजी की 'ठाकूर का कूआं' में छुआछूत की समस्या का चित्रण किया है। तत्कालीन समाज में दलितों की पीडित अवस्था का कारण जातिगत दबाव है तो दुसरा कारण उँची जाति के लागों की पूंजी केंद्रित अधिकार है। इस कहानी में उन्होंने अछूतों की शोचनीय परिस्थिती का वर्णन किया है। कहानी में गंगी दलित होने के कारण ठाकूर के कुएं से पानी नहीं भर सकती। उनका मन पीडित होकर सवर्णो की उच नीच और भेदभाव की धारणा का तीव्रा आलोचना करता है। इस संदर्भ में गंगी का आत्मकथन भी उल्लेखनीय है- 'हम क्यों नीच है और ये लोग क्यों उँच है। इसलिए कि ये लोग गले में तागा डाल लेते है। यहां तो जितने है एक से एक छोटे है। चोरी ये करे, जाल फरेब ये करे और झूठे मुकदमें ये करे। अभी इस ठाकूर ने तो उस दिन बेचारे गडरिए की एक भेड चुरा ली थी और बात को मारकर खा गया। यही साहुजी तो घी में तेल मिलाकर बेचते है। काम करा लेते है मजूरी देते समय नानी म्रती है। किस बात में है इससे उँचे।'[1] इस संदर्भ से यह स्पष्ट होता है कि दलितों पर एक तो जाति का दबाव है तो दुसरी तरफ पूंजीवादी वर्चस्व की तानाशही है।

प्रेमचंदजी की 'ठाकूर का कुआं' कहानी के जोखू में सवर्णो के प्रति घृणा दिखायी देती है। तभी तो वह बिमारी में भी पत्नी को ठाकूर के कुएं का पानी लाने की मनाही करता कहता है कि -'हाथ पांव तुडवा आएगी और कुछ न होगा। बैठ चुपके से। ब्राम्हण देवता आशीर्वाद देंगे। ठाकूर लाठी मारेंगे। साहूजी एक के पांच लेंगे। गरीबों का दर्द कौन समझता है। हम तो मर भी जाते तो कोई दरवाजे पर झांकने नहीं आता। कंधा देने की तो बडी बात है। ऐसे लोग कुएं से पानी भरने देंगे।'[2]

प्रस्तुत कहानियों में गंगी और जोखू की विवषता इसी उँच नीच पर टिकी है। 'ठाकूर का कुआं' शीर्षक खुद ही इस बात को प्रमाणित करता है। यहा कुआं- जिसमें स्वच्छ और निर्मल पानी है जो मुल मानवीय अधिकार का प्रतीक है। गंगी और जोखू इस अधिकार से इसलिए वंचित है क्योंकि कुआं ठाकूर का है। गंगी का विद्रोह उस दयनीय अवस्था का स्वाभाविक चित्रण है। 'ठाकूर का कुआं' कहानी स्वतंत्रता पूर्व के गांवों में जातिगत भेदभाव और अस्पृश्यता को चित्रीत करता है। अंत में कहा जा सकता है कि 'ठाकूर का कुआं' कहानी में प्रेमचंद वर्ग विषमता वाले अंतसंबंधों की एक पुरी दुनिया का यथार्थ हमारे सामने प्रस्तुत करते है। एक ओर बीमार जोखू और दुसरी तरफ उसकी पत्नी गंगी है बीच में सामंती व्यवस्था के संपुर्ण अभिप्राय के प्रतीक के रूप में ठाकूर का कुआं है। 'ठाकूर का कुआं' एक ऐसी कहानी है जिसमें दलित वर्ग की जीविका की समस्या का चित्रण किया गया है। पानी के लिए संघर्ष करती गंगी और जोखू की कहानी ने जातिभेद की समस्या के प्रति पाठकों के मन में जागरूकता पैदा की है।

प्रेमचंदजी की 'कफन' कहानी एक महान कहानियों में से एक है। कहानी में घीसू और माधव पिता पूत्रों की कहानी है। दोनों आलसी और कामचोर है। प्रेमचंदजी ने कहानी में जिस गांव का चित्रण किया है उस गांव में चर्मकारों के कुनबे का चित्रण मिलता है। घीसू और माधव चर्मकार है। और सारे गांव में बदनाम है। माधव की पत्नी बुधिया दलित नारियों की प्रतीक है। भारत देश किसानों का देश है। तो दुसरी तरफ घीसू और माधव जैसे कामचोर तथा निर्लज्ज इन्सान भी पाये जाते है। दोनों को बुधिया की चिंता नहीं है। कर्ज से दबे होने के कारण तथा आलसी होने से दोनो रोजी रोटी पाने के लिए असमर्थ है। माधव की पत्नी बुधिया जब प्रसव वेदना से मर रही थी तब दोनों इसी इंतजार में थे कि वह मर जाए तो दोनों आराम से सो जाए। सबेरे तक बुधिया की मृत्यु हो जाती है। तब वह जमीदार के पास से जितने पैसे मिलते है उससे बाजार से कफन खरीदने के बजाए लेकिन शराब की दुकान पर जाकर शराब पीते है। साथ ही तली हुई मछली और पुरियां आदि भरपेट खाकर आते है। एक जगह पर प्रेमचंदजी ने घीसू की मुख से कहलवाया है-

* असिस्टंट प्रोफेसर (हिंदी) वीर वाजेकर ए.एस.सी.कॉलेज, फुंडे ता.उरण, जि.रायगड नवी मुंबई (महाराष्ट्र) भारत

'हां बेटा वैकुण्ठ में जाएगी। किसी को सताया नही। मरते मरते हमारी जिंदगी की सबसे बडी लालसा पुरी कर गयी। वह वैकुण्ठ में ही जाएगी तो क्या ये मोटे मोटे लोग जाएंगे जो गरीबों को दोनों हाथों से लुटते है। और अपने पापों को धोने के लिए गंगा में नहाते है तथा मंदिरों में जल चढाते है।'[3] एस तरह से प्रेमचंदजी ने दलितों के जीवन की भीषण स्थितीयों का चित्रण किया है। प्रेमचंदजी अपने लेख 'हमारा कर्तव्य' में कहते है कि– 'हमारा कर्तव्य तभी पुरा हो सकता है जब हम देश के वर्तमान अछूतापन को नष्ट कर देंगे।'[4] प्रेमचंद का मानना है कि आज समाज भेदभाव और वैषम्य से पीडित है। डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर ने दलित के बारे में कहा है कि –'जातिवाद के महारोग के विनाश से ही अपनी आजादी की रक्षा करने की शक्ति उत्पन्न होगी। उसी शक्ति के अभाव में समाज में स्वराज्य का महल हिलता रहेगा।'[5]

उपयुक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि जातीवाद वर्तमान समाज की समस्या है। इसी बारे में प्रेमचंद लिखते है कि –'जिस राष्ट्रीयता का स्वप्न हम देख रहे है उसमें तो वर्णो की गंध तक न होगी। वह हमारे श्रमिकों और किसानों का साम्राज्य होगा। जिसमें न कोई ब्राम्हण होगा, न क्षत्रिय, न हरिजन। उसमें सभी भारतवासी होंगे या सभी हरिजन होंगे।'[6] इस प्रकार प्रेमचंदजी के कहानियों में दलितों की स्थिती और उसमें उनकी चेतना का चित्रण बडी खुबी से किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. प्रेमचंद, ठाकूर का कुआं, सं. कथायात्रा, डॉ.आलोक गुप्ता, पृ.12
2. प्रेमचंद, ठाकूर का कुआं, सं. कथायात्रा, डॉ.आलोक गुप्ता, पृ.11
3. प्रेमचंद, कफन, सं. कथा द्वादषी, डॉ.विनीत गोस्वामी, पृ.30
4. प्रेमचंद, सामाजिक क्रांती के दस्तावेज भाग.1 सं.शंभुनाथ, पृ.527
5. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर, सामाजिक क्रांती के दस्तावेज भाग.2 सं.शंभुनाथ, पृ.319
6. डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर, सामाजिक क्रांती के दस्तावेज भाग.1 सं.शंभुनाथ, पृ.549

****

Studies Conducted on Techniques for Mental and Constructive Skill Implied to Visually Handicapped and Hearing Impaired Child

Pooja Soni* Dr. Divya Dubey**

Abstract - The visually handicapped and hearing impaired child always suffer from problems of creativity, working ability and connectivity with surroundings and people. It becomes necessity for those types of children, to make some suitable device or medium to make their life easier and enhance their creativity and mental ability.

MIDBRAIN - It is easier and very suitable educational system for hearing impaired and visually handicapped children. **Midbrain** can help them to know their surroundings and it also help them to enhance their mental level and can do their all education, work, for earing and all the routine lifestyle as the normal children.

In midbrain, it can be used various types of learning as music, touch, vibration, healing, activation of pineal gland, telepathy, meditation, yoga and exercise so there are too many stages and level to go ahead. By this therapy, the pineal gland activate completely and works perfectly, they can do the work with double capacity and can handle the various types of works and surroundings, which are not physically connected to visually impaired and hearing impaired child. The therapy starts on very low level and do maximum heights of works so that their life become normal and they can earn their living food without any barriers. By using this therapy on learning method of children will be work more confidently, more efficiently and more intelligency with more dependency. They become capable and suitable with their profession and normal life.

Keywords - Visually handicapped, hearing impaired, midbrain therapy, pineal gland, meditation, telepathy, mental ability.

Introduction - The visually impaired and hearing impaired child faces difficulties to know their surroundings and understanding the natural things because of the lack of voice and visual sense. In this case they need some help of person or mentor or a special mentor for technique teaching to convey the messages to them by the language of method which may easy to understand for them but unfortunately component specialist trainers are very expensive. Midbrain therapy offers a huge range of opportunities in the working days for the very different type of educational area and mental capacity. It develops very innovative pattern of learning and working in easy way.

The traditional methods of learning are not attractive. When we use music, meditation, healing, vibration, telepathy, exercise and yoga, enhances learning and creative skills. There were so many examples of famous people who live their life with their disability like deafness and blindness but they were capable to do everything as Helen Killer, Kitty O' Neil, Haden Girma, Cheela Man, Vint Cerf, Derrick Coleman, Claudia L. Gordon, Casar Jacobson, Thomas Edison and Laurent Clerc.

So, we can say that any perfect medium can motivate hearing impairment and visually handicapped child but the medium should be supportive and enhance activity and creativity. If intellectual ability of a child is good, it has different direction of development but if child is blind or deaf then they should be taught with various attractive and creative skillfull development so that they could survive very well and be self-dependent.

Review Of Literature

- **Kosmo Denial(2012)** conducted a psychological assessment of visually impaired children integrated and special schools. In Kenya, there was a provision for visual impaired children to include them in integrated school. They reveal that integrated school of a social environment favourable for the development of the positive self-concept.
- **Kavita Chaudhari(2012)** carried out a study to find out the attitude and behaviour of normal students are as well as physically disabled student and compare both variable between physically disabled and normal students. The study was conducted on 200 students from special school and form general school. The finding reveals that:

1. First education was very useful for them and physically disabled children experience discomfort with the normal children.
2. Disable in the individual has limited social relationship

*Research Scholar (Home Science) Career Point University, Kota (Raj.) INDIA
** Research Supervisor (Home Science) Career Point University, Kota (Raj.) INDIA

due to their functional impairment and also to limits and constrained inter personal interaction avoid devil to them.

3. It was further impaired that by virtue of these limitation, the disabled possess less social competence their non disable counter parts.

- **"Impact of correcting visual impairment and their low vision and deaf mute student in Pune, India(2016)"** conducted a study on visual equity and vision functional before and other providing spectacles and low vision devices (LVDs) in deaf mute.

The research holds on school for deaf mute in West Maharashtra. He revealed that hearing impaired children in all special school in Pune district underwent detail usually activity testing (with teachers help), refraction errors and low vision were provided questionnaire consisting of 20 items were administered to each subject before and after providing a spectable a LVDs. He got the findings that 252/ 929(27.1%) students have refractive errors. 794(85.5%) were dependence on spectacles and LVDs. It mean Log MAR visual acuty before introduction of spectacle and LVDs for 0.33+ and 0.36 which improved with which (0.5 > weight Pz 0.0001) after intervention.

It was joined the differences in functional vision pre and post intervention was statistically significant (Pz 0.0001) for questions 1-19. The most commonly reported difficulties were for performing distance task like reading the best destination(15.7%) making out the bus number(5.1%) copying from blackboard(47.7%) in seeing if somebody is waving hands from across the road(45.5%).

In response to students felt that their vision was much worse than their friend's vision was reduced to 17.6% after dispensing spectacles and LVDs.

- **Akram and M. Naseem (2010)** conducted a study on **"self concept and social adjustment among physically handicapped person"**. The objective of handicapped person living in Lahore City. The findings of the research are that social adjustment depend upon the self concept, as high self-concept result high social adjustment of the individual as similarly as low self concept, low would be the social adjustment of the handicapped. Self-concept depends upon age gender occupation and educational level.
- **Vikas Bhardwaj (2010)** conducted study on **"Comparative analysis of Personality and Traits and Self concept with respect to Nature and degree of Physical disabilities"**. Which was concerned to all Personally factor and self concept areas on selected nature and degrees of disabilities, classified into blind, partially blind-deaf, hard of hearing, upper and lower extremity affected orthopedically disabled male children in age group of 12 to 15 years. The findings of self-concept showed that you have uniform behaviour least popular and hard of hearing children more bothered about their physical appearance had higher and anxiety level than blind on an average spend their life in happiness.
- **Laura Maulden and Pannon(2017)** investigated **"The sociology of deafness: A Literature Review of the discipline the History"**. The purpose of this study is to investigate disability of deafness in the field of sociology and other closely related fields. The findings of the paper are that deafness has been investigated for long time sociology and other related fields, that there is wide range of themes in scholarly work.
- **JASPHER DAMMEYER(2014)** conducted the study on **"Deaf blindness: A review of the Literature"**. Deaf blind is rare condition among young people, but more frequently among older people. Deaf blindness is a heterogeneous condition that varies with regards to time of onset and degree of vision and hearing impairment as well as communication mode, medical actiodoy.

He released the conclusion that deaf blindness is associated with a number of help related issues and more knowledge and needed about the impact of dual sensory loss to be able to offer the best support.

- **Jasphere Dammeyer (2012)** investigated the study on **"British Journal of Visually Impairment and Identification on Congenitial deaf blindness"**. The study reports on the assessment reproduce and experience in Denmark where Medical examinations were combined with functional assessment formed through direct observation the study evaluated through direct observation.

The study evaluated the assessment procedure of 190 children and adults found to be congenital deaf blind. Among the 190 individual 76% were determined using functional assessments in addition to medical examination. A case of example involving a 12 year old child is also presented to illustrate the complexity in identify Congenitial deaf blindness. The findings of the the paper is determining deaf blindness should not be limit to medical procedure (vision and hearing test) alone, but may also involve a lengthy process to access the level of sense functioning the individual possesses.

- **Jesper Dammyer (2013)** conducted a study on **"British Journal of Visual impairment characteristics of the Danish population of adult with acquired deaf blindness receiving rehabilitation services"**. He revealed his abstract as the study is to report on the characteristic of the population of 116 individuals with acquiring them blindness receiving National Danish Counselling and Rehabilitation services, age, gender, prevalence, social status and communication mode are some of the data included in this study. He reveals findings as like that 70% of the population was older than 79 years and 15% was between 65 to 79 years and 15% of the population was younger than 65 years. Oral speech was used by 86%, sign language by 10% and ductile sign language by 4%. Among individuals younger than 65 years less than 50% was employed or in education. Result discuss with respect to the organisation of the Dennis counseling and Rehabilitation service system.

● **Peter Semcorb (2013)** conducted a study on **"deafblindness and neglected or neglected?"** Revising the case of Beverley Lewis. Deaf blindness is particularly Complex impairment and deaf blind people are considered to be some of the most vulnerable members of society; this includes vulnerable to abuse and harms. This paper explores this unique impairment in the illustrative case of Beverley Lewis, by reviewing our chief published.

● **Jaiswal A, Aldersey H, Wellech W, Mirza M, Finalaysom M.** conducted a study on **"Participation experience of people with deaf blindness or dual sensory loss; A scoping review of global blind literature"**. The study shows that deaf blindness is also known as dual sensory loss hearing combination of visual and hearing impairment in the same individual. Evidence suggesting and increase in prevalence of this condition among older adult person with the deaf blindness frequently experience participation and social isolation, developing on understanding of other experiences can inform the design of programs and policies to enhance participation of people with the deaf blindness in societies.

Conclusion - The participation experiences of person with deaf blindness are shaped by dynamic interaction between personal factor and environmental influences. A better understanding on participation experiences may health professionals in placing emphasize on affected participating domains of the design services to enhance participation of people with deaf blindness.

The main conclusion of the the reviews is to follow **"THE MIDBRAIN THERAPY"** for hearing impaired and usually impaired child to convert to others the project is best solution for these types of children.

The theory system can be supported to every usually handicapped and hearing impaired child and facilitated every needed person. The study react a rate and helping contribution in the area of creativity and mental ability of various groups of ages so that blind and deaf can achieve their opportunity to growth so we can say that deaf and blind can contribute to society as they are also part of Nation.

References :-

1. Daniel C (2012) "Psychological assessment of impaired children in special school Education", U-20:PP;35-40, P-ISSN:2162-9463, W-ISSN:2162-8467

a. Copyright - © 2012, Scientific & Academic publishing, doi:10.5923/j.edu

2. Chaudhary K. (2012) "Psychology perceptive on physically disabled children". International Journal of Basic and advanced Research, Volumn-1(3), PP 57-59 ISSN No- 2278-7143.
3. Gogate P, Bhushan S, Roy S and Sinde A (2016) "Impact of correcting visual impairment and low vision in deaf mute student in Pune", India. Volumn-64, issued PP.898-903 doi-10.4103/0301-4738/98847
4. Akram I, Nasim A (2010): "Self-concept and social advertisement among physically handicapped person" European Journal of Social Sciences Volumn-15 (1)
5. Bharadwaj U "Comparative Analysis of personality and Traits and Self concept with respect to Nature and Degree of Physical Disabilities" (Unpublished Thesis of Doctors of psychology in Physical Education) submitted to the Lakshmibai National Institute of Physical Education (Deemed University), Gwalior (M.P.) India, June 2010.
6. Mauldin L and Fennon (2017) "The Society of Deafness; A Literature Review of the discipline the History".
7. Dammeyer J (2014) "Deafblindness: A review of the Literature Scandinavian Journal of Public Health 42(7).
8. Dammeyer J (2012) "British Journal of Visual Impairment and Identification on congnitial deaf blindness", doi:10.1177//1403494814544399
9. Dammeyer J (2013) "Characteristics of a Danish population of adults with acquired deaf blindness receiving rehabilitation services". British Journal of Visual impairment Volumn-31(3): PP-189-197 doi:10.1177//026461961340518
10. Sembcorb P, Monthorp J (2013) "The British journal of Social Work" Volumn 44(8),23 252 341
11. Jaiswal A, Aldersey H, Willich W, Mirza M, Finalayan M "Participation experiences of people with deaf blindness or dual sensory loss; A scoping Review of global deafblind literature", PLOs ONE 13(9) : e0203772, doi: 10.1371/ Journal pone 02037725001, Published: Sep 13, 2018, Copyright: ©2018 jaiswal et.al

Sources :-

1. article.sopub.org>10.5923.J.edu 20
2. www.ijbar.impactfactor.org
3. www.ijo.in
4. http://www.eurojournals.com/ejss
5. journals.sagepub.com>doi>
6. journals.sage.com>doi
7. www.kcl.ac.uk>scwro>swhh

****

पेटेंट धारी के अधिकार एवं सीमाएं : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. बी.पी. तिवारी * लोक नारायण मिश्रा **

प्रस्तावना – बौद्धिक संपदा के अंतर्गत पेटेंट एक अधिकार के रूप में आविष्कारक को उपलब्धा है आविष्कारक द्वारा किए गए ऐसे अविष्कार के लिए जोकि नवीन हो एवं वाणिज्यिक उपयोगिता रखता हूं उन्हें पेटेंट प्रदान किया जाता है पेटेंट विधि एवं समय-समय पर किए गए संशोधान एवं नियमों के माध्यम से पेटेंट धारी को विभिन्न अधिकार प्रदान किए गए हैं जो कि उसके परिश्रम का प्रतिफल प्रदान करते हैं एक आविष्कार करता वर्षो की मेहनत के पश्चात किसी अविष्कार को उल्टी ग्रुप देता है यदि उसके आविष्कार को सामान्य जन के लिए छोड़ दिया जाए तो कोई भी आविष्कार भविष्य में अविष्कार नहीं करेगा इसलिए पेटेंट अधिनियम द्वारा आविष्कारक के आविष्कार को संरक्षित किया गया है ताकि वह अपने श्रम का प्रतिफल प्राप्त कर सके। अधिनियम में अधिकार के साथ-साथ विभिन्न दायित्व भी पेटेंट धारी पर अधिाक रोपित किए गए हैं जिनका पालन किया जाना अनिवार्य शर्त के रूप में रखी गई है यदि पेटेंट धारी हर से कर्तव्यों का भंग करता है तो उसे प्रदान किया गया अधिकार वापस लिया जा सकता है। निम्न प्रदान किए गए आविष्कारों के बाद भी पेटेंट धारी को समुचित प्रतिफल नहीं प्राप्त हो पाता क्योंकि यह अधिकार सीमित अवधि के लिए होते हैं जिसे सुधार थी द्वारा समस्या के रूप में देखा जा रहा है प्रस्तुत शोध पत्र में शोधार्थी द्वारा विभिन्न अधिकार एवं दायित्व की विवेचना की जाएगी तथा आवश्यक सुधारो का सुझाव परिणाम स्वरूप प्रस्तुत किया जाएगा

पेटेंट धारी को प्राप्त प्रमुख अधिकार-

पेटेंट के उपयोग का अधिकार (धारा 48 और 50) – धारा 48 पेटेंट या उसके लाइसेंसधारी या एजेंट पर पेटेंट का फायदा उठाने का अधिकार रखती है। इसका अर्थ है कि पेटेंट या उसके द्वारा कानूनी रूप से अधिकृत व्यक्ति पेटेंट आविष्कार का व्यावसायिक उपयोग कर सकता है। वह तीसरे पक्ष को बाहर कर सकता है, जिसे उपयोग हेतु सहमति नहीं है। हालाँकि, यह अधिकार धारा 47 में निर्धारित शर्तो के अधीन है जो सरकार को अपने स्वयं के उपयोग के लिए पेटेंट उत्पाद का आयात या उपयोग करने का अधिकार देता है। पेटेंट के सह-मालिक भी पेटेंट में समान अविभाजित हिस्सेदारी के हकदार होंगे।

(लाइसेंस का अधिकार) (धारा 70) – यदि कोई पेटेंटकर्ता पेटेंट का उपयोग करने में सक्षम या इच्छुक नहीं है, तो वह किसी अन्य व्यक्ति को लाइसेंस दे सकता है और उसे पेटेंट का फायदा उठाने के लिए अधिकृत कर सकता है और उसे रॉयल्टी का भुगतान प्राप्त कर सकता है।

समनुदेशित करने का अधिकार (धारा 70 और 68) – एक पेटेंटी बिक्री के माध्यम से किसी अन्य व्यक्ति को पूरी तरह से या आंशिक रूप से अपना पेटेंट सौंप सकता है। उपहार या कोई अन्य कानूनी प्रक्रिया धारा 68 के लिए आवश्यक है कि ऐसा असाइनमेंट लिखित रूप में होना चाहिए। संयुक्त पेटेंट के मामले में सह-मालिक पेटेंट में अपना हिस्सा सौंप सकते हैं।

पेटेंट को आत्मसमर्पण करने का अधिकार (धारा 63) – अधिनियम की धारा 63 के तहत, पेटेंटकर्ता को अपने पेटेंट को आत्मसमर्पण करने का अधिकार है। एक पेटेंटी, यदि वह चाहता है तो निर्धारित तरीके से नोटिस देकर किसी भी समय अपने पेटेंट को सरेंडर करने की पेशकश कर सकता है। जब इस तरह की पेशकश की जाती है, तो नियंत्रक को उस पेटेंट के अलावा प्रत्येक व्यक्ति को सूचित करने के लिए प्रस्ताव को प्रकाशित करना चाहिए, जिसका नाम रजिस्टर में दिखाई देता है, जिसका पेटेंट में रुचि है। लाइसेंसधारी, समान काम करने वाले, और अन्य जिनके साथ पेटेंट के अनुबंधा संबंधी दायित्व हो सकते हैं, जो पेटेंट की निरंतरता पर निर्भर हैं, के हितों की रक्षा करना आवश्यक है।

डुप्लिकेट जारी करने का अधिकार पेटेंट (धारा 154 और 118) – यदि कोई पेटेंट खो गया है या नष्ट हो गया है या इसके गैर-उत्पादन को संतोषजनक ढंग से नियंत्रक को समझाया गया है, तो पेटेंटी के पास डुप्लिकेट पेटेंट के लिए आवेदन करने का अधिकार है।

उल्लंघन के खिलाफ अधिकार (धारा 104- 108) – पेटेंट के विशेष अधिकारों को कानूनी रूप से संरक्षित किया जा सकता है ताकि अनधिकृत व्यक्तियों को दूसरों के पेटेंट का शोषण करने से रोका जा सके। उल्लंघन के लिए पेटेंट राशि के अधिकारों का उल्लंघन। सिविल सूट सहित कानूनी उपायों की तलाश करने के लिए पेटेंटी के पास अधिकार है

पेटेंट के अधिकारों पर सीमा – परिचयात्मक टिप्पणी में उल्लिखित पेटेंट के अधिकार पूर्ण नहीं हैं / हैं वे कुछ सीमाओं के अधीन हैं, शर्तो और सीमाओं का पालन किया जा सकता है

सरकार द्वारा पेटेंट का उपयोग (धारा 99-103) – पेटेंट का सरकार के खिलाफ वैसा ही प्रभाव होता है जैसा कि किसी अन्य व्यक्ति के खिलाफ होता है। लेकिन सरकार पेटेंट आविष्कार का उपयोग कर सकती है, और यहां तक कि इसे कुछ परिस्थितियों और शर्तो के तहत प्राप्त कर सकती है, या किसी व्यक्ति को आविष्कार का उपयोग करने से रोक सकती है। सरकार पेटेंट लेख को आयात कर सकती है या अपने स्वयं के उपयोग के लिए लेख बना सकती है, या अपने स्वयं के उपयोग के लिए या अस्पतालों या चिकित्सा संस्थानों को वितरण के लिए पेटेंट प्रक्रिया का उपयोग कर सकती है। उपरोक्त

* Rtd. प्रोफेसर, शासकीय लॉ कॉलेज, भोपाल (म.प्र.) भारत
**शोधार्थी, बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

उपयोग पेटेंट या किसी भी रॉयल्टी के भुगतान की सहमति के बिना किया जा सकता है। इसके अलावा, सरकार के पास रॉयल्टी के भुगतान पर पेटेंट किए गए आविष्कार का उपयोग करने की भी शक्ति है।

सरकार द्वारा आविष्कार और पेटेंट का अधिग्रहण – धारा 102 यह कहती है कि केंद्र सरकार संतुष्ट होने पर कि यह आवश्यक है कि एक पेटेंट या किसी पहले से ही पेटेंट के लिए एक आवेदन में उल्लिखित एक आविष्कार सार्वजनिक प्रयोजन के लिए अधिाग्रहित किया जाए, यह एक अधिासूचना प्रकाशित करेगा आधिकारिक राजपत्र में वह प्रभाव। इस तरह के प्रकाशन पर, आविष्कार या पेटेंट और उसी के संबंध में अधिकारों को हस्तांतरित किया जाएगा और केंद्र सरकार में निहित होगा। अधिग्रहण की सूचना सरकार द्वारा आवेदक को दी जाएगी, और जहां पेटेंट में एक प्रविष्टि और अन्य व्यक्तियों को पेटेंट में रुचि है।

आवेदक या पेटेंटकर्ता को ऐसे मामले में मुआवजा दिया जाएगा, जैसा कि केंद्रीय शासन और आवेदक या पेटेंट के बीच तय हो सकता है। यदि क्षतिपूर्ति का कोई भी भुगतान नहीं किया गया है तो अधिनियम की धारा 103 के तहत किए गए संदर्भ पर मुआवजे का निर्धारण उच्च न्यायालय द्वारा किया जाएगा।

अनिवार्य लाइसेंस (धारा 84-94) – भारतीय पेटेंट अधिनियम के तहत इस आधार पर पेटेंट के अनुदान से तीन साल की सक्रियता के बाद अनिवार्य लाइसेंस दिए जा सकते हैं:

1. यदि जनता की उचित आवश्यकताओं की पूर्ती नहीं किया गया है:
2. पेटेंट आविष्कार जनता के लिए उचित रूप से सस्ती उपलब्ध नहीं है
3. भारत के क्षेत्र में पेटेंट किए गए आविष्कार पर काम नहीं किया गया है।

पेटेंट अधिकार से सम्बंधित न्यायिक निर्णय –

1. एफ. हॉफमैन-ला रोचे लिमिटेड बनाम सिप्ला लिमिटेड, मुंबई सेंट्रल – एफ. हॉफमैन-ला रोचे लिमिटेड और ओ एस आई फार्मास्यूटिकल्स इंक नाम की दो वादी कंपनियों ने सिप्ला के खिलाफ पेटेंट के उल्लंघन, खातों के टेंडर, हर्जाना और डिलीवरी के लिए स्थायी निषेधाज्ञा के तहत मुकदमा दायर किया है। भारतीय जेनेरिक निर्माता सिप्ला ने दिल्ली हाईकोर्ट में एंटी कैंसर ड्रग एर्लोटिनिब के सिप्ला के जेनेरिक संस्करण को लेकर दिल्ली हाईकोर्ट में लैंडमार्क रोशे बनाम सिप्ला पेटेंट उल्लंघन का केस जीत लिया है। यह मामला भारत के पहले उत्पाद पेटेंट नियम के तहत भारत के 2005 के उत्पाद पेटेंट नियम के तहत है, जिसमें भारत की धारा 3 डी के अलावा सार्वजनिक हित और मूल्य निर्धारण के मुद्दे शामिल थे जो सदाबहार होने से बचाता है। इस मामले के बाद दुनिया भर में फार्मा जायंट्स ने कदम रखा था। रोचे ने 2008 में दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष सिप्ला के खिलाफ मुकदमा दायर किया, जिसमें दावा किया गया कि सिप्ला का जेनेरिक उत्पाद एर्लोकीप पूर्व के भारतीय 774 पेटेंट का उल्लंघन करता है, जो दावा करता है कि 'एर्लोटिनिब हाइड्रोक्लोराइड'। विचारण न्यायाधीश ने रोचे की अपील को खारिज कर दिया कि सिप्ला को जनहित के आधार पर टेरसेवा के सामान्य संस्करण को बेचने से रोकने के लिए अंतरिम निषेधाज्ञा देनी थी और इस तथ्य के कारण कि patent 774 पेटेंट के खिलाफ एक पेटेंट निरस्तीकरण कार्यवाही चल रही थी। सिप्ला के जेनेरिक संस्करण की कीमत रोचे की पेटेंट दवा के लगभग 1 / 3 तक है। डिवीजन बेंच के लिए रोचे की बाद की अपील भी विफल हो गई न केवल पीठ ने ट्रायल जज के निष्कर्षों को बरकरार रखा, बल्कि रोचे द्वारा भारत में बाद में दायर अर्जी (IN /PCT / 2002/ 00507 / DEL) के बारे में सामग्री पेटेंट जानकारी के दमन के लिए रोचे पर जुर्माना भी लगाया । यह पेटेंट आवेदन था जो वास्तव में एर्लोटिनिब हाइड्रोक्लोराइड के पॉलीमॉर्फ़ फॉर्म बी पर था लेकिन 2008 में सिप्ला द्वारा मुख्य रूप से धारा 3 डी पर दायर विरोध के बाद इसे खारिज कर दिया गया था। सिप्ला ने तर्क दिया कि टेरसेवा पॉलीमॉर्फिक फॉर्म बी (जो कि 774 पेटेंट का उत्पाद नहीं है, लेकिन य507 अस्वीकृत आवेदन) से मेल खाती है और यह फॉर्म बी है जोय 774 में बताए गए यौगिक की तुलना में ठोस मौखिक खुराक के लिए अधिक स्थिर और उपयुक्त है। डिवीजन बेंच द्वारा पारित आदेश को चुनौती देने वाले सुप्रीम कोर्ट के समक्ष फॉर्म। और B-Roche की बाद की अपील के मिश्रण सहित पेटेंट को दिल्ली उच्च न्यायालय में चल रहे मुकदमे के कारण खारिज कर दिया गया।

2. बजाज ऑटो लिमिटेड बनाम टीवी मोटर कंपनी लिमिटेड – बजाज बनाम टीवीएस मोटर्स के मामले में डीटीएसआई के पेटेंट के अनधिकृत आवेदन को लेकर विवाद शामिल है। न केवल पार्टियों के वित्तीय दांव बल्कि पिथ और मज्जा के सिद्धांत के आवेदन के बारे में भी मामला बहुत महत्वपूर्ण है। तथ्य, सामग्री, निर्णय और इसके विश्लेषण को शामिल करते हुए, कागज उसी के मामले के अध्ययन से संबंधित है। यह भारत के कुछ पेटेंट मामलों में से एक है, जो कि समकक्षों के सिद्धांत को धयान में रखते हुए तय किया गया है, जिसे पीथ और मज्जा के सिद्धांत के रूप में भी कहा जाता है। इन सबसे ऊपर, निर्णय पर पहुंचने में शामिल सिद्धांत भी महत्वपूर्ण हैं।

3. नोवार्टिस बनाम भारत संघ – स्विस ड्रग फर्म नोवार्टिस ने भारत सरकार के खिलाफ अपना कानूनी मामला खो दिया है, जिस पर उसने 'असंवैधानिक' पेटेंट कानून प्रथाओं का आरोप लगाया था। यह प्रकरण एक महत्वपूर्ण मिसाल कायम करता है जो देश में फलते-फूलते जेनरिक बाजार को खुश करेगा। यह मामला साल की शुरुआत में दायर किया गया था, जब भारत सरकार ने नोवार्टिस को अपनी कैंसर की दवा, ग्लिवेक (रसायन विज्ञान विश्व, मार्च 2007, पी 18) के लिए पेटेंट देने से इनकार कर दिया था। खुद को एक पेटेंट-मुक्त क्षेत्र के रूप में स्थापित करने के बाद, जहाँ जेनेरिक दवा बनाने वाले फलते-फूलते रहे, भारत सरकार आखिरकार 1995 में विश्व व्यापार संगठन में शामिल हो गया, और पेटेंट देने शुरू करने के लिए सहमत होना पड़ा। एक विकासशील राष्ट्र के रूप में, देश को दस साल दिए गए, जिसमें अपने पेटेंट कानूनों को अन्य विश्व व्यापार संगठन के सदस्य राज्यों के अनुरूप लाना था। लेकिन भारत ने अपने पेटेंट कानून – धारा 3 (डी) के भीतर एक प्रावधान पेश किया – जिसमें 'वृद्धिशील नवाचार' शामिल नहीं है। चूंकि पहले कई देशों में इमैटिनिब (ग्लिवेक का सक्रिय घटक) के लिए एक पेटेंट दिया गया था – भारत में पेटेंट कानूनों की शुरूआत से पहले – इसका मतलब यह था कि नोवार्टिस को एक अभिनव और बेहतर चिकित्सा होने का दावा करने वाले पेटेंट से इनकार किया जा सकता है। नोवार्टिस ने धारा 3 (डी) की संवैधानिकता को चुनौती दी, लेकिन उस मामले को चेन्नई में उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया है।

पेटेंट अधिकार के लाभ – पेटेंट धारी को पेटेंट कृत आविष्कार पर एकाधिकार प्राप्त होता है तथा उसके शोधा में लगे समय तथा श्रम का प्रतिफल अधिकार के उपयोग के रूप में प्राप्त होता है जिसके परिणाम स्वरूप वैज्ञानिक एवं शोधकर्ताओं को शोध प्रविधि में रात होने हेतु बढ़ावा मिलता है तथा नवीन आविष्कारों हेतु शोधकर्ताओं को प्रेरणा प्राप्त होती है पेटेंट अधिकार शोधकर्ता को उसके शोध के साथ पहचान प्रदान करता है क्योंकि उसके स्वयं का परिणाम होता है इस तरह से पेटेंट अधिकार नवीन शोध एवं आविष्कार हेतु आवश्यक है।

पेटेंट अधिकार से हानियां– पेटेंट अधिकार प्रदान किए जाने से आविष्कार मांगे हो जाते हैं तथा सामान्य जन तक उनकी पहुंच सुनिश्चित नहीं की जा सकती साथ ही एकाधिकार प्राप्त अविष्कार करता उसके उपयोग को सीमित कर सकता है तथा मनमाने ढंग से उपयोग को विनियमित कर देता है जो कि समाज एवं सरकार के हित में नहीं है अत: कुछ महीनों में पेटेंट अधिकार प्रदान किया जाना सामाजिक हित में नहीं माना जाता है।

निष्कर्ष– उपरोक्त अध्ययन के पश्चात जहां एक और पेटेंट अधिनियम द्वारा पेटेंट धारी को विभिन्न अधिकार प्रदान किए जाते हैं जो कि उसके श्रम एवं शोध को संरक्षित करते हैं जिनके लिए वह आविष्कार में अपने धन एवं श्रम को लगाता है वहीं दूसरी ओर पेटेंट अधिकार प्राप्त होने से उपयोग सीमित हो जाता है तथा एकाधिकार समाज तक उसकी पहुंच को सीमित करता है जिस कारण व्यापक सामाजिक हित प्रभावित होता है परंतु जहां प्रश्न समन्वय के साथ परिणाम निकालने की हो तो उपरोक्त अध्ययन से यह सिद्ध होता है कोई भी व्यक्ति अपने श्रम एवं साधनों को तभी नियोजित करेगा जबकि उसे परिणाम की आशा हो अत: पेटेंट अधिकार उस परिणाम को क्रियान्वित करते हैं जिसकी आशा शोधकर्ता रखता है अंतत: हम यह पाते हैं कि पेटेंट नवीन आविष्कारों हेतु अति आवश्यक है और इसी में राज्य एवं समाज का भी हित जुड़ा हुआ है जिसे शासन द्वारा व समाज द्वारा प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. एफ. हॉफमैन–ला रोचे लिमिटेड बनाम सिप्ला लिमिटेड, मुंबई सेंट्रल **CS (OS) No.89/2008 and C.C. 52/2008**
2. बजाज ऑटो लिमिटेड बनाम टीवी मोटर कंपनी लिमिटेड **CIVIL APPEAL No. 6309 of 2009**
3. नोवार्टिस बनाम भारत संघ **– CIVIL APPEAL Nos. 2706-2716 OF 2013**
4. पेटेंट अधिनियम 1970
5. बौद्धिक संपदा एक परिचय–डॉ. भंडारी

****

ग्रामीण विकास प्रक्रिया में सहकारिता की भूमिका (सहकारिता से ग्रामीण जीवन में सामाजिक और आर्थिक विकास का राजस्थान के हनुमानगढ़ जिले के विशेष संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन)

क्रान्ति बंसल* डॉ. सतीष कुमार**

शोध सारांश – वर्तमान समय में ग्रामीण विकास में सहकारिता अहम भूमिका निभा रहा है। हमारे देश के सर्वांगीण विकास की दो प्रमुख धारायें हैं-

(1) ग्रामीण विकास

(2) शहरी विकास।

ग्रामीण विकास का संबंध देष की 70 प्रतिशत जनसंख्या से होने के कारण हमें विकास की दिशा को पूर्णतया ग्रामीण क्षेत्रों की ओर मोड़ना होगा। अत: वे सब सुविधायें जिनके कारण व्यक्ति शहर की ओर भाग रहा है, गांवों में उपलब्ध करवानी होगी। इस महत्वपूर्ण कार्य को सहकारिता के माध्यम से संभव किया जा सकता है। गांधी जी भी कहा करते थे – 'बिना सहकार, नहीं उद्धार'।

शब्द कुंजी – सहकारी समितियां, कृषि साख सीमा, अल्पकालीन ऋण।

प्रस्तावना – सहकारिता ऐसे व्यक्तियों की स्वयं सेवी संस्था है जो अपनी सहायता स्वयं और परस्पर सहायता के सिद्धांत पर कार्य करती है। इसमें कोई भी व्यक्ति व्यक्तिगत लाभ के लिये कार्य नहीं करता।

अनेक व्यक्तियों या संस्थाओं द्वारा किसी समान उद्देश्य की प्राप्ति के लिये मिलकर प्रयास करना सहकार कहलाता है और समान उद्देश्यों की पूर्ति के लिये अनेक व्यक्तियों की सम्मिलित इकाई को सहकारी संस्था कहते हैं। सहकारिता का नारा है **'एक सब के लिये, सब एक के लिये'**।

राजस्थान में सहकारिता की शुरूआत सन 1904 में अजमेर से हुई जिसका उद्देश्य ग्रामीण विकास प्रक्रिया में किसानों को साख सुविधा उपलब्ध करवाकर महाजनों एवं अन्य बिचौलियों से मुक्ति दिलाकर शोषण मुक्त समाज की स्थापना करना था। राजस्थान में प्रथम सहकारी समिति की स्थापना अक्टूबर 1905 में 'भिनाय'(अजमेर) में की गयी। अजमेर में ही 1910 में केन्द्रीय सहकारी बैंक की स्थापना की गयी। राजस्थान में पहली बार सहकारी समिति विधेयक 1953 में पारित किया गया।

अध्ययन क्षेत्र – 12 जुलाई 1994 को जिला श्री गंगानगर से अलग होकर हनुमानगढ़ जिले की स्थापना की गयी। यह घग्गर नदी के तट पर स्थित है।

हनुमानगढ़ जिला राजस्थान के उत्तरी क्षेत्र में 29.5 से उत्तरी अक्षांश तथा 74.3 से 75.3 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। जिले के दक्षिण में चुरू जिला, पश्चिम में श्रीगंगानगर व बीकानेर जिला, पूर्व में हरियाणा तथा उत्तर में पंजाब प्रान्त की सीमा लगती है। जिले की समुद्र तल से ऊंचाई 177 मीटर है।

हनुमानगढ़ जिले में 5 विधानसभा क्षेत्र संगरिया, हनुमानगढ़, पीलीबंगा, नोहर तथा भादरा है।

जिले को 7 तहसीलों संगरिया, हनुमानगढ़, पीलीबंगा, नोहर, भादरा, टिब्बी तथा रावतसर में विभाजित किया गया है।

हनुमानगढ़ में कुल 224 ग्राम सेवा सहकारी समितियां है।

हनुमानगढ़ की मुख्य फसलें रबी में चना, सरसों, गेहूँ, अरण्ड, तारामीरा तथा खरीफ में नरमा, कपास, धान, ग्वार, मूंग, मोठ, ज्वार व बाजरा है।

समस्या अभिकथन – किसी भी समस्या पर शोध कार्य करने से पूर्व यह देखना आवश्यक है कि विभिन्न दृष्टिकोणों से उस समस्या का हल कितना आवश्यक है अर्थात उस समस्या पर शोध कार्य किया जाए तो इससे समाज व राष्ट्र को कितना एवं क्या लाभ होगा।

इसी प्रकार सहकारिता ग्रामीण विकास के लिए एक वरदान है क्योंकि सहकारिता का मुख्य उद्देश्य ही गांवों को विकास की ओर अग्रसर करना है। सहकारिता द्वारा किसानों को ऋण देकर बिचौलियों की भूमिका काफी हद तक समाप्त हो गयी है। इससे किसानों की आर्थिक स्थिति भी सुदृढ़ हुई है।

शोध विधि – इस कार्य को पूरा करने के लिये निम्न विधियां प्रयोग में लायी जा सकती है-

1. निदर्शन विधि
2. अवलोकन व प्रश्नावली
3. अनुसूचि एवं साक्षात्कार
4. सहभागी अवलोकन एवं व्यैक्तिक अध्ययन

अनुसूचि – अनुसूचि वास्तव में प्रश्नों की एक लिखित सूचि होती है जिसे अनुसंधानकर्ता सूचना-दाता से पूछता जाता है और लिखता जाता है।

साक्षात्कार अनुसूचि- इस प्रकार की अनुसूचियों में सूचनायें प्रत्यक्ष साक्षात्कार के द्वारा एकत्रित की जाती है।

साक्षात्कार – इसमें साक्षात्कारकर्ता व सूचनादाता के मध्य किसी विशिष्ट उद्देश्य को लेकर आमने सामने की स्थिति में वार्तालाप या उत्तर प्रत्युत्तर होता है।

अध्ययन के उद्देश्य :

* शोधार्थी (समाजशास्त्र विभाग) टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

** एसोशिएट प्रोफेसर (समाजशास्त्र विभाग) टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

1. इस अध्ययन का उद्देश्य है कि वास्तव में सहकारिता से ग्रामीण विकास का आधार सुदृढ़ हुआ या नहीं।
2. इस अध्ययन का उद्देश्य है कि किसानों को सहकारिता के माध्यम से खाद, बीज, पेस्टीसाइड तथा कृषि उपकरण मिले या नहीं।
3. इस अध्ययन का उद्देश्य है कि गांवों में मिनी बैंक के माध्यम से गांव में ही बैंकिंग सुविधाएं उपलब्ध हुयी या नहीं।
4. इस अध्ययन का उद्देश्य है कि ग्रामीण परिसर में वित्तीय साक्षरता को बढ़ावा मिला या नहीं।
5. इस अध्ययन का उद्देश्य है कि सहकारिता ने कृषको को दुर्घटना बीमा, मृत्यु उपरान्त ऋण का बीमा सुनिश्चित करना अर्थात सहकार जीवन सुरक्षा बीमा उपलब्ध करवाया या नहीं।

प्राकल्पना :

1. गांवों से शहरो की ओर पलायन कम करने में सहकारिता का योगदान कितना रहा।
2. सहकारिता द्वारा सभी कृषक वर्गों को अल्पकालीन ऋण बिना ब्याज के उपलब्ध हुये या नहीं।
3. सहकारिता का राजस्थान को हरा भरा करने में योगदान रहा या नहीं।
4. सहकारिता द्वारा गरीब और अमीर वर्ग की असमानता कम हुई या नहीं।
5. सहकारिता ने गांवों में वे सभी सुविधाएं उपलब्ध करवायी जो शहरों में है।
6. सहकारिता ने गरीब वर्ग को आधार प्रदान किया।
7. सहकारिता से कृषक वर्ग को अपनी फसलों का उचित मूल्य मिला या नहीं।

निष्कर्ष – इस प्रकार अन्त में यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण परिवेश को सहकारिता ने सुदृढ़ आधार प्रदान किया है तथा यह ग्रामीण क्षेत्रों के लिये आधार स्तम्भ है। बिना कोई व्यक्तिगत लाभ के यह ग्रामीण क्षेत्रों को विकास की ओर अग्रसर कर रहा है। सहकारिता द्वारा ऋण की सुविधा उपलब्ध करवाने से कृषक वर्ग बिना डरे खेती करने में सक्षम हुआ है।

भारत एक कृषि प्रधान व गांवों का देश है अत: एक ऐसे माध्यम की आवश्यकता थी जो गांवों के लिये कार्य करे, उनकी समस्या का समाधान करे, कृषको की समस्याएं समझे और यह सशक्त माध्यम सहकारिता है अत: सहकारिता के सहयोग को नकारा नहीं जा सकता।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. डॉ.एच.आर. स्वामी, डॉ. बी.पी. गुप्ता, **'ग्रामीण विकास एवं सहकारिता'**, रमेश बुक डिपो, जयपुर।
2. डॉ.एच.आर. स्वामी, डॉ. बी.पी. गुप्ता, **'भारतीय कृषि एवं सहकारिता'**, रमेश बुक डिपो, जयपुर।
3. श्यामाचरण दूबे, 1996,**'भारतीय ग्राम'**, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-240।
4. डॉ. बैजनाथ सिंह, 2010, **'सामुदायिक ग्रामीण विकास'**, नैशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, नई दिल्ली, पृष्ठ-151।

****

1857 की क्रांति का स्वरूप व प्रकृति

सचिन जेतली*

प्रस्तावना – 1857 की क्रांति न केवल भारतीय बल्कि विश्व के इतिहास में एक प्रेरणादायी घटना है। आधुनिक भारत में घटित 1857 ई. की क्रांति न केवल भारतीय उपमहाद्वीप को बल्कि एशिया, अफ्रीका यूरोप आदि महाद्वीप को भी प्रभावित किया जो अत्यन्त: महत्वपूर्ण थी। 1857 की क्रांति अंग्रेजों की साम्राज्यवादी, विस्तारवादी, शोषक व कराधान नीतियों, सामाजिक प्रथाओं में हस्तक्षेप व प्रशासनिक अत्याचारों का प्रत्युत्तर था। इसे ब्रिटिश भारत के औपनिवेशिक इतिहास का महान विभाजक काल भी माना जाता है। 1857 की क्रांति के स्वरूप व प्रकृति के विषय पर इतिहास लेखन में अनेक विचारधारायें रही। जिसमें साम्राज्यवादी, राष्ट्रवादी, मार्क्सवादी, सबाल्टर्न विचारधारा प्रमुख है। 1857 की महान और क्रांति का इतिहास शास्त्रीय पद्धति से किसी भी स्वदेशी अथवा विदेशी ग्रन्थकार ने स्पष्ट रूप से नही लिखा। जिसके कारण क्रांति के स्वरूप व प्रकृति के बारे में आमजन में विलक्षण व भ्रामक दृष्टि का सृजन हुआ। इस भ्रमोत्पादन का दायित्व अंग्रेजी इतिहासकारों पर भी आता है। उनमें से कुछ ने क्रांति की घटनाओं विवरण मात्र ही दिया, कुछ ने क्रांति का इतिहास पक्षपात युक्त बुद्धि से प्रवृत्ता होकर लिखा।

शोध का उद्देश्य– 1857 की क्रांति की स्वरूप के विषय में भारत के स्वतंत्र इतिहासकारों, विदेशी इतिहासकारों, क्रांति के अग्रणी नेता, विचारक व समाज सुधारकों ने अपने–अपने विचार रखें। सभी ने अपनी बुद्धि व तथ्य से इसकी विवेचना अलग–अलग तरीके से की।

साम्राज्यवादी इतिहासकारों ने इसे सैनिक विद्रोह तक सीमित रखा। मार्क्सवादी विचारकों ने इसे सामन्ती व्यवस्था व पूंजी व्यवस्था पर प्रहार माना।

धार्मिक दृष्टिकोण वाले इतिहासकारों ने इसे मुसलमानों का ईसाइयों के विरूद्ध विद्रोह कहा। परन्तु विनायक सावरकर सहित राष्ट्रीय इतिहासकारों ने 1857 की क्रांति को सैनिक स्वरूप, जातीय वर्ग संघर्ष, सामन्ती व पूंजी व्यवस्था से अलग समझते हुये भारत का प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन व जन विद्रोह माना है। प्रस्तुत शोध पत्र में 1857 की स्वरूप व प्रकृति को सही अध्ययन पद्धति से विवेचनात्मक एवं विश्लेषणात्मक विवरण देना मूल उद्देश्य है।

शोध के सोपान – 1857 की क्रांति के स्वरूप व प्रकृति को सही प्रकार से समझने के लिये साम्राज्यवादी, राष्ट्रवादी, मार्क्सवादी, सबाल्टर्न विचारधारा के इतिहासकारों व लेखकों की शोध ग्रंथों व पुस्तकों का अध्ययन अति आवश्यक है। साम्राज्यवादी इतिहासकार टी.वी. लारेन्स, सर जान सीले, पी.ई. राबर्टस, वी.ए. स्मिथ ने इसे लगभग शुद्ध सैनिक विद्रोह मानकर इतिहास लेखन किया। मार्क्सवादी इतिहासकार इतिहास लेखन व व्याख्या में आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियों के वैचारिक परिप्रेक्ष्य को महत्व दिया व क्रांति को सामन्ती व्यवस्था व पूंजीवाद पर प्रहार माना। राष्ट्रवादी विचारधारा के पोषक इतिहासकार जो मूलत: भारतीय उप महाद्वीप से ही सम्बंधित रहे। जिसमें पटाभिसीता रैमया, शशिभूषण चौधरी, अशोक मेहता व जवाहर लाल नेहरू ने जन विद्रोह के रूप में भारत का सबसे बडा राष्ट्रीय आंदोलन माना। शोध के लिये क्रांति के फैलाव क्षेत्र, ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थिति, तत्कालीन भारतीय राजवंशों की स्थिति, सामन्तों व जागीरदारों की भूमिका को समझना आवश्यक है। ताकि शोध परक दृष्टि से इस महान क्रांति की प्रकृति व स्वरूप को समझा जा सके।

नवीनतम शोध के अनुसार क्रांति के केन्द्र मेरठ, दिल्ली, नसीराबाद, कोटा, अवध, कानपुर, झांसी, ग्वालियर, फैजाबाद, जगदीशपुर, आउवा थे। परन्तु क्रांति का फैलाव भारत के सभी प्रांतो उत्तारप्रदेश, पंजाब, बिहार, उडीसा, असम, मध्यप्रदेश, गुजरात, त्रिपुरा, राजस्थान, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश वही सुदूर दक्षिण में कडप्पा, गुन्टूर, विगलपुर, बैंग्लोर, मछलीपटटम, कालीकट, कोचीन विशाखापतनम तक हुआ। जहां सैनिक छावनियां नही थी। वहां भी व्यापक प्रसार होना क्रांति के स्वरूप को जन आंदोलन होना सिद्ध करता है। इतिहास के विभिन्न धाराओं का अध्ययन व शोध यह स्पष्ट करता है कि 1857 की क्रांति में साधारण जनता, जमींदार, कृषकों, श्रमजीवी, मजदूरों, दलित महिलाओं ने निस्वार्थ भाव से बढ चढ कर हिस्सा लिया। इसमें आमजन की महत्वपूर्ण भूमिका थी।

शोध का निष्कर्ष – इतिहास लेखन की साम्राज्यवादी, राष्ट्रवादी, मार्क्सवादी, सबाल्टर्न विचारधारा के विवेचनात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन स्वरूप क्रांतिकारियों के संगठन, राजवंश व राजघराने, सामन्तों की स्थिति, आंदोलन की रूपरेखा, तत्कालीन शासकों के मत, महिलाओं व जन साधारण की भूमिका के अध्ययन करने पर स्पष्ट रूप से पाया 1857 की क्रांति सैनिक अंसतोष के फलस्वरूप पनपी थी। परन्तु अंग्रेंजो की साम्राज्यवादी शोषक नितियों, प्रशासनिक त्रुटियों, भारतीयों के साथ भेदभावपूर्ण व्यवहार, भारतीय राजवंशों के साथ अपमानजनक संधियों, हिन्दुओं– मुस्लिमों के धार्मिक व सामाजिक जीवन में अनावश्यक हस्तक्षेप के कारण यह क्रांति धीरे – धीरे जन क्रांति के रूप में परिणित हुयी। यह क्रांति का स्वरूप राष्ट्रीय आंदोलन व स्वतंत्रता संग्राम का ही था। जब सैनिकों के साथ– साथ छोटे सामन्त, कृषक, श्रमजीवी, लेखक, वकील, महिलायें, दलित सब शामिल हो गये तो इसका स्वरूप राष्ट्रीय हो गया। पूरे भारत वर्ष में आम जनता से साधारण जननायक आगे आये जिन्होने क्रांति में अपना बलिदान दिया। 1857 की क्रांति में लगभग 3 लाख से अधिक जनसाधारण शहीद हुये केवल अवध में 1 लाख 20 हजार लोगों ने अपने प्राणों की

* शोधार्थी, टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

आहुति दी।

लखनऊ में 20 हजार, इलाहाबाद में 6 हजार जन साधारण को अंग्रेजों ने सरेआम कत्ल कर दिया। सभी तथ्यात्मक विश्लेषण क्रांति को विशुद्ध जनक्रांति स्पष्ट करता है। भारत सरकार द्वारा 1857 के विद्रोह 150 वीं जयन्ती पर इसे प्रथम स्वतंत्रता संग्राम घोषित करना निश्चित ही क्रांति के स्वरूप जन आंदोलन होना सिद्ध करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मजूमदार, आर.सी – द सिपाय आफ म्यूटिनी एण्ड रिवोल्ट आफ 1857 कलकत्ता 1963
2. सावरकर वी.डी – 1857 का भारतीय स्वतंत्रता समर प्रभारत प्रकाशन दिल्ली 2007
3. जैन एम.एस. – आधुनिक भारत का इतिहास मैकमिलन कम्पनी इण्डिया लि0 दिल्ली 1977
4. चन्द्रा विपिन – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष , हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन नई दिल्ली 2003
5. ग्रोवर यशपाल – यआधुनिक भारत का इतिहास एवं चांद एण्ड कम्पनी दिल्ली 2003
6. नागौरी एस.एल – भारत का राष्ट्रीय आंदोलन एवं संवैधानिक विकास, आर.बी.एस. पब्लिकेशन जयपुर 2006

****

Antidumping and Competition Law: A Critique

Aprajita Bhargava*

Abstract - Antidumping is barred by the WTO keeping in mind that other business contemporaries will in the spot of bother and great loss can be occurred. The dumping of the goods or electronic goods or any other similar goods in particular can be hazardous in other way, but the main contention is to protect the market and to keep it healthy. Competition law in India has made a great impact on antidumping strategy by barring it and proving that practice as unlawful. Competition and antidumping laws come from the same family tree but the two diverge widely. This paper shall attempt to discuss area of divergence and convergence between anti-dumping and competition law on a critical note. This paper deals with the concept of dumping and its purpose and effects against the competition law. In order to simplify the complexity between the Anti dumping law and competition law the present paper focuses on the main parameters of detecting the flaw and highlighting for the better amendment.

Keywords - Anti-dumping, Competition law, WTO.

Introduction - Dumping, is a pricing practice where a firm charges a lower price for exporting goods than it does for the same goods sold domestically. It is said to be the most common form of price discrimination in international trade. Dumping can only occur at places where imperfect competition and where the markets are segmented in a way such that domestic residents cannot easily purchase goods intended for export. It is a subtle measure of protection which comes under the non-tariff barriers and is product and source specific. Antidumping duties were initiated with the intention of nullifying the effect of the market distortions created due to unfair trade practices adopted by aggressive exports. They are meant to be remedial and not punitive in nature. A harmful to the domestic producers as their products is unable to compete with the artificially low prices imposed by the imported goods. The process of economic liberalization and institutional reforms which formally began in 1991 has significantly shaped India's transition from a planned economy to a market economy. The substitution of the erstwhile Monopolies and Restrictive Trade Practices Act (MRTP), 1969 by the Competition Act, 2002 is an exercise to facilitate India's transition towards a market economy. The new Competition policy is aimed at promoting and sustaining competition in Indian market and ensuring overall economic efficiency in the wake of a liberalized economy. The process of opening up of markets may pose threat to domestic industries, which may wilt in the wake of increased foreign competition. Such threats from foreign competition may not always be 'fair'. In order to allay these fears, the multilateral framework for trade liberalization under the General Agreement on Tariffs and Trade (GATT) provided for certain contingency measures such as 'antidumping' to protect the domestic industry from 'unfair trade practices' such as 'dumping'. India enacted its frame work of antidumping laws and rules in 1995 in order to give effect to India's commitments under the World Trade Organization (WTO). Since then, India has emerged as one of the most prolific users of antidumping measures in the world.

Interface Between Anti-Dumping Law And Competition Law

- **Brief Introduction of Competition Act, 2002** - The Preamble of the Competition Act, 2002 provides that:

An Act to provide, keeping in view of the economic development of the country, for the establishment of a Commission to prevent practices having adverse effect on competition, to promote and sustain competition in markets, to protect the interests of consumers and to ensure freedom of trade carried on by other participants in markets, in India, and for matters connected therewith or incidental thereto. The Act provides a very wide mandate for the Competition Commission of India to enforce. Apart from it rather broad objective, the Act contains provisions which have rather become standard in the competition jurisdictions all across the globe. These are the provisions relating to anti-competitive agreements, abuse of dominant position and regulation of combinations. In the respect of anti-dumping law the provisions relating to abuse of dominant position and anti-competitive agreements assume importance. In respect of dominant position it is pertinent to note that whereas dominance is not frowned upon by the Competition Act, 2002 abuse of dominance is certainly frowned upon by the legislation. Another significant feature in the context of these provisions of the Act is that anti-competitive

*Research Scholar, DAVV, Indore (M.P.) INDIA

agreements and abuse of dominance are to be prohibited by the orders of the Commission whereas the mergers are to be regulated by the orders of the e of Commission. This difference in law is of immense significance. Whereas the former two prevent enhancement of consumer welfare the latter drives economic growth. Hence, the distinction has been maintained.

- **Section 4 of Competition Act, 2002 -** In respect of abuse of dominant position, Section 4 (2) enlists the circumstances when an enterprise shall be considered to be abusing its dominant position. It states:

(2) There shall be an abuse of dominant position under sub-section (1), if an enterprise, -
a) Directly or indirectly, imposes unfair or discriminatory-
1) Condition in purchase or sale of goods or service; or
2) Price in purchase or sale (including predatory price) of goods or service; or
b) limits or restricts
3) Production of goods or provision of services or market therefor; or
4) technical or scientific development relating to goods or services to the prejudice of consumers; or
c) Indulges in practice or practices resulting in denial of market access; or
d) Makes conclusion of contracts subject to acceptance by other parties of supplementary obligations which, by their nature or according to commercial usage, have no connection with the subject of such contracts; or
e) Uses its dominant position in one relevant market to enter into, or protect, other relevant market.

- **Abuse of Dominant Position** - One of the most vigorous users of the predominant international trade defense measure, i.e. antidumping duty, India has an unenviable and unfortunate reputation for extreme protectionism being afforded to its domestic industries through the use of anti-dumping investigations and duties. Anti-dumping as an international trade defense measure is by definition protectionist of the Indian market and is based on the following three touchstones:

1. That there is a significant difference between the normal value of a commodity or product and the price at which it is exported to India;
2. That the difference between the normal value and the export price to India greater than certain tolerances is per se evidence of dumping;
3. If this dumping causes or is likely to cause injury to the domestic industry, antidumping duties would be levied.

The effect of anti-dumping duty usually renders the export of the product to India economically unviable. Now, the touchstone of competition law is to avoid an appreciable adverse effect on a relevant market. Quite naturally, the availability of competing products, whatever their source provides wider and more economic options to consumers in the relevant market for a product.

A practical example can be considered. Two dominant Indian manufacturers of a product jointly have in excess of half of the domestic production of the product. Under the rules, a petition for imposition of antidumping duties can be filed by the two as being representative of the domestic industry in India. Let us assume that a few smaller domestic players and exports to India by foreign entities constitute the rest of the supply of the product to the market in India. There is no substantive ideological divergence between anti-dumping law and competition law on the acceptability of the dominant nature of these petitioners. Nothing in competition law disapproves dominance itself as long as it is good. But in case the anti-dumping investigation takes place. This investigation will determine as to whether the users of the product manufactured by the two dominant companies in the market will be left with a reduced choice and constrain them to purchase willy-nilly from the two dominant companies.

The nature of anti-dumping proceedings, the costing method usually resorted to by the petitioners, and the reluctance of foreign exporters to disclose sensitive costing information most often means that establishing a proper normal value and that there is no difference between the normal value and the export price to India is not possible. The result - An overwhelming majority of the recommendations of the antidumping authority are to impose anti-dumping duties, and thus, knock exporters out of the Indian market. Repeatedly, hapless user-consumers of the products have vigorously protested against the imposition of anti-dumping duties on the basis that the same constitutes handing over complete control of the market to a few big domestic industries who, according to them, then proceed to carefully control production volumes, manipulate market prices, refuse to deal, and indulge in whole slew of practices that are blatantly anti-competitive under the competition law. Added to this is the provision under the anti-dumping rules for an exporter to India to provide an undertaking to the authority that it will not sell the product to India at anything under a certain price-surely a prime instance of state-sponsored price-fixing. The Competition Commission should track prices and trends for dominant domestic producers after they have succeeded in obtaining anti-dumping duties on foreign exports. And of course, the suffering user-consumers now have a potentially powerful ally in the New Competition Regime, to whom they are free to complain. But most importantly in the case of our two dominant manufactures and there anti-dumping proceedings several questions arises.

1. Should dominant enterprises be permitted to use the antidumping mechanism to create a pedestal from which to unleash abuses of their dominance?
2. Would not some aggrieved consumers be entitled to file a complaint before the Competition Commission that an order imposing antidumping duties has resulted in abuses of dominant position and that the commission ought to take steps to redress the market balance?

Criticism Of Antidumping Laws And Its Effect On Competition - Despite the growing popularity of anti-

dumping actions, the theoretical underpinning for anti-dumping actions has been criticized almost universally by economists and scholars. Anti-dumping theory holds that price discrimination is an undesirable practice whereby predatory exporters attack markets by shipping at unfairly low prices, driving local competitors out of business, and accumulating monopoly or oligopoly power. Anti-dumping duties, under this theory, are necessary to counteract predatory price discrimination by exporters. Economists, academics and government organizations roundly criticize this justification for anti-dumping duties, for a variety of reasons, discussed below.

From the point of view of economics, there is no reason to support any anti-dumping law, since price differentiation across markets is a legitimate and a perfectly rational, sensible and legitimate profit-maximization action. Under this line of argument, there is no justification for condemning certain export prices simply because they happen to be lower than prices in other markets. Domestic price discrimination i.e., differences in pricing between one country's domestic regional markets, normally is not penalized. There arguably is no economic reason for treating "international" price discrimination any more harshly by imposing dumping duties. Of the different categories of dumping, only predatory pricing dumping and most instances of strategic dumping raise overall welfare concerns. Yet, these two forms of dumping pertain largely to the theoretical realm, as most anti-dumping cases in the real world do not involve dumping as defined by these two categories.70 Indeed, in today's trade environment, characterized by increasing competition among a variety of export suppliers from different countries, predatory pricing practices arguably are futile because market domination and monopolistic pricing are not attainable. Economists, therefore, generally take the view that frequent use of anti-dumping action cannot be justified as necessary to prevent predatory pricing.

Another common criticism of anti-dumping measures is that they do not afford effective assistance to the domestic industry they are intended to protect. Because of the expansion of international suppliers, a complainant's failure to target all possible suppliers could mean that anti-dumping duties against only some suppliers, even if significant, would merely divert the source of exports to non-targeted countries, without an appreciable price effect in the import market. Moreover, uncompetitive industries are more likely than others to receive protection, and are not likely to benefit from it in the long term.

The anti-dumping protections often come at a substantial cost to consumers. They protect producers at the expense of consumers, which results in higher prices, lower quality products, less consumer choice and a general lowering of the standard of living for the vast majority of people. Anti-dumping measures also destroy more jobs than they create. The costs to the economy of anti-dumping measures are significantly higher than the benefit to the protected domestic industry. Overbroad anti-dumping duties may curtail importation of products not even produced by domestic companies. The burden and damage to consumer industries dependent on the imported product can be significant and can outweigh any benefits to the upstream complainant industry.

The anti-dumping laws are ambiguous and vague. Producers never know by which standard they will be held accountable because there are so many standards. Anti-dumping rules have been implemented and applied by national authorities in an unfair manner, both procedurally and substantively. From the point of jurisprudence also, anti-dumping is not justified. From a rights standpoint, anti-dumping laws prevent consenting adults from entering into-contracts at a mutually agreed upon price. Anti-dumping laws cannot be justified by any theory of liberal democracy. They are not utilitarian because they do not result in providing the greatest good for the greatest number. Indeed, they provide well for the minority i.e. producers at the expense of the greatest number i.e. consumers. They reduce rather than enhance social cooperation and harmony. They violate rights. Even redistributionist's' would argue against them because they redistribute income in the wrong direction — from the poor and middle classes to the rich.

It has also been stated that the mere existence of antidumping laws also makes it possible for domestic producers to charge higher prices than would otherwise be possible. That's because antidumping laws make it dangerous for foreign competitors to engage in aggressive price competition. As a result, domestic producers can raise their prices with little fear of being underpriced by foreign suppliers. Thus existence of antidumping law hurts competition both ways, one by forcing exporters to sell at higher prices and other by providing the domestic producers the freedom to charge higher prices than what would be otherwise possible. Thus inherently antidumping law can be said to be protectionist because it benefits domestic producers at the expense of consumers by limiting foreign competition and is thereby in direct conflict with the objectives of competition law. Very often firms misuse antidumping laws by initiating frivolous investigations. This has the effect of raising the cost of doing business for the exporters, apart from leading to efficiency losses. The cost of participating in the investigation process may be very high (in terms of legal fees, time and resources allocated for preparing for the investigation etc.) which raises the cost of doing business. Moreover, studies have shown that once an antidumping investigation is initiated it invariably results in imposition of antidumping duty. Thus virtually any case that is initiated stands a good chance of getting protection under antidumping laws.

Conclusion - The first best option would be to abolish antidumping laws altogether. Governments must attempt to dismantle the antidumping mechanism and merge it with the Competition Law. While this would be preferable, it may

not be feasible in practice to pursue it unilaterally. It could be pursued through bilateral agreement or in the context of plurilateral arrangements. Another option would be to follow a strict predation standard in investigating antidumping cases and limit the scope of antidumping to predatory cases alone. This requires a major revision of the definition of dumping and limiting the concept of antidumping to predatory pricing. The third option would be to introduce the "public interest" test. National anti-dumping authorities should consider whether the imposition of anti dumping duty serves the public interest." Public interest" in this context would involve a multitude of factors, such as the interests of domestic producers that are affected by dumped imports, importers of the product, and domestic consumers. Article VI and the Anti-dumping Agreement protect only one interest, namely that of domestic producers. The imposition of anti dumping duty may, however, have a far-reaching effect on other interests in society, such as consumers of the product subject to the anti-dumping duty. In light of this, it seems reasonable to argue that there should be provision in Article VI or in the Antidumping Agreement that domestic anti dumping legislation contain the requirement that the public interest be considered when deciding whether to impose an antidumping duty. This would reintroduce competitive considerations into the antidumping process and change the general mode of practice of the national antidumping authorities. Contrary to antidumping law's supposed primary objective of protecting producers, the "public interest" clause is interpreted as covering user and consumer interests, thus causing the protectionist element of antidumping actions to decline.

References:-

1. Agarwal Aradhana. Antidumping law and practice: an Indian perspective" Working Paper 85, ICRIER, 2002.
2. Handbook on Anti-Dumping, Ministry of Commerce, Government of India visited, 2003.
3. McGee Robert W. Antidumping laws as weapons of protectionism: case studies from Asia", Working paper, January College of Business Administration, Florida State University, 2008.
4. Terence Stewart P, Amy Dwyer S. WTO Antidumping and Subsidy Agreements 65 Kluwer Law International, 1998.
5. Trade and Competition: Frictions after the Uruguay Round, International Trade and Investment Division, Organization for Economic Cooperation and Development, 1996.
6. Viner J. Dumping: A Problem in International Trade, 1922.

****

Analysis of GST as an Indirect Tax and it's Effect

Antim Banthiya*

Abstract - The Goods and Service Tax is new for all. The Goods and Services Tax (GST) is a comprehensive tax on manufacture, sale and consumption of goods and services throughout India. It replaced the plethora of different taxes that the Central and State governments levy separately.Even a tiny change in the tax chain leads to a domino effect; we can very well imagine the radical changes that would be brought in by the GST. The new tax law will bring far-reaching reforms, affecting every member of the society. GST will be beneficial to the Centre, states, industrialists, manufacturers, the common man and the country at large since it will bring more transparency, better compliance, an increase in GDP growth and revenue collections.Therefore, we need to be aware of different aspects of GST. In this connection, this paper is an outcome of an explanatory research which is based on secondary data to understand the concept of GST,kind of GST implementation and the impacts of GST on common man. This paper will also focus on the advantages/benefits associated with GST system in India.This paper is intended to focus on the impacts of GST and problem associated with implementation of GST in India.
Keywords— Goods and Services Tax (GST), Indirect Tax, SGST, CGST, Supply Chain. Consumer,VAT.

Introduction - The Indian economy is entered into globalization. A number of Free Trade Agreements (FTAs) have been signed in recent times. This will allow imports into Indian duty free or at very low duties. Hence , there is need to have a nation – wide simple and transparent system of taxation to enable the Indian Industry to compete not only internationally, but also in the domestic market. Integration of various Central and State taxes into a GST system would make it possible to give credit for input taxes collected. GST being a destination based consumption tax based on VAT principle, would also greatly help in removing economic distortions caused by present complex tax structure and will help in development of a common national marked.

The implementation Goods and Services Tax (GST) given boost to the Indian economy by changing indirect taxation regime which is needed most. It has eradicated the cascading effect of taxes making the cumulative figure a huge one, which the Indian public was giving. Goods and Services Tax, better known as GST is an indirect tax which aims to make our Country a common and unified market. It is applied on the supply of goods and services within country. The taxes collected by the Centre include Excise duty (medicinal and toilet preparations), Central Excise duty, Additional Duties of Excise (on textile and its products), extra Duties(goods ofspecial importance), Customs duties, Service Tax, and Central surcharges. The State taxes consist of State VAT, Entry Tax, CST, EAT (movies and entertainment), LT, PT, Taxes on activities such as advertising, gambling, and State surcharges , betting , lotteries etc.

The concept

An overview of GST - GST was first delivered throughout 2007-08 finances session. On 19th December 2014, the invoice was provided on GST in Loksabha . At present, there are round a hundred and sixty countries that have carried out GST or VAT in some form or other. In a few nations, VAT is the factitious for GST, but conceptually it is far a vacation spot primarily based tax imposed on intake of goods and services. Many specialists have advised that to clear up the issues of various kinds of taxes, there is a need to streamline all oblique taxes and implement a 'Single Taxation' system. This device is entitled as Goods and Services Tax (GST). Goods and Services Tax as the call implies, it's far an indirect tax applied both on items and services at a uniform price. In simple time period, GST is a tax that human needs to pay on deliver of goods and services. Any man or woman, who's imparting or providing items and services, is at risk of fee GST. A single shape of tax called GST might be implemented all through the use of a, changing a number of other oblique taxes like VAT, Service tax, CST, CAD and so forth. Therefore, GST shall be the largest indirect tax reform imparting a uniform and simplified manner of oblique taxation in India. GST is an intake based tax (i.e.) based totally at the 'Destination Principle'. Thus, GST is imposed on items and services at the location in which the real consumption takes place.

Supply Chain of GST - GST is collected on cost-introduced goods and offerings at each stage of sale or purchase within the deliver chain. GST paid at the procurement of products and services may be set off towards that payable on the supply of products or offerings. The manufacturer or

*Research Scholar, Oriental University, Indore (M.P.) INDIA

wholesaler or retailer pays the applicable GST charge but will claim lower back via tax credit mechanism. But being the ultimate individual inside the supply chain, the end customer has to undergo this tax and so, GST is going to be gathered at point of Sale.

Figure No: 1 – Supply Chain of GST

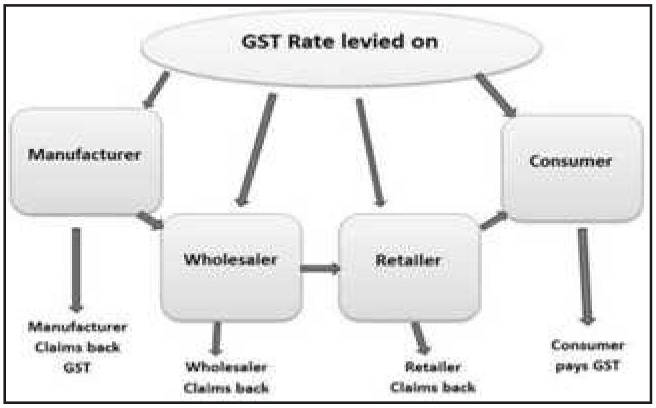

Reasons for adopting uniform taxation system in form of GST - Reasons for adopting the GST differ from one country to another but some of the widely perceived advantages that seem to have been particularly significant in influencing the policy makers to opt for GST are: (i) A properly designed broad based VAT provides more stable revenues than other broad based consumption taxes. (ii) Compared with other types of consumption taxes like retail sales tax, a GST is neutral (does not provide business incentive for vertical integration and also promotes equitable distribution of tax burden) and easy to administer. (iii) It reduces tax fraud and evasion since the tax is levied at each stage in the supply chain. Invoice deduction method i.e. the need for invoices for claiming input tax strengthens the cross auditing relationship between the buyer and seller. Nonetheless, VAT/GST is not flawless. One of the major disadvantages of VAT/GST is its regressive nature because it is a consumption tax and places undue tax burden on poor people who consume a higher proportion of their income than rich people. VAT/GST also increases compliance cost and burden for businesses especially small and medium enterprises whose profit margins are quite low and are not able to absorb the increased operational and compliance cost under VAT/GST. VAT deduction mechanism makes tax evasion extremely profitable. Reporting false input tax deductions and forging special invoices can be very serious. Despite these limitations, immense benefits of VAT/GST cannot be denied. To counteract the above weaknesses of VAT, the design of VAT reform needs to be detailed and comprehensive along with the development of a sound IT infrastructure. India, after a decade long struggle, has finally implemented Goods and Services Tax, from 1 July 2017. It has subsumed 17 central and state indirect taxes and around 23 surcharges. It has simplified the indirect tax structure of India by putting an end to the cascading effect of multiple-layer of taxes. GST is a nationwide tax levied on supply of goods and services in India. GST is expected to bring a basket of benefits for the Indian economy in terms of buoyant revenues, GDP growth, employment, lower logistics costs and increased exports. However, these benefits are contingent upon the manner of its implementation.

GST has already been implemented by more than 160 countries around the world. Hence it carries a rich history of successes and failures. One can study the impacts of VAT/GST on any economy.

Impact of GST on Manufacturers, Distributor, and Retailers - GST is a boost competitiveness and performance in India's manufacturing sector. Declining exports and high infrastructure spending are just some of the concerns of this sector. Multiple indirect taxes had also increased the administrative costs for manufacturers and distributors and retailers with GST in place, the compliance burden has eased and this sector will grow more strongly and This will lead to lesser tax evasion.

Impact Of GST On Service Providers - Most of the tax burden is borne by domains such as IT services, telecommunication services, the Insurance industry, business support services, Banking and Financial services, etc. These pan-India businesses already work in a united market and will see compliance burden becoming lesser. But they will have to separately register every place of business in each state. By GST one uniform number is collectively feasible to work in all states of India .

Sector-wise Impact Analysis is as follows - LOGISTICS: In a vast country like India, the logistics sector forms the backbone of the economy. We can fairly assume that a well organized and mature logistics industry has the potential to leapfrog the "Make In India" initiative of the Government of India to its desired position.

E-COMMERCE: The e-commerce sector in India has been growing by leaps and bounds. In many ways, GST will help the e-com sector's continued growth but the long-term effects will be particularly interesting because the GST law specially proposes a Tax Collection at Source (TCS) mechanism, which e-com companies are not too happy with.

PHARMA: On the whole, GST is benefiting the pharma and healthcare industries. It will boost generic drug makers, medical tourism and simplify the tax structure.

TELECOMMUNICATIONS: In the telecom sector, prices will come down after GST. Manufacturers will save on costs through efficient management of inventory and by consolidating their warehouses.

TEXTILE The Indian textile industry provides employment to a large number of skilled and unskilled workers in the country. It contributes about 10% of the total annual export, and this value is likely to increase under GST.

REAL ESTATE The real estate sector is one of the most pivotal sectors of the Indian economy, playing an important role in employment generation in India. The impact of GST on the real estate sector cannot be fully

assessed as it largely depends on the tax rates.

AGRICULTURE The agricultural sector is the largest contributing sector the overall Indian GDP. It covers around 16% of Indian GDP. One of the major issues faced by the agricultural sector is the transportation of agri-products across state lines all over India.

FMCG The FMCG sector is experiencing significant savings in logistics and distribution costs as the GST has eliminated the need for multiple sales depots.

FREELANCERS Freelancing in India is still a nascent industry and the rules and regulations for this chaotic industry are still up in the air. But with GST, it will become much easier for freelancers to file their taxes as they can easily do it online.

AUTOMOBILES The automobile industry in India is a vast business producing a large number of cars annually, fueled mostly by the huge population of the country. Under the previous tax system, there were several taxes applicable to this sector like excise, VAT, sales tax, road tax, motor vehicle tax, registration duty which will be subsumed by GST.

STARTUPS With increased limits for registration, a DIY compliance model, tax credit on purchases, and a free flow of goods and services, the GST regime truly augurs well for the Indian startup scene.

Challenges for implementing GST System :

1. To implement the bill there has to be lot of changes at administration level, Information Technology integration has to happen, sound IT infrastructure is needed, the state governments has to be compensated for the loss of revenues (if any) and many more.
2. GST, being a consumption-based tax, states with higher consumption of goods and services will have better revenues. So, the co-operation from state governments would be one of the key factors for the successful implementation of GST.
3. Since it is consumption based tax, in case of offerings the region wherein provider is supplied desires to be determined.
4. A strict test on exploiting activities will need to be accomplished, in order that the final consumer can enjoy the real benefits of GST. Although, a big quantity of officers are being educated and systematic IT software is being advanced for the a hit implementation of GST, it's going to take the time for the persons which includes the manufacturers, the wholesalers, the retailers or the final consumers to understand the entire system and observe it efficiently.)

Conclusion - India is all set to introduce Goods and services tax after crossing the various hurdles in its way. GST is a long-time period method deliberate by using the Government and its effective impact will be seen ultimately most effective. Also, this will manifest if GST is introduced at a nominal charge to reduce the overall tax burden of the final customers. Let us desire GST will leave a positive effect and will assist to enhance-up the Indian economy and could convert India right into a unified national marketplace with simplified tax regime.

A rising Indian economic system will in any case help inside the financial boom of the not normal person. Let us hope this 'One Nation - One Tax' proves to be a game changer in a high quality manner and proves to be beneficial no longer best to the common place man however to the use of as a whole. There are various challenges in way of GST implementation as discussed above in paper. They need more analytical research to resolve the fighting interest of various stake-holders and accomplish the commitment for a fundamental reform of tax structure in India.

References :-

1. Akanksha Khurana (2016), "Goods and Services Tax in India - A Positive Reform for Indirect Tax System", Vol. 4, Issue 3, Pp. 500 -505.
2. Monika Sehrawat (2015), "GST in India: A Key Tax Reform", International Journal of Research – Granthaalayah, Vol. 3, Issue 12, December 2015, Pp. 133 -141.
3. Nitin Kumar (2014), "Goods and Service Tax in India- A Way Forward", Global Journal of Multidisciplinary Studies, Vol. 3, Issue 6, May 2014.
4. Pradeep Chaurasia et. al., (2016), "Role of Goods and Services Tax in the Growth of Indian Economy", International Journal of Science Technology and Management, Vol. 5, Issue 2, February 2016, Pp. 152 -157.
5. Lourdunathan, F., & Xavier, P. (2017). A study on implementation of goods and services tax (GST) in India: Prospectus and challenges. International Journal of Applied Research, 3(1), 626-629.
6. Malar, G. J. B. The Effect of GST on Indian E-commerce Industry.
7. Sekhar, S. S. (2012). Goods and Services Tax–A Roadmap for India. In International Conference on Law, Humanities and Management, (ICLHM' 2012) July (pp. 15-16). 6. Jain, A. (2013).

****

डॉ. हेमन्त सिंह कंवर का छत्तीसगढ़ी साहित्य के संवर्द्धन में योगदान : एक अध्ययन

प्रिंस कुमार मिश्रा*

प्रस्तावना - डॉ. हेमन्त सिंह कंवर का जन्म 24 अक्टूबर 1968 ई. को छत्तीसगढ़ कोरबा जिला, कटघोरा के ग्राम सिरविदा में एक मध्यवर्गीय किसान परिवार में हुआ था। डॉ. हेमन्त जाति के कंवर है। इनके पिता का नाम स्व. श्री चरण सिंह कंवर और दादा जी का नाम धनीराम था। उनके बचपन का नाम दादू है। इनके जन्म के विषय में कहावत प्रचलित है -

पुत्र चरणसिंह के, दादा धनीराम नाव ।
जन्मभूमि सिरविदा तर्जे, बसे पुष्पपल्लव धाम।
तहसील कटघोरा, जिला कोरबा, राज्य छत्तीसगढ़ नाव।।

डॉ. हेमन्त सिंह कंवर संघर्ष एवं कष्टों की आग में तपकर उन्होंने न केवल स्वयं का विकास किया वरन छत्तीसगढ़ी के समग्र विकास का वातावरण निर्मित किया। श्री कंवर जी प्राइमरी तक का अध्ययन ग्रामीण अंचल और हायर सेकेन्डरी की परीक्षा भिलाई बाजार से प्रथम श्रेणी में पास किया एवं स्नातक और स्नातकोत्तर का अध्ययन कमला नेहरु महाविद्यालय कोरबा से किया। श्री हेमन्त सिंह कंवर जी का छत्तीसगढ़ी साहित्य के प्रति प्रारम्भ से ही रुझान रहा है। जब ये 15-16 वर्ष के थे तब से इनका झुकाव नवधा रामायण, छट्टी रामायण, अंचल की लोक परम्पराओं तथा लोकगीतों की ओर हुआ। श्री कंवर जी प्रारम्भ से ही मेधावी छात्र रहे। उच्च शिक्षा के लिए इन्हें राज्य स्तरीय छात्रवृत्ति प्राप्त हुई। उन्होंने कमला नेहरू महाविद्यालय कोरबा से एम. ए. हिन्दी की पढ़ाई की साथ ही साथ में एन. सी. सी खेलकूद में रूचि रखते थे, साथ ही कबड्डी के भी बहुत अच्छे खिलाड़ी रहे। सन् 1991-92 ईस्टजोन एवं ऑल इड़िया कबड्डी प्रतियोगिता में गुरूघासी दास विश्वविद्यालय का प्रतिनिधित्व किया। डॉ. कंवर जी ने मध्य प्रदेश के एक कॉफ्रेस में 'साहित्य-संस्कृति एवं मानवीय मूल्यों के संवर्धन में पं. द्वारिका प्रसाद तिवारी 'विप्र' का योगदान' पर अपना मशहूर शोध-पत्र पढ़ा, जिसमें उनके व्यक्तित्व की सर्वत्र प्रशंसा हुई।

डॉ. हेमन्त जी विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न छात्र रहे। उन्होंने गुरु घासीदास विश्वविद्यालय से हिन्दी साहित्य में डॉक्टरेट की उपाधियाँ प्राप्त कीं तथा समाजशास्त्र और भूगोल विषय में शोध परक कार्य भी किया है। अपनी आर्थिक जरूरतों के लिये जीवन के आरम्भिक भाग में वे हिन्दी विभाग के प्रोफेसर रहे एवं लेखन कार्य भी किया। उनके भीतर अंगड़ाई ले रहे राष्ट्रीय व्यक्तित्व ने उन्हें साहित्यिक गतिविधियों में सक्रिय कर दिया और तब कंवर जी छत्तीसगढ़ी के लिए प्रचारक के रुप में चर्चाओं में शामिल हो गए। उन्होंने पत्र-पत्रिकाओं को न केवल प्रकाशित किया, वरन् उनमें क्रांतिकारी लेखनी से समाज को झकझोरा, सामाजिक अधिकारों और छत्तीसगढ़ी के उत्थान की वकालत और हिन्दी और छत्तीसगढ़ी के साहित्यिक विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

विद्यार्थी जीवन से ही हिन्दी विषय में एम. ए. करने का मन बनाया। द्वारिका प्रसाद तिवारी 'विप्र' जी के व्यक्तित्व एवं उनके साहित्य के प्रति इनकी गहरी अभिरूचि रही। श्री कंवर जी दृढ़ संकल्पित थे कि शोध कार्य करूंगा तो विप्र के साहित्य पर ही। इसके लिए सुयोग्य विद्वान गुरू की तलाश करते-करते वो अनुकूल समय आ गया की कबीर के शब्दों में समय ने ऐसे गुरू के पास पहुंचा दिया जिन्होंने 'दीपक दीया हाथ' वाली कहावत को चरितार्थ कर दिया, उनकी पैनी दृष्टि एवं अन्वेषक की सुलझी हुई दृष्टि तथा पुत्रवत स्नेह ने इस कार्य को पूरा करने में किंचित भी असुविधा नहीं हुई और गुरू के रूप में प्रो. डॉ. गोकर्ण दुबे (प्रोफेसर, डी. पी. विप्र महाविद्यालय बिलासपुर) मिल गये।

डॉ. हेमन्त सिंह कंवर जी के तीन संताने है जिसमें दो बेटा और एक बेटी है। सभी शिक्षा में उच्च शिखर की ओर अग्रसर है।

डॉ. हेमन्त सिंह कंवर जी के द्वारा रचित प्रधान ग्रंथ निम्नलिखित है -

1. साहित्य-संस्कृति एवं मानवीय मूल्यों के संवर्धन में पं. द्वारिका प्रसाद तिवारी 'विप्र' का योगदान।
2. बिलासपुर जनपद् के साहित्यकार।
3. छत्तीसगढ़ी लोकनाट्यों एवं लोकगीतों में विकलांग समीक्षा।
4. कंवर समाज की संस्कृति।

डॉ. हेमन्त सिंह कंवर के अन्तर्राष्ट्रीय स्तरीय शोध जर्नल/यू.जी.सी. केयर जर्नल्स में निम्नलिखित विषयों पर शोध पत्र प्रकाशित हो चुके है-

1. हिन्दी साहित्य में भारतीय नारी और डॉ. शरदसिंह का भारतीय नारी के संदर्भ में वैचारिक दृष्टिकोण।
2. डॉ. शरद सिंह के साहित्य में स्त्री विमर्श।
3. महादेवी वर्मा और स्त्री का आर्थिक सशक्तिकरण (स्त्री के अर्थ स्वातंत्र्य का प्रश्न के संदर्भ में) वैश्वीकरण।
4. यथार्थ से दूर होता हिन्दी सिनेमा।
5. लोक साहित्य एवं जीवन मूल्य।
6. छत्तीसगढ़ नाट्यों में विकलांग विमर्श एक अध्ययन।
7. छत्तीसगढ़ की जनजातीय संस्कृति और परम्परा।
8. विप्र जी के काव्य में काव्य एवं भाषा का साहित्य।
9. हिन्दी पत्रकारिता का दायित्व एवं दशा का विश्लेषात्मक अध्ययन।
10. साहित्य-संस्कृति एवं मानवीय मूल्यों के संवर्धान में पं. द्वारिका प्रसाद तिवारी 'विप्र' का योगदान।

डॉ. कंवर ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 14 शोध पत्र, 20 से अधिक राष्ट्रीय/

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय मुकुटधर पाण्डेय महाविद्यालय, कटघोरा, जिला- कोरबा (छ.ग.) भारत

अंतर्राष्ट्रीय सेमीनारों में सहभागिता की है। वेबीनार/आईसीटी प्रोग्राम 20 से अधिक राष्ट्रीय/अंतर्राष्ट्रीय वेबीनार एवं आईसीटी कार्यक्रम में सहभागिता किया। डॉ. कंवर ने विप्र जी के जीवन पर सन् 2007 में शोध कार्य का शुभारम्भ किया जिसके कारण कंवर जी शोधार्थी के रूप में जाने गयें। गनियारी के डॉ. बलदेव निर्मलकर जी ने श्री कंवर जी की मुक्त कण्ड से प्रशंसा की।

छत्तीसगढ़ी साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए श्री हेमन्त ने महामहिम राज्यपाल छत्तीसगढ़ को सन् 2015 में पत्र लिखा कि- छत्तीसगढ़ी का अध्ययन-अध्यापन और शोध कार्य व्यापक रुप से किया जाय। जिसका क्रियान्वयन भी हुआ। उच्च शिक्षा में नैतिक मूल्यों तथा आदर्श के सिद्धांतो को समाहित कर देश की उच्च शिक्षा नीति निर्धारित करने के लिए आग्रह किया। डॉ. हेमन्त सिंह कंवर जी को 2020 ई. में एजूकेशन इक्सिलेंस अवार्ड 2020 से नवाजा गया है।

हर व्यक्ति के जीवन को जीवन में आगे बढ़ने एवं जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए किसी न किसी प्रेरणा की आवश्यकता होती है। डॉ. हेमन्त जी ने भी प्रेरक व्यक्तित्व स्वामी विवेकानन्द जी को अपना प्रेरणा स्त्रोत माना है। डॉ. हेमन्त जी का बचपन से सपना था कि वे कुशल समाज सेवक बने जिसके माध्यम से समाज में व्याप्त कुरीतियों, विषंगतियों आदि को समाप्त कर सौहाद्र एवं मानवता को स्थापित कर सके, आगे चलकर यह बोध हुआ कि समाज को उचित मार्ग पर अग्रसर करने के लिए एक सफल साहित्यकार एवं शिक्षक के रुप में यह कार्य आसानी से किया जा सकता है। अत्याचार और लांछन की तेज धूप में टुकड़ा भर बादल की तरह हेमन्त के लिए वे शीतल छांव एवं छुआछूत, उंच-नीच एवं जातीय भेदभाव को समाप्त करने के लिये अग्निताप की तरह महान् क्रांतिकारी पोषक है। श्री हेमन्त साहब वर्गहीन समाज गढ़ने से पहले समाज को जाति विहीन करना चाहते है। उनका मानना था कि समाजवाद के बिना दलित-मेहनती इंसानों की आर्थिक मुक्ति संभव नहीं। डॉ. हेमन्त की रणभेरी गूंज उठी और उसका स्वर था कि समाज को श्रेणी विहीन और वर्ण विहीन करना होगा क्योंकि श्रेणी ने इंसान को दरिद्र और वर्ण ने इंसान को दलित बना दिया। जिनके पास कुछ भी नहीं है, वे लोग दरिद्र माने गए और जो लोग कुछ भी नहीं है वे दलित समझे जाते है।

छत्तीसगढ़ राज्य प्रारम्भ से ही पिछड़ा प्रदेश है वैसे देखा जाए तो यहाँ विभिन्न जाति, धर्म, सम्प्रदाय के लोग रहते है। छत्तीगढ़ की इस पावन धरा पर अपने सतत प्रयासों से समाज पर एक अमिट छाप छोड़ रहे हैं। आज की पीढ़ी के युवा उन्हें अपना आदर्श मानते है।

डॉ0 कंवर जी के अनुसार - 'छत्तीसगढ़ी साहित्य की उपयोगिता व्यक्ति और समाज दोनों के लिए है साहित्य का ज्ञान प्राप्त करने के पश्चात् व्यक्ति का आचरण एवं व्यवहार दोनों समाज के लिए सुसंस्कृति हो जाते हैं। इससे श्रेष्ठ समाज के निर्माण में सहयोग मिलता है।'

अपने समाज के विकास तथा लोगों के स्वास्थ्य एवं शिक्षा के लिए कंवर जी सदैव प्रयासरत् रहते हैं। शासन की योजनाओं से लोगों लाभान्वित होने के लिये जागरुक करतेहैं। सरकार की विभिन्न नीतियों से लोगों को अवगत कराने में भी अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास करते है। समाज के उत्थान के लिए श्री कंवर जी ने कई बार राज्य सरकार को पत्र के माध्यम से सम्पर्क किया।

डॉ. हेमन्त छत्तीगढ़ी साहित्य के आधुनिक निर्माताओं में से एक माने जाते हैं। उनके विचार व सिद्धांत छत्तीगढ़ी साहित्य के लिए हमेशा से प्रासंगिक रहे हैं। उनका यह दृढ़ विश्वास है कि जब तक आर्थिक और सामाजिक विषमता समाप्त नहीं होगी, तब तक जनतंत्र की स्थापना अपने वास्तविक स्वरूप को ग्रहण नहीं कर सकेगी। दरअसल सामाजिक चेतना के अभाव में जनतंत्र आत्मविहीन हो जाता है। ऐसे में जब तक सामाजिक जनतंत्र स्थापित नहीं होता है, तब तक सामाजिक चेतना का विकास भी संभव नहीं हो पाता है।

श्री कंवर जी छत्तीसगढ़ की प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति के प्रेरक एवं पोषक है। वे हमारे युग के महानतम नायक है, उनके क्रिया-कलापों में किंचित मात्र भी स्वार्थ नहीं है। आज के इस परिवर्तनशील समाज में डॉ. हेमन्त सिंह कंवर जैसे-महान व्यक्तित्व के धनी विरले ही अवतरित होते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. पाण्डेय, शिवमोहन एवं पाण्डेय, रमाशंकर, 1988 महान शिक्षा मनीषी ममता प्रकाशन प्रतापगढ़।
2. पाण्डेय, राम बहादुर बैजनाथ (अनुवादक), 1974 सनातन ज्ञान, एनीबेसेण्ट। द्वितीय संस्करण।
3. मिश्रा, प्रिंस कुमार, 2021, कोरबा जिले के विद्वानों का परिचय, विकास प्रकाशन नई दिल्ली।
4. खाण्डेकर, विनय कुमार, 2020, छत्तीसगढ़ी साहित्य में विद्वानों का महत्वपूर्ण अवदान, वैभव प्रकाशन, रायपुर (छ.ग.)
5. साक्षात्कार पर आधारित।

****

डॉ. राधाकृष्णन् का शिक्षा दर्शन : एक अध्ययन

शालिनी* डॉ. रामेन्द्र त्रिपाठी**

शोध सारांश – डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार शिक्षा की उपयोगिता व्यक्ति और समाज दोनों के लिए है शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् व्यक्ति का आचरण एवं व्यवहार दोनों समाज के लिए सुसंस्कृति हो जाते हैं। इससे श्रेष्ठ समाज के निर्माण में सहयोग मिलता है। राधाकृष्णन् के विचार से शिक्षा और ज्ञान एक–दूसरे के पर्याय हैं। डॉ0 राधाकृष्णन् के शैक्षिक दर्शन में विभिन्न महत्वपूर्ण अंग है– शिक्षा का स्वरूप, शिक्षा का उद्देश्य, शिक्षा का पाठ्यक्रम, कृषि शिक्षा, वाणिज्य शिक्षा, इन्जीनियरिंग एवं तकनीकी पाठ्यक्रम, चिकित्सा शिक्षा, कानून की शिक्षा, शिक्षण विधि, शिक्षकों की सेवा शर्तें, नारी शिक्षा, अनुशासन, परीक्षा प्रणाली इत्यादि। उनके अनुसार शिक्षा शास्वत जीवन की प्राप्ति का माध्यम है। शिक्षा के द्वारा नैतिक विकास भी सम्भव है और शिक्षा ही आध्यात्मिक विकास का एक सशक्त साधन भी है। शिक्षा द्वारा ही समाज एवं राष्ट्र को एक सशक्त राष्ट्र बनाया जा सकता है।

शब्द कुंजी – शिक्षा, दर्शन, विकासात्मक, वैज्ञानिक, तकनीकी एवं सुधारात्मक ....इत्यादि।

प्रस्तावना – परिवर्तन प्रकृति का नियम है। जो भारतवर्ष उन्नति की पराकाष्ठा पर था, ज्ञान–विज्ञान में समूचे विश्व में जिसकी पताका फहरा रही थी, वही भारत भूमि सदियों की पराधीनता के पश्चात् अवनति के गर्त में पहुँच गयी। विदेशियों के शोषण, अत्याचार और अन्याय से भारत माता कराह रही थी। वहीं दूसरी ओर यूरोपीय समाज वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति के पथ पर निर्बाध रूप से अग्रसर था। ईस्ट इंडिया कम्पनी का भारतवर्ष पर भले ही अधिकार था किन्तु उसका दृष्टिकोण विकासात्मक एवं सुधारात्मक भी रहा है। इसकी झलक हमें तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड विलियम बैटिंग के सामाजिक सुधार सम्बन्धी विधेयकों से मिलती है। लार्ड विलियम बैटिंग ने राजाराम मोहन राय के सुझाव पर क्रान्तिकारी कदम उठाते हुए सती प्रथा को पूरी तरह समाप्त करने के लिए तत्सम्बन्धी विधेयक पास कराया। इसके साथ ही साथ आधुनिक विकास की आधारशिला रखने के विचार से रेल लाईन का विकास और डाक व तार विभाग की स्थापना की इस क्रान्तिकारी कदम का भारतीय जनमानस पर निश्चय ही सकारात्मक प्रभाव पड़ा। समाज के रूढ़िवादी वर्ग ने इन सुधारात्मक कानूनों और रेल डाक व तार विभाग की स्थापना को जहां भारतीय परम्पराओं के विपरीत बताया, वहीं ईसाई मिशनिरियों ने इस कदम की सराहना करते हुए इसे भारत वर्ष के लिए पुर्नजागरण काल माना।

अध्ययन का उद्देश्य – डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन् के शिक्षा दर्शन का अध्ययन करना।

विषयवस्तु – भारत की विपरीत परिस्थितियों में अनेक महान विभूतियों का अवतरण होता है। इन चिन्तकों, विचारकों और विद्वानों ने भारतीय शिक्षा और समाज को निश्चय ही प्रभावित किया है उनमें रवीन्द्रनाथ टैगोर, महात्मा गाँधी और स्वामी विवेकानन्द, महर्षि अरविन्द तथा डॉ0 राधाकृष्णन्, मदन मोहन मालवीय और श्रीमती एनी बेसेण्ट का नाम प्रमुख है।

शिक्षा का स्वरूप – शिक्षा के लिए केवल शिक्षक और शिक्षार्थी ही नहीं बल्कि पाठ्यक्रम की भी आवश्यकता होती है इसीलिए शिक्षा को त्रिमुखी प्रक्रिया भी कहा गया है। शिक्षक और शिक्षार्थी के मध्य होने वाली अन्त:क्रिया का नाम ही शिक्षा है। डॉ0 राधाकृष्णन् के विचार से आध्यात्मिक ज्ञान से भिन्न कोई शिक्षा नहीं है।

डॉ0 राधाकृष्णन् को खेद है धीरे–धीरे शिक्षा पर पश्चिमी जगत का प्रभाव पड़ता जा रहा है और शिक्षा भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन बनती जा रही है। यदि शिक्षा में भौतिक प्रवृत्तियों का इसी तरह विकास होता रहेगा तो शिक्षा का कोई औचित्य नहीं रह जायेगा।

शिक्षा का उद्देश्य –डॉ0 राधाकृष्णन् शिक्षा को जीवन एवं व्यक्तित्व की सफलता का आधार मानते हैं। वे नैतिक एवं मानवीय मूल्यों के विकास हेतु आध्यात्मिक शिक्षा तथा भौतिक अभावों की पूर्ति एवं आर्थिक विकास हेतु व्यावसायिक शिक्षा को आवश्यक समझते हैं।

डॉ0 राधाकृष्णन् के विचार से स्वतंत्र भारत में उच्च शिक्षा केन्द्रों का यह कर्त्तव्य है कि ये ऐसी दिशा दें जिससे ज्ञान का स्वाभाविक प्रसार हो। युवक नये ज्ञान की खोज में पूर्व मनोयोग से लग जायें तथा मानव जीवन का वास्तविक अर्थ एवं उद्देश्य समझ सकें।

डॉ0 राधाकृष्णन् के शब्दों में– 'प्रत्येक व्यक्ति दो व्यक्तियों से मिलकर बना है, जो परस्पर एक–दूसरे के विरोधी हैं, लेकिन उन्हें पूर्ण विश्वास था कि शिक्षा के माध्यम से मनुष्य को जागरूक किया जा सकता है। उन्हें मनुष्य के अर्न्तनिहित प्रकाश में पूर्ण आस्था थी। वे उसी के माध्यम से सुखी संसार का निर्माण करना चाहते थे।'

हमारी शिक्षा का उद्देश्य भौतिक अभावों की पूर्ति और आर्थिक समृद्धि हेतु व्यावसायिक तथा तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी शिक्षा प्रदान करना चाहिए।

स्वतंत्र भारत में युवकों में राजनीति, प्रशासन और व्यवसाय तथा उद्योग एवं वाणिज्य के क्षेत्र में नेतृत्व की क्षमता का विकास करना विश्वविद्यालयों का कर्त्तव्य है। उन्हें हर प्रकार की उच्च शिक्षा साहित्यिक, वैज्ञानिक,

* शोध छात्रा (शिक्षा विभाग) इन्दिरा गाँधी पी. जी. कालेज, गौरीगंज, अमेठी, सम्बद्ध- डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ.प्र.) भारत

** प्रोफेसर (शिक्षा विभाग) इन्दिरा गाँधी पी. जी. कालेज, गौरीगंज, अमेठी, सम्बद्ध- डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ.प्र.) भारत

प्राविधिक एवं व्यावसायिक की बढ़ती हुई मांग को पूरा करना है। इस प्रकार विश्वविद्यालयों को विज्ञान एवं तकनीकी ज्ञान के प्रयोग द्वारा कम से कम समय में राष्ट्र को इस योग्य बनाना है कि भारतवर्ष को अभाव, रोग अशिक्षा और अज्ञानता से पूरी तरह मुक्ति मिल सके।

शिक्षा का उद्देश्य युवकों के सम्मुख विश्व का एक संयुक्त चित्र उपस्थित करना जिससे जीवन में सारांश दृष्टि (Synoptic Vision) उत्पन्न हो जाय। जीवन और विश्व के प्रति समन्वयवादी दृष्टिकोण उत्पन्न करने हेतु अनेक विषय एक सम्बन्धित पाठ्यक्रम के रूप में पढ़ाये जाने चाहिए।

शिक्षा का पाठ्यक्रम – उदार शिक्षा (Liberal Education) विद्यार्थी में स्वतंत्र तथा समालोचनात्मक व रचनात्मक शक्ति का विकास करती है। साथ ही व्यावसायिक तथा प्राविधिक व तकनीकी शिक्षा से विद्यार्थियों में कौशल एवं अभिरूचि का विकास होता है।

डॉ0 राधाकृष्णन् के विचार से स्नातक पाठ्यक्रम 3 वर्ष का होना चाहिए। इसी कारण उन्होंने विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की रिपोर्ट में स्नातक पाठ्यक्रम 3 वर्ष किये जाने सम्बन्धी गुणात्मक सुझाव दिया। स्नातक विद्यार्थियों को सामान्य शिक्षा एवं धार्मिक शिक्षा के साथ संघीय भाषा अथवा शास्त्रीय भाषा या आधुनिक भाषा (उन छात्रों हेतु जिनकी मातृभाषा हिन्दी हो) और अंग्रेजी विषय को अन्तिम रूप से पढ़ाया जाय।

साहित्य (कला) वर्ग के विद्यार्थी निम्न दो विषय समूह में से एक-एक विषय चुनें।-

1. एक शास्त्रीय अथवा आधुनिक भाषा अंग्रेजी, जर्मन तथा फ्रेंच, इतिहास, दर्शन तथा ललित कला।
2. राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, मनाविकी (Humanities) भूगोल, अर्थशास्त्र तथा गृह विज्ञान। गणित (Mathematics), भौतिकी (Physics)रसायनशास्त्र (Chemistry) जन्तु विज्ञान (Zoology) तथा वनस्पति विज्ञान (Botany) साथ ही व्यावसायिक एवं तकनीकी पाठ्यक्रम हेतु अत्यन्त व्यावहारिक सुझाव दिया है-

डॉ0 राधाकृष्णन् के विचार से- 'व्यावसायिक शिक्षा का अर्थ उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा स्त्री तथा पुरूष व्यावसायिक भावना के साथ अति कठोर उत्तरदायी सेवा के लिए तैयार होते है।' उन्होंने विभिन्न व्यावसायिक पाठ्यक्रम हेतु निम्न पाठ्यक्रम निश्चित किया है-

1. कृषि शिक्षा – कृषि शिक्षा में सिद्धान्त एवं प्रयोग को समान महत्व दिया जाय। कृषि नीति के निर्माण का दायित्व उन्हीं अनुभवी व्यक्तियों को सौंपा जाय जिन्हें कृषि ज्ञान एवं कृषि कार्य का पूर्ण व्यावहारिक अनुभव हो। स्नातक स्तर पर कृषि शिक्षा का पाठ्यक्रम 3 वर्षीय तथा पशुपालन की शिक्षा के साथ 4 वर्षीय हो। कृषि अनुसंधान का विस्तार किया जाय।

2. वाणिज्य शिक्षा – वाणिज्य में स्नातक स्तर के पाठ्यक्रम में प्रारम्भ से ही बैकिंग, एकाउण्टैंसी तथा बीमा आदि से सम्बन्धित विषयों की शिक्षा दी जानी चाहिए। तत्पश्चात् स्नातक तृतीय वर्ष में विद्यार्थियों को किसी फर्म या कम्पनी में एक प्रशिक्षणार्थी (Apprentice) के रूप में अनिवार्य रूप से कार्य करने का व्याहारिक अनुभव व अवसर मिलना चाहिए।

एम0 काम0 के पाठ्यक्रम में फर्मो या कम्पनियों में व्यावहारिक प्रशिक्षण प्राप्त छात्र/छात्राओं को ही प्रवेश दें। एम0काम पाठ्यक्रम का स्तर बनाये रखने के लिए बहुत थोड़े विद्यार्थियों को ही प्रवेश दिया जाय। मेधावी एवं परिश्रमी विद्यार्थी ही इस पाठ्यक्रम में प्रवेश पाने के अधिकारी हैं।

3. इन्जीनियरिंग एवं तकनीकी पाठ्यक्रम – देश की वर्तमान आवश्यकताओं और उद्योगों की मांग के अनुरूप ही इंजीनियरिंग एवं तकनीकी पाठ्यक्रमों का निर्धारण किया जाय। इंजीनियरिंग की समस्त शाखाओं की शिक्षा दी जाय तथा बाद में किसी शाखा विशेष में उसकी रूचि एवं क्षमता के अनुरूप प्रशिक्षण दिया जाय। छात्रों को इंजीनियरिंग की शिक्षा का व्यावहारिक व अनुभव जन्य प्रशिक्षण देने के लिए कारखानों एवं औद्योगिक संस्थानों में अवश्य भेजा जाय।

स्नातक स्तर पर तकनीकी शिक्षा का पाठ्यक्रम 4 वर्ष का तथा व्यावहारिक प्रशिक्षण की अवधि 1 वर्ष होनी चाहिए।

4. चिकित्सा शिक्षा – चिकित्सा शिक्षा में एलोपैथी के साथ-साथ आयुर्वेदिक चिकित्सा, यूनानी चिकित्सा तथा योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाय। चिकित्सा महाविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों की संख्या 100 से अधिक नहीं होनी चाहिए। चिकित्सा महाविद्यालयों में प्रयोगशालाओं, पुस्तकालयों और वाचनालयों तथा विशेष सुविधा सम्पन्न शोध विभाग एवं आवश्यक चिकित्सकीय यंत्र व आधुनिक मशीनें भी होनी चाहिए।

5. कानून की शिक्षा – भावी पीढ़ी को नये ढंग से कानून का ज्ञान कराने हेतु देश में विधि विद्यालयों का विकास किया जाय जो अन्तर्राष्ट्रीय, संवैधानिक एवं प्रशासनिक समस्याओं पर व्यापक तरीके से विचार कर सकें। साथ ही सिविल और अपराध जगत तथा अन्य प्रकार की समस्याओं का समाधान कर सके।

कानून की डिग्री का पाठ्यक्रम 3 वर्षो का हो। शिक्षा के अन्तिम वर्ष में न्यायालयों में व्यावहारिक प्रशिक्षण अवश्य दिया जाय।

शिक्षण विधि – उच्च शिक्षा में व्याख्यान विधि की शिक्षण की सामान्य विधि है। किन्तु छात्र इस शिक्षण विधि से पूरा लाभ इस कारण नहीं उठा पाते क्योंकि वह व्याख्यान से पहले व्यक्तिगत तैयारी या व्याख्यान के बाद पुस्तकालय में नियमित स्वाध्याय नहीं करता। साथ ही अध्यापक को अपने व्याख्यान तत्परता एवं लगन से तैयार करने चाहिए।

डॉ0 राधाकृष्णन् के विचार से व्याख्यान के साथ ही छात्र से प्रश्न भी पूंछने चाहिए तथा श्यामपट्ट पर आवश्यक संकेत भी देने चाहिए। छात्रों से सप्ताह में एक बार लिखित कार्य भी कराना चाहिए। डिग्री कक्षाओं के छात्रों के लिए व्याख्यान के साथ अवबोध प्रणाली (Tutorial system) का प्रयोग करना चाहिए।

शिक्षक – डॉ0 राधाकृष्णन् के विचार से शिक्षक ही शिक्षा की धुरी है। शिक्षण की दृष्टि से शिक्षक का सर्वाधिक महत्व है। महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय का शिक्षक ईमानदारी से अपने शिक्षण कर्त्तव्यों की पूर्ति की अपेक्षा या तो शिक्षक राजनीति में संलग्न हो जाता है या आर्थिक तंगी के कारण पारिवारिक, आर्थिक समस्याओं में अमूल्य बौद्धिक ऊर्जा का अपव्यय करता है।

डॉ0 राधाकृष्णन् ने शिक्षक की मूल समस्याओं के समाधान हेतु निम्न उपयोगी सुझाव दिया-

1. उद्योग जगत एवं प्रशासनिक क्षेत्र की तुलना में शिक्षकों का वेतन अति न्यून है। इस कारण उनमें निर्धनता एवं असंतोष व्याप्त है। अत: शिक्षकों को आकर्षक वेतनमान दिये जाने का सुझाव दिया जिससे प्रतिभायें शिक्षण व्यवसाय की ओर आकर्षित हों।
2. वेतनमान के साथ-साथ प्रवक्ता को वरिष्ठ प्रवक्ता एवं रीडर पद में प्रोन्नति दी जाय।
3. महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय शिक्षकों को शोध एवं शोध परियोजना (रिसर्च प्रोजेक्ट) हेतु समय-समय पर आर्थिक सहयोग दिया जाय।

इससे उनमें अध्यापन कुशलता का विकास होगा। इसका दायित्व यू0जी0सी0 को सौंपा।

शिक्षकों की सेवा शर्तें :

1. शिक्षकों की नियुक्ति में प्रतिभा, अध्यापन योग्यता को महत्व देते हुए अच्छी शैक्षिक योग्यता वाले व्यक्तियों को ही शिक्षक बनाया जाय। इसी सुझाव को आधार मानते हुए, यू0जी0सी0 ने स्नातकोत्तर परीक्षा में **"B+"**(55% से अधिक अंक प्राप्त) व्यक्ति को ही **'डिग्री शिक्षक'** नियुक्त करने की शर्त रखी है। साथ ही शोध (पी–एच0डी0) को आवश्यक कर दिया।

2. शिक्षकों की सेवानिवृत्ति की आयु 60 वर्ष होनी चाहिए किन्तु शिक्षक के अच्छे स्वास्थ्य की स्थिति में उसकी सेवा अवधि 64 वर्ष तक बढ़ायी जा सकती है।

3. शिक्षकों को आकर्षक वेतनमान के साथ–साथ भविष्य निधि (Provident Fund) एवं आवास भत्ता का भी महत्वपूर्ण सुझाव दिया है।

आज शिक्षण व्यवसाय में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है। वह डॉ0 राधाकृष्णन् की ही देन है।

नारी शिक्षा – बालक एवं बालिकाओं की शिक्षा का भी श्री गणेश माँ के संरक्षण में ही होता है। एक सुशिक्षित माँ अपने बच्चों के लिए चरित्र एवं बुद्धि दोनों की दृष्टि से सर्वोत्तम शिक्षिका होती है। इसलिए कहा गया है कि– "Mother is the First teacher of the child" 'माता शिशु की प्रथम शिक्षिका होती है।' नारी शिक्षा के महत्व को रेखांकित करते हुए राधाकृष्णन् आयोग ने अपने प्रतिवेदन में कहा है–

'शिक्षित महिलाओं के बिना शिक्षित व्यक्ति नहीं हो सकते। यदि सामान्य शिक्षा पुरूषों या नारियों में से एक पर सीमित रखनी हो तो यह अवसर नारियों को दिया जाना चाहिए, क्योंकि ऐसी स्थिति में शिक्षा निश्चित रूप से आगामी पीढ़ी को हस्तान्तरित की जा सकेगी।'

"There cannot be an educated people without educated women. If general education is to be limited to men or women, the opportunity should be given to women, for then it would most surely be passed on to the next generation."

राधाकृष्णन् के विचार से नारियों को रूचिपूर्ण तथा बुद्धिमत्तापूर्ण जीवन के लिए तथा नागरिकता की शिक्षा के लिए पुरूषों के समान सुशिक्षा पूर्ण सुविधायें होनी चाहिए। नारी शिक्षा की व्यवस्था करते समय, उनकी प्रकृति, रूचि एवं आवश्यकता का भी पूरा–पूरा ध्यान रखना चाहिए। नारी शिक्षा के विशेष पाठ्यक्रम में गृह विज्ञान, गृह अर्थशास्त्र, गृह प्रबन्ध, उपचार (Nursing) और शिक्षण तथा ललित कलाओं की शिक्षा को स्थान दिया जाना चाहिए।

अनुशासन – डॉ0 राधाकृष्णन् मूल्य एवं चरित्र से जुड़े हुए एक आदर्श शिक्षक थे। वे स्वाभाविक अनुशासन के पक्षधर थे। वे जानते थे कि उच्च शिक्षा में अनुशासनहीनता एक प्रमुख समस्या है। उनके विचार से महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों एवं उच्च शिक्षण संस्थानों में व्याप्त अनुशासनहीनता के राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक तथा शैक्षणिक एवं चारित्रिक कारण हैं।

अनुशासन की समस्या के समाधान के लिए जरूरी है कि छात्रों को राजनैतिक दलों से दूर रखा जाय, क्योंकि छात्रों की भावनाओं का राजनैतिक दल अपने घृणित स्वार्थों हेतु दरूपयोग करते हैं।

छात्रों में अनुशासन की भावना जगाने हेतु विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों में रचनात्मक वातावरण सृजित करना होगा। छात्रों को आत्म सम्मान एवं आत्म विश्वास के विकास का अवसर देना होगा। उनके लिए पर्याप्त मात्रा में मनोविनोद के अवसर, खेलकूद और व्यायाम तथा सामाजिक क्रियाकलापों एवं सांस्कृतिक–कार्यक्रमों में भाग लेने की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

एन0सी0सी0 और एन0एस0एस0 तथा स्काउट गाइड जैसे राष्ट्रीय महत्व के कार्यक्रमों में विद्यार्थियों को सम्मिलित होने का भरपूर अवसर मिलना चाहिए। इससे उनकी ऊर्जा को नि:सन्देह रचनात्मक दिशा मिलेगी।

शिक्षा का माध्यम (Medium of Education) - हिन्दी का भारतीय संविधान की राजभाषा के रूप में विकास जरूरी है, जिससे हिन्दी समूचे राष्ट्र में व्यापार, आवागमन, दूरदर्शन और उच्च अध्ययन–अध्यापन तथा अनुसंधान एवं न्यायालय की भाषा का वास्तविक अर्थों में स्थान ले सके। राष्ट्रभाषा हिन्दी को समृद्ध बनाने हेतु विभिन्न स्रोतों से आये हुए शब्दों को हिन्दी में समाहित करना होगा। यही समय की मांग है। अन्तर्राष्ट्रीय प्राविधिक एवं वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दों (International Technical and Scientific Terminology) को स्वीकार करना होगा।

डॉ0 राधाकृष्णन् के विचार से अंग्रेजी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा है। साथ ही अंग्रेजी आधुनिक सभ्यता सम्बन्धी विचारों तथा आधुनिक ज्ञान–विज्ञान एवं दर्शन की कुंजी है। अंग्रेजी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा होने के साथ–साथ इसका ज्ञान समूचे विश्व के साथ सम्पर्क बनाये रखने हेतु अति आवश्यक है। अंग्रेजी देश में राष्ट्रीय एकता बनाने में भी उपयोगी है। उनके विचार से उच्च शिक्षा संस्थानों जैसे इंजीनियरिंग कालेजों, मेडिकल कालेजों और व्यावसायिक व प्रबंधन शिक्षा (M.B.A.) एवं कम्प्यूटर शिक्षा संस्थानों में प्रवेश के लिए अंग्रेजी का ज्ञान आवश्यक होना चाहिए।

उनके विचार से विद्यार्थियों को तीन भाषाओं का ज्ञान अवश्य कराया जाय। पहला प्रादेशिक या क्षेत्रीय भाषा दूसरा संक्षीय या राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा तीसरा अन्तर्राष्ट्रीय भाषा अंग्रेजी, उच्च शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय भाषा को ही बनाया जाय। विश्वविद्यालय स्तर पर कुछ विषयों के अध्ययन के लिए, हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाया जा सकता है।

परीक्षा प्रणाली – डॉ0 राधाकृष्णन् ने प्रचलित परीक्षा प्रणाली की कटु आलोचना की थी उनके विचार से यह परीक्षा प्रणाली परम्परागत एवं आव्यवहारिक है इसलिए उन्होंने विश्वविद्यालय आयोग में परीक्षा प्रणाली में अमूल परिवर्तन के सुझाव, दिए थे। उनके विचार से परीक्षा प्रणाली को तर्क संगत और वैज्ञानिक बनाना चाहिए साथ ही साथ वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का प्रयोग भी किया जाना चाहिए साथ ही साथ **मौखिक परीक्षाओं** को भी महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए।

परीक्षाओं के मानदण्ड को ऊपर उठाने के लिए प्रथम श्रेणी के लिए 70 प्रतिशत, द्वितीय श्रेणी के लिए 55 प्रतिशत और तृतीय श्रेणी के लिए 40 प्रतिशत अंक निश्चित किये जाने चाहिए। प्रत्येक विश्वविद्यालयों को तीन सदस्यों की स्थायी परीक्षक मण्डल गठित करना चाहिए। जो शिक्षकों को वस्तुनिष्ठ परीक्षा और प्रयोगात्मक परीक्षा सम्बन्धी सुझाव दे सके। सम्बद्ध महाविद्यालयों की परीक्षा गुणवत्ता सम्बन्धी जांच अत्यन्त सावधानी के साथ करायी जानी चाहिए।

उपसंहार – डॉ. राधाकृष्णन् शिक्षा को व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और आत्मिक विकास की प्रक्रिया मानते हैं शिक्षा एक ऐसा साधन है जो व्यक्ति और समाज को विकास की गति प्रदान कर सकता है। उनके विचार से ज्ञान

व्यक्ति के भीतर ही निहित होता है। डॉ0 राधाकृष्णन् के शैक्षिक दर्शन में विभिन्न महत्वपूर्ण अंग है- शिक्षा का स्वरूप, शिक्षा का उद्देश्य, शिक्षा का पाठ्यक्रम, कृषि शिक्षा, वाणिज्य शिक्षा, इन्जीनियरिंग एवं तकनीकी पाठ्यक्रम, चिकित्सा शिक्षा, कानून की शिक्षा, शिक्षण विधि, शिक्षकों की सेवा शर्तें, नारी शिक्षा, अनुशासन, परीक्षा प्रणाली इत्यादि।

डॉ0 राधाकृष्णन् के विचार से शिक्षक ही शिक्षा की धुरी है। शिक्षण की दृष्टि से शिक्षक का सर्वाधिक महत्व है। शिक्षा जगत विशेष करके उच्च शिक्षा से जुड़े शिक्षकों हेतु डॉ0 राधाकृष्णन् ने अत्यंत महत्वपूर्ण एवं उपयोगी सुझाव दिया है। उन्होंने शिक्षकों में शिक्षण-व्यवसाय के प्रतिव्याप्त उदासीनता एवं उत्साह के अभाव के कारणों का समुचित विवेचन भी किया है। प्रत्येक व्यक्ति दो व्यक्तियों से मिलकर बना है, जो परस्पर एक-दूसरे के विरोधी हैं, लेकिन उन्हें पूर्ण विश्वास था कि शिक्षा के माध्यम से मनुष्य को जागरूक किया जा सकता है। उन्हें मनुष्य के अर्न्तनिहित प्रकाश में पूर्ण आस्था थी। वे उसी के माध्यम से सुखी संसार का निर्माण करना चाहते थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. डॉ0 राधाकृष्णन्, इण्डियन फिलॉसफी भाग-1 (हिन्दी अनुवाद), राजपाल एण्ड संस, दिल्ली
2. डॉ0 राधाकृष्णन्, इण्डियन फिलॉसफी भाग-2 (हिन्दी अनुवाद), राज्यपाल एण्ड संस, दिल्ली
3. डॉ0 राधाकृष्णन्, भारतीय संस्कृत कुछ विचार, राज्यपाल एण्ड संस, दिल्ली
4. डॉ0 राधाकृष्णन्, प्रेरणापुरूष, राज्यपाल एण्ड संस, दिल्ली
5. डॉ0 राधाकृष्णन्, विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग प्रतिवेदन, यू.जी.सी, नई दिल्ली
6. Dr. S.K. Sinha & Dr. P.B. Sihna, Encyclopaedion of Education in a New Vol.I, Vol. II, Vol. III, Vol. IV
7. एम0पी0 कमल, डॉ0 राधाकृष्णन, राजा पॉकेट बुक्स दिल्ली।
8. संकलनकर्त्ता मूनी पसरीजन, सर्वपल्ली डॉ0 राधाकृष्णन, न्यू साधना पाकेट बुक्स दि0
9. डॉ0 रामशकल पाण्डेय, विश्व के श्रेष्ठ शिक्षाशास्त्री, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।
10. रमन बिहारी लाल, शिक्षा के दार्शनिक समाज शास्त्रीय आधार, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ
11. प्रेमानन्द कुमार, सर्वपल्ली डॉ0 राधाकृष्णन्, न्यू साधना पॉकेट बुक्स दिल्ली।
12. श्याम नारायण पाण्डेय, जौहर, सरस्वती मंदिर वाराणसी।
13. चौबे, डॉ0 सरयू प्रसाद, रीसेण्ट फिलासफीज ऑफ एजूकेशन, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

मनुस्मृति में जातिवादी धारणा

डॉ. पी. एस. बघेल *

प्रस्तावना – महाभारत के शान्तिपर्व में ब्रह्मा के द्वारा एक ऐसे नीतिशास्त्र का उल्लेख किया गया है कि जिनमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे पुरूषार्थो की विस्तृत व्याख्या की गई है।

भगवान् शंकर ने दस हजार अध्यायों वाले नीतिशास्त्र का निर्माण किया था जो आगे चलकर 'बार्हस्पत्यशास्त्र' नाम से विख्यात है, महाभारत में उक्त उल्लेख किया गया है। इसी आधार पर शुक्राचार्य ने एक हजार अध्यायों वाले औशनसी-नीति नामक ग्रंथ की रचना की, संभवत: उसी को 'नीतिशास्त्र' कहा गया।

स्मृतियों के रूप में अलबेरूनी का कहना है कि वेदों से आगे चलकर ब्रह्मा ने 20 स्मृतिग्रंथों की रचना की। ब्रह्मा के इन बीस पुत्रों के नाम से ही स्मृतिशास्त्रकार शिष्यों के नाम से ही स्मृतिशास्त्रों की रचना की हैं।

धर्मशास्त्रों के नाम पर देवगुरू बृहस्पति ने बृहद् धर्म विषक ग्रंथ की रचना की। इन्हीं स्मृति ग्रंथों के रूप में 'नारद स्मृति' दो भिन्न पाठों में उपलब्ध है। इन्हीं स्मृति ग्रंथों के रूप में याज्ञवल्वक्य कपिलस्मृति, पाराशरस्मृति, कात्यायन स्मृति, आदि स्मृति ग्रंथों के रूप में विभिन्न ऋषि प्रणीत ग्रंथ रचे गये।

हिन्दू धर्म विभिन्न मत मतान्तरों के समन्वय के कारण धर्मो के तत्वों के निचोड़ के रूप में व्याख्या करने वाले आचरण ग्रंथों की रचना की।

मनुस्मृति के रूप में आचार-विचार, कर्म-अनुष्ठान, परातन, धार्मिक परम्परा के आधार पर मनु ने धर्म शास्त्रों का निर्माण किया। डॉ. बूलर ने भी 'मनुस्मृति' की रचना 200 ई. पूर्व से 100 ई. बीच निर्धारित किया।

कुछ विद्वानों का अभिमत है के, 'जर्मन विद्वान डॉ. जाली के मतानुसार 'मनुस्मृति' की रचना 400 ई. में और महामहोपाध पाण्डुरंग वामन काणे के अनुसार 100 से 300 ई. के बीच हुआ होगा। वर्तमान में स्मृतिग्रंथ विद्यमान है वह संभवत: गुप्तकाल की रचना होना प्रतीत होता है।'

वर्णव्यवस्था – ब्रह्म ने ही सृष्टि रचना के सम लोकवृद्धि के लिए ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र का वर्ण का निर्माण किया।

'लोकानां तु विवृद्धर्थ मुखबाहूरू पादत:।
ब्राह्मण क्षत्रिंय वैश्य शूद्रं च निश्वर्तत्।।'

अर्थात् लोक-वृद्धि के लिए ब्रह्मा ने मुख, बाहु, ऊरू और पैरों से क्रमश: ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य और शूद्र की सृष्टि की याने ब्रह्मा ने सिर से ब्राह्मण की, बाहु से क्षत्रिय की, जांघों से वैश्य की और शूद्र से पैरों की सृष्टि की।

इस प्रकार प्रारंभ में वर्णव्यवस्था प्रारंभ हुई। और उन्हीं वर्णो का विभाजन भी ब्राह्मण क्षत्रिय था, वैश्य और शूद्र की सृष्टि की।

आगे चलकर ब्रह्मा ने ही यक्ष, राक्षस, पिशाच, गन्धर्व, अप्सराएँ , असुर, नाग, सर्प, गरुड और पितृगणों की उत्पत्ति की।

फिर ब्रह्मा ने चारों वर्णो के कार्य भी निर्धारित किये। ब्राह्मणों के लिए पढ़ना पढ़ाना, यज्ञ करना, दान लेना-देना कार्य निर्धारित किये। क्षत्रिय के लिए प्रजा की रक्षा करना, दान देना, यज्ञ करना, पढ़ना, विषय में आसक्ति रखना आदि कार्य निश्चित किए। वैश्य के लिए पशुओं की रक्षा करना, दान देना, यज्ञ करना, पढ़ना व्यापार करना, ब्याज लेना और खेती करना निश्चित किये। और शूद्रों के लिए उक्त तीन वर्गो की सेवा करना, जिसमें किसी अन्य के प्रति निंदा का कर्ा नहीं करना चाहिए।

'उत्तमामोभ्दवात् ज्यठ्ाद् ब्राह्मणश्चैव धारणात्।
सर्वस्पैवास्य सर्गस्य धर्मतो ब्राह्मण: प्रभु:।।'

अर्थात् ब्रह्मा के मुख से उत्पन्न होने से ज्येष्ठ होने से, और वेद के धारण करने से धर्मानुसार ब्राह्मण ही सम्पूर्ण सृष्टि का स्वामी होता है।

ब्रह्मा ने ही सम्पूर्ण सृष्टि की रक्षा के लिए तथा हव्य पहुँचाने के लिए ब्राह्मण को ही अपना मुख पैदा किया। सभी बुद्धिजीवी के रूप में ब्राह्मण ही सर्वश्रेष्ठ माना गया। केवल ब्राह्मण की उत्पत्ति ही धर्म की नित्य देह है। ब्राह्मण ही मोक्ष लाभ के लिए योग्य होता है। ब्राह्मण ही पृथ्वी पर श्रेष्ठ माना गया।

'सर्वं स्वं ब्राह्मण दं त्किंज्जगतीगतम्।
श्रेष्ठे्नाभिजनेदं यसर्वं वै ब्राह्मणोऽर्हति।।'

पृथ्वी पर जो कुछ भी है, वह सब ब्राह्मण का है अर्थात् ब्राह्मण उसे अपने धन के समान मानता है। ब्राह्मण के मुख से उत्पन्न तथा कुलीन होने के कारण यह सब धन ग्रहण करने का अधिकारी है।

वर्ण व्यवस्था में विवाह की स्थितियाँ

ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच ने आठ प्रकार के विवाह स्मृति ग्रन्थों में बताये गये हैं।

जिसमें ब्रह्माण के लिए 6 प्रथम प्रकार के विवाह के विधान है यथा- ब्राह्म देव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर के लिए विधियुक्त माने जाते है। क्षत्रि के लिए 4 प्रकार के विवाह आसुर, गान्धर्व, राक्षस और वैश्य के लिए विवाह योग्य माने जाते है। वैश्य और शूद्रों के लिए प्रथम चार विवाह श्रेष्ठ माने गये है- ब्राह्मण, देव, आर्श और प्राजापत्य। उसी प्रकार एक राक्षस के लिए तथा वैश्य और शूद्र के लिए आसुर विवाह प्रशस्त बताया गया है।

'द्विजाति के लिए अपनी सर्वणा श्रेष्ठ मानी जाती है।
सवर्णाग्रे द्विजातीनां प्रशस्ता दारकर्मणि।।'

इसी प्रकार मनुस्मृति माना गया है कि अपने ही वर्ण के पुरूष के साथ उसी वर्ण की स्त्री के साथ विवाह करना चाहिए। अर्थात् क्षत्रिय के लिए क्षत्राणी स्त्री, वैश्य के लिए वैश्यवर्ण की तथा शूद्र के लिए शूद्र स्त्री से विवाह करना चाहिए।

* ऐसोसिएट प्राध्यापक (संस्कृत) शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

'शूद्रैव भार्या शून्द्रस्य सा च स्वा च विश: स्मृते।
ते च स्वा चैव राज्ञस्य ताश्च स्वा चागमजन्मन:।।'

किन्तु किसी भी दशा में अर्थात् ब्राह्मण पुरूष को ब्राह्मण स्त्री नहीं मिले, क्षत्रिय और वैश्य के लिए अन्य वर्ण की स्त्री न होने पर भी, किसी अन्य वर्ग की स्त्री से विवाह नहीं करना चाहिए।

'हीनजातिस्त्रिं मोहादुद्वहन्तो द्विजातय:।
कुलान्येण नयन्सयाशु ससन्तानानि शुद्रता।।'

यदि ब्राह्मण पुरूष किसी गैर वर्ण की स्त्री से विवाह करता है और उससे सन्तान प्राप्ति करता है- तो वह ब्राह्मण शूद्र बन जाता है। इसलिए ब्राह्मण को किसी भी हीन वर्णोत्पन्ना स्त्री से विवाह नहीं करना चाहिए।

गौतम ऋषि का मत है कि शूद्रा के साथ विवाह करने वाला ब्राह्मण पतित हो जाता है। उसी प्रकार क्षत्रिय और वैश्य भी शूद्रा स्त्री से विवाह करने पर पतित हो जाता है।

यथा- **'शूद्रावेदी पतत्यत्रेरूभेरूतथ्य च।**
शौनस्य सुतोत्पत्त्या तदपत्यो भृगो:।।'

ब्राह्मण के लिए तो ब्राह्मण स्त्री से ही वैवाहिक संबंध बनाना चाहिए। अन्य अन्तर्जातीय स्त्री से विवाह होने पर ब्राह्मण पुरूष ब्राह्मणत्व से भ्रष्ट हो जाता है।

'शूद्रां शयनमारोप्य ब्राह्मणो यात्यधोगतिम्।
जनयित्वा सुतं तस्यां ब्रह्मण्यादेव हीयते ।।'

मनुस्मृति में वर्णित वर्णव्यवस्था धीरे धीरे आगे चलकर जाति प्रथा में परिवर्तित हो गई और फिर जाति के आधार पर ही सजातीय पुरूष-स्त्री का वैवाहिक सम्बन्ध जायज माना गया है। कालान्तर में अपनी ही जाति में और भी अनेक उपभेद होते गये। सभी जातियों का भिन्न भिन्न वैवाहिक स्थिति अपनी ही जाति में दृढ होती गई।

इस प्रकार वर्णव्यवस्था ने आगे चलकर जाति व्यवस्था बन गई और वैवाहिक संस्था भी अपनी जाति और उपजाति के लिए दृढ हो गई।

जातिवादी धारणा के तहत ही तुलसीदास ने भी रामचरित मानस के अरण्य काण्ड में कहा है कि-

'पूतिअ विप्र सील गुन हीना
सूद्र न गुन मन ग्यान प्रवीणा।'

अर्थात् यदि कोई ब्राह्मण शील और गुण हीन हो, तो भी वह पूजनीय है। लेकिन कोई शूद्र ज्ञानी और गुणों से श्रेष्ठ है तो भी वह पूजनीय नहीं है।

इसी मनुस्मृति में दर्शाये गये जातिवादी अवधारणा को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया गया है।

शूद्र को यज्ञ कराने वाला ब्राह्मण अंगों से जितने ब्राह्मण का स्पर्श करता हैं, उतने ही ब्राह्मणों के हव्य-कव्य दान करने का फल दानदाताओं को नहीं मिलता कि- मनुस्मृति में आगे भी कहा है कि वेद ज्ञाता ब्रह्माणो भी लोभ से शूद्र याजक का दान लेकर पानी में कच्चे घडे के समान शरीर से नष्ट हो जाता है।

शूद्र को धर्मोपदेश करने वाला व्यक्ति नरक में जाता है। इस प्रकार प्राचीन काल से अद्यावधि भी जातिगत द्वेषभाव प्रचलित है। यद्यपि इसमें कमी आई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1 डॉ बूलर-सेक्रड बुक्स ऑफ दि ईष्ट सीरिज, भूमिका पृष्ठ 97-98
2 पांवा काणे धर्मशास्त्र का इतिहास
3 मनु 1.31
4. मनु. 1.93
5. मनु. 1.100
6. मनु. 312
7. मनु. 313
8. मनु. 3-15
9. मनु. 3.16
10. मनु. 3-17
11. रामचरित मानस, अरणकाण्ड 33 के पश्चात्
12. मनुस्मृति तृतीय अध्याय श्लोक 178

****

Unlocking the Noble Corona Virus (Covid- 19) Lockdown : Work From Home and Its Effects on Workers

Dr. Vrushali Sohani*

Abstract - The current pandemic brought about by corona virus has caused uncommon disturbance in human lives. Conjuring the typology of emergencies, we group corona virus as an unmanageable emergency that required countries or any region to force lockdowns. As public economies and organizations got an extreme blow with this conclusion, associations urged workers to telecommute. Drawing upon the specialist segregation writing, we planned to inspect the effect of work from home on workers during the lockdown. This examination would assist us with finding out about the nature and nature of work with regards to the current emergency. Towards this, I directed top to bottom meetings with different degrees of workers across assembling and innovation empowered assistance parts in Khandwa district and analysed the data using MAXQDA version-20 software. Workers announced an expansion in working hours, significant changes in their jobs, diminished degrees of profitability, and expanded degrees of stress. Other than these discoveries, we found flashes of innovativeness among workers during this separation period. These inventive advances were either towards sustaining oneself for vocation development or towards tackling long-pending hierarchical issues. Strangely, the innovativeness was self-started. Our findings have key ramifications for associations and their pioneers who need to return to telecommute approaches for the future workforce. We feature our hypothetical commitments and layout the degree for future exploration.
Keywords - corona virus, work from home, creativity, lockdown, pandemic.

Introduction - According to Wu et al. (2020) Corona Virus (COVID-19) had qualities like an infectious viral contamination; it avoided identification in an enormous division of individuals because of its asymptomatic nature. Further, the infection wildly spread inferable from the broad development of individuals over the globe. In spite of its identifying capable nature, its instruments of activity remain generally obscure. Hence, we conjured the typology of emergencies to arrange COVID-19 as an immovable emergency. Generally influenced nations have forced halfway or all out lockdown of their economies as regulation measures towards time boxing the infection.

In the current situation, associations have authorized work from home at every possible opportunity. There is no authentic priority where social orders have been secured at this point workers were required by their associations to proceed with work distantly. Despite the fact that the current investigation setting is not the same as teleporting as analyzed previously, we accept that the mental effects of virtual workplaces will hold criticalness. Imprisonment, loss of common daily practice and diminished relational contact will cause sentiments of business related disconnection (Brooks et al., 2020). Such recognitions combined with nervousness about profession movement, questions of business security, danger of disease, dread of death or of losing friends and family, will impact worker's feelings of anxiety and prosperity. Accordingly, the current investigation is guided by the examination question:

Objective of the study: To know the effect of work from home on workers in assembling and innovation empowered assistance parts during the corona virus lockdown.

Research Methodology

Sample and data collection - Lockdown in India was declared in four phases:

1. Phase 1 was from 26th March 2020 to 14th April 2020.
2. Phase 2 was from 15th April 2020 to 3rd May 2020.
3. Phase 3 was from 4rd May 2020 to 17th May 2020. And
4. Phase 4 was from 18rd May 2020 to 31th May 2020.

Data for this exploration was gathered in the third seven day stretch of the lockdown (somewhere in the range of thirteenth and nineteenth May 2020). We picked this time since we knew that stage first to third of the lockdown had upset everybody's close to home and expert daily schedule (counting our own!). While business progression plans were being made at the expert level, at an individual level, individuals were wrestling with family unit errands, loading goods and fundamental things, and sharing their nerves about the uncommon emergency. As stage first, second and third of lockdown approached its end, individuals and organizations were better educated regarding the pandemic and were intellectually ready for another period of lockdown. Individuals had begun subsiding into the absence of-routine

*Vice-Principal, Poonam Chand Gupta Vocational College, Khandwa (M.P.) INDIA

mode and had grappled with dubious occasions. Subsequently, we regarded this window of lockdown as proper for information assortment for the current study.

To address our examination question, we talked with 24 prepared chiefs in enormous private division associations in Khandwa. Members spoke to both assembling and innovation empowered assistance areas. 12 members in the assembling segment were utilized in ventures, for example, vehicle and quick moving shopper products though remaining members were utilized in enterprises, for example, banking and data innovation. All members were different degree of workers with at any rate five years of work understanding. Members were utilized in various organizations spread across various modern in Khandwa region.

From table 1 to table 3 summarizesthe participants' and their organization's attributes. We looked for an arrangement for leading the meeting subsequent to giving the motivation behind the survey. All meetings were led over the phone as up close and personal meetings were unrealistic in the lockdown circumstance. The meeting plan was semi-organized in nature (see Appendix). Each meeting went on for 20-30 minutes and was interpreted inside 24 hours.

Data Analysis

TABLE 1: BANKING AND FINANCE SECTOR

Participant Number	Gender	Experience (in years)	Job function
1	Male	10	Marketing
2	Female	10	Finance
3	Male	10	Sales
4	Male	11	Business Development
5	Female	12	Program Management
6	Male	11	Market research

TABLE 2: IT SECTOR

Participant Number	Gender	Experience (in years)	Job function
1	Female	10	Human Resources
2	Female	10	Technology Advisory
4	Male	12	Teaching & Research

TABLE 3: OTHER IMPORTANT SECTORS

S.	Sector	Gender	Experience (in years)	Job function
1	Metals and mining Mining & Power generation	Male Male	13 15	Operations Human Resources
2	Renewable energy	Male	11	Engineer-ing Design
3	Paint manufacturing	Male	10	Human Resources
4	Industrial chemical manufacturing	Male	10	Marketing
5	Automobile Automobile	Male Male	10 10	Sales Human Resources
6	Auto ancillary	Female	28	Human Resources
7	Professional services	Female	11	Project Manager
8	Fast Moving Consumer Goods	Male	14	Marketing
9	Oil & gas	Female	13	Safety
10	Electronics	Male	15	Supply Chain

Following the orderly strategy for subjective information examination, we diminished and disconnected the translated information by inductively building up a coding plan and iteratively refining it (Corbin and Strauss, 1990). To start with, we split the records into assembling and innovation empowered help parts to pick up inside and out experiences into the effect of work from home during the lockdown. Next, we acclimated ourselves with the information by over and again perusing the records. Utilizing MAXQDA adaptation 20, a product program for PC helped investigation (Kuckartz and Rädiker, 2019), we recognized beginning thoughts speaking to particular musings. We utilized information driven coding technique called open coding wherein no classifications are from the earlier characterized. While investigating the records, the scientist finds and codes portions of text. Names of codes intently mirror the substance of the portion of coded text (for example, stress). Subcategories of codes called subcodes can likewise be made (for example, subcodes of stress incorporate business related pressure and non-work stressors). We re-read the coded portions and their comparing codes to audit how well the codes reflected the substance and adjusted the codes, if essential. The coding cycle incorporates a few emphases to get a code framework that is organized and refined.

Table 4 gives a delineation of the code framework including open code, subcode, and coded sections from the record.

Table No.4: Open code

Percentage of company functioning

Subcode	Coded portion (in the record)
> 90%	100% working… no test in telecommute and we are utilized to Zoom gatherings. (Administration division, Participant 17)
> 90%	95% working from home. we set ourselves up multi week before the lockdown (Service division, Participant 10)
< 30%	90% plant is closed down aside from fundamental groups, for example, security, re, and clinical. They are completely positioned inside the plant and don't move out of the grounds. About 25% of salaried specialists are telecommuting. (Assembling segment, Participant 19)

< 30%	Plant is 100% closed down. For 90% of laborers, there is next to no to do from home… just 10% of laborers can telecommute. (Assembling segment, Participant 7)

Because of the above information investigation, a few codes and subcodes developed concerning the effect of telecommute during the COVID-19 lockdown. MAXMaps of the findings are spoken to the above tables. The thickness of the lines connecting the codes with the focal subject in the Maxmap speaks to the recurrence of event of the code. We found an obvious contrast between the workforce working in the assembling and technology enabled administration parts. The administration segment including data innovation and financial administrations were working 90%-100% from home. 10% of bank representatives truly went to the branch on a rotation basisas the legislature had proclaimed banks as fundamental administrations. Most help segment firms as of now had frameworks set up to empower telecommute. In any case, respondents recognized that telecommute for such a long length and at such an enormous scope had never been envisioned. In contrast to the administration area, the assembling part delivers substantial items that need working of plants. Additionally, most organizations in the assembling area utilized around 20-30% of perpetual representatives (white-collar)also, 70-80% brief specialists (industrial). Impermanent specialists who originate from various pieces of the nation had to re-visitation of their local spot because of the lockdown. While the salaried representat -ives could telecommute, the organizations scarcely had any authority over a huge aspect of the workforce. The plants for most respondents were totally closed aside from plants that had consistent cycles, for example, impact heaters, and organizations pronounced as a component of basic administrations, for example, gas chamber packaging and quick moving purchaser merchandise.

Table No.5: Open code

Change in working hours

Expanded hours	● Work is the equivalent however timing has expanded… presently I login at 9 am and logout at 10 pm… around 3 hours more than expected (Service area, Participant 6) ● Typically my activity is from 10 am-7 pm zeroing in on selling… yet now my day is profoundly unstructured...my deals divisional head offers directions to us...then I have to designate work to my group of 45 members...I likewise need to call clients and vendors to look after relationship... calls start as right on time as 8 am until 10 pm... (Assembling division, Participant 8)
Reduced hours	● Usually, I worked for around 75 hours/week yet now it's around 25 hours/week (Manufacturing division, Participant 1)

Most respondents announced an expansion in the quantity of hours they worked. This finding is part Freethinker (as all the respondents were telecommuting) however job subordinate. Workers, whose jobs included activities, flexibly chain, and finance, detailed same/diminished number of hours. Notwithstanding, most respondents demonstrated an expansion in their working hours. These principally included capacities, for example, specialized, human asset, and deals. Respondent 13 stated, "I am continually in contact with workers to comprehend their interests with respect to COVID… counsel them, monitor their wellbeing status… People's security is most significant at this moment… as a rule, I worked from 9 am-6 pm… presently I work from 9-9".

Suggestions - In the current pandemic, we discovered flashes of inventiveness among workers while adapting to their adjusted workplace. This finding holds useful significance in that associations ought to give certain freedom in reality to its workers. This opportunity may empower workers to concoct significant plans to either improve the current cycles or resolve significant issues that had already not stood out due to their non-dire nature. This was discovered more significant in the assembling area where an enormous portion of the workforce was not prepared to telecommute. While inventiveness in such a disconnected circumstance may exhibit itself as a restricted benefit for businesses, administrators ought to be mindful of such prospects to tap onto the imaginative aptitudes. Recognizing inventive representatives and permitting them isolation to analyse and profoundly centre, may bring about unmistakable, motivating, and beneficial interests.

Further, the pandemic has constrained assembling division associations to revaluate their workforce models in terms of adjusting the jobs and required ranges of abilities of representatives to ideally work in the post lockdown circumstance. Regardless of the administration's choice of facilitating the lockdown, associations must consider a few viewpoints themselves before re-beginning activities. Current contemplations have brought forward a decent open door before pioneers to evaluate the functions of all representatives in the association: jobs basic for physical presence on location, flexible parts for on location presence, and jobs that can completely work distantly. For on location representatives, line administrators should represent the arrival of the workforce in a amazed way, workforce availability to continue work, keep up sufficient physical separating, and guarantee all wellbeing conventions are in effect carefully followed.

Declarations

Accessibility of information and material - The information supporting the findings of this investigation are accessible inside the article as illustrative citations from the members. Further subtleties will bargain the security of examination members.

Contending interests - There are no economic or non-economic contending interests.

Funding - There is no wellspring of subsidizing for the examination.

References :-

1. Aggarwal, A. (2020). World's greatest lockdown may have cost Rs 7-8 lakh crore to Indian economy. Monetary Times, 1–2.
2. Barkur, G., Vibha, and Kamath, G. B. (2020). Slant investigation of cross country lockdown due to COVID 19 flare-up: Evidence from India. Asian Journal of Psychiatry, 1–5.
3. https://doi.org/10.1016/j.ajp.2020.102089
4. Bowker, J. C., Stotsky, M. T., and Etkin, R. G. (2017). How BIS/BAS and psycho-social factors recognize social withdrawal subtypes during rising adulthood. Character and Individual Differences, 119, 283–288. https://doi.org/10.1016/j.paid.2017.07.043
5. Creeks, S. K., Webster, R. K., Smith, L. E., Woodland, L., Wessely, S., Greenberg, N., and Rubin, G. J. (2020).
6. The mental effect of isolate and how to decrease it: fast survey of the proof. The Lancet, 395, 912–920. https://doi.org/10.1016/S0140-6736(20)30460-8
7. Cooper, C. D., and Kurland, N. B. (2002). Working from home, proficient confinement, and representative turn of events out in the open and private associations. Diary of Organizational Behavior, 23, 511–532.
8. https://doi.org/10.1002/job.145
9. Corbin, J. M., and Strauss, A. (1990). Grounded hypothesis research: Procedures, standards, and evaluative models. Subjective Sociology, 13(1), 3–21. https://doi.org/10.1007/BF00988593
10. Financial Times. (2020).
11. What a Covid lockdown looks likes, and what you can do and what you can't. https://economictimes.indiatimes.com/news/governmental issues and-country/Covid flare-up what-alockdown- will-resemble for-you/articleshow/74760719.cms. Gotten to on 27 April 2020.

****

Review and Redefine: Quality of Work Life for Higher Education

Abhay Shankar Mishra* Dr. Vijay Jain**

Abstract - Higher education is the key of success of a nation which boosts the economic potential of entire nation leading to the development of the nation. This is like a middleware transformation engine which produces manpower for industry, develop entrepreneurs and motivates young minds for R&D. This responsibility is on the shoulders of educational employees to understand and transform the energy and knowledge of students in an effective and efficient manner. An abundance of research studies suggested that the quality of work life (QWL) is one of the most significant and efficient tools of human resource management. Quality of work life programs encourage employees, make balance between professional, personal & social life and ultimately enhances employee job satisfaction.
Keywords - quality of work life, constructs of QWL, higher education, educational employees.

Introduction - Education is the backbone of any country and educational industry works as a supplier for other industries. In comparison to primary and secondary education, higher education plays a major role in the growth of a nation's economy. This has a direct & a deep relation to the industry. Higher education is working as an interface between students and industries. Here students are trained for the specific subjects, technologies, sectors and domains as per the current industry requirements. Higher education is the first and foremost which faces the requirement & challenges of the industry and society. The effectiveness and efficiency of education industry is directly dependent on employees only because the infrastructure and technology are lesser required in comparison to other industries. On an average employee spend around twelve hours daily at the work place, which is around one third of entire life; this influences the overall employee's life. "Quality of Work Life (QWL)" is a human resource management concept which is used to improve the work life of employees. This in turn improves the employee's family and social life both. Four decades have passed since the phrase "Quality of Work Life" was first introduced, but in India it is still a new concept to emerge. Quality of Work Life is the umbrella which covers all the aspects of work life of employee. So QWL is a way through which an institution gets aware of its responsibility to develop jobs and working conditions which are excellent for people and beneficial for the economic health of the institution. India's developing economy is rising with liberalization, privatization, automation and globalization. These factors affect the life of educational institution employees also. It becomes more challenging for employees to cope up with advancements so that they are able to prepare the new generations to stand matched to the market demand. With this challenge, it is necessary to provide a better and flexible working environment for employees so that they can give their best to the institutions. Lots of research has been done to measure the QWL of public, private and government organizations including banks, insurance and IT sectors but a mere research conducted for educational institutions. Unfortunately, there are troubling signs about the quality of work life of educational industry employees in many of the nation's institutions. These signs have far-reaching implications for student learning, economic and social equality, and the growth rate of the Indian economy as a whole. Education is potentially the greatest social equalizer in society and higher education plays a critical role and thus provides a very deep impact in creating society, culture, and economic wellbeing of new generation. So the educational employees' quality of work life is a necessary—indeed, the key—ingredient for improving our nation.

Objectives - The objectives of this study are as follows.

1. Study of QWL and redefine the QWL for higher educational institutions.
2. Present perception of employees in higher educational institution towards QWL.
3. Present scenario of QWL in higher educational institution.

Methodology - The study is based on desk research method to review and redefine literature on quality of work life for educational employees. The secondary data is drawn from books, journals and various reports published by the agencies working in this field.

Review of Literature - There are only few researchers'

*Research Scholar, Rabindra Nath Tagore University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Professor, Anand Institute of Management, Bhopal (M.P.) INDIA

conducted studies to analyze the QWL of educational institutions across the world. The researches of QWL are shown below in chronological order: Rossmiller (1992) did a study of QWL on secondary teachers and principals. He focused on great workplace and found that there is a positive influence between QWL and teacher's participation, professional collaboration and interaction, use of skill & knowledge and teaching environment. Kumar and Shanubhogue (1996) studied and compared the existing and expected QWL in universities and found an extensive gap between employees. They defined the quality of work life program as "an approach helps in improving the life of employees and improves the overall university's performance". WFD Consulting (2003) engaged in the "Office of Academic Affairs and Office of Human Resources" conducted a survey to evaluate the experiences & perceptions of the work environment & work life issues of Ohio state university's faculty. This study examined the relationship between work environment and work life issues and identified the priority areas for solving problems. According to this survey gender, job position, family demographics and nature of the job play a vital role to decide the satisfaction factor because their expectations are different from each other. Better work life is required for increasing satisfaction and commitment which will contribute to the organizational goal of achieving world class excellence. Dr. L Buffardi, K . Baughman and K. Morse (2004) conducted a survey on the task force in George Mason University's employees to correctly measure the quality of work life. Using Eisenberger's construct of perceived organizational support (POS) survey was done to know which key factor influencing employee commitment to the organization, job satisfaction, and general quality of work life. According to this survey researcher said that employees are looking for various factors which comes under the quality of work life constructs these are-: salary, health care benefits, retirement benefits, job security, work space, special recognition for achievements, availability of on-campus child care, adequate input in the decision process and fair and equitable performance appraisal equitable distribution of resources. G. N. Saraji and H . Dargahi (2006) examined the positive and negative attitudes of Tehran University of Medical Sciences (TUMS) Hospitals' employees towards quality QWL. A questionnaire based on 14 key factors of QWL was distributed to 908 employees of 15 different hospitals and around 70% of employees given their feedback. A cross- sectional, descriptive and analytical study was conducted. A stratified random sampling technique was used to select respondents. This study results shows most of the employees were dissatisfied with occupational health and safety, intermediate and senior managers' support, their income and work & family life balance. This study indicated that the employees were not satisfied with their job. This indicated that there was a need of improving quality of work life of employees in TUMS. Ming Chang Tomayko (2007) analyzed the quality of work life of mathematics teachers in Maryland. The purpose of this study was to improve both the effectiveness and satisfaction of mathematics teachers. This study was based on the stress of mathematics teaching. This study made an underlying base of prior researches on social psychology and organizational behavior theory to understand the different approaches to study of tension in mathematics teaching. He divided the tension in 5 different strands like goal congruence, agency, teacher efficacy and respect, professional interaction and load appropriateness. A Likert-type questionnaire created on these different tension strands and distributed through e-mails and flyers. The survey data were analyzed in two ways. First, the teachers working condition were analyzed on the five selected stressors and then factor analysis of the survey data identified six underlying components of stress in the work lives of mathematics teachers. Teacher working conditions were then re-evaluated with respect to these six components. This study revealed that the mathematics teachers were overloaded with the job responsibilities and had a lack of agency. On the other hand teachers were fully motivated to teach mathematics [8]. H.S. Saad, A.J.A.Samah, and N. Juhdi (2008) investigated the employee's perception of their work-life quality in the Razak University, Malaysia.

The prime objectives of this study to see whether the university environment influences employees' perception of job satisfaction; second, to find the different sources which arises stress among university employees and finally to calculate employees level of satisfaction with regard to various job related aspects. In this study ten QWL variables (work-family interference, quality of relationship, meaningfulness, pessimism about organizational change, self competence, impact, self determination, access to resources, time control and support) were used to test the relationships of QWL with job satisfaction. The study is based on the 251 questionnaires which were based on a five-point Likert scale ranging from 1 to 5. To check the validity of relationship, correlation test and multiple linear regression were used. The multiple linear regressions indicated that only 3 QWL variables (meaningfulness, pessimism about organizational change and self determination) were significantly related to Job satisfaction. This study indicated that the QWL variables only are insufficient to measure employees' job satisfaction. P.S. Bharathi, Dr. M. Umaselvi and Dr. N. S. Kumar (2009) inspected the perception of college teacher towards QWL. This aim of the study was to analyze the QWL under various dimensions. Data was collected from 12 colleges located in Bhopal city and 239 respondents' data were selected out of 1279 college teachers. The researcher created a standard questionnaire of 116 questions which was based on 16 different dimensions. Questioner consists of questions on socio-economic characteristics, various dimensions of QWL and QWL in a teaching environment. The collected data were analyzed by using SPSS and

various statistical tests were applied based on hypotheses and the matching variables Descriptive cum Diagnostic research design method was used to understand the characteristics of a particular individual, or a group and the association between the variables. This study revealed that overall 59.0% of the respondents have high levels of QWL and 41.0% have low levels of QWL. Rochita Ganguly (2010) examined the QWL of university employees and the relationship between quality of work life and job satisfaction. The researcher was very careful in data collection. The results indicated that the employees are not happy with the degree of autonomy, personal growth and superior support. The employees were not satisfied with their job and unhappy with QWL of university. Dr. K. M. Nalwade and Shri. S. R. Nikam (2013) done a literature review on quality of work life in academics and explores earlier research in the academic area. The researcher explains quality of work life on Walton's eight factors. They establish its relationship with employee demographic variable, stress, satisfaction, commitment, performance, job satisfaction which reveals that the former are the determinant of QWL. Seema Arif and Maryam Ilyas (2013) focused on quality of work life of private universities in Lahore, Pakistan. They explored various dimensions of quality of work life which affect life and the attitude of teachers. This quantitative study took 360 members of university and analyzes their perception of QWL. This study also investigated the QWL effects on employee commitment, engagement, job involvement and reputation of university. This research suggested that the perceived value of work, work climate, work-life balance and satisfaction are the main factors which shaped the work attitude and also improve employees work life.

Redefine Quality of Work Life - Walton, Louis, Davis, Rose & et al, Robbins & Fernandes etc. gave numbers of dimensions of QWL for different industries. These studies suggested that different types of industries have different impact and importance of QWL dimensions. The educational institution is an exclusive place of work; not any industry environment match with its work pattern, culture and yield. Its employees' working conditions are also quite different from other industries. So, there is need to understand the importance of QWL construct for educational institutions. Educational employee's behaviour and work life affect their personal lives, students' careers and performance of the institute. Morale, values, motivation, positivity are pillar of an educational institute. These values can be maintained, enhanced and spread when the employees are satisfied. This can be done only when the employees are able to balance between work life and personal life. This study considers Walton's eight factors and redefining for educational employee's perspective as below:

Adequate and Fair Compensation - Adequate and fair compensation plays a prime role in the creation of better QWL. Adequate and fair compensation reduces child poverty, poor educational attainment, the likelihood of future job insecurity, under-employment and poor health. There is a potential disadvantage of the low compensation. This also promotes gender equality and reduces severe financial stress faced by families. Employees of educational institutions work as hard as the different service & manufacturing industry, but fail to reap the same rewards in terms of salary hike, recognition, promotion, and appreciations. Faculties are getting less salary than the students to whom they teach and train. If the educational institutions want to attract the best and competitive brain then they have to provide competitive conditions including a competitive salary. Also, one has to examine the opportunity cost relative to industry careers.

Safe and Healthy Working Conditions - Higher educational institution employees are in contact of students between 16 to 25 years. The mind and nature of this age group are more impatient, aggressive and violent. The institutions face many types of violence – including ragging, fighting, hazing, dating violence, sexual harassment, hate and bias-related violence, stalking, rioting, disorderly conduct, and even self-harm and suicide. The employees of educational institutions are victims of these problems directly or indirectly. These issues always create unsafe and stressful environment for their employees. The employees, staff and students face a different kind of hazards depending upon the work carried out in these institutions. The employees and students are often unaware of the health risks of common issues in their working environment. In most of the cases, safety & security measures and standards are not set for the educational institutions and if it's set then not properly followed by the institutions. The higher education sector of India is as large as of developed countries so it can be said that situation of Indian higher education is likely to be same as in developed countries.

Opportunity to Use and Develop Human Capacities - Educational employee's capacity development is totally different from the service and manufacturing industries. Here employees are involved in teaching, research, training, project management, experimentation, coaching and technical advice. These are the areas where the scope of the development of human capacities can be enhanced. Institutions have to identify the Gray area of employee skill set and create opportunities to improve their skills. In this area institute must design career development programs for all categories of academic and non-academic employees and provide fair opportunity to develop.

Use and develop human capacity in the education industry has to focus on; Increasing the research funding for the research and publications, Improve on career development program for teaching and non-teaching employees, Change in job profile like non-teaching and teaching for eligible candidates, Increasing leadership, management and entrepreneurship development program, Increase cultural change and external facilitation programs.

In my point of view government must create a

framework for smooth transition between industry and institution for the willing employees. **Opportunity for Continued Growth and Security -** QWL propose future opportunity for continued growth and security of employment by expanding one's capabilities, knowledge and qualification. This construct creates an effective bridge between the worlds of learning and work. Job security is not a concern in the case of educational employees, here continued growth to employees is the biggest concern. Educational industry job is running in a very traditional manner and grows at a much lower rate than the other industries. It is surprising to find academic staff join institute and served up to 25 years without any growth along the ladder. In the era of globalization and rapid change of technology, it is imperative that employees must update their knowledge and skills and be conversant with the latest developments in their fields. Institutions and government should design different courses and other appropriate facilities to enable educational employees to improve education as regards content, method and techniques, enlarge the scope of the work, and seek promotion. The institution must encourage the employees and provide opportunities, facilities and incentives to participate in these programs. UGC, AICTE, DST, ICSSR and R&D Lab, etc in India have taken various initiatives to promote qualitative improvements in higher education which includes: travel grant, seminar grant, faculty development program, innovation promotion scheme, career award for young teachers and coaching schemes. These programs have benefited a number of employees but a longer has to go. These programs are targeted mainly to the teaching employees and there are no such programs designed for the non-teaching employees who are complemented in labs and other teaching learning activities of institutions. Social Integration in the Work Organization: Social integration in higher education can be established by inter-personnel openness, freedom from prejudice, egalitarian and upward mobility. A strong social integration into the organization results low absenteeism, reduce conflict rate and grievance and increases individual performance. The social integration concept of higher education is far-2 different and complex in comparison to other organizations. Here the employees have to interact with the students and parents. Parents and students' requirement, need and demand are different, individual in nature and sometime very complex. Employees have to understand, provide a solution and satisfy them. Direct activities of social integration occur in classrooms and laboratories between employees & students. Indirect activities occur between faculty, staffs and parent, which took place outside of the academic environment. One of the key requirements for any successful institution is that its key members and employees see themselves as being in the same family, group or team. Reputation and performance of an educational institute cannot be enhanced by individual effort. Employees have to work as a team for enhancing the performance of students and the institution. In higher education, employees are from different geographical places, religions and nations. The institution has to provide an environment where employees feel a sense of belongingness, work as a team, and pay attention to each other. Social integration helps in enhancing institute's citizenship. Constitutionalism: According to Friedman, Bell and Hill, the quality of work life will be high if the employer is concerned for the rights of individuals. Higher Education employees are facing challenges because of infrastructural and equipment deficiency, time pressure, technological improvements, management pressure and political influence. It is required a structured & independent work environment, unbiased & transparent policy system and more involvement with management & freedom of speech.

So, it is recommended a separate constitutionalism for higher education in India. a) Work and Total Life Space Higher education is facing explicit competition from national & international institutions and increment in admissions have resulted in pressures on employees. Work life space could be seen as low-level operational issues, but if not taken well can disable the organization. The work life space includes flexible working, job sharing, telecommuting, compressed hours, part-time working hours and benefits, maternity leave and so on to foster workplace performance. Wei (2005) study suggested that 37.9 percent teachers believe that the workload is too heavy, whereas 84.9 percent have neither the time nor the opportunity to undertake training because of lack of establishment positions and heavy responsibilities at work.

Social Relevance of Working Life The employees of educational institutions are more connected with the society than the other industries employees. They are not only educating & nurturing new brains for survival & but also perpetuate the prevailing values of a society. The teaching job is one of most reputed job and teachers are seemed to be a role model for the students. Employees of the educational institutions are persons who shape individual's personality, power to think innovative & creative and make them a good human being. Employees of the education sector are feeling respectful position in the society and this can be enhanced through the involvement of employees in various social welfare activities like literacy program for poor, woman empowerment program, clean and green city programs, awareness programs of blood donation & HIV/ AIDS. This will provide more satisfaction to the employees and socially connected as well.

Governmental Role - India's higher education system is the third largest in the world, after China and the United States. The Central Government, States and Union Territories have played an important role in the development of Higher Education System by establishing a large number of fully funded and aided higher educational institutions and by providing adequate policy support. During 1980s, Government of India (GOI) and the State Governments had felt an urgent need for revamping the Higher Education

System in the country to make it demand driven, with relevant courses in new and emerging technologies, with adequate infrastructure resources, competent faculty and effective teaching-learning processes. P.L. Joshi Governor of Uttar Pradesh has said that there is need of improving quality of work life of educational employees. The GOI supported the State Governments through two Technician Education Projects financed by the World Bank, which helped to upgrade the system. Government of India and State Government has admitted and taking a step in improving QWL of educational employees through various training and development programs, employees and management participation, union recognition, change management, free communication, grievance handling machinery, etc. New legislations are required for all educational employers to begin a change process in organizations to improve the quality of work life which they provide to their employees. VII. Conclusion and Suggestions A new world can be built up by young brains and educational institution employees have a major contribution of nurturing, educating these brains. The educational employees working life and environment play a major role in their life. It has been proved that QWL factors are essential for promoting a strong work culture, a good human resource climate, motivates and encourages employees to perform his duties and put their maximum effort. This will provide a job satisfaction to employee and growth to an institution. This study provides the following suggestions.

1. To create an environment in which educational employees achieve their own set targets for excellence and sustain the same with autonomy and accountability.
2. A Collaboration between the industry and institutions to exchange the employees to understand the new requirement of industry, to promote the research work.
3. Qualification enhancement programs like workshop and training for teachers and staff in new technologies, standards and processes. • Employees exchange programs between national and international varsities for understanding of global need, requirement and cultural differences.
4. Fair and transparent employee's evaluation cell for understanding the need of employees, rewards and recognition, promotion schemes, grievance redressing and personal counseling mechanisms.
5. To establish a Life and Career Advising Centre - a single point of contact for educational employees' counseling on current job, personal and career issues.
6. Frequent meeting, dialogues and sharing of information between employees and management for transparency and institutions new plans and projects.

References :-

1. Jayakumar, A., & Kalaiselvi, K., (2012). Quality of Work Life-An Overview. International Journal of Marketing, Financial Services & Management Research, 1(10), 140-151.
2. Shoemaker, J., Brown, A., & Barbour, R.,(2011) A Revolutionary Change: Making the Workplace More Flexible. Solutions. Vol 2, No. 2. pp. Retrieved from http://www.thesolutionsjournal.com/node/889 .
3. Rosmiller, R., A., (1992). The Secondary School Principal Teachers' Quality of Work Life, Educational management and Administration, 132-146.
4. Kumar, H., & Shanubhogue, A., (1996). Quality of Work Life-An Empirical Approach, Manpower Journal, 32(3), 17-32.
5. WFD Consulting. (2003). The Ohio State University Faculty Work Environment and Work/Life Quality Report Executive Summary. Retrieved from Staff Professional Development and Work/Life Survey Report. website: http://senate.osu.edu/WorkLife ExecSummary.pdf
6. Buffardi, L., Baughman, K., & Morse, K., (2004). Findings from the 2003 Quality of Work Life Survey of George Mason University Employees, Draft Report.
7. Saraji, G., N., & H Dargahi, H., (2006). Study of Quality of Work Life (QWL), Iranian J Publ Health, 35(4), 8-14.
8. Tomayko, M., C., (2007). An Examination of the Working Conditions, Challenges, and Tensions Experienced by Mathematics Teachers (Doctoral dissertation, Faculty of the Graduate School of them University of Maryland, College Park). Retrieved from http://drum.lib.umd.edu/bitstream/1903/ 8542/ 1/umi-umd-5625.pdf
9. Saad, H., S., Samah, A., J., A., & Juhdi, N., (2008). Employees' Perception on Quality Work Life and Job Satisfaction in a Private Higher Learning Institution, International Review of Business Research Papers, 4(3), 23-34.
10. Bharathi, P. S., Umaselvi, M., & Kumar, N., S., (2009). Quality of Work Life: Perception of College Teachers. Indian Journal of Commerce & Management Studies, 2(1), 22.
11. Ganguly, R., (2010). Quality of Worklife and Job Satisfaction of A Group of University Employees, Asian Journal Of Management Research, 209-216.
12. Kumar, D., & Deo, J., M., (2011). Stress and Work Life of College Teachers, Journal of Academy of Indian Academy of Applied Psychocology, 37, 78- 85.
13. Shahbazi, B., Shokrzadeh, S., Bejani, H., Malekinia, E., & Ghoroneh, D., (2011). A Survery of Relationship Between The Quality of Work Life and Performance of Department Chairpersons of Esfahan University and Esfahan Medical Science University. Procedia - Social and Behavioral Sciences, 30(1), 1555-1560.
14. Begas, S., B., (2012). Quality of Work Life: Its Relationship to Faculty Productivity in Higher Education Institutions in Capiz. International Research Conference for Globalization and Sustainability. Retrieved from http://wvsu.edu.ph/ ircgs/quality-of-work-life-its-relation-ship-to-facultyproductivity-in-

higher-education-institutions-incapiz/

15. Tabassum, A., (2012). Interrelations between Quality of Work Life Dimensions and Faculty Member Job Satisfaction in the Private Universities of Bangladesh, European Journal of Business and Management, 4(2), 78-89.
16. Nalwade, K. M., & Nikam, S., R., (2013). Quality of Work Life in Academic: A Review of Literature. International Journal of Scientific Research, 2(2), 214-216.
17. Arif S., & Ilyas M., (2013). Quality of Work- life model for Teachers of Private Universities in Pakistan. Quality Assurance in Education, Emerald Group Publishing Limited. 21(3), 282-298.
18. Ahuja, G., (n.d.). 'Are the professors at the IITs/IIMs underpaid?' -MSN News-National Articles. Retrieved from http://news.mobile.in.msn.com/en-in/national/articles.aspx?aid=3260769&afid=-1

****

मध्य प्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त विकास निगम की वित्तीय योजनाओं का मूल्यांकन

डॉ. मलसिंह मोरी*

शोध सारांश – मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम द्वारा प्रदेश के अनुसूचित जाति वर्ग के लोगों को आर्थिक रूप से सषक्त बनाने की विभिन्न स्वरोजगार योजनाएँ बहुत सार्थकता के साथ प्रासंगिक है और इन योजनाओं का लाभ लेकर अनेक युवा अपने सपनों को पूरा कर रहे है और साथ ही समाज एवं परिवार को उन्नति की ओर अग्रसर कर रहे है।

शब्द कुंजी – अनुसूचित जाति, निगम, स्वरोजगार।

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश में मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम की स्थापना मार्च 1979 में हुई थी। इसका पजीयन मध्यप्रदेश सहकारी अधिनियम–1960 के अन्तर्गत किया गया है।मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम का प्रमुख कार्य प्रदेश के अनुसूचित जाति वर्ग के आर्थिक विकास के लिए विभिन्न योजनाओं का प्रभावी रूप से क्रियान्वयन करना है। यह निगम राज्य शासन एवं राष्ट्रीय सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम के चैनेलाईजिंग एजेंसी के रूप कार्य करता है[1] और अनुसूचित जाति वर्ग के गरीबी की रेखा से नीचे लोगों तथा गरीबी की रेखा से दो गुना आय सीमा वाले परिवारों को स्वरोजगार में स्थापित करने के उद्देश्य से विभिन्न आय सृजित योजनाओं जैसे डेयरी, किराना दुकान, जनरल स्टोर, जूता–चप्पल की दुकान, साइकिल–स्कूटर मरम्मत, ऑटो रिक्शा, जीप, मिनी बस आदि के लिए न्यूनतम ब्याज दर पर ऋण सहायता प्रदान की जाती है। ऋण सहायता की सम्पूर्ण प्रक्रिया जिला कलेक्टर की अध्यक्षता में गठित जिला अंत्यावसायी सहकारी विकास समिति के माध्यम से सम्पूर्ण राज्य में उपलब्ध की जा रही है।[2]

शोध विषय का चयन – मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम अपनी विभिन्न आयजनित योजनाओं के संचालन के माध्यम से वित्तीय सहायता उपलब्ध कराकर मध्यप्रदेश के अनुसूचित जाति वर्ग के गरीबी की रेखा से नीचे जीवन–यापन करने वाले परिवार के लोगों को स्वरोजगार उपलब्ध कराकर उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त बनाने का प्रयास करता है।[3] इस शोध अध्ययन के माध्यम से मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम की आयजनित योजनाओं का कर योजनाओं के क्रियान्वयन में आने वाली विभिन्न समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने के लिए ही इस शोध '**मध्य प्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त विकास निगम की वित्तीय योजनाओं का मूल्यांकन**'का चयन किया गया है।

अध्ययन के उद्देश्य – इस शोध अध्ययन के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार से है–

1. मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम द्वारा अनुसूचित जाति वर्ग के आर्थिक विकास में योगदान का अध्ययन करना।
2. मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम की योजनाओं के क्रियान्वयन से संबंधित तथ्यों को प्रस्तुत करना।

अध्ययनका महत्व एवं क्षेत्र – इस शोध कार्य का महत्व यह है कि इसके माध्यम से यह स्पष्ट हो सकेगा कि मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम राज्य के अनुसूचित जाति वर्ग के लोगों के विकास में किस प्रकार से अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर रहा है और निगम को अपने मुख्य उद्देश्यों में सफलता मिल रही है या नहीं। इस प्रकार से यह शोध कार्य भविष्य में विभिन्न क्षेत्रों में शोध कार्य करने वाले विद्वानों के लिए बहुत कारगर साबित होगा।इस शोध कार्य के अध्ययन क्षेत्र के रूप में सम्पूर्ण मध्य प्रदेश का चयन किया गया है।

शोध विधि :

1. अध्ययन का समग्र–अध्ययन का समग्र के रूप में सम्पूर्ण मध्य प्रदेश का चयन किया गया है।

2. अध्ययन की इकाई–अध्ययन की इकाई के रूप में मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम का चयन किया गया है।

आँकड़ों का संकलन – इस शोध कार्य के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों का संकलन किया गया है। प्राथमिक आँकड़ों का संकलन साक्षत्कार अनुसूची के माध्यम से किया गया है। वहीं द्वितीयक आँकड़ों का संकलन मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम के विभिन्न प्रतिवेदनों एवं अन्य महत्वपूर्ण दस्तावेजों के माध्यम से किया गया है।

निदर्शन पद्धति – इस शोध कार्य के लिए दैव निदर्शन पद्धति[4] की सविचार प्रणाली का उपयोग कर कुल 300 हितग्राहियों का चयन किया गया है।

अध्ययन के महत्वपूर्ण निष्कर्ष – अध्ययन के महत्वपूर्ण निष्कर्षों में अध्ययन के लिए चयनित उत्तरदाताओं के माध्यम से प्राप्त अभिमतों को प्रस्तुत किया गया है, जो इस प्रकार से है–

1. आयु के संबंध में चयनित सर्वाधिक 62 प्रतिशत उत्तरदाताओं की आयु 28 से 37 वर्ष की है और उन्होनें निगम की स्वरोजगार योजना का लाभ लिया है। वहीं 24 प्रतिशत उत्तरदाताओं की आयु 28 से 37 वर्ष की है।
2. स्वरोजगार योजनाओं का लाभ लेने के संबंध में चयनित कुल उत्तरदाताओं में 65 प्रतिशत पुरूष एवं 35 प्रतिशत महिलाओं ने

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय महाविद्यालय, अंजड (बड़वानी) (म.प्र.) भारत

मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम की स्वरोजगार योजनाओं का लाभ लिया है।

3. मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम की स्वरोजगार योजनाओं का लाभ लेने वाले सर्वाधिक 61 प्रतिशत उत्तरदाता माध्यमिक स्तर तक शिक्षित है।
4. मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम की स्वरोजगार योजनाओं का लाभ लेने वाले 57 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यह स्वीकार किया है कि योजनाओं का लाभ प्राप्त करने से उनकी आय एवं जीवन स्तर में सुधार हुआ है।
5. निगम की योजनाओं की जानकारी के संबंध में चयनित कुल उत्तरदाताओं में से 61 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया है कि उन्हें निगम की योजनाओं की जानकारी अपने मित्रों एवं रिश्तेदारों से प्राप्त हुई है और बाकी उत्तरदाताओं का अन्य माध्यमों से स्वरोजगार योजनाओं की जानकारी प्राप्त हुई है।
6. स्वरोजगार योजना से संबंधित दस्तावेज तैयार करवाने में कठिनाई होने के संबंध में कुल उत्तरदाताओं में से 59.33 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकार किया है कि उन्हें योजना से संबंधित दस्तावेज तैयार करवाने में कठिनाई हुई है, जबकि 33.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार उन्हें थोड़ी-बहुत बठिनाई हुई है। 7 प्रतिशत उत्तरदाताओं का अभिमत है कि उन्हें योजना से संबंधित दस्तावेज तैयार करवाने में कोई कठिनाई नहीं हुई है।
7. प्रशिक्षित होकर व्यवसाय प्रारंभ करने के संबंध में कुल उत्तरदाताओं में से 62 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया है कि उन्होंनें प्रशिक्षित होकर व्यवसाय प्रारंभ किया है, जबकि शेष 38 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बिना प्रशिक्षण के ही व्यवसाय प्रारंभ किया है।
8. स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत सहायता प्राप्त करने वाले कुल उत्तरदाताओं में से 67.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सहायता राशि का उपयोग नियमानुसार निर्धारित मद पर ही किया है, जबकि शेष उत्तरदाताओं ने अन्य मदों पर सहायता राशि का उपयोग कर दिया।
9. स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत सहायता प्राप्त करने वाले 68 प्रतिशत उत्तरदाता अपने व्यवसाय से संतुष्ट है, वहीं 32 प्रतिशत उत्तरदाताओं का अभिमत विपरीत है।

उपसंहार - उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम द्वारा प्रदेश के अनुसूचित जाति वर्ग के लोगों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने की विभिन्न स्वरोजगार योजनाएँ बहुत सार्थकता के साथ प्रासंगिक है और इन योजनाओं का लाभ लेकर अनेक युवा अपने सपनों को पूरा कर रहे है और साथ ही समाज एवं परिवार को उन्नति की ओर अग्रसर कर रहे है। मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम की महत्वपूर्ण भूमिका प्रदेश के लोगों को स्वरोजगार से जोड़कर विकासात्मक आयाम प्रस्तुत कर रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. सक्सेना, ए.पी.(2005), मध्यप्रदेश में सहकारिता, आभा प्रकाशन, भोपाल, म.प्र.
2. मार्गदशिका, मध्यप्रदेश राज्य सहकारी अनुसूचित जाति वित्त एवं विकास निगम, भोपाल
3. www.mpscfdc.org
4. सिंह, एस.पी.(1998),वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व, कमल प्रकाशन, इन्दौर

****

Corporate Social Responsibility in India

Dr. Jyoti Upadhyaya*

Abstract - Corporate Social Responsibility (CSR), a concept comparatively new to India, has been rapidly pacing up. CSR has become a fundamental business practice and has gained much attention from the management of large international companies. It facilitates coordinationof business operations with social values. CSR is deemed as a point of margin of various initiatives aimed at ensuring socio-economic development of the community. Acknowledging the fact that mainstreaming CSR into businesses could be instrumental in delivering societal value, especially in a developing country like India, this paper specifically aims at providing an understanding of concept of CSR and analyses the development of CSR in India. It highlights the policies governing CSR in India and discusses the cases of CSR initiatives in Indian firms including SMEs role in CSR. There are several challenges facing CSR in India and this paper provides suggestions to overcome them and accelerate the CSR initiatives in India.

Introduction - "A company should have in its DNA, a sense to work for the welfare of the community. CSR is an extension of individual sense of social responsibility. Active participation in CSR projects is important for a company"

- Ratan Tata

The concept of corporate social responsibility has gained prominence from all avenues. The present societal marketing concept of companies is constantly evolving and has given rise. Many of the leading corporations across the world had realized the importance of being associated with socially relevant causes as a means of promoting their brands. It stems from the desire to do well and get self-satisfaction in return as well as societal obligation of business. As an engine for social progress, CSR helps companies live up to their responsibilities as global citizens and local neighbours in a fast-changing world. For Indian businesses CSR can be a source of opportunity, innovation, and competitive advantage while at the same time providing with the opportunity to actively contribute to the sustainable development. Organizations in India have been quite sensible in taking up CSR initiatives and integrating them in their business processes. It has become progressively projected in the Indian corporate setting because organizations have recognized that besides growing their businesses, it is also important to shape responsible and supportable relationships with the community at large scale.

Objectives :

1. To develop an understanding of concept of CSR
2. To analyse the development of CSR in India and its changing trends
3. To understand the policies governing CSR
4. To analyse the CSR initiatives in India including SMEs
5. To study the challenges faced by CSR in India
6. To provide suggestions for accelerating CSR initiatives

Research Methodology - The research paper is an attempt of exploratory research, based on the secondary data sourced from journals, magazines, articles, newspapers and media reports

CSR Defined - Most definitions describe CSR as a concept whereby companies integrate social and environmental concerns in their business operations and in their interaction with their stakeholders on a voluntary basis.

The World Business Council for Sustainable Development (WBCSD) defines CSR as "The continuing commitment by business to behave ethically and contribute to economic development while improving the quality of life of the work force and their families as well as of the local community and society at large".

Kotler and Lee define CSR as "Corporate social responsibility is a commitment to improve community well-being through discretionary, business practices and contribution of corporate resources. Corporate social initiatives are major activities undertaken by a corporation to support social causes and to fulfil commitments to corporate social responsibility"

Corporate social initiatives are major activities undertaken by a corporation to support social causes and to fulfil commitments to corporate social responsibility.The conclusion would be that there is no unanimity on the definition of what constitutes Corporate Social Responsibility (CSR).However what could be taken into account CSR is generally used to describe business's efforts to achieve sustainable outcomes by committing to good business practices and standards.

CSR Origin and Development in India - The concept of CSR has been imbibed in Indian society from the very beginning. Gandhi's philosophy of trusteeship is similar to CSR of the modern world; companies like TATA and BIRLA

*Head & Associate Professor, School of Studies in Sociology & Social Work, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA

have been imbibing the case for social good in their operations for decades long before CSR become popular cause. The avid interest in community welfare among the Tata Group dates back to the 1860s when the company was founded by Jamshedji Tata. This explains why nearly two-thirds of the equity of Tata Sons, the Tata Group's promoter company, is held by philanthropic trusts, which have created a host of national institutions in science and technology, medical research, social studies and the performing arts.Dr.Kurien'sAmul-led Operation flood had pioneered inclusive growth through work with dairy farmers at grass-root level, changing lives, enhancing income, empowering women and at the same time reaping benefits to the business. At Indian Oil, corporate social responsibility (CSR) has been the cornerstone of success right from inception in the year 1964. The Corporation's objectives in this key performance area are enshrined in its Mission statement: "…to help enrich the quality of life of the community and preserve ecological balance and heritage through a strong environment conscience."

Before Corporate Social Responsibility found a place in corporate lexicon, it was already textured into the Birla Group's value systems. As early as the 1940s, the founder G.D Birla espoused the trusteeship concept of management. Simply stated, this entails that the wealth that one generates and holds is to be held as in a trust for our multiple stakeholders. With regard to CSR, this means investing part of our profits beyond business, for the larger good of society.

Over the years CSR has gained importance in India as companies are realizing the importance of investing in CSR for achieving benefits of creating shareholder value, increased revenue base, strategic branding, operational efficiency, better access to capital, human and intellectual capital and lower business risk.CSR has emerged as an effective tool that synergizes the efforts of Corporate and the social sector towards sustainable growth and development of societal objectives at large.

Suggestions - In order to ensure that CSR is progressively contributing and benefiting, the following suggestions are given to make CSR initiatives more effective:

1. Public to make CSR initiatives more effective. It is noted that partnerships between all stakeholders including the private sector,
2. Employees, local communities, the Government and society in general are either not effective or not effectively operational at the grassroots level in the CSR domain. It is recommended that appropriate steps be undertaken to address the issue of building effective bridges amongst all important stakeholders for the successful implementation of CSR initiatives. As a result, a long term and sustainable perspective on CSR activities should be built into the existing and future strategies of all stakeholders involved in CSR initiatives
3. Increase their contribution to CS initiatives .When compared to large corporations, SME play a limited role in CSR.SME have to be encouraged to posivitely contribute and reap the benefits of created by CSR Allocating finance for treating CSR as an investment from which returns are expected
4. Monitoring CSR activities and liaising closely with implementation partners such as
5. NGOs to ensure that initiatives really deliver the desired outcomes. A long term perspective by organisations, which encompasses their commitment to both
6. Internal and external stakeholders will be critical to the success of CSR and the ability of companies to deliver on the goals of their CSR strategy.

Conclusion - CSR is really about ensuring that the company can grow on a sustainable basis, while ensuring fairness to all stakeholders, CSR has come a long way in India. It has successfully interwoven business with social inclusion and environment sustainability. From responsive activities to sustainable initiatives, corporate have clearly exhibited their ability to make a significant difference in the society and improve the overall quality of life. In the current social situation in India, it is difficult for one single entity to bring about change, as the scale is enormous. Corporate have the expertise, strategic thinking, manpower and money to facilitate extensive social change. Effective partnerships between corporate, NGOs and the government will place India's social development on a faster track.

References :-

1. World business council for Sustainable Development (www.wbcsd.org/workprogram/business-role/previous-work/corporate-social-responsibility.aspx
2. Kotler, Philip and Nancy Lee. Corporate Social Responsibility: Doing the most good for your business New Jersey: John Wiley & Sons, Inc. 2005.
3. "CSR: A Cornerstone of our Enduring Success" Corporate Social Responsibility at India Oil http://iocl.com
4. Corporate Social Responsibility Activities by the Aditya Birla Group http://www.adityabirla.com/social_projects/overview.html
5. "Corporate Social Responsibility: Towards a Sustainable Future", A white paper by KPMG & Associated Chambers of Commerce and Industry of India (ASSOCHAM)in.kpmg.com/pdf/CSR_White paper.pdf [6] Mahendra Kumar Singh, Govt sees 10k crore flow/ yr from CSR spend, Times of India, Feb 9, 2013,
6. Heledd Jenkins, "Corporate social responsibility–engaging SMEs in the debate", The centre for Business Relationships, Sustainability & Society. http://www.brass.cf.ac.uk/uploads/CSRandSMEs.pdf
7. http://www.ficci-sedf.org/CSR-Awards-Report2010.pdf [9] Kotler, Philip and Lee, Nancy: Corporate Social Responsibility: Doing the most good for Your Company and your cause, John Wiley andSons, 2005. [10] Brown K (2001), "Corporate Social Responsibility: Perceptions of Indian Business", in Mehra M (Ed.), Retrieved from www.csmworld.org/public/pdf/social_respons.pdf

****

Impact of the Covid-19 epidemic on human life and environment - in the international scenario

Mrs. Rajwati Deepankar*

Introduction - "In every shadow there is a light" Indeed positive and beartwarming things to come togather even when the days seen of speak only of gloom and dread. Today even as world mourns more than 3 million infections 200000 deaths from the corona virus pandemic. It is important to also look at some positive side effects that have resulted. this earth belong to every one and every living being whether animal or plant. the Wealth of the earth is supposed to be enjoyed by al in such a way that the natural resources are not depleted.

Development ought to be sustainable that is one generation does not finish up consuming the entire resources without leavits only thing for the future generation. By the future generation-1 mean future generation of all living beings, what has man done? In the name of development, he has conspired with has conspired with his countries to make natural resource deplete. One has to buy water and natural resource why?

One does not gel fresh air antoher natural resource to breath why. Many animals and platns va How many have put on surface of eaieties haverth in the name of mining. How many mountains he has pulled down. How many forests he has destroyed. These and there injuries have been caused to earth in the name of development. Due to the corona virus man has stopped all his distrucitve activites although temporaritly. So every lover of nature feels that earth has got some reprieve from mans cruelty.

The trick black clouds corona virus have enneloped every plant of the world. Spreading its aura of terror. And until wait for the cloud to clear and bright, yelloy sun rays to touch our lives we must look for the silver lining. In this case. There is a lot of positivity around hm Despite the panic and loss through coivd 19 From dolphin swimming across waters. People coming together to sing. Families spending quality time together at the comfort of thier homes and nature recuperating from the clutches pollution .

The purpose of this research paper is to reach the conclusion through research on the factors that affect the environment during the epidemic, theoretical method has been used to prepare this paper.

Positive Impact Of Lockdown On Animals - The sad bad news is that italy has been declared as the epicenters of corona virus, swans and fishes are witnessed swimming around in the clean canal of the city, the lockdown in Venice might have filled the air with gloom, but with natures mystical creature making its way to the waters of Venice there is a lovely sprinkle of positivity in Europe The Iconic canals in Venice are cleaner with lesser boat traffic and beautiful as fishes find their space in the water. The other animals appearance that are usually a regular accurance but are now being falsely linked to the lockdown include peacocks in mumbai around the hanging garden area, Rosy starlings murmuring at the sawarmati river front in Ahmedabad, Gangetic dlphims in Kolkata after three decades and olive ridely turtles mass neasting in Odisha .

Positive Impacts Of Lockdown On Air_In New York - Shutdown ahs brought as sudden drop in carbon emissiiom across gloe. Compared with this time last year. Levels of pollution in new York have redacted by nearly 50%

Positive Impacts Of Lockdown On Air In China - The proportion of days with good quality air was up 11.4% compared with the same time last year in 337 cities across china. According to its ministry of ecology and environment. In Europe.

A similar story is playing out in Spain and the UK and INDIA. According to the data of the central pollution control board the air quality in Delhi is presently in the good category recorded satisfactory air quality in the last few day in India.

When it comes to Delhi our national capital has been trying hard to combat air pollution for several years as witness the significant improvement was around 500 in Delhi in November 2019 but now the indexes come under good category with a score of 60 and ate same time the water in Yamuna river looks cleaner at the industries remain shut at prove that the human Intervention has been adversely effecting the ecosystem.

These are the biggest contributor to the air pollution in Delhi as for as the air pollution is concerne that estimates that the dirty air kills 7 million people offices and factories contribution stoppage an of coerce the reduction in which moment has resulted in turning the tables for air pollution.

Government order in place people are not stepping out of the air comes which means lesser vehicles on the road vehicles and factories are the biggest contributor to the air pollution in Delhi.

*Asst. Professor, Govt. Thakur Someshwar Singh College, Naigarhi, Rewa (M.P.) INDIA

Positive Impact On Water Bodies - Visuals of a cleaner river Ganga have emerged from Uttar Pradesh Kanpur as well as Varanasi. The clear water is a result of the shut down of most industries. While in most parts of Delhi the water of river Yamuna has also started to appear cleaner and southeast Delhi's Kalindi KUNJ the heavy amount of toxic farm that the usually seen around the year still continues. The toxic farm is coused due to a mix if sewage detergents and chemicals from industrial water.

Positive Impact On Water Bodies In India - In the case of river Ganga too, the lab result of the water quality are awaited. Experts say that along with the lockdown, other factors too have contributed to cleaner water

Himansu thakkar, coordinator at south Asia net work on Dams, River and people told NDTV Along with lockdown there is increased water flow due to unseasonal rainfall and snowfall in some parts. Religious activates have diereses. specialty in Varanasi where lesser are motions are happening the current sce nario should shape our our future approach of how mothproof should minimize industrial effluents in the water bodies This clearly indicateds that industries locat on river banks are the most notorious clupirts in letting therein untreated waste treatment and disposal.

Effect On Global Economy - The analysis by the un-department of economic and social affairs said the covid-19 pandemis is disturpting global supply chains and internaltional trade. During the past month, the moment of people and tourism flow have come to halt.

Millions of workers in these countries are facing the bleak prospect of losing their jobs. Governments are considering and rolling out large stimulus packages to avert a sharp downturn of their economies which could potentially plunge the global economy into a deep recession.

Global Economy Has Been Effected In Flowing Ways - BY OIL PRICES. around the world about 700 refineries turn crude oil into gasoline. Diesel and other fules. They are starting to dail dwon production and even shut outright because the demand for the fuel they produce is so dire.

Tourism And Travel - Anotgher most effected industry is the travle and toursim (hotel restaurant) industry. Airlines are grounded and their fixed coasts are increasing, the same is the case with hotels and restaurants. World bea it major restructuring in the secotr with a new name unable to cope up with the environment and leading to merger with a bigger or closure of the business which again adds up to the un employment pool increasing NPA crisis.

Impacts On Markets - AS we all aware that markets are down around 25% to 30% globally and also indian ON markets are down to same order. It is not clear as to how much more pain is left as the markets have already factored in the above concerns to a greater extent. However it is too early to say that this is the worst for the markets as it just the anticipation of the stagant operation but in future once thing start to get normal there could we more pain and wo could slide further downward and look at so it would be advisable to understand your respective risk appetite and look at investing to staying away till the markets get normal.

Effect On Economy Of India - Onshore tanks in many markets are full, Where 1.3 billion people are under lockdown until mid-april the nations biggest refinery has cut processing rates at most plants by as much as 30% forcing traders to store excess oil in idle supermarkets, refineries are starting to shutdown because nobudy needs the fuels they proudce. In phisical oil markets. barres are all ready changing hands for less that $10, and in a few landlocked markets producers are playing consumers to take away their curd.

Indias economic growth could take a hit or up to half a caused by the coid-19 outbreak, earth estimates by the government suggest. But independent economist see a deepar cut of up to one percentage point. Many financial experts predict a hit of 0.03-5% on the gdp in the next fiscal year and even predicated that the growth rate in first two quarters of the next fiscal year could be as low as 4-4.5%. The economy is forecast to grow 5% in current fiscal, the slowest in 11 years. The economic survey had forecast 6.65% rise in FY21, but covid-19 has hurt recovery prospects. Having said that if we talk primarily about service sector, sector such as tourism, aviation, hospitality and trade will face the first brunt of the server travel, assembly and activity curbs imposed by the governments across the world, followed by a wider impact on other sectors as economic activity atalls.

Effect On Economy Of China -Their production fell by 18.5% in the first two months of the year small business re hit the hardest, The unemployment rate has greatly increased. In the US alone, 3million americans filed gor unemployment insurance. The two contributing factore to the slowdown in the global economy are also a fall in oil prices and a high leven of anxiety among people. plenty of governments have established too harsh lockdowns that will paralyze many businesses for months.

Nevertheless, the situation is alarming Many developed countries are faced with the risk to remain in debt because the pandemic is devastating all continents Despite governments efforts to keep the global economy afloat, the damage of covid 19 is more disrupting than it seemed at the start.

Conclusion - It clearly shows that in just an extremely short span of time, unprecedented actions by humanity that cut back on our emissions and footprint can have a very significant impact for too long, too many have been naysayers and pessimists who have resigned to the assumption that humanitys action for the past two centuries are completely irreversible. In fact has been Iackins thus for until now is a lack of will both politically and from ordinary people like you and me- to treat environmental issues as an emergency.

Suggestions :

1. Special attention should be given to governments on environmental cleanliness.

2. The market system should be made favorable to deal with the epidemic.
3. Institutional efforts should be made for environmental protection.
4. Human intervention should be reduced at the natural tourist destination.

References :-

1. Berman J.D., Edisu K. Changes in U.S. air pollution during the COVID-19 pandemic.
2. Ghosh I. The emissions impact of coronavirus lockdowns, as shown by satellites. 2020.
3. Solan M., Hauton C., Godbold J.A., Wood C.L., Leighton T.G., White P. Anthropogenic sources of underwater sound can modify how sediment-dwelling invertebrates mediate ecosystem properties.

****

कानूनी सहायता क्लीनिक योजना

प्रो. डॉ. एन.के. थापक* रतन सिंह तोमर**

प्रस्तावना – जैसा कि भारत अपने गांवों में रहता है, वह आवश्यक है कि ग्रामीणों को अपने गांवों में ही प्रभावशाली कानूनी सहायता दी जाए। अभी-भी यह विदित ही है कि ज्यादातर कानूनी सेवा संस्थाएं शहरी तथा अर्द्धशहरी क्षेत्र में स्थित हैं, जिनका ग्रामीण लाभ नहीं उठा पाते। इस कमी को दूर करने के लिए कानूनी सहायता क्लीनिक की योजना गरीबों तथा समाज के पिछडे वर्गो को कानूनी सहायता दिए जाने के लिए बनाई गई है। राष्ट्रीय विधि सेवा प्राधिकरण (नाल्स की राष्ट्रीय कार्यवाई योजना के अंतर्गत योजना को पिछले वर्ष दिसम्बर में अपनाया गया, जिसे विधि सेवा संस्थाओं (ताल्लुका/उप मंडल/मंडल विधि सेवा समितियों, जिला विधि सेवा प्राधिकरण, उच्च न्यायालय विधि सेवा समितियों, राज्य विधि सेवा प्राधिकरण एंव उच्चतम न्यायालय विधि सेवा समिति, जो विधि सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के अंतर्गत स्थापित) के माध्यम से इसको पूरे देश में अमल में लाया जा रहा है। नाल्सा की पूरे देश के गांवों में कानूनी सहायता क्लीनिक स्थापति किए जाने की योजना है नाल्सा की पंचवार्षिक दूरदर्शी एवं रणनीति दस्तावेज में कानूनी सहायता क्लीनिक खोलने पर बल दिया गया है।

प्राथमिक स्वास्थ केन्द्रों, जहां पर डॉक्टर तथा अन्य सहायक चिकित्सा स्टाफ गांवों में रहने वाले गरीब लोगों के मूलभूत स्वास्थ्य की देख-भाल करता है, उसी प्रकार से कानूनी सहायता क्लीनिक में वकील लोगों को कानूनी सेवा प्रदान करेगा। योजना का मुख्य उद्देश्य गरीबों, विधि सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 की धारा-12 के अंतर्गत वर्गीकृत समाज के कमजोर लोगों, खासकर ऐसे लोगों, जो कि दूर - दराज स्थानों में रह रहे हैं, जो विधि सेवा संस्थाओं के कार्यालय तथा न्याय की सीटों से परे हैं। उन्हें कानूनी सहायता दिया जाना है। योजना का लक्ष्य मूलभूत प्रकृति की कानूनी सेवाएं जैसे कि कानूनी सलाह, पेटीशनों की ड्राफ्टिंग करना, नोटिस देना, उत्तर देना, कानूनी महत्व के अन्य दस्तावेज तथा आवेदन तेयार करना, इसके साथ ही साथ स्थानीय लोगों के झगड़ों का निपटान करना तथा उन्हें कोर्ट में जाने से रोकना है। ऐसे मामले जहां उच्च स्तर की कानूनी सहायता अपेक्षित है, उन्हें विधि सेवा प्राधिकरण अधिनियम, 1987 के अंतर्गत स्थापित विधि सेवा संस्था को प्रेषित किया जा सकता है। कानूनी सहायता क्लीनिक में सामान्य लोगों की समस्याओं के प्रति प्रतिबद्ध, समझदार तथा संवेदनशील वकील तथा पैरा-लीगल स्वयंसेवक (विधि सेवा प्राधिकरण द्वारा चयनित तथा प्रशिक्षित) होंगे। पैरा-लीगल स्वयंसेवक कानूनी सेवा क्लीनिक के काम-काज के घंटों के दौरान उपलब्ध रहता है। कानूनी सहायता क्लीनिक ऐसे स्थान पर होता है, जहां स्थानीय लोग आसानी से पहुंच सकें। स्थानीय निकाय के कार्यालय भवन जैसे कि गांव पंचायत के अंदर एक कमरा लेना आदर्श समझा गया है। स्थानीय विधि सेवा प्राधिकरण, ग्राम पंचायत, मंडल /ब्लाक पंचायत, म्युनिसपल्टी एवं कारपोरेशन आदि जैसे स्थानीय संस्थाओं से आग्रह कर रहा है कि वे कानूनी सहायता क्लीनिक के कार्य के लिए एक कमरा दिला दें। चुंकि कानूनी सहायता क्लीनिक स्थानीय लोगों के हित में कार्य करता है , अत: स्थानीय निकाय संस्थाओं को इससे सहयोग करने की आवश्यकता के लिए अनुरोध किया जाता है तथा वह अहसास दिलाया जाता है कि कानूनी सहायता क्लीनिक का लक्ष्य शांति स्थापित करना तथा स्थानीय लोगों का कल्याण करना है।

कानूनी सहायता क्लीनिक नजदीकी विधि सेवा संस्था के सीधे प्रशासनिक नियंत्रण में आता है, जिसका कि क्षेत्राधिकार है। जिला विधि सेवा प्राधिकरण जिले के भीतर कार्य कर रहे सभी कानूनी सहायता क्लीनिकों की निगरानी तथा सलाह देने की शक्तियां रखता है। राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण इन क्लीनिकों की कार्य प्रणाली के बारे में मार्ग-निदेश जारी करने का अधिकार रखता है।

राज्य विधि सेवा प्राधिकरण कानूनी सहायता क्लीनिकों की सेवाओं में सुधार लाने के लिए समय समय पर निदेश जारी करता है, ताकि समाज के कमजोर वर्गो को कानूनी सेवाएं प्रभावशाली ढंग से मिल सकें। राज्य विधि सेवा प्राधिकरण से यह अपेक्षा की गई है कि वे अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर काम कर रहे कानूनी सहायता क्लीनिकों की कार्य-प्रणाली के बारे में तिमाही रिपोर्ट राष्ट्रीय विधि सेवा प्राधिकरण को प्रेषित करें।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

* शोध निर्देशक, एल.एन.सी.टी. विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, एल.एन.सी.टी. विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)भारत

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

भारतीय संविधान में मानवाधिकारों का समावेश - एक अध्ययन

मुकेश मिश्रा * डॉ. एम. के. साहू **

प्रस्तावना - मानव अधिकार एक जन्मजात अधिकार है। हर एक मानव अधिकारों के साथ जन्म लेता है इसकी परवाह किए बिना कि वह कौन है, और वह किस समुदाय का है और क्या पहनता है या भिन्न संस्कृति। सभी को राज्य और राज्य द्वारा संरक्षित किए जाने का अधिकार है। मानव का संरक्षण मानव अधिकारों में निहित हैं, और हर इंसान के लिए अभिन्न हैं, मानव जीवन और उसके विकास के लिए बुनियादी तौर पर अधिकार उपलब्ध है, तथा इसे हर राज्य के संविधान में शामिल किया गया है। वास्तव में, मानव अधिकारों की अवधारणा पिछले कई शताब्दियों में धीरे-धीरे विकसित हुई है। मनुष्य की गरिमा और अधिकारों के मामले में सभी सामान हैं। ये नैतिक हैं ऐसे दावे जो सभी मानवीय व्यक्तियों मे अंतर्निहित हैं। इन दावों को स्पष्ट होता है की मानवाधिकार प्रमुख शक्ति के रूप में व्यक्तियों को प्राप्त है। आज हम मानव अधिकारों को संवैधानिक / कानूनी अधिकार के रूप में परिभासित करते है ये न्यूनतम अधिकार हैं, जो प्रत्येक व्यक्ति को राज्य के खिलाफ प्राप्त होने चाहिए राज्य या अन्य सार्वजनिक प्राधिकारियों की मनमानी कार्रवाई के विरूद्ध भी मानवाधिकार प्राप्त है मानव परिवार के एक सदस्य के रूप में एवं उनके अपार महत्व के कारण मानव यह अधिकार धारित करता है मानव अधिकारों को भी कभी-कभी मौलिक कहा जाता है, मूल अधिकार, निहित अधिकार, प्राकृतिक अधिकार और जन्म सिद्ध अधिकार भी कहा जाता है। मानवाधिकार और प्राकृतिक अधिकारों की अवधारणा अज्ञात नहीं थी प्राचीन भारतीय विचारक ने मानव अधिकारों के ईश्वरीय अधिकार के निकट मानते थे। प्रस्तुत शोध पत्र में मानवाधिकारों के संरक्षण में विभिन्न प्रवर्तन तंत्रो एवं सरकार की भूमिका काअध्ययन किया जाएगा तथा निष्कर्ष रूप विभिन्न सुझाव प्रस्तुत किये जायेंगे।

भारत में मानवाधिकार के श्रोत - भारत में भारतीय संविधान को मानवाधिकारों का प्रमुख एवं सर्वोच्च श्रोत मना गया है भारतीय संविधान के तीन एवं चार में मानवाधिकारों की संकल्पना को साकार रूप दिया गया है जिसमे प्रमुखत: समानता का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, शोषण विरूद्ध अधिकार, धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार, अलपसंख्यक समुदाय संरक्षण के साथ उपरोक्त अधिकारों के संरक्षण हेतु न्यायालयों के समक्ष प्रकरण प्रस्तुत करने का अधिकार शामिल है। संविधान संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में उल्लेखित अधिकारों को मूल अधिकरों रूप में स्वीकार करता है इसी तरह संविधान के भाग चार में राज्यों की ऊपर यह जिम्मेदारी सुनिश्चित की गई है की वह नीति निर्धारण के समय सामाजिक अधिकारों का ध्यान रखे।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 14 सभी व्यक्तियों को कानून के समक्ष समानता के सामान्य अधिकार की घोषणा करता है, जबकि अनुच्छेद 15 राज्य को धार्म, जाति, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव करने से रोकता है, और यह प्रतिबंध लगाता है किसी भी नागरिक की कुओं और टैंकों सहित किसी भी सार्वजनिक स्थान पर पहुँच। लोक रोज़गार के मामलों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता अनुच्छेद 16 के तहत गारंटी है। अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता को समाप्त करता है और कानून के तहत इसकी प्रथा को दंडनीय अपराधा बनाता है।

अनुच्छेद 15 और 16 दोनों ही राज्य को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान करने में सक्षम बनाते हैं, जैसे कि संविधान में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए (जिन्हें अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के रूप में जाना जाता है) को उनकी उन्नति के लिए बहुत विशेष उपचार की आवश्यकता होती है। अनुच्छेद 18 सभी गैर-सैन्य या गैर-शैक्षणिक खिताब को समाप्त कर देता है।

अनुच्छेद 19 के तहत सभी नागरिकों को दी गई स्वतंत्रता का अधिकार भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार को शामिल करता है, बिना हथियार के सभा को इकट्ठा करने का अधिकार, संघों या यूनियनों के गठन का अधिकार, पूरे भारत में स्वतंत्र रूप से स्थानांतरित करने का अधिकार। निवास, और किसी भी पेशे, व्यापार या व्यवसाय को चलाने का अधिकार है।

अनुच्छेद 20 के तहत अपराधा की सजा के संबंध में एक व्यक्ति की सुरक्षा में पूर्व पोस्ट फैक्टो आपराधािक कानूनों के खिलाफ संरक्षण, दोहरे दंड संरक्षण के सिद्धांत और आत्म-उत्पीड़न के खिलाफ अधिकार शामिल हैं। अनुच्छेद 21, भारतीय संविधान में सभी मौलिक अधिकारों के प्रावधानों का मूल है, कहता है: कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के सिवाय कोई भी व्यक्ति अपने जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं होगा।

अनुच्छेद 21क को संविधान में 86 वे संवैधानिक संशोधन अधिनियम 2002 द्वारा जोड़ा गया था। अनुच्छेद 21क राज्य की घोषणा करता है कि राज्य के कानून के अनुसार राज्य में छह से चौदह वर्ष की आयु के सभी बच्चों को इस तरह से मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जाएगी। राज्य के अधिाकारियों द्वारा गिरफ्तार और हिरासत में लिए गए व्यक्ति के अधिकार, अनुच्छेद 22 में प्रदान किए गए हैं। इनमें शामिल हैं, गिरफ्तारी के आधार पर सूचित किए जाने का अधिकार, कानूनी सलाह का अधिकार और 24 के भीतर मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किए जाने का अधिकार। गिरफ्तारी के घंटे (जहां एक निवारक निरोधा कानून के तहत गिरफ्तार किया गया है) को छोड़कर।

शोषण के खिलाफ अधिकार में मानव तस्करी और जबरन श्रम

* शोधार्थी, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
** शोध निर्देशक, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

(अनुच्छेद 23), और किसी भी कारखाने या खदान या किसी अन्य खतरनाक रोजगार में काम करने के लिए 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों के रोजगार पर प्रतिबंध शामिल है। सार्वजनिक व्यवस्था और नैतिकता के अधीन, सभी व्यक्ति समान रूप से विवेक की स्वतंत्रता और धर्म के प्रचार, अभ्यास और प्रचार के अधिकार के हकदार हैं (अनुच्छेद 25)। प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय या खंड को धार्मिक संस्थाओं को स्थापित करने और बनाए रखने और उनके धार्मिक मामलों को प्रबंधित करने का अधिकार भी है (अनुच्छेद 26)। किसी को भी कोई धार्मिक कर देने के लिए बाधय नहीं किया जा सकता (अनुच्छेद 27)।

पूर्ण रूप से राज्य द्वारा वित्त पोषित शैक्षणिक संस्थानों को धार्मिक निर्देश (अनुच्छेद 28) लागू करने से रोक दिया जाता है। 10 नागरिकों या अल्पसंख्यकों के किसी भी वर्ग के अधिकारों को अपनी विशिष्ट भाषा, लिपि या संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए, राज्य के शैक्षिक संस्थानों तक पहुँच प्राप्त करने के लिए (अनुच्छेद 29), और अपनी पसंद के शैक्षिक संस्थानों को स्थापित करने और बनाए रखने के लिए (अनुच्छेद 30) की भी गारंटी है। संवैधानिक उपचार का अधिकार अनिवार्य रूप से उपरोक्त अधिकारों के प्रवर्तन के लिए भारत के सर्वोच्च न्यायालय को स्थानांतरित करने का अधिकार है (अनुच्छेद 32)। सर्वोच्च न्यायालय इस संबंध में व्यापक संवैधानिक शक्तियों के साथ निहित है। उनमें मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए निर्देश, आदेश या रिट जारी करने की शक्ति शामिल है (अनुच्छेद 32 (2)) राज्य (यानी प्रांतीय) उच्च न्यायालयों में भी समान शक्तियां हैं (अनुच्छेद 226)।

चूंकि संविधान के भाग III द्वारा प्रदत्त अधिकारों के साथ असंगत या अपमानजनक कानून शून्य हैं (अनुच्छेद 13), न्यायालयों को सभी कानूनों की संवैधानिक वैधाता को स्थगित करने की शक्ति है। इसके अलावा, अनुच्छेद 141 के आधार पर, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा घोषित कानून भारत के सभी न्यायालयों के लिए बाध्यकारी होगा। भारतीय संविधान के तहत गारंटीकृत मौलिक अधिकारों को सुविधा की खातिर दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

अदालत में ए.डी.एम. जबलपुर बनाम। शिवाकांत शुक्ला, शीर्ष अदालत ने देखा था कि भूमि का कानून भारतीय संविधान में विशेष रूप से प्रदान किए गए अन्य प्राकृतिक या सामान्य कानून अधिकारों को मान्यता नहीं देता है। बाद में, मेनका गांधी बनाम भारत संघ, प्रकरण में; 'अनुच्छेद 21 में अभिव्यक्ति व्यक्तिगत स्वतंत्रता' को व्यापक आयाम के रूप में स्वीकार किया गया और इसमें कई तरह के अधिकार शामिल हैं, जो मनुष्य की व्यक्तिगत स्वतंत्रता का गठन करने के लिए जाने जाते हैं और उनमें से कुछ को अलग मौलिक अधिकारों की स्थिति में खड़ा किया गया है और अतिरिक्त सुरक्षा दी गई है अनुच्छेद 19 के तहत। कोई भी व्यक्ति विदेश जाने के अपने अधिकार से तब तक वंचित नहीं रह सकता, जब तक कि राज्य द्वारा उसे वंचित करने की प्रक्रिया को निर्धारित करने वाला कोई कानून न हो, और इस तरह की प्रक्रिया के अनुसार वंचित होने पर सख्ती से प्रभाव डाला जाता है।

वर्तमान मामले के बाद, शीर्ष अदालत मौलिक अधिकारों को सक्रिय और सार्थक बनाने के लिए 'मुक्ति के सिद्धांत' के साथ आई। इसके अलावा, अदालत द्वारा 'लोकस स्टैंडी' के नियम में छूट दी गई थी। मौलिक अधिकार की कुछ प्रमुख न्यायिक व्याख्याएं इस प्रकार हैं:

1. मानव सम्मान के साथ जीने का अधिकार पीयूंसीएल और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य के प्रकरण में निर्धारित किया गया था।
2. स्वच्छ वायु का अधिकार– एम.सी. मेहता (ताज ट्रेपेज़ियम मैटर) बनाम भारत संघ।
3. स्वच्छ जल का अधिकार– एम. सी. मेहता बनाम भारतीय संघ।
4. शीघ्र परीक्षण का अधिकार– हुसैनारा खातून बनाम गृह सचिव, बिहार राज्य।
5. नि: शुल्क कानूनी सहायता का अधिकार– खत्री और अन्य बनाम बिहार राज्य।
6. आजीविका का अधिकार – ओल्गा टेलिस और अन्य बनाम बंबई नगर निगम।
7. भोजन का अधिकार– किशन पटनायक बनाम ओडिशा राज्य।
8. चिकित्सा देखभाल का अधिकार– परमानंद कटारा बनाम भारत संघ।
9. एकान्तता का अधिकार – के. एस. पुट्टस्वामी और अन्य बनाम भारत संघ।

निष्कर्ष – मानवाधिकार वे मूल अधिकार हैं जो मनुष्य के रूप में उसके विकास का अनिवार्य हिस्सा हैं। संविधान मौलिक अधिकारों और डीपीएसपी के रूप में उन मूल अधिकारों के रक्षक के रूप में कार्य करता है। मौलिक अधिकारों पर अधिक जोर दिया गया है और वे कानून की अदालत में सीधो लागू हैं। भारतीय संविधान के भाग III और भाग IV के गहन अध्ययन से, यह आसानी से स्पष्ट है कि UDHR (मानव अधिकारों पर सार्वभौमिक घोषणा) में प्रदान किए गए लगभग सभी अधिकार इन दो भागों में शामिल हैं। न्यायपालिका ने लोकस स्टैंडी यके नियमों को शिथिल करने जैसे महान कदम उठाए हैं और अब प्रभावित लोगों के स्थान पर कोई अन्य व्यक्ति कोर्ट का रुख कर सकता है। शीर्ष अदालत ने एक नागरिक को उपलब्ध मौलिक अधिकारों की व्याख्या की है और अब निजता के अधिकार, स्पष्ट पर्यावरण के अधिकार, मुफ्त कानूनी सहायता के अधिकार, निष्पक्ष निशान के अधिकार आदि को मौलिक अधिकारों में भी जगह मिलती है। इस प्रकार भारतीय संविधान मानवाधिकारों को पूर्ण संरक्षण प्रदान करता है साथ माननीय सर्वोच्च एवं उच्च न्यायालय ने समय समय पर नवीन मानवाधिकार संकल्पनाओं को मूल अधिकार का रूप प्रदान कर नई दिशा प्रदान की है।

सुझाव – उपरोक्त शोध अध्ययन के पश्चात निम्न सुझाव प्रस्तुत किये जा रहे है –

1. राज्य को मूल अधिकारों के संरक्षण पर विशेष धयान देना चाहिए।
2. मानवाधिकारों के विकाश में न्यायालय ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है अत: न्यायलय की मंशा अनुसार राज्यों को कार्य करना चाहिए।
3. प्रशासनिक तंत्र को मानवाधिकार संरक्षण के अनुकूल बनाया जाना चाहिए।
4. संविधान में न्यायलय द्वारा संरक्षित मानवाधिकारों को स्थान दिया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. भारतीय संविधान – डॉ. डी. डी. बसु
2. 1976 AIR 1207/ 1976 SCR 172
3. 1978 AIR 597/ 1978 SCR (2) 621

****

गाँधी चिन्तन में बुनियादी शिक्षा का सिद्धान्त

डॉ. गोपाल सिंह*

प्रस्तावना - यदि रचनात्मक कार्यक्रम के द्वारा जनसाधारण का मत परिवर्तन करके उनको नए अहिंसक जीवन की ओर अग्रसर करना है और अहिंसक समाज का विकास करना है, तो बच्चों और प्रौढ़ो को अंहिसा के सिद्धान्तों के अनुसार शिक्षा देना आवश्यक है। बुनियादी तालीम का यही दृष्टिकोण है। उसका उद्देश्य है बच्चों को आदर्श ग्राम-निवासी बनाना। यह शिक्षा शरीर और दिमाग दोनों का विकास करती है और बच्चों को धरती से सम्बद्ध रखती है। गौरवपूर्ण भविष्य के निर्माण में बच्चे अपने विद्यार्थी जीवन के प्रारम्भ से ही हिस्सा लेने लगते है। [1]

गाँधी जी ने बुनियादी शिक्षा के मुख्य सिद्धान्त बताये है, जो निम्न है:-

1. पूरी शिक्षा स्वावलम्बी होनी चाहिये। यानि, आखिर में पूँजी को छोडकर अपना सारा खर्च उसे खुद देना चाहिये।
2. इसमें आखिरी दरजे तक हाथ का पूरा-पूरा उपयाग किया जाये। यानी विद्यार्थी अपने हाथों से कोई न कोई उद्योग-धंधा आखिरी दरजे तक करें।
3. सारी तालीम विद्यार्थियों की प्रान्तीय भाषा द्वारा दी जानी चाहिए।
4. इसमें साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा के लिए कोई जगह नहीं होगी। लेकिन बुनियादी नैतिक तालिम के लिए काफी गुंजाइश होगी।
5. यह तालीम, फिर उसे बच्चे लें या बड़े, औरतें लें या मर्द, विद्यार्थियों के घरों में पहुंचेगी।
6. चूंकि इस तालीम को पाने वाले लाखों-करोड़ो विद्यार्थी अपने आपको सारे हिन्दुतान के नागरिक समझेगें, इसलिए उन्हें एक आंतर-प्रान्तीय भाषा सीखनी होगी। सारे देश की यह एक भाषा नागरी या उर्दू में लिखी जाने वाली हिन्दुस्तानी ही हो सकती है। इसलिए विद्यार्थियों को दोनों लिपियाँ अच्छी तरह सीखनी होगी। [2]

गाँधी जी ने लिखा है, 'हमारे जैसे गरीब देश में हाथ की तालीम जारी रखने से दो हेतु सिद्ध होगें। उससे हमारे बालकों की शिक्षा का खर्च निकल आयेगा और वे ऐसा धंधा सीख लेंगे, जिसका अगर वे चाहे तो उतर-जीवन में अपनी जीविका के लिए सहारा ले सकते है। इस पद्धति से हमारे बालक आत्मनिर्भर अवश्य हो जायेंगे। राष्ट्र को कोई चीज इतना कमजोर नहीं बनायेगी, जितना यह बात कि हम श्रम का तिरस्कार करना सीखें।' [3]

गाँधी जी ने बच्चों के समुचित विकास पर जोर देने के लिए बुनियादी तालीम का कार्यक्रम बतलाया है। बुनियादी तालीम की गाँधी जी द्वारा प्रस्तावित रूपरेखा के प्रमुख बिन्दुओं अग्रांकित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है:-

1. शिक्षा के प्रारम्भ में बच्चों को अक्षर ज्ञान कराने की अपेक्षा इतिहास, भूगोल, गणित, बागवानी, खेती, तकली और चरखें पर सूत कातना इत्यादि का मौखिक ज्ञान कराना जाना चाहिए। शिक्षा का यह प्रारम्भिक चरण छ: मास का होना चाहिए। इस समय में बालक वर्णमाला को सीखने के लिए मानसिक रूप से तैयार हो जायेगा। गाँधी ने कहा 'छोटे-छोटे बच्चों की बुद्धि पर समय से पहले वर्णमाला का बोझा लादकर और उसी से शिक्षा का श्रीगणेश मानकर हम बालक के स्वाभाविक विकास को रोक देते है।' [4]
2. प्राथमिक शिक्षा की अवधि 7 वर्ष हो, जिसमें अंग्रेजी को छोड़कर मैट्रिक स्तर तक सामान्य ज्ञान का पाठ्यक्रम हो।
3. विद्यालयों में बालकों को साम्प्रदायिक प्रकार की धार्मिक शिक्षा नहीं दी जानी चाहिए, किन्तु उन्हें नैतिक शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। ताकि उनमें ऐसे सहज मानवीय दृष्टिकोण और नैतिक व चारित्रिक गुणों का विकास हो सकें।
4. यह शिक्षा, जहाँ तक हो, आत्मनिर्भर हो।
5. शिक्षा में बालक और बालिकाओं के मध्य कोई भेद नहीं किया जाना चाहिये और माध्यमिक स्तर तक की यह बुनियादी शिक्षा, अनिवार्य कर दी जानी चाहिए।

गाँधी जी का मत है कि बुनियादी शिक्षा की उनकी योजना व्यक्ति और समाज दोनों के विकास का माध्यम बनेगी। व्यक्तिगत दृष्टि से यह विद्यार्थी के बौद्धिक,आत्मिक और भौतिक विकास का माध्यम बनेगी। सामाजिक दृष्टि से टकरावों, तनावों और संघर्षो की संभावनाएं कम होगी, क्योंकि शिक्षा के माध्यम से सभी व्यक्तियों में श्रम की गरिमा की भावना व्याप्त हो जायेगी और वे किसी भी व्यवसाय में लगे हुए व्यक्ति को छोटा या बड़ा समझने की प्रवृत्ति को सहज रूप से त्याग देंगे। [5]

गाँधी जी ने विश्वविद्यालय स्तरीय शिक्षा में भी क्रांतिकारी परिवर्तन का सुझाव प्रस्तुत किया। गाँधी जी के शब्दों में 'मैं उच्च शिक्षा का दुश्मन नहीं हूँ। मेरी योजना में तो अधिक से अधिक और सुन्दर से सुन्दर पुस्तकालय, प्रयोगशालाएं और शोध संस्थान रहेंगे। उनसे जो ज्ञान मिलेगा, वह जनता की सम्पति होगी और जनता को उसका लाभ मिलेगा।' [6]

गाँधी जी निजी क्षेत्र को उच्च शिक्षा का भार सौंपना चाहते है। उन्होंने प्राविधिक, व्यावसायिक एवं वाणिज्य संबंधी महाविद्यालयों को व्यापारी एवं औद्योगिक प्रतिष्ठानों द्वारा चलाये जाने का उत्तरदायित्व सुझाया। कला, कृषि एवं आयुर्विज्ञान महाविद्यालय को आत्मनिर्भर रखने अथवा स्वैच्छिक चंदे से चलाये जाने का सुझाव दिया। वे राजकीय महाविद्यालयों को केवल परीक्षा लेने तक ही सीमित रखना चाहते है और उन्हें परीक्षा शुल्क द्वारा आत्मनिर्भर बनाना चाहते हैं।

बुनियादी एवं उच्च शिक्षा के अलावा गाँधी जी प्रौढ़ शिक्षा पर जोर देते

* सह-आचार्य (राजनीति विज्ञान) शहीद कैप्टन रिपुदमनसिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

थे, क्योंकि यदि शिक्षा को इसी स्तर पर रोक दिया जाय तो विकास की तारतम्यता में रिक्तता आ जाएगी। प्रौढ़ शिक्षा को गाँधी जी अधिकतर मौखिक शब्दों के द्वारा देने के पक्ष में थे, क्योंकि इस शिक्षा से प्रौढ़ को देश की महानता, इसका विस्तार और स्वतंत्रता की रक्षा करने की क्षमता का ज्ञान होगा तथा साथ ही सीधी बातचीत के जरिये सच्ची राजनीतिक तालीम दी जाय। [7]

गाँधी जी का मत है कि जन-साधारण में फैली हुई व्यापक निरक्षरता भारत का कलंक है। वह मिटना ही चाहिये। इसलिए मौखिक शिक्षा के साथ-साथ प्रौढ़ को साक्षर भी बनाना चाहिए, क्योंकि साक्षरता ही विकास की कुंजी है। साक्षरता की मुहीम का आरम्भ औ अंत वर्णमाला के ज्ञान के साथ नहीं होना चाहिए। वह उपयोगी ज्ञान के प्रचार के साथ-साथ चलनी चाहिये। उन्होंने कहा कि लिखने-पढ़ने और अंकगणित का शुष्क ज्ञान देहातियों के जीवन का स्थायी अंग न आज है और न कभी हो सकता है। उन्हें ऐसा ज्ञान देना चाहिये जिसका उन्हें रोज उपयोग करना पड़े। वह उन पर थोपा नहीं जाना चाहिये। उसकी उन्हें भूख होनी चाहियें। आजकल उन्हें जो कुछ मिलता है वह ऐसा है जिसकी न तो उन्हें आवश्यकता है न कदर है। उनके अनुसार ग्रामवासियों को गांव का गणित, गांव का भूगोल, गांव का इतिहास और साहित्य का वह ज्ञान सिखाइयें, जिसे उन्हें रोज काम में लेना पड़े अर्थात् चिट्ठी-पत्री लिखना और पढ़ना बताइयें। वे इस ज्ञान को जुटाकर रखेंगे और आगे की मंजिलों की तरफ बढ़ेंगे। जिन पुस्तकों से उन्हें दैनिक उपयोग की कोई सामग्री नहीं मिलती, वे उनके लिए किसी काम की नहीं। [8]

गाँधी जी सभी प्रकार की शिक्षाओं का माध्यम देशी एवं प्रातीय भाषा को ही मानते थे। उनके अनुसार देश की भाषा की उपेक्षा और अंग्रेजी शिक्षा ने जनता और पढ़े-लिखें लोगों के बीच एकलम्बी खाई खोद दी है,जिससे अहिसंक राज्य के विकास में बाधा पड़ी है। अहिसंक स्वराज्य का अर्थ है कि 'प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्रता के कार्यक्रम में साक्षात् रूप से भाग ले। जनता यह काम तब तक पूरी तरह नहीं कर सकती, जब तक वह हर एक कदम का पूरा अर्थ न समझ लें। यह तब तक असम्भव है जब कि हर एक कदम का अर्थ उसकी भाषा में उसे न समझाया जाय।' [9]

प्रान्तीय भाषाएं ही जनता की राजनैतिक शिक्षा का माध्यम हो सकती है। इन भाषाओं के अतिरिक्त राष्ट्र भाषा हिन्दुस्तानी का भी ज्ञान और प्रचार राष्ट्रीयता को सुदृढ़ बनाने के लिए आवश्यक है। शिक्षा के अलावा छात्रों, मजदूरों, किसानों और महिलाओं को संगठित करने का सुझाव भी गाँधी जी देते रहते थे। आज उच्च शिक्षा की गिरती अवस्था का आलम यह है कि नकल, कॉलेज में छुरेबाजी, गुण्डागर्दी चरम पर हैं। [10]

इस प्रकार उपर्युक्त प्रक्रियाओं को अपनाकर हम एक आदर्श समाज का निर्माण कर सकते है, जो विकसित समाज का द्योतक तो होगा ही, साथ-साथ राष्ट्र निर्माण और विश्व-शांति की स्थापना में भी यह सहायक होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. गाँधी एम.के. 'रचनात्मक-कार्यक्रम' नवजीवन प्रकाशन मंदिर अहमदाबाद 1946 पृष्ठ सं. 28-29
2. हरिजन दिनांक 01.11.1947
3. यंग इण्डिया 01.09.1937
4. हरिजन सेवक दिनांक 09.10.1937
5. हरिजन दिनांक 08.09.1937
6. हरिजन दिनांक 31.07.1937
7. गाँधी एम.के. 'रचनात्मक-कार्यक्रम' नवजीवन प्रकाशन अहमदाबाद 1946 पृष्ठ सं. 30-31
8. हरिजन दिनांक 22.06.1940
9. गाँधी एम.के.'रचनात्मक-कार्यक्रम' नवजीवन प्रकाशन अहमदाबाद 1946 पृष्ठ सं. 37-38
10 The Indian Nation. 10.12.1995

****

वैश्वीकरण या वि-वैश्वीकरण

डॉ. नेहा चौहान *

प्रस्तावना – वैश्वीकरण विभिन्न देशो के लोगो, कंपनियों और सरकारों के बीच बातचीत और एकीकरण की प्रक्रिया हैं वैश्वीकरण में सम्पूर्ण विश्व को एक बाजार का रूप प्रदान किया जाता है। वैश्वीकरण से आशय विश्व अर्थव्यवस्था में आये खुलेपन, बढ़ी हुई आत्मनिर्भरता तथा आर्थिक एकीकरण के फैलाव से है।

इसके अंतर्गत विश्व बाजारों के मध्य पारम्परिक निर्भरता उत्पन्न होती है तथा व्यवसाय देश की सीमाओं को पार करके विश्वव्यापी रूप धारण कर लेता है। वैश्वीकरण के द्वारा ऐसे प्रयास किये जाते है कि विश्व के सभी देश व्यवसाय एवं उद्योग के क्षेत्र में एक दूसरे के साथ सहयोग एवं समन्वय स्थापित करें।

वैश्वीकरण में सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव दोनों है एक व्यक्तिगत स्तर पर, वैश्वीकरण जीवन के मानक और जीवन की गुणवत्ता दोनों को प्रभावित करता है। व्यवसाय स्तर पर वैश्वीकरण संगठन के उत्पाद जीवन चक्र और संगठन की बैलेंस शीट को प्रभावित करता है।

प्रस्तुत शोध पत्र में वैश्वीकरण या विश्वीकरण के कारण, प्रभाव, इससे लाभ और हानि क्या-क्या है वर्तमान में इसका क्या परिदृश्य हैं इस पर अपने विचार प्रस्तुत करूंगी।

वैश्वीकरण के प्रमुख आयाम – आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक।

आर्थिक आयाम – वैश्वीकरण का सर्वप्रमुख आयाम आर्थिक आयाम है। इसमें वाणिज्य, निवेश, उत्पाद और पूँजी प्रवाह आते है। लगभग इस विकासशील देश के पाश निवेश के लिए पूँजी की कमी भी इस निवेश अंतराल को पूरा करने के लिए विदेशी पूँजी की चाह बढ़ती जा रही थी इसका फायदा उठाकर वैश्वीकरण ने सम्पूर्ण विश्व को विश्व व्यापार के दायरे में घसीट लिया।

राजनीतिक आयाम – वैश्वीकरण की होड़ में पड़ने पर सरकारों को यह तय करने का हक नहीं रह गया कि अपने देश की जनता के लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा है। इन परिस्थितियों ने राष्ट्रों के भीतर एक विचित्र अवस्था पैदा की। सरकार वैश्वीकरण के आगे तुच्छ सिद्ध हुई है। उनसे टकराने की शक्ति सरकार के पास नहीं के बराबर थी प्रत्येक सत्ता- रूढ लोगो की कटु आलोचना जनता द्वारा होती है फिर भी सरकार बदलने के बाद भी मौजूदा परिस्थिति में कोई अंतर नहीं होता।

सामाजिक – सांस्कृतिक आयाम – बाजारीकरण और निजीकरण के विरुद्ध बहुत दंगे आजकल होते है लेकिन आजकल विकासशील देशो की सरकारों के सामने विश्व अर्थव्यवस्था की आज्ञाओं का पालन करने के अलावा कोई चारा नहीं है। आज हमारी सामाजिक व्यवस्था इतनी बदल गई है कि भूमंडलीय आंधी सभी को प्रभावित कर रही है।

आज संस्कृतियाँ आधुनिकता के साथ पूर्व की भांति मंथर गति से अन्योन्यक्रिया नहीं कर रही है। संस्कृति का फैलाव अब केवल नृत्य या संगीत के जरिये नहीं बल्कि डब्लू. टी. ओ. गैर आदि एजेंसियों के नेटवर्क के जरिये हो रहा है। शिव विश्वनाथन के अनुसार – 'सबसे बुरी बात तो यह है कि भूमंडलीकृत होते ही असहमति भी खुद में एक सांस्कृतिक जिंस बनने के खतरे से ग्रस्त हो जाती है एक व्यक्ति की सहमति दूसरे की पीएच. डी. बन जाती है' श्यामा शरण दुबे उपभोक्ताकारी संस्कृति को सामंती संस्कृति के विकसित रूप में मानते है कहते है 'धीरे-धीरे सब कुछ बदल रहा है इस नयी जीवन शैली अपना वर्चस्व स्थापित कर रही है उसके साथ आ रहा है एक नया जीवन दर्शन उपभोक्तावाद का दर्शन उत्पादन बढ़ाने पर जोर है, चारों ओर यह उत्पादन आपके लिए है, आपके भोग के लिए है आपके सुख के लिए है 'सुख' की व्यवस्था बदल गई है उपभोग सुख ही सुख है' इस संस्कृति ओर विचार ने मनुष्य को उपभोक्ता रूप में बदल दिया है।

पहले राष्ट्रीय संस्कृतियों के केंद्र में नागरिक रहता था पर आज के वैश्वीकृत इस संस्कृति के केंद्र में भूमंडलीय उपभोक्ता रहता है। वैश्वीकरण के मौजूदा दौर से पहले राष्ट्रों की सीमाबद्ध उपस्थिति के आईने में ही दुनिया को देखा जाता था। पहले उसमें समता और विधिमूलकता दुनिया बनाने की उम्मीदे निहित थी इसके उलट अब वैश्वीकरण के तहत दुनिया पर एक नयी सत्ता थोपी जा रही हैं।

- **वैश्वीकरण से लाभ (महत्व)**

1. नवीन तकनीकों का आगमन – वैश्वीकरण द्वारा विदेशी पूँजी के निवेश में वृद्धि होती है एवं नवीन तकनीकों का आगमन होता है जिसमे श्रम की उत्पादकता एवं उत्पाद की किस्म में सुधर होता है।

2. जीवन स्तर में वृद्धि – वैश्वीकरण से जीवन स्तर में वृद्धि होती है क्योंकि उपभोक्ता को पर्याप्त मात्रा में उत्ताम किस्म की वस्तुयें न्यूनतम मूल्य पर मिल जाती है।

3. विदेशी विनियोजन– वैश्वीकरण के विकसित राष्ट्र अपनी अतिरिक्त पूँजी अर्द्धविकसित एवं विकासशील राष्ट्रों में विनियोग करते है विदेशी पूँजी के आगमन से इन देशो का विनियोग बड़ी मात्रा में हुआ है।

4. विदेशो में रोजगार के अवसर– वैश्वीकरण से एक देश के लोग दूसरे देशो में रोजगार प्राप्त करने में सक्षम होते है।

5. विदेशी व्यापार में वृद्धि – आयात – निर्यात पर लगे अनावश्यक प्रतिबन्ध समाप्त हो जाते है तथा संरक्षण नीति समाप्त हो जाने से विदेशी व्यापार में पर्याप्त वृद्धि होती है।

6. अंतर्राष्ट्रीय सहयोग में वृद्धि – जब वैश्वीकरण अपनाया जाता है तो

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय आदर्श महाविद्यालय, शहपुरा, जिला डिण्डोरी (म.प्र.) भारत

आर्थिक सम्बन्धो में तो सुधार होता ही है साथ ही राजनीतिक सम्बन्ध भी सुधरते है आज वैश्वीकरण के कारण भारत के अमेरिका, जर्मनी एवं अन्य यूरोपीय देशो से सम्बन्ध सुधर रहे है।

वैश्वीकरण से हानियाँ एवं दुष्परिणाम :

1. आर्थिक असंतुलन – वैश्वीकरण के कारण विश्व में आर्थिक असंतुलन पैदा हो रहा है। गरीब राष्ट्र आर्थिक गरीब एवं अमीर राष्ट्र आर्थिक संपन्न हो रहे है इसी प्रकार देश में भी गरीब एवं अमीर व्यक्तियों के बीच विषमता बढ़ रही है।

2. देशी उद्योगों का पालन – वैश्वीकरण के कारण स्थानीय उद्योग धीरे-धीरे बंद होते जा रहे है विदेशी माल की प्रतियोगिता के सामने देशी उद्योग टिक नहीं पाते है। उनका माल बिक नहीं पाता है या घाटे में माल बेचना पड़ता है। यही कारण है कि देश में कई उद्योग बंद हो गए है या बंद होने की कगार पर है।

3. बहुराष्ट्रीय कंपनियों का प्रभुत्व – विश्व के औद्योगिक जगत पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों का प्रभुत्व एवं शिकंजा बढ़ता जा रहा है। ये बड़ी-बड़ी कंपनियां स्थानीय उद्योगों को निगलती है एवं स्थानीय उद्योगों या तो बंद हो रहे हैं या इनके अधीन जा रहे है।

4. बेरोजगारी में वृद्धि – वैश्वीकरण के कारण विदेशी माल मुक्त रूप से भारतीय बाजारों में प्रवेश कर गया है। परिणामस्वरूप स्थानीय उद्योग बंद हो रहे है एवं बेरोजगारी बढ़ रही है देश में औ।ोगिक श्रमिकों की संख्या घट रही है।

5. राष्ट्र प्रेम की भावना को आघात – वैश्वीकरण राष्ट्र प्रेम एवं स्वदेश की भावना को आघात पहुँचा रहा है लोग विदेशी वस्तुओ का उपयोग करना शान समझते है एवं देशी वस्तुओं को घटिया एवं तिरस्कार योग समझते है।

6. अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं का दबाव – अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, गाट आदि अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं के दबाव में सरकारें काम कर रही है हितो की अवहेलना करके सरकार को इनकी शर्ते माननी पड़ती है। भारत जैसे राष्ट्र को अपनी आर्थिक वाणिज्यिक एवं वित्तीय नीतियां इन संस्थाओं के निर्देशों के अनुसार बनानी पड़ रही है।

वैश्वीकरण और भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव – दुनिया के सभी देशो का सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक आदि के आधार पर एक-दूसरे से जुड़ने की प्रक्रिया वैश्वीकरण का मोटे तौर पर अर्थ है डेविड हेल्ड इसकी परिभाषा परस्पर निर्भरता के रूप में करते है, क्योंकि सामाजिक और आर्थिक सम्बन्धो ने दुनिया को बाँध दिया है। आज विश्व में वैश्वीकरण के प्रति कई दृष्टिकोण है जो इसके स्वरुप, परिणाम और प्रभाव का विशद्र विवेचना करते है। इन परिप्रे।यों के माध्यम से हम वैश्वीकरण के अर्थ को सही मायने में जान पाएंगे इनमें से एक दृष्टिकोण के ओहमी जैसे अति भूमंडलवादी विचारकों का है जिनके अनुसार बहुराष्ट्रीय निगम और अंतर्राष्ट्रीय बाजार शक्तिशाली हो चुके है तथा अव्यक्तिक ताकते विश्व को नियंत्रित करते है। परन्तु संशयवादी भूमंडलीयकरण को एक मिथक मानते है इनका कहना है की 19 वीं सदी में व्यापर में अपेक्षाकृत आर्थिक वृद्धि हुयी, श्रमिकों की संख्या तेजी से बड़ी और अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली के रूप में राज्यों के एकीकरण का अपेक्षाकृत उच्च स्तर पर आर्थिक अंतर निर्भरता बड़ी।

सबसे संतुलित दृष्टिकोण परिवर्तनवादियों द्धारा दिया जाता है जिनका विश्वास है कि भूमंडलीकरण दुनिया में परिवर्तन ला रहा है अर्थात सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनों को लाने में यह शक्ति प्रमुख है।

उदारवादी आर्थिक संस्थाये (विश्व बैंक, अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष) किसी देश को ऋण तभी देते है जब वह उनकी शर्तो को मान ले। 1991 में अपनाया गया भारतीय आर्थिक सुधार इसका उदाहरण है। भारतीय अर्थशास्त्रीअमर्त्य सेन वैश्वीकरण को ऐतिहासिक प्रक्रिया मानते हुए कहते है कि यह अनिवार्य रूप से पश्चिमी नहीं है साथ ही ये इसके सुधार की आवश्यकता पर बल देते है।

वैश्वीकरण से चीन और भारत जैसे कई विकासशील देशो ने कायदा उठाया है तो वही अफ्रीकी के अल्पविकसित देशो को खामियाजा भुगतना पड़ा है।

1991 में आर्थिक सुधार को अपनाकर भारतीय अर्थव्यवस्था में कई सुधार किये गए और बाधाओं को हटाकर अर्थव्यवस्था को विश्व के लिए खोला गया यह सुधार अपने में तीन अवयवों को समेटा हुआ है - वैश्वीकरण, उदारीकरण, निजीकरण।

अर्थव्यवस्था के विकास के दर को बढ़ाना, अतीत में प्राप्त लाभों का समायोजन करना, उत्पादन इकाइयों की प्रतिस्पर्धा क्षमता को बढ़ाना इसके मुख्य उद्देश्य रहे हैं। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कई प्रमुख परिवर्तन किये गए, जैसे कि लाइसेंस व्यवस्था की समाप्ति, निजी निवेश के लिए एमएनसी को प्रोत्साहन, विदेशी विनिमय पर लगी रुकावटों को समाप्त करना, कीमत तथा वितरण समबन्धी सारी रुकावटों को हटाना और एम आरटीपी अधिनियम को समाप्त करना आदि इस तरह इस आर्थिक नीति को पुरानी आर्थिक नीति का यू-टर्न की संज्ञा दी जा सकती है।

संक्षेप में उपरोक्त तीनो शब्दों के अर्थ को इस प्रकार व्यक्त कर सकते है आर्थिक उदारीकरण में सभी व्यक्तियों को अपनी आवश्यकतानुसार निजी आर्थिक निर्णय लेने की आजादी होती है। निजीकरण उदारीकरण से ही जुडी हुई प्रक्रिया है। वैश्वीकरण के तहत देशो के व्याप्त आर्थिक दूरियां धीरे-धीरे कम हो जाती है और आवागमन की सभी तरह की रुकावटें हटा ली जाती है।

इन सुधारो के फलस्वरूप जहाँ विकास की दर 1951 से 1991 दर 4% के वार्षिक औसत से बढ़ती रही थी वहीं 1991 के बाद यह 2002 - 03 को छोड़कर 5.5% से अधिक रही। अगर प्रति व्यक्ति आय की बात करे तो यह 1991 से पहले 2% के दर से बढ़ी वही बाद में 3.5% हो गया।

सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जीडीपी) की संरचना में भी बदलाव देखने को मिला 1990-91 में कृषि का योगदान 34.9% था जो अब घटकर 21% के आसपास आ गया हैं। इस दौरान सेवा क्षेत्र में काफी वृद्धि हुई है। सकल उत्पाद में सेवा क्षेत्र के योगदान को देखते हुए भारतीय अर्थव्यवस्था विकसित देशो के अर्थव्यवस्था जैसा लगने लगा है लेकिन एक विपरीत प्रभाव जो भारत पर पड़ा है, वह है की जिस रफ्तार से सेवा क्षेत्र अपना योगदान सकल उत्पाद में दे रहा है उसी रफ्तार से रोजगार का अवसर मुहैया नहीं करा पा रहा है अर्थात आज भी दो-तिहाई लोगो की निर्भरता कृषि पर बनी हुई है।

अगर हम बात औद्योगिक विकास की करे तो 1990-91 में जो 4.3% के आस-पास रहता था अब 5% को चंत कर गया है। बचत की दर बढ़ी है अगर निष्कर्षत: कहा जाये तो हमने वैश्वीकरण के जरिये आर्थिक संवृद्धि तो जरूर किया है लेकिन विकास के उस ल।य को नहीं पा सके जो गुणात्मकता का प्रतीक होती है।

वि-वैश्वीकरण (De-globalization) का और प्रभाव – 'भारतीय बने और भारतीय उत्पाद खरीदे' अंग्रेजो के खिलाफ यह आव्हान महात्मा गाँधी की अगुवाई वाले स्वतंत्रता सेनानियों ने सभी भारतीयों से घरेलु उद्योग को बचाने और जनता के बीच राष्ट्रीयता के प्रचार के लिए किया था। एक

सदी बाद, अमेरिका का राजनीतिक नेतृत्व एक इसी तरह के विश्वास के साथ चीन के साथ व्यापारिक लड़ाई लड़ रहा है। वि-वैश्वीकरण की वजह से वैश्वीकरण की वजह से वैश्विक आर्थिक सुधारो में मंदी की वैश्विक आशंकाओं को हवा मिल रही है।

वि-वैश्वीकरण क्या है ?

- वि-वैश्वीकरण शब्द का उपयोग आर्थिक और व्यापार जगत के आलोचकों द्वारा कई देशो की उन प्रवृत्तियों को उजागर करने के लिए किया जाता है जो फिर से उन आर्थिक और व्यापारिक नीतियों को अपनाना चाहते है जो उनके राष्ट्रीय हितो को सबसे ऊपर रखें।
- ये नीतियाँ अक्सर टैरिफ अथवा यात्रान्तक बाधाओं का रूप ले लेती है जो देशो के बीच श्रम, उत्पाद और सेवाओं के मुक्त आवागमन में बाधा उत्पन्न करती है।
- इन सभी संरक्षणवादी नीतियों का उद्देश्य आयाम को महंगा बनाकर घरेलु विनिर्माण उद्योगों को रक्षा प्रदान करना और उन्हें बढ़ावा देना है।

वि-वैश्वीकरण प्रवृत्तियों के कारण ?

- वैश्वीकरण के लाभों का आसमान वितरण।
- विकसित देशो में आय की बढ़ती असमानताएँ और रोजगारो का नुकसान।
- बहुराष्ट्रीय कंपनियो के प्रसार और श्रम के मुक्त आवागमन के कारण विकसित देशो में ऐसी धारणाओं को बल मिला है कि विकासशील देशो के श्रमिकों के कारण विकसित देशो में रोजगार का नुकसान हुआ है।
- इससे विकसित कठोर देशो में कठोर वीजा व्यवस्था और उद्योगों के स्थानांतरण की मांग को बढ़ावा मिला है।
- 2008 में आई वैश्विक मंदी ने ऐसी स्थिति को और ज्यादा गंभीर क्र दिया फलस्वरूप पुरे विश्व में संरक्षण वादी नीतियों को अपनाने की मांग में वृद्धि हुई।
- विभिन्न देशों में लोक लुभावन राजनीतिक नेतृत्व के उदय से विश्व स्तर पर ऐसी प्रकृतियाँ तेजी से बढ़ रही है।
- 1919 जैसे आतंकवादी संगठनों का उदय, विकसित देशो में आतंकवादी हमलो की बढ़ती घटनाएँ और उभरते नए सुरक्षा खतरों ने प्रवासी संकट को बढ़ावा दिया है।
- इन कारणों के वैश्विक मंदी के साथ संयुक्त हो जाने से आर्थिक संरक्षणवाद की प्रवृत्तियाँ देखने को मिल रही है।

वि-वैश्वीकरण महत्वपूर्ण क्यों है ?

- हम अभी भी एक उच्च वैश्वीकृत दुनिया में रहते है और ऐसे सरंक्षणवादी कदम उन बुनियादी नियमों के विपरीत है, जिनके आधार पर वैश्विक विकास का अनुमान लगाया जाता है तथा विश्व व्यापार संगठन (WHO) जैसे संगठन वैश्विक व्यापार को विनियमित करते है।
- जब बड़े औद्योगीकृत और समृद्ध राष्ट्र वस्तुओं और सेवाओं के प्रवेश को कठिन बनाने के लिए आगे आते है तो उसमे उनके कई व्यापारिक भागीदारों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।
- वैश्विक आर्थिक विकास, मुद्रास्फीति और ब्याजदरों की सभी गणनाओं में फिर से गड़बड़ हो सकती है।
- उदहारण के लिए अमेरिका अर्थव्यवस्था चीन से बहुत सस्ती वस्तुओं का आयात करती है यदि टैरिफ युद्ध में अमेरिका में आयात की लागते बढ़ती है, तो घरेलु मुद्रा स्फीति में बहुत तेजी से वृद्धि हो सकती है और अमेरिका ब्याज दरों में तेजी से बढ़ोतरी हो सकती है।

क्या वि-वैश्वीकरण चिंता का विषय है ?

- वि-वैश्वीकरण से वैश्विक वित्तीय बाजारों की स्थिति में आ रहे सुधार की गति मंद पड़ सकती है जिस सिद्धांत को अभी वस्तुओं पर बनाया गया है उसे लोगो पर भी लगाया जा सकता है, इससे वैश्विक श्रम बजार की गतिशीलता प्रभावित हो सकती है।
- अमेरिका और ब्रिटेन पहले ही बाजार से आने वाले लोगो के लिए बहुत कठोर अप्रवासन मान दंडो का निर्माण कर चुके है।
- यद्यपि टैरिफ युद्ध वि-वैश्वीकरण नीतियों का एक पहलू है लेकिन कुछ देशो को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ सकती है।
- यूरोपीय संघ से ब्रिटेन के अलग होने के कारण बिना किसी व्यापारिक समझौते के दोनों पक्षों की कंपनियों को प्रतिवर्ष लगभग 80 बिलियन तक की अतिरिक्त कीमत चुकानी पड़ सकती है।

निष्कर्ष - अंततः मैंने अपने इस शोध पत्र में समग्र अध्ययन के बाद यही निष्कर्ष निकाला है कि आर्थिक सुधारों के 30 वर्षो के बाद आज भी हम कई चुनौतियों से जूझ रहे है जैसे गरीबी किसानो की मजबूर दशा, बेरोजगारी, मानव-पूँजी निर्माण और ग्रामीण विकास आदि इन सभी के स्तर पर इस ल|य को नहीं पाया जा सका है जिसकी कल्पना हमने की थी।

इस कारण जरुरत है समावेशी विकास की ताकि अर्थव्यवस्था के हर क्षेत्र में बराबर विकास हो सके इसके लिए हमें सरकार पर इस बात का दबाव बनाना चाहिए की वे ऐसी नीतियों को मंजूरी है जिससे हर शख्स का भी विकास हो सके, जिसकी पहुँच सीमित है। ऐसा संभव है अगर हम सभी मिलकर एक सचेत और तार्किक जनमत की तरह विकास मुद्दे को लेकर आंदोलन करे और दबाव समूह के माध्यम से सरकार को बाध्य करें।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. समाचार पत्र - दैनिक भास्कर, नईदुनिया
2. पत्रिकाएँ - इंडिया टुडे, प्रतियोगिता दर्पण
3. इंटरनेट
4. डॉ. बी. एल. फड़िया, डॉ. कुलदीप फड़िया, 'अंतर्राष्ट्रीय राजनीति' साहित्य भवन पब्लिकेशन।
5. रुमकी बासु 'अंतर्राष्ट्रीय राजनीति अवधारणाएँ सिद्धांत तथा मुद्दे'
6. गांधीजी राय 'अंतर्राष्ट्रीय राजनीति'

****

महिला श्रमिकों का आर्थिक अध्ययन (नरसिंहपुर जिले के विशेष संदर्भ में)

प्रीति जैन *

शोध सारांश – अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास में महिला श्रम बल भागीदारी का महत्वपूर्ण स्थान है अर्थात महिला श्रम बल को विकास का इंजन कहा जाता है। श्रम बल में महिलाओं की भागीदारी का निर्णय उनकी समर्थता विभिन्न आर्थिक व सामाजिक कारकों पर निर्भर होती है, जो पारिवारिक स्तर पर जटिल रूप से सामने आते है जिसमें मुख्य रूप से शैक्षणिक योग्यता, प्रजननदर व विवाह की आयु, आर्थिक विकास और शहरीकरण जैसे घटक महत्वपूर्ण है। महिला श्रम बल भागीदारी में वृद्धि के लिये मुख्य रूप से आवश्यक है कि महिलाओं के शैक्षणिक स्तर में वृद्धि, उनके लिये नये रोजगार के अवसर सृजन कराये जाये, जिससे महिलायें नये-नये रोजगार से प्रभावित होकर विकास में अपना योगदान देने आगे आये। आर्थिक विकास में वृद्धि, राष्ट्रीय आय में वृद्धि के साथ-साथ उनके परिवार की आय में भी वृद्धि हो सके, जिससे उनके रहन सहन के स्तर, खान-पान के स्तर, स्वास्थ का स्तर, बच्चों की उचित शिक्षा, देखरेख आदि में वृद्धि हो सकेगी। इस शोध पत्र के माध्यम से आय एवं व्यय का विशलेषण किया गया है।

शब्द कुंजी – महिला श्रम बल भागीदारी, आय का स्तर, व्यय का स्तर, रोजगार, मानवीय विकास।

प्रस्तावना –'महिलायें समाज की वास्तविक वास्तुकार होती है।' वे समाज की सामाजिक - आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और राजनीतिक सभी तरह की भूमिकाओं को बड़ी ही जटिलता से निभाती है। सिर्फ फर्क इतना है कि एक समाज से दूसरे समाज, एक काल से दूसरे काल में महिलाओं की भूमिकाओं में अंतर रहा है। सभी समाजों में महिलाओं की निम्न स्थिति समस्याओं को जन्म देती है जिससे मानवीय विकास प्रभावित होता है क्योकि यदि महिलाओं का विकास नहीं होता है तो समाज का पूर्ण विकास कभी संभव नहीं है। जैसे की कहा जाता है कि एक पुरूष शिक्षा प्राप्त करता है तो एक पुरूष शिक्षित होता है, जबकि एक महिला शिक्षित होती है तो संपूर्ण परिवार, समाज शिक्षित होता है। शिक्षा और रोजगार से महिलाओं के जीवन में काफी परिवर्तन हुये है। वर्तमान में महिलायें आजीविकों को चलाने में भी योगदान दे रही है। उनकी आत्मनिर्भरता और समृद्धि तथा परिवार के सदस्यों की समृद्धि के लिये उन्हें वैतनिक कार्य तक पहुँचना आवश्यक है जिससे उनके परिवार की मौद्रिक आय के स्तर में वृद्धि होगी।

वर्तमान में एक बडी संख्या में महिलाओं ने श्रम बाजार में प्रवेश किया है महिला श्रमबल भागीदारी की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि पारिवारिक आर्थिक क्रियाकलापों में योगदान करने वाले भुगतान रहित कार्यो में महिलाओं की संख्या बहुत अधिक है, अर्थात वे अवैतनिक पारिवारिक श्रमिक के रूप में कार्य करती है। महिलाओं की श्रमबल में भागीदारी तथा उपयुक्त कार्य तक उनकी पहुँच सतत विकास प्रक्रिया के महत्वपूर्ण तत्व है। अर्थात महिलओं को उपयुक्त कार्य के लिये उपयुक्त अवसर प्रदान करना होगें, जो महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनायें।

शोध विषय का चयन – महिलायें हमारी समाज का महत्वपूर्ण भाग है एवं महिला श्रम बल भागीदारी का विकास में बहुत अधिक योगदान है मैने नरसिंहपुर जिले में महिलाओं की श्रम बल भागीदारी में योगदान को ध्यान में रखकर उनके आर्थिक स्तर पर अध्ययन किया।

समंको का संग्रहण – मेरे द्वारा किया गया अध्ययन प्राथमिक समंकों पर आधारित है मैने नरसिंहपुर जिले की पांच तहसीलों से 200 महिला श्रमिकों से प्रश्नावली द्वारा उत्तर प्राप्त किये। प्रश्नावली में पूछे गये प्रश्नों का वर्गीकरण कर विश्लेषण किया व निष्कर्ष निकाले।

शोध का उद्देश्य – इस शोध का मुख्य उद्देश्य है कि महिला श्रमिक परिवारों की कुल वार्षिक आय और कुल वार्षिक व्यय का अध्ययन करना।

शोध प्रवधि – प्रस्तुत शोध पत्र में प्रतिशत विधि, सहसम्बन्ध विधि का प्रयोग किया।

शोध परिकल्पना – महिला श्रमिकों द्वारा किये गये व्यय, आय से प्रभावित होते है।

महिला श्रमिकों की कुल वार्षिक आय का स्तर (तालिका क्र.1)

क्र.	वार्षिक आय (हजारों में)	आवृत्ति	प्रतिशत
1	0-50000	11	5.5
2	50000-100000	62	31
3	100000-150000	72	36
4	150000-200000	26	13
5	200000-250000	11	5.5
6	250000-300000	8	4
7	300000 से अधिक	10	5
	योग	200	100%

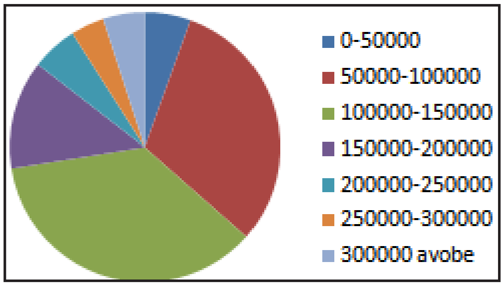

* शोद्यार्थी, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

महिला श्रमिकों की कुल वार्षिक व्यय का स्तर (तालिका क्र. 2)

क्र.	वार्षिक आय (हजारों में)	आवृत्ति	प्रतिशत
1	0-50000	22	11
2	50000-100000	80	40
3	100000-150000	75	37.5
4	150000-200000	12	6
5	200000-250000	4	2
6	250000-300000	2	1
7	300000 से अधिक	5	2.5
	योग	200	100%

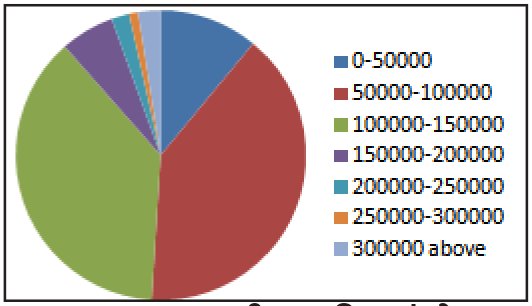

स्रोत :- साक्षात्कार पर आधारित प्राथमिक आंकडे।

महिला श्रमिकों की आय व व्यय के बीच सहसंबंध (तालिका 3)

तलिका क्र 3 में महिलाओं की वार्षिक आय को X तथा महिलाओं के वार्षिक व्यय को Y से दर्शाया गया है।

$$\bar{x} = \frac{\sum x}{N} = \frac{200}{7}$$

$$\bar{x} = 28.57$$

$$\bar{y} = \frac{\sum y}{N} = \frac{200}{7}$$

$$\bar{y} = 28.57$$

$$r = \frac{\sum dxdy}{\sqrt{\sum dx^2 . \sum dy^2}} = \frac{5309.68}{\sqrt{4395.68 X 6987.93}}$$

$$r = \frac{5309.68}{\sqrt{30,716,704.1}} = \frac{5309.68}{5542.27}$$

r = 0.96

निष्कर्ष – महिला श्रमिकों की आय एवं व्यय के बीच उच्च कोटी का धनात्मक सहसंबंध है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्राव, डी.बी. एण्ड राव, डी.पी. 1999 इंटरनेशनल इनसाइक्लोपीडिया ऑफ वूमेन 1. द स्टेटस ऑफ वर्ल्डस वूमेन, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
2. कृष्ठा राज, मैत्रेयी (संपा.) 1986, वूमेन्स स्टडीज इन इंडिया : पर्सपिक्टिव/पॉपुलर प्रकाशन : मुम्बई
3. 'भारत में महिला श्रम बल की भागीदारी'https://www.drishtiias.com/दृष्टि द विजन फाउन्डेशन सिविल लाइन्स, प्रयागराज (इलाहबाद) 24 जून 2019।
4. शर्मा, डॉ. एम.के. (2010) 'भारतीय समाज में नारी' पब्लिसिंग हाउस दिल्ली।

वार्षिक आय x	$dx = X - \bar{X}$	dx^2	वार्षिक व्यय y	$dy = y - \bar{y}$	dy^2	dxdy
11	−17.57	308.70	22	−6.57	43.16	115.43
62	33.43	1117.56	80	51.43	2645.04	1719.30
72	43.43	1886.16	75	46.43	2155.74	2016.45
26	−2.57	6.6049	12	−16.57	274.56	42.58
11	−17.57	308.70	4	−24.57	603.68	431.69
8	−20.57	423.1249	2	−26.57	705.96	546.54
10	−18.57	344.84	5	−13.57	559.79	437.69
200		$\sum dx = 4395.68$	200		$\sum dy = 6987.93$	$\sum dxdy = 5309.68$

****

आधुनिक युग में विज्ञापन की भूमिका का अध्ययन

डॉ. प्रतिमा बनर्जी *

प्रस्तावना – वर्तमान युग विज्ञापन का युग है। विज्ञापन आधुनिक व्यवसाय तथा वाणिज्य की धुरी है। वर्तमान व्यापार की जीवन संजीवनी भी विज्ञापन ही है। विज्ञापन का महत्व सार्वभौमिक है। वाटसन ने ठीक ही कहा है कि हम जहां कहीं है, विज्ञापन हमारे साथ है। ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधानमंत्री विलियम ग्लैडस्टोन ने कहा था कि व्यवसाय के लिए विज्ञापन का वही महत्व है तो उद्योग में भापशक्ति या चालनशक्ति का है। विज्ञापन ने मानव को चारो ओर से घेर लिया है। विज्ञापन की चकाचौध से मानव को पृथक करना असंभव सा प्रतीत हो गया है। मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उपयोग आने वाली वस्तु विज्ञापन का ही परिणाम है। विज्ञापन ने मानव की आवश्यकताओं में वृद्धि की है। विज्ञापन के परिणामस्वरूप ही मानव के उपभोग में वृद्धि हुई है तथा उसका जीवन स्तर उच्च हुआ है।

अर्थ – विज्ञापन अंग्रजी भाषा का शब्द है जिसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द Advertere से हुई है जिसका अर्थ है to turn to अर्थात मोड़ना। व्यापारिक जगत में मोड़ने का अर्थ है ग्राहकों को अपनी विशिष्ट वस्तुओं व सेवाओं की ओर आकर्षित करना।

सी.एल. बॉलिंग के अनुसार, 'विज्ञापन को वस्तु या सेवा की माँग उत्पन्न करने की कला कहा जाता है।'

मैसन व रथ के अनुसार, 'विज्ञापन बिना वैयक्तिक विक्रयकर्ता के विक्रय कला है।'

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि 'विज्ञापन एक प्रकार की अवैयक्तिक विक्रय कला है जो वस्तुओं, सेवाओं व विचारों की सूचना देता है तथा इस सूचना को देने के लिए भुगतान किया जाता है।'

उद्देश्य – एक विपणन प्रबन्धक द्वारा विज्ञापन कार्यक्रम बनाते समय पहले उद्देश्य निर्धारित किये जाते है। यह उद्देश्य अल्पकालिक व दीर्घकालिक दोनो प्रकार के हो सकते हैं। साधारणतया विज्ञापन का दीर्घकालिक उद्देश्य वस्तु को बेचना व अधिक लाभ कमाना है। लेकिन यह उद्देश्य बहुत व्यापक है। मुख्यतया विज्ञापन निम्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु किये जाते हैं।

1. विक्रय कार्य करना।
2. नई वस्तुओं को आरम्भ करना तथा परिवर्तनों के बारे में सूचित करना।
3. मध्यस्थों को वस्तु बेचने के लिए विवश करना।
4. ब्राण्ड के प्रति वरीयता बनाना।
5. उपभोक्ताओं को याद दिलाना।
6. उपभोक्ताओं को क्रय करने के लिये याद दिलाना।
7. प्रतियोगी विज्ञापनों को प्रभावहीन करना।
8. विचारयुक्त क्रय करना तथा क्रेताओं को नये प्रयोगों की जानकारी देना।
9. मध्यस्थों व विक्रयकर्ताओं के नैतिक स्तर को ऊंचा उठाना।

भारत में विज्ञापन – भारत में विज्ञापन व्यय बहुत ही कम है एक अनुमान के अनुसार भारत अपनी G.N.P. का 0.4 प्रतिशत ही विज्ञापन पर व्यय करता है। जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका लगभग 3 प्रतिशत, ब्रिटेन 2 प्रतिशत, जापान 1.6 प्रतिशत, अर्जेटींना 1.1 प्रतिशत व पाकिस्तान 0.5 प्रतिशत। दूसरे शब्दों में भारत में विज्ञापन 37 सेंट प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष है जबकि अमेरिका में 224 डॉलर प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष स्वीडन में 202 डॉलर प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष, ब्रिटेन में 92 डॉलर प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष, कनाडा में 122 डॉलर प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष, जापान में 76 डॉलर प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष, फ्रांस में 81 डॉलर प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष।

विज्ञापन की उपयोगिता –

I. **उत्पादकों की दृष्टि से उपयोगिता :**

1. विज्ञापन के द्वारा ही उत्पादक प्रतिस्पर्धा में सफलता प्राप्त कर सकता है।
2. विज्ञापन से उत्पादक को मध्यस्थ मिल जाते हैं जो वस्तु को अपनी दुकान पर बेचने हेतु रखने को तैयार हो जाते हैं।
3. विज्ञापन से वस्तु की माँग बढ़ जाती है जिससे उत्पादक को उसकी पूर्ति हेतु बड़े पैमाने पर निर्माण के सभी लाभ मिल जाते हैं। जैसे – उत्पादन लागत में कमी, मशीनो का प्रयोग आदि।
4. विज्ञापन उत्पादन की ख्याति में वृद्धि करता है। जैसे – फिलिप्स कंपनी की ख्याति उसके बल्बो से बनी है और एल.जी. कंपनी की ख्याति उसके टी.वी., वाशिंगमशीन व ए.सी. ने बनाई है।
5. वस्तुओं की स्थायी माँग बनाने में विज्ञापन सहायता करता है। चाय की माँग गर्मियों में भी बनी रहती है। विज्ञापन किया जाता है कि नीबू की चाय गर्मियों में ठण्डक पहुँचाती है।
6. लगातार विज्ञापन होने से वस्तु की माँग बनी रहती है। इससे मूल्यों में स्थिरिता रहती है तथा ग्राहकों का संस्था के प्रति विष्वास बढ़ता है।
7. विज्ञापन के माध्यम से निर्माता द्वारा वस्तुओं में किये गये परिवर्तनों की सूचना बहुत ही कम व्यय में तथा शीघ्रतापूर्वक दी जा सकती है।
8. विज्ञापन निर्माताओं को नयी–नयी वस्तुओं को बनाने के लिये प्रेरित करता है।
9. विज्ञापन द्वारा ही निर्माताओं के लाभों में वृद्धि संभव है।
10. चूकि विज्ञापन से संस्था की ख्याति में वृद्धि होती है अत: संस्था को कुशल कर्मचारियों की प्राप्ति में आसानी हो जाती है क्योंकि ऐसी संस्था में कार्य करने से कर्मचारी अपने को गौरवान्वित मानते हैं।

II. **उपभोक्ताओं की दृष्टि से उपयोगिता :**

* प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

1. विज्ञापन उपभोक्ताओं के ज्ञान में वृद्धि करके उन्हें लाभ पहुंचाता है। विज्ञापन उपभोक्ताओं को वस्तुओं के विभिन्न प्रयोगों की जानकारी देता है।
2. विज्ञापन उपभोक्ताओं को वस्तुओं का चुनाव करने में सुविधा प्रदान करता है और समय की बचत करता है।
3. विज्ञापन उपभोक्ताओं के रहन-सहन के स्तर में वृद्धि करता है। यह उपभोक्ताओं को अधिक वस्तुओं को प्रयोग करने के लिये प्रेरित करता है।
4. विज्ञापित वस्तुये बाजार में आसानी से मिल जाती हैं, उन्हें अधिक ढूढना नहीं पड़ता।
5. साधारण विज्ञापन में वस्तुओं के मूल्य दिये रहते हैं जिससे उपभोक्ता को उनके मूल्यों की जानकारी हो जाती है।
6. जिन वस्तुओं का विज्ञापन किया जाता है उसकी किस्म में निर्माता निरंतर सुधार करता रहता है। इससे उपभोक्ता को उत्तम किस्स की वस्तुये उपलब्ध हो जाती हैं।
7. विज्ञापनों के आधार पर उपभोक्ता घर बैठे ही वस्तुओं का तुलनात्मक अध्ययन कर सकता है और उत्तम वस्तु को क्रय करने का निर्णय ले सकता है।
8. जिन वस्तुओं का विज्ञापन किया जाता है उनकी मॉग बढ़ने के कारण वृहद् पैमाने पर उत्पादन किया जाता है। जिससे प्रति इकाई लागत कम हो जाती है। परिणामस्वरूप उपभोक्ता को कम मूल्य पर वस्तुयें उपलब्ध हो जाती हैं।
9. विज्ञापन बार-बार किया जाता है जिससे यह उपभोक्ता को आवश्यक बातों का बार-बार स्मरण कराता रहता है। जैसे - टूथपेस्ट का विज्ञापन ढांतों की सफाई के लिये याद दिलाता रहता है।

III. **मध्यस्थों की दृष्टि से उपयोगिता :**

1. विज्ञापन होने से वस्तुओं की विक्री में वृद्धि होती है जिससे मध्यस्थों के लाभ में वृद्धि होती है।
2. विज्ञापन होने से वस्तु शीघ्रता से बिक जाती है इससे स्टॉक में वस्तु बहुत दिनों तक नहीं रहती है। इस प्रकार मध्यस्थों की जोखिम में कमी हो जाती है।
3. जिन वस्तुओं का विज्ञापन किया जाता है उनके मूल्यों में उतार-चढाव न होकर स्थिरता होती है। इससे मध्यस्थों को हानि की संभावनाये नहीं रहती हैं।
4. विज्ञापन ग्राहकों को वस्तु संबंधी अनेक सूचनाये देते रहते हैं जैसे - वस्तु, ग्राहक के लिये किस प्रकार उपयोगी है।
5. विज्ञापन मध्यस्थ विक्रेताओं को प्रोत्साहन व समर्थन देता है और उनका कार्य आसान बना देता है।
6. विज्ञापन से माँग में स्थायित्व आ जाता है क्योंकि वस्तु के केता पूरे वर्षभर मिलते रहते हैं जिससे मध्यस्थों की जीविका का साधन स्थायी हो जाता है।
7. जिन वस्तुओं का विज्ञापन निर्माता द्वारा किया जाता है उनका मध्यस्थों के लिये पुन: विज्ञापन करना आवश्यक नहीं है। उन वस्तुओं के लिये क्रेता स्वत: ही आते हैं। विक्रय करना सुविधाजनक हो जाता है।
8. विज्ञापन से अनुचित प्रतिस्पर्धा का अन्त हो जाता है।

IV. **समाज की दृष्टि से उपयोगिता :**

1. विज्ञापन से वस्तुओं का उपयोग बढ़ता है जिससे समाज के रहन-सहन के स्तर में वृद्धि होती है।
2. विज्ञापन स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को जन्म देता है जो व्यवसाय के विकास के लिए लाभकारी है।
3. विज्ञापन समाचार पत्रों की आय का मुख्य साधन है। समाचार पत्रों को अपनी कुल आय का 75 प्रतिशत विज्ञापनों से तथा शेष 25 प्रतिशत समाचार पत्र पढ़ने वालों से मिलता है। विज्ञापन के कारण ही समाचार पत्र कम मूल्य पर मिल जाते हैं।
4. विज्ञापन में अनेक लेखकों कलाकारों तथा विशेषज्ञों आदि की आवश्यकता पड़ती है अत: यह अनेक व्यक्तियों की जीविका का साधन है।
5. विज्ञापन देश की सभ्यता का विकास करता है।
6. विज्ञापन के कारण ही उद्योगों का विकास होता है अत: विज्ञापन देश के आर्थिक विकास में योगदान देते हैं।
7. विज्ञापन मध्यस्थों की संख्या मे कमी करता है जिससे विज्ञापन व्ययों में कमी होती है। उपभोक्ता को कम मूल्य पर वस्तु मिल जाती है।

विज्ञापन के दोष :

1. विज्ञापनपर पर्याप्त मात्रा में व्यय करना पड़ता है जो वस्तु के मूल्य में वृद्धि करते हैं अत: उपभोक्ता को वस्तु का अधिक मूल्य देना पड़ता है।
2. विज्ञापन फैशन में परिवर्तन करता है जिसका प्रभाव उपभोक्ता व मध्यस्थ दोनों पर पड़ता है। उपभोक्ता को फैशन वाली वस्तु खरीदने मे ज्यादा व्यय करना पड़ता है तथा मध्यस्थों को फैशन में परिवर्तन से हानि होती है, क्योंकि उस वस्तु को उन्हें कम मूल्य पर बेंचने के लिये विवश होना पड़ता है।
3. उपभोक्ता का मन विज्ञापनों से प्रभावित होकर चंचल हो जाता है और कई बार वह उन वस्तुओं को क्रय कर लेता है जो उसके लिये अनावश्यक है।
4. अश्लील विज्ञापनों से अनैतिक प्रभाव पड़ता है।
5. विज्ञापन में अधिकांशत: मिथ्या वर्णन होता है, विज्ञापन कपट पर आधारित होता है जिससे उपभोक्ता ठग जाता है।
6. जिन वस्तुओं का विज्ञापन किया जाता है उन वस्तुओं के निर्माता धीरे-धीरे एकाधिकारी मूल्य वसूल करने का प्रयास करते हैं।
7. विज्ञापन शहर की प्राकृतिक शोभा को नष्ट कर देते हैं। विज्ञापन द्वारा गलियों व बाजारों में दीवारों को गन्दा किया जाता है।
8. जब उपभोक्ता एक ही वस्तु के कई ब्राण्डों के निर्माताओं का विज्ञापन देखता है तो उसे निर्णय लेने में कठिनाई होती है कि वह किस ब्राण्ड को खरीदे।
9. विज्ञापनो से प्रेरित होकर उपभोक्ता अपने धन का अपव्यय करता है।

कुछ विद्धानों का मत है- 'विज्ञापन पर किया गया व्यय, अपव्यय होता है।' यह आलोचना की जाती है कि झूठे विज्ञापन किये जाते हैं जिससे जनसाधारण को हानि होती है। इसके उत्तर में कहा जाता है कि 'कॉठ की हाण्डी एक बार चढ़ती है।' यदि कोई विक्रेता झूठा विज्ञापन भी करता है तो ग्राहकों को एक बार ही फंसाया जा सकता है उससे अधिक नहीं। फिर भी यह कमी विज्ञापन की स्वयं की तो नहीं है, यह व्यापारियों की है। अत: विज्ञापन कला को बदनाम नहीं किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष - आधुनिक प्रगतिशील युग में विज्ञापन अनिवार्यता है बिना

विज्ञापन का सहारा लिये कोई भी व्यवसायी सफलता की अपनी मंजिल पर नहीं पहुँच सकता है। जिस प्रकार चाँद पर भी काला धब्बा होता है उसी प्रकार विज्ञापन के भी कुछ दोष हैं परन्तु इससे विज्ञापन का महत्व कम नहीं हो जाता है। विज्ञापन लाभदायक है। सर् विन्सटन चर्चिल ने उचित भी कहा था – 'विज्ञापन के बिना टक्साल के अतिरिक्त अन्य कोई धन उत्पन्न नहीं कर सकता।' वस्तु की माँग वृद्धि करने में विज्ञापन की महत्वपूर्ण भूमिका है इसलिये बर्टन ने लिखा है – 'विज्ञापन लगातार माँग का सृजन करने में सहायता करता है।' विज्ञापन पर किया गया व्यय अपव्यय नहीं है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. Sales and Marketing Management, L.K. Johnson
2. विपणन के सिद्धान्त, एस.सी. जैन।
3. योजना पत्रिकाए 2018
4. विपणन प्रबंध – फिलिप कोटलर
5. प्रतियोगिता दर्पण 2020

****

Child Labour in India

Mom Banerjee* Dr. B.K. Yadav**

Introduction - Children are always considered close to God. They are considered as bringer of happiness, joy and hope, no matter where they go. The future of the nation depends on the children as they are undoubtedly the stepping stone in shaping the future of any nation. If a nation treats its children properly and provides them with the basic facilities then it would get reflected in the future performance of the nation. The moral duty of the nation is to ensure that the childhood of every child is protected.

Definition - Child labour is a global phenomenon; it is not restricted to only one country. "Child labour" is defined as the employment of children in any manual work. According to the Child Labour (Prohibition and Regulation) Act, 1986 a "child" is a person who has not yet attained the age of 14 years. In this tender age where a child is expected to grow, enjoy his or her childhood to the fullest, seek education, gain a strong value system, he/she is forced to work and earn a living for himself/herself and his/her family. It not only affects his/her physical and mental development but it also puts a very heavy burden of responsibility on the child to support his/her family. It is frequently observed that the children are forced to become labour due to some hardships like lack of strong financial support, lack of proper food, clothing, shelter, livelihood etc.

A different definition of child labour is given by the United Nations Children's Fund [UNICEF]. According to it, a child is considered as labour when:

1. His/her age is between 5 to 11 years, and
2. At least 1 hour of economic activity is performed by him/her or he/she is doing at least 28 hours of domestic work in a week.

If the children are between 12 to 14 years of age then either they should be doing at least 14 hours of economic activity or at least 42 hours of domestic work per week to be considered as child labour[1].

According to **India's Census 2001**, when a child below the age of 17 years participates in economic activity with or without compensation, either physically, or mentally, or both ways. Part-time help or unpaid work on farms, a family business or any other economic activity like cultivation and milk production for sale or domestic consumption will be included in child labour. Child labour is classified into two groups in India:

1. Main workers: Main workers are those workers who work for at least some months or more per year, and
2. Marginal child workers: Marginal child workers are those workers who work for less than 6 months in a year and work at any time during the year.

Issue of Child labour - Child labour is a major issue not only in India but in every developing country because it destroys a child's physically as well as mentally. Because of poverty, child labour has become more prevalent, not only in India but globally. Children are the hope and future of a nation that is why it constitutes a social problem. Many laws have been enacted in order to prohibit child labour, however they haven't been effective in curbing the problem. The statistic report of 2017 explains that India is one of the leading countries in Asia as it has 33 million children employed in child labour. According to the 2011 Census, total child population was 259.6 million out of which 10.1 million are either working as main worker or as marginal workers.

The side-effects of working at a young age are:

- Risks of contracting occupational diseases like skin diseases, diseases of the lungs, weak eyesight, TB etc.;
- Vulnerability to sexual exploitation at the workplace;
- Deprived of education.
- They grow up unable to avail development opportunities and end up as unskilled workers for the rest of their lives.

Causes of Child labour - Poverty, illiteracy of parents, social and economic circumstances of the family are the main causes of child labour. Lack of awareness related to the harmful effects of child labour and lack of access to basic and quality education, cultural values of the family and the surroundings of the society in which one is living, also increase the rate of child labour. High rates of unemployment and under-employment also play a vital role in child labour.

Children who discontinue school due to family indebtedness or are expelled from the school are more prone to child labour. Girls from socially disadvantaged groups are at a higher risk of being forced into child labour.

*Research Scholar, Om Sterling Global University, Hisar (Haryana) INDIA
** Dean, Om Sterling Global University, Hisar (Haryana) INDIA

In India, the major causes of child labour are:

1. **Poverty:** Children are considered helping hands of their family. In developing countries, it is almost impossible to control child labour as children not only have to support themselves but their families also and provide them with a living. Due to poverty, the rate of unemployment and underemployment are also very high and so the parents have to send their children to work on low wages.
2. **Previous debts:** Due to their poor economic condition people take loans. But they don't have sufficient money to pay back the loans so they not only work day and night to pay off the loans but they also drag their children to work so that the loan could be paid off before time and easily.
3. **Professional needs:** Some industries require delicate and soft hands rather than rough hands that are required in bangle industries. So they prefer children and not adults for such work.
4. **Bonded labour:** Children often work for long hours in the sun and they are deprived of water, food. These children are seldom paid. Bonded labour further adds to the large scale increase in child labour.
5. **Domestic help:** Small children often work for educated families and irrespective of several laws that violate the employment of children, they often welcome small children so that these children can take care of their homes as well as their children.
6. **Child sex workers:** Often, girls who attained the age of puberty are forced into prostitution in lieu of a promise that they would be given opportunities to do glamorous jobs.
7. **Forced begging:** Families who can't support themselves force their children to beg on the roads in subhuman conditions. They get their children maimed in order to get more money from the people.

Types of child labour in India - There is an increasing involvement of children in home-based work and in the informal sector. Children are involved in the domestic, manual, agricultural sector, in hazardous factories, rag-picking, beedi-rolling, matchbox, brick kilns etc.

According to ILO, the worst types of child labour are:

1. **Slavery:** Slavery is when one person works for another person. Slaves don't have the power to demand anything. They have to work according to the commands of their master.
2. **Child Trafficking:** Buying and selling of children either for labour or for sexual exploitation.
3. **Debt Bondage:** When people cannot pay off their loans with their money and belongings they are often forced to work as a labour.
4. **Serfdom:** When a person works on land that belongs to another person, it is known as serfdom. The labour will either be provided with some pay or no pay will be given.
5. **Forced Labour:** When a child works against his/her will then it is termed as forced labour.
6. **Beggary:** When poor parents don't have any other way to earn a living they often beg on roads. They also cut their child's body part in order to gain sympathy and to get more money. Small children are seen on red lights asking for money for their treatments.

Consequences of child labour - Child labour is not something that needs recognition, in fact, if there is an increase in child labour then it shows that the country has failed in providing basic necessities to its citizens, especially children. In such cases, the effects of childhood are only negative. It not only deprives a child of a proper childhood but also make them the victim of physical or mental torture. The child becomes emotionally and mentally mature at an early age which is not a good sign. It does not create but also extends poverty as the child is not able to get basic education and he earns very less amount of money due to this, for his/her family. The child is also paid less. Other effects of child labour are:

1. Children might suffer from malnutrition, drug dependency and depression.
2. It might endanger children dignity and morals.
3. Children may be employed forcefully and they may be sexually exploited.
4. They might become victims of sexual and physical violence.

The Indian Government enacted a law against child labour in 1993 prohibiting dangerous work or activities that could harm the mental, spiritual, moral or social development of girls and boys under the age of 18. However, child labour continues for a number of reasons, for example people exploit loopholes in the law which allows the employment of children if the work is part of a family business. Thus, having children sell cigarettes on the street could be considered legal if it is part of a family business. In addition, numerous business leaders, such as mine owners, hold political office and have considerable influence. Companies may not be interested in banishing the cheap labour from within their business operations.

In 2006 and again in 2016, the laws against child labour were tightened to ensure that children under the age of 14 were prohibited from working as domestic help or service staff in restaurants and hotels. However, child labour in family businesses remains acceptable. In addition, the law does not apply to 15 to 17 year-olds who are only prohibited from doing "dangerous" work. These laws also do not exclude activities such as field work where children are exposed to pesticides or physically exhausting work like carpet weaving.

Child labour laws in India - As compared to other countries, child labour in India is more prevalent. Out of 179 million children, 90 million who are in the age group of 6 to 14 years are employed and they don't go to school. It contributes to 50% of children in our country who are involved in child labour. Since 1933, various laws have been made in India to control child labour. These laws include:

1. **Minimum Wages Act 1948:**The State Government fixes minimum wages that are to be provided to the workers/ labourers including the child labourers. The government fixed wages according to the type of work and according to

the class of workers.

2. The Plantation Labour Act, 1951: This Act prohibits the employment of children below the age of 12 years, but a child above the age of 12 years can be employed only when the appointed doctor issues a fitness certificate to that child.

3. The Mines Act, 1952: This Act provides that no child should be present where the work of mining is going on and no child should be employed for such work.

4. The Merchant Shipping Act, 1958: Except for a training ship, this Act does not allow the employment of children below the age of 14 years in a ship. Also, a person under the age of 18 years cannot be appointed as trimmers under this Act. They can only be appointed under some specific conditions mentioned in this Act.

5. The Apprentices Act, 1961: Unless a child attains the age of 14 years and satisfy the standard of education and physical fitness test, he cannot undergo apprenticeship training.

6. The Indian Factories Act, 1948: No child below the age of 14 years shall be employed in a factory. Also, there are rules that a factory has to follow if they employ pre-adults that are between 15-18 years of age.

7. The Child Labour (Prohibition and Regulation) Act, 1986: No child who is less than 14 years of age shall be employed in any hazardous occupations that are provided in a list by law. This list is explained further in the article. This list was amended not only in 2006 but also in 2008.

8. The Juvenile Justice (Care and Protection) of Children Act, 2000: If any person employs a child in any of the hazardous work or use the child as a bonded labour then that person will be punishable under this Act.

9. The Right of Children to Free and Compulsory Education Act of 2009: Free and compulsory education must be provided to each and every children below 14 years of age. In fact, to follow this Act efficiently, 25% of seats are also reserved in every private school for children who belongs to the disadvantaged group and for children who are physically challenged.

Children below the age of 14 years are not allowed to work in a factory and it is expressly provided in Article 34 of the Indian Constitution and Section 67 of the Factories Act, 1948.

Free and compulsory education for all children up to the age of 14 years is provided by the Directive Principle of State Policy under Article 45 of the Indian Constitution.

Worldwide, millions of children are forced into unpaid or paid work that deprives them of an education, a happy childhood and a prosperous future. Learn about the child labour situation in India and what more needs to be done.

Associated Issues & Remides of the Child Labour

- **Cause & Effect Relationship:** Child labour and exploitation are the result of many factors, including poverty, social norms condoning them, lack of decent work opportunities for adults and adolescents, migration and emergencies.

These factors are not only the cause but also a consequence of social inequities reinforced by discrimination.

- **Threat to National Eonomy:** The continuing persistence of child labour and exploitation poses a threat to national economies and has severe negative short and long-term consequences for children such as denial of education and undermining physical and mental health.
- **Child Labour in Informal Sector**: Though child labour is banned the law, across India child labourers can be found in a variety of informal industries like in brick kilns, carpet weaving, garment making, agriculture, fisheries, etc.
- **Disguised Child Labour:** Despite rates of child labour declining over the last few years, children are still being used in disguised form of child labour like domestic help.

Way Forward

- **Role of Panchayat:** As nearly 80% of child labour in India emanates from rural areas, the Panchayat can play a dominant role in mitigating child labour.
- Generate awareness about the ill-effects of child labour,
- Encourage parents to send their children to school,
- Create an environment where children stop working and get enrolled in schools instead,
- Ensure that children have sufficient facilities available in schools,
- Inform industry owners about the laws prohibiting child labour and the penalties for violating these laws,
- Activate Balwadis and Aanganwadis in the village so that working mothers do not leave the responsibility of younger children on their older siblings.
- Motivate Village Education Committees (VECs) to improve the conditions of schools.
- **Integrated Approach:** Child labour and other forms of exploitation are preventable through integrated approaches that strengthen child protection systems as well as simultaneously addressing poverty and inequity, improve access to and quality of education and mobilize public support for respecting children's rights.

Conclusion - Children belong in schools not workplaces. Child labour deprives children of their right to go to school and reinforces intergenerational cycles of poverty. Child labour acts as a major barrier to education, affecting both attendance and performance in school. Instead of having various protective of Indian constitution, there is no satisfactory result is shown till date.

Still the children, the future of India like go to factory ,dahba and garage to inculcate food in the place of going school.

References :-

1. Child Labour (Prohibition and Regulation) Act, 1986
2. The United Nation's Children's Fund [UNICEF]
3. India's Census 2001

****

Environment Degradation & Protection

Krishanu Ghosh* Dr. B.K. Yadav**

Introduction - Environmental degradation has become a "common concern" for humankind over the past few decades. The distinctive nature of the present environmental problems is that they are caused more by anthropogenic than natural phenomena. Mindless consumerism and economic growth have started to demonstrate pernicious effects on Mother Nature. In spite of this, the pace and desire for economic development have never ceased. It is economics that has dictated environmental policy. Emphasis has been placed on the role of science and technology as a catalyst for integrating ecology with economics. In this process, sustainable development became a buzzword.

"*Environmental degradation is the deterioration of the environment through depletion of resources such as air, water and soil; the destruction of ecosystems; habitat destruction; the extinction of wildlife; and pollution. It is defined as any change or disturbance to the environment perceived to be deleterious or undesirable.*"

It occurs when the earth's natural resources are depleted and the environment is compromised in the form of extinction of species, pollution in the air, water and soil, and rapid growth in population.

Environmental degradation is one of the largest threats that are being looked at in the world today. The United Nations International Strategy for Disaster Reduction characterizes environment degradation as the lessening of the limit of the earth to meet social and environmental destinations and needs.

Environmental degradation can happen in a number of ways. At the point when environments are wrecked or common assets are exhausted, the environment is considered to be corrupted and harmed. There are a number of different techniques that are being used to prevent this, including environmental resource protection and general protection efforts.

Environment issues can be seen by long term ecological effects, some of which can demolish whole environments. An environment is a unique unit and incorporates all the living and non-living components that live inside it.

Plants and creatures are evident parts of the environment, but it also includes the things on which they depend on, for example, streams, lakes, and soils.

Environmental surroundings get to be divided when technological advancement splits up areas of land. Some examples of this can include streets which may slice through woods or even trails which wind through prairies.

While it may not sound all terrible on the surface, there are bad results. The biggest of these results are felt by some particular animal and plant groups, the vast majority of which are specific for their bio-region or need a large area in order to make sure that their genetic lines are kept intact.

Types of Degradation :

Land and soil degradation: Degradation of soil quality from poor farming practice excessive use of fertilizers and pesticides, leakage from landfills etc.

Water degradation: Pollution of water from trash dumped in Oceans, illegal dumping disposal of large amounts of industrial waste into nearby rivers or lakes etc.

Atmospheric degradation: This includes air degradation particle pollution and the depletion of the ozone layer.

Several other kinds of pollution: Apart from land, water and atmospheric degradation, many other kinds of pollution such as noise pollution, light pollution that are part of environmental degradation.

Causes: Some environmental life species require substantial areas to help provide food, living space, and other different assets. These creatures are called area specific.

At the point when the biome is divided, the vast patches of living space don't exist anymore. It becomes more troublesome for the wildlife to get the assets they need in order to survive. The environment goes on, even though the animals and plant life are not there to help sustain it properly.

1. Land Damage; A more basic cause of environmental degradation is land damage. Numerous weedy plant species for example, garlic & mustard, are both foreign and obtrusive.

A rupture in the environmental surroundings provides for them a chance to start growing and spreading. These plants can assume control over nature, eliminating the local

*Research Scholar, Om Sterling Global University, Hisar (Haryana) INDIA
** Dean, Om Sterling Global University, Hisar (Haryana) INDIA

greenery.

The result is a territory with a solitary predominant plant which doesn't give satisfactory food assets to all the environmental life. Thus the whole environment can be destroyed because of these invasive species.

2. Pollution; Pollution, in whatever form, whether it is air, water, land or noise is harmful to the environment. Air pollution pollutes the air that we breathe, which causes health issues.

land water pollution degrades the quality of water that we use for drinking purposes. Land pollution results in the degradation of the earth's surface as a result of human activities.

Noise pollution can cause irreparable damage to our ears when exposed to continuous large sounds like honking of vehicles on a busy road or machines producing large noise in a factory or a mill.

3. Overpopulation: Rapid population growth puts strain on natural resources which results in the degradation of our environment. Mortality rate has gone down due to better medical facilities, which has resulted in an increased lifespan.

More population simply means more demand for food, clothes and shelter. You need more space to grow food and provide homes to millions of people. This results in deforestation, which is another factor in environmental degradation.

4. Landfills: Landfills pollute the environment and destroy the beauty of the city. Landfills come within the city due to the large amount of waste that gets generated by households, industries, factories and hospitals.

Landfills pose a great risk to the health of the environment and the people who live there. Landfills produce a foul smell when burned and cause substantial environmental degradation.

5. Deforestation : Deforestation is the cutting down of trees to make way for more homes and industries. Rapid growth in population and urban sprawl are two of the major causes of deforestation.

Constitutional Protection: The history of legislative started with Indian Penal Code, 1860. Section 268 defined what is public nuisance. Abatement of public nuisance is also a subject of Section 133 to 144 of I.P.C. These are only prohibitive provisions. Sections 269 to 278 of the Indian Penal Code are penal provisions which means that a person guilty of violating any of the provisions is liable to prosecution and punishment.

Legislative fight against pollution continued in independent India. Now there is a host of legislation in India aimed at protecting the environment from pollution and maintaining the ecological balance. The Environment (Protection) Act, 1986 is one major Act for environmental protection. The Government of India has launched various programmes and made use of audiovisual media to educate the people and arouse their consciousness for the protection of environment.

It claimed:

(i) It is fundamental human right to live in an unpolluted environment.

(ii) It is fundamental duty of every individual to maintain purity of environment.

Soon after the Stockholm Conference, many Acts were introduced i.e. Wildlife Act, 1972; Water Act, 1974; Air Act, 1981 etc. Within five years of Stockholm Declaration, the Constitution of India was amended to include Protection and Improvement of Environment as constitutional mandate. The protection and improvement of environment is now a fundamental duty under Constitution Act of 1976. Govt., of India has set up a National Committee on Environmental Planning and Coordination. Government of India's programme for environment included the programme for cleaning the rivers including Ganga and Yamuna. Prime Minister, Sh. Rajiv Gandhi constituted Central Ganga Authority for the purpose of pollution control of Ganga. The enactment of Environment (Protection) Act, 1986 was the immediate off-shoot, of this programme. The Supreme Court (writ petition (Civil) No. 860 of 1991) has directed the University Grants Commission to prescribe a course on 'Man and Environment'. In the light of this directive, the UGC issued a circular to various universities to introduce the course on 'Environmental Education'.

The main attention in the education on environment is as below:

(i) Over-population and the ways to check its rapid growth.

(ii) Afforestation as a preventive to soil erosion and water pollution

(iii) Methods to prevent air pollution, insisting on smokeless cooking

(iv) Discipline in playing radio and television sets and a ban on use of loudspeaker.

(v) Elementary knowledge of the scientific and philosophical basis of man and the environment

(vi) Rules regarding disposal of household waste; and

(vii) General principles of sanitation Environment and Constitution of India:

The protect and improve the environment is a constitutional mandate. It is a commitment for a country wedded to the ideas of a welfare State. The Indian Constitution contains specific provisions for environment protection under the chapters of Directive Principles of State Policy and Fundamental Duties. The absence of a specific provision in the Constitution recognizing the fundamental right to clean and wholesome environment has been set off by judicial activism in the recent times.

Articles 48-A and 51-A. Clause (g): Initially, the Constitution of India had no direct provision for environmental protection. Global consciousness for the protection of environment in the seventies, Stockholm Conference and increasing awareness of the environmental crisis prompted the Indian Government to enact 42nd Amendment to the Constitution in 1976. The Constitution was amended to introduce direct provisions for protection

of environment.

This 42nd Amendment added Article 48-A to the Directive Principles of State Policy. Article49-A: The Article states: “The State shall endeavour to protect and improve the environment and to safeguard the forests and wildlife of the country.” The said amendment imposed a responsibility on every citizen in the form of Fundamental Duty. Article 51-A, Clause (g): Article 51-A (g) which deals with Fundamental Duties of the citizens states: “It shall be the duty of every citizen of India to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers and wildlife and to have compassion for living creatures.”

Thus, protection and improvement of natural environment is the duty of the State (Article 48-A) and every citizen (Article 51- A (g)). Article 253: Article 253 states that ‘Parliament has power to make any law for the whole or any part of the country for implementing any treaty, agreement or convention with any other country.

In simple words this Article suggests that in the wake of Stockholm Conference of 1972, Parliament has the power to legislate on all matters linked to the preservation of natural environment. Parliament’s use of Article 253 to enact Air Act and Environment Act confirms this view.

These Acts were enacted to implement the decisions reached at Stockholm Conference. Environment and Citizens: The Constitution of India has made a double provision: (i) A directive to the State for protection and improvement of environment. (ii) Imposing on every citizen in the form of fundamental duty to help in the preservation of natural environment.

This is the testimony of Government’s awareness of a problem of worldwide concern. Since protection of environment is now a fundamental duty of every citizen, it is natural that every individual should do it as personal obligation, merely by regulating the mode of his natural life. The citizen has simply to develop a habitual love for pollution

Cases:

KAMAL NATH CASE: In the State of Himachal Pradesh, Span motel, owned by the family members of Shri Kamal Nath, Minister for Environment and Forests, Govt. of India diverted the Course of river Beas to beautify the motel and also encroached upon some forest land. The apex court ordered the management of the Span motel to hand over forest land to the Govt. of Himachal Pradesh and remove all sorts of encroachments. The Court delivered a land mark judgment and established principle of exemplary damages for the first time in India. The Court said that polluter must pay to reverse the damage caused by his act and imposed a fine of Rs Ten Lakhs (Rs 10,00,000) on the Span motel as exemplary damages. The Supreme Court of India recognized Polluter Pays Principle and Public Trust Doctrine.

Protecting the environment OLEUM GAS LEAK CASE, 1986 M C MEHTA, who was single-handedly responsible for making environmental degradation a part of public discourse, says it is vital that PILs have no ulterior motive “GAS HAS leaked. The gas is travelling. I am worried about your lordship’s life”. Environmental lawyer Mahesh Chander Mehta relives what he told the Chief Justice of India P.N. Bhagwati on December 4th, 1985. Oleum gas had just leaked from the Shriram Chlorine plant in Najafgarh, and Delhi had panicked.

The case took place soon after the Bhopal Gas Tragedy and was keenly watched as an instance of how the courts would deal with companies responsible for environmental disasters. Unfortunately, the complex court litigation around the Bhopal Gas Tragedy was an example of what not to do in such cases.

Conclusion: We can further enhance our positive impact by convincing other people regarding the importance of behaving in an environmentally way. To make them understand that what environmental degradation really means for future generations and how changing small things in our daily life can prevent these adverse effects.

As we can see, there are a lot of things that can have an effect on the environment. If we are not careful, we can contribute to the environmental degradation that is occurring all around the world.

We can, however, take action to stop it and take care of the world that we live in by providing environmental education to the people who will help them pick familiarity with their surroundings that will enable to take care of environmental concerns thus making it more useful and protected for our children and other future generations.

References :-

1. “Drowning in a Sea of Garbage”. The New York Times. 22 April 2010.
2. “Environment Assessment, Country Data: India”. The World Bank. 2011.
3. “Evaluation Of Operation And Maintenance Of Sewage Treatment Plants In the India-2007”. Central Pollution Control Board, Ministry of E.
4. “Global Forest Resources Assessment 2010”. FAO. 2011.
5. “India: Country Strategy paper, 2007-2013”. European External Action Service, European Union. 2007.

****

The Scope and Future of Cultivation of Groundnut in Rajasthan

Neeraj Kumar Yadav* Dr. Harish Kumar**

Introduction - Historically, ground nut originated in South America, and was introduced by Portuguese from Brazil to west Africa and then to South-western India in the 16th Century. It is one of the most important food and cash crop of India, accounting for more than 40% of area under oilseeds and 60% of oil seed production. In fact, ground nut seed mainly constitutes edible oil (45%) and protein (26%). It is also rich source of thiamine, riboflavin etc. Global groundnut production stood at about 400 million tones by 2012-13.

China leads production followed by India, Nigeria, and the USA. Indonesia is a leading exporter. India is the second largest producer of groundnut after China. Groundnut is the major oilseed of India. Notably, India exported Ground Nut over Rs 4046.05 crore in 2015-16. Major groundnut producing states in India are Gujarat, Andhra Pradesh, Tamil Nadu, Karnataka, Maharashtra, Rajasthan, M.P., Orissa and U.P. In most developing countries, kernels are used for oil extraction, food and as ingredient in confectionary products. The important producing districts in Rajasthan include Bikaner, Jaipur, Jaisalmer, Nagaur and to a lesser degree Chittor, Tonk and Sawai - Madhopur. Some of the varieties cultivated in the Kharif season in Rajasthan include RS-1, RSB 103-87, Groundnut GG-7. Much of the production is in the Kharif season as rain fed agriculture. Typically, the commodity is harvested in Oct-Nov. The ground nut producing clusters in RACP project are Phoolasar and Kheruwala. The groundnut crop is normally sown in (Kharif season) June-July and harvested in Oct-Nov. Groundnut oil, peanut butter and Chikki are some value added products.

The cake residue after processing ground nut to oil has also a great demand in animal feed industry. A range of support institutions exist in the region. Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Bikaner is the leading agency supporting in research and development in Ground Nut in Rajasthan. Some of the key strengths in ground nut value chain are: India is no 2 in ground nut production worldwide and Rajasthan is no 4 in production. Has a wide variety of applications from use of de hulled nuts as snacks as raw, processed, semi processed and also use as oil. The oil cake is a good fertilizer cum animal feed and the shells have a good caloric value. Hence Ground nut is a high value crop.

Some of the key weaknesses in the ground nut value chain are: The crop is vulnerable to lots of soil borne disease; there is lack of local level infrastructure, low share of farmers in consumer rupee in value added products and large chain of middle men.

Soil, water and climate: Groundnut plants need well drained sandy loam or clay loam soil for better performance or better production and in quality. The soil should be deep and the pH of the soil should be around 5.5 to 7 with high fertility index. It is observed that heavy soil is unsuitable for cultivation because of difficulty in harvesting and pod loss. There are two peanut growing seasons in India: kharif and rabi. The kharif season accounts for about 85 percent of the total.

The kharif crop is typically planted in late June and harvested in late October, and grown primarily in Gujarat, Andhra Pradesh, and Maharashtra. Groundnut is raised mostly as a rainfed kharif crop, being sown from May to June, depending on the monsoon rains. It is sown as late as August or early September. As an irrigated crop it is grown to limited extent between January and March and between in May and July. Groundnut is a cash crop and useful rotation crop.

It is easy to grow, withstands drought to some extent and so a choice crop for dry farming. It is soil erosion resistant crop. Being a legume crop it can fix atmospheric nitrogen.Among the available nitrogenous fertilizers, ammonium sulphate is preferred for groundnut crop because of its sulphur content (24%). It can be used in both rainfed and irrigated conditions. In top-dressing also, it can be used before irrigation or after irrigation at the time of proper soil condition.

Unlike most plants, the peanut plant flowers above the ground, but fruits below ground. From planting to harvesting, the growing cycle of a peanut takes 4 to 5 months, depending on the type and variety. Seed rate of 80-100 kilograms is enough for cultivation in 1-acre land. In recent days there is an increase in the availability of high yielding

*Research Scholar (Chemistry) Tantia University,Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Guide, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

varieties which may yield up to 20 quintals per acre. On average basis a farmer has to spend Rs. 10,000 on seed material.

The peanut, also known as the groundnut, goober, or monkey nut (UK), and taxonomically classified as Arachis hypogaea, is a legume crop grown mainly for its edible seeds. It is widely grown in the tropics and subtropics, being important to both small and large commercial producers. Peanut or groundnut (Arachis hypogaea), is a species in the legume or "bean" family. The peanut was probably first domesticated and cultivated in the valleys of Paraguay. It is an annual herbaceous plant growing 30 to 50 cm (1.0 to 1.6 ft) tall.

In **Groundnut farming**, application of 1 0 – 1 2 t ha^{-1} of chicken manure or 20 t ha^{-1} of well-decomposed farm yard-manure should be used and completed at least 1 month before sowing. This should be mixed into the soil for good plant development and to improve the soil structure. The varieties under cultivation fall into three groups with respect to the habit of growth, namely bunch (Spanish), semi-spreading (Virginia bunch) and spreading (Virginia runner). In the bunch group, the plants grow erect, possess light-green foliage, produce pods in clusters at the base of the plant and have round, plump non-dormant seeds, with light-rose testa.

In the case of the semi spreading and spreading varieties, the branches trail either partially or completely on the surface of the soil, produce pods all along them, possess dark-green foliage and have oblong, dormant brownish seeds. The semi-spreading and spreading types are usually heavier yielding and later maturing than the bunch varieties.

Varieties in Rajasthan:

RS-1: It is a spreading variety and it matures in 135-140 days. It is tolerant to tikka disease and is suitable for growing on sandy soils of Rajasthan. It yields about 15-20 quintals per hectare. It has 77 percent shelling out turn. Seeds are of medium size and contain 48 percent oil.

RSB-103-87: It is a semi spreading variety recommended for cultivation in Kota districts and other areas of heavy soils in Rajasthan. It has a shelling out turn of 66 percent. Yield potential is 18-20 quintals per hectare. Seeds are deep red in colour and contain 50 percent oil.

Groundnut: GG-7 - It is bold seeded with higher yielder variety.

Groundnut:GG –It has a higher pod yield In addition, this variety has bold kernel size and attractive tan colour

Nutrient Management - Nutrient Management Farmyard manure or compost may be added, i.e. 10-15 tonnes per hectare about 15-20 days before sowing. It would be advisable to apply about 50-60 kg P_2O_5 and about 30-40 kg K_2O per hectare. In soils with low fertility, an application of 20-40 kg nitrogen per hectare as a starter dose is advisable to meet the nitrogen requirement of the crop in the initial stage. But before applying fertilisers a soil test is recommended. The fertilisers should be placed at the time of sowing about 4-5 centimetres in the side of the seed and 4-5 centimeters below the seed level. For Iron chlorosis spraying 1% ferrous sulphate plus 0.1% ammonium citrate is recommended.

Water Management - Water Management Groundnut, being a rainy season crop, normally does not require irrigation; however, one irrigation should be given at pod development stage. Irrigation before harvesting facilitates the full recovery of pods from the soil.

Weed Management - Weed Management Crop requires one or two hand hoeings and weedings as per soil type and extent of infestation. First hoeing is to be carried out three weeks after sowing and the second, three weeks after first hoeing, before commencement of flowering. Application of TOK-E-25 at the rate of 4 litres dissolved in 600 litres of water as pre-emergence spray is recommended. And Basalin at the rate of 1kg a.i. per hectare dissolved in 800-1000 litres of water is also advisable as pre-planting spray. To allow easy penetration of pegs in soil and to provide more area to spread; earthing up should be carried out simultaneously with intercultural operations.

Inspect Pest & Disease

1. Groundnut leaf miner (*Stomopteryx subscecivella*)

Symptoms/identification - It is brownish gray moth, 6 mm long with 10 mm wing span. It creates blotches on the leaf and webs the leaf together. Attacked field looks "burnt" from a distance. Full grown larvae are green with dark head and thorax. At severe infestation entire leaflet becomes brown, shrivelled and dried up.

Control - Stray planting of cowpea or soybean as trap crop. Crop rotation with non-leguminous crop is advised in case of severe recurring problem. Use resistant/tolerant varieties. Install pheromone trap @ 5/ha for mass trapping and spray neem based formulation @ 5%. Release Trichogramma Chilonis @ 50000/ha twice (7-10 days interval) Mulching with rice straw causes reduction in leaf miner incidence and increase in percentage parasitism. Intercropping groundnut with Pennisetum glacum enhanced the parasitoid Goniozus spp. on leaf miner. Carbaryl 50WP 0.2 per cent spray was found to be most economical for controlling this pest; or Spray Quinalphos 25 EC 2ml or Methyldemeton 25 EC 1.6ml or Dimethoate 30 EC 2ml /lit of water.

2. Groundnut bud borer (*Anarsiae phippias*)

Symptoms/identification - Larvae are chocolate brown in color and 10-15 mm long. The larva bores into the terminal buds and shoots and tip of the stem. The tender leaflets emerging from central spindle will show shot-hole symptoms initially. In severe infestation emerging leaflets will have only the midribs or several oblong feeding holes.

Control - Neem oil 3 per cent and leaf extract of Vitexnegumdo (notchi) 5 per cent are effective against this pest. Spraying of monocrotophos 36 WSC 0.5 per cent (1.5 ml/lit) was found to be more effective in controlling bod borer. The hymenopteran parasitoids, Bracongelechiiae and Brachymeria sp cause parasitism up to 24 per cent on

larvae.

3. Tobacco caterpillar (*Spodoptera litura*)

Symptoms/identification - The adults are light brown moths with a wing span of about 30 mm and mottled forewings. The egg masses about 4 X 7 mm appear golden brown on the upper surface of leaves. Young larvae are light green in color. Full grown larvae are stout, cylindrical and pale greenish brown with dark markings. The pupae are reddish brown and are in the soil close to the plant.

Control - Planting castor or sunflower plants as trap crop for egg laying and destroying eggs help in reducing the incidence. Use pheromone traps (5/ha) to monitor moth population. Release of Telenomusremus @ 50000/ha. 4 times (7-10 days interval) based on pheromone trap catching. Use SNPV @ 250 LE (6 x 10^9/LE)/ha or B.t. @1 k.g/ha, when large number of egg masses and early instars larvae are noticed. Release Trichogramma chilonis @ 50000/ha. 2 times (7-10 days interval) based on pheromone trap observation.

Release of Braconhebetor @ 5000/ha. two times at 7-10 days interval. Spray insect pathogenic fungus Nomuraearileyi @10^13 spores/ha for controlling early instars. Release larval parasitoid apanteles africanus @ 5000/ha. Use 5% neem seed kernel extract on need basis. Apply Methyl parathion 2% dust @ 20 kg/ha or spraying of monochrotophos 36 SL or Quinolphos 25 EC @ 1500 ml or Endosulfan 35 EC @1250 ml or Trizophos 40EC @ 800 ml in 700-800 lit of water. Poison bait with monocrotophos 36 SL or carbaryl, rice bran, jaggery and water can be used to control the grown up larvae.

Harvesting : Groundnut is harvested when plant foliage show yellowness and the pods are matured, become hard and tough, and when there is dark tan discoloration inside the shell and the kernels become unwrinkled. Usually, a fully mature pod is difficult to split easily with finger pressure. The bunch varieties mature in about 100-105 days, while semi-spreading and spreading ones in 125-135 days. This stage is achieved when vine begins to turn yellow and leaves start shedding. Harvesting should be done when good percentage of nuts is fully developed and fairly intact. Various activities that constitute harvesting operation are digging, lifting, windrowing, stocking and threshing. In case of bunch type of groundnut, the plants are harvested by pulling. Harvesting of spreading type of groundnut is done by spade, local plough or with the help of blade harrow or groundnut digger.

Technology - The major challenges in Ground nut processing as opined by the stakeholders were: poor research and development in the country for processing technology, and development of value-added products of the nut for use in different industries. High cost of processing technology is also a major barrier for small scale processors.

Environment -Ground nut is a high input intensive crop and abundant quantity of fertilizers and pesticides are applied for nutrient and pest management. The application of agro chemicals detoriates both soil and ground water quality. Moreover, the crop is highly water intensive and requires 6000 cum of water. Dragging this much water through tube wells without rain water harvesting might be a risk factor for depleting ground water.

Competition - The concerns on Ground nut value chain indicated that there was a fragmented supply chain in Ground nut seed and products with lack of skilled manpower and lack of knowhow on technical & emerging market requirements among the small split manufacturers. The measures to strengthen the value chain include development specialized manpower and capacity building of fragmented industry on the food safety aspects. While the use of ground nut in snacks is stable, thee share of ground nut in the oil industry is constantly under threat due to the availability of Rice bran oil, mustard oil, Soyabean oil and pam oil. The prices of ground nut oil are higher than these oils and hence consumers prefer low cost oils.

Conclusion : FPC of farmers would be an ideal intervention for evolving the role of farmers from being chain actors to chain partners by doing both backward and forward integration of activities related to Ground nut value chain. At the back end, the FPC would help in reducing cost of cultivation by undertaking bulk purchase of agri input at wholesale price and selling farmers at a price equal to or lower than the retail price. Similarly, in the front end of the value chain, the FPC would undertake direct collection of Ground nut-in shell from the farmers and thereby reduce both the wastage and cost of visit to mandi for farmers.

The FPC can further undertake primary processing of the seeds and supply directly to large processors and other value chain actors. For this, a strong base has to be facilitated for the FPC by motivating farmers to contribute in terms of equity and business participation with the FPC. The Board and FPC staff has also to be handheld for a period of 2-3 years to train them on all processes of FPC management and business processes. All stake holders including RACP, NGO, ABPF, Bankers and other support institutions therefore need to work cohesively towards the common goal of facilitating a strong community organization which can run in a sustainable manner after the project period.

References :-

1. http://www.commoditiescontrol.com/eagritrader staticpages/index.php?id=47
2. http://www.commoditiescontrol.com/eagritrader/staticpages/index.php?id=47
3. http://cacp.dacnet.nic.in/ViewReports.aspx?Input=2&PageId=39&KeyId=547
4. https://www.zauba.com/exportanalysis-groundnut-report.html
5. https://www.zauba.com/exportanalysis-groundnut-report.html

****

Groundwater Depletion & Solution

Shweta Yadav* Dr. Harish Kumar**

Introduction - Agriculture has been the lifeline for millions of Indian farmers since the Green Revolution in the 1960s and groundwater has played a vital role in irrigating water-hungry crops such as rice to feed India's ever-growing population.

But over the past three decades, India has been grappling with intense and rapid depletion of groundwater stores driven by human-caused climate change and over-extraction. The consequences can be far-reaching; water shortages can hit food supplies causing prices to soar and fueling social unrest, according to researchers.

Groundwater is the largest liquid source of freshwater which, along with soil moisture, surface waters such as lakes and rivers and snow and ice, comprises all the freshwater available on Earth.

Now, in a new first-of-its-kind global analysis on freshwater availability, northern and eastern India emerged as major hotspots of groundwater depletion mainly because of overexploitation for irrigation although eastern regions also faced low rainfall, while the central and southern regions showed stability owing to water policy changes and increased rainfall.

Amid rising temperatures and high greenhouse gas emissions, the study projects increasing rainfall over India by 2100. But past research suggests that the Indo-Gangetic Plains have been hit by more droughts due to climate change and better water management policies are urgently needed to tackle India's groundwater woes.

"Groundwater in northern India is being depleted at a rate of 19.2 gigatons per year," said Matthew Rodell, lead author of the paper and chief of the Hydrological Sciences Laboratory at NASA's Goddard Space Flight Center. This is equivalent to almost a third of the capacity of one of India's largest reservoirs by water capacity, the Indira Sagar in Madhya Pradesh. "That is definitely a concern, because it is unsustainable," he warned.

While monsoonal rainfall contributes to groundwater recharge as water seeps through the soil collecting deep underground in the gaps between rocks and layers of porous rock, known as aquifers, pumping out stored water lowers the water table. Unlike rivers or lakes, recharge of groundwater can take years.

Nowhere is groundwater more important than in India where a quarter of the world's groundwater is extracted annually—the highest in the world—which is greater than that pumped up by China and the United States combined. Up to 80 percent of the population relies on groundwater for both drinking and irrigation. Although agriculture comprises only 17 percent of India's Gross Domestic Product, it employs more than half of the

Groundwater depletion is a serious threat to the environment. The majority of our bodies and the Earth is made up of water. We may see the beautiful, flowing surface waters that make up the oceans, lakes and rivers, but this water is not always safe for consumption and is much more difficult to filter than groundwater. Consequently, water from the ground is especially valuable.

Groundwater is something that we need all over the world. Humans and animals need water in order to survive as our bodies could not function without it. We also need water to assist us in growing crops, powering equipment, and to keep us comfortable. Societies require much more clean water than we are afforded from precipitation and surface water, which is why groundwater is used so frequently.

Nature goes through a unique process to provide us with groundwater. The surface water that we can see is heated by the Sun and goes into the atmosphere as evaporation. Water vapor then creates precipitation, water that falls from the sky as rain and snow. Once water falls from sky and onto the ground, it is absorbed into the Earth and is then stored as groundwater in aquifers.

Greater irrigation access, driven by the expansion of tube wells, has been the primary driver of India's impressive food production gains over the past 50 years. This expansion has led to India becoming the largest consumer of groundwater worldwide and to severe groundwater depletion in many parts of the country. Despite the widespread knowledge that groundwater depletion is occurring and will likely have large negative ramifications for food security, the extent of crop production loss and whether there are any viable adaptation strategies remain unknown.

Yet, such information is critical for identifying successful

*Research Scholar (Chemistry) Tantia University,Sri Ganganagar (Raj.) INDIA
** Research Guide, Tantia University, Sri Ganganagar (Raj.) INDIA

policy interventions that will help India maintain production levels in the face of groundwater depletion. Using a novel high-resolution dataset on cropping intensity, irrigation access, and groundwater depletion, we empirically estimate the potential impacts of groundwater depletion on agricultural production across India, and we find that these effects are large. Specifically, groundwater depletion may reduce cropping intensity by up to 20% across all of India and by up to 68% in the regions projected to have low future groundwater availability in 2025. These large projected losses are of concern given that India is one of the largest agricultural producers worldwide, and over 600 million farmers depend on Indian agriculture as a primary source of livelihood.

While canals are being promoted as an alternative irrigation source and as a supply-side adaptation strategy to falling groundwater tables, our results show that switching to canal irrigation has limited adaptation potential at the national scale. We find that even if all regions that are currently using depleted groundwater for irrigation will switch to using canal irrigation, cropping intensity may decline by 7% nationally and by 24% in the regions projected to have low groundwater availability. In addition to losses in overall production, we find that switching to canal irrigation will likely increase the sensitivity of agricultural production to rainfall variability and increase disparity in irrigation access across villages. Such reductions in production are of concern given that reduced irrigation access has been shown to be associated with reduced household income increased rural poverty, and reduced household dietary diversity

These results highlight the importance of groundwater irrigation for Indian agriculture and rural livelihoods and that simply providing canal irrigation as a substitute irrigation source will likely not be enough to maintain current production levels in the face of groundwater depletion.

Causes of groundwater depletion:

1. Groundwater depletion most commonly occurs because of the frequent pumping of water from the ground. We pump the water more quickly than it can renew itself, leading to a dangerous shortage in the groundwater supply. As a growing world with a population that continues to rise, the more we pump water from the ground at a rapid rate, the more difficult it is for the groundwater to provide us with the amount of water that we need.

2. We continuously pump groundwater from aquifers and it does not have enough time to replenish itself. Water flows freely through the saturated rocks known as aquifers. There are large and small aquifers, and they are the underground water reserves that absorb water and hold it, enabling us to pump it for use.

The amount of water that aquifers hold is beyond impressive and can provide us with billions of gallons of water per day. While this amount of water seems plentiful, groundwater is a major contributor to the Earth's freshwater supply and is responsible for providing up to 40% of freshwater in the world. Therefore, it doesn't have the ability to recollect quickly enough to be continually sourced for our use.

3. Agricultural needs require a large amount of groundwater. It's frightening to think that there isn't very much groundwater left when you consider how much water we use on a daily basis to support our population of billions and our personal lifestyles. A large amount of groundwater goes to farming, but the availability of groundwater is steadily declining.

Without it, it will be extremely difficult to provide drinking water and water for crops and animals that would help communities during times of drought. The less water that is available, the less food we have and we will be faced with the issue of great demand and very little supply.

4. Groundwater depletion can also occur naturally. The problems we would face with freshwater shortage is sure to cause problems in every aspect of our lives. The activities that lead to groundwater depletion come mostly from humans, but a portion of it also comes from changes in our climate and can speed up the process.

Effect of Ground Water Depletion:

1. Groundwater depletion will force us to pump water from deeper within the Earth. The more we extract groundwater right below the Earth's surface, the further down we have to go in order to get more. As we have to extract water from deeper within the Earth, we find that there is less water available. Consequently, we will have to use even more resources to develop alternative methods to reach further into the ground.

2. Large bodies of water will become shallower from groundwater depletion. A groundwater shortage keeps additional water from flowing into lakes, rivers and seas. This means that over time, less water will enter as the existing surface water continues to evaporate. As the water becomes less deep, it will affect everything in that particular region, including fish and wildlife.

3. Saltwater contamination can occur. We may pump groundwater instead of sourcing it from lakes and rivers, but that doesn't mean that it isn't connected to larger bodies of water. Groundwater that is deep within the ground often intermingles with saltwater that we shouldn't drink. When freshwater mixes with saltwater, it is called saltwater contamination. This sort of contamination would raise the prices of drinking water for everyone because it will cost much more to pump and filter.

4. As large aquifers are depleted, food supply and people will suffer. The depletion of the Colorado River and the Ogallala aquifer serve as examples of large groundwater reserves that are being depleted, despite how necessary they are to our economy and well-being. The Ogallala aquifer has been collecting groundwater for thousands of years, and its water resources have to be shared among farmers and citizens.

Water from the Ogallala aquifer is used for irrigation throughout the Great Plains. So much water is being taken from this aquifer that there is no time for it to refill.

Unfortunately, strict orders are not in place to regulate how much water can be pumped from this reservoir, which could have a devastating effect on the crops and people who live there.

5. A lack of groundwater limits biodiversity and dangerous sinkholes result from depleted aquifers. Aquifers collect groundwater and are extremely important. For example, the residents near the Gulf of Mexico and Mexico City rely solely on aquifers. Wildlife marine animals and agriculture continues to suffer near the Gulf of Mexico because the Mississippi River runoff from industrial farming materials finds its way into the water. Parts of Mexico City are falling as the water table lowers and creates sinkholes that destroy buildings and homes.

Solution to Ground water Depletion:

1. As individuals, one of the things we can do to make a difference is to use less water for luxury purposes. We must all address the issue of groundwater depletion. Considering the impending crisis of a mass water shortage everyone should do their part to use less water whenever possible. Water is used so freely that it is often part of outdoor decor ideas and used for major attractions, such as amusement parks.

Throughout countless neighborhoods, large amounts of water are used for swimming pools while water hoses are kept running to wash cars and for other miscellaneous reasons. We conserve water when we turn off the faucet and reduce our usage of washing machines, dishwashers and similar appliances. Also, we save a massive amount of water by deciding not to use water for decorative and unnecessary reasons at home.

2. We should reduce our use of chemicals and dispose of them properly. Many people are not paying attention and are simply unaware of how important it is to keep pollution from occurring beneath the ground. The water from businesses and private residences that run into the streets and sewage systems are commonly laden with chemicals. These chemicals find their way into larger bodies of water and absorb into the ground, poisoning animals and the soil. By using less chemicals and discarding of them carefully, we keep them from adding toxic materials into our water supply.

3. More comprehensive research and additional funding can help with groundwater depletion. The best way to approach the topic of groundwater depletion and to find a solution is to think on both a personal and government level. Laws that are in place for the pumping of groundwater should be more strict and follow specific regulations.

There are many scientists, researchers, and sustainable companies that remind us how important it is to know the amount of groundwater we actually have. They also believe that many of the policies we have should be changed with the consideration of saving groundwater in mind instead of treating it like an endless resource.

4. One of the most effective ways to address the issue of groundwater depletion is to find alternative sources of water. Alternative water sources can be used to help replenish aquifers. Deriving water from other sources would also give aquifers time to refill instead of pumping too much water from them at once.

5. The pumping of groundwater should be regulated. If we don't have a better understanding of our groundwater supply, then we can easily use much more than we should. Understandably, more funding should be granted towards researching our groundwater supply instead of just pumping the water, so that we can set limits and better pace our usage. Additional funding should be given to support initiatives that not only study the supply of groundwater we have, but also seek to find sustainable ways to use less of it.

References :-

1. Shiklomanov IA (2000) Appraisal and assessment of world water resources. Water Int **25**:11–32.
2. The role of science in solving the world's emerging water problems. (2005) Proc Natl Acad Sci USA **102**:15715–15720.
3. Molden D, ed (2007) *Water for Food, Water for Life: A Comprehensive Assessment of Water Management in Agriculture* (International Water Management Institute, Colombo, Sri Lanka, Earthscan, London).
4. Siebert S, et al(2010) Groundwater use for irrigation—a global inventory. Hydrol Eart Syst Sci 7:3977–4021.
5. Giordano M (2009) Global groundwater Issues and solutions. Annu Rev Environ Resour 34:153–178.

****

निमाड़ के सन्तों का वर्तमान समाज पर प्रभाव

डॉ. मधुसूदन चौबे *

शोध सारांश – भक्ति भारत के सामाजिक और धार्मिक जीवन का आधारभूत तत्व रही है। देश के प्रत्येक भाग में इसका प्रसार हुआ है। भक्तिकाल के सन्त उच्च कोटि के चिंतक रहे। उन्होंने जो विचार अभिव्यक्त किये वे शाश्वत हैं। अनेक सन्त अपने चिंतन को काव्य का रूप देकर वाड्.मय को समृद्ध कर गये। उनका दर्शन पीढ़ी दर पीढ़ी अंतरित होकर समाज को आकार देता चला आ रहा है। निमाड़ मध्यप्रदेश का एक हिस्सा है। प्रशासकीय दृष्टि से इस क्षेत्र में बड़वानी, खरगोन, खंडवा एवं बुरहानपुर जिले आते हैं। सन्तों की शिक्षा का प्रभाव वर्तमान निमाड़ी समाज पर कितना शेष है, इसी प्रष्न का उत्तर खोजने के लिए यह शोध पत्र तैयार किया गया है।

टुल– सन्तवाणी का अध्ययन, सामाजिक सर्वेक्षण, सन्तों के आश्रमों और वहां की गतिविधियों का अवलोकन।

शब्द कुंजी – भक्ति आंदोलन, मुगल काल, मुस्लिम सत्ता, मोक्ष, कर्मकांड, मूर्तिपूजा, बहुदेववाद, गुरु परम्परा, अस्पृष्यता।

प्रस्तावना – मध्यप्रदेश के दक्षिण-पश्चिम भाग में इन्दौर संभाग में स्थित निमाड़ में भक्ति आंदोलन के दौरान तथा इसके उपरांत अनेक महत्वपूर्ण संत हुए। 'निमाड़ में भक्ति आन्दोलन के प्रवर्तक सन्त ब्रह्मगीर माने जाते हैं।' ब्रह्मगीर से लेकर आज तक हुए सन्तों में ब्रह्मगीर, मनरंगीर, सिंगाजी, जगन्नाथ गिर, भावसिंह, कालूजी, दलूदास, खेमदास, धनजीदास, लालदास, बोंदरू, अफजल, रंकनाथ, दीनदास, फकीरनाथ, बुखारदास, कालूदास, खुश्यालदास, दशरथनाथ, नंदलाल, हरिदास, दादा धुनी वाले, पुरूषोत्तम नागर, मौनी बाबा एवं डेमन्या बाबा प्रमुख हैं।

निमाड़ में सन्त मत के उद्भम के समय इस्लामिक सत्ता का प्रभुत्व था। धर्म सापेक्षता जन्य विभेद और उपेक्षा से सहमे हिन्दुओं में भगवत भक्ति के माध्यम से सन्तों ने नूतन आत्मविश्वास जाग्रत किया। सन्तों की प्रेरणा से हिन्दुओं को आत्मगौरव की अनुभूति हुई। शासित एवं शोषित होने के बावजूद वे जीवन के सर्वोच्च ध्येय मोक्ष की प्राप्ति हेतु भक्ति पथ पर दृढ़ता से चलते रहे।

सन्तों ने समाज को सहज बनाने के लिये प्रतिबद्ध होकर परिश्रम किया। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों, अन्धविश्वासों, धार्मिक विकृतियों की ओर जन सामान्य का ध्यान आकृष्ट किया तथा इन्हें नकारने का आवान किया। सिंगाजी ने तो स्पष्टत: कहा कि 'देव पूजा, तीर्थयात्रा एवं गंगा स्नान आदि घोर आडम्बर हैं। नदी का जल केवल तन का मेल धो सकता है मन को पवित्र करने के लिये भक्ति ही श्रेष्ठ राह है। तीर्थ यात्राएँ समय और साधनों की बर्बादी के अलावा कुछ नहीं है।' सिंगाजी का निमाड़ के लागों पर व्यापक प्रभाव रहा है। उनके द्वारा पूजा-पाठ, कर्मकाण्ड, मूर्तिपूजा, बहुदेववाद, जाति-वर्ण रोजा-नमाज आदि बाहरी आडम्बरों का घोर विरोध किये जाने तथा साधना के भीतरी पक्ष को अपनाने पर जोर दिये जाने का जनता पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। समय के लिहाज से सिंगाजी ने सामाजिक क्रांति का उद्घोष माना जा सकता है।

जाति प्रथा भारतीय समाज में अभिशाप बनकर कहर ढा रही थी। जातिगत ऊँचनीच की भावना शोषण और दमन का आधार बनी हुई थी। समाज में असन्तोष और वैमनस्य व्याप्त था। कथित निम्न वर्ग के लोग हिन्दू समाज में स्वयं को सहज नहीं पा रहे थे। अत: वे थोड़े से दबाव या प्रलोभन के चलते धर्मांतरण करने के लिये तत्पर हो जाते थे। निमाड़ के सन्तों ने जाति-पाँति, अस्पृश्यता, आदि का घोर विरोध किया। सन्त अफजल ने समझाया कि 'शरीर चाहे हिन्दू का हो या मुसलमान का, उनका चेतन तत्व, रक्त, माँस और चमड़ा एक ही है।' सन्त पुरुषोत्तम नागर ने सिद्ध किया कि 'वर्ण व्यवस्था सामाजिक संगठन की पूर्ति के लिये बनाई गई थी। चारों वर्णों ने समाज को संचालित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यह कर्मगत् व्यवस्था थी तथा इसका ऊँच-नीच से कोई सम्बंध नहीं था।' सन्त मौनी बाबा ने भी 'जाति-पाँति, छुआ-छूत, छोटा-बड़ा जैसी धारणाओं को शास्त्र प्रणीत नहीं माना है।' सन्तों के उपदेशों के फलस्वरूप निमाड़ी समाज में जातिवाद घिनौने रूप में अपने अस्तित्व को कायम नहीं रख सका। इसके बंधन यहाँ बहुत ही शिथिल रहे।

सन्त अफजल ने भी हिन्दू-मुस्लिम सम्प्रदायों को निकट लाने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया। दोनों ही वर्ग के लोग उनके अनुयायी थे। यहां तक कि उनकी परम्परा को आगे बढाने वाले अधिकांश शिष्य जैसे- सन्त बोंदरू, सन्त खुश्याल दास, सन्त दशरथ आदि हिन्दू समाज के सदस्य थे। सन्तों के प्रयासों का परिणाम निमाड़ में हिन्दू-मुस्लिम एकता के रूप में आज भी विद्यमान है।

स्त्रियों के संबंध में भारतीय समाज में दो अतिवादी व्यवस्थाएँ अस्तित्व में रहीं। एक ओर यहाँ तक घोषित कर दिया कि जिस स्थान पर नारी की पूजा होती है, वहाँ देवताओं का वास होता है। दूसरी ओर उन पर अनेक बन्धन अधिरोपित कर उनका जीवन नारकीय बना दिया गया। निमाड़ के सन्तों ने स्त्रियों को दी जाने वाली यातनाओं और उनकी उपेक्षा की निन्दा की। उन्होंने स्त्री-पुरुष समता का विचार समाज के समक्ष प्रस्तुत किया। सन्त लालदास स्त्री अस्मिता के बड़े संरक्षक हुये। 'उन्होंने स्त्रियों के सम्मान एवं अधिकारों का दृढ़ता से समर्थन किया।' सन्तों ने स्त्रियों से भी अपेक्षा की कि वे उदात्त चरित्र का परिचय दें। बहुधा सन्देह के चलते ही स्त्रियों को चहारदीवारी में सीमित कर दिया जाता है। उन्होंने गुणी स्त्रियों की बहुत प्रशंसा की है तथा स्त्री को लोकलाज, मर्यादा आदि का प्रतीक माना है। निमाड़ मुख्यत: ग्रामीण

* सह प्राध्यापक (इतिहास) शहीद भीमानायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

समुदायों का क्षेत्र है। यहाँ के ग्रामों में स्त्री-स्वातंत्र्य देखते ही बनता है। भक्ति सन्तों के प्रताप से आज निमाड़ में श्रम, शिक्षा, प्रशासन, राजनीति सहित प्रत्येक क्षेत्र में महिलाएँ अपनी सषक्त उपस्थिति से नारी विमर्श को धार प्रदान कर रही हैं।

सन्तों ने निमाडी बाशिन्दों के नैतिक उत्थान के लिये गुरु संगत की अपरिहार्यता का उपदेश दिया। उन्होंने गुरु को सूर्य की भाँति प्रकाश का उत्स घोषित किया, जो जीवन के प्रत्येक चरण और प्रत्येक क्षेत्र में सही दिशादर्शन कराता है। सिंगाजी ने कहा कि 'गुरु के बिना जीव की सहायता कौन करे, भले ही हजारों तीर्थ कर लो। जिस तरह पति के बिना स्त्री की शोभा नहीं है, विधवा को श्रृंगार शोभा नहीं देता, उसी प्रकार जीव को भी गुरु के उपदेश के बिना और ब्रह्म ज्ञान के बिना शोभा नहीं है।' सन्त जगन्नाथ गिर ने कहा कि 'सद्गुरु की शरण में जाने पर मानव में विवेक जाग्रत होता है और भले-बुरे में अन्तर करने में सक्षम हो जाता है।' सन्त भावसिंह के अनुसार अज्ञान रूपी अंधकार दूर कर मुक्ति का पथ प्रशस्त करने की क्षमता केवल सद्गुरु में होता है। सन्त दलूदास ने प्रतिपादित किया कि 'गुरु ही जीव का जन्म सफल बनाता है तथा सांसारिक दु:खों, क्लेशों और पीढ़ाओं से मानव को मुक्त कराकर उसे ब्रह्मानन्द की प्राप्ति कराता है।' सन्त दशरथ ने कहा कि 'गुरु की दया बिगड़ी बात बना देती है और निर्भीक बनाती है। साथ ही उन्होंने गेरुए चोले में घूमने वाले ढोंगी साधुओं और झूठे गुरुओं से सावधान रहने की शिक्षा दी है।'

बहुसंख्यक लोगों ने सिंगाजी को अपना गुरु स्वीकार किया। गुरु परम्परा का निर्वाह पूरी शिद्दत से निमाड़ में हुआ है। सन्त सिंगाजी, सन्त दादा धूनी वाले, सन्त भावसिंह, सन्त बोंदरू, सन्त मौनी बाबा आदि की गुरु गादी पर आज भी अनुयायियों का तांता लगता है। सन्तों की प्रेरणा से निमाड़ीजन गुरु के प्रति श्रद्धानवत हुये।

सन्तों ने यह मानसिकता बना दी कि मानव के रूप में जन्म मिलना बहुत बड़ी उपलब्धि है। चौरासी लाख योनियों में भटकने के बाद पुण्यों के फलस्वरूप मानव शरीर मिलता है, अत: इसका सदुपयोग किया जाना चाहिये। मानव के रूप में जन्म मुक्ति प्राप्त करने का स्वर्णिम अवसर है। उन्होंने स्पष्ट किया कि जीवन क्षणभंगुर है, अत: इस सीमित जीवनावधि का सार्थक प्रयोग किया जाना चाहिये।

जीवन को व्यर्थ की तड़क-भड़क से दूर रखते हुये सादगी से व्यतीत करना चाहिये। सार्थक कर्मों में सक्रिय रहकर जीवन की उपयोगिता प्रमाणित की जा सकती है। आलस्य एवं प्रमाद में अनमोल जीवन का क्षय नहीं किया जाना चाहिये। सन्त चाहते थे कि उनके अनुयायी अपने अन्दर मानवीय गुणों का विकास करे। प्रेम मानव की सबसे मूल्यवान निधि है। सामाजिक वैमनस्य से प्रेम के स्रोत में निरन्तर कमी होती है। मानवजीवन छलरहित एवं परोपकारी होना चाहिये। इन शिक्षाओं के फलस्वरूप निमाड़ के समाज में सादा जीवन उच्च विचार का भाव व्यापक रूप से व्याप्त हो गया। यह सादगी वेशभूषा, रहन-सहन, बोलचाल, व्यवहार सभी में दिखाई देती है।

सन्त ऐसे नागरिकों से समाज का निर्माण करना चाहते थे, जो निर्व्यसनी हो और जिनका नैतिक स्तर उच्च हो। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये उन्होंने मद्य निषेध, चोरी, बेईमानी, व्यभिचार, कामचोरी जैसी दुष्वृत्तियों से बचने के लिये उपदेश दिये तथा अपने शुद्ध आचरण से व्यक्तिगत उदाहरण प्रस्तुत किया। सन्त दलूदास 'तत्कालीन सामाजिक प्रवृत्तियों को कलियुग की विशिष्टताएँ मानते थे, जिसमें गुरुजनों एवं वरिष्ठ परिजनों की नेक सलाहों का तिरस्कार किया जाता था और क्षणिक लाभ एवं शारीरिक सुख के लिये व्यक्ति किसी भी स्तर पर पतन के लिये तैयार हो जाता था।' सन्त कालूदास की मान्यता थी कि समाज में अच्छी विचारधारा वाले लोगों की कमी है और संकीर्ण दृष्टिकोण वाले लोगों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है।

सन्त हरिदास ने देशवासियों द्वारा पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण से चिन्तित थे। आदिवासी सन्त डेमनिया भाई विगत तीन दशकों से शराब सेवन, मांसभक्षण, जुआ-सट्टा, गाली-गलौज जैसी बुरी आदतों के विरुद्ध मुहिम चलाये हुये हैं। 'करीब एक लाख आदिवासी उनके प्रभाव से व्यसन मुक्त हो चुके हैं।'

सन्तों का निमाड़ के लोक जीवन पर बहुत प्रभाव पड़ा। निमाड़ के समाज की संरचना के निर्माण में सर्वाधिक योगदान सिंगाजी का रहा है। 'सिंगाजी का सन्त जीवन मात्र बमुश्किल एक वर्ष का रहा। इस अवधि में उन्होंने जो कुछ कहा और गाया वह काल के सफों पर लिखे गये अमर शब्द हो गये। उनके भजन जन-जन की अभिव्यक्ति बन गये और मनुष्य जीवन की अंधेरी रातों के प्रकाश स्तम्भ हो गये।' सिंगाजी का इस क्षेत्र के लिये जितना प्रदेय है, उतना किसी और का नहीं है। निमाड़ियों के लिये सिंगाजी महज एक सन्त या कवि नहीं, बल्कि सिद्ध और अलौकिक व्यक्तित्व थे। उन्हें भगवत स्वरूप मानकर पूजा जाता है।

इस प्रकार सन्तों ने समाज को सहज बनाने के लिये प्रतिबद्ध होकर परिश्रम किया। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों, अन्धविश्वासों, धार्मिक विकृतियों की ओर जन सामान्य का ध्यान आकृष्ट किया तथा इन्हें नकारने का आवान किया। उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता, स्त्री-पुरुष समानता, मद्य निषेध आदि पर बल दिया तथा जाति-पाँति, अस्पृश्यता, रूढ़िवादिता आदि का विरोध करते हुये इनके उन्मूलन की पहल की।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. **निमाड़ का सांस्कृतिक इतिहास**, लेखक- रामनारायण उपाध्याय, प्रकाशक- विश्वभारती प्रकाशन, नागपुर, संस्करण- 1980, पृष्ठ-142.
2. **दृढ़ उपदेस**, रचयिता- सन्त सिंगाजी, संकलन एवं अनुवाद-डॉ. श्रीराम परिहार, प्रकाशक- आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, 1996., पृष्ठ-104-111.
3. **अमर सागर खण्ड एक**, रचयिता- सन्त अफजल, संकलन एवं अनुवाद- बाबूलाल सेन, प्रकाशक- मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, संस्करण- 1999, पृष्ठ-190.
4. **श्री अनुराग शतक**, लेखक- पुरुषोत्तम नागर, प्रकाशक- श्री पुरुषोत्तमदास टीकमदास, खरगोन, संस्करण- विक्रम सम्वत्-2011, पृष्ठ- 03.
5. प्रत्यक्ष साक्षात्कार में सन्त मौनी बाबा ने शोधार्थी को बताया।
6. **निमाड़ी साहित्य के कलमकार-कलाकार**, सम्पादक- बाबूलाल सेन, प्रकाशक- माहिष्मती प्रकाशन, महेश्वर, संस्करण- 2003, पृष्ठ- 58.
7. **भजन**, रचयिता- सन्त सिंगाजी, संकलन एवं अनुवाद-डॉ. श्रीराम परिहार, प्रकाशक- आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, 1996., पृष्ठ-05-06.
8. **निमाडी और उसका साहित्य**, लेखक- डॉ. कृष्णलाल हंस, प्रकाशक- हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, संस्करण- 1956.,

पृष्ठ– 292.

9. **सन्त सिंगाजी की भजन माला, भाग– 1**, संकलनकर्ता– रामशंकर गंगराड़े, प्रकाशक– श्री हरि ॐ गंगराड़े, मुद्रक– विद्या भवन, इन्दौर, संस्करण– प्रथम, पृष्ठ– 49.
10. **निमाड़ी साहित्य के कलमकार–कलाकार**, सम्पादक– बाबूलाल सेन, प्रकाशक– माहिष्मती प्रकाशन, महेश्वर, संस्करण– 2003, पृष्ठ– 68.
11. **सन्त सिंगाजी की भजन माला, भाग– 1**, संकलनकर्ता– रामशंकर गंगराड़े, प्रकाशक– श्री हरि ॐ गंगराड़े, मुद्रक– विद्या भवन, इन्दौर, संस्करण– प्रथम, पृष्ठ– 45.
12. प्रत्यक्ष साक्षात्कार में सन्त डेमनिया बाबा ने शोधार्थी को बताया।
13. **कहे जन सिंगा**, लेखक– डॉ श्रीराम परिहार, प्रकाशक– मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला परिषद्, भोपाल, संस्करण– 1996, प्रस्तावना पृष्ठ– 07.

****

Cinematic Adaptation of Indian English Fiction

Dr. Rajkumari Sudhir *

Abstract - Both in filmy and fictional texts, the clash between cultures and generations in the migrant partially fulfilled relation constitutes a specific sub-genre, whose discursive constructs and strategies percolate into easily recognizable features deploying a rather homogeneous corpus of imagined life-histories, that is fictionalized diegetic constructs that coincide imparts with actual life stories but diverge from them by being idealized representation of what might have happened in real experiences.

Introduction - Now let us examine some of the works of fiction in English that drew the attention of the film producers and directors. In *Show Business* (1992), ambivalence is imposed by Tharoor's language and class induced cosmopolitanism and his, language and class induced inability to avoid the enabling narrative of bourgeois notionness. The interplay here is much more complex and less obvious. It can be best highlighted with reference to the central business of the text- show business, or more exactly Bombay films. The narrative basically follows the struggling actor to dying star years of Ashok Banjara, a character obviously modeled on the cine star, Amitabh Bachchan. This involves not only various forays into the real life of Banjara and others around him, it also occasions incursions into various kinds of reel life. Whether the story of Banjara is based on the life of Bachchan is a matter hard to ascertain, the novel Show Business presents the Bombay film world. The cosmopolitan English speaking elites have a fascination for Bombay films as is also found in the works of Rushdie.

Cinema as a cultural system - The cinema, in terms of a larger cultural system becomes a potent form of power since it is a product and a producer of Indian national identity. Theatricality in politics and the political in Theatre make the Indian cinema the Indian equivalent of power politics. The narrative of Bollywood cinema and its critique of the narrative of the nation-state gain significance in the metamorphosis of the cinema as a text into history. The cinema as a form of pervasive power is found in both Rushdie's *The Moor's Last Sigh***[I9951** and Tharoor's*Show Business***[1991]** The incorporation of the power of the cinema as a text and as an institution into the nation-state and vice versa is presented in these two films. The national significance of the maternal image in Indian cinema and its subversion, the ideological construction of Indian national identity are all part and parcel of Indian film industry.

Bombay Film Industry - The Bombay film industry is just as pan-Indian as the Indian English fictional world. Bombay films, especially the purely commercial and formula based ones, are also just like that across India. However, while English-speaking people make a thin layer in India, Bollywood fans form a thick crust that enfolds India from Kashmir to Kanyakumari. The media of the two also differ: Bollywood films falling more into the oral tradition of vernacular narrative and Indian English fiction, in spite of all attempts by major Indian writers in English, fall into the high chirographic tradition of elitist narrative. This difference is reflected in the very difference of relationships that English novels and Bollywood formula based films have to the English language. Fluency in English is more often a characteristic of the villain in Bollywood films while Pidgin English is put to largely comic or satirical uses by the hero in India. Indian English novels, however, have a very different attitude to fluency in English, and this applies even to novelists like Rushdie. Indian novels tend to use broken English to depict a flaw in the character even in the plausibly Anglophone court scene of the socially committed narrative like Rohinton Mistry's *A Fine Balance* where the good lawyer speaks correct English and the bad lawyer speaks broken English. The is also noticeable in the very first section of Tharoor's Show Business, where Mohanlal, the spineless director, and Gopi Master, the ludicrous dance director, speak bad English, while Ashok Banjara and the sage and experienced Abha Patel converse in good English.[3]

Indian English novels and Bollywood masala films - Keeping in mind this implicit class contradiction between Indian English novels and Bollywood masala films and the fact that both operate over the same territory of national space, it is not surprising that Indian English novelists often adopt a stance of fascinated repulsion towards Hindi films in general. However, this stance is difficult sustain in the actual world of Hindi films. In *Show Business*, however, Tharoor needs to reduce all the screenplays and films on offer to Bollywood masala films. This reduction is predicated

*Asst. Professor (English) Govt. Sarojini Naidu Girls P.G. College, Bhopal (M.P.) INDIA

upon Tharoor's narrative. It is only thorough this process that Tharoor could narrate Bombay films without abandoning the grounds of his ironic cosmopolitanism and his identifying distance form the other national space of Bombay film fans. Many other kinds of Bombay films, the parallel cinema or even the refined commercial films of film makers like Gulzar or the social comedies of Hrishikesh Mukherjee do not have pan–indianness of Bollywood masala films.

R.K. Narayan's *The Guide* (1958) established his position as one of the foremost writers of the Indian English tradition. The cinematic version of the same has gone on to become a popular classic. The delicate beauty of the heroine and the lyrical grace have immortalized the character of Rosie, but a careful reading of both the linguistic text and the cinematic text would reveal that the sympathy is actually lies with Raju. R.K. Narayan introduces Rosie in the novel through an account of Raju's first meeting with her as narrated to Velan:

She was not very glamorous, if that is what you expect, but she did have a figure, a slight and slender one, beautifully fashioned, eyes that sparkled, a complexion, not white, but dusky, which made her only half visible as if you say her through a film of tender coconut juice.

The cinematic version of the Marco-Rosie-Raju triangle differs significantly from the novel. The time that interposed between the novel and the film saw the rise of the Western feminists movement and a serous challenging of established patriarchal norms. In India the urban, upper-middle class woman was beginning to let her voice be heard in many spheres of public life. The film shows an understanding though superficial of the concerns that were being increasingly voiced by the women's movement. Thus the film is less sympathetic to Marco than the novel. His gleaning bald forehead, his grating metallic voice and his physicality that seems almost a caricature in comparison with the relaxed masculinity of Raju. The impotence of Marco as presented in the novel is transformed into a lustfulness divorced from love. Thus the film goes beyond the textual construction of Rosie's character, in order to place her more firmly within the context of oppression in woman's personal lives.

The textual presentation of the heroine of *The Guide* and the cinematic construction of Rosie offer contrasts. In the film, in order to generate valuable insights into the ways in which the choice of communicative medium influences the processes whereby gender is constructed and transmitted in a way so as to make it seem natural rather than concocted, and perfect rather than arbitrary. The novel and the film refuse to reach beyond the romanticisation of the heroine. Both fail to address the realities of the *'devadasi'* system to which the heroine belongs. The novel could have stressed this devaluation of women rather than concentrating on the other aspects of the story. The novel begins with the sentence: "Raju welcomed the intrusion as something to relieve the loneliness of the place"[6]It ends with, "Raju opened his eyes, looked about, and said, 'Velan, it's raining in the hills. I can feel it coming up under my feet, up my legs' – and with that he sagged down."[7] Thus we find that the narrative begins and end with Raju.

Heat and Dust (1975) is probably Jhabvala's best known novel; it contains her most characteristic techniques like filmic flashback, using a combination of first and third person narrative, and themes like the dangers of sexual passion, Westerners in India, heterosexual woman in relation to homosexual men. It is constructed on the fine line between the comic and the tragic. It is a short novel reverberating with meanings and significations that seem to lie just beneath the surface. *Heat and Dust* is a double-layered novel about tow women in India, fifty years apart. The two plot lines echo and double each other, their similarities and differences revealing and resulting from the similarities and differences between the two woman, one a romantic idealist and one an anti-romantic observer. The stories are linked through their teller: the 'I' of the modern story is also the narrator of this first story, which takes place in 1923. Because of this conceit, the novel may be seen as an exploration of the process of story telling itself. The novel is rich in nature imagery. It contrasts the heat and dust of the plains with the life-giving moisture of the Himalayas. The narrator seems to speak for the contemporary woman who having discarded the old, unsatisfactory patterns of relations between the sexes finds herself facing an emotional void. The novel has interwoven the twin themes of sexuality and colonialism. The narrator is a fictitious creation of the novelist who has forged the old story, the new story and the links between them. This novel, by means of its peculiar structure, raises questions about the act of writing novels, and for that matter of reading them. It is composed to texts, and the narrator's journals. Thus we find as in films, the use of story within the story to plumb a forgotten mystery. In *Heat and Dust* the story is from the woman's perspective, with an emphasis on women's options, expectations and solutions.

Conclusion - Both in filmy and fictional texts, the clash between cultures and generations in the migrant partially fulfilled relation constitutes a specific sub-genre, whose discursive constructs and strategies percolate into easily recognizable features deploying a rather homogeneous corpus of imagined life-histories, that is fictionalized diegetic constructs that coincide imparts with actual life stories but diverge from them by being idealized representation of what might have happened in real experiences. The films and the novels highlight the debate on the distancing viewpoint assumed by the expatriate writers or film directors most of them women, migrants of the first or second generation, with the addition of a select handful of Western authors in the cinematic field. Expatriates are intellectual migrants, people whose position entails a mixed heritage often on the verge of ambiguity, to say the least. Meenakshi

Mukherjee considered this as “exile of the mind” as they live in the postcolonial bourgeoisie cultural frame.

References :-

1. Narayan, R.K. The Guide. Mysore: Indian Thought Publications, 1963. Print.
2. Ray, Satyajit. Introduction to Our Films, Their Films. New Delhi: Orient Longman,1976. Print.
3. Tharoor, Shashi. Riot. New York: Arcade Publishing,2001.Print.
4. Show Business. New Delhi: Viking Publication, 1991.Print.

****

अमृतलाल नागर के उपन्यासों में मुस्लिम पात्रों की चित्रण-कला : सामाजिक और ऐतिहासिक परिदृश्य में

धनीराम अहिरवार *

प्रस्तावना - चरित्र-चित्रण उपन्यास का कथानक के पश्चात् सबसे महत्त्वपूर्ण माना जाने वाला उपकरण या अंग है। बिना पात्र-सर्जना के उपन्यास का कथानक अपूर्ण होता है, क्योंकि पात्र ही वह माध्यम है जिसके द्वारा लेखक अपनी बात को पाठकों तक सीधे पहुँचा पाने में समर्थ हो पाता है। पात्रों के माध्यम से लेखक यह भी दिखाने का प्रयास करता है कि भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में मनुष्य का जीवन किस प्रकार निर्मित, स्थिर, परिवर्तित या विकसित हो पाया है। वास्तव में, उपन्यास मानव-जीवन के चित्रण से सम्बद्ध होता है, अत: उसके चित्रण के आधार पर ही व्यक्ति के व्यक्तित्व, उसके बौद्धिक गुण एवं चारित्रिक गुण का पता चलता है। इसके साथ ही विश्लेषणात्मक एवं नाटकीय शैलियों के आधार पर मानव-चरित्र का विश्लेषण उपन्यास की रोचकता एवं रमणीयता का प्रमुख कारण होता है। उपन्यास में पात्रों की सजीवता, यथार्थता एवं समुचित प्रभाव के साथ चित्रण उसकी सफलता का द्योतक है। अत: उपन्यास में पात्रों का सशक्त, प्रभावशाली एवं आदर्श चित्रण आवश्यक है, क्योंकि यह अन्त तक हमारे चित्त एवं हृदय में अमिट प्रभाव बनाए रखता है। चरित्र-चित्रण की सफलता का माप यह भी है कि पाठक और उपन्यास के पात्र के बीच भावनात्मक तादात्म्य स्थापित हो जाए। इन दोनों की पारस्परिक निकटता ही चरित्र-चित्रण की कला है।

उपन्यास में कथानक की अनुकूलता की सिद्धि के लिए युग के अनुसार विविध वर्ग, जाति या धर्म के पात्रों का प्रणयन होना आवश्यक है, अन्यथा विरोधाभास की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। अमृतलाल नागर आधुनिक युग के युगीन कथाकार रहे हैं। उनके उपन्यासों में पात्रों के चयन में युग-बोध झलकता है। उन्होंने युग और परिस्थितियों के अनुकूल अपने सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासों में पात्रों का गठन किया है। उनके उपन्यासों में विविध पात्र-योजना के अन्तर्गत यत्र-तत्र मुस्लिम पात्रों का भी चित्रण किया गया है, क्योंकि भारत में मुस्लिम जनसंख्या कम नहीं है। यद्यपि मुस्लिम पात्रों के चित्रण में उनकी गहरी पैठ नहीं दिखाई पड़ती, फिर भी उन्होंने उनके चरित्र के साथ पूर्णत: न्याय करने का प्रयास किया है।

चरित्र-चित्रण की प्रमुख विशेषताओं में से एक है- पात्र का व्यक्तित्व, जो उपन्यास में बहुत मायने रखता है। व्यक्तित्व के अन्तर्गत उसका आंतरिक एवं बाह्य व्यक्तित्व दोनों शामिल रहता है। इसमें पात्र का आकार, रंग, रूप, वेश-भूषा, भाव-भंगिमा इत्यादि सम्मिलित रहते हैं, जिसके द्वारा उसकी पहचान होती है। नागर जी के उपन्यास 'शतरंज के मोहरे' में साठ-पैंसठ वर्ष की मुस्लिम स्त्री मुनियाँ के बाह्य व्यक्तित्व का वर्णन इस प्रकार किया गया है, 'सफ़ेद बालों पर मेहँदी, हाथों में मेहँदी, आँखों में सुरमा, टिकली, मिस्सी, कानों में इत्र की फुरहरी, धानी दुपट्टा, गुलाबी कुरता, सर पे झुमका, कानों में करनफूल, नाक में बुलाक़, गले में तौके, बाँहों में जोशन, हाथों में कड़े और चूड़ियाँ, उँगली-उँगली में अँगूठियाँ, अँगूठों में आरसे, पाँवों में कड़े-छड़े झाँझ,-ग़रज की मुनियाँ अपने ख़याल से उम्र के पैसठवें साल में जवानी की देहली चढ़ रही थी।'[1] वर्णन इतना बारीक है कि ऐसा प्रतीत होता है जैसे नागर जी ने अपने समक्ष किसी मुस्लिम स्त्री को बैठाकर उसका चित्र हू-ब-हू खींच दिया हो।

सामाजिक परिदृश्य से देखें तो हमारे समाज में मुस्लिम नारियों पर अनेक पाबंदियाँ दिखाई पड़ती हैं, जिनमें से एक है पर्दा प्रथा; जिसका जिक्र नागर जी के ऐतिहासिक उपन्यास 'शतरंज के मोहरे' में किया गया है। जिस प्रकार हिन्दुओं में घूँघट नारी की लज्जा ढँकने का आवश्यक साधन माना जाता है, ठीक उसी प्रकार मुस्लिम स्त्रियों में भी बुरका पर्दा प्रथा का आवश्यक अंग माना जाता है। बिना इसके मुस्लिम स्त्रियाँ घर के बाहर नहीं निकलतीं। इस उपन्यास में रुस्तमअली के आने पर छोटे भाई फतेहअली की बीवी फौरन घूँघट ले लेती है, 'रुस्तमअली की माँ भी बड़े बेटे के अचानक आगमन से लड़ते-लड़ते थम गयी। फ़तेहअली की बीवी ने फ़ौरन घूँघट खींचा और दौड़ती हुई कोठे के ऊपर चली गयी।'[2] वहीं रुस्तमअली की अम्मा, करीमन बुआ से लड़कर घर से बाहर जाते समय भी बुरका लेना नहीं भूलती, 'उसे फुरसत नहीं है। दुलहिन, खूँटी पर से मेरा बुरका उठा और चल तू भी चल चच्ची के याँ। रुस्तम की अम्मा गुस्से से अधिक हड़बड़ाकर बोलीं।'[3] हिन्दुओं की अपेक्षा मुस्लिमों में बुरका स्त्रियों के लिए आज भी अत्यावश्क रूप से प्रचलन में है, क्योंकि उनका धर्म इसकी आज़ादी नहीं देता। इसके विपरीत नागर जी ने आधुनिक सामाजिक परिप्रेक्ष्य में पर्दा प्रथा का विरोध 'गैहाँबानो' के माध्यम से दिखाया है। 'अमृत और विष' की गैहाँबानो आधुनिक विचारों से लबरेज युवती है। रमेश के प्रति सहज आकर्षण के कारण उसका युवा मन पर्दा करने से हिचकता है। अत: अपने युवा मन से विवश हो, नाना नवाब साहब के विरूद्ध जाकर पर्दा न करने की सकारात्मक पहल करती है, जो निश्चित ही काबिलेतारीफ है, 'बानो अपने-आपको इस समय उन्नत समझ रही थी। उसे पर्दा बेहद काटता था। यों मुसलमानों में अब सैकड़ों लड़कियाँ और औरतें पर्दा नहीं करतीं, मगर बानो मजबूर है, अपने बाप के घर भी मजबूर थी और यहाँ भी। लेकिन आज बानों विद्रोह पर आमादा है। उसका अरमानों घुटा मन अब बाँधे नहीं बँध सकेगा, ये परदा-विद्रोह गोया उसकी पहली निशानी है।'[4]

नागर जी के उपन्यासों में चरित्र-चित्रण के अन्तर्गत पात्रों के बौद्धिक गुणों का भी उल्लेख मिलता है, जो लोक कल्याणकारी एवं प्रभावशाली साबित होता है। इस दृष्टि से 'अमृत और विष' में नवाब साहब का चरित्र ऐसे ही सकारात्मक गुणों से भरपूर दिखाई पड़ता है। रमेश के साथ बातचीत में वे

* सहायक प्राध्यापक (हिंदी) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, टीकमगढ (म.प्र.) भारत

कहते हैं, 'मजहब मेरे नज़दीक एक बड़ी ही पर्सनल (निजी) चीज़ है। मैंने अपनी तमाम उम्र में जहाँ तक बन पड़ा है, नमाज़ कजा नहीं की। रोजों का भी सदा पाबन्द रहा, मगर इसके बाद मैं किसी भी मज़हबी मजलिस में आज तक शरीक़ नहीं हुआ। एक बार जब मैं आजमगढ़ में था, तो कुछ लोग मुझसे मस्जिद बनवाने के लिए चन्दा माँगने आए। मैंने कह दिया कि जनाब नमाज़ घर में पढ़िए। ये मस्जिदें, मन्दिर और गिरजे वगैरह पब्लिक प्लेसेज (जन स्थलों) में, आज के जमाने में नहीं बनवाने चाहिए। पुराने जमाने की बात और थी। आज के जमाने में तो इस जगहों में खुदा के बजाय शैतान रहता है।'[5] इसके अतिरिक्त आधुनिक समाज में बढ़ रहे अनैतिकता के प्रति भी नवाब साहब चिंतित दिखाई पड़ते हैं। इसके लिए वह युवक-युवतियों को संयम बरतने एवं मन को मज़हब की पाबंदी में बाँधे रखने जैसी अच्छी सलाह देते हैं, जो समाज के लिए हितकारी है।

ऐतिहासिक परिदृश्य में देखें तो उस समय के समाज में भी मुस्लिम स्त्रियों की स्थिति अच्छी नहीं थी, खासकर बाँदियों की स्थिति। नवाबों के क्रुर शासनकाल में शाही महलों में बाँदियों की दशा बहुत बुरी थी। उनके लिए जिस प्रकार की सजा का प्रावधान था, वह रोंगटे खड़े कर देने वाला है। नागर जी ने अपने गदरकालीन उपन्यास 'शतरंज के मोहरे' में इसका जिक्र किया है। एक बाँदी को बादशाह सलामत को देखने की इच्छा रखने वाली उसकी सहेली को महल में लाना बहुत भारी पड़ जाता है। पर्दे के पीछे छिपकर खड़ी होने पर नवाब नसीरुद्दीन हैदर उन्हें देख लेता है, 'शाही इशारा हुआ। दोनों बाँदियों के सब कपड़े उतरवाकर विलायती हण्टर की मार शुरू हुई। एक बाँदी का बोल फूटा। उसने बतलाया की दूसरी उसकी सहेली है, कानपुर से आयी है। बादशाह सलामत को देखने की बड़ी इच्छा थी सो वह उसे रसूलन बाँदी की एवज़ में ले आयीं। .... मगर नसीरुद्दीन को फिर भी तसल्ली न हुई। सामन्ती शासन में बन्दी स्त्रियों और पुरुषों के मर्म-स्थानों में लाल मिर्च भरना अथवा यदि चरम दण्ड देना हो तो मेख ठोकना ख़ास सज़ाओं में से था। दण्डस्वरूप स्त्रियों और नवयुवक पुरुषों पर सामूहिक बलात्कार करवाना भी आम चलन में शामिल था।'[6]

नागर जी के उपन्यासों में मुस्लिम स्त्रियों के चरित्र-चित्रण के संदर्भ में उनके वासनात्मक, शोषित एवं षड्यंत्रकारिणी इत्यादि रूपों के भी दर्शन होते हैं। 'शतरंज के मोहरे' में 'दुलारी' एवं 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' में 'बेगम समरू' का चरित्र वासनात्मक एवं चरित्रहीन है। दुलारी रुस्तमअली की विवाहिता होते हुए भी अपने देवरों से आँखे लड़ाती है, 'यों देवर और भावज एक ही उम्र के थे, बल्कि वारिस चार महीने बड़ा ही था; लेकिन दुलारी खुली ख़ेली थी, दो बच्चों की माँ थी और वारिस अभी तक अपने आपको मर्द महसूस करने की चाहत लिये घुट रहा था। पिछले पन्द्रह-बीस दिनों से वह घुटन बड़ी तेज़ सनसनाहट के साथ नये जोश का सैलाब बनकर उमड़ पड़ी है।'[7] वहीं दूसरी तरफ वह अपने पड़ोसी नईमउल्ला से भी प्रेम करती थी। अपने प्रेमी से मिलने हेतु वह सुरंग भी खुदवाती है, जहाँ वह उससे छिपकर मिलती थी। दुलारी के इस रहस्यमय चरित्र के लिए उसकी सास उसके लिए 'जादुगरनी' शब्द का प्रयोग करती है। 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' में बेगम समरू का चरित्र भी रहस्यात्मकता के आवरण में लिपटा हुआ है। वह हुस्न के जादू एवं प्रेम का स्वांग रचकर एक तरफ जहाँ अपने शौहर नवाब समरू को विश्वास पात्र बनाए रहती है, तो वहीं दूसरी तरफ राजनीतिक महत्त्वकांक्षाओं की आड़ में सेनापति सर टॉमस एवं लवसूल नामक नवयुवक के साथ प्रणय-क्रीड़ाएँ भी करती है, जो अंत में उसके चारित्रिक पतन का कारण बनता है, 'महबूबा को लगा कि यह उसकी सहेली-मालकिन का चारित्रिक पतन है। बेगम का टॉमस से संबंध होने पर उसे यह महसूस नहीं हुआ था क्योंकि बेगम तब भी बेगम थी, सबकी मालकिन, अपने प्रेमी टॉमस की भी। लेकिन आज उसे लगा कि उसकी सखी-स्वामिनी अब लवसूल की विजित दासी हो गई है।'[8]

पुरूषप्रधान समाज में नारी हर तरफ शोषण का शिकार होती है, चाहे वह किसी भी वर्ग, समुदाय या धर्म से संबंध क्यों न रखती हो। हर रूप में उसका शोषण अवश्य दिखाई पड़ता है। 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' की 'बेगम समरू' भी पुरूषप्रधान समाज के शोषण का शिकार है। उपन्यास के प्रारम्भ में ही उसका शोषित रूप सामने आता है। बचपन में वह बशीर खाँ के पिता द्वारा खरीदी जाती है और बाद में बड़ी होने पर बशीर खाँ से सच्चा प्यार करने लगती है, किन्तु वह उसे दस हजार अशर्फियों में नवाब समरू को बेच देता है। प्रेम में धोखा खायी मुन्नी उर्फ दिलाराम उर्फ बेगम समरू की स्थिति दयनीय हो जाती है। उसकी आँखों में आँसुओं का सागर उमड़ पड़ता है। वशीर खाँ के विवाह के आश्वासन एवं विश्वास पर ही वह अपना सबकुछ बशीर खाँ को सौंप देती है। स्वयं बेगम समरू के शब्दों में उसका मर्मस्पर्शी चित्रण द्रष्टव्य है, 'मैंने तुम्हें अपना बेशकीमत दिल दिया था। दिल ही नहीं, तुम्हारे फरेब में आकर परसों रात मैं तुम्हें अपनी वह सबसे बड़ी दौलत भी सौंप चुकी जो औरत किसी को ज़िन्दगी में सिर्फ एक बार ही दे सकती है।'[9] यहाँ 'बेगम समरू' के लिए प्रयुक्त विविध नाम परिस्थितियों की उपज है।

नागर जी के ऐतिहासिक उपन्यासों में पुरूषों की अपेक्षा मुस्लिम स्त्रियों को अधिक प्रभावशाली चित्रित किया गया है। 'शतरंज के मोहरे' की 'बादशाहबेग़म' एवं दुलारी और 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' की 'बेगम समरू' ऐसी प्रमुख मुस्लिम पात्राएँ हैं जिनके आगे पुरूष भी कठपुतली के समान प्रतीत होते हैं। पूरे उपन्यास में इन तीनों पात्राओं का ही डंका बजता है। ये चरित्र अत्यंत महत्त्वाकांक्षी, घोर अहंकारिणी एवं षड्यंत्रकारिणी है जो अपने सौंदर्य एवं आँसुओं के बल पर अपने महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति करती हैं। 'शतरंज के मोहरे' की 'बादशाह बेगम' का चरित्र राजनीतिक षड्यंत्रों से युक्त है, जो शासन पर अपना अधिकार बनाए रखने के लिए पति बादशाह गाजीउद्दीन हैदर, वजीर आगामीर एवं नवाब नसीरुद्दीन हैदर को अपने अंकुश में रखना चाहती है। इसके लिए वह बादशाह के विश्वासपात्र आगामीर के खिलाफ चक्रव्यूह रचती है। दूसरी तरफ नसीरुद्दीन को भी भोग-विलास का आदी बना अपनी ओर करने का प्रयत्न करती है, 'बादशाहबेग़म ने नसीरुद्दीन के न जाने कितने-कितने लाड़ लड़ाये थे, नसीरुद्दीन बादशाहबेग़म की महत्त्वाकांक्षा का प्रतीक था। उसके सहारे वह आग़ामीर से लड़ी, अपने पति गाजीउद्दीन से लड़ी-हर एक के दर्प को अपने अदमनीय अहं के सामने निस्तेज कर हज़ार आपदाएँ सहते हुए भी बादशाहबेग़म इसी एक सपने को लेकर आगे बढ़ती रही थीं कि नसीरुद्दीन जब बादशाह होगा तब एक-एक से बदले चुका लूँगी, जी के हौसले पूरे कर लूँगी। उसी नसीरुद्दीन से फिर उनकी ठन गयी और ऐसी ठनी कि एक का अन्त हो गया। और अब दूसरे का, स्वयं बादशाहबेग़म का अन्त भी निकट आ पहुँचा था।'[10] दुलारी इस उपन्यास की प्रमुख षड्यंत्रकारिणी पात्रों में से एक है। वह अपने सौंदर्य के अस्त्र से सबको घायल करती है। वह अपनी कूटनीतिक चालों से नसीरुद्दीन को बादशाह बेग़म की नजरों से बचाकर, उसे उसके पिता से मिलाकर, युवराज की लगाम अपने हाथ में ले लेती है और नसीरुद्दीन के नवाब बनने पर वह स्वयं मलिका-ए-जमानियाँ के पद पर प्रतिष्ठित होती है, 'समग्रत: उसका चरित्र भयानक घात-प्रतिघातों से ग्रस्त चरित्र है। उसमें सौन्दर्य है। किन्तु वह बदचलन है। वह निर्धन है फिर भी महत्त्वाकांक्षिणी, वह अनपढ़ है

फिर भी राजनीतिक दाँवपेंच तथा कूटनीति में बड़े-बड़े उस्तादों को भी परास्त करने वाली है। उसके चरित्र की यही भूमिकाएँ उसे नाना संघर्षों में डालती है और उनमें डूबते-उतराते सफलता की बड़ी से बड़ी सीमा का स्पर्श करते हुए भी अन्ततः वह परिस्थितियों के महासागर में विलीन हो जाती है।'[11] इसी प्रकार 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' की 'बेगम समरू' का चरित्र भी षड्यंत्रकारी एवं रहस्यमयी प्रतीत होता है। उसका चरित्र विवादास्पद एवं किंवदंतियों से भरा है। वह सर टॉमस से मिलकर नवाब समरू के विरूद्ध षड्यंत्र रचकर हिन्दुस्तान की मलिका बनना चाहती है। इसके लिए वह नवाब समरू की आत्महत्या करने को विवश भी होती है। अन्ततः यह तीनों पात्रायें उपन्यास के अन्त तक आते-आते पतन का शिकार होतीं हैं, क्योंकि इनका चरित्र समाज के विरूद्ध दिखाई पड़ता है जो केवल भोग-विलास एवं अपने स्वार्थ के लिए ही लालायित रहती है।

विश्लेषणात्मक दृष्टि से देखें तो नागर जी के उपन्यासों में इस शैली का प्रयोग भी दिखाई पड़ता है। इसके माध्यम से पात्रों के भावों, मनोवृत्तियों एवं विचारों का विश्लेषण किया जाता है। नागर जी के उपन्यास 'अमृत और विष' में मुस्लिम पात्रा गैहाँबानो के मन का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। रमेश और रानी विवाह के पश्चात् गैहाँबानो के घर भाड़ेदार बनकर आते हैं। तब गैहाँबानो का युवा मन रमेश के प्रति आकर्षित हो उठता है। एक रात रानी की अनुपस्थिति में उसका मन रमेश से मिलने के लिए तड़प उठता है। वह जाने के लिए निकलती है, परन्तु उसके मन में एकाएक अपने नैतिकता संबंधी मूल्यों को लेकर अन्तर्द्धन्द्ध शुरू हो जाता है जो उसे ऐसा करने से रोकते हैं और अंत में वह अपने मन से हारकर वापस लौट आती है। नागर जी ने इसका सजीव चित्र अपने उपन्यास में उपस्थित किया है जो द्रष्टव्य है, '.......... कहाँ जा रही है बानो, ये तू क्या कर रही है। मान ले कि तेरा सोचा हुआ न हो और तू खुद ही फँस जाय! बानो के पाँव बँध जाते हैं। वह वहीं की वहीं ठिठक कर रह गयी, उल्टे पाँवों लौट आयी। .... 'या खुदा, मुझे राह दिखला, या रसूल मेरी बिगड़ी बना। मेरे गुनाहों को माफ़ करा'[12] इस प्रकार वह अन्त में अपने चित्तावृत्तियों का दमन कर लेती है।

इसके साथ ही नागर जी के उपन्यासों में नाटकीय शैली का भी सफल प्रयोग दिखाई पड़ता है। इस शैली के माध्यम से लेखक ने पात्रों की मानसिकता का उल्लेख किया है। 'शतरंज के मोहरे' के संदर्भ में यहाँ 'रुस्तमअली' के चरित्र का स्पष्टीकरण दिया गया है। रुस्तम जब अपने मित्रों के साथ घर लौट रहा होता है, तब बातचीत के दौरान यह स्पष्ट हो जाता है कि लड़कियों का कोई मूल्य नहीं। एक बूरे रिवाज के कारण किस प्रकार बेरहमी से उनका जीवन नष्ट कर दिया जाता है। बातचीत का अंश द्रष्टव्य है, 'और तुम्हारे कितने बच्चे हैं रुस्तम?'

'दो। एक लड़का है तीन साल का, और लड़की क़रीब डेढ़ बरस की होगी।'

'लड़की की तो अभी सूरत भी नहीं देखी होगी तुमने।'

'अमाँ लड़कियों को क्या देखना।' घसीटे ख़ाँ ने कहा।

........'कम्बख़्त क्या रिवाज़ है उनमें भी, पैदा होते ही लड़कियों को मार डालते हैं।'

'अमाँ अच्छा ही करते हैं। औरत से बढ़कर बदज़ात कोई नहीं, ये नागिनें होती हैं जितनी ख़ूबसूरत उतनी ही ज़हरीली भी।'[13] उपर्युक्त बातचीत से पुरूषवादी मानसिकता का घिनौना चेहरा सामने आता है। इससे स्पष्ट है कि स्त्रियों के प्रति पुरूष की मानसिकता अच्छी नहीं है।

निष्कर्षतः नागर जी के उपन्यासों में सामाजिक और ऐतिहासिक परिदृश्य में किये गए मुस्लिम पात्रों के चित्रण में, चरित्र-चित्रण कला की लगभग सभी विशिष्टताओं का प्रणयन सफलतापूर्वक हुआ है। इस चित्रण से मुस्लिम पात्रों की स्थिति का भी स्पष्ट उल्लेख मिल जाता है। उनके उपन्यासों में युग और सामाजिक परिस्थितियों के अनुरूप पात्रों के नाम, वेश-भूषा, बोली एवं मानसिक स्थिति का उल्लेख मिलता है। उन्होंने मुस्लिम पात्रों के संदर्भ में सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों विचारों वाले पात्रों का चित्रण कर, यह दर्शाने का प्रयास किया है कि समाज में हमेशा सच्चाई एवं अच्छाई की ही जीत होती है। उनके उपन्यासों में गठित विविध मुस्लिम पात्रों का चित्रण सजीव, आदर्श और यथार्थ के निकट प्रतित होता है, इसलिए वह कहीं-न-कहीं पाठकों पर अपनी छाप अवश्य छोड़ता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अमृतलाल नागर, शतरंज के मोहरे, पृ. 34, 2013, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली।
2. वही, पृ. 13
3. वही, पृ. 15
4. अमृतलाल नागर, अमृत और विष, पृ. 356, 2013, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
5. वही, पृ. 350
6. अमृतलाल नागर, शतरंज के मोहरे, पृ. 258, 2013, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली।
7. वही, पृ. 15
8. अमृतलाल नागर, सात घूंघट वाला मुखड़ा, विज्ञप्ति, पृ. 87, 2011, राजपाल एण्ड सण्ज, दिल्ली।
9. वही, पृ. 12
10. अमृतलाल नागर, शतरंज के मोहरे, पृ. 296, 2013, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली।
11. प्रकाशचन्द्र मिश्र, अमृतलाल नागर का उपन्यास साहित्य, पृ. 189, साहित्य भारती, कानपुर।
12. अमृतलाल नागर, अमृत और विष, पृ. 354, 2013, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
13. अमृतलाल नागर, शतरंज के मोहरे, पृ. 11, 2013, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली।

****

मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व के लक्ष्य एवं प्राप्तियों का तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. लक्ष्मीनारायण शर्मा *

प्रस्तावना – अर्थशास्त्र में जो स्थान उत्पादन का है ठीक वही स्थान राजस्व या लोक वित्त में सार्वजनिक आय का है। कारण यह है कि जिस प्रकार उपभोग के लिये उत्पादन आवश्यक है उसी प्रकार सार्वजनिक व्यय के लिये आय आवश्यक है। सार्वजनिक आय के स्त्रोत सामान्यत: लोगों को कष्टदायी होते है और उन्हें प्रदान करने के लिये त्याग करना होता है। नागरिक त्याग इसलिये करते है कि उन्हें सार्वजनिक व्यय से सामूहिक लाभ प्राप्त होने की आशा रहती है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि वर्तमान में राज्य के कार्य क्षेत्र में तेजी से वृद्धि हो रही है और परिणामस्वरुप सरकारी व्यय की राषि निरंतर बढ़ती जा रही है। यही कारण है कि सार्वजनिक आय प्राप्त करने के स्त्रोतों में भी विस्तार हो गया है। अब सरकारें अनेक प्रकार से अपने आय के स्त्रोतों को बढ़ाने में लगी है। आय के स्त्रोतों में (अ) प्रत्यक्ष आय जिसमें सार्वजनिक उद्योगों, उपहारों एवं जप्तियों से प्राप्त होती है। (ब) व्युत्पन्न आय जिसमें सरकार के करों, शुल्कों, जुर्माना आदि से प्राप्त होती है (स) प्रत्याशित आय जिसमें राजकोशीय विपत्रों एवं अन्य प्रकार के ऋणों से प्राप्त होती है। प्रो. सैलिंगमैन के अनुसार सार्वजनिक आय के तीन आधार बताये गये है। (अ) अनिवार्य आय जिसमें सरकार के कर, दण्ड एवं अन्य सार्वजनिक सम्पत्तियों से प्राप्त होती है। (ब) नि: शुल्क आय जिसमें राज्य को उपहार स्वरुप प्राप्त होती है। (स) अनुबंधीय आय जिसमें सरकारी उद्योगों, भूमि व खानों से प्राप्त होती है जबकि प्रो. टेलर के अनुसार सार्वजिनक आय में (अ) कर (ब) प्रशासनिक आय (स) व्यापारिक आय (द) अनुदान व उपहार सम्मिलित है। प्रो. डाल्टन के अनुसार सार्वजनिक आय में (1) कर (2) ऋण (3) सार्वजनिक सम्पत्ति से आय (4) फीस एवं अन्य भुगतान (5) सार्वजनिक उपक्रमों से प्राप्त आय (6) फीस एवं अन्य भुगतान (7) स्वेच्छा से दिये गये उपहार (8) विशेष निर्धारण से प्राप्त होने वाली आय (9) सार्वजनिक उद्योगों से आय (10) न्यायालय द्वारा लगाये गये दण्ड से आय (11) उपहार एवं क्षतिपूर्ति शामिल है। भारतीय रिजर्व बैंक के अनुसार सार्वजनिक आय के स्त्रोतों में (अ) कर संबंधी आय में (1) प्रत्यक्ष कर जिसमें आयकर, सम्पत्ति कर व उपहार कर शामिल है (2) अप्रत्यक्ष कर जिसमें उपभोग कर, उत्पादन कर, बिक्री कर आदि शामिल है (ब) गैर कर संबंधी आय में लोक सम्पत्ति से आय, उपहार, अनुदान, वस्तुओं एवं सेवाओं के विक्रय आदि शामिल है।

शोध का उद्देश्य – प्रस्तुत शोध पत्र में यह ज्ञात करना है कि वर्ष 2012-13 से 2014-15 में राजस्व के क्या और कितने लक्ष्य थे और वास्तविक रुप से कितने प्रतिशत लक्ष्यों की प्राप्ति हो पायी है। राजस्व के विभिन्न स्त्रोतों में लक्ष्य की प्राप्ति शत-प्रतिशत हो पायी है या नही। राजस्व प्राप्ति लक्ष्य के अधिक हुई है या कम तथा यह भी ज्ञात करना है कि लक्ष्य से शत-प्रतिशत से अधिक प्राप्तियों के क्या कारण है तथा लक्ष्य से कम प्राप्तियों के क्या कारण है। यह ज्ञात करना शोध का मुख्य उद्देश्य है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध पत्र में म.प्र. सरकार के प्रकाषित द्धितीयक समंकों का अध्ययन किया गया है तथा प्रस्तुत समंकों का चित्र द्धारा प्रदर्शन भी किया गया है ताकि शोध के निष्कर्षो को सरल रुप से समझा जा सके।

शोध की सीमाऐं – प्रस्तुत शोध पत्र में म.प्र. सरकार के राजस्व के लक्ष्य एवं उनकी प्राप्तियाँ वर्ष 2012-13 से 2014-15 तक के प्रकाशित समंकों का ही अध्ययन किया गया है।

शोध व्याख्या

तालिका क्रं. 1 (अन्तिम पृष्ठ पर देखे)

म.प्र. सरकार के राजस्व लक्ष्यों का निर्धारण एवं राजस्व लक्ष्यों की प्राप्तियों का तुलनात्मक अध्ययन तालिका क्रं. 1 के निष्कर्ष इस प्रकार है :-

1. कुल प्राप्तियों में वर्ष 2012-13 में लक्ष्य की 98.6 प्रतिशत प्राप्ति हुई तथा वर्ष 2013-14 में लक्ष्य की 94 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार 2012-13 की तुलना में 2013-14 में लक्ष्य प्राप्ति में 4.6 प्रतिशत की कमी हुई जो चिंता का विषय है। वर्ष 2014-15 में लक्ष्य की 91.6 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार वर्ष 2013-14 की तुलना में 2014-15 में 2.4 प्रतिशत लक्ष्य की प्राप्ति में कमी हुई जो विशेष चिंता का कारण है। इस प्रकार राजस्व लक्ष्य की प्राप्ति में लगातार गिरावट चिंता का कारण है।
2. राज्य कर में वर्ष 2012-13 में लक्ष्य का 108 प्रतिशत प्राप्ति हुई तथा वर्ष 2013-14 में लक्ष्य का 100.5 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार 2012-13 की तुलना में 2013-14 में लक्ष्य प्राप्ति में 7.5 प्रतिशत की कमी हुई जो चिंता का विषय है। वर्ष 2014-15 में लक्ष्य का 93.8 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार वर्ष 2013-14 की तुलना में 2014-15 में 6.7 प्रतिशत लक्ष्य की प्राप्ति में कमी हुई जो विशेष चिंता का कारण है। इस प्रकार राजस्व लक्ष्य की प्राप्ति में राज्य करो में लगातार गिरावट चिंता का कारण है।
3. केन्द्रीय करों में हिस्सा में वर्ष 2012-13 में लक्ष्य की 9.6 प्रतिशत प्राप्ति हुई तथा वर्ष 2013-14 में लक्ष्य की 96 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार 2012-13 की तुलना में 2013-14 में लक्ष्य प्राप्ति में 00 प्रतिशत की कमी हुई। वर्ष 2014-15 में लक्ष्य की 87 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार वर्ष 2013-14 की तुलना में 2014-15 में 09 प्रतिशत लक्ष्य की प्राप्ति में कमी हुई जो विशेष चिंता का कारण है। इस प्रकार राजस्व लक्ष्य की प्राप्ति में केन्द्रीय करों में हिस्से में लगातार गिरावट चिंता का कारण है।

* प्रभारी प्राचार्य (प्राध्यापक वाणिज्य) स्वामी विवेकानन्द शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

4. कर भिन्न राजस्व में वर्ष 2012-13 में लक्ष्य का 95.5 प्रतिशत प्राप्ति हुई तथा वर्ष 2013-14 में लक्ष्य की 101.6 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार 2012-13 की तुलना में 2013-14 में लक्ष्य प्राप्ति में 6.1 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वर्ष 2014-15 में लक्ष्य की 153.5 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार वर्ष 2013-14 की तुलना में 2014-15 में 51.9 प्रतिशत लक्ष्य की प्राप्ति में वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है। इस प्रकार राजस्व लक्ष्य की प्राप्ति में कर भिन्न राजस्व में लगातार वृद्धि शुभ संकेत है।
5. केन्द्र से सहायता अनुदान में वर्ष 2012-13 में लक्ष्य की 95 प्रतिशत प्राप्ति हुई तथा वर्ष 2013-14 में लक्ष्य की 78.8 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार 2012-13 की तुलना में 2013-14 में लक्ष्य प्राप्ति में 16.2 प्रतिशत की कमी हुई जो चिंता का विषय है। वर्ष 2014-15 में लक्ष्य की 58.5 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार वर्ष 2013-14 की तुलना में 2014-15 में 20.3 प्रतिशत लक्ष्य की प्राप्ति में कमी हुई जो विशेष चिंता का कारण है। इस प्रकार राजस्व लक्ष्य की प्राप्ति में केन्द्र से सहायता अनुदान में लगातार गिरावट चिंता का कारण है।
6. उधार एवं अग्रिम की वसूली में वर्ष 2012-13 में लक्ष्य की 74 प्रतिशत प्राप्ति हुई तथा वर्ष 2013-14 में लक्ष्य की 105.6 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार 2012-13 की तुलना में 2013-14 में लक्ष्य प्राप्ति में 31.6 प्रतिशत की वृद्धि हुई । वर्ष 2014-15 में लक्ष्य की 5569 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार वर्ष 2013-14 की तुलना में 2014-15 में 5463.4 प्रतिशत लक्ष्य की प्राप्ति में वृद्धि हुई जो विशेष चिंता का कारण है। इस प्रकार राजस्व लक्ष्य की प्राप्ति में उधार एवं अग्रिम की वसूली में लगातार वृद्धि शुभ संकेत है।
7. शुद्ध लोक ऋण में वर्ष 2012-13 में लक्ष्य की 55 प्रतिशत प्राप्ति हुई तथा वर्ष 2013-14 में लक्ष्य की 46.7 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार 2012-13 की तुलना में 2013-14 में लक्ष्य प्राप्ति में 8.3 प्रतिशत की कमी हुई जो चिंता का विषय है। वर्ष 2014-15 में लक्ष्य की 94 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार वर्ष 2013-14 की तुलना में 2014-15 में 47.3 प्रतिशत लक्ष्य की प्राप्ति में वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है।
8. लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियों में वर्ष 2012-13 में लक्ष्य की 617.6 प्रतिशत प्राप्ति हुई तथा वर्ष 2013-14 में लक्ष्य की 1062 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार 2012-13 की तुलना में 2013-14 में लक्ष्य प्राप्ति में 444.4 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो शुभ संकेत है। वर्ष 2014-15 में लक्ष्य की 56 प्रतिशत प्राप्ति हुई। इस प्रकार वर्ष 2013-14 की तुलना में 2014-15 में 1006 प्रतिशत लक्ष्य की प्राप्ति में कमी हुई जो चिंता का विषय है।

शोध के परिणाम :

1. म.प्र. सरकार के राजस्व के लक्ष्यों की प्राप्तियों का प्रतिशत निरन्तर कम हो रहा है जो शुभ संकेत नहीं है।
2. कुल प्राप्तियों में राज्य कर के लक्ष्यों की प्राप्तियों का प्रतिशत भी निरन्तर कम हो रहा है जो शुभ संकेत नहीं है।
3. कुल प्राप्तियषें में केन्द्रीय करों में हिस्सा के लक्ष्य प्राप्तियों का प्रतिशत भी निरन्तर कम हो रहा है जो शुभ संकेत नही है।
4. कुल प्राप्तियों में कर भिन्न राजस्व के लक्ष्य प्राप्तियों का प्रतिशत निरन्तर बढ़ा है जो शुभ संकेत है।
5. कुल प्राप्तियों में केन्द्र से सहायता अनुदान के लक्ष्य प्राप्ति के प्रतिशत में भारी गिरावट आई है जो चिंतनीय है।
6. कुल प्राप्तियों मे उधार एवं अग्रिम की वसूली के लक्ष्य प्राप्तियों का प्रतिशत निरन्तर वृद्धि शुभ संकेत है।
7. कुल प्राप्तियों में शुद्ध लोक ऋण के लक्ष्य प्राप्ति के प्रतिशत में मिश्रित सफलता प्राप्त हुई है।
8. कुल प्राप्तियों में लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियों की स्थिति संतोषजनक है।

शोध के सुझाव :

1. राजस्व के लक्ष्य (बजट अनुमान) निर्धारित करते समय पूर्व के वर्षो में लक्ष्य प्राप्ति के प्रतिशत को ध्यान में रखकर निर्धारित करना चाहिए।
2. राजस्व लक्ष्य की शत-प्रतिशत प्राप्ति हेतु सूक्ष्म रुप में प्रत्येक मद का अध्ययन कर, उसमें आने वाली समस्याओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए।
3. राजस्व के लक्ष्य प्राप्तियों में राज्य कर एवं केन्द्रीय करों में हिस्से को सबसे ज्यादा महत्व दिया जाना चाहिए।
4. कर प्रणाली का सरलीकरण किया जाना चाहिए।
5. ईमानदार करदाता को पुरुस्कृत किया जाना चाहिए।
6. केन्द्र से सहायता में केन्द्र व राज्य के संबंधों को उत्कृष्ट कर अधिक से अधिक सहायता प्राप्त की जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. राजस्व - जे.सी. वार्ष्णेय
2. राजस्व एवं रोजगार सिद्धांत - डॉ.वी.सी. सिन्हा
3. समष्टिगत अर्थशास्त्र एवं राजस्व - डॉ. वी.सी. सिन्हा
4. लोकवित्त के सिद्धांत एवं व्यवहार - डॉ.डी.एन. गुर्टू
5. व्यावसायिक वित्त - डॉ. आर.एम. कुलश्रेष्ठ
6. लोक अर्थशास्त्र - डॉ. माहेश्वरी, डॉ. गुप्ता
7. अंतर्राष्ट्रीय अर्थशास्त्र एवं राजस्व -डॉ. वी.पी. सिन्हा
8. नवीन शोध संसार (यू.जी.सी. द्वारा स्वीकृत अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका) ISSN 2320-8767
9. द्विव्य शोध समीक्षा (अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका) ISSN 2394-3807
10. Public Finance - S.N. Chand
11. Research in Finance - Abdul Rahman
12. www.finance.raj.gov.in.

तालिका क्रं. 1 : मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व लक्ष्य एवं प्राप्तियों का तुलनात्मक अध्ययन **(रू करोड़ में)**

क्रं.	मद	वर्ष 2012-13			वर्ष 2013-14			वर्ष 2014-15		
		बजट अनुमान	लेखा बजट	प्रतिशत	बजट अनुमान	लेखा बजट	प्रतिशत	बजट अनुमान	लेखा बजट	प्रतिशत
1	कुल प्राप्तियाँ	80000	78963	98.6	92020	86198	94	116582	106813	91.6
2	राज्य कर	28312	30582	108	33382	33552	100.5	38990	36567	93.8
3	केंद्रीय करो में हिस्सा	21604	20805	96	23694	22715	96	27681	24107	87
4	कर भिन्न राजस्व	7327	7000	95.5	7583	7705	101.6	6759	10375	153.5
5	केंद्र से सहायता अनुदान	12670	12040	95	14945	11777	78.8	30063	17591	58.5
6	उधार एवं अग्रिम की वसूली	99	73	74	125	132	105.6	122	6794	5569
7.	शुद्ध लोक ऋण	9460	5207	55	11841	5536	46.7	10776	10148	94
8.	लोक लेखों से शुद्ध प्राप्तियाँ	527	3255	617.6	450	4781	1062	2191	1231	56

स्त्रोत: बजट अनुमान वर्ष 2012-13, 2013-14, 2014-15

मध्यप्रदेश सरकार के राजस्व लक्ष्य एवं प्राप्तियों का दण्ड चित्र द्वारा प्रदर्शन

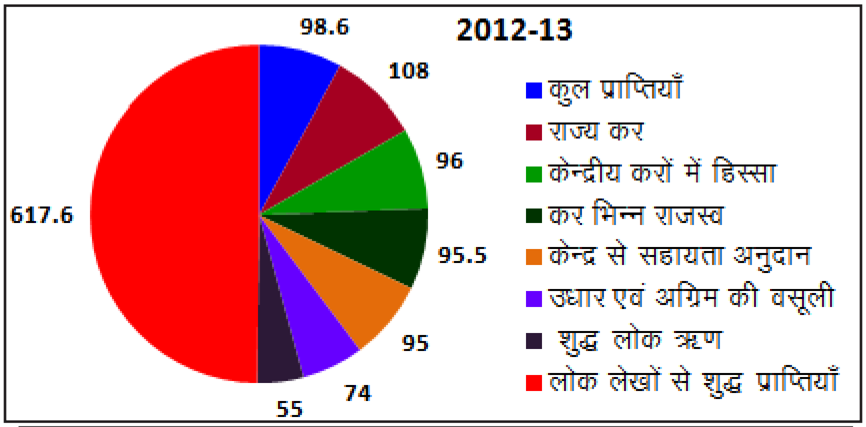

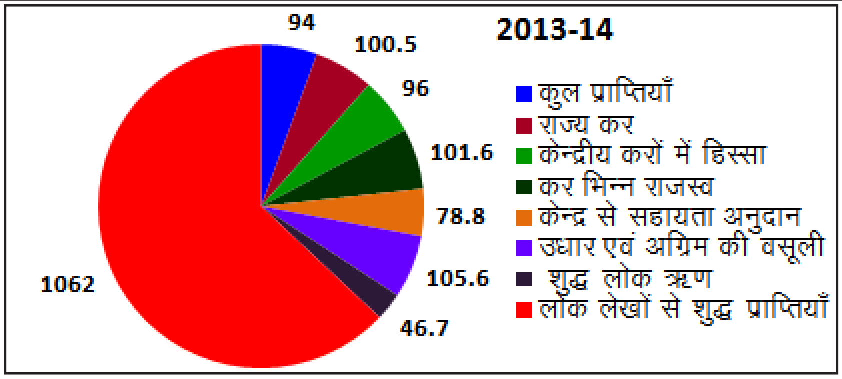

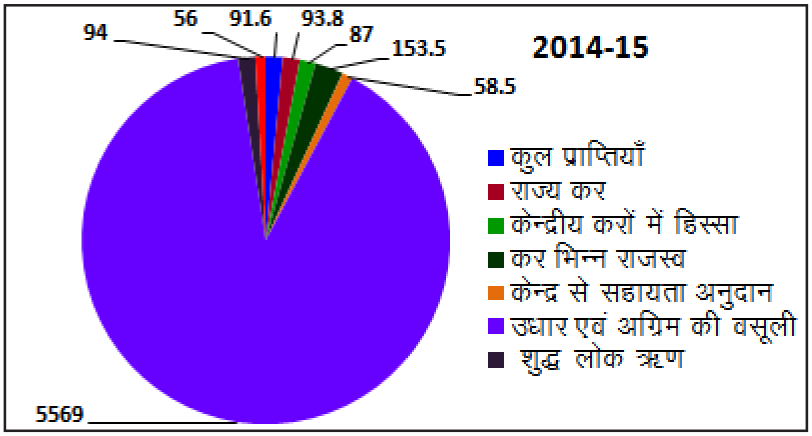

****

भारत में कृषि विपणन

डॉ. पी. डी. ज्ञानानी*

प्रस्तावना – कृषि विपणन का अर्थ – 'कृषि विपणन के अर्थ उन सभी कियाओं से लगाया जाता है जिनका सम्बन्ध कृषि उत्पादन का कृषक के यहाँ से अन्तिम उपभोक्ता तक पहुंचाने में किया जाता है।' इन क्रियाओं में कृषि उपज को एकत्रित करना, उनका श्रेणीकरण एवं प्रमापीकरण करना, उन्हें बेचने के लिए मण्डियों व बाजारों तक ले जाना तथा उसकी बिक्री करना भी शामिल है।

भारत में कृषि विपणन की वर्तमान व्यवस्था – वर्तमान समय में कृषि उपज के कृषि विपणन के लिए निम्न व्यवस्था पायी जाती है :

(1) गाँवों में बिक्री – किसान अपनी उत्पत्ति का बहुत बड़ा भाग गाँवों में ही साहूकारों, महाजनों, बनियों, घूमते-फिरते व्यापारियों, पैठों व हाटों में ही बेच लेते हैं। किसान द्वारा गाँवों में ही बिक्री इन कारणों से कर दी जाती हैं – (i) गाँवों के साहूकार या बनिये का ऋणी होना, (ii) पहले से ही विक्रय का सौदा कर लेना, (iii) धन की तुरन्त आवश्यकता होना, (iv) परिवहनसाधनों का अभाव, (v) बेचने योग्य आधिक्य की मात्रा कम होना, (vi) मण्डियों के मूल्य की जानकारी का अभाव, (vii) मण्डियों की कुरीतियों से बचाना। लेकिन परिवहन के साधनों के विकास, नियमित मण्डियों में वृद्धि, सहकारी विपणन की जानकारी, गाँव विकास एवं चेतना तथा साहूकारों के प्रभाव में कमी होने से कृषि वस्तुओं की गाँवों में बिक्री में कुछ कमी आ गयी है।

(2) मेलों में बिक्री – भारत मेलों के लिए सुप्रसिद्ध है। यहाँ लगभग 1,700 मेले पदार्थ व जानवरों के लगते हैं जिनमें लगभग 40 प्रतिशत मेले कृषि वस्तुओं के होते हैं जो मुख्य रूप से बिहार व उड़ीसा में पाये जाते हैं। मेलों के स्थान के आस-पास के कृषक इन्हीं में अपनी उत्पत्ति को बेच लेते हैं।

(3) मण्डियों में बिक्री – मण्डियों से अर्थ उन स्थानों से है जहाँ थोक मात्रा में कृषि वस्तुओं का क्रय एवं विक्रय होता है। यह मण्डियाँ शहरी क्षेत्रों या कस्बों में होती है। इस समय यह मण्डियाँ दो प्रकार की हैं – (i) अनियमित मण्डी, (ii) नियमित मण्डी।

अनियमित मण्डियों के बिक्री के नियम निश्चित नहीं होते तथा बिक्री दलाल के माध्यम से होती है। किसान अपनी गाड़ी दुकानदार के यहाँ खड़ी करता है जिसको आढ़तिया कहते हैं। यह आढ़तिया दलालों के माध्यम से उत्पत्ति को बेच देता है जिसकी तुलाई तोला द्वारा की जाती है। यह आढ़तिया बिक्री मूल्य में से अपनी आढ़त व अन्य खर्चे काटकर शेष राशि का भुगतान किसान को कर देता है। जब तक उत्पत्ति नहीं बिकती है तब तक वह आढ़तियों के यहाँ रखी रहती है। इस बीच यदि किसान को धन की आवश्यकता होती है तो उसको आढ़तियों के द्वारा कुछ धन दे दिया जाता है जिसको अन्त में हिसाब करते समय काट लिया जाता है।

नियमित बाजारों की स्थापना राज्य सरकार के नियमों के अनुसार होती है जहाँ पर उत्पत्ति बेचने के निर्धारित नियम होते हैं। सामान्यतया यहाँ किसान से कुछ भी व्यय वसूल नहीं किया जाता है। सारे व्यय क्रेता से ही वसूल किये जाते हैं। किसान यहाँ पर अपनी उत्पत्ति लाकर टिन शेडो में रख देता है जहाँ उसकी बिक्री सामान्यतया नीलामी के आधार पर होती है तथा बिक्री मूल्य उत्पत्ति उठाते ही मिल जाता है।

(4) सहकारी समितियों के माध्यम से बिक्री – देश में इस प्रकार की समितियों में वृद्धि हो रही है। यह समितियाँ अपने सदस्यों से कृषि उत्पादन एकत्रित करती हैं और फिर उसको ले जाकर बड़ी-बड़ी मण्डियों में बेचती है। ऐसा करने से उनके सदस्यों को अपनी उत्पत्ति का अच्छा मूल्य मिल जाता है।

(5) सरकारी खरीद – पिछले कुछ वर्षो से सरकार द्वारा भी कृषि उत्पत्ति को क्रय किया जा रहा है। इसके लिए स्थान-स्थान पर कुछ केन्द्र स्थापित कर देती है जहां पर किसान अपनी उत्पत्ति लाकर निर्धारित मूल्य पर बेच सकते हैं। सरकार यह खरीद (i) स्वयं अपने कर्मचारियों के माध्यम से, (ii) सहकारी समितियों के माध्यम से, व (iii) भारतीय खाद्य निगम के माध्यम से करती है।

(6) फुटकर विक्रेताओं के माध्यम से बिक्री – कृषि वस्तुओं के फुटकर विक्रेता शहरों के भिन्न-भिन्न भागों में फैले रहते हैं जिन्हें कभी-कभी सीधा विक्रय किसानों के द्वारा कर दिया जाता है।

कृषि उपज के विपणन में दोष – भारत में कृषि विपणन के सम्बन्ध में बहुत से दोष दूर हो गये हैं लेकिन फिर भी कुछ दोष अभी भी पाये जाते हैं जो निम्नलिखित हैं :-

(1) मध्यस्थों की अधिकता – भारत में कृषि उपज के विपणन में कृषकों एवं उपभोक्ता के बीच मध्यस्थ की एक लम्बी श्रृंखला है जिसमें गाँव का साहूकार, महाजन, घूमता-फिरता व्यापारी, कच्चा आढ़तिया, पक्का आढ़तिया, थोक व्यापारी, मिल वाला, दलाल, निर्यातकर्ता व फुटकर व्यापारी आदि शामिल हैं। इन सभी के द्वारा कुछ लाभ अवश्य लिया जाता है जिसका प्रभाव यह होता है कि उपभोक्ता द्वारा दिये जाने वाले मूल्य का एक महत्वपूर्ण भाग यह मध्यस्थ ले लेते हैं।

(2) मण्डियों की कुरीतियाँ – देश में अभी भी बहुत सी मण्डियाँ नियमित नहीं हैं। इन अनियमित मण्डियों द्वारा बहुत-सी कार्यवाहियों की जाती है जिससे किसान को इस प्रकार से लूटा जाता है: (i) यहाँ तराजू बाँट में गड़बड़ी की जाती है। (ii) उपज का एक अच्छा अंश नमूने या बानगी के रूप में निकाल दिया जाता है। (iii) मूल्य बतिया व केता का दलाल तय करता है। किसान को विश्वास में नहीं लिया जाता है। (iv) दलाल सदा ही क्रेता

* प्राध्यापक (वाणिज्य) स्वामी विवेकानंद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

का पक्ष लेकर कार्य करता है। (iv) विवाद स्थिति में किसान के हित की रक्षा करने वाला मण्डियों में कोई नहीं होता है। इस प्रकार यह कृषि विपणन का दोष है।

(3) बाजार उपयों में बाहुल्य – अनियमित मण्डियों में किसान से बहुत से व्यय लिये जाते हैं जैसे आढ़त, तुलाई व दलाली व पल्लेदारी आदि। इन व्ययों के अतिरिक्त और भी व्यय वसूल किये जाते हैं जैसे धर्मादा, गौशाला, रामलीला, धर्मशाला, मेहतर, मुनीम, करदा, आदि।

(4) श्रेणीकरण व प्रमापीकरण का अभाव – भारतीय मण्डियों में जो कृषि पदार्थ बिकने के लिए आते हैं वे प्राय: अवर्गीकृत व अप्रमाणित होते हैं। बहुत–से किसान जानबूझकर मिट्टी या अन्य ऐसी ही मिलावट करके वस्तु को बेचने के लिए लाते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि किसान को अपनी उपज का मूल्य कम ही मिलता है। भारत में कृषि वस्तुओं के लिए अखिल भारतीय स्तर के प्रमापों की भी कमी है। साथ ही यहाँ संस्थाओं की भी कमी है जो प्रमापीकरण व श्रेणीकरण कर सकती हैं।

(5) भण्डार सुविधाओं का अभाव – भारत में ऐसे भण्डारों को भी कमी है जहाँ पर किसान अपनी उपज को कुछ समय के लिए रख सकें और भाव अपने हित में आने तक इन्तजार कर सकें। गाँव में किसान की जो निजी भण्डार सुविधाएँ हैं उनमें छत्ती, कोठे, मिट्टी व बाँस के बने बर्तन आते हैं जिनमें कीटाणुओं व सीलन आदि से उत्पत्ति की सुरक्षा नहीं हो पाती है। ऐसी स्थिति में किसान को अपनी उत्पत्ति को शीघ्र बेचने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

(6) परिवहन सुविधाओं का अभाव – कृषि वस्तुओं के विपणन में परिवहन सुविधाओं का अभाव भी एक महत्वपूर्ण घटक है। गाँव व शहर को जोड़ने वाली सड़क कच्ची हैं जो कुछ महीने ही कार्य करती हैं। वर्षा के मौसम में तो सड़कें बिल्कुल ही बेकार हो जाती है। इसके साथ–साथ किसान के पास परिवहन साधन जैसे ऊँट, गधा, खच्चर आदि की गाड़ी का भी अभाव है। यह साधन महँगे पड़ते हैं, समय भी अधिक लगता है तथा कृषि वस्तुओं का क्षय भी होता है।

(7) मूल्य सम्बन्धी सुविधाओं का अभाव – कृषि पदार्थों के विपणन में एक दोष मूल्य सम्बन्धी सूचनाओं का अभाव है। किसानों को कृषि पदार्थों के मूल्य की जानकारी नहीं हो पाती है क्योंकि गाँवों में समाचार पत्र बहुत ही कम पहुँच पाते हैं साथ ही अधिकांश कृषक अनपढ़ होने के कारण समाचार पत्रों को पढ़ने में असमर्थ रहते हैं। प्राय: वे महाजन द्वारा बताये गये मूल्यों पर ही विश्वास कर लेते हैं जो शायद ही इनको उचित मूल्य बताते है। इसका परिणाम यह होता है कि किसान गाँव में ही अपनी उपज को बेच लेता है।

(8) वित्तीय सुविधाओं का अभाव – कृषि पदार्थों के विपणन में दोष यह है कि किसान को वित्तीय सुविधाएँ देने वाली संस्थाओं का अभाव है जिसके परिणामस्वरूप इनको अपनी फसल कम मूल्यों पर फसल से पूर्व ही बेचने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

(9) उपज की घटिया किस्म – खेतों के छोटे होने, उपज की परम्परागत पद्धति होने, अच्छे बीज एवं खाद व सिंचाई का अभाव होने से कृषक की उपज घटिया किस्म की होती है। साथ ही फसल को काटने में असावधानी करने से उपज में धूल व मिट्टी मिल जाती है। इन सबका सामूहिक परिणाम यह होता है कि उपज घटिया किस्म की होती है जिससे कृषक को उसका मूल्य कम ही मिलता है।

(10) कृषि आधिक्य का कम होना – उत्पादन में से वर्ष भर खाने के लिए व आगामी कृषि हेतु बीज रखने के बाद जो बचता है। उसे हम कृषि आधिक्य कहते हैं। यह कृषि आधिक्य छोटी–मोटी जोत होने के कारण बहुत ही थोड़ी मात्रा में होता है जिसे वह गाँव में ही इस कारण बेच लेता है कि उसे बाजार में ले जाने में जानुपातिक दृष्टि से अधिक व्यय पड़ता है।

(11) संगठन का अभाव – भारतीय कृषक देश के दूर–दूर स्थानों तक फैले हुए हैं। साथ ही वे आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं इन सबके परिणामस्वरूप वे किसी शक्तिशाली संगठन को निर्मित नहीं कर पाये हैं। इस प्रकार फसल बेचते समय व्यापारी उनको दबा लेते हैं और कम मूल्य पर बेचने के लिए बाध्य कर लेते हैं।

(12) किसानों का स्वभाव – भारतीय कृषक भोला है। वह रूढ़िवादी व अन्धविश्वासी है। यही कारण है कि उसको व्यापारी द्वारा एक प्रकार से ठग लिया जाता है। उसको अनेक बातें समझाकर गाँव में बेचने के लिए बाध्य किया जाता है तथा मूल्यों की उचित जानकारी न होने के कारण बाजार मूल्य से कम ही दिया जाता है।

कृषि विपणन में सुधार के लिए उपाय अथवा कृषि विपणन में सुधार हेतु सरकार द्वारा उठाये गये – आज से 62 वर्ष पूर्व 1928 में कृषि विपणन में सुधार की आवश्यकता पर बल शाही कृषि आयोग ने दिया था और उसने इस सम्बन्ध में कुछ सुझाव भी दिये थे। इसके बाद 1931 में केन्द्रीय जाँच समिति ने भी कुछ सुझाव दिये थे। काँग्रेस द्वारा नियुक्त राष्ट्रीय नियोजन समिति ने भी उपयोगी सुझाव दिये थे। यह यहाँ पर कृषि विपणन के दोषों को दूर करने के उपायों की व्याख्या कर रहे हैं और साथ–साथ उन प्रयत्नों की भी विवेचना करेंगे जो इस सम्बन्ध में सरकार द्वारा उठाये गये हैं :–

(1) नियमित मण्डियों की स्थापना – कृषकों को विपणन के दोषों से बचाने के लिए सबसे प्रमुख सुझाव नियमित मण्डियों की स्थापना है जहाँ पर किसान अपनी उत्पत्ति को उचित मूल्य पर बेच सके। नियमित मण्डी से अर्थ उस मण्डी से है जिस पर राज्य सरकार या स्वायत्त शासन सरकार का नियन्त्रण होता है तथा जिसकी कार्यविधि किसी विशेष विधान से नियमित होती है। यह मण्डियाँ राज्य सरकारों के विधानों के अन्तर्गत स्थापित होती हैं तथा इन विधानों में वर्णित नियमों के अनुसार इन मण्डियों में कार्य होता है। कभी–कभी इन मण्डियों की स्थापना स्वायत्ता सरकार जैसे चुंगी, नगर महापालिका, जिला परिषद् आदि के द्वारा भी कर दी जाती है या उनके द्वारा बनाये गये नियमो के अन्तर्गत यह मण्डियाँ कार्य करती है। इस प्रकार की मण्डियों में एक प्रबन्ध समिति होती है जिसमें किसानों, व्यापारियों, सरकारी प्रतिनिधि व नगरपालिका के प्रतिनिधि होते हैं लेकिन बहुमत कृषकों का ही होता है। इस प्रकार की मण्डियों में दलाली, आढ़त, तुलाई, कार्य के घण्टे, भुगतान व्यवस्था आदि निश्चित होते हैं तथा लाइसेंस प्राप्त व्यक्ति ही दलाल, आढ़तिया व तौला आदि का कार्य कर सकता है। यहाँ पर किसानों के ठहरने व उत्पत्ति रखने की उचित व्यवस्था होती है।

(2) श्रेणी विभाजन एवं प्रमापीकरण – कृषि वस्तुओं के श्रेणी विभाजन व प्रमापीकरण हो जाने से अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में ख्याति बढ़ती तथा किसान को उचित मूल्य मिल जाता है। बाजार का विस्तार होता है तथा उपज की किस्म में उन्नति होती है। अत: अधिकाधिक कृषि वस्तुओं के लिये प्रमाप स्थापित किये जाने चाहिए।

(3) प्रमाणित बाँट एवं नाप–तौल – कृषि विपणन में सुधार के लिए यह आवश्यक है कि प्रमाणित बाँट व नाप–तौल काम में लायी जाये, जिनसे कि कृषक के साथ धोखा न किया जा सके।

इस संबंध में सबसे पहले 1939 में बाँटों के प्रमापीकरण के लिए

अधिनियम बनाया गया था जिसमें 80 तौले का एक सेर वैधानिक माना गया था। इसके बाद 1958 में पुरानी प्रणाली को छोड़कर मैट्रिक प्रणाली अपनायी गयी जिसको 1 अप्रैल 1962 से अनिवार्य कर दिया गया है। इस प्रणाली के आने से कुछ सुधार हुआ है। मूल्यो की गणना आसान हुई है। नाप-तौल की गड़बड़ियों में कमी हुई है लेकिन आज भी पुराने बाँट ग्रामीण क्षेत्रों में काम में लाते हुए देखे जा सकते है। अत: इन क्षेत्रों में कार्यवाही करने की आवष्यकता है।

(4) विपणन सूचनाओं का प्रकाशन एवं प्रसारण – विपणन सूचनाओं का प्रकाशन एवं प्रसारण किया जाना चाहिए जिससे कि कृषक को कृषि पदार्थों के मूल्य व सम्बन्धित बातों की जानकारी हो सके और उसको धोखा न दिया जा सके। इस सम्बन्ध में सरकार द्वारा सराहनीय प्रयत्न किये गये हैं।

(5) भण्डार गृहों की सुविधा – कृषि उपज के उचित विपणन के लिए भण्डार गृहों की सुविधा बहुत ही आवश्यक है जिससे कि बचत को उचित रूप से सुरक्षित रखा जा सके और कृषि उपज के मूल्यों में स्थायित्व लाया जा सके।

इस सम्बन्ध से केन्द्रीय व राज्य सरकारों ने अपने-अपने प्रयत्न कृषि उत्पत्ति विकास एवं भण्डार निगम अधिनियम, 1956 के पारित होने के बाद ही किये हैं जिसके अनुसार केन्द्र में केन्द्रीय अण्डार निगम व राज्यों में राज्य भण्डार निगम बनाये गये हैं। इस समय केन्द्रीय भण्डार निगम के पास 70 लाख टन व राज्य भण्डार नियमों के पास 95 लाख टन माल रखने की क्षमता है। इसके अतिरिक्त भारतीय खाद्य निगम के पास 200 लाख टन के तथा केन्द्रीय सरकार, सहकारी समितियों व प्राइवेट संस्थाओं के पास भी भण्डार क्षमताएँ हैं। लेकिन यह सब मिलकर भी देश की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पा रही हैं। अत: भारत की अन्न भण्डार क्षमता को बढ़ाने की आवश्यकता है।

(6) विपणन अनुसन्धान एवं सर्वेक्षण – विपणन में सुधार हेतु विपणन असुसन्धान एवं सर्वेक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए जिससे कि कमियों का पता लग सके तथा उन्हें दूर करने के प्रयत्न किये जा सकें।

भारत में केन्द्रीय सरकार के कृषि मन्त्रालय के अन्तर्गत एक निदेशालय 'विपणन एवं जाँच निदेशालय' है जो कृषि विपणन कृषि, बागवानी एवं पशुपालन सम्बन्धी बातों के लिए सर्वेक्षण एवं अनुसन्धान करता है जिसकी सिफारिशों के आधार पर केन्द्रीय सरकार विभिन्न प्रकार के नियम बनाती है। इस निदेशालय की कार्य-पद्धति धीमी है अत: उसमें तेजो लायी जानी चाहिए।

(7) परिवहन साधनों का विकास – कृषि पदार्थों के विपणन में सुधार के लिए सड़कों का विकास किया जाना चाहिए तथा सभी गाँवों को शहरी क्षेत्रों से सड़कों के द्वारा जोड़ दिया जाना चाहिए जिससे कि किसान अपनी उत्पत्ति को शहरी मण्डियों में बेचने के लिए प्रोत्साहित हो।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् इस सम्बन्ध में प्रगति अवश्य ही हुई है लेकिन वह देश के विशाल क्षेत्रफल को देखते हुए कम है। वर्तमान केन्द्रीय सरकार का ध्यान इस ओर गया है जिसके फलस्वरूप न केवल सड़कों का ही विकास होगा बल्कि परिवहन साधनों के विकास में जो रुकावटें आती हैं वे भी दूर हो जायेंगी। इसीलिए बहुत शीघ्र ही ट्रकों व बैलगाड़ियों आदि पर लगने वाली चुंगी को समाप्त किया जा रहा है और ग्रामीण सड़कों को पक्का करने का कार्य प्रारम्भ किया जा रहा है।

(8) कृषि विपणन कर्मचारियों को प्रशिक्षण सुविधाएँ – कृषि विपणन में बहुत-सी कमियाँ तो कृषि विपणन कर्मचारियों की होती हैं अत: उनको प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। इसके लिए नागपुर, हैदराबाद व लखनऊ में प्रशिक्षण केन्द्र हैं जहाँ विपणन विभाग के वरिष्ठ अधिकारियों, विपणन सचिवों एवं वर्गीकरण अधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है। अब तक लगभग 6,500 व्यक्तियों को प्रशिक्षण दिया जा चुका है।

(9) वित्तीय सुविधाएँ – कृषि विपणन के सुधार हेतु वित्तीय सुविधाओं के विकास की बहुत अधिक आवश्यकता है जिससे कि कृषक को महाजन व साहूकारों के चंगुल से बचाया जा सके और वह अपनो उपज पहले से निर्धारित मूल्य पर न बेचकर फसल आने पर मण्डियों में बेच सके।

इस सम्बन्ध में ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकों का विस्तार किया गया है तथा जिन स्थानों पर भण्डार गृह एवं भारतीय स्टेट बैंक है वहाँ पर भण्डार गृह की रसीद पर बैंक से धन उधार को व्यवस्था की गयी है लेकिन इस प्रकार की बैंकों की संख्या बहुत कम है।

(10) सहकारी विपणन समितियां – विभिन्न प्रकार के मध्यस्थों की संख्या को कम करने एवं मण्डियों की चालों से बचने के लिए कृषकों को अपनी सहकारी समितियाँ बनानी चाहिए जिससे उचित मूल्य मिल सके, वित्तीय सुविधा प्राप्त हो सके, अच्छी खाद्य व उन्नत बीजों की व्यवस्था हो सके तथा कृषक सामूहिक मोलभाव का लाभ उठा सकें।

इस समय एक राष्ट्रीय कृषि सहकारी विपणन संघ, 31 राज्य सहकारी विपणन संघ, 380 जिला या क्षेत्रीय सहकारी समितियों व 5,923 प्राथमिक समितियाँ हैं। ऐसा अनुमान है कि इन सभी ने 1987-88 में लगभग 4,000 करोड़ रुपये के कृषि पदार्थों का क्रय-विक्रय किया है। लेकिन देश में कुल क्रय एवं विक्रय को देखते हुए यह मात्रा बहुत थोड़ी है।

(11) मूल्य समर्थन – काफी समय से सरकार ने मूल्य समर्थन नीति अपना रखी है जिसके अन्तर्गत सरकार फसल उगने से पूर्व ही फसल क्रय करने के मूल्य घोषित कर देती है और यदि फसल पर बाजार में मूल्य कम हो जाता है तो सरकार उस निर्धारित मूल्य पर क्रय करने लगती है। इससे किसानों में प्रेरणा बनी रहती है और वे उत्पादन कार्यों में ढील नहीं देते हैं। सरकार ने यह नीति कुछ ही वस्तुओं के सम्बन्ध में अपनायी है अत: सरकार को इस नीति का विस्तार करना चाहिए।

निष्कर्ष – उपर्युक्त विवेचन के हम इस निष्कर्ष पर आते हैं कि कृषि के सुधार हेतु काफी प्रयास किये गये हैं जिनके फलस्वरूप कृषि विपणन में निश्चय ही परिवर्तन आया है। कृषक का दृष्टिकोण भी बदला है। व्यापारिक वर्ग भी कुछ सचेत हो गया है जिनके फलस्वरूप कृषि विपणन के ढोषों में महत्वपूर्ण कमी हुई है लेकिन यदि हम इसमें और अधिक सुधार चाहते हैं तो सिर्फ एक ही मूलमन्त्र है कि सहकारी विपणन का विकास द्रुतगामी गति से किया जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Buddhism in the Major Poems of TS Eliot

Arvind Kumar Srivastava *

Introduction - Hugh Kenner, one of the leading Eliot critics, makes an interesting suggestion that is was Laforgue, the great French author, who launched Eliot into a study of Oriental Philosophy and literature, including Buddhism.[1] The suggestion is only partially tenable, for Eliot was born and bred in the new England atmosphere that was still surcharged with the oriental glow and glitter of the unparalleled writers like Emerson, Thoreau, and Whitman. Thereafter Eliot received his education at Harvard, a famous centre of oriental studies in Eliot's time. But it is true that Laforgue was deeply interested in Buddhism and Arthur Schopenhauer, and that this might have served as an impact on Eliot's poetry[2] Eliot's proneness to pessimism and suffering as an outlook upon life is a serious thing, and it definitely derives from the schopenhauerian - Buddhistic outlook. However, it must be pointed out here that Eliot went to Jules Laforgue more for sharpening his poetic technique than for religious or moral content.

The Buddhistlc idea of 'will' (or 'desire') as the cause of suffering finds an expression, direct or indirect, in Eliot's earliest poems. Such poems are Eliot's Juvenalia is contained in the volume titled Poems Written in Early Youth (London Faber & Faber, 1967). The opening piece, "A Fable for Feasters (Feb. 1905)" is though on a scene of feasting and merry-making by the monks, it sounds a note of warning to them Inst such a practice. Then follows "A lyric" (April, 1905), which highlights the unreality of time and space (both being temporal) as well as a love on earth. The next poem called "Song" (June, 1907) also deals with the limited nature of human love (or passion) because of the unreality of time and space. Knowing the unreality of time and space, one (like a true seeker of wisdom) can devote one's attention to the eternally Real. This was the avowed intention of the Buddha when he left behind the world of senses and pleasure, and this is precisely the intention of Eliot in his poetry and plays. In the words of Prof. Ashok Kumar Jha, "If time and space are unreal, the immediate experience has a reality in terms of the lived moments which are the humming, pulsating experience of the senses."[3]

Eliot's poem called "Humouresque" (Jan, 1910) is cast in the Laforgue temper and technique. The tone is ironical even scurrilous. The poet's mood is revealed in the line 'Though not yet tired of the game'. It is definitely tinged with a pessimistic temper a temper that continous through "The love song of J. Alfred Prufrock", "Portrait of a Lady", "Gerontion",

"The Waste Land" and "Hollow Men". These poems clearly indicate Eliot's poetic development along a certain pessimistic line. Eliot's concern might have been 'poetic', not philosophical, at this stage, but it does not go counter to the Buddhistic idea of suffering.

The poem "Spleen" is also written in the new Lafarguesque technique. It breeds boredom and ennui in the reader. The theme of suffering is predominant here, linking it to Buddhism through Laforgue and Schopenhauer. Eliot describes life as "a little bald and gray, / Languid, fastidious, and bland, and in reading it cannot rule out the admissibility of the traditional dejection and boredom in terms of the much-talked of Buddhistic suffering (dukkha). The poet uses the word 'impatience for the controllable desire. It may be presumed that Eliot's reading of Edwin Arnold's poem, The Light of Asia become assertive in this poem.

Another poem in the same early volume where the Oriental influence is seen operating is "The Death of Saint Narcissus" (October, 1915). The poem narrates the myth of Narcissus (who fell in love with his own image) and his transformation into a lovely flower (but in this poem into a God). It is filled with anthropological details, and the use of words like 'rocks', 'cliffs', 'tree' and 'fish' confirms it. But more than being preoccupied with a certain philosophical or religious experience, Eliot is preoccupied here with his own young and uncertain self. This kind of self only adds to the misery and uncertainly of the poet.

After having examined some of Eliot's poems written in early youth, we shall take up "The love song of J. Alfred Prufrock" for our consideration. It must be stated at the very outset that here is no direct mention of any religion or philosophy in this poem, but it has that experience of boredom and disgust which we find in poems like Spleen", "Humouresque" and "The Death of Saint Narcissus". The Overall atmosphere is that of irony, disbelief and disgust in this poem. A middle-aged man, as Prufrock is, is conscious of his disturbing soundings, and he feels ill at ease in the company of beau women:

In the room the women come and go

**Research Scholar (English) Veer Bahadur Singh Purvanchal, University Jaunpur (U.P.) INDIA

Talking of Michelangelo.

Prufrock's uneasiness increases because of his sense of incompatibility with the prevailing situation. The uneasy and uncertain self of Prufrock offers a chance to the poet to describe "the hell of earlier poetry."[4] as a critic nicely puts it. The poet was, at that stage, passing through a state of shock and trauma caused by the dehumanization and destabilization of modern world. He looked at everything with a sense of doubt and distrust; even love was treated with the same attitude. This may be gathered from Profrock's attitude towards love in this poem:

Do I dare
Disturb the Universe ?
In a minute there is time
For decisions and revisions which a minute will
reverse

Prufrock's experience of suffering is unquestionable at this juncture, and in a mood of dejection he blurts out; - 'I have known them all already, known them all'. And 'known them all' is used ironically, into the laforgian mood, what the persona has 'known' is akin to sorrow and anguish. Otherwise, Buddhism postulates that knowledge is a thing of mind and that the Ultimate Truth can not be known through mind. The 'Overwhelming question - And how should I begin? – mains unresolved for Prufrock unto the last. His restlessness or suffering is so pronounced in the following lines:

I should have been a pair of ragged claws.
Scuttling across the floors of silent seas.

As a result, he feels sleepy and tired. He is also afraid of the impending calamity of death. Being a man of the world he can't escape the horrors around. He is susceptible to doubts and distrusts of all sorts. Trying to clarify his position, Prufrock says:

That is not it at all,
That is not what I meant, at all.

Added to this is his sense of deformity and old age. Earlier, the poet had made mention of 'arms and legs' being 'thin'. Now, he hints at his growing age

I grow old .... I grow old
I shall wear the bottoms of my trousers rolled.

He does not want to part his hair behind, as he is a bald-headed man. His shrinking from 'desire' (confirm its fulfillment) is born of his New England temperament[5] as well as of his grounding in Buddhism at an early age.[6] This shrinking of the person is clearly expressed in 'Do I dare to eat a peach'? and attraction repulsion complex working upon him though the mermaids; He thinks the mermaids will not sing to me. Obviously, the poet's Unitarian upbringing and his ascetic temperament are at the back of these utterances. He was born and bred in a stern Puritan home, and his mother was instrumental in Imparting a moral and spiritual education to him. But the Buddhistic influence upon a sensitive poet (now in the making) cannot be ruled out.

The experience of suffering 'dukkha' is inescapable in "Gerontion", which carries an agonising epigraph from Willam Shakespeare. The said epigraph runs thus:

Thou hast nor youth nor age
But as it were an after dinner sleep
Dreaming on both.

The persona is an old man passing through a season of dryness or rainlessness. He is without 'grace' and 'faith', and hence no 'forgiveness' for him - 'After such knowledge, what forgiveness? Even 'history' is negated in this poem, as it distracts the persona with 'supple confusion. 'He is terribly assailed by 'whispering ambitions' and guided by 'vanities'. So, he develops a totally pessimistic and nihilistic attitude towards life:

Think
Neither fear nor courage saves us, Unnatural vices.
Are fathered by our heroism Virtues
Are forced upon us by our impudent crimes.

This kind of metaphysical disbelief is generally based on a consistent vision of suffering, as envisaged in Buddhism. Immediately after wards, the poet speaks of the persona's loss of passion' and normal healthy appetite, and this may be defended in terms of Buddistic logic the loss of senses is not an ominous sign; it leads to metaphysical pursuits. The poet conveys this idea nicely in he following extract:

I have lost my sight, smell, hearing, taste
and touch
How should I use them for your closer contact?

The loss of sense and the closer physical contact are, no doubt, impediments in the course of asceticism. Lord Buddha's sermon that "All thing is on fire' points to this impending danger.

At the end of "Gerontion" the persona of the poet once again reverts to his helpless condition of suffering. He is really a misfit in the given situation, as Prufrock in "The love Song".. or the restless lady in "The Portrait of a lady" is. His sense of anguish and suffering is writtten large upon the following lines

Tenants of the house,
Thoughts of a dry brain in a dry season.

Clearly, he is acutely conscious of his advancing age, which brings 'dryness' or lack of energy and enthusiasm of the youth. Such an aged man might be fit for idle thoughts and passive dreams. He can't get into the stride of action, as his 'thoughts', are weak and sterile. Taken as whole, the poem is a befitting prelude to The Waste Land where the sense of spiritual 'dryness' becomes so acute and dominant. At the moment, Eliot was passing through a phase of doubt and distrust, miasma and askance. He was still in search of a proper moral and spiritual shelter. Christianity at hand was helpless in the matter, as London had become 'an unreal city' wallowing in the mud of passion and concupiscence. Hence, he had no option but to turn to the East for solace and spiritual support. Under the circumstances, Buddhism served him well and provided him with the much-needed anchorage. This is so evident in The Waste Land, to which "Gerontion" looks forward.

Since we have already examined The Waste Land in Chapter- II, we pass on to another poem of the same nature – to "Hollow Men" (1925). The theme of suffering is paramount here, and in this respect this poem resembles those considered above and The Waste Land. Therefore, Prof. Grover Smith rightly suggests that part of "Hollow Men" has been made out of the portions of The Waste Land.[7] The poet - persona's cause of suffering arises, most probably, from his inability to return to his unitarian background, and he seems to be enveloped in the 'Dark Night of the Soul usually experienced by the mystics. Obviously, as in The Waste Land, he writes this poem with Conrad's Heart of Darkness in his vision. Another influence upon the poet is that of Dante in expressing a kind of emptiness and suffering in the lives of the people inhabiting the 'dead land'. A reading of the poem will convince the reader that the Buddhistic idea of suffering and nothingness pervades it as such. This is how the poem begins

Here we go round the prickly pear
Prickly pear prickly pear
Here we go round the prickly pear
At five o'clock in the morning.

The expression is none-too-happy, and a sense of hollowness' is writ large over it. The repetitive use of 'prickly pear' reminds us of the that the persona is in the grip of agonising pain and emptiness. till, as In The Waste Land wallowing in an unmitigated suffering. kutility of existence is stressed in the following lines

Between the idea
And the reality
Between the motion
And the act
Falls the shadow

The shadow' is repeatedly used by the poet here, and it serves the purpose of underlining the 'hollowness' or 'unreality of human life'. In its insistence, it becomes identical to the illusion (Maya) of the Vedantins. Definitely it points out indirectly, the significance of a different kind of life from the one being pursued by modern Hollowmen'

References :-

1. Hugh Kenner, The Invisible Poet : T. S, Eliot (London Methuen & Co., 1965), P.49.
2. Kristian Smidt. Poety and Belif in work of T.S, Eliot (London Routledge & Kegan Paul, 1961), P. – 191.
3. Ashok Kumar Jha, Oriental Influences in T.S. Eliot (Allahabad: Kitab mahal, 1988), p.-59.
4. Stephen Spender, "Remembering Eliot", T. S. Eliot : The man and His Work, ed. Allen Tate. (Harmondsworth, middlesex, England : Penguine Books Ltd., 1966) P.- 66.
5. F. 0. Matthiessen, The Achievement of T.S. Eliot 3rd ed. (London: Oxford Univ. Press, 1959), P.-9.
6. Herbert Howarth, Notes on Some Figures Behind T.S. Eliot (London: Chatto & Windus, 1965), P. 204.
7. Grover Smith, T. S. Eliot's Poetry and Play : A study in sources and meaning, revised edition (Chicago & London:The University of Chicago Press 2005, P.-9

****

महाकाव्य साकेत: एक मौलिक चिंतन दृष्टि

डॉ. विजयलक्ष्मी पोद्दार *

प्रस्तावना – श्री वाजपेयी साकेत महाकाव्य के कथा संगठन से संतुष्ट नहीं है। इसका मुख्य कारण यह है कि वे वाल्मीकि की रामायण और तुलसीदास के 'रामचरित मानस' को कथासंगठन या कथाविस्तार का मानक मान के चलते हैं जबकि गुप्तजी इन मानको कों अपना आदर्श नहीं मान सकते थे। मुख्य कारण यह हैं कि वाल्मीकि और तुलसी के कथानायक 'राम' हैं और गुप्तजी के महाकाव्य की नायिका उर्मिला है नायक का दर्जा लक्ष्मण को भी नहीं मिला।

गुप्तजी को साकेत लिखने की मूलप्रेरणा न वाल्मीकि से मिली न तुलसीदासजी से, न ही माईकल मधुसूदन दत्ता से। उन्हें प्रेरणा मिली अपनें साहित्य गुरू ओचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के एक लेख से। आचार्य द्विवेदी ने रविन्द्रनाथ ठाकुर के एक बंगला लेख का हिन्दी अनुवाद किया था, विषय था 'काव्येव उपेक्षिता' अर्थात् काव्य की उपेक्षिताएँ। लेख में ये विषय दिखाया गया था कि कवियों ने महान कार्य करने वाले समाज के महापुरूषों को तो अपना नायक बनाया है, किन्तु उनके महान बनने में अपने सुख और एऐश्वर्य की आहूती देने वाली उन नारियों की उपेक्षा की गई हैं। इसी लेख से प्रभावित होकर और प्रेरणा लेकर गुप्तजी ने अपनी 'यशोधरा' एवं 'साकेत' प्रतियों का प्रणयन किया था। इस उपेक्षिता उर्मिला को नयिका बनाने के कारण अयोध्या को महाकाव्य की कार्यस्थली बनाना आवश्यक था। साकेत का ही दूसरा नाम अयोध्या हैं। महाकाव्य साकेत की कथा को दृष्टिगत करते हुए, वाजयेयी जी ने ठीक ही लिखा हैं कि 'आठवें सर्ग तक महाकाव्य में रामकथा चलती हैं और नवें में लक्ष्मण उर्मिला के विशेष प्रसंग प्रकट होते हैं।' वाजपेयी जी की शिकायत महाकाव्य के कथासंगठन की दृष्टि से एकदम उचित हैं क्योंकि महाकाव्य की नायिका का प्रसंग आधा महाकाव्य सप्मात हो जाने पर प्रारंभ हो यह ठीक नही लगता। पर यह कवि की विवषता रही है। उर्मिला उपेक्षित रही यह अपनी जगह सही हैं, उसका त्याग प्रणम्य है और वह सबकी करूणा का पात्र भी है, किन्तु है तो वह अत: राम कथा का ही एक अंग। लक्ष्मण और उर्मिला की कोई स्वतंत्र कहानी नही हैं। अत: मूलकथा रामकथा ही है, जिसमें से लक्ष्मण-उर्मिला की कथा को रेखांकित करते हुए कवि ने उर्मिला के चरित्र को अपना महाकाव्य का विषय बनाया है।

गुप्तजी ने पूरी कोशिश की हैं कि वे उर्मिला के प्रसंग में मूलकथा, रामकथा को महाकाव्य में आच्छन्न न होने दें। वे इस कोशिश में कितने सफल हो सकें, इस पर मतवैभिन्न हो सकता है। किन्तु उनकी कोशिशों से इन्कार नही किया जा सकता। इसी कोशिश में उन्होने मूल कथा के बाल काण्ड को पूरी तरह छोड दिया क्योकि बाल काण्ड तक की कथा में उर्मिला अनुपस्थित है। इस बात को बाजपेयी जी ने भी बहुत अच्छे ढंग से विश्लेषित किया है, क्योकि वे राम कथा के विस्तार इस कथा में उर्मिला की स्थिति और महत्व, साथ ही कवि की विवषताओं को पूरी तरह समझ पाये हैं।

वाजपेयी जी ने महाकाव्यों के प्रणयन के विषय में जो विचार व्यक्त किए हैं, वे यद्यपि समस्त महाकाव्यों पर लागू होते है पर मैं विनम्रतापूर्वक कहना चाहूँगी कि ये विचार मूलत: प्राचीन महाकाव्यों जैसे रामायण, रामचरितमानस, महाभारत जैसे महाकाव्यों को ध्यान में रखकर व्यक्त किये गये हैं। इन दोनों महाकाकव्यों में जहां जगततत्व का आदर्श देखा जा सकता हैं वहीं वाल्मीकि की रामायण में आत्मतत्व का आदर्श पाया जाता है। वाजपेयीजी रामचरित मानस की प्रशंसा करते हुए लिएते है कि तुलसीदास का उत्कर्ष वाल्मीकि से कम नहीं और मौलिकता दूसरे ही प्रकार की हैं।

गुप्तजी यह भलीभांति जानते थे कि लक्ष्मण और उर्मिला का चरित्र उतना उदात्ता नहीं हैं जितना राम और सीता का। किंतु राम और सीता से न्यून उदात्ताता उन्हें महाकाव्य का विषय बनने से वंचित कर देती हो, ऐसा नहीं माना जाना चाहिये, यदि वाजपेयीजी कहते हैं कि राम और सीता का चरित्र वीर चरित्र हैं और वे महाकाव्य के लिये उपयुक्त हैं और चूंकि उर्मिला का चरित्र करूणापूर्ण हैं, इसलिये महाकाव्य की रचना के लिये उपयुक्त नहीं यह विचार स्वागत योग्य प्रतीत नहीं होता। कविता के लिये कोई विषय अच्छा या बुरा नहीं होता। कवि अवश्य अच्छे और बुरे हो सकते हैं अर्थात श्रेष्ठ और कमतर श्रेष्ठ द्य यह तो वाल्मीकि और तुलसी की श्रेष्ठता थी कि उन्होंने राम और सीता को महाकाव्यों में ऐसा गाया कि वे अतुलनीय हो गये। संस्कृत, अपभ्रंष और हिंदी में 200 से अधिक राम और सीता को लेकर महाकाव्य रचे गये, किन्तु उनमें राम और सीता जिस रूप में व्यक्त हुए हैं वे वाल्मीकि और तुलसी के राम और सीता के कद के नहीं लगते। कम महत्व के व्यक्ति पर लिखी गई प्रति भी कम महत्व की ही हो, यह कतई जरूरी नहीं हैं। मामूली किसान 'होरी' पर लिखा गया उपन्यास भी किसी भी महान नायक पर लिखे गये उपन्यास से टक्कर ले सकता हैं। अपनी उक्त टिप्पणी में वाजपेयी जी के काव्यादर्शो पर राम भक्ति का प्रभाव माना जा सकता हैं।

वाजपेयी जी ने अपने साकेत चिंतन में महाकाव्यों की प्रकृति और विभिन्न महाकाव्यों के संदर्भ में साकेत पर विस्तृत चिंतन किया हैं। साकेत के कथासंगठन से लेकर साकेत की छंद योजना पर भी प्रकाश डाला हैं। वाल्मीकि से अधिक तुलसी की रामकथा से वे प्रभावित प्रतीत होते हैं और जब प्राचीन रामकथाओं के परिदृश्य में साकेत चिंतन करते हैं तब उन्हें साकेत की कथा का केनवास बहुत छोटा और घटना चक्र ठहरा हुआ अगर प्रतीत होता हैं तो इसमें आश्चर्य नहीं। वाजपेयी जी ने अनेक कोणों से साकेत की आलोचना की हैं और उसकी त्रुटियों को रेखांकित किया हैं। किंतु साकेत को वे दर किनार नहीं कर पाते इसीलिये वे लिखते हैं कि खडी बोली के इस प्रथम चरण में साकेत की सृष्टि एक ऐतिहासिक घटना हैं। गुप्तजी की प्रशंसा में वे

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) एम.के.एच.एस. गुजराती गर्ल्स कॉलेज, इन्दौर (म.प्र.) भारत

कहते हैं कि इस सत्कवि ने साकेत के पृष्ठों अपने अंत:मन की अनुभूतियां अंकित की हैं, जिसकी प्रशंसा में शब्दों का संकोच कोई नहीं कर सकें।

साकेत की कड़ी आलोचना करने के बाद वाजपेयी जी मानो स्पष्टीकरण देते हुए यह भी लिख देते हैं कि यदि हमने साकेत की त्रुटियों का उल्लेख करने में अधिक समय लगाया हैं तो केवल इसलिये कि हम समझते हैं कि गुप्तजी एक श्रेष्ठ सत्कवि हैं। वह यह भी अपने स्पष्टीकरण में कहना नहीं भूलते कि साकेत में जो त्रुटियां उन्होंने गिनाई हैं, उनका गलत अर्थ न समझा जावें। अंत में मैं पुन: कहना चाहूँगी कि यदि रामकथा के श्रेष्ठ महाकाव्यों को एकमात्र आधार बनाकर यदि वाजपेयी जी साकेत की त्रुटियां न गिनाते तो साकेत के साथ उन जैसा महान आलेचक अधिक न्याय कर सका होता।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

The Danger for the Environment - Global Warming

Dr. Nilesh Gangwal*

Abstract - Global Warming is the biggest problem existing in the world. This effects not only the Environment but also the Human Life. There are many causes behind the problem and these factors can be controlled easily if we think for our safe future generations.
Key Words - Emission, Deforestation, Fossil Fuels, Greenhouse gases, Atmosphere.

Introduction - When there is an increase in the average surface temperature of the Earth due to the effect of greenhouse gases the Global Warming starts. It means carbon dioxide emissions from burning fossil fuels or from deforestation, this result in consequences called as Global Warming. Warming means the earth atmosphere traps heat radiation from Earth towards space.

In the Global Warming Green House effect works due to thickening of earth's atmosphere and this thickening increases because of presence of increased carbon dioxide and other greenhouse gases. Human expansion is also a major cause for Global warming, like waste management, agricultural practices etc. Water vapour is also another factor of increasing Global Warming in the environment.

There are many causes behind this worldwide problem. Primarily in the atmosphere there is too much carbon dioxide (CO2) .This CO2 acts like the warming of the earth surface. As we burn fossil fuels like coal, oil and natural gas for energy or cut down and burn forests to create pastures and plantations, carbon accumulates and overloads our atmosphere.In comparison other gases are not putting effects more than the CO2 because it continues to accumulate in the atmosphere. If in the atmosphere global average temperature increases more than 3.6 degrees Fahrenheit (°F) (or 2 degrees Celsius (°C) then the risk increases in the overall natural system.

The causes of Global Warming can be divided into two categories –

1. Natural Causes

2. Man-Made Causes - Natural Causes are the causes which are based on natural calamity. Forest fires, Permafrost, Sunspots, Water Vapour and many others while manmade causes are Induced Deforestation, Fossil Fuels, Landfills, Use of Fertilizer, Meat consumption and Overpopulation In the Forest Fires Devastation of mountain homes and communities by nature is a leading cause of global warming. This problem will become a tragic problem of the earth. The result is that the new forest will grow very slow and emission of carbon smoke increases tremendously. The permafrost is actually leaking carbon into the earth's atmosphere. While scientists cannot stop permafrost from emitting these gases, the earth's melting icecaps at incredibly fast rates, are cause for concern. According to the Environment Protection Agency (EPA), sunspots are increasing the global temperature and restrict the passing of solar plasma, which in affect gives off radiation According to (National Aeronautical Space Centre) NASA, two-thirds of the gases are stuck in the thick blanket in the form of water vapour. The water vapour is unable to escape and thus results in hot climate changes. NASA continues to work on water vapour solutions to reduce their effect on global warming while animals also breathe out carbon dioxide and methane.

Induced Deforestation - Any type of development activity in the society or out of the society which causes deforestation is Induced Deforestation. It is the cutting down of trees and plants to make way for any development activity. Mother Nature routing out an entire forest is one thing, but man doing it for the use of crop cultivation, fuel, and other consumption, farms and factories, Fuel used for wood and charcoal, paper and timber is another. The loss of our forests results in a chain reaction where too much carbon is released into the air, with not enough oxygen to combat it .We should immediately stop cutting trees so that it will reduce Greenhouse effect.

Fossil Fuels - Pollution is the major cause of global warming which releases from various vehicles and other sources and then the temperature of the earth increases. Fossil fuel like coal is burnt to produce electricity. Coal is the producer of electricity; industries on the other hand release various gases into the water and air. Carbon dioxide, methane and nitrous oxide are the major Greenhouse gases. . In the landfills Garbage's are thrown by the Human being and the garbage are used by the many companies to reproduce the different products. Burning garbage releases the toxic gases and affect the Greenhouse. The cause of the overpopulation is one of the main cause of many other problems. When population increases they breathe more

*PMB Gujarati Commerce College, Indore (M.P.) INDIA

and release carbon dioxide. More demand for food and other for surviving the dignified life .The another reason for Global Warming is Mining In this sector the Methane gas produced is more because of the maximum use of oil and coal. In cultivation the Nitrous Oxide is produced and this gas is three hundred times more dangerous than other gases. Meat consumption increases the Global Warming. How? Because as per the research, 51% of the greenhouse gases: methane, carbon dioxide, and nitrous oxide are caused by animal agriculture. For cooking Non vegetarian food the time of cooking is 80% more than vegetarian food.

Impact of Global Warming's - If the problem of Global warming continues moving in the world then the entire planet would be in the danger zone. The major effects and impacts of Global Warming are: Changes in Climate: The frequent changes in the Climate are because of Global Warming in the Air the dangerous gases moving so the environment becoming warmer and warmer. Changes in the rainfall and snow patterns, increase droughts and severe storms, reduce lake ice cover; melt glaciers, increase sea levels, and change plant and animal behaviour. Sea Level Change, Thermal expansion, mountain glacier melting, Greenland ice sheet melting and Polar (Arctic and Antarctic) ice sheet melting are the four major changes in sea water because of Global Warming. The numbers of islands are vanishing from the earth. In future, warmer world will face water crisis also .Global warming not only effects the Ecosystem & Agriculture but also the human being as it is a reason for various tropical diseases in the human body.

Prevention of Global Warming - The Intergovernmental Panel on climate change (IPCC) was established in the year 1998 by the World Meteorological Organization (WMO) and the United Nations Environment Programme (UNEP), in recognition to the threat that exists in front of the world regarding global warming. The minimizing of the emission of greenhouse gases can easily control the Global Warming problem. The laws related to the Environment protection should be followed by every citizen. Increasing the use of nonconventional energy sources, minimizing the use of paper, control over deforestation and planting of more trees etc. are some of the measures to reduce the harmful threat of Global warming. All these measures, if adopted, will definitely control the global Warming and save our Environment.

References :-

1. www.iea.org
2. http://www.environment.gov.au/soe/2006/publications/drs/indicator/145/index.html
3. jica-ri.jica.go.jp/IFIC_and_JBICI-Studies/.../pdf/health_08.pdf

****

Application and Challenge of Graph Coloring Approach for CPU Optimization

Anju Dave * Neelema Rai **

Abstract - Optimization techniques are used to reduce the execution time of any program. On the same way CUP registers are used to reduce the execution time of programs. CUP registers are fast memory but they are in limited numbers. So to get better performance of algorithm, runtime compiler must have an efficient register allocation algorithm. Graph coloring is one of the best recognized, trendy and broadly used study topic in the field of graph theory for CPU optimization technique, having numerous applications and assumptions, which are continuously revised by various computer scientists all along the world. This paper is going to symbolize a application of different graph coloring register allocation algorithms. Paper also included different challenges to allocation optimization issues in algorithms.
Keywords - Graph coloring, CPU optimization, Chromatic number.

Introduction - *Register allocation* refers a process to assigns variables to registers as well as in Main memory. Within compiler optimization, register allocation is the method to assign bulky number of target program variables against a little number of CPU registers. Thus CUP registers are helpful to reduce the execution time of programs in CPU. As we know CUP registers are fast memory chunks but they are limited in numbers. So to get better performance of an algorithm, runtime compiler must have an efficient register allocation algorithm.

A **graph coloring** is a projection of tags, called colors, to the vertices of a graph. Distribution of colors in that manner such no two adjacent vertices contribute to the same color. The **chromatic number** graph G*G* is the *minimum* number of colors by which such assignment is possible. Thus the fewest number of colors essential to color a graph *G* is known as its chromatic number, and is frequently stand for x(*G*).

Applications for solved problems have been found in areas such as computer science, information theory, and complexity theory. Numerous routine problems, like reduced conflicts in scheduling, are also correspondent to graph colorings. The study of graph colorings has correlated to planar graphs and the four color theorem, which is also the most famous graph coloring problem. Sudoku can A coloring using at most *k* colors is called a (proper) *k*-coloring. A graph has a chromatic number that is at most one larger than the chromatic number of a subgraph containing only one less vertex. The difficulty to discover chromatic number of a specified graph is NP Complete.

1. Applications:

1.1 The graph coloring approach has huge number of applications.

1) **Register Allocation:** In compiler optimization, concept of register allocation is a course of action that used to assigning a huge number of end program variables against a small number of CPU registers. This problem is also known as a graph coloring problem [8].

2) **Frequency Assignment:** while frequencies are assigned to different towers, at the same site, must be different. Then what is the way to assign minimum number of frequencies. This difficulty is also a case of graph coloring problem. So here every tower stand for a vertex and an edge stuck between two towers stand for that they are in range of both.

3) **Creation of Schedule:** Assume we want to make an class schedule for a college. We required list of different subjects, teachers and students of each subject. Than how *we make a timetable of the different classes in order that no two teachers within a common class are scheduled at the same time?* This difficulty can be symbolize as a graph where each vertex is a teacher and an edge between two vertices indicate as a common class. So here we have a graph coloring problem to least number of time quantum is equivalent to the chromatic number of the graph.

4) **Games:** Sudoku is also a example of Graph coloring problem where every cell correspond to a vertex. There is an edge stuck between two vertices if they are in same row or same column or same block.

5) **Map Coloring:** Geographical maps of different countries, states, cities in his case no two adjacent cities cannot be assigned same color. Here we also solve this problem using Graph Coloring.

6) **Networking:** every network have its thousands of servers and their distributed content on Internet. They used to install a new software or must update their existing soft

*Asst. Professsor, M.K.H.S. Gujarati Girls College, Indore (M.P.) INDIA
**Asst. Professsor, M.K.H.S. Gujarati Girls College, Indore (M.P.) INDIA

ware's at about every week.Although updates may not be completed at a time, since it requires a lot of time. So all the updates usually cannot be organized on all servers at the similar time.Thus this is again a scheduling utility of graph coloring problem.

1.2 Coloring graph also used for solving some practical problems as follows:

1. Scheduling problem in organization
2. Distribute broadcast frequencies to T.V. and radio stations
3. Study of sale phone traffic
4. Colouring map in order that no two regions that share a boundary are the same color

2. Challenges in register allocation: This section described few challenges faced, which encountered during development of any register allocation algorithms.

1. Limit Amount of Registers: CPU registers are physical entity in computer and very limited in amount. But most of the computer programs contains large amount of IR variables. To achieve the optimum time complexity while executing the program, one need to find the way to reuse registers whenever possible. It is a big challenge of allocation of register to variables dynamically.

2. Register Architecture: Register are complicated, each register is made by several smaller registers. Register allocation algorithm can't use a register and its constituent register at the same time. Some of the computer instructions store the result in specific registers; register allocator cannot use those registers for normal allocations. Some of the CPU registers are reserved for the operating system operations or for assembler. Some register must be preserved across function call in program execution. CPU architectures are different in various types of CPU. So it is also a challenging task to develop a generalized CPU register allocation algorithm that can handle all types of CPU registers.

3. Arbitrary Size Variables : Most of the programming languages define their own data type system. They have their own data type sets. Almost every data type has different memory size requirement and this requirement is hardware independent. But size of registers is fixed so it is also difficult task to allocate registers to different size variables.

Conclusion - It has been observed by the study of various literatures and research works that register allocation is the important factor of compiler optimization. In this paper we have gone through different applications and challenges of register allocation technique like graph coloring register allocation.

By this revise it has been found that development of register allocation is challenging due to limited amount of registers and complicated architecture of registers. After a fair assessment we found that Graph coloring is much more helpful in different areas of applications for compiler optimization as it has capacity to raise the compiler performance and utilization .

References:-

1. J.A. Bondy, U.S.R. Murty, "Graph Theory with its Applications", Elsevier Science Publishing Co., 1976.
2. Chaitin, G. J., Auslander, M. A., Chandra, A. K., Cocke, J., Hopkins, M. E., and Markstein, P. W. "Register Allocation via Coloring". Computer Languages, Vol. 6, Issue 1, 47–57,1981.
3. David Koes and Seth Copen Goldstein, "An Analysis of Graph Coloring Register Allocation", Carnegie Mellon University Technical Report No. CMU-CS-06-111, March1990.
4. Reed B. Molloy, M. "A bound on the total chromatic number". Combinatorica,18(2), 241-280 1998.
5. Croitoru, Cornelius, Luchian, Henri, Gheorghies, Ovidiu, and Apetrei, Adriana. "A New Genetic Graph Coloring Heuristic", 63-74. Ithaca, NewYork, USA,2002.
6. Keith D. Cooper and Anshuman Dasgupta, "Tailoring Graph-coloring Register Allocation For Runtime Compilation", International Symposium on Code Generation and Optimization (CGO'06), DOI: 10.1109/ CGO.2006.35, 26-29 March 2006.
7. Wimmer, Christian; Franz, Michael, "Linear scan register allocation on SSA form". Events of IEEE/ ACM 8th international annual conference on CGO '10. p. 170.CiteSeerX 10.1.1.162.2590.doi:10.1145/ 1772954.1772979. ISBN 9781605586359,2010.
8. L.-Y. Hsu, S.-J. Horng, P. Fan, M.K. Khan, Y.-R. Wang, R.-S. Run, J.-L. Lai, R.-J.Chen , "planar graph coloring problem", Expert Syst. Appl. 5525–5531,38 (2011).
9. Sevin Shamizi and Shahriar Lotfi, "Register Allocation via Graph Coloring Using an Evolutionary Algorithm", B.K. Panigrahi et al. (Eds.): SEMCCO 2011, Part II, LNCS 7077, Pages 1–8, 2011.
10. Gupta A., Patidar H.: "A Survey on Heuristic Graph Coloring Algorithm". International Journal for Scientific Research & Development, Vol. 4, Issue 04, 297–301, 2016.
11. D.C. Kiran, S. Gurunarayanan, Janardan P. Misra and Munish Bhatia, "Register allocation for fine grain threads on multicore processor", Journal of King Saud University - Computer and Information Sciences, Volume 29, Issue 1, January 2017, Pages 85-92.
12. Harish Patidar, Prasun Chakrabarti, "A Novel Edge Cover based Graph Coloring Algorithm", (IJACSA) International Journal of Advanced Computer Science and Applications,Vol. 8, No. 5, 2017
13. Anju Dave, "A Survey on CPU Register Allocation Algorithms and Related Issues of Runtime Compiler", NCETRCSE-2018 Conference Proceeding, India, 2018.
14. Patidar H., Chakrabarti P., "A Tree-Based Graph Coloring Algorithm Using Independent Set". In: Panigrahi C., Pujari A., Misra S., Pati B., Li KC. (eds) Progress in Advanced Computing and Intelligent Engineering. Advances in Intelligent Systems and Computing, vol 714. Springer, Singapore, 2019.

15. Anju D, Deepika P "Comparison Of Linear Scan And Graph Coloring Algorithm Used In Development Of Register Allocation", Journal of The Gujarat Research Society, vol 21, issue 8,November 2019.

16. Anju D, Deepika P "Comparison Of Graph Coloring Approaches Used In Development Of Register Allocation Algorithms", Journal of The Gujarat Research Society, vol 21, issue 14, December 2019.

****

Marketing Practices in Post COVID-19 Era: A Guide For Marketing Managers

Dr. Mohammad Sajid* Jyoti Pachori**

Abstract - The monetary slump achieved by the continuous pandemic has basically affected buyer shopping and media inclinations and balanced firms' advancing activities and execution. Exhibiting research all through the latest decades has given comprehension into how money related slumps impact buyer lead and how firms should change their advancing mix practices considering these full-scale financial tightening influences. In this paper, I overview the related publicizing composing and show that falling periods may offer opportunities to sponsors to build up their picture's bit of the general business with the right advancing mix expenses the board.
Keywords- Marketing research, Empirical speculation, Economic downturn, COVID-19.

Introduction - The continuous (COVID-19) has obliged speedy, wide lifestyle shifts for purchasers around the world, and these movements are presumably going to stay past the hour of pandemic itself. The overall retail industry is meeting a striking crisis in the wake of the COVID-19 lockdown and its monetary downturn (FR). France's economy, alongside a couple of various countries, is depended upon to experience a FR as it would decrease by 8% in 2020 due to COVID-19 (Statistica 2020). U.S. retail bargains moreover dropped by a remarkable 8.7% in March, and are needed to drop by (regardless) 20% pushing ahead, as demonstrated by the National Retail Federation.

Stood up to with weakness about the future, various associations are responding to decline by modifying their exhibiting method to changing purchaser direct (The Nielsen 2020). Google, among various firms, has starting late announced a cut in publicizing money related plans by as much as half, while before the pandemic, they expected to assemble advancing spending from the prior year (CNBC 2020), as they did after the FR of 2008.

Advancing investigators throughout the latest couple of years have thought about the impact of FR's on purchaser direct and firms' responses to FR's. Drawing on the current observational data, the current review hopes to offer a manual for promoting chiefs on the most capable technique to respond to the foreseen FR in the post-COVID-19 period. This paper watches out for the issues concerning the organization of exhibiting mix spending during a FR explicitly. It justifies referring to that the key point of convergence of this paper is on the client (detached) retailing section, yet a bit of these encounters can in like manner be summarized to various regions.

Coronavirus and the move in buyer direct Although we regardless of all that need to clutch locate the certifiable impact of the COVID-19 pandemic on the economy eventually, most desires show that there will totally be a slump in the post-COVID 19 period (HBR 2020). Publicizing composing shows that customers become more worth sensitive and more danger opposed during a FR and moderate on their utilization, especially on solid items (Deleersnyder et al. 2009). Of course, the impact of FR on non-tough organizations, for instance, purchaser packaged items (BBP), could even be sure, given that it is all the more difficult to shorten non-strong buyer stock (Van Heerde et al. 2013; Lamey et al. 2007). Therefore, in the BBP part, buyers are likely going to change to more affordable different alternatives (Lamey et al. 2007), to more affordable stores like discounters, or to look for remarkable plan things (Lamey et al. 2012).

Displaying spending during a monetary slump in the accompanying zones, I talk about the implications of the developments in client lead during a FR on all of the publicizing mix segments.

General promoting spending - During a FR, one of the most generally perceived reactions of exhibiting managers is to cut elevating costs to the base, on a very basic level to make sure about transient advantages (Deleersnyder et al. 2009). Nevertheless, there is a collection of confirmation demonstrating that cutting on advancing isn't generally the most ideal decision, especially if the accentuation is on the long stretch.

One of the principal assessments here was done by Srinivasan et al. (2005), who tentatively demonstrated that good for dynamic exhibiting frameworks in a slump achieve common business execution during the decline. Later educational examinations have furthermore supported a

*Associate Professor, Technocrats Institute of Technology-MBA, Bhopal (M.P.) INDIA
** Assistant Professor, Technocrats Institute of Technology - MBA, Bhopal (M.P.) INDIA

proactive displaying approach, by keeping up or regardless, growing advancing spending during a FR (Dekimpe and Deleersnyder 2018; Deleersnyder et al. 2009; Lamey et al. 2012; Steenkamp and Fang 2011). The essential clarification inclining toward a proactive publicizing system during a slump is that as various firms in the business reduce their displaying practices during a plunge, a proactive firm could achieve a predominant genuine edge and bit of the general business by keeping its advancing monetary arrangement at a comparable level as before the FR.

Promoting - The vast majority of studies have again and again showed that keeping up or regardless, extending advancing spending during FRs often achieves better bit of the pie and when all is said in done execution (Dekimpe and Deleersnyder 2018; Lamey et al. 2012; Steenkamp and Fang 2011), notwithstanding the common demonstration of firms diminishing advancing during the FR. During a FR, less competitors partake in advancing, achieving decreased jumble. In this manner, a firm that extends its level of publicizing development similar with competitors (i.e., constructs a great deal of voice) in troublesome stretches can foresee a greater effect on firm execution.

In particular, publicizing adaptability will be greater in determinedly repetitive organizations (e.g., tough items). In immovably rehashing adventures, bargains fall powerfully in a FR, inferring that various customer will be lost. In the occasion that better money related events show up again, these lost customers will return to the market. Advancing empowers these new contenders to invigorate their thing data (Steenkamp and Fang 2011).

On the other hand, long stretch advancing versatilities are lower in a slump for the BBP class, prescribing that publicizing should be diminished during FR for BBP firms. This is because less rehashing adventures, for instance, BBP, show a more essential proportion of passing inactivity and their arrangements are less affected during FR, which offers less change for strong publicizing impacts (Van Heerde et al. 2013).

Cost - The vast majority of studies have again and again showed that keeping up or regardless, extending advancing spending during FRs often achieves better bit of the pie and when all is said in done execution (Dekimpe and Deleersnyder 2018; Lamey et al. 2012; Steenkamp and Fang 2011), notwithstanding the common demonstration of firms diminishing advancing during the FR. During a FR, less competitors partake in advancing, achieving decreased jumble. In this manner, a firm that extends its level of publicizing development similar with competitors (i.e., constructs a great deal of voice) in troublesome stretches can foresee a greater effect on firm execution.

In particular, publicizing adaptability will be greater in determinedly repetitive organizations (e.g., tough items). In immovably rehashing adventures, bargains fall powerfully in a FR, inferring that various customer will be lost. In the occasion that better money related events show up again, these lost customers will return to the market. Advancing empowers these new contenders to invigorate their thing data (Steenkamp and Fang 2011).

On the other hand, long stretch advancing versatilities are lower in a slump for the BBP class, prescribing that publicizing should be diminished during FR for BBP firms. This is because less rehashing adventures, for instance, BBP, show a more essential proportion of passing inactivity and their arrangements are less affected during FR, which offers less change for strong publicizing impacts (Van Heerde et al. 2013).

Innovative work (R&D) - The investigation finding on the impact of R&D adventures during FR is consistent with the finding on publicizing spending, as it is exhibited that R&D theory has a counter-rehashing plan. This infers extending R&D spending during a FR has a vital beneficial outcome on an organization's introduction, again due to lessened genuine wreck (Steenkamp and Fang 2011).

Van Heerde et al. (2013) similarly found that R&D adventures during FRs lead to higher long stretch additions in bit of the pie and advantage and that R&D theory is fundamentally more effective than advancing during FR. The differential practicality of the two instruments is especially expressed in incredibly rehashing organizations, for instance, tough product. Consequently, if the firm faces restricted spending necessities and requirements to pick between either keeping up R&D or publicizing during a FR, results show that keeping up R&D is connected with better association execution.

New item dispatch - Talay, Pauwels, and Seggie (2012) thought about the dispatch of new things over 60 years in the vehicle business and they found that the new things moved in a moderate slump had higher long stretch perseverance prospects. In particular, they found that new things impelled after a decline fared better than those moved later.

Lamey et al. (2012) furthermore found that innovative new thing dispatches are fundamental to doing combating against the advancement of unassuming private names during an ER, as they are all the more difficult to mimic. That being expressed, the reality of the decline presents a limit condition to the benefits of another thing dispatch, as the thing perseverance chances are lower when it is impelled in an outrageous slump (Talay, Pauwels, and Seggie 2012).

Conclusion - Displaying bosses should realize that customers are acting and changing their lead continuously in the COVID-19 pandemic period. Thusly, there is an authentic danger of grasping a "no-movement" disposition and keeping up until things boil down to normal to act. Significant lots of (accurate) research in displaying have shown that recessionary periods allow to sponsors to build up their picture's bit of the general business, especially if they are set up to think long stretch. Contingent upon the publicizing composing, here, I summarize a couple of vital pieces of information for exhibiting chiefs to effectively re-

orchestrate their advancing activities during a FR:

1. General displaying spending: A proactive promoting approach is an amazing strategy to direct the negative effect of a FR on the circumstance of brands in the market and explicitly, to keep customers from (forever) changing to more affordable choices available in the market, (for instance, private names).
2. Advertising: There is an open entryway in keeping up publicizing spending during an emergency room to keep or addition a great deal of voice. It is significantly less costly to get to more amazing advancing correspondence during a FR.
3. Price: Temporary worth reductions are an especially convincing contraption to hold bit of the general business during the FR, especially if there is strong contention in a specific arrangement/brand with various private names.
4. New thing dispatch: Firms ought to continue with their new thing dispatch adventures during a FR, explicitly in the window following the plunge, when good conditions of the dispatch can be more tremendous.

References:-

1. CNBC (2020). Google to cut marketing budgets by as much as half, directors warned of hiring freezes, CNBC, [available at https://www.cnbc.com/2020/04/23/google-to-cut-marketingbudgets-hiring-freeze-expected.html].
2. Dekimpe, Marnik G and Barbara Deleersnyder (2018). Business cycle research in marketing: areview and research agenda, Journal of the Academy of Marketing Science, 46 (1), 31–58.
3. Deleersnyder, Barbara, Marnik G Dekimpe, Jan-Benedict E M Steenkamp, and Peter S H Leeflang (2009). The role of national culture in advertising's sensitivity to business cycles: An investigation across continents, Journal of Marketing Research, 46 (5), 623–36.HBR (2020). Brand Marketing Through the Coronavirus Crisis.
4. Van Heerde, Harald J, Maarten J Gijsenberg, Marnik G Dekimpe, and Jan-Benedict E M Steenkamp (2013). Price and advertising effectiveness over the business cycle, Journal of Marketing Research, 50 (2), 177–93.
5. Lamey, Lien, Barbara Deleersnyder, Marnik G Dekimpe, and Jan-Benedict E M Steenkamp (2007). How business cycles contribute to private-label success: Evidence from the United States and Europe, Journal of marketing, 71 (1), 1–15.
6. Jan-Benedict E M Steenkamp, and Marnik G Dekimpe (2012). The effect of business-cycle fluctuations on private-label share: what has marketing conduct got to do with it?, Journal of Marketing, 76 (1), 1–19.
7. Srinivasan, Raji, Arvind Rangaswamy, and Gary L Lilien (2005). Turning adversity into advantage: does proactive marketing during a recession pay off?, International Journal of Research in Marketing, 22 (2), 109–25.
8. Statistica (2020). GDP growth in France from 2020 to 2021. Steenkamp, Jan-Benedict E M and Eric Fang (2011). The impact of economic contractions on the effectiveness of R&D and advertising: evidence from US companies spanning three decades, Marketing Science, 30 (4), 628–45.
9. Talay, M Berk, Koen Pauwels, and Steven Seggie (2012). To Launch or Not to Launch in Recessions? Evidence from over 60 Years in the Automobile Industry, MSI working paper series 12–109, Cambridge MA.
10. The Nielsen (2020). COVID-19: TRACKING THE IMPACT ON FMCG, RETAIL AND MEDIA,Nielsen, [available at https://www.nielsen.com/us/en/insights/article/2020/covid-19- tracking the- impact-on-fmcg-and-retail/].

****

संगीत संस्थानों का संगीत के विकास में योगदान (ऐतिहासिक मेवाड़ एवं उदयपुर शहर के संदर्भ में)

डॉ. पामिल मोदी* बिन्दू जोशी **

प्रस्तावना – प्रस्तुत लेख संगीत के विकास में संगीत संस्थानों के योगदान पर आधारित हैं। संगीत की शिक्षा-प्रणाली प्रमुख रूप से दो प्रकार की रही है। 'एक व्यक्तिगत पद्धति जिसे गुरूकुल पद्धति के रूप में जाना जाता है और दूसरी संस्थागत संगीत शिक्षण या विद्यालयीन शिक्षण प्रणाली।' प्राचीन काल में भारत में गुरूकुल पद्धति प्रचलित थी, गुरु गृह में विद्यार्थी रहते और वर्षो वर्ष गुरु की सेवा कर ध्यान प्राप्त करते, कालान्तर में हमारे देश में विद्यालय द्वारा शिक्षण प्रणाली का आगमन हुआ, इस तरह की शिक्षण प्रणाली से विद्या अर्जन करना सहज और सुलभ हो गया। भारतीय शास्त्रीय संगीत की बात करे तो इस विद्या को ग्रहण करने हेतु ब्रिटिशकाल तक गुरु-शिष्य प्रणाली ही प्रचलित थी। प्राचीन भारत के इतिहास के पन्ने उलट कर देखे तो ज्ञात होता हैं की चंद्रगुप्त और विक्रमादित्य के समय के राजभवनों में भी संगीत आचार्यो को विद्यालयों में उच्च वेतन देकर शिक्षण देने हेतु नियुक्त किया जाता था। तक्षशिला और नालंदा के विश्वविद्यालयों में संगीत के पृथक विभाग हुआ करते थे। ग्वालियर के महाराजा मानसिह तोमर ने भी ध्रुपद गायकी की शिक्षा देने हेतु विद्यालय की स्थापना की परन्तु इन सब प्रयत्नों को उतना यश कभी नहीं मिला। गुरु-शिष्य शिक्षण प्रणाली ही फलती-फूलती रही। ब्रिटिश काल में भारतीय संगीत जगत में दो ऐसे गुणीजनो विद्वानों का जन्म हुआ जिनके प्रयत्नों ने भारतीय संगीत को अत्यन्त उँचाईयों पर पहुँचा दिया,ये दो देवदूत, मसीहा थे पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर और पंडित विष्णु नारायण भातखंडे। वर्तमान में संगीत शिक्षण सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थानों के स्तर पर दिया जा रहा है। इन संस्थानों द्वारा संगीत शिक्षण में अपना-अपना श्रेष्ठ योगदान दिया जा रहा है जिससे बेहतर कलाकार और संगीत शिक्षकों की नई पीढ़ी को सामने आने का अवसर मिल रहा हैं।

उदयपुर और संगीत – उदयपुर में वर्तमान काल से लगभग चार हजार वर्ष पूर्व सामूहिक सामाजिक जीवन संबंधी जीवन शैली पनप चुकी थी और संस्कृति के कलापरक घटकों, यथा-स्थापत्य, मूर्तन, चित्रांकन आदि घटकों का भी विकास होने लगा गया था, जिसके प्रभूत साक्ष्य पुरातात्विक अन्वेषणों एवं उत्खननों से उद्घाटित हुए हैं। किन्तु इन कला परक गतिविधियों के साथ संगीत कला संबंधी गतिविधियों के कोई पुरातात्विक साक्ष्य सामने नहीं आ सके हैं। ऐसी स्थिति में अनुमान के आधार पर यही कहा जा सकता है कि मेवाड़ क्षेत्र में विकसित होने वाली प्रागैतिहासिक संस्कृतियों के विकास काल में हर्षोल्लास, उमंग, उत्साह, सामूहिक आमोद-प्रमोद के लिए यहाँ के निवासी किसी न किसी प्रकार की सांगीतिक गतिविधियों को अवश्य संचालित करते रहे होंगे, क्योंकि जिस समयावधि में मेवाड़ क्षेत्र में प्रागैतिहासिक काल की संस्कृतियाँ विकसित हो रही थीं, उस काल की भारत के अन्य भागों में विकसित होने वाली सभ्यता एवं संस्कृति में सांगीतिक गतिविधियों के साक्ष्य उपलब्ध हैं।

आर्येतिहासिक काल –आर्येतिहासिक काल में मेवाड़ क्षेत्र के संगीत के बारे में भी अनुमान के आधार पर ही यह स्वीकार किया जाना उचित होगा कि आर्येतिहासिक काल के मेवाड़ में भी अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए किसी न किसी प्रकार की सांगीतिक गतिविधियों को अवश्य संचालित करते रहे होंगे, क्योंकि जिस समाज में धार्मिक एवं सामाजिक गतिविधियाँ सम्पन्न होती हैं, वहाँ निश्चयात्मक रूप से सांगीतिक गतिविधियाँ अनिवार्यत: संचालित होती हैं। वस्तुत: समाज धर्म और संगीत में परस्पर घनिष्ठ संबंध है।

छठी शताब्दी – मेवाड़ क्षेत्र के सांगीतिक परम्परा की साक्ष्य परक जानकारी छठी शताब्दी ईस्वी से प्राप्त होती है। मुख्यतया मेवाड़ क्षेत्र के प्राचीन मंदिरों की बाह्य दीवारों-छतों आदि पर उत्कीर्ण संगीत मण्डलियों एवं विविध प्रकार के वाद्य, यथा-पखावज, वीणा, बाँसुरी, मँजीरा, झाँझ आदि बजाने के अभिप्रायों में मूर्तियाँ अथवा मूर्ति-फलक मिलते हैं। इस प्रकार के मूर्ति साक्ष्यों से प्रकट होता है कि निश्चयात्मक रूप से प्राचीन काल में मेवाड़ क्षेत्र में सांगीतिक गतिविधियाँ सुचारू रूप से संचालित होने लग गई थीं।

गुहिल वंश – पुरातात्विक मूर्तियों से संबंधित साक्ष्यों से लिखित ऐतिहासिक साक्ष्यों से यह उद्घाटित होता है कि गुहिल वंशी शासकों के आधिपत्य में आ जाने के पश्चात् मेवाड़ क्षेत्र में सांगीतिक गतिविधियाँ सुव्यवस्थित रूप में संचालित होने लग गई थी। गुहिल वंशी सुप्रसिद्ध शासक बप्पा रावल के बाद उदयपुर राज्य के सिंहासन पर आरूढ़ होने वाले शासक रावल खुम्माण प्रथम, जिसने ईस्वी सन् 812 से लेकर 836 ईस्वी तक शासन किया था, ने गहलोत वंशी गाडसी को रणगाढू के नाम से अपना पोलपात बनाया था, जिसके निर्देशन में पोलपात समूह राज्य की सभी प्रकार की सांगीतिक गतिविधियों को संचालित करता था। इस प्रसंग में यह जान लेना उपयुक्त होगा कि पूर्व मध्ययुग और मध्ययुग में राजस्थान के समस्त राजपूत राज्यों में राज दरबार की समस्त सांगीतिक गतिविधियों को संचालित करने वाले समूह के नेतृत्व करने वाले व्यक्ति को 'पोलपात' पदवी देकर नियुक्त किये जाने की प्रथा थी।

रावल रतन सिंह – मेवाड़ में संचालित होने वाली सांगीतिक गतिविधियों के प्रसंग में यह ज्ञातव्य है, कि रावल रतन सिंह के शासनकाल में यदाँत्या समूह के पोलपात बनाये जाने के बाद भारतीय संघ में विलीनीकरण तक, दाँत्या समूह से संबंधित लोग सांगीतिक गतिविधियों को संचालित करने में

*विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी, संगीत विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

प्रमुख भूमिका निभाते रहे, किन्तु देश काल के परिवर्तन के साथ धीरे-धीरे उस समूह को पोलपात कहे जाने की प्रथा समाप्त हो गई और उन्हें, नगारची, ढोली आदि नामों से पुकारा जाने लगा। यही नहीं, समय बीतने के साथ उदयपुर में बाहर से आने वाले अथवा स्थानीय स्तर पर संगीत कला में अपना विशेष स्थान बनाने वाले व्यक्तियों और उनकी वंश परंपरा में संगीत विद्या को अपना जीवनाधार बनाने वालों को भी राज्य की सांगीतिक गतिविधियों में उचित स्थान मिलने लगा। परिणाम स्वरूप उदयपुर में संगीत साधना करने वाले कई कलाकार आकर बस गए और उन्होंने संगीत एवं ध्रुपद गायन शैली के विकास में योगदान दिया।

दाँत्या घराना – इस दॉत्या घराने का मुख्य कार्य उदयपुर राजघराने की समस्त सांगीतिक गतिविधियों का संचालन करना था। इस घराने के संगीतज्ञों ने रावल रत्न सिंह से लेकर महाराणा प्रताप तक मांगलिक, युद्धपरक, मनोरंजन एवं भक्ति परक संगीत संबंधी सभी गतिविधियों का संचालन किया, किन्तु महाराणा प्रताप के शासन काल में दाँत्या घराने के 'नीका' नामक एक मुखियाँ ने जवार की रोटी को अपने भाले की ऊपरी नोक में फंसाकर लोगों को दिखाया और लोगों को बताया कि उदयपुर के महाराणा उन्हें ऐसी रोटी खाने को देते हैं। इस बात पर महाराणा प्रताप को बड़ा आंतरिक संताप हुआ और प्रताप ने दाँत्या घराने के लोगों को देश निकाला दे दिया और बल्ला घराने के मुखिया को राज्य की सांगीतिक गतिविधियों को संचालित करने का दायित्व सौंपा। किन्तु बल्ला घराने के बारे में कोई विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं है।

महाराणा फतेहसिंह – महाराणा फतेहसिंह के शासनकाल में दाँत्या मणिकलाल को विक्रम संवत् 1944 विधिवत सनद प्रदान कर पुन: उदयपुर की सांगीतिक गतिविधियों के साथ जोड़ा। महाराणा फतहसिंह के शासनकाल में इस घराने में शायबलाल, गेहरीलाल, शंकरलाल आदि प्रमुख संगीत साधक हुए, जो सभी प्रकार की सांगीतिक गतिविधियों का कुशलता के साथ संचालन करते थे। इसी घराने में महाराणा भूपाल सिंह के शासनकाल में उदयलाल और उसके बाद उदयलाल के पुत्र दयानंद दाँत्या ने अपने घराने के संगीत को संरक्षित करने का प्रयत्न किया, किन्तु महाराणा भूपालसिंह के स्वर्गवासी हो जाने पर राज्याश्रय समाप्त हो गया और दाँत्या घराने की परंपरा लगभग समाप्त हो गई।

नगारची, ढोली एंव ढाढ़ियों के घराने – ऐतिहासिक काल के उदयपुर की सांगीतिक गतिविधियों में नगारचियों, ढोलियों एवं ढाड़ियों का भी प्रमुख स्थान रहा है। यद्यपि दाँत्या घराने की तरह अन्य नगारचियों, ढोलियों एवं ढाढ़ियों के किसी विशिष्ट घराने का कोई संदर्भ उदयपुर के इतिहास से संबंधित दस्तावेजों में नही मिलता, किन्तु उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दी के दस्तावेजों, बहीड़ों, आदि में नगारचियों, ढोलियों, ढाढ़ियों, आदि को वेतन देने के उल्लेख उपलब्ध हैं। इनमें मांगलिक अवसरों पर अथवा पर्वो-त्यौहारों पर संगीतिक प्रस्तुतियाँ देने वाले नगारचियों, ढोलियों एवं शहनाई-नक्कारा बजाने वाले ढाढ़ियों के नाम मिलते है। उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दी में जिन नगारचियों ने उदयपुर में रहकर अपनी सेवाएँ दीं, उनमें परसो, रामों, गणेश, भूज़ो, माणों, नड़ों, गोविन्दों, छवाजी, लक्ष्मण, मोवालाल, चत्रभुज, चुन्नीलाल, परसराम, हीरा, कसना, मोड़ा, सुखा, भूरा, सवलाल, उदेलाल, आदि के नाम उल्लेखनिय हैं।

प्रमुख कलावंत – भारत में प्राचीन काल से चली आ रही संगीतिक परंपरा के मध्यकाल में शास्त्रीय संगीत संबंधी व्यवहारिक विशिष्टता रखने वाले, विशेषकर ध्रुपद गायन शैली से संबंधित संगीतज्ञों को कलावंत पुकारा जाता था।उसी परंपरा में उदयपुर में भी शास्त्रीय संगीत विशेषकर ध्रुपद के क्षेत्र में व्यावहारिक विशिष्टता रखने वाले कलावंतों, ने उदयपुर में संगीत की एक विशिष्ट पहचान बनाने में योगदान दिया है। अपनी सांगीतिक विशेषता से इस भू-भाग के संगीत को समृद्ध करने वाले कलावंतों या संगीतज्ञों के बारे में जानकारी प्रदान करने वाली अठारहवीं शताब्दी उत्तारार्द्ध के पहले की कोई स्त्रोत-सामग्री उपलब्ध नहीं होती।

स्वतंत्रता पूर्व संगीत प्रतियोगिताएँ – उदयपुर में संगीत की गायन एवं वादन विधाओं में युवक-युवतियों को प्रोत्साहित करने के लिए भी बड़े पैमाने पर संगीत प्रतियोगिताओं का आयोजन होता था। ऐसी प्रतियोगिताओं में संगीत में रूचि रखने वाले सभी आयु के स्त्री -पुरूषों के साथ विशिष्ट संगीत साधक भी सम्मिलित होते थे। वस्तुत: युवक युवतियों को प्रोत्साहित करने संबंधी इस प्रकार की सांगीतिक प्रतियोगिताएँ मात्र प्रतियोगिता ही न होकर युवक-युवतियों के संगीत समारोह होते थे, जिनमें प्रतियोगियों को प्रस्तुति के लिए पर्याप्त समय दिया जाता था। ऐसे आयोजनों के प्रति जन सामान्य में गहन रूचि थी और पर्याप्त बड़ी संख्या में जन सामान्य इस प्रकार के सांगीतिक आयोजनों में उपस्थित होकर, भविष्य के होनहार बन सकने वाले संगीत साधक युवक-युवतियों को प्रोत्साहित करते थे।

स्वतंत्रता पूर्व उदयपुर में संगीत – उदयपुर में संगीत संबंधी आयोजनों के प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि स्वतंत्रता पूर्व काल की समयावधि में इस भू-भाग के नगरों-कस्बों में रहने वाले मध्यम वर्ग एवं उच्च वर्ग के परिवारों में संगीत के प्रति बड़ा लगाव था। अधिकांश परिवारों में सितार, तबला, तानपुरा, हारमोनियम, इसराज, सुरबहार, इत्यादि सांगीतिक वाद्ययंत्रों में से एक-दो वाद्य यंत्र अवश्य होते थे और परिवार के वयस्क पुरुष एवं युवक-युवतियाँ गायन अथवा वाद्य वादन सीखते थे। ऐसे वातावरण में ही इस भू-भाग के प्रमुख नगरों कस्बों में प्रतिमाह अथवा बीस पच्चीस दिन के कालान्तर में किसी न किसी प्रकार की संगीत गोष्ठी अथवा संगीत संध्या जैसे आयोजन होते रहते थे। ऐसे आयोजनों में भी नगर या कस्बे के प्रमुख संगीतज्ञ शिरकत करते थे और नये पुराने गायक-वादक अपनी प्रस्तुतियाँ देते थे। इस प्रकार के आयोजन की वजह से नगरों, कस्बों और जागीरी ठिकानों में संगीत, विशेषकर शास्त्रीय संगीत का अच्छा वातावरण था, किन्तु समय परिवर्तन के साथ अब इस प्रकार की संगीत गेष्ठियों की परंपरा पूर्णतया विलुप्त हो चुकी है।

स्वतंत्रता के बाद उदयपुर में संगीत

महाराणा कुंभा संगीत परिषद् (उदयपुर) – इस संस्था की स्थापना श्री जी. एस. शेखावत के द्वारा 1962 ई. में हुई। यह संस्था राजस्थान संगीत नाटक अकादमी से अनुदान प्राप्त करती है। इसका उद्देश्य शास्त्रीय संगीत और संबधित साहित्य का प्रकाशन करना है। महाराणा कुंभा द्वारा रचित संगीत राज ग्रंथ का प्रकाशन यहीं से हुआ। डॉ. प्रेमलता की अंग्रेजी/संस्कृत की शोध पुस्तक (८००पृष्ठ) 'संगीतराज' (नृपति कुम्भकर्ण प्रणीत:) 1963 में हिन्दू विश्वविद्यालय संस्कृत पब्लिकेशन बोर्ड द्वारा छपाई गई है। महाराणा कुम्भा के 'संगीतराज' पर यह स्वंय में एक अद्वितीय प्रस्तुति है।

भारत एवं राजस्थान सरकार, संगीत कला अकादमियों आदि एवं अन्य संस्थाओं से अनुदान आदि प्राप्त कर उदयपुर में 'कुम्भा संगीत भवन' का निर्माण कराया है। शास्त्रीय संगीत के अखिल भारतीय स्तर का सर्वश्रेष्ठ संगीतज्ञों का एक विशाल वार्षिक त्रिदिवसीय सम्मेलन 'महाराणा कुम्भा संगीत समारोह', शरद महोत्सव, चार क्षेत्रीय संगीत सभाएं तथा प्रतिमाह एक अच्छे शास्त्रीय संगीत संधया की प्रस्तुति नि:शुल्क आयोजित की जाती

है। उदयीमान कलाकारों की प्रतियोगिताएं एवं विजेताओं को कुम्भा समारोह में मंच प्रदान किया जाता है। संगीत की पुस्तकों का एक विशाल पुस्तकालय का भी संचालन किया जाता है।

प्रतिवर्ष राष्ट्रीय स्तर की शास्त्रीय संगीत के बारे में शोधापूर्ण एक सेमीनार भी आयोजित की जाती है। हमें गर्व है कि इन वर्षों में भारत के 1500 से भी अधिाक सर्वोच्च शास्त्रीय संगीत गायक, वादक एवं नर्तक हमारे मंच को सुशोभित कर चुके हैं। इसी कारण आज कोई भी कलाकार महाराणा कुम्भा संगीत परिषद के मंच पर अपनी प्रस्तुति देकर स्वयं को गौरवान्वित मानता है।

परिषद् द्वारा प्रतिवर्ष कुम्भा की स्मृति में विशाल संगीत समारोह आयोजित किया जाता है जिसमें गायन, वादन एवं नृत्य में निष्णात देश के चोटी के कलाकार आमंत्रित किए जाते हैं। अब तक लगभग तीन सौ मूर्धन्य कलाकार उदयपुर में परिषद् के मंच पर अपनी उत्कृष्ट कलाओं का प्रदर्शन कर चुके हैं। इन समारोहों की अध्यक्षता एवं मुख्य अतिथि के रूप में देश के राष्ट्रपति से लेकर राज्य के विशिष्ट व्यक्तित्व अपनी उपस्थिति से इस वार्षिक आयोजन को अलंकृत कर चुके हैं।

पश्चिम क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र – 23 मार्च 1985 को भारत के प्रधानमंत्री ने अपने उत्तारी क्षेत्र के हुसैनीवाला में क्षेत्रीय सांस्कृतिक केन्द्रों की स्थापना की घोषणा की। इन केन्द्रों के मुख्यालय सामान्यतया राज्य की राजधानियों से दूर स्थित हैं। (कोलकाता में पूर्वी क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र को छोड़ कर) स्थान के चयन का मानदंड स्थान का परंपरागत सांस्कृतिक होना जनता की वहाँ तक पहुँच होना है। संस्थागत रूप से प्रत्येक केन्द्र के पास एक परिसर होता है जिसमें प्रदर्शनियों के लिए वीथियाँ, मंच कलाओं के लिए सुविधाएँ, प्रेक्षागृह, अभिलेखागार, पुस्तकालय इत्यादि शामिल होते हैं।

राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, उदयपुर (एस.आई.ई.आर. टी.) – राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना 11 नवम्बर 1978 को शिक्षा के क्षेत्र में गुणात्मक उत्थान के लिये उदयपुर में की गई। राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान प्रमुख रूप से विद्यालय शिक्षा के अकादमिक पहलू से सम्बद्ध है जिसमें पाठ्यक्रम, पाठ्यचर्या निर्माण, पाठ्यपुस्तक निर्माण, शिक्षक संदर्शिका एवं शिक्षक प्रशिक्षण आदि सम्मिलित है। राजस्थान राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान अरावली उपत्यकाओं में अवस्थित है, जो कि जनजाति बाहुल्य क्षेत्र है। समृद्ध सांस्कृतिक विरासत, प्राकृतिक संसाधनों और सुन्दर परिदृष्यों से सम्पन्न उदयपुर का एक विश्व प्रसिद्ध पर्यटन स्थल 'सहेलियों की बाड़ी' के सामने स्थित है।

आकाशवाणी केन्द्र – आकाशवाणी पर प्रसारण से पूर्व संगीत का एक विस्तृत दायरा नहीं था। वह या तो रियासतों में बंद था या लोक कला के रुप में पनप रहा था। दोनों ही स्थितियों में इसका दायरा बहुत संकुचित था। अलग–अलग रियासतों में अलग–अलग घरानों के संगीतज्ञों का पोषण होता था तथा लोक संगीत अपने–अपने गांवों, कस्बों आदि के सीमित दायरे में रहता था।

महाराणा कुम्भा संगीत कला ट्रस्ट – महाराणा कुंभा संगीत कला ट्रस्ट भारतीय शास्त्रीय संगीत, नृत्य, कला, नाटक और सांस्कृतिक महत्व की अन्य गतिविधियों को बढ़ावा देता है और प्रोत्साहित करता है। ट्रस्ट सभी प्रकार के भारतीय–शास्त्रीय और लोक संगीत, के सभी रूपों, स्थानीय और जनजातीय कला और सभी विषयों, नाटक और नाट्य कला की ललित कलाओं के लिए व्यावहारिक समर्थन और संरक्षण देता है।

महाराणा कुम्भा कला केन्द्र उदयपुर – इस संगीत विद्यालय की स्थापना 1947 में राजस्थान विद्यापीठ में की गई। यहाँ सगींत की कक्षाओं का निरंतर संचालन किया जाता था और दूसरी ओर संगीत से जुड़े विभिन्ना आयोजन किए जाते रहे हैं। प्रारम्भ में उक्त विद्यालय की संबन्धता भातखन्डे संगीत विद्यापीठ से थी जिससे संगीत विशारद की उपाधी प्रदान की जाती थी।

भारतीय लोक कला मण्डल – विश्वविख्यात लोक कलाविद् पद्मश्री (स्व.) देवीलाल सामर द्वारा वर्ष 1952 में स्थापित भारतीय लोक कला मण्डल, लोक कलाओं के संरक्षण, विकास, उत्थान एवं प्रचार–प्रसार के लिए विश्व में एक विशिष्ट सांस्कृतिक संस्थान के रुप में पहचाना जाता हैं।

उपसंहार – संस्थाओं में संगीत प्रशिक्षण का मुख्य उद्देश्य रहा है विद्यार्थी के अंदर संगीत के प्रति गहरी समझ पैदा करना, उसके अंदर एक विश्लेषक की दृष्टि और एक अध्येता के गुण स्थापित करना। स्वाभाविक तौर पर इन उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिये उसके अंदर स्वर और ताल की अच्छी समझ पैदा होनी चाहिये जो कि एक गुरू अथवा शिक्षक ही कर सकते हैं। इन शिक्षकों का संरक्षण संगींत संस्थान करते आए हैं। परन्तु वर्तमान समय में संगीत शिक्षण के उद्देश्य में अन्तर आ रहा हैं,गुरु शिष्य परम्परा में जहाँ लक्ष्य संगीतकार का निर्माण होता था ,वहा विद्यालयीन संगीत पद्धति में संगीत की समझ रखने वाले श्रोता निर्माण करना हो गया। विद्यालयो की स्थापना के पीछे मात्र इतना ही उद्देश्य था, विद्यालयीन संगीत शिक्षण पद्दति की स्थापना के समय भी विद्यालयों के द्वारा गुणि कलाकारों, गुरुओं व जानकारों की निर्मिती का ही उद्देश्य था। जैसे–जैसे संगीत की शिक्षण पद्धति में बदलाव आया वैसे–वैसे ही विद्यालयो में दी जाने वाली संगीत की शिक्षा के स्तर,शिक्षण ग्रहण करने वाले विद्यार्थियों के ग्राह्यता के स्तर व इस शिक्षण के प्रति लोगो की रूचि में अन्तर आने लगा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सैयदैन, के. जी. – द फेथ ऑफ एन एजुकेशनिस्ट:– एप्ली फॉर ह्ययुमन वैल्युज
2. भारतीय शिक्षा:– विकास और समस्याएँ– डॉ. के. के. तिवारी
3. शिक्षा दर्शन– प्रो. बलदेव भाटिया
4. भारतीय संगीत शिक्षा प्रणाली एवं उनका वर्तमान स्तर– डॉ. मधुबाला सक्सेना
5. भारतीय संगीत का इतिहास– डॉ. सुनिता शर्मा
6. संगीत शिक्षण के विविध आयाम– डॉ. कुमार ऋषितोश

****

कार्यालयीन उपकरणों के बेहतर उपयोग एवं प्रबंधन द्वारा बचतों को प्रोत्साहन

डॉ. आलोक कुमार यादव *

शोध सारांश – आजकल कार्यालय के अधिकतर कार्यों का यंत्रीकरण हो गया है। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तेजी से प्रगति के कारण, विगत वर्षों में कागजी पत्राचार में व्यापक स्तर पर कमी आई है। कार्यालय में स्वचालन व्यवस्था के विकास के कारण अब कार्यालय कागज रहित होते जा रहे हैं। कार्यालय के कार्य के मानकीकरण के लिए आधुनिक कार्यालय उपकरणों का प्रयोग किया जा रहा है, क्योंकि वैश्वीकरण के कारण इनका महत्व काफी बढ़ गया है। इसके अतिरिक्त, कार्यालय के अनेक नेमी कार्य जैसे टाईपिंग, कॉपी करना, डाक भेजना, फाइल करना, संप्रेषण आदि कार्य जो आवर्ती प्रकृति के तथा नीरस होते हैं, उन्हें कार्यालय मशीनों की सहायता अधिक सुगमता, परिशुद्धता तथा कम लागत व समय में पूरा किया जा सकता है। कार्यालयीन कार्यो को तीव्रता तथा कुशलतापूर्वक पूरा करने के लिए विभिन्न कार्यालय उपकरणों का बार बार प्रयोग किया जाता है। कार्यालय उपकरणों ने आधुनिक कार्यालयों में कार्यालयीन गतिविधियों को स्वचालित बनाने में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए हैं।

प्रस्तावना – अठारहवी शताब्दी के अंत में औद्योगिक क्रांति के परिणाम स्वरुप उत्पादन में आशातीत वृद्धि हुई जिससे विक्रय एवं विपणन से उत्पन्न समस्याओं के समाधान की दिशा में आधुनिक प्रबंध के सिद्धांतों का प्रादुर्भाव हुआ। प्रबंध एक उपक्रम के निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु नियोजन, सगंठन, निर्देशन, नियत्रण द्धारा मानवीय व भौतिक संसाधनों के समन्वय व सहयोग से संबंध रखता है। वर्तमान समय में कार्यालयीन कार्यक्षमता में वृद्धि हेतु इन्ही सिद्धांत के आधार पर व्यूह रचना निर्मित की जाती है। आधुनिक समय में व्यवसायिक कार्य एक स्थान से संचालित होने लगे इसे ही कार्यालय का नाम दिया गया। सभी व्यवसायी कार्यालय के माध्यम से व्यवसाय संचालन करने लगे कार्यालय को किस प्रकार से नियंत्रित किया जाए और उसमें कर्मचारियों का समन्वय किस प्रकार से किया जाए जिससे व्यवसाय से लाभ व आय अधिकतम प्राप्त की जा सके। वर्तमान समय में कार्यालय के कार्य को तीव्रता व कुशलतापूर्वक निष्पादन करने के लिए विभिन्न प्रकार के कार्यालयीन उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। ये उपकरण मानव मस्तिष्क की ही देन है । वर्तमान समय में व्यापार न केवल स्थानीय अपितु राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक फैला है। कार्यालय के कार्य को कुशलता पूर्वक सम्पादित करने के लिए आधुनिक कार्यालयीन उपकरणों का उपयोग किया जाता हैं। इन उपकरणों की सहायता से कार्यालयीन कार्यो को सुसगंठित ढंग से किया जाता है।

कार्यालय यंत्रीकरण – यंत्रीकरण को मशीनी प्रचालन द्धारा मानव श्रम को प्रतिस्थापित करने की प्रक्रिया के रुप में परिभाषित किया जा सकता है। एक कर्मचारी का अधिकतर समय दस्तावेजों को तैयार करने, फाइलिंग करने, डाक के रखरखाव, संप्रेषण, यात्रा व्यवस्थाएं करने आदि कार्यों में निकल जाता है। विभिन्न प्रकार के कार्यालय उपकरणों, मशीनों तथा सॉफ्टवेयर की सहायता से कर्मचारी को अपने कार्यालयीन कार्यो को पूरा करने में काफी सहायता मिलती है। प्रबंधकीय स्तर पर, निर्णय लेने, जटिल समस्याओं के समाधान आदि महत्वपूर्ण कार्यों के लिए भी कंप्यूटर तथा विभिन्न सॉफ्टवेयरों का प्रयोग किया जाता है।

अनुसन्धान पद्धत्ति – इस शोध पत्र को विभिन्न पुस्तकों, प्रबंधकीय जर्नल, पत्र-पत्रिकाओं, समाचार पत्रों एवं इन्टरनेट पर उपलब्ध सूचनाओं और जानकारियों से एकत्रित किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य :

1. कार्यालयीन उपकरणों द्धारा प्राप्त सुविधाओं का अध्ययन करना।
2. कार्यालयीन उपकरणों के लाभ एवं सीमाओं को जानना।
3. कार्यालयीन उपकरणों के बेहतर उपयोग से बचतों का अवलोकन करना।

कार्यालय के मशीनीकरण से आशय – मशीन व उपकरण आधुनिक कार्यालय का अभिन्न अंग बन गए है। उन्हे अक्सर समय व श्रम की बचत करने वाला साधन कहा जाता है। कार्यालय के विभिन्न प्रकार के कार्यो को करने के लिए अनेक प्रकार की मशीने व अन्य उपकरण उपलब्ध है। कार्यालय के मशीनीकरण से तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया से है जिसका प्रयोग करने से कार्यालय का कार्य हाथ के स्थान पर मशीनों व अन्य उपकरणों की सहायता से किया जाता है। इससे कार्यकुशलता व उत्पादन में वृद्धि होती है व कार्यालय लागत में कमी होती है। इसका अर्थ है जहाँ तक संभव तथा लाभदायक हो, कार्यालय के काम को हाथ से करने के स्थान पर मशीनों से किया जाए। कार्यकुशलता में वृद्धि, समय में बचत, लिपिकीय लागत में कमी, विशुद्धता, कर्मचारियों की नीरसता को दूर करने तथा कपट से बचाव करने के लिए आजकल कार्यालयों में मशीनों के प्रयोग को महत्व दिया जाने लगा है। मशीनों द्धारा किया जाने वाला कार्य स्वच्छ व स्पष्ट होता है तथा कार्य भी अधिक होता है। मशीनों को केवल कार्य को शीघ्रता से निपटाने के लिए ही नहीं लगाया जाता है बल्कि कार्यकुशलता में वृद्धि के लिए भी इनका प्रयोग किया जाता है। कार्यालय के मशीनीकरण का महत्वपूर्ण वित्तीय पक्ष भी है। मशीनों, उपकरणों तथा अन्य सामान का क्रय करने के लिए पूंजी की आवश्यकता होती है, इसके अतिरिक्त और भी व्यय है। जैसे बीमा प्रीमियम, स्थान की लागत, स्टेशनरी, रख - रखाव तथा मरम्मत खर्च आदि। मशीनों को योग्य चालको द्धारा चलाया जाता है, जिनकों दिया जाने वाला वेतन

* प्राचार्य, इं.गाँ. शासकीय पॉलिटेक्निक महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

लागत को काफी बढ़ा देता है। अति आधुनिक मशीने जैसे कम्प्यूटरों के लिए विशेष प्रकार के स्थान की आवश्यकता होती है इससे भी लागत में वृद्धि हो जाती है। अत: कार्यालय के कार्य को मशीनों से किया जाए या नहीं इसका निर्णय लागत को ध्यान में रखकर करना चाहिए।

कार्यालय के यंत्रीकरण के आधारभूत उद्देश्य निम्नानुसार है :

i. **श्रम की बचत –** इससे श्रम की बचत होती है क्योंकि कम कार्मिकों द्वारा बड़े स्तर पर कार्य किया जाता है।

ii. **समय की बचत –** मशीनें अधिक तीव्रता के साथ कार्य करती है तथा मानव श्रम की तुलना में अधिक परिणाम प्रदान करती हैं। इस प्रकार , मशीनों के प्रयोग से समय की व्यापक बचत होती है।

iii. **परिशुद्धता में वृद्धि –** चूंकि कार्यालय मशीनों के कारण लिपिकीय त्रुटियां न्यूनतम हो जाती हैं, इस प्रकार कार्यालय यंत्रीकरण का एक उद्देश्य कार्य में परिशुद्धता, विशेष रूप से लेखांकन, संगणन, परिकलन आदि कार्यों में लाना है।

iv. **कार्य की गुणवत्ता में सुधार –** मशीनों की सहायता से किया गया कार्य समान्यत: देखने में साफसुथरा तथा समरुप होता है।

v. **नीरसता में कमी –** कार्यालय का नैत्यिक कार्य सामान्यत: आवर्ती प्रकृति का होता है जो कि निरंतर एक जैसा होने के कारण निरसता पैदा करता है। कार्यालयी मशीनें मानव श्रम को कम करके इस नीरसता को भी कम कर देती हैं।

vi. **धोखाधाड़ी की संभावना को कम करना –** मशीनें जैसे रोकड़ रजिस्टर , चैक लेखन मशीन आदि धोखाधडी की संभावनाओं को न्यूनतम बनाती हैं और कुछ स्तर तक निधियों के कुविनियोजन को भी न्यूनतम करने में सहायक होती है।

vii. **बेहतर नियंत्रण सुनिश्चित करना –** कार्यालय का यंत्रीकरण कार्यालय प्रचालनों पर प्रबंधन के कुशल नियंत्रण को संभव बनाता है। उदाहरण के लिए, समय रिकार्डिंग मशीन कर्मचारियों की उपस्थिति को बेहतर ढंग से नियंत्रित करती है।

कार्यालय के मशीनीकरण से लाभ – कार्यालय मशीनें, जिन्हें श्रम बचत उपकरण भी कहते हैं, हमें अनेक लाभ प्राप्त होते हैं जिनका ब्यौरा निम्नानुसार है :–

वर्तमान समय में कार्यालयीन उपकरणों के उचित प्रयोग के माध्यम से प्रतिदिन सम्पादित कार्यों को करने में लगने वाले समय में बचत की जा सकती है चूंकि बिना उपकरणों के प्रयोग पर किसी कार्य विशेष को पूर्ण करने के लिए अधिक कर्मचारियों की आवश्यकता होगी, क्योंकि कार्य सम्पन्न करने की एक निश्चित समय सीमा प्रबंधन द्वारा पूर्व निर्धारित होती है। उपकरणों के नियोजित ढंग से प्रयोग करने पर निश्चित समय सीमा में कम कर्मचारियों द्वारा अधिकतम कार्य सम्पादित कराया जा सकता है। कार्यालयी मशीनों के प्रयोग से कार्य की गति में व्यापक स्तर पर तीव्रता आ जाती है, इसलिए समय की बचत के कारण कार्य की कुशलता में वृद्धि होती है।

समय की बचत के पश्चात् दूसरी प्रमुख विशेषता कार्यक्षमता में वृद्धि है। कार्यक्षमता में वृद्धि को कार्यालयीन उपकरणों के उचित प्रयोग द्वारा प्राप्त किया जा सकता है तथा कर्मचारियों की संख्या भी कम हो सकती है। जिसके परिणाम स्वरुप अधिकतम कार्य के लिए कम कर्मचारियों को कार्य प्रदान कर अपने लाभों में अपेक्षित वृद्धि की जा सकती है तथा त्रुटिविहिन कार्यप्रणाली के माध्यम से कार्यालयीन कार्य सम्पादित किये जा सकते है। कार्यालयीन उपकरणों के प्रयोग से कर्मचारियों को अपनी कार्यक्षमता में वृद्धि करने के अवसर प्रबंधक द्वारा प्रदान किये जाते है। इससे कर्मचारियों को शारीरिक रूप से अधिक श्रम करने की आवश्यकता नहीं होती है तथा कर्मचारी निर्धारित समय सीमा से कम समय में उन्हें प्रदान किए गए कार्य को सम्पादित करते है।

कार्यालयीन उपकरणों का यथास्वरुप यथास्थान उचित प्रयोग करने से कार्य की अधिकता के साथ कार्यालय में अनावश्यक व्ययों पर अंकुश लगाया जा सकता है तथा कार्यालयीन कार्यों में प्रयुक्त सामग्री भी उपकरणों के माध्यम से कम मात्रा में प्रयुक्त होती है। जिससे प्रबंधन के द्वारा अपने व्ययों में कमी के माध्यम से अपने अर्जित लाभ की सीमा में वृद्धि की जा सकती है।

जब हाथ से कार्य किया जाता है तो गलतियों की संभावना अधिक होती है मशीनों के उपयोग से कार्य अधिक शुद्धता से किया जा सकता है और कम से कम अशुद्धियाँ होती है। अनेक कार्यालयीन परिकलन मशीनों व लेखाकरण मशीनों का प्रयोग करते है। इससे हाथ से किए गए कार्य की जाँच हो जाती है। वे ऐसा इसलिए करते है कि विशुद्धतापूर्वक किए गए कार्य से प्राप्त होने वाले लाभ इन मशीनों की लागत से अधिक होते है।

कार्यालय में कपट की संभावनाओं में कमी करने के लिए भी कार्यालय में मशीनों को लगाया जाता है। कपट के अवसरों में कमी करने के उद्देश्य से चैक लिखने वाली मशीन का प्रयोग किया जा सकता है यद्यपि लिखे जाने वाले चैकों की संख्या कम ही क्यों ना हो मशीनों द्वारा किया गया कार्य साफ – सुथरा तथा व्यवस्थित होता है। इस प्रकार मशीनीकरण द्वारा कार्यालय के कार्य की गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

मशीनों द्वारा काम करने से प्रति घंटा काम करने की लागत में कमी होती है। कर्मचारी मशीनों की सहायता से अपना काम अधिक तेजी से पूरा करते है। इससे कर्मचारियों को दिए जाने वाले वेतन के खर्चे में बचत होती है। इसके अतिरिक्त कुछ मशीने ऐसी होती है जो एक ही साथ अनेक कार्य करती है जिससे लागत में कमी होती है। मशीनों के प्रयोग से काम करने से जिस कार्य में पहले कई घंटे लगते थे मशीनों के प्रयोग से काम करने की गति बहुत बढ़ जाती है हाथ से काम करने में जिस कार्य में पहले कई घंटे लगते थे मशीनों के प्रयोग से वही कार्य कुछ ही समय में हो जाता है।

कार्यकुशलता में वृद्धि होने से लाभप्रदता में भी वृद्धि होती है इससे संस्था में व्यवहार करने वाले व्यक्तियों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। मशीनों द्वारा कार्य करने से अधिक परिशुद्धता आती है। गलती होने के अवसर लगभग समाप्त ही हो जाते है। इस प्रकार काम में कोई बाधा नहीं होती तथा कार्य शीघ्रता और सरलता से होता रहता है। इसके द्वारा कार्यालय के नैत्यिक प्रकृति के कार्यों एवं गतिविधियों का मानकीकरण में सहायता मिलती है अन्तत: इस कार्य को समन्वित किया जा सकता है।

कार्यालय में मशीनों के प्रयोग द्वारा प्रबंधक को अपने अधीनस्थ कर्मचारियों पर नियत्रंण रखने में सुविधा होती है। लेखाकरण मशीनों के प्रयोग से कपट की संभावना कम हो जाती है तथा विभिन्न लेखा प्रक्रियाओं के लिए उत्तरदायित्व को निश्चित किया जा सकता है। कार्यालय का यंत्रीकरण, किए गए कार्य की बेहतर परिशुद्धता को सुनिश्चित करता है। लेखांकन मशीनों के प्रयोग द्वारा लिपिकीय त्रुटियों में व्यापक स्तर पर कमी की जा सकती है।

कार्यालय में ऐसे कार्य जो बार – बार किए जाते है प्राय: उकताहट व नीरसता उत्पन्न करते है और उनमें समय भी अधिक लगता है। ऐसे कार्यों को यदि मशीन द्वारा किया जाए तो नीरसता में कमी होती है इसके

परिणामस्वरुप कर्मचारी नीरसता और उकताहट से बच जाते है और उनका मनोबल बढ़ता है क्योंकि एक ही तरह के कार्य को बार – बार करने से जो नीरसता होती है वह मशीनों का प्रयोग करने से दूर हो जाती है।

कार्यालय उपकरण के प्रयोग से कार्यालयी सेवाओं में सुधार होता है। इससे ग्राहकों तथा जनसाधरण को बेहतर सेवाएं उपलब्ध कराने तथा संगठन की प्रतिष्ठा को और अधिक निखारने में सहायता मिलती है

कार्यालय के मशीनीकरण की सीमाएं – कार्यालय में मशीनों को लगाने के लिए बहुत अधिक धान की आवश्यकता होती है जो छोटी संस्थाओं के लिए संभव नहीं हो सकती है कुछ मशीनों को चलाने की लागत भी बहुत अधिक होती है। इसका एक उदाहरण कम्प्यूटर है। छोटे कार्यालय ऐसी मशीनों को लगाने व चलाने की लागत को सहन नहीं कर सकते। कार्यालय की किसी भी मशीन के खराब हो जाने या बंद हो जाने से संस्था को भारी हानि होती हैं मशीन के बंद हो जाने से कार्यालय का काम अवरुद्ध हो जाता है। इससे अनेक विभागों के कार्य में रुकावट होती है।

किसी मशीन के बंद हो जाने की वास्तविक लागत उसे मरम्मत कराने की लागत से बहुत अधिक होती है। कार्यालयीन उपकरणों का उनकी कार्यक्षमता तक उपयोग नहीं भी हो सकता है क्योंकि उनका वैकल्पिक उपयोग करना संभव नहीं हो पाता है। इसलिए ऐसी मशीनों का उपयोग करना किफायती नहीं भी हो सकता है। निष्क्रीय मशीने निष्क्रीय श्रम के समान अलाभप्रद होती हैं।

कार्यालय में मशीनों के उपयोग से कार्य – प्रणाली में लोच समाप्त हो जाती है। कुछ मशीनों को चलाने के लिए विशेष योग्यता की आवश्यकता होती है यदि मशीन का चालक अनुपस्थित है या उपलब्ध नहीं है तब मशीन बेकार पड़ी रहेगी और काम भी रुका रहेगा। मशीनों को चलाने के लिए पहले कर्मचारियों को प्रशिक्षण देना आवश्यक होता है। जब अति आधुनिक व कीमती मशीनों का उपयोग करना हो तब प्रशिक्षण की अवधि अधिक होगी तथा महँगी भी होगी। जो कि मशीनों के उपयोग से उत्पन्न लाभों की तुलना में अधिक हो सकती है।

मशीनों के प्रयोग करने के परिणामस्वरूप मानवीय कार्य में कमी आ जाती है तथा कम श्रमिकों की आवश्यकता पड़ती है। इससे बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न हो सकती है इसी कारण कर्मचारियों के संघ कार्यालय प्रक्रियाओं के मशीनीकरण का विरोध करते है। जब तक श्रमिकों को कोई दूसरा काम नहीं दिया जा सके, तब तक मशीनीकरण को लागू करना वांछनीय नहीं होता। अनेक मशीनों में अप्रचलित हो जाने का जोखिम अधिक होता है। क्योकि प्रौद्योगिक विकास के कारण नए अविष्कार होते है और इन मशीनों का उपयोगी जीवन समाप्त हो जाने से पहले ही उन्हे त्यागना पड़ सकता है। कुछ मशीनों से पूर्ण लाभ प्राप्त करने से पहले ही व पुरानी व बेकार हो जाती है। इस जोखिम से बचने के लिए जरूरी है कि केवल ऐसी मशीनों का ही उपयोग किया जाए जिन्हे कई कार्यो के लिए प्रयोग में लाया जा सके। कुछ मशीनें जैसे गणक टाइपराइटर आदि चल प्रकृति की होती है, उन्हे आसानी से एक विभाग से दूसरे विभाग तक सुविधापूर्वक नहीं ले जाया जा सकता। कुछ मशीनों को चलाने के लिए अधिक स्थान की आवश्यकता होती है कुछ मशीने ऐसी होती है जिनसे बहुत शोर होता है और अन्य कर्मचारियों को काम करने में कठिनाई होती है।

निष्कर्ष – इस प्रकार निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि कार्यालयीन उपकरणों का नियोजित ढंग से प्रयोग कर प्रबंधन द्वारा अपने व्ययों पर नियंत्रण रखते हुए अधिकतम लाभ की प्राप्ति के साथ अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होते है, यह सफलता उपकरणों के बेहतर प्रयोग द्वारा ही संभव है। यंत्रीकरण प्रबंधन के लिए विभिन्न कार्यालयी प्रचालनों के ऊपर बेहतर नियंत्रण को सुनिश्चित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Office Automation : Concepts and Tools, Springer-Verlag, Berlin Heidelberg New York, 2010
2. Computer Basics with Office Automation, Archana Kumar, I.K. International Publishing House Pvt. Ltd. , 2010
3. कार्यालय प्रबंध, आर.सी. भाटिया, अटलांटिक पब्लिशर एंड डिस्ट्रीब्यूटर, 2016
4. कार्यालय प्रबंध, एस.बी.पी.डी. पब्लिकेशन आगरा, 2020
5. कार्यालय प्रबंध, घोष एवं अग्रवाल, सुल्तानचंद एंड संस, 2012
6. Office Management, P.K. Ghose, Sultan Chand & Sons, 2015.

****

पत्रकारिता के पर्याय - श्री रामवृक्ष बेनीपुरी

डॉ. डी.पी. चन्द्रवंशी *

प्रस्तावना - सन् 1920 ई. में असहयोग आंदोलन की शुरूआत से संपूर्ण देश स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहा था। चौरा-चौरी काण्ड के बाद यह आंदोलन वापस ले लिया गया। तब बेनीपुरी जी का रूझान 'पत्रकारिता' जगत की ओर होने लगा। यह झुकाव परिस्थितिवश हुआ। जीविकोपार्जन के लिए आय का कोई साधन न होने के कारण रामवृक्ष बेनीपुरी जी पत्रकारिता की ओर खींचे चले आए। यह जीविका का साधन मात्र न रहकर जुनून बन गया। 'जीविका के लिए आजीवन उन्हें पत्रकारिता का पल्ला थामें रहना पड़ा।'[1] श्री रामवृक्ष बेनीपुरी जी ने पत्रकार जीवन का शुभारम्भ 'तरूण भारत' साप्ताहिक पत्रिका से किया और अंत 'नयी धारा' पत्रिका के प्रधान संपादक के तौर पर किया। उन्होंने दर्जनों साप्ताहिक, मासिक पत्रिकाओं का सम्पादन किया है। कर्तव्यनिष्ठ, कर्मठ, ईमानदारी पूर्वक अदम्य साहस के साथ निर्भीक होकर सम्पादन कार्य किया।

रामवृक्ष बेनीपुरी के सम्पादक जीवन का सफर जिन पत्रिकाओं से हुआ उनका सामान्य परिचय इस प्रकार से है:-

तरूण भारत (1921) जिस समय महात्मा गाँधी की 'यंग इंडिया' समूचे भारत में जनमानस के हृदय में रच-बस गई थीं। उसी समय 1921 में साप्ताहिक पत्रिका 'तरूण भारत' की शुरूआत हुई पं. मथुरा प्रसाद दीक्षित इसके संपादक थे। श्री दीक्षित जी बेनीपुरी जी के गुरू थे। मुजफ्फरपुर में मथुरा प्रसाद दीक्षित जी ने बेनीपुरी जी को इस पत्रिका में अपना सहभागी बनाने का प्रस्ताव दिया जिसे बेनीपुरी जी ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। बेनीपुरी जी तन-मन से संपादन कार्य में संलग्न हो गये। 'गाँधी जी के लेखों के अनुवाद के साथ ही समाचार संकलन टिप्पणी लिखना, छद्म नाम से कविता लिखना आदि कार्यों का भार अपने ऊपर उन्होंने ले लिया।'[2] अल्पकाल में ही बेनीपुरी जी का मन घर की ओर होने लगा अत: इस्तीफा देकर घर को लौट आए।

'किसान मित्र' सन् 1922 में साप्ताहिक पत्रिका 'किसान मित्र' जमींदारों द्वारा निकाला गया। यह पत्रिका स्वामी विद्यानंद जी द्वारा किसानों का एक पत्र निकालने के प्रतिस्पर्धा स्वरूप था। बेनीपुरी जी इस रहस्य से अनभिज्ञ थे। 'किसान मित्र' के संपादक का भार उन्होंने स्वीकार कर लिया। किन्तु स्वास्थ्य साथ न देने के कारण शीघ्र ही इस पत्रिका को अलविदा कह दिये। 'उस समय इनकी उम्र मात्र उन्नीस-बीस साल की थी।'[3]

'बालक' बेनीपुरी जी के जीवन में यह मासिक पत्रिका विशेष महत्व रखती है। यह वही पत्रिका है जिसने बेनीपुरी जी को साहित्य और पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रतिष्ठित किया। यह पत्रिका लहेरिया सराय (दरभंगा) से प्रकाशित होती थी। यह बाल पत्रिका थी। यह बच्चों के बौद्धिक विकास एवं ज्ञानवर्धन के साथ-साथ युवकों और वृद्धों के आकर्षण का केन्द्र था। 'बालक की लोप्रियता और सफलता का प्रमाण यही है कि उसमें हिन्दी के समसामयिक सभी महारथियों ने अपने लेख दिये। प्रसाद जी, प्रेमचंद, पद्मसिंह शर्मा, गौरीशंकर, हीराचंद ओझा, पं. कामता प्रसाद गुरू, लाला भगवान दीन, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' आदि।'[4] सफल पत्रिका के संपादक ने हिन्दी पुस्तक भंडार के संचालक से मतभेद के कारण 'बालक' पत्रिका से अपना संबंध इति श्री कर लिया।

'गोलमाल' साप्ताहिक पत्रिका गोलमाल का सन् 1924 में श्री रामवृक्ष बेनीपुरी जी को सहकारी सम्पादक बनाया गया। यह हास्य-व्यंग्य प्रधान पत्र था। बाबू शिवपूजन सहाय इस साप्ताहिक पत्र का काफी सहयोग करते थे। किन्तु आर्थिक बाधा ने इस पत्र का आगे का सफर दुर्गम कर दिया। फलत: इसका सम्पादन बंद हो गया।

'युवक' सन् 1924 में पंजाब में 'नौजवान भारत सभा' की स्थापना हुई। सन् 1926 में पटना में 'युवक संघ' की स्थापना हुई थी। 'युवक' पत्र हिन्दी पत्रकारिता के लिए एक आंदोलन था। 'युवक संघ' के साथ बेनीपुरी जी 'युवक पत्र' से जुड़ गये। श्री गंगा शरण सिंह और श्री रामानन्द मिश्र के आशीर्वाद से 'युवक' अपने परिपक्वता से चरमोत्कर्ष पर पहुँच गया। यह पत्र बिहार के युवाओं के लिए क्रांतिकारी भावनाओं का केन्द्र बन गया। अल्पकाल में ही 'युवक' ने बिहार के राजनीतिक और सामाजिक जीवन में भूचाल ला दिया। 'युवक' में 'इन्कलाब जिंदाबाद' शीर्षक से एक लेख ने संपादक बेनीपुरी जी को सरकार की नाराजगी का सामना करना पड़ा। फलत: 'युवक' का अंत हो गया और संपादक बेनीपुरी जी को डेढ़ वर्ष की सख्त सजा दी गयी। 'युवक' ने राष्ट्रीयता व देशप्रेम का शंखनाद तो कर ही दिया।

'कैदी' रामवृक्ष बेनीपुरी जी ने सन् 1930 में हजारीबाग जेल से हस्तलिखित इस पत्रिका का सम्पादन किया। जेल में भी लेखको, कवियों का कोई अभावन नहीं था। 'इसके पहले अंक में राजेन्द्र बाबू ने भी 'प्रजा का धन' नामक लेख लिखा था।'[5] जेल की जंजीरों और दीवारों के बीच में यह 'कैदी' काफी प्रसिद्ध हुई।

'लोकसंग्रह' सन् 1934 जब रामवृक्ष बेनीपुरी जी पटना कैम्प जेल से रिहा होकर आए तब उन्होंने मुज़फ्फरपुर में 'लोक संग्रह' पत्रिका का कार्यकारी संपादक का पद भार संभाला। स्वामी सहजानंद इस पत्रिका के संस्थापक थे। प्राकृतिक विपत्ति ने इस पत्रिका का संपादन बंद कर दिया तात्पर्य कि भूकंप ने समस्त मुज़फ्फरपुर को सन् 1934 में तहस-नहस कर दिया। 'लोग संग्रह' का कार्यालय भी जमींदोज हो गया और संपादन बंद हो गया।

'कर्मवीर' पं. माखन लाल चतुर्वेदी कर्मवीर के संपादक थे। यलोक संग्रह' के अवसान के बाद बेनीपुरी जी खण्डवा जाकर पं. माखनलाल चतुर्वेदी

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय, तखतपुर, जिला-बिलासपुर (छ.ग.) भारत

का सहयोग करने लगे। अपने कार्य कुशलता से बेनीपुरी जी ने चतुर्वेदी जी को बहुत प्रभावित किया। यहाँ भी उनका मन नहीं लगा और लगभग 6 माह में वे वापस चले गये।

'योगी' सन् 1935 में इसका संपादन कार्य बेनीपुरी जी ने संभाला। इसके संचालक श्री नारायण बाबू थे। किसान-आन्दोलन चर्मोत्कर्ष पर था। बेनीपुरी जी ययोगी' को कियान आंदोलन का मुख्य पत्र-सा बना दिया। किसानों के हक का सवाल बेनीपुरी जी बीस साल की उम्र से ही उठाते आ रहे थे। जमींदारी अन्मूलन का नारा सबसे पहले उन्होंने ही लगाया था।'6 आगे ययोगी' पत्रिका में भी संचालक की असहमति के कारण बेनीपुरी जी ने इससे अपने आपको पृथक कर लिया।

'जनता' बालक, युवक के बाद पत्रकारिता जीवन में बेनीपुरी जी के लिए 'जनका' का विशेष महत्व है। दशहरा के दिन सन् 1937 में इस पत्रिका का प्रथम अंक प्रकाशित हुआ। इस पत्रिका के संपादन की आर्थिक व्यवस्था हेतु 'जन साहित्य संघ' नाम से एक संस्था स्थापित की गयी। इसके संथापक जय प्रकाश जी, आचार्य नरेन्द्र देव जी, माखन लाल चतुर्वेदी, फरीदुलहक अंसारी, सीताराम सेक्सरिया और रामृक्ष बेनीपुरी जी थे। इस पत्रिका ने समाजवादी विचारधारा के साथ-साथ किसान-आंदोलन के संदेश को घर-घर पहुँचाने का कार्य किया। मजदूर आंदोलन इसके माध्यम से तेज किया गया। साथ ही बेनीपुरी जी ने नेपाल की राणाशाही के विरूद्ध आवाज उठायी। बेनीपुरी जी के राणाशाही के विरोध के कारण एवं एक लेख के कारण संपादक को 1 वर्ष के लिए जेल भेज दिया गया। सन् 1946 में यह पुन: प्रारंभ हुआ और 1951 में जनता दैनिक समाचार पत्र बन गया बेनीपुरी जी इसके लंबे समय तक संपादक रहे।

'हिमाल' इस मासिक पत्रिका के सम्पादक बाबू शिवपूजन सहाय थे। बेनीपुरी जी लगातार 5 वर्षों तक जेल में रहने के कारण पेरौल पर छूटकर बाहर आए। सन् 1946 से सहाय जी के साथ बेनीपुरी जी संपादन कार्य में जुट गये। 'इन लोने ने 'हिमाल' को साहित्य का हिमालय बनाना चाहा, किन्तु 'बालक' का इतिहास फिर दुहरा कर रहा हिमालय अचानक तिरोहित हो गया।'[7]

'जनवाणी' सन् 1948 में आचार्य नरेन्द्र देव के संपादकत्व में मासिक यजनवाणी' निकालना शुरू हुआ। जनवाणी को श्री गंगाशरण सिंह व श्री रामवृक्ष बेनीपुरी का भरपूर सहयोग मिला। गंगाशरण सिंह ने आर्थिक साधन जुटाया तो रामवृक्ष बेनीपुरी जी ने अनेकों लेख लिखे। पाँच-छ: वर्षोपरान्त अर्थाभाव ने इस पत्रिका का दम घोट दिया।

'नयी धारा' अशोक प्रेस पटना से मासिक पत्रिका 'नयी धारा' का प्रकाशन स्वतंत्रता पश्चात् सन् 1950 में शुरू हुआ। संपादक श्री रामवृक्ष बेनीपुरी जी थे। इस पत्रिका में उन्होंने देश की सांस्कृतिक पहलुओं को उजागर किया। 'गेहूँ और गुलाब' को नव संस्कृति का आधार बनाया। इनके अनुसार 'हमारा ध्यान राजनीति से हटकर धीरे-धीरे संस्कृति की ओर आकृष्ट हो रहा है। हमारे जीवन मं अभी आर्थिक अड़चनें हैं- अपने देश, अपने समाज, समाज के व्यक्ति-व्यक्ति को धन-धान्य से पूरा किये बिना हम सम्यक रूपेण संस्कृति की ओर ध्यान नहीं दे सकते .... गेहूँ की दुनियाँ में फंसे होने पर भी हमे गुलाब की दुनिया को भूल नहीं जाना है।'[8]

'चुन्नू-मुन्नू' सन् 1950 में अजन्ता प्रेस से प्रकाशित होने वाली इस मासिक पत्रिका का संपादन रामवृक्ष बेनीपुरी जी ने किया है। इस पत्रिका का उद्देश्य मनोरंजन के साथ-साथ बच्चों का ज्ञानार्जन करना है। इस पत्रिका के आठ पन्ने बच्चों के लिए रक्षित थे। उनके अनुसार -'कौन जाने तुममे से किसमें कालिदास, तुलसीदास, रवीन्द्र या प्रेमचंद छिपे बैठे हैं।'[9]

निष्कर्ष - विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से बेनीपुरी जी का पत्रकारिता का विराट स्वरूप सामने आता है। चाहे वह स्वाधीनता आंदोलन हो या किसान-श्रमिक आंदोलन। बेनीपुरी जी का पत्रकारिता का महत्व बढ़ जाता है। 'बिहार के दो साहित्यकारों ने पत्रकारिता के माध्यम से तिल-तिल करके आपने को होम कर दिया। उनके नाम है- स्व. आचार्य शिवपूजन सहाय और स्व. रामवृक्ष बेनीपुरी।'[10] रामधारी सिंह दिनकर, द्विज, आरसी प्रसाद सिंह ऐसे अनेक कवि हैं जिनके निर्माण में बेनीपुरी जी की पत्रिकाओं का विशेष योगदान रहा है। 'बेनीपुरी जी सचमुच मेरी आत्मा के शिल्पी और मेरे कवि जीवन के निर्माता थे।'[11]

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दिनकर रामधारी सिंह संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ पृष्ठ 108 लोकभारती प्रकाशन प्रयागराज (उ.प्र.)
2. बेनीपुरी रामवृक्ष मुझे याद है पृष्ठ 58
3. दिनकर रामधारी सिंह संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ पृष्ठ लोकभारती प्रकाशन प्रयागराज (उ.प्र.)
4. बेनीपुरी रामवृक्ष मुझे याद है पृष्ठ 64
5. बेनीपुरी रामवृक्ष जंजीरें और दीवारें पृष्ठ 87
6. दिनकर रामधारी सिंह संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ पृष्ठ 110 लोकभारती प्रकाशन प्रयागराज (उ.प्र.)
7. बेनीपुरी रामवृक्ष मुझे याद है पृष्ठ 165
8. बेनीपुरी रामवृक्ष नयी धारा (सम्पादकीय), अप्रैल 1950 वर्ष-1, अंक 1, पृष्ठ 113
9. बेनीपुरी रामवृक्ष चुन्न पृष्ठ 58
10. दुबे लक्ष्मीनारायण नयी धारा (बेनीपुरी स्मृति अंक) पृष्ठ 224
11. दिनकर रामधारी सिंह संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ पृष्ठ 112 लोकभारती प्रकाशन प्रयागराज (उ.प्र.)

****

Effect of Yoga on Attention and Concentration in Primary School Students (6 To 10 Years)

Chitra Subramanian* Dr. Samar Jeet Singh**

Abstract - This paper studied the effects of yoga on attention and concentration. The main aim of this paper is to study the effect of yoga on attention, attention in level of work, attention in listing and concentration. The data was collected from primary school in Bhopal. One Experimental group has been taken from CBSE School.10 primary schools students were randomly selected for the study Between the Age group of 6 to 10years. The check list was developed by the researcher herself. It is revealed that the reexists significant effect of yoga on Attention (level of work & listing), and Concentration in primary school students of (6 to 10 years) Experimental group. It is also found that yoga Improves Performance, Health, Achievement and Progress of individual students.

Key Words: Attention, Concentration, working level, physical, spiritual, peacefulness

Introduction - Yoga is purification of the human body and mind, The most common benefits of yoga for a growing personality are related to maintaining a healthy body, mind and fighting illness. Yoga brings together physical and mental disciplines to achieve peacefulness of body and mind.

Education has a big role to play in the development of the overall personality of a student, which comprises of five principal activities of human being: the physical, the mental, the emotional, the intellectual and the spiritual. All these aspects are looked into in our ancient system of yoga. Yoga is purification of the human behavior.

Yoga can benefit different age groups (from school children to older persons), people with different occupations (such as soldiers who are involved in active combat and sedentary office workers).

However yoga practice has gained popularity in the world over for the promotion of positive health, and for the prevention and management of disease. Practicing yoga is especially useful for those conditions where the association between the mental state and the disease is well established. Several techniques are included under the term yoga, such as yoga postures, cleansing practices, regulated breathing and meditation. While practicing these techniques, it is ideal for the practitioner to keep in mind and achieve a mental state based on certain principles of yogaphilosophy.

Attention and Concentration play a vital role in Education, and Education has a big role to play in the development of a holistic student. The following study reveals that the components of Yoga namely Asana, Pranayama and Meditation, when applied on the Primary School children (6 to 10 years), have tremendous effect on their Attention. The hyper active children who were unable to focus on anything, were found enthusiastically having improved their attention, with the effect of Yoga, now are able to concentrate for a longtime.

Objectives: The major objectives for the study are said to be different fold and are classified are as under

1) To study the effect of different aspect of yoga on behavioralproblems.
2) To study the effect of yoga practice onconcentration.
3) To study the effect of yoga practice on attention in level ofwork
4) To study the effect of yoga in Attention in listening.

Delimitation of the study:

1. All subjects were students of primary school students
2. It does not cover all aspects of yoga.
3. There were no theory classes for yoga.

Review of literature:

- This investigation was supported by the studies of RABINER DAVID, (2006) DID RESEARCH ON "Does Yoga Help Children with Attention problems?" Study Design: There were 3 phases to the study – a baseline phase that lasted at least 3 weeks, the 3 week intervention phases, and then a 3 week follow-upphase.
- **JENSEN PS, KENNY DT. (2004),** studied on The effects of yoga on the attention and behavior of boys with Attention-Deficit/hyperactivity Disorder (ADHD). **GOLDSTEIN N (2012)** Studied effectiveness of body-oriented methods of treatment for children with attention
- **KUMAR KULDIP (1988),** did research on Effect of yoga on school students. The object of the study is, to see effect of yoga teaching upon certain personality dimension of stu-

* Research Scholar (Yoga) Rabindranath Tagore University, Bhopal (M.P.) INDIA
** Yoga Department, RabindranathTagore University, Bhopal (M.P.) INDIA

dents. The sample had been taken from central school Delhi, a sample of 245 students of classesvii,ix,x

Research Methodology: To fulfill the aim of the study a methodology has been designed and for assessing the behavior checklists have been filled by students before starting yoga practice and after completing yoga practice. And this is also done by collecting primary data for experimental work. This is collected by investigator, with the help of school teachers. For present investigation experimental method has been used because it involves data collection at pre and post basis of yogapractice.

First of all researcher introduced, students about the test then administered the test on groups of students. Researcher instructed students that there is no fixed time limit. The test was conducted before and after yoga practice. For assessing the attention and concentration, checklist filled by students before starting yoga and after completing yoga and this is also done by collecting primary data through surveying methods. The students did practice of yoga in a week for four days 30 minutes, each day. The experimental group practiced asanas like – Tadasana, vrikshasana, Trikonasana, Parvathasana, meditation and OM chanting. Variable for Study:

The variables for this study -

Independent variable: Yoga

Dependent variable: Attention & Concentration

Demographic variable: The variables of the study are primary school students Between the Age group of 6 to 10 years

Sample for Study: Sample had been collected from school of Bhopal.

1. One Experimental group has been taken from CBSE School.
2. The sample size consists of 10students
3. Between the Age group of 6 to 10years

Statistics Techniques used: Following statistical techniques are used to analyze the data and to accomplish objectives of the study. Mean and standard deviation is computed to know the Nature of distribution. In order to find out the significant difference„t test iscomputed.

Hypothesis - 1.0

There exists no significant effect of yoga on Attention & Concentration in primary school students of (6 to 10 years) Experimental group

Hypothesis - 2.0

There exists no significant effect of yoga on concentration in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group.

Hypothesis - 3.0

There exists no significant effect of yoga on Attention in level of work in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group.

Hypothesis - 4.0

There exists no significant effect of yoga on Attention in listening in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group

H01 :There exists no significant effect of yoga on Attention & Concentration in primary school students of (6 to 10 years) Experimentalgroup

Table No. 1.01 (See in last page)

Figure 1.01 (See in last page)

The mean score and standard deviation indicate Attention & Concentration in experimental groupis shown in table.Table1.01 reveals that the mean scores of Attention & Concentration of primary school students (6 to 10 years) of experimental group are (pre- test =14.3)& (post-test =24.2). It is evident from the results that experimental group students scored higher in post test as compared to pre testscores.

To examine the effect of teaching yoga on Attention & Concentration in experimental group ‘z’ test was applied and ‘z’ value was obtained significant at α =0.05 level (2.83>2.58).The results indicate that there is significant effect of yoga on Attention & Concentration in experimental group. Thus the hypothesis “There exists no significant effect of yoga on Attention & Concentration in primary school students(6to10years)of Experimental group” is rejected.

H02 :There exists no significant effect of yoga on concentration in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group.

Table No. 1.02 (See in last page)

Figure 1.02 (See in last page)

The mean score and standard deviation indicate **Concentration** in experimental group is shown in table.Table 1.02 reveals that the mean scores of **Concentration** of primary school students (6 to 10 years) of experimental group are (pre-test =15.2)& (post-test=23.9). It is evident from the results that experimental group students scored higher in post test as compared to pretest scores.

To examine the effect of teaching yoga on Concentration in experimental group ‘z’ test was applied and ‘z’ value was obtained significant at α=0.05 level(2.85>2.58).Theresults indicate that there is significant effect of yoga on concentration in experimental group. Thus the hypothesis” There exists no significant effect of yoga on Concentration in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group” isrejected.

H03 :There exists no significant effect of yoga on Attention in level of work in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group.

Table No. 1.03 (See in last page)

Figure1.03 (See in last page)

The mean score and standard deviation indicate Attention in level of work in experimental group is shown in table.Table 1.03 reveals that the mean scores of Attention in level of work of primary school students (6 to 10 years) of experimental group are (pre-test =14.8)& (post- test =24.1). It is evident from the results that experimental group students scored higher in post test as compared to pre test scores.

To examine the effect of teaching yoga on Attention in level of work in experimental group 'z' test was applied and 'z' value was obtained significant at α=0.05 level (2.87 >2.58).The results indicate that there is significant effect of yoga on attention in level of work in experimental group. Thus the hypothesis "There exists no significant effect of yoga on attention in level of work in primary school students (6 to 10 years)of Experimental group" is rejected.

H04 : There exists no significant effect of yoga on Attention in listening in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group

Table No. 1.04 (See in last page)

Figure 1.04 (See in last page)

The mean score and standard deviation indicate Attention in listening in experimental group is shown in table. Table 1.04 reveals that the means cores of Attention in listening of primary school students (6 to 10 years) of experimental group are (pre-test =14.54)& (post-test =24.0). It is evident from the results that experimental group students scored higher in post test as compared to pretest scores.

To examine the effect of teaching yoga on Attention in listening in experimental group'z' test was applied and 'z' value was obtained significant at α =0.05 level (3.00 >2.58).The results indicate that there is significant effect of yoga on attention in listening in experimental group. Thus the hypothesis "There exists no significant effect of yoga on Attention in listening in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group" is rejected.

Findings (See in last page)

Discussion: The present study observed significant change after yoga practice on school and study activity of primary school students. As per the finding of the research it can be said that effect of yoga practice on attention and concentration does not depend upon the age and class. Research indicates that there is always a possibility to enhance various school and study activity among students along with the presenteducationalsetup. .

1. As per the finding of the research it can be said that effect of yoga practice on attention and concentration does not depend upon the age and class.
2. It is clear that students of primary school are significantly affected by the yoga practice, shows that whatever the age or class the students learn yoga by him/ herself during the practice
3. The finding of this investigation emphasizes on significant reduction of behavioral problem and improved attention and concentration level and attention in studyactivity.
4. This investigation was supported by the studies of Rabindra David(2006),Rangan R,Bhatt G.R..(2009), Sw.Managalteerham Sarswati(2009), Haffner j,Goldstein (2012,gour and shah(2005)
5. In these days yogic exercises are becoming very popular because of the improvement in individuals physical, mental and spiritual capacities. Statistics suggested that majority of students facing behavioral problem in their school time. Currently yoga methods are merely taught as narrow tool for behavioral problem and are often viewed as a physical exercise.
6. It is also observed that they learn faster, understand easily the material which they want to study, all those who regularly practice yoga. It is observed through data analysis that there is significant difference in pre test and post test of Attention & concentration in Primary students. It means that regular practice of yoga increases memory of students. They do properly their assignments, projects and homework. They can keep things and facts in mind for long time. It is also found that students remember rules andinstruction of schools. As per the finding of the research it can be said that there is a need to improve regular yoga practice inschools.
7. Practice increases responding and listening power and decreases the feeling of distracting at the time oflearning.

Suggestions : There can be more classes of yoga in the normal curriculum of the day,in schools in order to fully reap out the benefits of Yoga.

This yoga practice can be extended to the higher age group between 10-19 years, also in schools. This is adolescent age, which may be taken as a period of growth from puberty to maturity. This period is associated with repaid physical, psychological, and social changes. This is a transitional stage of human development. Adolescence is the period in which a child matures into an adult.

Teens bodies and minds develop and change tremendously during adolescence, which causes their whole personality to change too. Definitely yoga can play a very vital role in making this transition meaningful. Most of the teenagers may be in a position to handle these changes to their advantages to develop as a holistic human being.

Studies have revealed that the effects of yoga on psychosomatic and psycho physiological disorders have been, worth mentioning. These disorders, when not treated on time properly, may lead to unimaginable conditions of the victims, which have significant effect on their attention and concentration.

Schools can give full-fledged training in yoga to their eligible physical education trainers, in order to include yoga curriculum into their normal teaching hours. These in house trainers can utilize the time to the optimum level for yoga training, for example, during assembly, during their physical education periods, substitutions etc. Also these trainers can provide in house training to the other subject teachers, so that yoga becomes a part and parcel of daily activity.

In fact, it should not be stopped here. This kind of training should be extended to the parents also whenever there is an opportunity and availability. Yoga is the way, only way, to develop the right kind of human living. This will reduced drastically many kinds of problems, which every school is facing on day to day basis, and waste most of

their energy and time in solving the unnecessary problems.

Yoga is very appropriate at school level because of many reasons, to name few of them:

1. Yoga does not have any side effect, provided, practiced under the supervision ofyoga masters.
2. Yoga is very cost effective and can be done anywhere in the pure and open atmosphere, without any accessory other than a blanket ormat.
3. Yoga is very interesting and one feels very content and happy after doing the same,and feelenergised
4. Yoga is very addictive and contagious in the sense, school children, especially atprimary and secondary level; develop interest in yoga, seeing their peer doingit.
5. Yoga creates a very peaceful and conducing atmosphere in all the class rooms, thus inthe wholeschool
6. Yoga if inducted at the early age, the beneficiary, sails a smooth boat of life, though there are ups and downs throughout life

References:-

1. Dr. R Nagratn & H.R. Nagendra, (2005). New Prospective in stress management, Publisher International J Yoga. 2009 Jul-Dec; 2(2) : 55-61
2. Patanjali Yoga sutra, Geeta Press Gorakpur, (2005)
3. Rambabu Gupta (1998) Educational psychology, Publisher New Publishing House Kanpur. Hatha pradhipika by svatmaraman
4. Indian N. Physical Pharmacol2004; 48(3) : 535-356
5. S.S.Mathur (2003) Educational psychology, Publisher Vinod Pustak Mandir Agra. P www. Internet for classromm.com
6. Swamin Vivekanand Yoga Prakashan Banglore.
7. The study was registered in the Clinical Trials Registry of India (CTRI/2012/11/003112).www.education inindia.net
8. www.yogapoint.com

Table No. 1.01 : Scores of Attention & Concentration of experimental group

Variable	Group	No. of cases	Mean	SD	Table Z-value	Calculated z-value (.05 level)
Attention & Concentration	Pre test of experimental group	10	14.30	.674	2.58	2.83*
	Post test of experimental group		24.20	.421		

*Significant * * Notsignificant

Figure 1.01

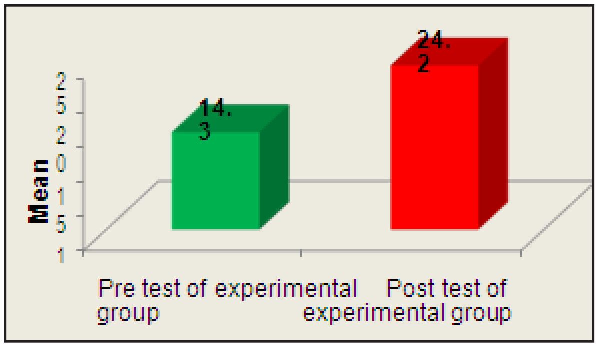

Table No. 1.02 : Scores of concentration experimental group

Variable	Group	No. of cases	Mean	SD	Table Z-value	Calculated z-value (.05 level)
Concentration	Pre test of experimental group	10	15.20	.632	2.58	2.85*
	Post test of experimental group		23.90	.316		

*Significant * * Not significant

Figure 1.02

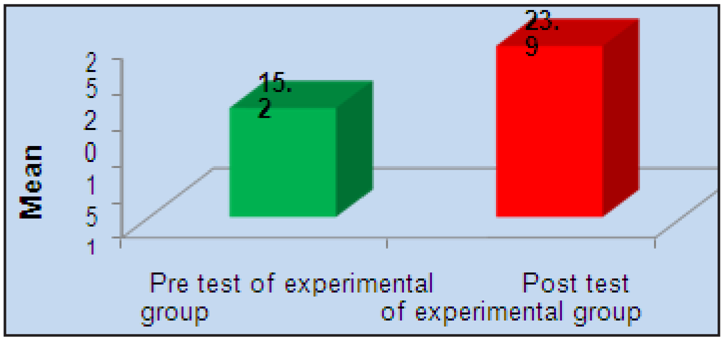

Table No. 1.03 : Scores of Attention in level of work experimental group

Variable	Group	No. of cases	Mean	SD	Table Z-value	Calculated z-value (.05 level)
Attention in level ofwork	Pre test experimental group	of	10	14.80	.632	2.58 2.87
	Post test experimental group	of		24.10	.316	

*Significant * * Notsignificant

Figure1.03

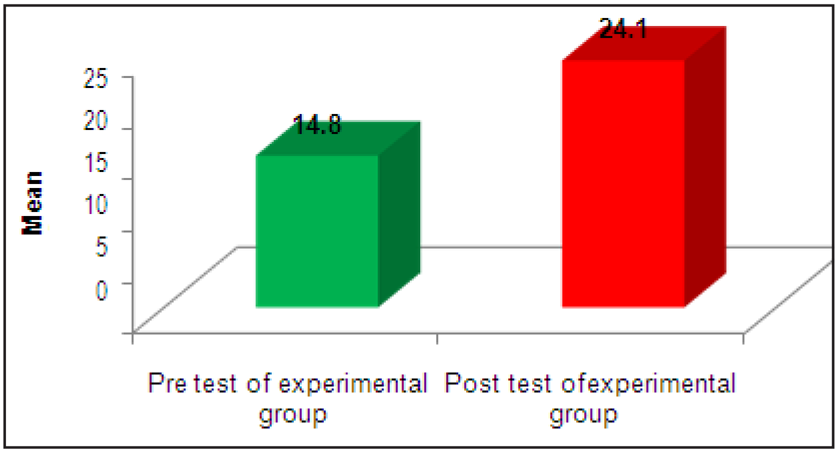

Table No. 1.04 : Scores of Attention in listening in Experimental group

Variable	Group	No. of cases	Mean	SD	Table Z-value	Calculated z-value (.05 level)
Attention in listening	Pre test of group	10	14.54	.687	2.58	3.00
	Post test group		24.00	.024		

*Significant * * Not significant

Figure 1.04

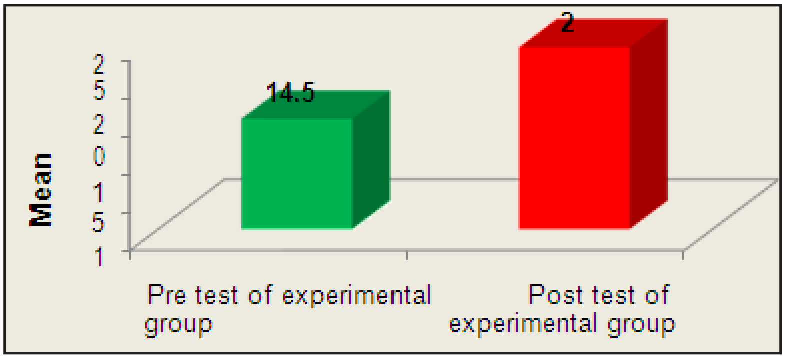

Findings:

S.	Hypothesis	'z' value	Significance	Findings
1.	here exists no significant effect of yoga on Attention & Concentration in primary school students of (6 to 10 years) Experimental group	2.83	Significant	There exists significant effect of yoga on Attention & Concentration in primary school students of (6 to 10 years) Experimental group
2.	There exists no significant effect of yoga on concentration in primary school students (6 to10 years)of Experimental group.	2.85	Significant	There exists significant effect of yoga on concentra -tion in primary school students (6to10 years) of Experimental group
3.	There exists no significant effect of yoga on Attention in level of work in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group.	2.87	Significant	There exists significant effect of yoga on Attention in level of work in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group.
4.	There exists no significant effect of yoga on Attention in listening in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group	3.00	Significant	There exists significant effect of yoga on Attention in listening in primary school students (6 to 10 years) of Experimental group

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

Existentialism in 20th Century Literature

Dr. Anand Kumar Jain*

Abstract - Ernest Hemingway's literary popularity is one of the hallmarks of a vigorous philosophical movement, a movement, widely known and accepted as existentialism. Kierkegaard first used this word. The major exponents of this philosophy are Kierkegaard, Heidegger, Sartre and Camus. All these existentialists asserted that each individual is unique and he must have his own will. They said that man is free to choose his own way of life, and because he is free to choose, he alone is responsible for his actions and deeds and for his ultimate fate.
Keywords - outsider, existentialism, irrationalism, empiricism, individuality.

Introduction - The word "EXISTENTIALISM" derives its name from the latin word "EXSTARE" which means 'to stand out'. The primary concern of all the existentialists is that human beings must 'stand out' as an individual, separated from all other beings : human or non human. Midst almost every age, there has been someone or the other who can be called an existentialist. The major exponents of this philosophy are Kierkegaard, Heidegger, Sarteand Camus. Kierkegaard, it is regarded as the father of existentialism. All these existentialists asserted that each individual is unique and he must has his own will. They said that man is free to choose his own way of life, and because he is free to choose, he alone is responsible for his actions and deeds and for his ultimate fate.

Some major features of Existentialists: All existentialists agree that man is born in this world, experience pain and suffering but the solutions that they posit are different. Kierkegaard says that man's only solution from his anguish that he faces is in God. He stresses that in God man may find freedom from tension, in Him the finite and infinite are one. The man, who believes in Him, will achieve salvation. Sarteand Heidegger differ from Kierkegaard in this respect, both believe that man is all alone in a Godless world, to Sarte and his followers there is absolutely no hope for salvation. Both these groups of existentialists however have some common traits as well. The first and foremost aim of all existentialists is to establish a separate identity of the individual, they stress the individuality of man, he should try to be himself and not a crowd. A man has a fundamental choice of being a genuine individual of being a part of the crowd. Kierkegaard says that the failure to be one's own self is the 'real sickness up to death'. He feels that a man, who does not assert his own individuality, finally forgets his own name, ultimately loses faith in him and fells safe to be like others. In this way, he loses his individuality and becomes a part of the crowd.

The existentialists may differ in their view with respect to religion and God, but all of them put stress on the individual. The outsider sometimes expresses himself in existentialist terms. He is not concerned with the difference between body and spirit, or between man and nature. This is so because these ideas produce theological thinking and philosophy and he does not care for either. To him the only difference is between being and nothingness. He can only distinguish between life and death. To him Death is the most important of all ideas.

Existentialism as a form of irrationalism: Existentialism isa form of irrationalism. This ambiguous change may be understood in a number of ways. In the first place, the very rationalists who are the objects of existentialist criticism may prefer it, if so, it amounts to saying that the world is and may be known to be a rational system. On this point, most contemporary philosophers would side with the existentialists because of accepting the empiricist principle that human knowledge cannot each certainty beyond the range of possible experience. We may say that the existentialists enunciate the empiricist principle in rather excited tones, exclaiming that particular facts are "absurd" or "de trope" instead of merely stating that they are as they are the existentialists are also at one with those empiricist philosophers who hold that it is impossible to obtain such a systematic view of human society as would enable firm predictions to be made about its future state. If the existentialists' irrationalism, again, consists in holding that moral rules can give guidance but cannot give certain knowledge of what one ought to do in particular circumstances, many philosophers are not existentialists who would agree with them on this.

What is Existentialism: Existentialism is the name of a philosophical tendency or attitude which manifested itself in Germany a few years after World War I and later spread to France and to Italy that immediately after World War II, it was not only influential in academic circle there but was widely talked about in literary cafes and the semi popular press. Since existentialism is a tendency or attitude rather then a philosophical school there are few doctrines common

*Asst. Prof. (English) Indira Gandhi Engineering College, Sagar (M.P.) INDIA

to all exponents of it. But it may be generally characterized as a protest against views of the world and policies of action in which individual human being are regarded as the helpless playthings of historical forces or as wholly determined by the regular operation of natural processes. All existentialist writers seek to justify in some way freedom and importance of human personality. They all emphasize, too, the place of will in human nature by contrast with reason.

Origin of Existentialism: Kierkegaard is known as the originator of existentialism. The word "existentialism" was used to translate the German Existenzphilosophie, Existenz become a technical philosophical term in Germany after World War I. In no technical language anything actual may be said to exist, whether it be a man, a fish, or a stone, but in the sense with which we are now concerned it is primarily human being who are said to have "existence". The word is then used to emphasize the claim that each individual person is unique and inexplicable in terms of may metaphysical or scientific system : that he is a being who chooses as well as a being who thinks or contemplates, that he is free and that, because he is free, he suffers, and that since his future depends in part upon his free choices it is another predictable. There are also suggestions, in a special usage that existence is something genuine or authentic by contrast with insincerity that a man who merely contemplates the world is failing to make acts of choice that his situation demands.

Conclusion : Perhaps the most thorough and satisfying and certainly the most ample development of the philosophy of existence in the 20th century are contained in the writings of Karl Jaspers. Kierkegaard and many the day of rational metaphysical systems like that of Hegel has gone, but he sees the chief danger to individuality not in "Christendom" but in our highly organized technological society in which the chief aim is to produce a standardized level of satisfaction for as many people as possible Kierkegaard, like Socrates, has depreciated the importance of natural science, but Jaspers, although he admits that the search for more facts can be a means of escape from moral decisions, holds that the devoted exploration of regions which can never be completely mapped is one of the most admirable and significant of human activities. Jaspers speaks not of God but of "Transcendence", by our knowledge and the limitations of our power point to some unknown and unknowable source of being. These are no written or traditional revelation from which we can discover what to do. It is not even possible to prove that we are free. For alleged proofs can refer directly only to what exists objectively, and freedom is not a characteristic of an object at all. Jaspers elaborates the part of Kierkegaard's teaching in which the inadequacy of general rules and the necessity for crucial and critical decisions are described. He is very conscious of the danger of shattering the fundamental existentialist theme by turning it into a system and he therefore regards his own work as a setting before others of possibilities that it is for them to actualize as their experience and circumstances require.

References :-

1. Baker, Carlos. Ernest Hemingway : A Life Story. (New York :Charles Scribner's Sons, 1969).
2. Mellow, James R (1992).Hemingway :A life without Consequences. (New York : Houghton Mifflin, ISBN 0-395-37777-3)
3. Fenton, Charles A. The Apprenticeship of Ernest Hemingway. New York, 1954 .
4. Muller, Timo (2010). "The Uses of Authenticity :Hemingway and the Literary Field, 1926-1936).
5. Geismer, Maxwell. Writers in Crisis :The American Novel between Two Wars. Boston, 1942.
6. https://english summary. Com
7. https://philosophy now.org issue 32

****

गांधी जी की ग्राम स्वराज व उसकी प्रासंगिकता

डॉ. अलीमा शहनाज सिद्दीकी *

प्रस्तावना - गांधी जी ने समाज के कायाकल्प के लिए एकदम बुनियादी ढ़ंग से सोचा व अपने विचार प्रस्तुत किए। गांधीजी लिखते हैं कि हिन्दुस्तान शहरों में नहीं, गांवों में बसता है। शहर भी जी रहे है और टिके हुए हैं गांव के आधार पर ही। गांव वाले भी शहरो की नकल नही करें। अपना उद्धार वे खुद ही कर सकते है।

उनका अनुभव था कि- असली हिन्दुस्तान तीन हजार शहरों और कस्बों में नही बल्कि साढ़े सात लाख गांवों में है और शहर उन गांवों पर अपनी जिन्दगी बसर करते हैं वे अपनी धन दौलत कहीं दूसरे देशों से नही ले आते।[1]

गांधी जी ने लिखा- नगरवालों के लिए गांव अछूत है नगर में रहने वाला गांव को जानता भी नहीं। वह वहां रहना भी नहीं चाहता। अगर कभी गांव में रहना पड़ ही जाता है तो शहर की सारी सुविधाएं जमा करके उन्हे शहर का रूप देने की कोशिश करता है। अगर वह तीस करोड़ ग्रामवासियों के रहने के लायक शहरों का निर्माण कर सके तो यह कोशिश बुरी नहीं कही जाएगी।[2]

गांधी जी का मानना था कि ग्राम वासियों को फुरसत के समय उनके समय के आधार पर खादी से बढ़कर सस्ता उपाय और कोई नहीं। साथ ही मानव यन्त्र को बेकार होने देकर जनयन्त्र मशीन को तरजीह देने के भी वे बिल्कुल खिलाफ है। खादी को केन्द्र सूर्य की तरह मानकर उन्होने दूसरे गृह नक्षत्र की उपमा दी। अपनी आत्मकथा में उन्होने इसका थोड़ा सा जिक्र किया है।[3]

गांजी जी स्वयं भी वर्धा से थोड़ी दूर से गांव मे सेठ जमनालाल बजाज के जमीन में छोटी सी कुटिया बना कर रहे। यह अत्यंत पिछड़ा हुआ गांव जहां लगभग 600 लोग ही बमुश्किल निवास करते थे। यहां न कोई पक्की सड़क न दुकान और न ही डाक खाना ही था। सन् 1937 में जब जान माट उस गांव गए तो वहां अकेली गांधी जी की कुटिया थी।

गांधी जी ने लिखा है कि- ग्राम स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा, जिसमें अपनी अहम जरूरतों के लिए गांव अपने पड़ोसियों पर निर्भर नही करेगा, और फिर भी बहुतेरी दूसरी जरूरतों के लिए-जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा- वह परस्पर सहयोग से काम यह होगा कि वह अपनी जरूरत का तमाम अनाज और कपड़े के लिए पूरी कपास खुद पैदा कर लें।[4]

आगे वे लिखते है कि - गांव का शासन चलाने के लिए हर साल गांव के पांच आदमियों की एक पंचायत चुनी जाएगी। इसके लिए एक खास निर्धारित योग्यता वाले गांव के बालिग स्त्री-पुरूषों को अधिकार होगा कि वे नियमानुसार अपने पंच चुन लें। इन पंचायतों को सब प्रकार की आवश्यक सत्ता और अधिकार रहेगे।[5]

गांधी जी ने ग्राम स्वराज्य के बारे में जो भी कल्पना की है वह आज भी प्रासंगिक हैं। उन्होने ग्राम पंचायतों की बात की थी। आज भी ग्राम पंचायतें हैं, ग्राम सभाएं है जिसमें गांव के लोग गांव के विकास के लिए निर्णय लेते है।

गांधी जी ने गांव के स्वावलंबन की जो बात कही है वह आज भी प्रासंगिक है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री शूमाखर ने अपनी पुस्तक **'स्माल इज ब्यूटीफुल'** में लिखा है कि - **स्थानीय अर्थव्यवस्था को विकसित किया जाना चाहिए, तभी गांव का विकास होगा। गांधीजी उद्योगों के खिलाफ नही थे। वो कहते थे- उद्योग ऐसे हो जिसमें शोषण न हों और मानवीय रिश्ते बने रहे।**

सच पूछा जाए तो वे उद्योगों के यंत्रीकरण के विरूद्ध नही थें लेकिन वे उद्योगों के यंत्रीकरण के खिलाफ थे। गांव के लाखों कारीगरों को काम दे सकने वाले छोटे यंत्रों में सुधार के पक्षधर थे। प्रो0 गेलब्रेथ ने ठीक ही लिखा है कि- बेकारी के साथ जुडे हुए अधिक उत्पादन की अपेक्षा सब लोगों को पूरा काम देना अधिक वांछनीय है।[6] (दि ए फ्लुएन्ट सोसाएटी, पृ. 155)[7] इसी स्वर में प्रो. जोड कहते हैं कि- यदि सामाजिक कार्य में मानव के श्रद्धा को पुनर्जीवित करना हो तो राज्य को बांटकर छोटे छोटे क्षेत्रों में बांट देना चाहिए और इसके कार्यो को विकेन्द्रित करना चाहिए। (मार्डन पालिटिकल थ्योरी, पृ. 120-21)[8]

ग्रामीण विकास के बारे में गांधी जी ने मानव को सर्वोच्च स्थान देने की, विकेन्द्रीकरण करने की, पंचायती राज की, स्वावलंबन की और स्वदेशी की जो वकालत की है आज भी प्रासंगिक हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. उपाध्याय हरिभाउ : बापू- कथा (1920-1948), नवजीवन ट्रस्ट, सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, जून 2005, पृ.- 40
2. नंदा, बी.आर. महात्मा गांधी-एक जीवनी : सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005, पृ. 261
3. उपाध्याय हरिभाउ : पूर्वोलिखित कृति, पृ. 36
4. वही, पृ.-173
5. वही, पृ.-174
6. संग्राहक व्यास हरिप्रसाद : महात्मा गांधी-ग्राम स्वराज्य नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 2003, पृ.-16
7. ग्रेलब्रेथ, दि ए फ्लुएन्ट सोसाएटी, पृ.-155
8. जोड, मार्डन पालिटिकल थ्योरी, पृ. 120-21

* अतिथि विद्वान (इतिहास) रानी दुर्गावती शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जिला मण्डला (म.प्र.) भारत

विज्ञान, अध्यात्म और साहित्य में घनिष्ठता

डॉ. तृष्णा शुक्ला *

शोध सारांश – साहित्य का रस सबसे निराला है। यह रस जिसने पा लिया उसके लिए भूतल स्वर्ग है। हमारे प्राचीन ऋषि मुनि अपने विचार एवं कार्यशैली से पूर्ण रूप से वैज्ञानिक थे। विज्ञान प्रश्नों पर टिका है- कैसे, क्यों, क्या? अध्यात्म एक रहस्य है जिसके सामने आने पर मुंह खुला का खुला रह जाता है। सृजन के रहस्य का गहराना विज्ञान ,है जबकि आत्मा के रहस्य का गहराना अध्यात्म हैं। भारत अध्यात्म की भूमि है वही विज्ञान का भी भारतीय जीवन में महत्व है और साहित्य लोक मानस के रग-रग में बसा है। भारतीय संस्कृति अध्यात्म और विज्ञान की समन्वयात्मक संस्कृति है एवं भारतीय वैज्ञानिक का विज्ञान चिंतन अध्यात्म चेतना से व्याप्त होकर ही भारत को विश्व गुरु की प्रतिष्ठा लौटाने में समर्थ हो सकेगा। प्रारंभ से ही भारतभूमि अध्यात्म की है। इस विश्व ब्रह्मांड में शक्ति सत्ताएं आच्छादित हैं एक जड़ और दूसरी चेतन। यह युग विज्ञान का युग है। विज्ञान द्वारा आज के युग में मानव की सर्वसुविधा के लिए अगणित प्रयास चल रहे हैं किंतु भूलवश मानव मन और अंत:करण की घोर अपेक्षा की जा रही है। आज की प्रगति की समीक्षा से आशंका स्पष्ट होती है कि बुद्धि, बुद्धि से लड़ रही है और उसका शास्त्र विज्ञान है। आइंस्टाइन की सराहना सभी ने की पर बुद्धि, ईसा को किसी ने नहीं पूछा। विज्ञान का यह एकांगी विकास मनुष्य के हाथ का खिलौना बन गया है। आज वैज्ञानिक और औद्योगिक की प्रडति की दौड़ में दौड़ते हुए हम अपनी परंपराओं से दूर होते जा रहे हैं। आधुनिक रुझान, बढ़ती भोग-विलासिता, महत्वकांक्षा और स्वार्थ ने परंपरागत मूल्यों के विरुद्ध एक नवीन मार्ग को जन्म दिया है।आज हम ऐसी विकृत और विशाल दुनिया में जीने को विवश हैं जिससे हमारा कोई आत्मीय संबंध नहीं है। ऐसे में हमारी दृष्टि बरबस ही अध्यात्मा साहित्य और विज्ञान की पुर्नव्याख्या और नवीन स्थापना की ओर आकर्षित हो रही है क्योंकि यहीं से आशा किरण प्राप्त हो सकती है विज्ञान, अध्यात्म और साहित्य तीनों ही सामाजिक जीवन में शुचिता, पारदर्शिता और दायित्व बोध को जीवन आनंद की कसौटी सिखाते हैं। तीनों ही सत्य को प्रकाशित करते हैं। यदि हम सभी चाहते हैं कि मानव ऐसे सम्यक और उदात्ता जीवन की ओर अग्रसर हो जिसमें उसकी संपूर्ण संभावनाएं साकार हो सके तो हमें विज्ञान, अध्यात्म और साहित्य की पारस्परिकता को समझना ही होगा।

प्रस्तावना – साहित्य ब्रह्मानंद सहोदर है और रसात्मक वाक्य स्वरूप है। साहित्य समाज का दर्पण होता है। साहित्य बड़ा ही व्यापक अर्थ रखने वाला एक महान गौरवपूर्ण शब्द है। यह विश्व बंधुत्व का संदेशवाहक है। देश और जाति के जीवन का रस है।समाज की आंतरिक चेतना, दशा का जीवन दर्पण है सभ्यता व संस्कृति का संरक्षक है। यह अपने में सब कुछ समेटे हुए हैं जो मानव जाति के हितकर, श्रेयस्कर और सुख में हैं। दृश्य जगत के समग्र वैभव की निधिा तो यह है ही, अदृश्य लोगों की संपदा का भी कुबेर यही है। लौकिक और अलौकिक सभी इसी के भंडार हैं ऐसा यह सर्वशक्ति संपन्न है। किसी राष्ट्र या जाति में संजीवनी शक्ति भरने वाला साहित्य ही है। साहित्य का रस सबसे निराला है। यह रस जिसने पा लिया उसके लिए भूतल स्वर्ग है। साहित्य नहीं भगवान को भक्तों के मानस मंदिर में प्रतिष्ठित किया है। वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, सूर, तुलसी, मीरा सब ही साहित्य की सजीव प्रतिभा है। 'हमारे प्राचीन ऋषि मुनि अपने विचार एवं कार्यशैली से पूर्ण रूप से वैज्ञानिक थे। उन्होंने वैज्ञानिक विधि विधान से संध्यावंदन, वृत, वेदपाठ, तीर्थ, संस्कार, उत्सव, यम-नियम, ध्यान आदि को निर्मित किया है और इन्हें धर्म का आधार स्तंभ बनाया।'[1]

'विज्ञान प्रश्नों पर टिका है- कैसे, क्यों, क्या? अध्यात्म एक रहस्य है जिसके सामने आने पर मुंह खुला का खुला रह जाता है। सृजन के रहस्य का गहराना विज्ञान ,है जबकि आत्मा के रहस्य का गहराना अध्यात्म हैं। सच्चे रूप में जीवन का आध्यात्मिक आयाम वैज्ञानिक चेतना को प्रोत्साहित करता है। वह जाति, धर्म, पंथ, राष्ट्रीयता की संकरी दीवारों को तोड़ देता है।'[2]

साहित्य, विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय किसी अभी राष्ट्र की प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। खासतौर पर भारत के संबंध में। भारत अध्यात्म की भूमि है वही विज्ञान का भी भारतीय जीवन में महत्व है और साहित्य लोक मानस के रग-रग में बसा है। भारतीय संस्कृति अध्यात्म और विज्ञान की समन्वयात्मक संस्कृति है एवं भारतीय वैज्ञानिक का विज्ञान चिंतन अध्यात्म चेतना से व्याप्त होकर ही भारत को विश्व गुरु की प्रतिष्ठा लौटाने में समर्थ हो सकेगा। क्योंकि भारत का अध्यात्म ही 'सियाराममय सब जगजानी' वाली दृष्टि देता है। ब्रह्म (परमात्मा को सच्चिदानंद कहा गया है) गहराई से देखने पर भारतीय संस्कृति और दर्शन 'सत्यम शिवम् सुंदरम' अवधारणा इसमें अंतर्भूत है। सत्य सत्यवाची है, चित्र सौन्दर्यवाची है और शिव (कल्याणदायी) आनंददायी है। 'भारत सभी धर्मों की जननी है उसमें विज्ञान एवं धर्म का अद्भुत समन्वय है और यह भारती है जो पुन: विश्व की अध्यात्मिक माता बनने में सक्षम होगी।'[3]

गोस्वामी तुलसीदास ने एक और तो कहा है कि 'बड़े भाग मानुष तन पावा' दूसरे स्थान पर वे लिखते हैं कि 'क्षिति जल पावक गगन समीरा, पंच रहित यह अधाम सरीरा।' कैसे एक स्थान पर अदम माना गया पाञ्च भौतिक शरीर दूसरे स्थान पर बड़े सौभाग्य का कारण हो गया। वस्तुत: विज्ञान भी इसी दृष्टि से पंच भौतिक स्वरूप में अनुसंधान में ही निरव रहता है। स्वामी विवेकानंद का मत है कि, 'वेदों का कथन है कि मानव की आत्मा अमर है।

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) प.म.ब.गुजराती विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शरीर वृद्धि और क्षय के नियमों में वह है जिसकी वृद्धि है उसका क्षय भी अवश्यमेव होगा परंतु देह मध्यस्थ आत्मा तो असीम एवं सनातन है, वह अनादि और अनंत है।' [4]

प्रारंभ से ही भारतभूमि अध्यात्म की है। इस विश्व ब्रह्मांड में शक्ति सत्ताएं आच्छादित हैं एक जड़ और दूसरी चेतन। इन दोनों का पृथक-पृथक अस्तित्व और महत्व है पर सुयोग तभी है जब वे एक दूसरे की सहायक बनकर शक्ति के रूप में विकसित होती है। यह युग विज्ञान का युग है। विज्ञान द्वारा आज के युग में मानव की सर्वसुविधा के लिए अगणित प्रयास चल रहे हैं किंतु भूलवश मानव मन और अंत:करण की घोर अपेक्षा की जा रही है। प्रसिद्ध विचारक नीत्शे ने कहा था, 'यंत्र जितनी तीव्रता से प्रगति कर रहा है। समस्त भौतिक सुविधाओं के संपन्न हो जाने पर भी मनुष्य इतना आत्मविपन्न हो रहा है कि बीसवीं शती के अंत तक वह एकदम खोखला हो जाएगा और भयंकर रूप से दुखी रहने लगेगा।' [5]

'आज की प्रगति की समीक्षा से आशंका स्पष्ट होती है कि बुद्धि, बुद्धि से लड़ रही है और उसका शास्त्र विज्ञान है। सबुद्धि की ना तो उपयोगिता समझी गई और ना ही उसके विकास के बाद सोची गई। सर्वत्र बुद्धि की प्रशंसा की गई। आइंस्टाइन की सराहना सभी ने की पर बुद्धि, ईसा को किसी ने नहीं पूछा। आइंस्टाइन पैदा करने के लिए जेनेटिक इंजीनियरिंग के प्रयोग किए जा रहे हैं पर महावीर पैदा करने के लिए कोई प्रयोग उपचार की व्यवस्था नहीं है। एक ऐसा संकट है जिसकी चर्चा तो सर्वत्र होती है पर उसके निवारण के लिए कोई उपाय नहीं सुनाई देता।'[6]

विज्ञान का यह एकांगी विकास मनुष्य के हाथ का खिलौना बन गया है विज्ञान मानव जीवन को आरामदायक बनाने के साधान तो उपलब्ध कर सकता है किंतु मानव मस्तिष्क में चल रहे और नैतिक विकृत चिंतन को रोकने और बदलने का उसके पास कोई साधन समाधान नहीं इसका उत्तर और समाधान अध्यात्म के पास है। आज के वैज्ञानिक युग में मानव की सृजन शक्ति अपने चरम पर पहुंच गई है और वह चांद मंगल आदि पर पहुंचने के साथ ही प्रकृति विजय की ओर अग्रसर है। किंतु यह कटु सत्य है कि उसकी वैज्ञानिक प्रगति के कारण संहारक शक्ति भी निरंतर समृद्ध हो रही है। इन विषम परिस्थितियों के बीच हमारा सामाजिक विश्वास, आस्था, आशा और रागात्मकता बुरी तरह क्षत-विक्षत हो गए हैं। जब किसी समाज या राष्ट्र की संस्कृति, परंपराएं और जीवन मूल्य, नवीन-उदित शक्तियों, चुनौतियो, विचारों और व्यवहारों के समक्ष बौने और कमजोर पड़ने लगे तो सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन में नया संकट पैदा कर देते हैं। ऐसी ही संकटकालीन स्थिति या हमें आज दिखाई दे रही हैं। आज वैज्ञानिक और औद्योगिक की प्रडति की दौड़ में दौड़ते हुए हम अपनी परंपराओं से दूर होते जा रहे हैं। आधुनिक रुझान, बढ़ती भोग-विलासिता, महत्वकांक्षा और स्वार्थ ने परंपरागत मूल्यों के विरुद्ध एक नवीन मार्ग को जन्म दिया है जिस पर चलते हुए हमारे संकट बढ़ते ही जा रहे हैं। यह संकट किसी एक क्षेत्र में नहीं है, सामाजिक जीवन में हिंसा, प्रतिहिंसा, आतंक, असुरक्षा, असहिष्णुता, तो राजनीतिक क्षेत्र में नैतिक मूल्यों और राष्ट्रप्रेम को तिलांजलि देकर सत्ता की होड़ के रूप में। आर्थिक दृष्टि से तो संकट और भी भयावह है। गैरकानूनी कमाई की हवस की कहानी किस्से छुपी है? गौतम-गांधी का अहिंसा और शांति वाहक भारत आतंकी हमलों, सामाजिक द्वेष, हिंसा, बलात्कार और स्वार्थी भ्रष्ट जनप्रतिनिधियों के घोटाले के नीचे कराह रहा है। यह सारे चित्र नैतिक मूल्यों के पतन की पराकाष्ठा है। आज हम ऐसी विकृत और विशाल दुनिया में जीने को विवश हैं जिससे हमारा कोई आत्मीय संबंध नहीं है। कहने को तो हम विश्वग्राम में जी रहे हैं पर अपने परिवार और पड़ोसी से भी नहीं जुड़ पा रहे हैं। आज हम सिद्धि देखते हैं साधान नहीं हर रास्ते पर 'शॉर्टकट' हमारा अभिप्सित है। युवाओं में धैर्य, सहिष्णुता, कर्म-निष्ठा और संयम की कमी हिंसा, आत्महत्या, अपराधों के रूप में प्रतिबिंबित हो रही है। ऐसे में हमारी दृष्टि बरबस ही अध्यात्मा साहित्य और विज्ञान की पुर्नव्याख्या और नवीन स्थापना की ओर आकर्षित हो रही है क्योंकि यहीं से आशा किरण प्राप्त हो सकती है जो आधुनिक जीवन के लिए सुख शांति और आनंद का स्त्रोत बन सकती है। विज्ञान अध्यात्म और साहित्य मानव जीवन को संचालित करने वाली 3 महत प्रेरणाएं हैं। यह भारत की भावमयी, रसमयी और तत्वमयी विराट चिंतन परंपरा का मूल स्त्रोत है। कहने का आशय है कि विज्ञान, अध्यात्म और साहित्य तीनों का ही उद्देश्य मानव को कल्याणकारी मार्ग पर अग्रसर करना है। केवल बाह्य भौतिक विकास या आत्मिक विकास हमें पूर्ण सुखी या आनंदमय जीवन नहीं दे सकता है क्योंकि हम आज केवल एक भौतिक पक्ष के महत्व को प्रधान मान लेने के परिणाम देख रहे हैं। विज्ञान, अध्यात्म और साहित्य तीनों ही सामाजिक जीवन में शुचिता, पारदर्शिता और दायित्व बोध को जीवन आनंद की कसौटी सिखाते हैं। तीनों ही सत्य को प्रकाशित करते हैं।

वर्तमान युग में दो शक्तियां काम करेंगे एक है विज्ञान और दूसरी आध्यात्म। एक प्राण और दूसरा ज्ञान। एक है शक्ति और दूसरी बुद्धि। विज्ञान से गति मिलेगी। आत्मज्ञान के मार्गदर्शन में विज्ञान काम करेगा। तब ही धरती पर स्वर्ग आएगा। एक बाह्य शक्ति है तो दूसरी आंतरिक। इन दोनों को जोड़ने वाली कौन-सी चीज हो सकती है। विचार करने पर जोड़ने वाली कड़ी के रूप में साहित्य ही हमारे समझ आता है। साहित्य दोनों को जोड़ेगा। अध्यात्म में भारतीयों का प्राण तो विज्ञान श्वास। दोनों के समन्वय से ही जीवन में आए विरोधाभासों को समाप्त किया जा सकता है। दोनों समन्वित रूप ही भविष्य का सार्वभौम धर्म है यदि हम सभी चाहते हैं कि मानव ऐसे सम्यक और उदात्त जीवन की ओर अग्रसर हो जिसमें उसकी संपूर्ण संभावनाएं साकार हो सके तो हमें विज्ञान, अध्यात्म और साहित्य की पारस्परिकता को समझना ही होगा। अत: आज विश्व के परिदृश्य में इन तीनों की महती आवश्यकता है पूरे संसार में तीनों के समन्वय से एक ऐसा शांतिपूर्ण मार्ग खोजा जाए जहां बाह्य एवं आंतरिक दोनों ही प्रकार की उन्नति हो जिससे आने वाली पीढ़ियां संतुलित विकास के साथ संतुलित जीवन जी सकें। सत्य का ज्ञान ही विज्ञान है, परम सत्य का ज्ञान ही अध्यात्म है। इसका अर्थ यह हुआ कि दोनों में सत्य को परीक्षण द्वारा खोजा जाता है क्योंकि जहां विज्ञान है वहां अध्यात्म का अभाव है कट्टरता और आतंकवाद है पूरे संसार में तीनों के समन्वय से एक ऐसा शांतिपूर्ण मार्ग खोजा जाए जहां बहाए आंतरिक दोनों ही प्रकार की उन्नति हो जिससे आने वाली पीढ़ियां संतुलित विकास के साथ जीवन जी सकें। वैज्ञानिक मनीषो मिलिनन ने अपनी कृति 'इवोल्यूशन इन साइंस एंड रिलीजन', में कहा है कि, 'दोनों महा शक्तियों के समन्वय की प्रक्रिया आरंभ हो गई है जिस तरह विज्ञान के क्षेत्र में मस्तिष्क को अधिक खुला रखे और हर सिद्धांत का प्रयोगात्मक निरीक्षण परीक्षण किया जाता है, अध्यात्म के क्षेत्र में भी उसी प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना चाहिए। उनका विश्वास है कि भविष्य में मानव इन दोनों ही क्षेत्रों में विकास करेगा एक ओर जहां विवेक बुद्धि से विज्ञान के क्षेत्र में सृजनात्मक प्रगति करेगा वही आत्मिकी के सहारे देवी क्षमताओं से परिपूरित तब गंगा, यमुना एवं सरस्वती की सम्मिलित से बने त्रिवेणी संगम की तरह साइंस, स्प्रिचुअलिटी और ह्यूमेयूनिटीज का समन्वय होगा और एक नवीन ज्ञान का

उद्भव होगा। उन्होंने इसे 'डिवाइन विजडम'(दिव्य ज्ञान) के नाम से संबोधित किया है।' 7

अंत में निष्कर्ष रूप यही कह सकते हैं कि विज्ञान और अध्यात्म एक ही स्त्रोत के नि:सृत दो शक्ति धाराएं हैं क्षेत्र की प्रथा के कारण उनके स्वरूप में भेद दृष्टिगोचर होता है। दोनों का संतुलित विकास और एकता ही मानव के समग्र उत्थान का मार्ग प्रशस्त करेगा। दोनों का समन्वित रूप ही भविष्य का सार्वभौम धर्म है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. तीर्थ भारतकोश, हिंदी ज्ञान का महासागर bharatdiscovery.org/india/तीर्थ
2. 'अहा जिंदगी' - मार्च 2016
3. 'हिंदू सुपिरियरिटी' (ग्राण्ड थिएटर में दिए गए व्याख्यान का अंश), संपा. - हरबिलास सारदा, पृ. 398
4. स्वामी विवेकानंद - 'हे भारत, उठो जागो', पृ. 5
5. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय, 'विज्ञान के अध्यात्म: परस्पर पूरक से ब्रह्मवचर्स', प्रका. - अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा, द्वितीय सं. 1998 अधयाय-5, 'यांत्रिक जीवन में हमारी खो रही संवेदना', पृ. 5.33
6. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय, 'विज्ञान के अध्यात्म: परस्पर पूरक से ब्रह्मवचर्स', प्रका. - अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा, द्वितीय सं. 1998 अधयाय-5, 'यथार्थता तों स्वीकार करनी पड़ेगी', पृ. 5.5
7. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय, 'विज्ञान के अध्यात्म: परस्पर पूरक से ब्रह्मवचर्स', प्रका. - अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा, द्वितीय सं. 1998 अधयाय-5, 'चले विज्ञान अब अध्यात्म का कर थाम कर जग में', पृ. 5.23

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

भारत में विधवा अथवा एकल नारी के पुनर्वास हेतु प्रयास

डॉ. नीलिमा आर्य *

प्रस्तावना – हम सब एक सामाजिक समुदाय का हिस्सा हैं। हमें सदैव एक-दूसरे की मदद करनी चाहिए, हमें एक-दूसरे की समस्याओं के बारे में पता होना चाहिए जिससे समाधान की दिशा में सही कदम उठाए जा सकें। देश भर में बड़ी संख्या में महिलाएं युद्ध, हिंसा व बीमारी के चलते अपने पतियों को खो देती हैं और वो विधवा कहलाने लगती हैं। विधवाओं के साथ हमेशा से भेदभावपूर्ण व्यवहार होता आ रहा है। एक अनुमान के अनुसार पति की मौत के बाद अभिशाप समझकर परिवार द्वारा निकाली गईं, ऐसी महिलाओं की संख्या करीब चार करोड़ के आस-पास है। तथा वर्ष 2014 के आंकड़ों के मुताबिक भारत में 5 करोड़ विधवाएं हैं, परंपरा, रीति-रिवाज के नाम पर इन्हें इनके अधिकारों से वंचित रखा जाता है, परिवार के अंदर उन्हें बोझ समझा जाता है।

संयुक्त राष्ट्र महासभा – विधवाओं की स्थिति को विशेष पहचान देने के लिए संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 23 जून 2011 को पहली बार अंतरराष्ट्रीय विधवा दिवस की घोषणा की जो प्रतिवर्ष मनाया जाता है। विधवाओं एवं उनके बच्चों से दुर्व्यवहार मानव अधिकारों का उल्लंघन और विकास में सबसे बड़ी बाधा है। पूजा कुमारी ने बताया विश्व की लाखों विधवाएं गरीबी, बहिष्कार, हिंसा जैसी समस्याओं की शिकार है। अनुमान के अनुसार 115 मिलियन विधवाएं गरीबी में जीवन व्यतीत कर रही हैं। इसके अलावे 81 मिलियन विधवा शारीरिक शोषण का सामना करती हैं। 40 मिलियन विधवाएं भारत में जो आर्थिक तंगी का दंश झेल रही हैं। वहीं 15 हजार विधवाएं पवित्र शहर वृंदावन की सड़कों पर अकेले रहती हैं। जिन देशों में युद्ध हो रहा है वहां की स्थिति और भी दयनीय है। सरकार को भी विधवाओं के लिए विशेष कार्यक्रम चलाने की जरूरत है, ताकि ये महिलाएं किसी पर आश्रित न रह सके।

समकालीन प्रयास

कैथरीन मेयो (1927) की पुस्तक 'मदर इंडिया' के प्रकाशन के बाद राष्ट्रवादियों की भृकुटियाँ तन गयी थीं, जो आज भी तनी हैं। मिस्टर गांधी ने इसे तब 'गटर इंस्पेक्टर्स रिपोर्ट' कहा था। यह किताब तत्कालीन भारत में महिलाओं की दुर्दशा का आइना है, ब्राह्मणवादी पितृसत्ता के रेशे उधेड़ देती है। हाल में प्रसिद्द लेखक कँवल भारती ने इसका अनुवाद किया है, प्रकाशन फॉरवर्ड प्रेस ने किया है। इसका एक अंश पढ़ें और महसूस करें कि हम किस तरह महिलाओं के प्रति क्रूर और कामातुर पूर्वजों की संतानें हैं। वे 6 साल की बच्ची से विवाह और विवाह के संरक्षण में उसका बलात्कार कर सकते थे।

गांधी के 11 नवंबर 1926 के साप्ताहिक 'यंग इंडिया' में एक हिंदू लेखक लिखता है कि अगर मरते समय पति अनुमति न दे, तो आज भी विधवा का पुनर्विवाह संभव नहीं है। कोई भी धर्मपरायण पति ऐसी अनुमति नहीं देगा। यही लेखक आगे लिखता है-'विवाह की अनुमति देने के बजाय यदि उसकी पत्नी सती होना चाहे, तो वह इसे ज्यादा पसंद करेगा।'

आबे दुब्बा के एक शताब्दी पहले के विचार आज भी सही लगते हैं। उन्होंने कहा था कि 60 वर्ष के पुरुष के साथ एक छोटी बच्ची का विवाह करने और उस पुरुष की मृत्यु के बाद उस बच्ची का पुनर्विवाह न होने देने का मतलब यही होगा कि उसे विधवा के रूप में एक दुराचारी जीवन में धकेल दिया जाएगा। फिर भी विधवा के पुनर्विवाह की अनुमति नहीं थी। एब कहते हैं-'अगर पुनर्विवाह की अनुमति मिलती भी, तो यह अजीब बात है कि इसमें ब्राह्मण छोटी उम्र की बाल-विधवाओं को ही पुनर्विवाह के लिए पसंद करते, जिससे इस तरह की अनुमति से विधवाओं को ही लाभ नहीं होता।'

मिस सोराबजी के अनुसार 'एक सनातनी हिंदू विधवा अपने वैधव्य के दु:ख को उसी तरह खुशी-खुशी सहन करती है, जैसे कोई शहीद अपना बलिदान देता है। किन्तु ऐसी कोई चीज नहीं है, जो उसके दु:खों को कम कर सकती है। उसके स्वीकार करने से भी उसके दु:ख कम नहीं होते हैं। क्योंकि, (यह माना जाता है कि) पिछले जन्म में उसने कुछ पाप किए थेय उसी के कारण देवताओं ने उससे उसका पति छीन लिया है। अब उसके लिए यही काम रह गया है कि वह अपने शेष जीवन में पति के मोक्ष के लिए प्रार्थना और प्रायश्चित करे, ताकि अगले जन्म में उसके पति को अच्छा स्थान मिल सके। और सास के लिए भी उसे कोसने का ही काम रह गया है-यह अभागी अगर नहीं आती, तो उसका पुत्र अभी भी जिंदा होता। हालांकि, सास के इस व्यवहार में विधवा के लिए कोई द्वेषभाव नहीं रहता है। क्योंकि, कोसने वाली सास भी उतनी ही अभागी है, जितनी कि बहूय जिसे वह कोसती है। यह कहना आसान है कि विधवा के प्रति कोई व्यक्तिगत द्वेष नहीं होता है। पर, उसे बुरा-भला कहते रहना भी विशेषाधिकार समझा जाता है और उससे हर अच्छा-बुरा काम भी खूब लिया जाता है।'

बर्नियर के अनुसार 'विधवाओं को इसलिए कष्ट दिए जाते थे, ताकि आसानी से पत्नियों को नियंत्रण में रखा जा सके। वे पतियों की बीमारी के समय उनकी खूब सेवा करें और अपने पतियों को जहर देने से डरें।'

नेता लाला लाजपत राय के अनुसार 'बाल-विधवाओं की स्थिति वर्णन से परे है। ईश्वर उनका भला करे, जो उनके पुनर्विवाह के विरोधी हैं। किन्तु, उनके अंधविश्वास के कारण बहुत-सी बुराइयां पैदा होती हैं और इतना नैतिक तथा शारीरिक कष्ट बढ़ता है कि संपूर्ण समाज में अपंगता आ गई है, जो उसके जीवन के संघर्ष में बाधा है।'

संगीता शर्मा, एवं राजेश के अनुसार 2016 में बनी महिलाओं के लिए राष्ट्रीय नीति में भी एकल महिलाओं की समस्याओं को ध्यान में रखकर उनके लिए अलग से नीति बनाने की बात कही गई है। इसमें कहा गया है

* पोस्ट डॉक्टारोल फैलो, आई.सी.एस.एस.आर., नई दिल्ली, भारत

'महिलाओं के लिए वर्तमान में मौजूद आधारभूत संरचनाओं को और सुदृढ़ किया जाएगा ताकि कमजोर, उपेक्षित, प्रवासी तथा एकल स्त्रियों को बेहतर माहौल प्रदान किया जा सके।' साथ ही इसमें कहा गया है कि एकल महिलाएं, जिनमें विधवा, तलाकशुदा, परित्यक्ता तथा अविवाहित महिलाएं शामिल हैं, की विशेष जरूरतों को ध्यान में रखते हुए सघन सामाजिक सुरक्षा तंत्र विकसित किया जाएगा जिससे उनकी सुरक्षा हो सके, रोजगार के अवसर मिलें और इस प्रकार संपूर्ण कल्याण हो सके। देश में एकल महिलाओं की दशा पर देर से ही सही पर सरकार और समाज का ध्यान गया है। जरूरत है उनकी आवश्यकताओं को समझने की तथा उनके लिए संघर्ष कर रहे सामाजिक संगठनों की मांगों पर विचार करने की। खासकर गांवों और छोटे शहरों में रह रहीं एकल महिलाएं बेहद विपरीत परिस्थितियों से गुजर रही हैं, उनके लिए शीघ्र और स्पष्ट योजनाओं को आकार देने की जरूरत है।

प्रदीप त्रिपाठी के अनुसार भारत में परंपरागत तौर पर महिलाओं के पास खुद की जमीन नहीं होती। उन्हें उसके लिए अधिकृत ही नहीं माना जाता। संपत्ति और जमीन के अधिकार पुरुषों के विशेषाधिकार की तरह होते हैं और औरत केवल उनकी आश्रित बनकर रह सकती है। विधवा, परित्यक्ता और अविवाहित औरतों के लिए तो जमीन पर अधिकार होने का सवाल ही नहीं उठता क्योंकि सामाजिक जीवन के अन्य क्षेत्रों में जब उनके लिए स्थान नहीं बनाया गया है तो फिर जमीन और संपत्ति की बात बेमानी है।

सुधारानी एवं रागिनी श्रीवास्तव के अनुसार शहरी और पढ़ी-लिखी एकल औरतें अपनी शिक्षा और रोजगार के बल पर तथा विभिन्न संगठनों से जुड़कर कुछ हद तक अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हुई हैं लेकिन ग्रामीण, अशिक्षित और पिछड़े समुदायों में यह समस्या अधिक गहरी है। पिछड़े और पीछे छोड़ दिए गए समुदायों के पास प्राय: जमीन नहीं होती। ऐसे में इन्हें हर समय खुद को सभी उपलब्ध संसाधनों से भी बेदखल कर दिए जाने का भय समाया रहता है। किसी भी आधिकारिक संपत्ति का मालिक न होने की वजह से इन्हें सरकारी योजनाओं तथा सेवाओं का लाभ नहीं मिलता और न ही काम शुरू करने के लिए बैंक से कर्जा। जब पूरे समुदाय का ये हाल है तो सोचा जा सकता है कि इनकी महिलाओं की क्या दशा होती होगी।

उपसंहार - विधवाओं को समाज की मुख्यधारा में वापिस लाए जाने की जरूरत है। जो अपने तन पर सफेद साड़ी आते ही समाज के रिश्ते-नातों और दुनिया के रंगों से अलग कर दी जाती हैं। वे अब बदलते समय के साथ समाज की मुख्यधारा में लौटना चाहती हैं और इनमें से कई विधवाएं एक बार फिर विवाह बंधन में बंधने एवं नई जिन्दगी जीने का सपना भी देखती हैं। अतरू महिलाओं को विधवा होने के बाद पुरुषों की ही तरह फिर से विवाह करने का अधिकार होना चाहिए। विधवा महिलाओं को समाज में बिल्कुल अनदेखा कर दिया जाता है, जबकि उन्हें फिर से रिश्ते जोड़ने का हक मिलना चाहिए, समाज के लोग इसमे उनका साथ दें। महिला कम उम्र में विधवा हो जाती है तो उसे पुनरू घर बसाने का मौका दिया जाना चाहिए। इसके लिए समाज को एवं समाज के हर वर्ग को जागरूक होना होगा और रीति-रिवाज और परम्पराओं को परे रखकर, विधवाओं को उनके अधिकार दिलाने की अवाश्यकता है, जिस समाज में सभी को समान रूप से जीने का अधिकार है उस समाज में विधवाओं का यह अधिकार क्यों छीन लिया जाता है, उनका शोषण क्यों किया जाता है, क्यों उन्हें अनदेखा किया जाता है, क्यों उन्हें अछूत की दृष्टि से देखा जाता है, क्यों उनके प्रति दुर्भावना रखी जाती है। उनके साथ ऐसा नही किया जाना चाहिए उन्हें समाज में समानता का दर्जा दिया जाना चाहिए। अगर वे फिर से विवाह करना चाहती हैं तो विरोध करने की बजाये उनका साथ देना होगा, वे अगर नई जिन्दगी की शुरुआत करने का सपना देखती हैं, तो उनके अंदर सपने सकार करने का हौसला भरना चाहिए। उनकी शोषित, दुखभरी, अनदेखी दुनिया को समाप्त कर फिर से उनके जीवन को खुशियों से भर देना चाहिए। क्योंकि रीति-रिवाज इंसान के लिए हैं न कि इंसान रीति-रिवाज के लिए, अगर किसी अच्छे काम के लिए रीति-रिवाज को बदलना पड़े तो हमे बदल देना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. बिटवीन दि टिवलाइट्स, पृष्ठ-144 से 146
2. ट्रेवल्स इन दि मुगल इंपायर, 1656-1668 ई। पा। फ्रोंस्वा बर्नियर, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1916, पृष्ठ-310, 311
3. दिसंबर 1925 में बंबई में हिंदू महासभा के सम्मेलन में दिया गया अध्यक्षीय भाषण
4. यंग इंडिया, 26 अगस्त 1926, पृष्ठ-302
5. सेन्सस ऑफ इंडिया, 1921, वॉल्यूम-1, अध्याय-7, पैरा-134
6. एनेशन इन दि मेकिंग, सर सुरेंद्रनाथ बनर्जी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1925, पृष्ठ-8, 9
7. स्टेटिस्टिकल एबस्ट्रेक्ट फॉर ब्रिटिश इंडिया, 1914-15, गवर्नमेंट ऑफ इंडिया पब्लिकेशन, 1925, पृष्ठ-20

****

तुलसी की विनय-पत्रिका में मन का स्वरूप एवं उसका उन्नयन

डॉ. श्याम पाल मौर्य *

प्रस्तावना - मनुष्य का मन भगवान में लग जाय, तो लोहे से कंचन बन जाता है और संसार के मिथ्या मायिक रूप की कुहेलिका में फँस जाय तो घोर भव चक्र में दारुण दु:ख भोगता रहता है। जगत जीवन का एकमात्र चरम साधय है भगवद प्रेम। बिना सच्चे प्रेम के आनन्द सिन्धु भगवान अनेक उपाय करने पर भी नही मिलते-

मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा।
किये जोग जप ज्ञान विरागा।।1

भगवद्भक्ति और सत्संग के बिना भवत्रास समाप्त हो ही नही सकती -

तुलसिदास सब बिधि प्रपञ्च जग, जदपि झूठ श्रुति गावै।
रघुपति-भगति, संत-संगति बिनु, को भव-त्रास नसावै।।2

हमारे देश के योगशिरोमणि महर्षि पतंजलि योगसूत्र में चित्त की वृत्तियों के निरोध को ही योग कहते हैं -

योगश्चित्तवृत्ति निरोध:।3

मानव के मन की क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध - पाँच अवस्थाएँ होती हैं। प्राय: अधिकांश लोग इनमें से प्रारम्भ की तीन अवस्थाओं में ही रहते हैं। प्रयत्न करने की इच्छाशक्ति जगाने पर मनुष्य एकाग्रता की अवस्था के पात्र होते हैं, यही एकाग्रता की चरम स्थिति निरुद्ध अवस्था को प्राप्त होती है। निरुद्ध अवस्था में द्रष्टा को अपने स्वरूप में स्थिति हो जाती है-

तदा द्रष्टु: स्वरूपे अवस्थानम्।4

वृत्तियों के निरोध का साधन बताते हुए ऋषि बड़ी गोपनीय और महत्त्वपूर्ण बात बताते हैं-

अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोध:।5

भगवान श्रीकृष्ण अपने श्रीमुख से यही रहस्य उद्घाटित करते है -

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलं।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।।6

गोस्वामी तुलसीदास रामचरित मानस में मन के आत्यन्तिक परिवर्तन के लिए भक्ति को सर्वोच्च स्थान देते हैं।

राम भगति मनि उर बस जाकें। दु:ख लवलेस न सपनेहुँ ताकें।
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं।।7

अन्यत्र वे विश्व विजय भगवद भक्ति को ही घोषित करते है।

ब्रह्म पयोनिधि मंदर ग्यान संत सुर आहिं।
कथा सुधा मथि काढ़हिं भगति मधुरता जाहिं।।
बिरति चर्म असि ग्यान मद लोभ मोह रिपु मारि।
जय पाइअ सो हरि भगति देखु खगेस बिचारि।।8

यह सब सौभाग्य मन की शुचिता के द्वारा ही सम्भव है। जब तक मन विकारों से मुक्त नहीं होता तब तक जीव कृतकृत्य नहीं होता। इसीलिए विनय पत्रिका में मन के जटिल स्वरूप का रहस्य उद्घाटित करते हैं -

जौ निज मन परिहरै बिकारा।
तौ कत द्वैत - जनित संसृति - दुख, संसय, सोक अपारा।।
सत्रु, मित्र, मध्यस्थ, तीनि ये, मन कीन्हें बरिआईं।
त्यागन, गहन, उपेच्छनीय, अहि, हाटक तृनकी नाईं।।
असन, बसन, पसु बस्तु बिबिध बिधि सब मनि महँ रह जैसे।
सरग, नरक, चर - अचर लोक बहु, बसत मध्य मन तैसे।।
बिटप - मध्य पुतरिका, सूत महँ कंचुकि बिनहिं बनाये।
मन महँ तथा लीन नाना तनु, प्रगटत अवसर पाये ।।
रघुपति - भगति - बारि - छालित - चित, बिनु प्रयास ही सूझै।
तुलसिदास कह चिद - बिलास जग बूझत बूझत बूझै।।

न विकारग्रस्त होने पर द्वैतभाव के कारण संशय और शोक से भर जाता है। शत्रु, मित्र और मध्यस्थ सब मन ही ने बलात बना रखे हैं, मणि में स्थित, मूल्य में सभी सम्बन्धित वस्तुएँ रहती है, वृक्ष में कठपुतली सूत में नाना वस्त्र बिना बताये ही होते है वैसे ही मन में अनेक जन्मों के शरीर होते हैं, समय आने पर प्रकट हो जाते हैं। भगवद भक्ति के पावन जल से प्रक्षालित मन को यह मिथ्या माया या चिदविलास जग का सच्चा स्वरूप धीरे धीरे समझ में आता है।

मन मनुष्य को बहिर्मुख बनाकर रखता है। बाहरी साधन उपायों से हृदय ग्रन्थि नहीं छूटती, हरि गुरु की करुना के बिना विमल विवेक नहीं होता। विवेक के बिना कोई भी संसार सिन्धु का पार नही पा सकता

माधव ! मोह - फाँस क्यों टूटै ।
बाहिर कोटि उपाय करिय, अभ्यंतर ग्रन्थि न छूटै ।।
घृतपूरन कराह अंतरगत ससि - प्रतिबिंब दिखावै ।
ईंधन अनल लगाय कलपसत, औटत नास न पावै ।।
तरु - कोटर महँ बस बिहंग तरु काटे मरै न जैसे ।
साधन करिय बिचार - हीन मन सुद्ध होइ नहिं तैसे ।।
अंतर मलिन बिषय मन अति, तन पावन करिय पखारे ।
मरइ न उरग अनेक जतन बलमीकि बिबिध बिधि मारे ।।
तुलसिदास हरि - गुरु - करुना बिनु बिमल बिबेक न होई ।
बिनु बिबेक संसार - घोर - निधि पार न पावै कोई ।।

मन सदा चिरकालसे मूढ़ता का आचरण करता आया है, भ्रमग्रस्त होकर सम्पूर्ण जीवन व्यर्थ नष्ट करवा देता है -

ऐसी मूढ़ता या मनकी।

* प्रभारी एवं एसोसिएट प्रोफ़ेसर (हिंदी) बरेली कॉलेज, बरेली (उ.प्र.) भारत

परिहरि राम – भगति – सुरसरिता, आस करत ओस कन की ।।
धूम – समूह निरखि चातक ज्यों, तृषित जानि मति घनकी ।
नहिं तहँ सीतलता न बारि, पुनि हानि होति लोचनकी ।।
ज्यों गच – काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तनकी ।
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आननकी ।।
कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि ! जानत हौ गति जनकी ।
तुलसीदास प्रभु हरहु दुसह दुख, करहु लाज निज पनकी ।। 9

मूढ़ता, लालच, हठ, अचेतनता, चंचलता, चपलता आदि मन के स्वभाव में है। हठधर्मिता का रहस्य गोस्वामी जी प्रगट करते हैं–

मेरो मन हरिजू! हठ न तजै।
निसिदिन नाथ देउँ सिख बहु बिधि, करत सुभाउ निजै।।
ज्यों जुबती अनुभवति प्रसव अति दारुन दुख उपजै।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ, पुनि खल पतिहिं भजै।।
लोलुप भ्रमत गृहपसु–ज्यों जहँ–तहँ सिर पदत्रान बजै।
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग, कबहुँ न मूढ़ लजै।।
हौं हारयौ करि जतन बिबिध बिधि, अतिसै प्रबल अजै।
तुलसिदास बस होइ तबहिं जब प्रेरक प्रभु बरजै।। 10

मन की असंगत चाल और हठधर्मिता के विषय में महाकवि सूरदास भी इसी शैली में कहते हैं?

माधौ जू, मन माया बस कीन्हौ।
लाभ–हानि कछु समुझत नाहीं, ज्यौं पतंग तन दीन्हौ।।
गृह दीपक, धन तेल, तूल तिय, सुत ज्वाला अति जोर।
मैं मति–हीन मरम नहि जान्यौ, परयौ अधिक करि दौर।।
बिवस भयौं नलिनो के सुक ज्यौं, बिन गुन मोहि गह्यौ।
मैं अज्ञान कछू नहिं समुझ्यौ, परि दुख–पुंज सह्यौ।।
बहुतक दिवस भए या जग मैं, भ्रमत फिरयौ मति–हीन।
सूर स्यामसुंदर जौ सेवैं, क्यौं होवै गति दीन।। 11

एक अन्य सुन्दर पद में महाकवि सूर मन की रहस्यमयी गति का चित्रण करते हैं –

धन दारा–सुत बधु–कुटुम्ब फल, निरखि निरखि बौरान्यौ।
जीवन जन्म अल्प सपनो सौ, समुझि देख मन माही।
वादर छाँह धूम धौराहर, जैसे थिर न रहाही।
जब लगि डोलत, बोलत, चितवत, धन दारा हैं तेरे।
निकसत हँस प्रेत कहि तजिहैं, कोउ न आवै नेरे।
मूरख, मुग्ध, अजान, मूढ़मति नाहि कोउ तेरौ।
जो कोउ हितकारी, सो कहै काढ़ि सबेरौ।
घरी एक सजन– कुटुम्ब मिलि बैठें, रुदन बिलाप कराहीं।
जैसैं काग काग कै मूएँ, काँ– काँ करि उडि जाहिं।
कृमि पावक तेरो तन भखिहै समुझि देखिं मन माही।
दीन दयाल सूर हरि भजिलै, यह औसर फिर नाही।

भगवद् विमुख होने पर मन संसार में किस प्रकार दुख पाता है? कैसे आत्मा को बंधन में डाल देता है? गोस्वामी तुलसीदास बहुत ही सुन्दर सटीक और व्यावहारिक चित्रण कर उसको भगवान के प्रेम की ओर मोड़ने की सत्प्रेरणा देते हैं। जप, तप और योगादि साधनों के द्वारा चित्त की प्रमाण विपर्यय विकल्प निद्रा आदि वृत्तियों का निरोध बहुत कठिन है। गोस्वामी जी विनय–पत्रिका सहित अपने सभी ग्रंथों में बार बार यही कहते हैं कि प्रभु कृपा से ही मन का उन्नयन हो सकता है। मन के काम, क्रोध और लोभादि भी प्रभु की ओर उन्मुख होने पर उनका उन्नयन हो जाता है। मानस में तुलसीदास जी ने कहा है–

भाव, कुभाव अनख आलसहू। नाम लिएँ मंगल दिसि दसहूँ।

अन्यत्र भी सुंदर ढंग से उन्होंने इस बात को व्यक्त किया है–

तुलसी अपने राम को, रीझि भजौ या खीज।
भूमि पड़े जामे सभी, उल्टे सीधे बीज।।

मन की यह विनाशकारी बिगड़ी चाल प्रभु की कृपा बिना नहीं सुधरती। एक पद में वे यही डिडिमघोष करते हैं–

जो पै रहनि राम सौ नाहीं।
तौ नर खर कूकर सूकर सम बृथा जियत जग माहीं ।।
काम,क्रोध,मद,लोभ,नींद,भय,भूख,प्यास सबहीके।
मनुज देह सुर–साधु सराहत, सो सनेह सिय–पीके ।।
सूर,सुजान,सुपूत सुलच्छन गनियत गुन गरुआई।
बिनु हरिभजन इँदारुनके फल तजत नहीं करुआई ।।
कीरति, कुल करतूति, भूति भलि, सील, सरूप सलोने।
तुलसी प्रभु–अनुराग–रहित जस सालन साग अलोने ।।12

पारस के स्पर्श से लोहा सोना, गंगा में कोई मलिन जल भी पावन हो जाता है । प्रभु से शत्रु भाव लगाने वाली पूतना, वैर भाव और क्रोध करके कंस, रावण और शिशुपाल जैसे अधर्म भी तर गये। चित्त की हीन वृत्तियों का भक्ति की गंगा में पड़कर सहज ही उन्नयन और स्वरूपान्तरण हो सकता है। भारतीय संस्कृति और साहित्य के निमित्त गोस्वामी जी का यह अक्षय प्रेरणा प्रदेय रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. रामचरितमानस– उत्तरकाण्ड– 1
2. विनय पत्रिका – 12
3. योगसूत्र – 01
4. योगसूत्र– 1/3
5. गीता– 6/35
6. रामचरितमानस– उत्तरकाण्ड –120 (क)
7. रामचरित मानस – उत्तर काण्ड – 120 (क) एवं 120 (ख)
8. विनय पत्रिका– 124
9. विनय पत्रिका – 20
10. विनय पत्रिका– 90
11. सूरसागर– प्रथम स्कन्ध– 46
12. विनय पत्रिका – 176

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

Impact of Liberalization on Indian Insurance Sector

Dr. Rajesh Shroff *

Abstract - There is no doubt on growth economy and many consider it an attractive country to invest in, particularly in its rapidly risingand challenging insurancearcades. Foreign direct investment plays an important role in the economic development of the country. However, In pre and post liberalization period, Foreign Direct Investment (FDI) is freein the insurance industry, and despite many years ofdiscussion, the policies and regulations are still not transformedand there are still lots of restrictions. Foreign Investors in Indiaare ready for a piece of the action in the insurance market, but there are still overabundanceofsuspicions, restrictions and potential in socio-economic risks.This paper's objectives are to find out the various effects of FDI on Indian insurance sector .For this the research is conducted through secondary data sources only.
Keywords– Insurance, Indian economy, FDI, liberalization, etc.

Introduction - A milestone was attained when the nation decided to privatize the industry along with mandatory regulations. The industry functioned under a monopoly for several decades thereafter. However, other problems surfaced such as limited reach and penetration of enterprise and failing servicing standards. Indian insurance sector was liberalized in 2001. Liberalization has led to the entry of the largest insurance companies in the world, who have taken a strategic view on India being one of the top priorityin developing markets. In order to control the trend of falling Foreign Direct Investment (FDI) in the country, government recently increased the FDI limit in various sectors, latest being the insurance sector. The demand for larger FDI exists because India is at a stage where it needs not just investments, but also technology, and management policies to endure and enhance its economic growth. The latest decision to increase the FDI cap to 49 percent in insurance sector received mixed reactions from various sectors, for obvious reasons, was opposed by the employees of public sector insurance companies.

Literature Review

Insurance markets worldwide have changed in the last two decades. Liberalization, deregulation, globalization of insurance institutions, intensified competition, electronic commerce, bank assurance etc. are among the challenges faced by insurance markets now. These developing trends pose both global and local challenges for insurance firms. Analysis of various key insurance markets highlights various homogeneous trends in the global insurance market.

The implications of liberalization, deregulation and globalization vary according to country.Skipper Harold D., Jr. C.V. Starr and J. Mack Robinson (2000) in their study gave an in -depth knowledge on the issues and concerns of insurance market liberalization.Dozens of countries have deregulated and liberalized their insurance markets with the belief that competitive markets are better at enhancing consumer choice and welfare than the rigidly regulated insurance market.

Megginson William L, Robert C. Nash, Matthias Van Randenborgh (1994) in their study compared the financial and operating performances of firms before and after the privatization. They included 61 companies from 18 countries and 32 industries that experience full or partial privatization through public share offerings during the period 1961 to 1990.They found significant increase in profitability, output per employee, capital spending, and total employment and concluded that the newly privatized firms benefited from improved operating and financial performance while maintaining total employment.

A similar work by SterzynskiMaciej, L. L.M (2003) studied the impact of liberalization and deregulation processes in European Community which was enabled to create a Single Insurance market (SIM) under the Third Generation of Insurance Directives. For the period 1995 to 2000, they found out that there was general reduction in number of companies while a serious increase in gross premium growth was observed. During the period, 70 percent of non life insurance was concentrated only in five Member States such as: Germany France, the Netherlands, Spainand UK .Moreover, up to 67.8% of all life insurers were concentrated in UK, Germany, the Netherlands Denmark and France.

Research Methodology - This study takes into account the impact of liberalization on efficiency and productivity improvement in the insurance industry. In the study both primary and secondary data has been used. The collection of primary information has been done through personal investigation method. Secondary data constitutes the main

*Principal, Indore Indira School Of Carrier Studies, Indore (M.P.) INDIA

source of information, suitable for the purpose of present research work. The sources of secondary data were Annual Reports of the companies and IRDA, Directors and Auditors report, IRDA Journals etc.

Explaination Of The Study - The nationalized companies did contribute to the spread of insurance beyond the metropolitan areas and succeeded in popularizing the concept in rural and semi-urban areas. They also succeeded in mobilizing resources which were largely invested in government bonds or bonds floated by Public Sector Companies, which in turn were utilized for supporting various government sponsored programmes at the State and Central levels. There was, however, a huge gap between the potential available and its exploitation. The public sector companies had numerous problems such as over-staffing, inadequate infrastructure, and antiquated procedures. In the absence of competition the consumer didn't benefit in terms of wider choice, lower price for insurance cover and adequate level of service. In the early nineties of the last century, the government reviewed its policy and initiated a process of economic reforms that encouraged private participation in various sectors. As a part of that exercise major reforms were undertaken in the insurance sector. With the adoption of the Insurance Regulatory and Development Authority (IRDA) Act in April, 2000, the insurance market was opened up to the private sector with limited exposure to foreign equity.The response to the opening up of the sector has been encouraging. We have, today, 17 insurance companies and general insurance companies under private ownership. Some of the leading industrial houses and well-established Banks of India have collaborated with leading international insurers to establish joint venture companies. We have witnessed impressive growth in life and non-life premium since the advent of private insurance companies in the Indian market. In a short period of 3 to 5 years these new companies have managed to establish a respectable market share.

Data Related On The Title - Findings

a) Market Share of various Insurance companies -

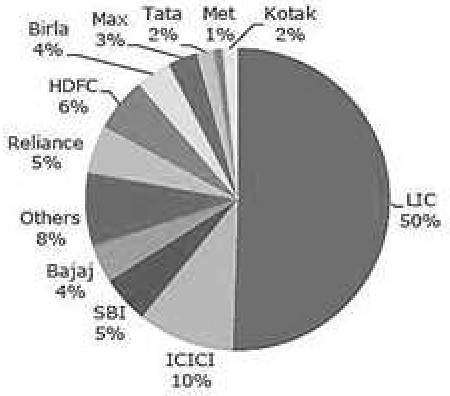

Interpretation : As per the above mention data 50 % market is captured by only LIC of india because of its reliability.Where the second largest is ICICI Prudential. Which shows the legacy of LIC of India.

b) Liberalization and its impact on insurance industry towards national income -

SECTOR WISE GROWTH OF NATIONAL INCOME

(₹ crore)

Industry	2010-11 (2nd RE)	2011-12 (1st RE)	2012-13 (PE)	Percentage change over previous year	
				2011-12	2012-13
1. Agriculture, forestry & fishing	7,13,477	7,39,495	7,53,610	3.6	1.9
2. Mining & quarrying	1,08,938	1,08,249	1,07,619	-0.6	-0.6
3. Manufacturing	8,01,476	8,23,023	8,31,648	2.7	1
4. Electricity, gas & water supply	92,773	98,814	1,02,918	6.5	4.2
5. Construction	3,90,692	4,12,412	4,30,277	5.6	4.3
Industry (2+3+4+5)	**13,93,879**	**14,42,498**	**14,72,462**	**3.5**	**2.1**
6. Trade, hotels, transport and communication	13,45,660	14,40,312	15,32,034	7	6.4
7. Financing, insurance, real estate & business services	8,49,632	9,48,808	10,30,684	11.7	8.6
8. Community, social & personal services	6,34,358	6,72,469	7,16,645	6	6.6
Service (6+7+8)	**28,29,650**	**30,61,589**	**32,79,363**	**8.2**	**7.1**
9. GDP at factor cost	**49,37,006**	**52,43,582**	**55,05,435**	**6.2**	**5**

Source: CSO

RE: Revised Estimate PE: Provisional Estimate

c) Registered Insurers In India

(As on 30th September, 2013)

Type of business	Public Sector	Private Sector	Total
Life Insurance	1	23	24
Non-life Insurance	'6	"21	27
Reinsurance	1	0	1
Total	**8**	**44**	**52**

* Includes Specialized insurance companies - ECGC and AIC

Interpretation- Of the 52 Companies presently in operations, eight are in the public sector – two are specialized insurers, namely ECGC & AIC, One in life insurance namely LIC, four in non life insurance and one in reinsurance (GIC).The remaining 44 companies are in the private sector.

d)

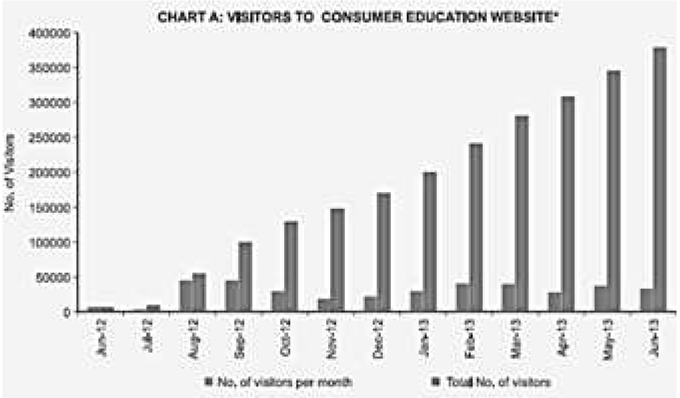

Interpretation : The chart shows the post liberalization but recent impact of internet users and consumer grievance mechanism growth.

Results – Outcomes Of Study – The outcomes of study depicts the pre and post liberalization period and its effect on insurance sector viz-

A. Pre Liberalization Period - 1818 saw the advent of life insurance business in India with the establishment of the Oriental Life Insurance Company in Calcutta. This Company however failed in 1834. 1870 saw the enactment of the British Insurance Act. This era, however, was dominated by foreign insurance offices which did good business in India. The Indian Life Assurance Companies Act, 1912 was the first statutory measure to regulate life business. In 1928, the Indian Insurance Companies Act was enacted to enable the Government to collect statistical information about both life and non-life business transacted in India by Indian and foreign insurers including provident insurance societies. In 1938, with a view to protecting the interest of the Insurance public, the earlier legislation was consolidated and amended by the Insurance Act, 1938 with comprehensive provisions for effective control over the activities of insurers.

B. Post Liberalization Period - The IRDA opened up the market in August 2000 with the invitation for application for registrations. The bill allows foreign equity stake in domestic private insurance companies to maximum of 26% of the total paid-up capital and seeks to provide statutory status to the insurance regulator.Foreign companies were allowed ownership of up to 26%. In December, 2000, the subsidiaries of the General Insurance Corporation of India were restructured as independent companies and at the same time GIC was converted into a national reinsurer. Parliament passed a bill de-linking the four subsidiaries from GIC in July, 2002. Today there are more than 45 private sector insurance companies.

Effect Of FDI After Post Liberalization Period On Insurance

There are arguments that support and question FDI hike in the insurance Industry. However the following benefits are being increasingly recognized as a function of introducing FDI reforms in insurance:

1. Capital for expansion
2. Wider Scope for Growth:
3. Moving towards Global Practices.
4. Provide customers with competitive and innovative products, more options and better service levels.
5. Infrastructure facilities.
6. Boost Economic Life.
7. Job Opportunities
8. Increase level of competition
9. Inflation is controlled.
10. Availability of new technology.
11. New risk management practices.

Conclusion – After analysis and study of various secondary data and personal iscussions it is very clear that Insurance penetration in India has fallen for the second time after the sector was opened for private players. The Insurance Regulatory and Development Authority (Irda), in its annual report for 2012-13, said insurance penetration stood at 3.96 per cent, while insurance density stood at $53.2 for 2012 & 2013 .As the years go by and the Authority and insurers acquire a deeper understanding of the market and the manner in which it operates it should be possible to allocate greater responsibility to the insurers in the area of market conduct and protect consumers' interests by concentrating on solvency of the insurer.Above study shows that how the insurance sector has transformed the Indian insurance scene. I thought that above research is helpful to know for the further research for the new scholar because it throws a light on the title i. e. liberalization.

References:-

1. Mishra S.K. and Puri V.K., Economics of Development and Planning (Theory and Practice), Himalaya Publishing House,New Delhi, 1999, Pg.865.
2. Gupta P.K., Fundamentals of Insurance, Himalaya Publishing House, Mumbai, 2005, Pp 10-25
3. NeetuAndotra, Liberalization: Challenges and Reforms before Indian Insurance Industry, The Indian Journal of Commerce,Vol.L. No. 193, December 1997, pp 10-17.
4. IRDA reports -various issues.
5. Research journals and newsletters.

****

कमलेश्वर की उपन्यासों की वर्त्तमान संदर्भ में प्रासंगिकता

डॉ. जयराम त्रिपाठी *

प्रस्तावना - कमलेश्वर जी के कथा-साहित्य का तो कहना ही क्या। उसने पर्वत के उच्चतम शिखरों को भी छुआ है और सागर की गहराई को भी। जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है, जो उनके साहित्य से अछूता रहा हो। वे जीवन यथार्थ के अनुपम शब्द-शिल्पी है। निम्न मध्यवर्ग और मध्यवर्ग की आशाओं-आकांक्षाओं, सुख-दुखों, विसंगतियों और विवशताओं का जैसा चित्रण कमलेश्वरजी के साहित्य में मिलता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। अत्यन्त संवेदनशील होने के कारण ही वे एक ऐसे चिन्तक हैं, जो विभिन्न शैलियों में अपनी चिन्ताओं और अपने चिन्तन को दूसरों तक ऐसे पहुँचाते हैं कि सबको वे सब अपने-से लगें। उनके साहित्य का अपना सा लगना ही उनके साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता है। कमलेश्वर के भीतर जो मानवीय संवेदनाएँ हैं, उनको कहने की जो तड़प है, मानव की व्यथा-कथा को समझने के लिए जिस सहज अनुभूति की आवश्यकता है, ये सब चीजें ही उन्हें एक महान कथाकार बनाती हैं। कमलेश्वर हिन्दी कथा जगत के प्रमुख वक्ता के रूप में अवतीर्ण हुए। कमलेश्वर की ख्याति का प्रमुख आधार उनका कथा-साहित्य ही है। उन्होंने समाज के मध्यवर्ग को अपने कथा-साहित्य का रचना विषय बनाया। एक प्रगतिशील कथाकार होने के कारण उनमें जीवन से प्रतिबद्धता एवं शाश्वत मूल्यों के प्रति विद्रोह का आग्रह विद्यमान रहा है।

स्वतंत्रता के बाद सत्ता एवं सत्ताधारियों की स्वार्थपूर्ण नीतियाँ, भ्रष्ट शासन व्यवस्था एवं न्यायतंत्र के खोखलेपन आदि के दुष्परिणामों के शिकार आम आदमी की निरीहता एवं दीन-हीन अवस्था, भ्रष्ट पुलिस व्यवस्था से दम तोड़ने को मजबूर लोगों की असहाय अवस्था आदि की सफल अभिव्यक्ति कमलेश्वर के कथा-साहित्य में विशेष रूप से हुई है। 'लाश', 'जार्ज पंचम की नाक', 'रातें', 'जोखिम', 'बयान', 'दालचीनी के जंगल', 'मानसरोवर के हंस', 'स्टोरी', 'इनसान और हैवान', 'अपने अजनबी देश में' तथा 'नागमणि' आदि कहानियाँ में' तथा 'नागमणि' आदि कहानियाँ इसके उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार की पोल खोलने में कमलेश्वर ने व्यंग्य का आश्रय लेकर अपनी रचनाओं को उत्कृष्टता की ऊँचाइयों तक पहुँचाने में कोई भी कमी नहीं छोड़ी है। स्वतंत्र देश में मोहभंग की स्थितिपरक नियति भोग कर ही कमलेश्वर ने शिक्षित, सुयोग्य एवं दम घुटती हुई पीढ़ी के मार्मिक चित्र खींचकर अभिशप्त उच्च शिक्षा की योग्यताओं एवं उपाधियों की कीमत को चित्रित किया है। उन्होंने मूल्यहीनता को पाठकों के समक्ष रखा है। बेकार भटकते हुए, तनाव एवं मानसिक द्वन्द्व सहते हुए युवकों के दु:ख-दर्द एवं संघर्ष का चित्रण उनके कथा-साहित्य में स्पष्ट झलकता है। 'बेकार आदमी', 'आसक्ति', 'युद्ध', 'जोखिम', 'दूसरेय, 'शरीफ आदमी', 'नंगा आदमी' तथा 'सरोकार' आदि ऐसी ही कहानियाँ हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के लम्बे अन्तराल के बाद भी गरीबों की स्थिति ज्यों की त्यों बनी हुई है। उससे छुटकारा नहीं मिल पा रहा है। सत्ताधारी गरीबी हटाने की योजनाएँ बनाते हैं, घोषणाएँ करते हैं लेकन उनकी कथनी और करनी में जमीन आसमान का अन्तर है। अनेक बनावटी, दिखावटी उपायों के बाद भी हम जहाँ के तहाँ हैं। गरीबी हटने के स्थान पर सुरसा के मुख की भांति बढ़ रही है। 'मांस का दरिया', 'इतने अच्छे दिन' तथा 'कितने पाकिस्तान' आदि कहानियों में नारी शोषण का अति सफल एवं सटीक चित्रण हुआ है।

कमलेश्वर ने 'सीखचेय, '...या कुछ और' तथा 'एक अश्लील कहानी' में स्वातन्त्र्योत्तार भौतिक सुख सुविधाओं की बढ़ोभौतिक सुख सुविधाओं की बढ़ोत्तारी से स्तर परिवर्तन के कारण नारी स्वतन्त्रता के थोथे नारों एवं परम्पराओं के सीखचे में जकड़े अतृप्त जीवन की विवशता को चित्रित किया है। पाश्चात्य सभ्यता, संस्कारों की अति एवं स्वातन्त्र्योत्तार जीवन मूल्यों में होने वाले परिवर्तन के कारण प्रेम की परिभाषा ही बदल गयी। आज के सम्बन्ध भौतिक सुख भोग एवं मन बहलाव एक तात्कालिक सम्बन्ध में परिवर्तित हो गये हैं। इसका सहज एवं यथार्थ उद्घाटन कमलेश्वर की 'पीला गुलाब', 'अधूरी कहानी', 'सीने का दर्द', 'पानी की तस्वीर', 'सच झूठ', 'प्रेमिका' नामक कहानियों में हुआ है।

साधु सन्तों के देश में आजकल उनके द्वारा कृत अधार्मिक एवं पतित व्यवहार की पोल 'ब्रांच लाइन का सफर' कहानी में खोली गयी है। नैतिक मूल्य पतन एवं अधार्मिकता की ओर भी संकेत किया गया है। मानव मात्र के प्रति ही नहीं मानवेतर प्राणियों के प्रति भी कमलेश्वर के हृदय में ममता, प्यार, करूणा व संवेदनशीलता है। 'नीली झील' में कमलेश्वर की यही करूणा एवं सौन्दर्यप्रियता देखी जा सकती है। भाषा की काव्यात्मकता से यह प्रतीत होता है कि कमलेश्वर मूलत: कवि हैं। कमलेश्वर की विदेशी जीवन पर आधारित कुछ कहानियाँ उनकी यायावरी आदत की देन हैं। उन्होंने विदेशी जीवन के विविध बिन्दुओं का सही, सफल एवं सटीक चित्रण किया है। विदेशियों का पारिवारिक जीवन, वेशभूषा, असहायता, अकेलापन, मानसिक द्वन्द्व, स्वतन्त्रता, व्यवस्था के प्रति आक्रोश एवं घृणा आदि सभी कुछ तो कमलेश्वर की कहानियों में चित्रित हुआ है।

कमलेश्वर के कथा-साहित्य में निम्न मध्यवर्गीय समाज की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं वैयक्तिक जीवन सम्बद्ध मानवीय पक्ष संवेदना के धरातल पर सहजता एवं कलात्मकता के साथ रूपायित किया गया है।

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' में नारी शोषण, नौटंकी के कलाकारों की जीवन विसंगतियाँ, आजादी के बाद कस्बे की बस व्यवस्था से उत्पन्न जिन्दगी की उथल-पुथल, कपटपूर्ण आध्यात्मिकता एवं वर्गगत शोषण

* सहा. प्रोफेसर, हेमवती नंदन बहु. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नैनी, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत

प्रस्तुत किया गया है। 'तीसरा आदमी' में पति-पत्नी के मध्य तीसरे के आगमन से उत्पन्न संशय, मानसिक द्वन्द्व एवं तनाव-भरी मनोदशाओं का अति सूक्ष्मता के साथ चित्रण किया गया है। महानगरीय जीवन की आवास व्यवस्था, अकेलापन, अजनबीपन, घुटन, आर्थिक अभाव, संत्रास आदि के अंकन में कमलेश्वर किसी से पीछे नहीं रहे हैं।

'समुद्र में खोया आदमी' उपन्यास में कमलेश्वर ने महानगरीय परिवर्तित परिवेश में आर्थिक विषमता के कारण टूटी-बिखरी मध्यवर्गीय परिवारों की जिन्दगी का अति स्वाभाविक एवं सटीक चित्रण किया है। यथार्थवादी शैली में यह उत्कृष्ट प्रतीकात्मक उपन्यास है। प्रतीक निर्वाह लेखक ने बड़े ही कलात्मक ढंग से किया है। 'आगामी अतीत' में कमलेश्वर ने आज की जटिल एवं विषम सामाजिक परिस्थितियों के आर्थिक पक्ष के महत्त्व एवं उसके कटु यथार्थ को अनावृत्त किया है। अपने प्रत्येक आर्थिक विपन्नता को सम्पन्नता में बदलने हेतु नायक कमल बोस को पूँजीवादी शक्तियों के सम्मुख समझौता करते हुए नतमस्तक होना पड़ता है। समाज की इसी क्रूरता पर तीक्ष्मण व्यंग्य पूर्वदीप्ति शैली में प्रस्तुत किया गया है। प्रवाह एवं प्रभावपूर्ण भाषायी प्रयोग ने कहानी को अति संवेदनात्मक बना दिया है। चाँदनी जैसे जीवन्त नारी पात्र अन्यत्र कहीं उपन्यासों में देखने को नहीं मिलते।

'डाक बँगला' की इरा नारी जीवन की नियति है। इसमें नारी जीवन के संघर्षो को भी उजागर किया गया है। अकेली शिक्षित नारी की भटकन का खुला दस्तावेज ही 'डाक बँगला' है। नारी घर नहीं डाक बँगला बनकर रह जाती है। अकेली शिक्षित नारी का कोई अस्तित्व व व्यक्तित्व नहीं, यही दर्शाना इस उपन्यास का मूल उद्देश्य है, जो लेखक की वामपन्थी सोच का एक उच्च परिणाम ही कहा जाएगा। गाँधीवादी आदर्शो का अध:पतन 'रेगिस्तान' उपन्यास में देखा जा सकता है। आत्मकथात्मक एवं पूर्वदीप्ति शैली में लेखक ने गाँधीवादियों के निरर्थक जीवन की असारता चित्रित की है।

'सुबह...दोपहर...शाम' में आंग्ल सत्ता के विरूद्ध देश में हुए क्रान्तिकारी आन्दोलनों का जिक्र किया गया है। अंग्रेजी शासन के विरूद्ध लड़कर अपने परिवार एवं मातृभूमि के मान की रक्षा हेतु प्राणों की बाजी लगाने वाली शान्ता नामक वीरांगना के माध्यम से नारी के व्यक्तित्व को स्पष्टरूपेण प्रकाशित किया गया है। 'लौटे हुए मुफासिर' में देश के विभाजन से जुड़े साम्प्रदायिक दंगों के दुष्परिणामों के शिकार चिकवों की बस्ती के निरीह बच्चों के मार्मिक चित्र प्रस्तुत हैं, जो बड़े होकर 'लौटे हुए मुफासिर' के रूप में रोजी रोटी के लिए कार्य करने अपनी ही जन्मभूमि पर वर्षो बाद मजदूर बनकर लौटे हैं। आजादी के अनेक वर्षो के बाद भी सबकुछ ज्यों का त्यों है।

कमलेश्वर के कथा-साहित्य में समसामयिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं नैतिक परिवर्तन से उत्पन्न मध्यवर्गीय जीवन संघर्ष का चित्रण बड़ी ही ईमानदारी से किया हुआ मिलता है। सरल एवं प्रवाहपूर्ण भाषा में कथाकार ने यथार्थ को रूपायित किया है। सामाजिक दायित्व का पूर्ण निर्वाह एवं सोद्देश्यता उनके कथा-साहित्य की एक महान उपलब्धि ही कही जाएगी। कमलेश्वर ने अपने युग को अन्य लेखकों की अपेक्षा अपनी रचनाओं में अपने कथा-साहित्य को अधिक साकार किया है। वे एक प्रतिबद्ध कथाकार हैं। उन्होंने अपने सम्पादन काल में अनेक कथाकारों को प्रोत्साहित कर उनका पथ प्रदर्शन भी किया। कमलेश्वर के कथा-साहित्य के विस्तृत अध्'न एवं विश्लेषणोपरान्त इसी निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि वे सामाजिक दायित्व एवं युगबोध के भावों से गहन रूप से जुड़े हुए थे। उनका समस्त कथा-संसार मध्यवर्गीय समाज पर आधारित है। वर्तमान मध्यवर्ग एक ओर आधुनिक मूल्यों की बात करता है तो दूसरी ओर वह बुरी तरह कुप्रथाओं एवं रूढ़ियों में जकड़ा हुआ है। विसंगतियों भरा जीवन जीते हुए भी वे अति महत्वाकांक्षी है। कमलेश्वर ने जीवन के कटु सत्यों को लेकर जीने वाले यथार्थ चरित्रों का उद्घाटन किया है। उनके सभी पात्र किसी भी ढोंग एवं पाखंड से मुक्त हैं। स्वविवेकानुसार जीवन जीने की कोशिश करते हैं।

कमलेश्वर का कथा-साहित्य हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है। उनका कथा-साहित्य लोकमंगल की दृष्टि से रचित उत्कृष्ट साहित्य है। भाषा की सरलता इस उत्कृष्टता को शीर्ष बिन्दु पर पहुँचा रही है। उन्होंने तन-मन से हिन्दी कथा-साहित्य की श्रीवृद्धि की। वे हिन्दी कथा-साहित्य को विश्व साहित्य के स्तर तक उठाने के लिए प्रयत्नशील रहे। अति स्पष्टता, सरलता, सटीकता, चित्रात्मकता एवं प्रभावशीलता कमलेश्वर के कथा-साहित्य की अमिट विशेषताएँ हैं। उनका कथा-साहित्य निर्विवाद रूप से प्रासंगिक है, श्रेष्ठ है। भले ही उनका व्यक्तित्व नयी कहानी और समानान्तर कहानी के प्रवक्ता के रूप में विवादास्पद रहा हो।

इस प्रकार कमलेश्वर के सृजन की प्रकृति भी सामाजिक हित में है। उनकी समस्त औपन्यासिक रचनाएँ आज के सन्दर्भ में प्रासंगिक एवं समय की धार पर खरी हैं। उनके उपन्यासों का उद्भव एवं विकास आधुनिक समाज के साथ ही सुसम्बद्ध रहा है। उनके उपन्यासों की विषयवस्तु तत्कालीन सामाजिक विकास से सुसम्बद्ध रही है। उनके उपन्यास समाज सापेक्ष हैं। उनके उपन्यासों के उद्भव एवं विकास में उनके वर्ण्य विषयों औपन्यासिक पात्रों व परिवेश में समाज हित छिपा हुआ है। कमलेश्वर के उपन्यासों में समाज के प्रति उदासीनता नहीं है। उन्होंने आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं सभी समाजोपयोगी पहलुओं पर उपन्यासों का सृजन किया है। उन्होंने समाज के सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों ही पक्षों को अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। यों तो कमलेश्वर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर बहुत लिखा गया है। स्वतंत्र पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं। समीक्षात्मक लेखों की संख्या भी बहुत है। इस दृष्टि से नयी कहानी के तीन प्रमुख प्रतिस्थापकों- मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव और कमलेश्वर में से कमलेश्वर सबसे आगे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समग्र कहानियाँ : कमलेश्वर (प्रथम संस्करण 2001)
2. समग्र उपन्यास : कमलेश्वर (प्रथम संस्करण 2000)
3. कितने पाकिस्तान : कमलेश्वर (संस्करण 2000)
4. एक सड़क सत्तावन गलियाँ, समुद्र में खोया हुआ आदमी, काली आँधी, सुबह...दोपहर...शाम, तीसरा आदमी, डाक बंगला, रेगिस्तान : कमलेश्वर
5. मेरे साक्षात्कार : कमलेश्वर
6. मेरे हमदम मेरा दोस्त : कमलेश्वर
7. परिक्रमा : महफिल, तुम्हारा कमलेश्वर : कमलेश्वर
8. अपनी निगाह में : कमलेश्वर
9. कमलेश्वर : सं. मधुकर सिंह
10. कमलेश्वर के उपन्यास : डॉ0 सत्यजीत चिरवलीकर

****

Conservation of Forest Biodiversity : Need if the Hour

Dr. Jolly Garg * Anant Kumar Garg **

Keywords - Ecosystem Services, Forest Biodiversity Conservation, Ecosystem Stability, Holistic Environmental Approach, Global Ecosystem.

Introduction- The Earth Summit held in Rio De Janerio, Brazil in 1992 resulted in the formulation of the Convention on Biological Diversity (CBD) the three primary aims of which were to (i) preserve biological diversity on earth in recognition of the goods and services it provides; (ii) promote sustainable utilization of its components; and (iii) facilitate the equitable sharing of the benefits derived from its resources. Since its inception in 1992, as of 2016, the Convention has 196 parties, which includes 195 states including the India and the European Union; all UN member states; with the exception of the United States; have ratified the treaty.

Biodiversity is the vast array of all the species of plants, animals, insects and the micro-organism inhibiting the earth either in the aquatic, aerial and the terrestrial habitats. Biodiversity is a compound word derived from 'biological diversity' and therefore is considered to have the same meaning. The variety of life at every hierarchical level and spatial scale of biological organizations: genes within populations, populations within species, species within communities, communities within landscapes, landscapes within biomes, and biomes within the biosphere 'Biological diversity' means the variability among living organisms from all sources including, inter alia, terrestrial, marine and other aquatic ecosystems and the ecological complexes of which they are a part; this includes diversity within species, between species and of ecosystem. This biodiversity is the condition for the long term sustainability of the environment, continuity of life on earth and the maintenance of its integrity. The biosphere or ecosphere is the sum total of all the ecosystems of the world. It is the self-regulating zone of life on Earth excluding the solar radiations and heat from the center of the Earth. The human civilization depends directly or indirectly upon this biodiversity for their very basic needs of survival food, fodder, fuel, fiber, fertilizer, timber, liquor, rubber, leather, medicines and several other row materials. This biodiversity is the condition for the long term sustainability of the environment, continuity of life on earth and the maintenance of its integrity. Biodiversity is also essential for the maintenance of Global Ecosystem i.e. for the maintenance of Hydrological Cycles, Bio-geochemical cycles and Oxygen –Carbon di oxide cycle. This biodiversity is the condition for the long term sustainability of the environment, continuity of life on earth and the maintenance of its integrity. Conservation of biodiversity includes the preservation of all species, flora and fauna, the enhancement of wildlife habitat, the control of wildlife problems and the sustainable use of forests and wildlife. Components of the Biodiversity are grouped into two categories namely fauna and flora. Fauna includes all the animals including human beings as genus Homo sapiens; flora includes all the living creatures belonging to category Plant including trees, herbs shrubs etc.

Biodiversity interconnect the biosphere and ecological services provided by ecosystem viz. Life support system of human race and interconnect the biosphere and ecological services provided by ecosystem viz. Life support system of human race.Conservation of biodiversity includes the preservation of all species, flora and fauna, the enhancement of wildlife habitat, the control of wildlife problems and the sustainable use of forests and wildlife. Components of the Biodiversity are grouped into two categories namely fauna and flora. Fauna includes all the animals including human beings as genus *Homo sapiens*; flora includes all the living creatures belonging to category of Plant kingdom including viz. trees, herbs shrubs, climbers, creepers. There exit a balance and collateral parallel evolution between the two essential constituents of biodiversity viz. flora and fauna of the Ecosystem..There exit a balance and collateral evolution between the two essential constituents of biodiversity viz. flora and fauna of the Ecosystem.

Review of literature: The biosphere or ecosphere is the sum total of all the ecosystems of the world. It is the self-regulating zone of life on Earth. Natural Environment may also defined as the complex interactions of all abiotic and biotic factors which finalizes and ultimately determine its form and survival. The complex interactions of these components with all the environmental factors viz. climate, geography and natural resources also affects human survival and economic activity. Forestry in India is a

*Associate Professor & Head (Botany) D.A.K. P.G. College, Moradabad (U.P.) INDIA
** Environmentalist, Samajik Vaikariki Sansthaan, Moradabad (U.P.) INDIA

significant rural industry and a major environmental resource. India is one of the ten most forest-rich countries of the world. Together, India and 9 other countries account for 67 percent of total forest area of the world.[1] India's forest cover grew at 0.20% annually over 1990–2000,[2] and has grown at the rate of 0.7% per year over 2000–2010,[2]

India, the second most populous country in the world, is the eleventh biodiversity center in the world and the third in Asia with its share of ~11% of the total plant resources. The floral wealth of India comprises more than 47,000 species including 43% vascular plants. Nearly 147 genera are endemic to India The vast geographical expanse of the country has resulted in enormous ecological diversity, which is comparable to continental level diversity scales across the world. It has representation of twelve biogeographic provinces, five biomes and three bioregions. Natural forests and forest plantations together cover 21.02% of the geographical area in India. India, one of the twelve 'Vavilovian Centres of Origin' and diversification of cultivated plants, is known as the 'Hindustan Centre of Origin of Crop Plants'. About 320 species belonging to 116 genera and 48 families of wild relatives of crop plants are known to have been originated in India. **India** has some of the world's most bio-diverse regions aand one of seventeen mega-diverse countries, it is home to 7.6% of all mammalian, 12.6% of all avian, 6.2% of all reptilian, 4.4% of all amphibian, 11.7% of all fish, and 6.0% of all flowering plant species. Biological wealth of our country is also very important for the global ecosystem. However the important plants and animals, forests and trees in particular, as well as microorganisms and mangroves and marine biological wealth etc. is being threatened due to human unethically and ill-legal activities; and causing the negative impact on the earth Ecosystem. In 2009, India ranked 10th worldwide in the amount of forest loss,[1] where world annual deforestation is estimated as 13.7 million hectares (34×10^6 acres) a year.3

In a static proprietary article that appeared in and was reviewed by a scientific journal authenticated scientists analysed data from multiple public databases to create a regional representation of levels of global deforestation induced by nations' recent, largely unmodulated, patterns of trade, production and consumption—showing, e.g., that G7 countries are driving an average annual loss of 3.9 trees per capita and that India and China increased the deforestation embodied in their imports.[4][5] Millions of years of evolution have created a wealth of structures and mechanisms at the molecular, cellular and macro-structure level, all of which function economically and interact, to perfection. Nature provides solutions to most of life's technical problems. 'Natural selection' has imposed on living organisms the 'Min-Max Principle' i.e., a minimum of material and energy accomplishes a maximum of efficiency and stability. This makes biological prototypes particularly important for our future given the world's resources and a solution to increasing environmental problems. Each and every unethically and ill-legal activities or the action of every human being is cumulating the negative impact and influencing adversely the Earth ecosystem via a chain of reactions including the equilibrium of biodiversity i.e., Flora and fauna in the ecosystem. Ecosystem and welfare of human beings both are inter-related, inter-dependent, inter-oriented. Protection and preservation of the air, soil, water, Biodiversity i.e., human beings, flora & fauna and other important constituents of ecosystem has become essential for the existence of mankind.

RESULTS: Graphs 1 is summarizing the depletion in the forest area so the biodiversity

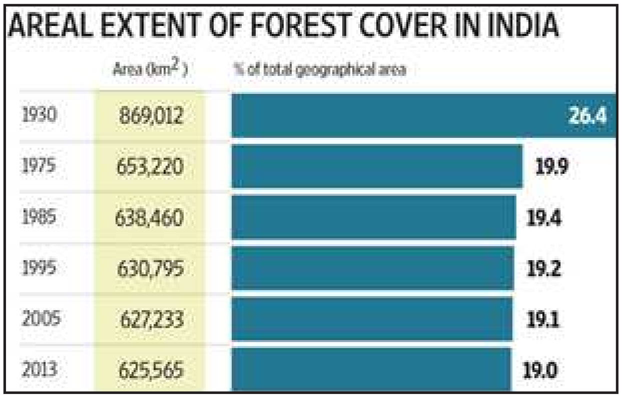

(From : Ministry of Environment, Forest and Climate Change) Discussion : In biological diversity, India is one of the richest countries in the world. But widespread destruction has already taken place and this is continuing. Urgent measures to reverse the damage are both necessary and possible.

Biodiversity must be protected not only for purely ecological reasons but because it sustains livelihoods. Biodiversity in agriculture helps millions eke out a living. It helps people get food, jobs, nutrition, bio-pesticides, traditional medicine, housing material, fodder and fuel. That is not all. It helps stabilize the climate, improve rainfall and enrich the soil and water table. Life cannot go on without biodiversity.

The forest cover in India was 640819 square kilometer in 1987. The percentage of forest cover to the total geographical area in India was 19.49% in 1987. The forest cover was 639364 square kilometer in 1991. There was a decrease of -1455 square kilometer in forest cover as compared to 1987. In percentage terms, the decrease was -0.23% during the period from 1987 to 1991. The percentage of forest cover to the total geographical area was 19.45% in 1991. It decreased by -0.04 percentage points as compared to 1987. The forest cover was 638879 square kilometer in 1995. There was a decrease of -485 square kilometer in forest cover as compared to 1991. In percentage terms, the decrease was -0.08% during the period from 1991 to 1995. The percentage of forest cover to the total geographical area was 19.43% in 1995. It decreased by -0.02 percentage points as compared to 1991. The forest cover was 653898 square kilometer in 2001. There was an increase of 15019 square kilometer in forest

cover as compared to 1995. In percentage terms, the growth was 2.35% during the period from 1995 to 2001. The percentage of forest cover to the total geographical area was 19.89% in 2001. It increased by 0.46 percentage points as compared to 1995. The forest cover was 690171 square kilometer in 2005. There was an increase of 36273 square kilometer in forest cover as compared to 2001. In percentage terms, the growth was 5.55% during the period from 2001 to 2005. The percentage of forest cover to the total geographical area was 21% in 2005. It increased by 1.11 percentage points as compared to 2001. The forest cover was 692027 square kilometer in 2011.

There was an increase of 1856 square kilometer in forest cover as compared to 2005. In percentage terms, the growth was 0.27% during the period from 2005 to 2011. The percentage of forest cover to the total geographical area was 21.05% in 2011. It increased by 0.05 percentage points as compared to 2005. The forest cover was 697898 square kilometer in 2013. There was an increase of 5871 square kilometer in forest cover as compared to 2011. In percentage terms, the growth was 0.85% during the period from 2011 to 2013. The percentage of forest cover to the total geographical area was 21.23% in 2013. It increased by 0.18 percentage points as compared to 2011.The forest cover was 701673 square kilometer in 2015. There was an increase of 3775 square kilometer in forest cover as compared to 2013. In percentage terms, the growth was 0.54% during the period from 2013 to 2015. The percentage of forest cover to the total geographical area was 21.34% in 2015. It increased by 0.11 percentage points as compared to 2013.(Note: State of Forest Report (SFR) renamed as India State of Forest Report (ISFR) in 2009; Source: Rajya Sabha Session – 239 Unstarred Question No.1632.; Dataset URL: https://data.gov.in/catalog/answers-data-rajya-sabha-questions-session-239; Resource Title: Forest geographical area coverage of India from 1987 to study to biodiversity research and management, including a better understanding and management of habitat change; improved research and decision-making methodologies; development of a theoretical synthesis; and analysis of the social organization of conservation and conservation biology are development is for all human beings and for the whole human being". Collective wisdom of humanity for conservation of biodiversity, embodied both in formal science as well as local systems of knowledge, therefore, is the key to pursue our progress towards sustainability.

Biodiversity boosts ecosystem productivity where each species small or big in size, has an important role to play. Simultaneously A larger number of plant species means a greater variety of crops. Greater species diversity ensures natural sustainability for all forms of life. In order to make each of us accountable for present growth of human beings and present status of biodiversity, forest and global ecosystem; there is a need of holistic understanding of the relationship between the environment and the development processes taking place in the world. It has become the need of the hour to expand and evolve approaches to twenty- first century to biodiversity and forest conservation' and to strictly follow the 'global environmental ecosystem approach implementation' [6, 7] . The environmental protection and biodiversity conservation are integral parts of sustainable development.

Environmental education, thus must consist of both knowledge of environment and environmental ethics. Ethics are necessary in order to ensure desired practice in all human being of all ranks. For this an equilibrium is to be established among Formal education, inspirational education and knowledge of Environmental rights. The overall purpose of environmental education is to develop a person in order to follow, inspire and influence others to follow and prevent others from violating the laws designed and formulated for protection of our environment. At all environmental literacy should be ensured to all human beings for their active participation in day to day happening, scientific developments and its consequences, formation and practical implementation of environmental laws etc. In order to make each of us accountable for present growth of human beings and present status of biodiversity, forest and global ecosystem. The essential need to accept the challenges and to overcome the threats in the biodiversity conservation in forest ecosystem is the stakeholders must have a clear and uniform understanding of their rights, responsibilities and obligations under the Constitutional provisions.

References:-

1. Global Forest Resources Assessment 2010, FAO Forestry Paper 163, Food and Agriculture Organization of the United Nations (2011), ISBN 978-92-5-106654-6, page 12-13
2. Jump up to:[a b] Global Forest Resources Assessment 2010, FAO Forestry Paper 163, Food and Agriculture Organization of the United Nations (2011), ISBN 978-92-5-106654-6, page 21
3. Gore, Al (3 November 2009). "9". *Our Choice: A Plan to Solve the Climate Crisis*. Rod ale Books. pp. 174, 192, 184, 186, 192, 172. ISBN 978-1-59486-734-7
4. *"Average westerner's eating habits lead to loss of four trees every year". the Guardian. 29 March 2021. Retrieved 19 April 2021.*
5. Garg, J. 2017. Environmental Ethics : in perspective of Biodiversity Conservation and human welfare. The J. Meerut Univ. History Alumni.Vol.29.15 .2017. pp. 126- 131.
6. Garg, J. 2018 a. Some Traditional and innovative approaches for Biodiversity Conservation. International Journal of Agriculuture Sciences. Vol. 10 (12) 2018 pp. 6501 - 6503.
7. Garg J. 2018. Some traditional and innovative approaches for biodiversity conservstion. Int J Agriculuture Sci. 10(12): 6501-3. Available from: https://www.researchgate.net/publication/331368680_Traditional_and_Innovative_Approaches_In_Perspective_ of_Biodiversity_Conservation.

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

Create a Better World We Live In: Our Responsibilities

Dr. Mani Bansal* Dr. Anuj Kumar Agarwal**

Abstract - Knowledge initiates and exists in the mind of individuals. People with knowledge and skill are consequently the most influential resources not only for the country but also for the civilization. Human recourse is also a truly renewable resource. The young and educated knowledge personnel of today, that are we, are the true asset of the nation and world. Irrespective of what we do, adopt the scientific approach and never stop learning and must develop the sense of freedom and responsibility in making the right choices. We live in a time of amazing innovation and education but our darker natures threaten to use our creations to destroy us as well. We must let hope and light drive us forward and turn our back to the fears and biases of the past. Present paper is focused to set the responsibility of educators to develop the quality of good citizens who can bring about change towards the achievement of better societies in the future. This paper also focuses to find the standard shifts which are crucial in our educational philosophy and policy.

Introduction - This is our world, and it is our responsibility to change something if we don't like it. We may not be able to control everything, but we can definitely make a difference. Presently we live in a rapidly changing society. We live in the age of globalization and information & communication revolution. All these need to accept the realism of the intense changes that are distressing our lifestyles, our ways of thinking, feeling and acting. As educators, we should not only guide our students to differentiate between the abilities and views, the benefits and opportunities of globalization and the new information technologies on one hand, but also the dangers, threats, and shortcomings on the other. We must develop in them the sense of freedom and responsibility in making the right choices, so that the bonds of our human harmony are reinforced, as reflected by the famous quote of Earl Nightingale-

"Our environment, the world in which we live and work, is a mirror of our attitudes and expectations."

Advances in the field of Science and Technology have touched human life in all aspects an brought in revolutionary changes in the way we communicate and the way we live. At the same time we see other aspect human suffering in such a magnitude, injustice, inequity, poverty, and war. All these cause growing degradation of flora and fauna to the planet Earth. All these alarm us that we need to bring about a massive fundamental change, a change in our behavior, in our irresponsible patterns of production and consumption. This in turn requires us to seriously reflect on our major responsibility of educating our youth to become the citizens and leaders of the future, the creators of better tomorrows, which is the main concern of present paper.

We are always talking about making a difference in this world, yet we think that we ourselves can't make a difference because we are only one person. But the thing is, if we all so something small, it will add up to a big difference. If we think that there is something wrong with the world we live in, we need to change it. We need to take action.

Everyone is responsible for the way they themselves act. We need to be kind to one another: hold the door, do favors for each other, smile, etc. These are the smaller things that we are responsible for daily, they are things we hopefully were taught at a young age and continue to do throughout our entire lives.

Major Problem - To address above mentioned challenge the major concern is to develop the right teacher education to develop the quality of our future teachers who can in turn educate the citizens and leaders of better future societies. This is a burning concern around the world and thinkers are suggesting their views. The major outcome is that the education should lead society by helping in the creation of preferred desirable futures, not merely in preparing students to meet the challenges and dangers that await us, but also to empower them to image preferred futures and those to come to make these dreams come true.

Demand of Citizenship Education Curricula - Current scenario urgently need for new and appropriate educational programs and practices towards responsible and committed

*Associate Professor, D.A.K. (P.G.) College, Moradabad (U.P.) INDIA
** Associate Professor, T.M.U., Moradabad (U.P.) INDIA

citizenship. A committed citizen should be able to distinguish what is right and wrong and to act accordingly. The curricula should make him learn and understand to about each other, accept and respect each other's individuality, where people learn to care and to share, to live together in a just and free, peaceful and compassionate world.

The education should be focused on: Sustainability of Planet Earth, Provision of Basic Food, Shelter and Health Care, collaborative peace, social justice and equity, participatory democracy, respect for diversity for human rights and fundamental freedoms.

Responsibilities and Character of the responsible Citizen

The responsible citizen should have the ability to:

1. Look at and approach problems as a member of a global society.
2. Work with others in a cooperative way and to take responsibility for one's roles/duties within society.
3. Understand, accept and tolerate cultural differences.
4. Think in a critical and systematic way.
5. Resolve conflict in a non-violent manner.
6. Change one's lifestyle and consumption habits to protect the environment.
7. Be sensitive towards and to defend human rights, rights of women, ethnic minorities, etc.
8. participate in politics at the local, national and international levels.

Educational Hypotheses and Approaches for the responsible Citizenship Education in these Changing Times : This ideal type of citizen will be shaped by our educational paradigms, our philosophy and perspectives on teaching and learning, and will be realized through the approaches guiding our educational policies, programs and practices and their implementation in our schools, given a supportive learning, societal and cultural environment.

Citizenship education for our fast changing societies is not limited to the youth and to the formal school setting. It is a lifetime process of growth and development in personal and social consciousness and awareness, in knowledge and understanding of oneself and others, of social issues and concerns.

Still, the school retains its strategic role and its decisive influence on citizenship education and training. Nothing can replace the formal education system today, nor is there a substitute to teacher-pupil relationship.

A Universal and Unified Approach to Teaching and Learning: This total approach applied to citizenship education focuses on the universal development of the individual's faculties and capacities as human persons and as members of society. Furthermore, a new model for citizenship education should address the different dimensions of citizenship: personal, spatial and temporal, take into consideration the different contexts, global and local, and utilize different approaches to citizen education.

The Valuing Process in the Context of Universal and Unified Learning: The valuing process should be interactive and participative, experiential and reflective. It proposes a four-step process which does not necessarily follow a prescribed sequence, but may be modified according to the situation.

Knowing: This level basically introduces specific facts and concepts, information on social issues and problems, background data on culture, history, geography, economy, government, religion, and etc. of one's own country and those of others that are to be looked into and examined. This level should move into deeper understanding and insight.

Understanding: Knowledge could be easily explained by the educator and in turn quickly memorized by the learners. The learners however need to understand and thereby gain insight in order to arrive at wisdom. These steps are expected to result in social awareness and consciousness, and social insight.

Valuing: This third step ensures that the value concepts are filtered through one's experiences and reflections. Since teaching and learning are conducted on a group level, the additional benefit of this step is the appreciation, acceptance and respect of both one's own value system and those of others.

Acting: The concepts and values that are internalized ultimately lead to action. Whether the action is expressed in improved communication skills, better decision-making, non-violent conflict resolution, etc., the value concepts find their way into our behaviors. The whole process may lead to the attainment of "civic capacity."

Conclusion: A teaching-learning approach which does not stop at knowledge and information nor at developing skills and competence, but proceeds to understanding and gaining insights, that educates the heart and the emotions and develops the ability to choose freely and to value, to make decisions and to translate knowledge and values into action. Indeed, in the field of education, it is our accountability to lead in the total effort of designing and implementing new and more effective ways of preparing our future citizens and future leaders to lead in the creation of better societies. Our import task is to explain the valuable learning and insights gained from scholars on civic education, into planning and development of curricula and activities, so that the educational organizations can fulfill its mission. They can create a better and more human world for themselves and the future generations, a culture of peace, justice and love. We can and we must change ourselves by taking knowledgeable decisions, making the right choices in life and not letting others decide for us.

By creating a disparity between who takes action and who doesn't, we're creating a small subset of entitled people and a larger, more insensitive world. We all have to stand up and say that it is our job to improve the world. We cannot rely on a few individuals to shoulder that responsibility. It is ours as well - and there is a very simple way to start right now.

References:-

1. Krishnamurti, Q & A, meeting 1, AUDIO facing the fact that we are the world and the world is us, Saanen, Switzerland, 1981. https://jkrishnamurti.org/content/1st-question-answer-meeting-30
2. J. Delors, "Learning: the Treasure Within", Report to UNESCO of the International Commission on the Development of Education. Paris: UNESCO, 1996. https://unesdoc.unesco.org/ark:/48223/pf0000109590
3. Quisumbing, Lourdes, "A Framework for Teacher Education programs Towards International Understanding and a Culture of Peace", Paper presented at Kyongju, Korea, 1999.
4. D. Grossman, "The Global and the Local in Partnership: Innovative Approaches to Citizenship Education." Paper presented at the 6th UNESCO- ACEID International Conference on Education, Bangkok, 2000.
5. Kerry J. Kennedy, "Building Civic Capacity for a New Century: Engaging Young People in Civic Institutions and Civil Society", Asia Pacific Education Review, 1(1), pg. 23-29, 2000.
6. Values in Education: College Yearbook 2002. Susan Pascoe (ed.) Deakin West: Australian College of Educators, 2002. https://catalogue.nla.gov.au/Record/135566
7. Thomas L. Friedman, "The World we're Actually Living In", Article published in The New York Times, 2012. https://www.nytimes.com/2012/09/30/opinion/sunday/friedman-the-world-were-actually-living-in.html
8. Danny. Chan, "The Human Connection in a Digital World, Blog posted on The Huffing tonpost", 2014. https://www.huffpost.com/entry/the-human-connection-in-a-digital-world_b_4855478
9. Priya P., "We are all responsible for the state of the world. So why do only some of us care enough to act?" Indian Economic Summit, 2017. https://www.weforum.org/agenda/authors/priya-prakash

****

उदयपुर जिले में भूजल पुनर्भरण : गिर्वा खंड का एक भौगोलिक अध्ययन

प्रियंका आमेटा * डॉ. हेमेन्द्र शक्तावत **

शोध सारांश - जल जीवन का आधार हैं। पृथ्वी पर जल एक महत्वपूर्ण भौतिक घटक है। पृथ्वी पर व्याप्त सभी संसाधनों मे जल को जीवनदायनी होने से एक महत्वपूर्ण संसाधन माना जाता है। पृथ्वी के कुल क्षेत्र का लगभग तिन चौथाई भाग जल से घिरा हुआ है जिसे जलमंडल की संज्ञा दी जाती है। जल का मानव जीवन में अनेकों महत्व है इसलिए जल का संरक्षण किया जाना नितान्त आवश्यक है। भूगर्भिक जल भी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रस्तुत शोध पत्र में अरावली पर्वतीय क्षेत्र उदयपुर जिले की गिर्वा खंड में भूजल के पुनर्भरण सम्बन्धी द्वितीयक आँकड़ों के आधार पर क्षेत्र में भूजल पुनर्भरण का विश्लेषण करता है।

प्रस्तावना - दैनिक जीवन में काम आने वाला जल एक प्राकृतिक संसाधन है जल का उपयोग न केवल पेयजल में किया जाता है बल्कि जल से कृषि सिंचाई, उद्योग धन्धों, भवन निर्माण एवं मानव जीवन के हर क्रिया-कलाप जैसे बोजन बनाने, खाने-पीने, नहाने-धोने इत्यादि में भी किया जाता है। पृथ्वी के गर्भ में स्थित जल को भूजल की संज्ञा दी गयी है जिसमें पृथ्वी की किसी भूगर्भिक स्तर की सभी रिक्तियों में स्थित जल को भूजल में शमिल किया जाता है। भूजल शेल छिद्रों व चट्टानी दरारों में मिलता है। भूजल की मात्रा मुख्यत: वर्षा की मात्रा, वर्षा काल में वाष्पीकरण की दर, वायुमंडलीय एवं धरातलीय तापमान, भूमि का ढाल वायु की शुष्कता तथा शेलो की रंध्रता, वनस्पति आवरण तथा जल एवं मृदा की जल अवशोषण क्षमता आदि से प्रभावित होती है। होती प्रकृति में उपलब्ध कुल जल संसाधन का मात्र 0.58 प्रतिशत भाग ही भूजल के अंतर्गत है तथा संपूर्ण जल राशि के शुद्ध जलीय भाग (2.61) का 22.21 प्रतिशत है जो सतह से 4 किलोमीटर की गहराई तक पाया जाता है।

अध्ययन क्षेत्र - अध्ययन क्षेत्र गिर्वा खंड उदयपुर जिले का महत्वपूर्ण भूभाग है गिर्वा खंड का कुल क्षेत्रफल 1372.6 वर्ग किलोमीटर है। गिर्वा खंड उदयपुर नगर के चारों ओर फैला हुआ है। अध्ययन क्षेत्र उदयपुर जिले का गिर्वा खंड का कुल भूजल क्षेत्र 883.1 वर्ग किलोमीटर है। यहाँ पर शुद्ध वार्षिक भूजल की उपलब्धता 34.4307 एम.क्यू.एम. है। यहाँ पर भूजल भण्डारो का पुनर्भरण केवल वर्षा जल से होता हैं। यह क्षेत्र अति दोहित के अंतर्गत आता है। यहाँ की वार्षिक वर्ष 800 एमएम से अधिक है।

शोध उद्देश्य एवं विधि तन्त्र - प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य क्षेत्र उदयपुर जिले गिर्वा खण्ड में भूजल के स्तर के मानसून पूर्व, मानसून पश्चात के उतार-चढ़ाव का विश्लेषण करना। प्रस्तुत शोध पत्र पूर्णत: द्वितीयक आंकड़ों के विश्लेषण पर आधारित है। अध्ययन क्षेत्र गिर्वा खण्ड के भूजल के स्तरप्रयो के अध्ययन के लिए केन्द्रीय भूजल विभाग एवं राज्य भूजल विभाग से भूमिगत जल संबंधी आंकड़ों को प्राप्त कर विश्लेषित लिया गया है। भूजल विभाग से संकलित द्वितीयक आँकड़ों में अध्ययन क्षेत्र से प्रमुख क्षेत्रों के कुओं के मानसून पूर्व व मानसून पश्चात जल संबंधी आंकड़ों को प्रयोग में लाया गया है। इस हेतु चयनित ग्रामों के मुख्य कुओं के मानसून पूर्व, मानसून पश्चात के उतार-चढ़ाव सम्बन्धी वर्ष 2015 से 2019 के आंकड़ों का प्रयोग किया गया है।

विश्लेषण- अध्ययन क्षेत्र उदयपुर जिले की गिर्वा खण्ड जिले का महत्वपूर्ण भू भाग हैं। इस खंड में बहने वाली मुख्य जल धाराओं में सीसारमा, आयड़ प्रमुख है जो कि वर्षाकालीन हैं। क्षेत्र में अरावली की पहाड़ियाँ फैली हुई है। उदयपुर नगर चारों तरफ से पहाड़ियों से घिरा हुआ है जिसे गिर्वा कहा जाता है। गिर्वा क्षेत्र में भूगर्भिक जल स्तर के विश्लेषण हेतु अध्ययन क्षेत्र से चयनित ग्रामों के कुओं से जल स्तर सम्बन्धी आंकड़ों को तालिका में दर्शाया गया हैं। इस हेतु चयनित गाँव के कुओं के मानसून पूर्व एवं मानसून पश्चात भूजल के पुनर्भरण सम्बन्धी वर्ष 2015 से 2019 तक के आंकड़ों को तालिका में दर्शाया गया हैं। आंकड़ों के अवलोकन से स्पष्ट है कि तहसील चयनित गाँवों में देबारी गाँव में सबसे अधिक गहरा कुआँ है जिसकी गहराई 25मीटर है जबकि सबसे कम गहराई का कुआँ पादुणा गाँव में है जिसकी गहराई 10.50मीटर हैं।

तालिका 1 : चयनित ग्रामों के कुओं में भूमिगत जल स्तर में परिवर्तन 2015 से 2019

क्र.	ग्राम	कुल गहराई (मीटर में)	मानसून पश्चात जल स्तर में वृद्धि (मीटर में)				
			2015	2016	2017	2018	2019
1	बलीचा	19.20	8.38	9.90	6.24	5.18	12.90
2	देबारी	25.00	8.22	14.82	10.94	5.38	12.18
3	काया	14.50	2.32	2.30	1.94	0.06	3.25
4	लकड़वास	16.75	4.51	5.53	3.72	4.83	6.37
5	नाई	17.30	2.68	6.58	1.06	-0.45	10.43
6	पादुणा	10.50	2.65	4.24	3.18	-0.75	3.84
7	तितरड़ी	19.00	1.56	10.58	5.66	0.10	8.35

स्रोत : केन्द्रीय भूजल विभाग अधिकारिक वैबसाइट

तालिका में दर्शाये गये वर्ष 2015 के जलस्तर सबंधी आंकड़ो को देखने से स्पष्ट है कि चयनित ग्रामों में वर्षाकाल के पश्चात भू जल स्तर में

* शोधार्थी (भूगोल विभाग) भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** सहायक आचार्य (भूगोल विभाग) भूपाल नोबल्स विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

वृद्धि दर्ज की गयी जो कि सर्वाधिक बलीचा गाँव में रही इस गाँव में 8.38 मीटर तक जलस्तर में वृद्धि दर्ज हुई। इस वर्ष में न्यूनतम वृद्धि तितरड़ी ग्राम में रही जो कि 1.56 मीटर थी। वर्ष 2016 में मानसून पश्चात देबारी गाँव में सर्वाधिक पुनर्भरण दर्ज किया गया जो 14.82 मीटर था इसी प्रकार सबसे कम काया गाँव में भी 2.30 मीटर तक भूजल में का पुनर्भरण दर्ज किया गया। 2017 में सबसे अधिक भू जल पुनर्भरण देबारी में 10.94 मीटर की दर्ज की गई जबकि नाई गाँव के भू जल में न्यूनतम वृद्धि दर्ज की गयी। वर्ष 2018 चयनित देबारी गाँव में भू जल में मानसून पश्चात 5.38 मीटर की वृद्धि दर्ज की गयी, जबकि इस वर्ष तितरडी एवं काया गाँव के भूजल स्तर में नाममात्र का परिवर्तन हुआ। इसी वर्ष नाई एवं पादुणा गाँव में मानसून पश्चात भी कुओं के जलस्तर में वृद्धि नहीं हुई अपितु जलस्तर में ऋणात्मक वृद्धि भी दर्ज की गयी जो की क्रमश: 45 एवं 75 सेमी तक रही।

वर्ष 2019 के दौरान मानसून पश्चात अध्ययन क्षेत्र के बलिचा एवं देबारी गाँव के कुओं में 12 मीटर से अधिक का पुनर्भरण दर्ज किया गया जबकि काय गाँव में मानसून पश्चात 3.25 मीटर तक भूजल का पुनर्भरण पाया गया। इसी प्रकार अगर चयनित गाँव के अनुसार देखा जाये तो वर्ष 2015 से वर्ष 2019 की अवधि में मानसून पश्चात देबारी गाँव कुँए में अधिकतक पुनर्भरण वर्ष 2016 में तथा न्यूनतम पुर्नभरण काया ग्राम में, जो की वर्ष 2018 में दर्ज हुई। इन पांच वर्षों की अवधि में वर्ष 2018 में मानसून पश्चात भी नाई एवं पादुणा गाँव में भूजल पुनर्भरण ऋणात्मक दर्ज किया गया।

निष्कर्ष – अध्ययन से स्पष्ट है कि चयनित गाँवों में मानसून पश्चात भूजल पुनर्भरण के स्तर में विभिन्नताएं देखने को मिलती हैं। उपरोक्त आँकड़ों के अवलोकन से स्पष्ट है कि भूजल पुनर्भरण वस्तुत: मानसून पूर्व भूजल स्तर में गिरावट को ही दर्शाता है जो की वर्ष कल में भूजल स्तर बढ़ जाता है। जिन क्षेत्रों में कम वर्ष दर्ज की जताई है उन क्षेत्रों में भूजल स्तर में गिरावट दर्ज की जताई है। अध्ययन क्षेत्र में भूजल पुनर्भरण पूर्णरूपेण वर्ष आधारित ही है। अत: आवश्यकता इस बात की है कि क्षेत्र में भूजल के स्तर में सुधार हेतु वर्षा काल में भू जल पुनर्भरण किया जाना आवश्यक हैं। यद्यपि हाल के वर्षों में अध्ययन क्षेत्र उदयपुर जिले में भूमिगत जल के स्तर में पर्याप्त सुधार हुआ है, किंतु इसके पश्चात भी अध्ययन क्षेत्र में भूजल का जिस अविवेकपूर्ण और अवैज्ञानिक तरीके से विदोहन किया जा रहा है, उसके कारण अध्ययन क्षेत्र में भूजल संसाधनों को लेकर अभी भी अनेक चुनौतियाँ हमारे समक्ष खड़ी है। इस हेतु जन साधारण को वर्षा जल संरक्षण हेतु जागृत करने हेतु सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा प्रयास किये जाने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. जिला सांख्यिकीय रुपरेखा उदयपुर (2018) आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, जयपुर
2. ओझा, प्रियदर्शी (2012) पश्चिमी भारत में जल प्रबन्धन, सुभद्रा पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्युटर्स, नई दिल्ली
3. गुर्जर, रामकुमार व जाट बी.सी. (2007) जल संसाधन भूगोल, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर
4. Ground Water Scenario Udaipur District (2013) Central Ground Water Board, Ministry of Water Resources, Government of India
5. http://water.rajasthan.gov.in/wrd
6. https://phedwater.rajasthan.gov.in/content/raj/water/ground- ater/en/home.html#

****

On The CR-Structure and F-Structure Satisfying $F^5 - F = 0$

Lakhan Singh*

Abstract - In this paper we have studied various properties of the F – Structure $F^5 - F = 0$. Nijenhuis tensor, integrability conditions have also been discussed.
Keywords- CR structure, projection operators,Nijenhuis tensor, integrability conditions.

1. Introduction : Let M^n be a differentiable manifold of class C^∞ and F be anon zero (1, 1) tensor of class C^∞, satisfying

(1.1) $F^5 - F = 0$

We define the operators l and m on M^n by

(1.2) $l = F^4, \; m = I - F^4$

from (1.1) and (1.2) ,we have

(1.3) (a) $l + m = I,$

(b) $l^2 = l, \; m^2 = m,$

(c) $lm = ml = 0,$

(d) $Fl = lF = F, \; Fm = mF = 0$

Where I denotes the identity operator.

2. Nijenhuis tensor: Nijenhuis tensor $N[X,Y]$ of F-structure is defined as

(2.1) $N(X, Y) = [FX, FY] - F[FX, Y] - F[X, FY] + F^2[X,Y]$

Where the lie bracket [X, Y] is defined by

Let X and Y be any two vector fields on M , then their Lie bracket [X,Y] is defined by

(2.2) $[X,Y] = XY - YX$ *for arbitrary vector fields X and Y on M.*

Theorem (2.1) : A necessary and sufficient condition for the F- structure to be integrable is that

(2.3) $N(X,Y) = 0$, for any two vector fields X and Y on M.

Theorem(2.2): Let F-structure satisfying (1.1) be integrable , then

(2.4) $F^3 [(FX, FY) + F^2(X,Y)] = l([FX, Y] + [X,FY])$

Proof : using theorem (2.1) in (2.3), we get

(2.5) $[FX, FY) + F^2[X,Y] = F([FX,Y] + [X,FY])$

Operating by F^3 on both the sides of (2.5) and using (1.2), we get the results.

Theorem (2.3) : on the F-structure satisfying (1.1)

(2.6) (a) $m\, N(X,Y) = m\, [FX,FY]$

(b) $m\, N(F^3X,Y) = m[lX,FY]$

Proof : from (2.1) and using (1.3) (d) we get (2.6)(a). Replacing X by F^3X in (2.6)(b), and using (1.2), we get (2.6)(b).

3. CR – Structure: Let M be a differenciable manifold and T_c (M) be a complexified tangent bundle. A CR- structure on M is a complex sub -bundle H of T_c (M) such that

$H_p \cap H_p = 0$

And $P,Q \; \varepsilon \; H \Rightarrow [P,Q] \; \varepsilon \; H$. Here H_p is c.c. of H_p . we define complex sub bundles H of T_c (M) by

(3.1) $H_p = \{ X - \sqrt{-1} FX : X \; \varepsilon \; X(D_l) \}$

Where $X(D_l)$ is the $F(D_m)$ module of all differentiable sections of D_l.

Theorem (3.1) if P and Q are two elements of H, then

(3.2) $[P,Q] = [X,Y] - [FX,FY] - \sqrt{-1}(-1)([FX,Y] + [FX,Y]).$

Proof : defining $P = X - \sqrt{-1}(-1)FX$, and $Q = Y - \sqrt{-1}(-1)FY$ and simplifying , we get (3.2)

Theorem (3.2) : the integrable F- structure satisfying (1.1) defines a CR – structure H on it such that

(3.3) $R_e(H) = D_l$

Proof : Let $X,Y \; \varepsilon \; X(D_l)$ then

$[X,FY], [FX,Y] \; \varepsilon \; X(D_l)$ using (1.3)(d), and (2.2), we get

(3.4) $l[(X, Y) + (FX,Y)] = [X,FY] + [FX,Y]$

Operating l on both sides of (3.2) and using (3.4), we get

(3.5) $l[P,Q] = [P,Q]$

consequently F structure satisfying (1.1) , defines a CR- structure on M.

Definition (3.1) Let k be the complementary distribution of $R_e(H)$ to T(M). We define a morphism

$F : T(M)T(M)$, by

(3.6) (a) $F(X) = 0$, if $X \; \varepsilon \; X(k)$

(b) $F(X) = \sqrt{-1}(-1)(P - P)$ if $X \;\; X(H_p)$

Where $P = X + \sqrt{-1}(-1)\, Y$,and P is complex conjugate of P.

consequently we have

(3.7) F(X) =-Y , F(-Y) = -X OR $F^2X = -X$ etc.

Theorem (3.4) : if M has CR- structure H then F– F =0and consequently $R_e(H) = D_l$ and $k = D_m$ respectively .

Proof : since F defines a CR- structure then from (3.7) , we have

(3.8) $F^2X = -X$

$F^3X = -FX$

$F^4X = X$

$F^5X = FX$ *and hence*

$F^5 - F = 0$

References:-

1. Bejancu , A, CR-submanifolds of a Kaehler Manifold l, proc. Amer. Math. Soc ., 69,135-143(1978).

*Department of Mathematics, D.J. College, Baraut,Baghpat (U.P.) INDIA

2. Demetropoulou-Psomopoulou, D. and Andreou, F. Gouli, On Necessary and sufficient conditions for an N- Dimensional Manifold to admit a Tensor Field f(≠0) of type (1,1) satisfying) $f^{2v+3} + f = 0$ Tensor (N.S.), 42,252-257(1985)
3. Blair, D.E. and Chen , B.Y., On CR- submanifolds of Hermitian Manifolds . Israel Journal of Mathematics ,34(4),353-363(1979).
4. Goldberg, S.I. and Yano,K., On normal globally framed f- manifolds . Tohoku Math., I. 22,362-370(1970).
5. Goldberg, S.I., On the Existance of Manifold with an F-structure . Tensor (N.S.),26,323-329(1972).
6. Upadhyay, M.D. and Gupta, V.C. Integrability conditions of a structure $f_{ë}$ satisfying $f^3 + ë^2 f = 0$, publications mathematics , 24(3-4),249-255(1977).
7. Yano, K., On structure defined by a tensor Reid f of type (1,1) satisfying $f^3 + f = 0$, Tensor (N.S.) 14,99-109(1963)
8. Yano, K. and Kon, M., Differential geometry of CR-submanifolds ,Geometriate Dedicala.10, 369-391(1981).
9. Das , L.S., Nivas, R. and Singh , A. On CR-structures and F-structures satisfying $F^{4n} + F^{4n-1}$ …….+ $F^2 + F = 0$, Tesor N.S.70.255-260(2008).
10. Das , L.S., On CR-structure and F(2K+1.1)- structure satisfying $F^{2k+1} + F = 0$, JTSI, India. 22,1-7(2004).

****

Influence of Peer Group on Body Image of Girls: A Comparative Study on Urban/Rural, Government/ Private, Undergraduate/ Postgraduate College Girls of Udaipur City

Rashmi Manoj* Vinita Sharma**

Abstract - The influence of peer groups on body image has been a widely studied topic, particularly in the context of young individuals who are highly susceptible to societal pressures and norms. Among this demographic, college girls often find themselves immersed in a dynamic social environment that can significantly impact their perception of body image. In this context a study has been carried out to find influence of peer group on body image of college Girls of Udaipur City. The random sampling method was used for selection of samples. Five point rating scale was used. All the calculations were done with SPSS. It was found that there is no significant difference between opinions of urban and rural college girls; government and private college girls; undergraduate and post graduate girls regarding 'Peer group influences body image'.
Keywords: Peer group, Body image, College girls.

Introduction - The influence of peer groups on the body image of college girls has been a subject of extensive research due to its significant impact on their psychological well-being and self-perception. During the transition from adolescence to young adulthood, college girls often experience heightened vulnerability to societal pressures and norms, making them particularly susceptible to the influence of their peers. The desire to conform to societal ideals of attractiveness and the constant exposure to peers who may embody these ideals can lead to the development of distorted body image perceptions, potentially resulting in negative psychological outcomes.

In today's society, where media and advertising often propagate narrow standards of beauty, college girls face increasing pressure to conform to unrealistic body expectations. This pressure is further intensified within peer groups, as these groups serve as powerful sources of influence and validation during the formative years of personal identity development (Cattarin and Thompson, 2019). Peer groups can include roommates, friends, classmates, and social acquaintances, all of whom contribute to the social comparison processes that shape one's body image.

College girls are often engaged in activities and environments where appearances are highly emphasized, such as social events, parties, and even online platforms. This constant exposure to peers, along with the prevalence of social media, creates a breeding ground for body image comparisons and self-evaluations. The desire to be accepted, validated, and admired by their peers can lead to a range of behaviors aimed at attaining or maintaining a certain body shape or size. These behaviors may include unhealthy dieting, excessive exercise, and even engagement in disordered eating patterns, all in pursuit of the perceived societal ideal.

Furthermore, peer groups can directly influence body image through their explicit and implicit messages, both consciously and unconsciously communicated. Discussions about appearance, weight, and physical attractiveness become commonplace within these groups, establishing a culture where one's body image becomes a central focus of conversation and evaluation. Comments, compliments, or criticisms related to body shape or size can significantly impact a college girl's self-esteem and perception of her own body.

It is essential to recognize the potential negative consequences that can arise from the influence of peer groups on body image. Poor body image has been linked to a range of psychological issues, including low self-esteem, depression, anxiety, and disordered eating behaviors. Understanding the factors contributing to these body image concerns within college peer groups can help develop strategies and interventions aimed at promoting a healthier body image and overall well-being among college girls.

The influence of peer groups on the body image of college girls is a critical area of study. The pressures to

*Guru Nanak Girls' P G College, Udaipur (Raj.) INDIA
** Govt. Meera Girls' College, Udaipur (Raj.) INDIA

conform to societal beauty ideals, coupled with the pervasive influence of peers, can significantly impact how young women perceive and evaluate their bodies. Recognizing and addressing these influences are crucial in promoting positive body image and fostering a supportive and empowering environment for college girls to develop a healthy sense of self and well-being.

Methodology: The random sampling method was used for selection of samples. Selection were made in such a manner that out of total 360 samples there were 180 urban college girls and 180 rural college girls. Further, out of 180 urban college girls, 90 girls were selected from Government College and 90 girls were selected from Private College. In the sample group of 90 Government College girls as well as of 90 Private College girls there were 45 girls from under graduate courses and 45 from post graduate courses in both the urban and rural category. Same criteria were followed for selecting sample for group of 180 rural college girls. The researcher had to assume that the individuals who participated in the quantitative survey understood the question and answered honestly and accurately.

Five point rating scale (Likert method of scaling) was used. Reason for using this tool was it increases the response rate and response quality along with reducing respondent confusion about statements. The suitable statistical techniques were applied. The level of significance was as curtained at 0.05 level. All the calculations were done with SPSS (Statistical Package for Social Science, Ver 21.0).

Results and Discussion: Association between opinions about 'Peer group influences body image' and study groups (Urban Vs Rural, Government Vs Private and UG Vs PG) are shown in Table 1. **Table 1 (see in next page)**

Out of total college girls 18.9% were strongly disagree, 21.7 % were disagree, 6.4 % were indecisive, 20.8 % were agree and 32.2 % were strongly agree regarding 'Peer group influences body image'.

Out of total urban girls, 18.9% were strongly disagree, 22.8 % were disagree, 6.1 % were indecisive, 20.0 % were agree and 32.2 % were strongly agree regarding 'Peer group influences body image' while out of total rural girls, 18.9 % were strongly disagree, 20.6 % were disagree, 6.7 % were indecisive, 21.7 % were agree and 32.2 % were strongly agree with regard to 'Peer group influences body image'. The Chi-Square value was found to be 0.369 which is insignificant (p>0.05). It infers that the rural and urban girls do not differ in opinion regarding 'Peer group influences body image'.

Out of total girls studying in Government colleges, 19.4 % were strongly disagree, 24.4 % were disagree, 4.4 % were indecisive, 19.4 % were agree and 32.2 % were strongly agree regarding 'Peer group influences body image' while out of total girls studying in private colleges, 18.3 % were strongly disagree, 18.9 % were disagree, 8.3 % were indecisive, 22.2 % were agree and 32.2 % were strongly agree with regard to 'Peer group influences body image'. The Chi-Square value was found to be 3.805 which is insignificant (p>0.05). It infers that the girls studying in government and private colleges do not differ in opinion regarding 'Peer group influences body image'.

Out of total studying in undergraduate girls classes, 16.1 % were strongly disagree, 23.9 % were disagree, 6.1 % were indecisive, 20.0 % were agree and 33.9 % were strongly agree regarding 'Peer group influences body image' while out of total girls studying in postgraduate classes, 21.7 % were strongly disagree, 19.4 % were disagree, 6.7 % were indecisive, 21.7 % were agree and 30.6 % were strongly agree with regard to 'Peer group influences body image'. The Chi-Square value was found to be 2.765 which is insignificant (p>0.05). It infers that the girls studying in undergraduate and postgraduate classes do not differ in opinion regarding 'Peer group influences body image'.

Conclusion: There is no significant difference between opinions of urban and rural college girls; government and private college girls; undergraduate and post graduate girls regarding 'Peer group influences body image'. Out of total respondents about 53% were found influenced by peer group for the body image. Results of the study are in good agreement with Krcmar et. al. (2008). In a study they found that peer group influences college girls for body image. Further, in a study on college students Perloff (2014) suggest that social media, working via negative social comparisons, transportation, and peer normative processes, can significantly influence body image concerns. Similar results were also obtained by Ferguson et.al. (2011), Bextiyar and Turkmen (2014), Cafri and Thompson (2004) and Cash et. al (2004).

References:-

1. Bextiyar Aliyev and Abdullah Turkmen, (2014). Universal Journal of Psychology 2(7): 224-230, 2014.
2. Cafri, G., & Thompson, J. K. (2004). Measuring male body image: A review of the current methodology. Psychology of Men & Masculinity, 5(1), 18.
3. Cash, T.F., Theriault, J., & Annis, N. M. (2004). Body image in an interpersonal context: Adult attachment, fear of intimacy, and social anxiety. Journal of Social and Clinical Psychology, 23(1), 89–103.
4. Cattarin, J. A., & Thompson, J. K. (2019). A three-year longitudinal study of body image, eating disturbance, and general psychological functioning in adolescent females. Eating Behaviors, 33, 69-74.
5. Ferguson, C. J., Munoz, M. E., Contreras, C., & Velasquez, K. (2011). Mirror, mirror on the wall: Peer competition, television influences and body image dissatisfaction. Journal of Social and Clinical Psychology, 30(5), 458–483.
6. Krcmar, M., Giles, S., & Helme, D. (2008). Understanding the process: How mediated and peer norms affect young women's body esteem. Communication Quarterly, 56(2), 111-130.
7. Perloff Richard M. (2014) Sex Roles DOI 10.1007/s11199-014-0384-6.

Table 1: Association between opinions about Peer group influences body image and study groups (Urban Vs Rural, Government Vs Private and UG Vs PG)

		Peer group influences body image					Total	Chi-Square (p value)
		Strongly Disagree	Disagree	Indecisive	Agree	Strongly Agree		
Total Urban	F	34	41	11	36	58	180	0.369(0.985)
	%	18.9%	22.8%	6.1%	20.0%	32.2%	100.0%	
Total Rural	F	34	37	12	39	58	180	
	%	18.9%	20.6%	6.7%	21.7%	32.2%	100.0%	
Total Government	F	35	44	8	35	58	180	3.805(0.433)
	%	19.4%	24.4%	4.4%	19.4%	32.2%	100.0%	
Total Private	F	33	34	15	40	58	180	
	%	18.3%	18.9%	8.3%	22.2%	32.2%	100.0%	
Total UG	F	29	43	11	36	61	180	2.765(0.598)
	%	16.1%	23.9%	6.1%	20.0%	33.9%	100.0%	
Total PG	F	39	35	12	39	55	180	
	%	21.7%	19.4%	6.7%	21.7%	30.6%	100.0%	
TOTAL	F	68	78	23	75	116	360	
	%	18.9%	21.7%	6.4%	20.8%	32.2%	100.0%	

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

Disaster Management of Earthquake in Special Reference to India

Dr. Saba Agwani*

Introduction - An earthquake is a phenomenon that occurs without warning and involves violent shaking of the ground and everything over it. It results from the release of accumulated stress of the moving lithospheric or crustal plates. The earth's crust is divided into seven major plates, that are about 50 miles thick, which move slowly and continuously over the earth's interior and several minor plates. Earthquakes are tectonic in origin; that is the moving plates are responsible for the occurrence of violent shakes. The occurrence of an earthquake in a populated area may cause numerous casualties and injuries as well as extensive damage to property.

Earthquakes in India : According to seismic zone mapping of the country, India is divided in to four seismic zones. Also known as earthquake zones, these seismic zones are formed on the basis of scientific input related to the following

1. The seismicity or the frequency of earthquake in a region.
2. Earthquakes that have hit the country in the past.

The four zones of earthquake in India are:

1. Seismic Zone II: Zone II classified as the low-damage risk zone, meaning the areas that fall under these zones in India have a low chance of having an earthquake. Zone II covers earthquake -prone areas which are 41% of India. The Indian Standard (IS) Code allots a zone factor of 0.10.
2. Seismic Zone III: This seismic zone is classified as the moderate damage risk zone. The IS Code allots 0.16 to this zone. Zone III covers 30%of India.
3. Seismic Zone IV: Zone IV is considered the high-damage risk zone. The IS code allots 0.24 to this zone. Moreover, 18% of the total area of the country belongs to Zone IV.
4. Seismic Zone V: Zone V has the highest risk of damaging earthquakes. The IS Code has assigned a factor of 0.36 for this very high-risk damage zone.

The Himalayan region and the North-Eastern part of the country continues to experience moderate to large earthquakes at frequent intervals including the two great earthquakes mentioned above. Since 1950, the region has experienced several moderate earthquakes. On an average, the region experiences an earthquake with a magnitude greater than 6.0 every year. The Andaman and Nicobar Islands are also situated on an inter-plate boundary and frequently experience damaging earthquakes.

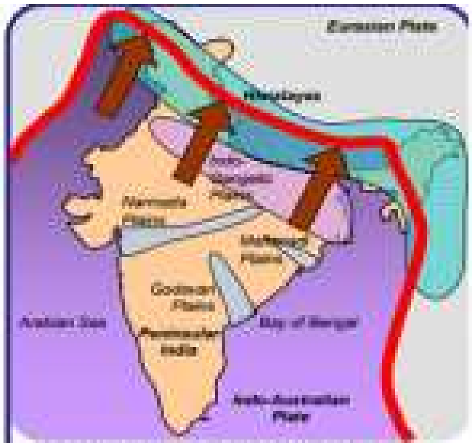

Figure 1: Geographical Layout and Tectonic Plate Boundaries of India

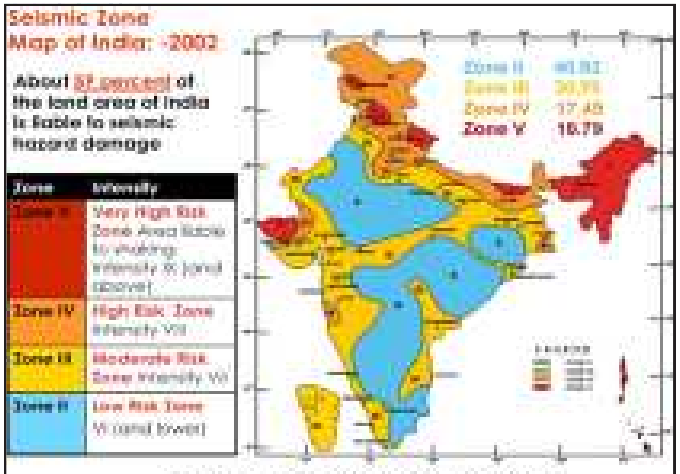

Seismic zonation and intensity map of India

Disaster Management: Disaster is a catastrophe, mishap, calamity or grave occurrence in any area, arising from natural or manmade causes, or by accident or negligence which results in substantial loss of life or human suffering or damage to, and destruction of, property, or damage to, and degradation of, environment, and is of such a nature or magnitude as to be beyond the coping capacity of the community of the affected area.

Disaster management is a strategic planning and

*Assistant Professor (Geography) Govt. College, Gogunda, Udaipur (Raj.) INDIA

procedure that is administered and employed to protect infrastructures (also known as critical assets) from severe damages when natural or human made calamities and catastrophic even occur. Disaster management plans are multi-layered and are aimed to address such issues as floods, cyclones, fires even mass failures of utilities or the rapid spread of disease (John, 2004). The disaster plan is likely to address such as impacted region, arranging temporary housing, food, and medical care (John, 2004).

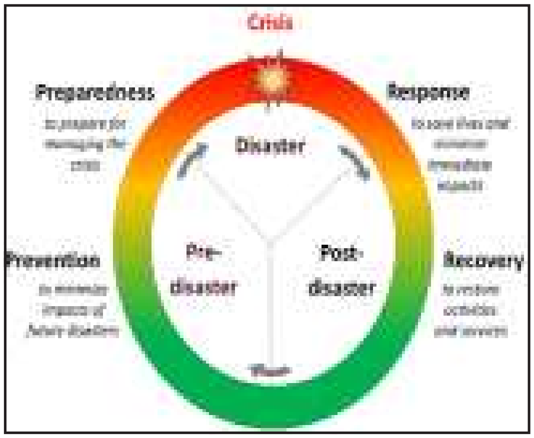

Disaster Management in India: On 23 December 2005, the Government of India enacted the Disaster Management Act, which envisaged the creation of National Disaster Management Authority (NDMA), headed by the Prime Minister, and State Disaster Management Authorities (SDMAs) headed by respective Chief Ministers, to spearhead and implement a holistic and integrated approach to Disaster Management in India.

In accordance with the various disaster specific Guidelines laid down by the NDMA, theNEC will prepare the National Disaster ManagementPlan, incorporating the DM plans prepared by thecentral ministries/departments and stategovernments. This Planwill include various aspects of earthquake management andbe approved by the NDMA. The salient activitiescovered by this Plan will include:

1. Ensure the incorporation of earthquakeresistant design features for the construction of new structures.
2. Facilitate selective strengthening and seismic retrofitting of existing priority and lifeline structures in earthquake-prone areas.
3. Improve the compliance regime through appropriate regulation and enforcement.
4. Improve the awareness and preparedness of all stakeholders.
5. Introduce appropriate capacity development interventions for effective earthquake management (including education, training, R&D, and documentation).
6. Strengthen the emergency response capability in earthquake-prone areas.

How to Manage an Earthquake:

1. By Introducing earthquake safety education inschools, colleges and universities andconducting mock drills in these institutions.
2. Strengthening earthquake safety researchand development in professional technical institutions.
3. Preparing documentation on lessons from previous earthquakes and their wide dissemination.
4. Developing an appropriate mechanism for licensing and certification of professionals in earthquake-resistant constructiontechniques by collaborating with professional bodies.
5. Preparing an action plan for the upgradationof the capabilities of the IMD and BIS withclear roadmaps and milestones.
6. Developing appropriate risk transferinstruments by collaborating with insurancecompanies and financial institutions.
7. Operationalizing the NDRF battalions and operationalizing the SDRF battalions in thestates.
8. Strengthening the medical preparednessfor effective earthquake response, etc.
9. Enforcement and monitoring of compliance of earthquake-resistant building codes,town planning bye-laws and other safetyregulations.

References:-

1. http://www.ndma.gov.in
2. http://www.surveyofindia.gov.in/
3. https://earthquake.usgs.gov
4. Introducing Physical Geography, Alan H. Strahler and Arthur Newell Strahler, Wiley publication 2000.
5. Physical Geography: The Key concepts: Huggett Richard J.,London, New York : Routledge, 2010.
6. The Dictionary of Physical Geography, Edited by David S. G. Thomas & Andrew Goudie; Third edition, Blackwell publication 2000.
7. The Handbook of Disaster and Emergency policy and Management, B. John, Earthscan, London, 2004.

****

नशे का बढ़ता हुआ प्रभाव और युवा : एक समाजशास्त्रीय अध्यन

हेमन्त कुमार मिश्रा*

प्रस्तावना - राष्ट्र का भविष्य कहे जाने वाले बच्चों में नशाखोरी की लत इस तेजी से बढ़ रही है कि दस वर्ष की आयु में प्रवेश करते ही ज्यादातर बच्चे किसी न किसी प्रकार के नशीले और मादक पदार्थों का सेवन करने लगते है। संयुक्त राष्ट्र संघ के नारकोटिक्स नियंत्रण बोर्ड की वर्ष 2009 की रिपोर्ट में बताया गया है कि दस से ग्यारह वर्ष की आयु के 37 प्रतिशत स्कूली विद्यार्थी विभिन्न प्रकार के मादक पदार्थों का सेवन करने लगते हैं और धीरे-धीरे नशा खोरी की आदत का शिकार होने लगते हैं। सबसे ज्यादा चिंता की बात है कि अति गरीब और गरीब वर्ग के बच्चे, सबसे ज्यादा नशे की गिरफ्त में आते जा रहे हैं।

अब यह बात किसी से नहीं छिपी है कि ये बच्चे तंबाकू, गुटखा, गांजा, अफीम, चरस, हेरोईन जैसे घातक मादक पदार्थों का सेवन करते हैं, इन बच्चों के माता पिता और व्यस्क परिवारजन रोजी-रोटी की जुगाड़ में इतने व्यस्त रहते हैं कि वे बच्चों पर कोई ध्यान नहीं देते, यहाँ तक कि दस-ग्यारह वर्ष की आयु में भी बच्चे भी स्कूल छोड़कर कचरा बीनने, होटलों, ढाबों में मजदूरी करने या बाजार में फेरी लगाकर सामान बेचने का काम करने लगते है और वे अपनी कमाई से मादक पदार्थ खरीद कर नशे के आदि बनते जाते हैं।

बच्चों में नशा खोरी की लत का अध्ययन करने वालों का कहना है कि ज्यादातर बच्चों को नशे की लत उनके वयस्क या हम उम्र नशा खोरो के जरिये ही लगती है। परिवार की उपेक्षा के कारण ये भोले-भाले बच्चे नशा करने वालों को ही अपना सच्चा साथी मानते हैं और नशे के आदि बन अनेक प्रकार के शोषण का शिकार बन जाते हैं। नशे की गिरफ्त में आये ये बच्चे जब मनचाहा नशा नहीं कर पाते तो वे खून में बढ़ती मादक पदार्थों की मांग को पूरा करने के लिए शरीर के लिए घातक पदार्थों का भी सेवन करने लगते हैं, जैसे कि बोन फिक्स, क्यूफिक्स, और आयोडेक्स, कई बच्चे तो केरोसीन और पेट्रोल पीकर नशे की प्यास बुझाते हैं। कुछ बच्चे नशे में इतने अंधे हो जाते है कि अपना घर छोड़कर भाग जाते है, नशे के गुलाम ये बच्चे या तो बेमौत मर जाते हैं या फिर अपराध की अंधी दुनिया में प्रवेश कर समाज और देश के लिए विकट समस्या बन जाते हैं। इनमें से अधिकांश बच्चे रेलवे स्टेशन, बस स्टैन्ड इत्यादि पर रहकर भीख मांगते है और रात में संगीन वारदातों को अंजाम देते है। देश में बच्चों के अनेकों ऐसे गिरोह बन चुके है जिनका दुरूपयोग बडे-बड़े लोग घर बैठकर करते और बच्चों की कमाई से अय्याशी करते हैं।

सम्बन्धित साहित्य की समीक्षा

DCPC की रिपोर्ट के अनुसार 'स्ट्रीट चाइल्ड बड़े स्तर पर ड्रग्स का इस्तेमाल कर रहे हैं।' रिपोर्ट के अनुसार 40-80 प्रतिशत स्ट्रीट चाइल्ड विभिन्न शहरों दिल्ली बैंगलोर अहमदाबाद, कोलकाता, मुम्बई में बड़े स्तर पर विभिन्न प्रकार के ड्रग्सों का इस्तेमाल कर रहे हैं। दिल्ली से भोपाल तक के रेलवे प्लेटफॉर्म पर 10-15 वर्ष के ऐसे बच्चों की तादाद बड़ी है जो दिन रात नशे में झूमते नजर आ जायेंगे। अधिकांश स्ट्रीट चाइल्ड स्कूल छोड़कर मजदूरी का कार्य लगभग 8-8 घंटे तक करते हैं ताकि ड्रग्स खरीदने के लिए पैसा एकत्र कर सकें। नेशनल फैमिली हैल्थ सर्वे की रिपोर्ट 2006 के अनुसार 11 लड़के और 1 प्रतिशत लड़कियाँ जिनकी आयु 15-19 के बीच है एल्कोहल का इस्तेमाल कर रहे हैं। इनमें से केवल 5 प्रतिशत ही ऐसे बच्चे है जिनका इलाज होता है (टाइम्स ऑफ इंडिया-2015)

आज एल्कोहल व अनेक प्रकार के ड्रग्स के चलते अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेकों स्वास्थ्य संबंधी समस्याऐं पैदा हो रही हैं। UNODC की रिपोर्ट के अनुसार संसार के लगभग 5 प्रतिशत लोग ड्रग्स की चपेट में है। एक रिपोर्ट के अनुसार एल्कोहल के इस्तेमाल के चलते लगभग 2.5 मिलियन लोग प्रतिवर्ष मौत का शिकार होते हैं, जबकि हीरोईन, कोकीन व अन्य ड्रग्स के चलते 0.1 से 0.2 मिलियन लोग प्रतिवर्ष मरते हैं। UNODC के एस्टीमेट के अनुसार ड्रग्स पर 200-250 मिलियन डॉलर प्रतिवर्ष खर्च किये जाते हैं, यानि ग्लोबल जी0डी0पी0 का 0.3-0.4 प्रतिशत ड्रग्स के ऊपर खर्च हो जाता है। (Adolescent Drug Abuse Awareness & Preventation-2013)

ASSOCHAM लैडीज लीग के चैयरपर्सन 510 हरबीन अरोरा ने अपने अध्ययन में कुछ तथ्यों को प्रकाशित किया। डॉ0 अरोरा के अनुसार मेट्रो सिट्रीज में रहने वाले स्ट्रीट चिल्ड्रन Distress के चलते अपने घरों से भागकर आये हैं। ये बच्चे या तो अनाथ है अथवा त्यागे हुये हैं। कुछ बच्चों के घर से भागकर आने का कारण गरीबी, घर के वातावरण का उनके प्रति अनुकूल न होना, ड्रग्स की लत, माता-पिता की बेरोजगारी इत्यादि है। 30 प्रतिशत बच्चों से उपरोक्त कारणों को ही घर से भागने के लिए जिम्मेदार ठहराया। संसार में भारत के पास सबसे ज्यादा स्ट्रीट चिल्ड्रन हैं जिनकी संख्या लगभग 20 मिलियन के बराबर है। जिंदगी की कठिनाईयों से तंग आकर ये बच्चे ड्रग्स की गिरफ्त में चले जाते हैं। बच्चों में अधिकांश बच्चे अशिक्षित है जो सरकार के एजूकेशन प्रोग्राम पर प्रश्नचिह्न लगाती है। एक सर्वे के अनुसार 68 प्रतिशत ये बच्चे अशिक्षित है जबकि 5 प्रतिशत केवल प्राइमरी स्तर तक ही पढ़े हुये हैं।

चेतना (Childhood Enhancement through Training and Action) नामक संस्था ने दिल्ली में सर्वे किया। सर्वे के अनुसार अकेले दिल्ली में 1.5 से 2 लाख के बीच स्ट्रीट चिल्ड्रन जोकि नशा खोरी का शिकार हैं। यदि बच्चा दिन में 50 रूपये भी कमाता है तो उसकी अधिकांश कमाई व्हाइट,

* पोस्ट डॉक्टोरल फेलो, आई सी एस एस आर, नई दिल्ली, भारत

फ्लूड्स, कैनबिस और तंबाकू खरीदने में ही खर्च हो जाती है। चेतना के अनुसार अकेले दिल्ली में ही ये स्ट्रीट चिल्ड्रन 27 लाख की कीमत के ड्रग्स विभिन्न प्रकार के अवैधानिक तरीकों से खरीदते हैं। दिल्ली के निजामुद्दीन, नेहरू प्लेस, गोविन्दपुरी, तैमूर नगर, और ओखला फ्लाई ओवर के पास ड्रग्स का सबसे ज्यादा इस्तेमाल इन बच्चों द्वारा किया जा रहा है। चेतना संस्था इन स्ट्रीट चिल्ड्रनर्स के ड्रग्स की आदत छुड़ाने के लिए कार्य करती है। इस संस्था ने निजामुद्दीन क्षेत्र में इन बच्चों के लिए शेल्टर बना रखे हैं। चेतना संस्था के संस्थापक संजय के अनुसार, 'शिक्षा व इलाज के माध्यम से इन बच्चों की आदत को छुड़वाने का प्रयास किया जाता है।' अधिकांश बच्चों का कहना है कि नशे की ये चीजें इन्हें आसानी से उपलब्ध हो जाती है। अत: वे अपनी इस आदत को नहीं छुड़ा पाते हैं। यदि ये चीजें बाजार में न बिके तो वे उस आदत को छोड़ सकते हैं (द हिन्दू 18 अगस्त 2014)।

परवीन डी0 मलिक, पी0के0 ने अपनी पुस्तक determinants of inhalant use among street children in a south Indian city (2012) दिल्ली में एक लाख से ऊपर स्ट्रीट चाइल्ड रहते है। दिल्ली का मीना बाजार, हनुमान मंदिर, कनाट प्लेस, पुरानी दिल्ली, नई दिल्ली रेलवे स्टेशन और इंटर बस टर्मिनस ऐसे क्षेत्र हैं जहाँ ड्रग्स पर निर्भर सबसे अधिक स्ट्रीट चाइल्ड रहते है। गैर सरकारी संस्था शरण सोसायटी के अनुसार ये बच्चे अपनी ड्रग्स की लत के चलते अपराध की दुनिया में प्रवेश कर जाते हैं। इस संस्था के अनुसार ड्रग्स की आदि लड़कियाँ का शारीरिक शोषण बड़े स्तर पर है और ये लड़कियाँ जो पूरी तरह से ड्रग्स की आदि हो जाती है, स्थायी रूप से कॉर्मिशियल सेक्स वर्कर बन कर रह हैं।

राजधानी में बिजली, पानी, सड़क और अन्य मुद्दों पर भले ही विधानसभा का चुनाव लड़ा जा रहा है, लेकिन बड़ी संख्या में यहाँ पर लोग नशे की चपेट में हैं। राजधानी में नौ साल से कम उम्र के नशा करने वाले बच्चों की भी संख्या कम नहीं है। बाल अधिकार संरक्षण आयोग ने हाल ही में मेंटल हेल्थकेयर ऑफ चिल्ड्रन रिपोर्ट जारी की है जिसके तथ्य बहुत ही चौंकाने वाले हैं। राजधानी में बड़ी संख्या में बच्चे झुग्गी-झोपड़ी व फुटपाथ पर रहते हैं, ये अधिकांश बच्चे नशे के आदि बन चुके हैं। सेव द चिल्ड्रन ने भी सर्वे कराया और पाया कि 50 हजार बच्चे दिल्ली की सड़कों पर नशे की गिरफ्त में पाये गये (जाकरण डॉट काम., 22 जन0 2015)

बच्चों द्वारा इस्तेमाल किये जा रहे ड्रग्स के प्रकार

1. टोबेको (Tobacco) सिगरेट, बीडी, गुटका,
2. एल्कोहल- बीयर, बिस्की, रम, बोड़का।
3. कैंनबिस- भांग, गांजा, चरस।
4. इनहैलेन्ट- इंक इरेजर, फ्लूड, ग्लू, पैट्रोल।
5. ओयिडस- अफीम, हीरोईन, फारमासूटिकल ऑपिड्स
6. सेडेटिवस- Diazepam, Nitragepam, Alprazolam.

एक रिपोर्ट के अनुसार 40-80 प्रतिशत विभिन्न मेट्रोसिट्रीज में रहने वाले स्ट्रीट चाइल्ड ड्रग्स का इस्तेमाल करते हैं। जिसे ग्राफ के माध्यम से नीचे समझाया गया है-

तंबाकू	50-75 प्रतिशत
एल्कोहल	25-50 प्रतिशत
कैनबिस	15-25 प्रतिशत

(Source – DCPCR-2011)

शोध के उद्देश्य :

1. बच्चों में बढती ड्रग्स की लत के कारणों की जानकारी प्राप्त करना।
2. ड्रग्स के चलते इन बच्चों के शारीरिक व मानसिक विकास पर किस प्रकार का प्रभाव पड़ रहा है, का अध्ययन करना।
3. बच्चे किस-किस प्रकार के ड्रग्सों का इस्तेमाल कर रहे है, के बारे में जानकारी प्राप्त करना।
4. ड्रग्स के आदि बच्चों की सामाजिक, आर्थिक व शैक्षणिक स्थिति का अध्ययन करना।
5. ड्रग्स की प्राप्ति के लिए ये बच्चे किस प्रकार के अपराधों में लिप्त है इससे संबंधित जानकारी प्राप्त करना।
6. ड्रग्स के नकारात्मक प्रभावों के प्रति इन बच्चों में जागरूकता पैदा करना।
7. सरकार व गैर सरकारी संस्थाऐं बच्चों को समाज की मुख्य धारा में जोड़ने के लिए क्या प्रयास कर रही है, इसका अध्ययन करना।

परिकल्पना:

1. माता-पिता का दुर्व्यवहार बच्चों को ड्रग्स का आदि बना रहा है।
2. घर से भागे बच्चों की कठिनाई भरी जिंदगी उन्हें नशखोरी का शिकार बना देती है।
3. गली, नुक्कड़ पर आसानी से उपलब्ध होने वाली नशे की चीजें बच्चों को जल्दी ही नशाखोरी का मरीज बना देती हैं।
4. अशिक्षा व गरीबी का नशाखोरी से सीधा-सीधा सम्बन्ध है।
5. ड्रग्स के प्रयोग के चलते बच्चों का शारीरिक व मानसिक विकास अवरूद्ध हो जाता है।
6. ड्रग्स का प्रयोग बच्चों में हिंसात्मक प्रवृत्ति एवं अपराधीकरण को बढ़ावा देता है।

Coverage Area – यूनीसेफ की रिपोर्ट के अनुसार एशिया में सबसे ज्यादा स्ट्रीट चिल्ड्रन है और एशिया में भी सबसे अधिक भारत में हैं। मुम्बई, कोलकात्ता, चेन्नई, कानपुर व बैंगलोर जैसे शहरों में इनकी संख्या 314,700 है, जबकि अकेले दिल्ली में ही ये 1,000,000 हैं। दिल्ली का निजामुद्दीन, कनाट प्लेस, तैमूर नगर, ओखला फ्लाई ओवर ऐसे स्थान हैं जहाँ इनकी संख्या सबसे ज्यादा पायी जाती हैं। अकेले दिल्ली में ही प्रतिदिन 27 लाख की कीमत के ड्रग्स की खरीददारी इन बच्चों के द्वारा की जाती है। यह विषय बड़ा ही चिंताजनक है कि अधिकांश स्ट्रीट चिल्ड्रन व स्कूलों में पढ़ने वाले लड़कों व लड़कियाँ अपने स्टेट्स के लिए इन मादक द्रव्यों का प्रयोग कर रहे हैं। हालांकि सरकार द्वारा स्कूलों व कॉलेजों के दायरे में इन मादक द्रव्यों को बेचना प्रतिबंधित है, बावजूद इसके चोरी-छिपे इन मादक द्रव्यों की सप्लाई स्कूलों व कॉलेजों के पास की जा रही है। अध्ययन के लिए शोधार्थी ने दिल्ली व गौतमबुद्धनगर को चयनित किया है।

निष्कर्ष – इस अध्ययन मे पाया गया कि सबसे अधिक युवा वर्ग नशे की लत में आ रहे है, इस नशेबाजी के उत्तरदायी कारको में असुरक्षा की भावना, तनाव से मुक्ति की चाहत, हम उम्र समुह की नशेबाजी की पूरानी आदत, इच्छित शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति में बाधा, माता – पिता या परिवार की किसी व्यसनी का होना व्यक्तित्व हीनता की भावना, परिवार की अपराधी पृष्टभूमी, अभिभावकों उदासीनता और नैतिक संस्कार का अभाव युवा वर्ग को नशे में ले जा रहा है।

अध्ययन में ये भी पाया गया की नशें का असर कुछ हद पड़ता है और कुछ लोगों का मानना है की इसका कोई असर नहीं पड़ता है तथा इससे व्यक्ति के जीवन के सभी पक्ष प्रभावित होते है। व्यक्ति की सोचने समझने की शक्ति का कम करता तथा व्यक्ति इस पर निर्भर हो जाता है तो कहा जा

सकता नशा एक भयकर बिमारी जो देश के युवाओं को कमजोर कर रहा है।

आज सरकार व समाज दोनों को ही ड्रग्स के प्रति कठोर कदम उठाने की आवश्यकता है। अकेले कानून बनाकर इस गम्भीर चुनौती से नहीं निपटा जा सकता है। सरकार को चाहिए कि गली, नुक्कड पर मिलने वाले ड्रग्स जैसे– व्हाइटनर, आयोडैक्स, ग्लू, पैंटस इत्यादि पर सख्ती बरते और इनकी बिक्री पर प्रतिबंध लगाये।

सरकार और समाज द्धारा बच्चों को नशे की आदत से बचाने के जो भी उपाय किये जा रहे हैं, वे न तो पर्याप्त है और न ही प्रभावी, इसलिए जरूरी है कि देश के भविष्य को पतन के रास्ते से बचाने के लिए परिवार से उपेक्षित, गरीब, अशिक्षित और बाल मजदूरी करने वाले बच्चों को नशे से बचाने के लिए गंभीरता से प्रभावी और कारगर उपाय किये जाने चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Inter-NGO Programme on street children and street youth, sub-regional seminar for the mediternance an 1983.
2. UNICFE, Publication Section, Division of Communication, UNICFE, NY-The State of the world's children 2006- Excluded and Invisible.
3. A Yuku D. Kaplan CD, Baars HM, De Vries MW. Characteristics and personal social networks of the `on' the street of the street, shelter and school children in eldoret Kenya, 2004
4. Child Abuse and Neglect, WHO fact sheet -1997
5. Mehra, Jyoti, New Delhi, India : National Report, Ministry of Welfare, UNDCP, UNICFE WHO and Naco : 1996. Reducing Risk Behavior Related to HIV/AIDS, STDs and Drug Abuse Among Street Children.
6. Can Sortium of Street Children n.d. street children statistics 2010
7. Bhat D.P., Singh M, Meena GS, Screening for abuse and mental health problems among illiterate runaway adolescents in an Indian metropolis, Arch Dis child-2012.
8. Pagare D. Meena GS, Singh MM, Sahu R, Risk factors of substance use among street children from Delhi, Indian Pediatr -2004.
9. Praveen D. Maulik PK, Raghavendra B., Khanm, Guggilla RK. Bhatia P. Determinants of inhalant use among street children in a south Indian city 2012.
10. Thapa K, Ghatane, S. Rimal SP, Health Problem among the street children of Dharam Municipality. Kathamandu Univ. Med. J. 2009.
11. Sharma S, Lal R. Volatile Substance misuse among street children in India. A Preliminary report substance misure, 2011.
12. Times of India January 2015
13. National Institute on Drug Abuse (NIDA) preventing drug & use among children and adolescents. A research based guide for parents, educators, and community leaders, 2nd ed. 2010.
14. Bovin G. Griffin KW, School based programmes to prevent Alcohol, Tobacco and other Drug use. Int Rev. Psychiatry 2007.
15. United Nation office on Drug and Crime. World Drug Report 2010, United Nations Publication.
16. Adolescent Drug abuse Awareness & Prevention Editorial Indian J. Med Res. June 2013.
17. Liddle H. Theory Development in a family based therapy for adolescent drug abuse 1999.
18. Sinha DN, Reddy KS, Rahman K. Warren CW Linking Global Youth Tabacco Survey data to the WHO framework convention on Tobacco Central : Indian J. Public Health 2006.
19. Jena R. Shukla TR, Drug abuse in a rural community in Bihar : Some Psychological Correlates. Indian J. Psychiatry, 1996.
20. Narain R., Satyanarayana L. Tobacco use among school students in India : The need for behavioral change. Indian Rediatr. 2005.
21. Deepti Pagare, G.S. Meena – Risk Factors of substance use among street children from Delhi-2003.

****

भारतीय संस्कृति में मोक्ष तत्व की अवधारणा

उर्मिला मीना *

प्रस्तावना – संसार से एकदम छूट जाना मोक्ष कहलाता है। जड़ एवं चेतन में से सभी प्रकार के मोह का सर्वथा नाश हो जाना ही संसार से छूट जाना है। मनुष्य शरीर में रहते रहते जब सारे विकारों से छूट जाता है, तो उसके मन के राग–द्धेष, काम–क्रोध, लोभ तृष्णादि सारी ग्रंथियां कट जाती है। उसके बाद ऐसा लगता है कि ना किसी भी प्राणीमातृ से वैर रहता है ना ही ममता फिर सब समय ऐसा लगता है कि जो करना चाहिए था कर लिया, जो पाना चाहिए था पा लिया, अब मन, अकाय, पूर्ण काम, प्राप्त कम आप्तकाम हो जाता है। यही सच्चे अर्थो में जीवन मुक्ति की दशा होती है। सद्गुरु कबीर ने कहा है कि 'जियत न तरेउ मुये ता तरिहो, जियतही जोन तर्रे।' अर्थात जो व्यक्ति जीवन काल में नहीं मुक्त हुआ, वह मरने पर क्या मुक्त होगा।

जीवन मुक्त आत्मा (संत) – जो व्यक्ति जीते जी अपनी वाणियों में प्रेम रस घोल लेते हैं वों जीवन मुक्त संत बन जाते हैं। इनका पूरा व्यक्तित्व ही जीवन मुक्ति रस से भरा रहता है। उनके व्यक्तित्व से रिस–रिस कर वही रस उनकी वाणियों में भरा रहता है। वो व्यक्ति विषय भोगों तथा उनकी कामनाओं को छोड़कर तथा संसार के झंझटो से भागकर अपने चेतन स्वरूप में स्थिर हो जाता है।

जड़–चेतन की पृथकता को समझकर जड़ की इच्छा त्याग देने से ही मोक्ष है। जीव ने अपने निजी स्वरूप को भूलकर जड़ को ही अपना स्वरूप मान लिया है। इसी कारण जीव उसी में बंधा हुआ है। जब जीव को इस बात का ज्ञान हो जाता है कि मैं जड़ देहादि नहीं हूं। इस दुनिया की कोई भी जड़ वस्तु मेरी नहीं है । उसी समय जीव उन सबकी इच्छा त्याग कर मुक्त हो जाता है।

अग्नि गरम है और वह प्रकाश करती है, वायु अदृश्य है और वह वस्तुओं में गति पैदा करती है तथा उन्हें उडाती है। जल शीतल रहता है। इन तीनों से अलग हटकर पृथ्वी कठोर है। पृथ्वी में धारण शक्ति है । ये चारों तत्व अलग–अलग है। सब जड तत्व एक दूसरे से भिन्न है।

कितने भी प्रकार से खोजो लेकिन जड़ तत्वों में चैतन्य गुण नहीं मिलता है । जड़ तत्वों के धर्मो से अलग चेतन तत्व का ज्ञान गुण हैं। प्रत्येक देहधारी जीव के अंदर वासना–शक्ति, इच्छा–शक्ति, प्राण–शक्ति तथा शरीर–शक्ति ये चार शक्तियां होती है। जिससे शरीर की यात्रा की जाती है । इच्छाशक्ति तो कोई भी कार्य करने के लिए आवश्यक है। लेकिन जीव की भोगों को भोगने की इच्छा है वह जीव के मूल स्वरूप से भूल है। यह जीव संसार के भोगों की इच्छा शक्ति में बंधकर उसके परिणाम में दु:ख ही पाता है। जीव अज्ञानवश इन विषय भोगों की इच्छा करता है। इसके परिणाम स्वरूप में वह जन्म–मरण के प्रवाह में बहता रहता है। यदि जीवसंतों या सद्गुरु की संगति से निजस्वरूप का बोध प्राप्त कर लेता है तो उस समय वह अपने आप को पूर्ण कार्य एवं तृप्त समझकर तथा इच्छाओं को दु:खों का कारण समझ कर उसको त्याग देता है और इस प्रकार वह मुक्ति को प्राप्त कर लेता है।

वर्तमान के निश्चय और कर्तव्य में मोक्ष का फल – भूतकाल में हमारा मोक्ष हुआ नहीं इसका प्रमाण है हमारा 'बंधन' भविष्य में मोक्ष प्राप्त करेंगे, यह आशा करना व्यर्थ की बात है क्योंकि भविष्य को कोई जानता नहीं है। हमारे जीवन का मुख्य लक्ष्य होता है 'मोक्ष प्राप्त करना' मनुष्य जीवन का उद्देश्य है, वह वर्तमान में फलता फूलता है। अत: एक जीव को चाहिए कि उसे भूत तथा भविष्य की चिंता और आशा छोड़कर वर्तमान में मोक्ष प्राप्त करने के लिए परिश्रम करना चाहिए।

भविष्य में तो वह शरीर जिसको हमने अपना मानरखा है वह छूट जाएगा। अत: उसकी आशा करना व्यर्थ है। भूत अपना बीत चुका है वह अपने हाथ में आने वाला नहीं है। अब हमारा वर्तमान जिसमें कल्याण–साधना करने का समय है इसे हम व्यर्थ की चिंता में नष्ट नहीं करें और निष्काम भावना से अपना कर्म करें तो वह जीवकर्तार्थ हो जाता है।

हम जिनको नेत्रों से नहीं देखते, कानों से नहीं सुनते मुख से नहीं बोलते और उसके विषय में सुख और अपनत्व का निश्चय भी नहीं रख सकते हैं। उनकी वासनाएं नष्ट हो जाती है। वर्तमान के आधार पर ही भूत तथा भविष्य की वासनाऐं बलवान या निर्बल होती है। यदि मनुष्य वर्तमान की संगत रंगत में अनुरक्त हो जाए तो दूर की वासनाएं नष्ट हो जाती है। जिसका सुख निश्चित निश्चय ही छोड़ दिया जाता है। जिसकी संगत छोड़ दी जाती है, जिसके लिए प्रयत्न करना छोड़ दिया जाता है जिसका प्रेम छोड़ दिया जाता है। जिसका सब तरह से त्याग कर दिया जाता है उसकी वासनाऐं मन में कहां रह सकती है।

'भविष्य देह निज छुटी है,भूत न आवे हाथ ।
वर्तमान चिंता हरै , फिर कब होय सनाथ ।।
भूत भविष्य के फेर तणी, जो पाव निज राज,
तो कस लटकै ताहि में, वर्तमान कटि काज।।
'निश्चय औ संगत तजै , तजी करनी दिल भाव।
चाये जेहि से दूरी हो, तेहि को कहां टिकाव।।

जीव मनुष्य के लिए मोक्ष तो प्रत्यक्ष एवं स्वयं का स्वयं वेद्य विषय है। जिस प्रकार हाथ में गेंद लिए रहना अत्यंत ही सरल है उसी प्रकार मोक्ष प्राप्त करके उसे जीवन पर्यत सुरक्षित रखे रहना भी बहुत सरल है।भोग बंधन होता है तथा त्याग से मोक्ष की प्रगति होती है। भोग पथ परतंत्र है इसमें भोगों का ग्रहण आवश्यक है। इसमें विवशता है। दूसरी तरफ मोक्ष पथ स्वतंत्र है। इसमें त्याग आवश्यक है त्याग करने में सब स्वतंत्र है हम किसी प्राणी पदार्थ को अपने पास बनाए रखने में परतंत्र है। लेकिन उसे त्याग देने में पूर्ण

* सहायक आचार्य (इतिहास) शहीद कैप्टन रिपुदमन सिंह राजकीय महाविद्यालय, सवाई माधोपुर (राज.) भारत

रूप से स्वतंत्र है। इस प्रकार त्याग ही मोक्ष है। इस प्रकार मोक्ष प्राप्त करना सरल है बंधन को परख लेना चाहिए एवं उसका भेद समझ लेना चाहिए। जीव सुध बुध पूर्ण काम चेतन है, वासना ही बंधन है। यह समझ कर जो वासनाओं को छोड़ देता है। वह अपने आप में शांत हो जाता है। वह जीव मुक्त ही होता है। यह करना बहुत सरल भी है। मनुष्य विषय सुख को रात दिन खोजता रहता है सुखों के अलावा उसका कोई लक्ष्य ही नहीं रहता विशेष सुखों के आगे किसी को भी वह अपना पराया नहीं समझता। उनके लिए वह सब कुछ करने को तैयार रहता है विषय सुख के लिए मेहनत करने में ना तो मनुष्य के हाथ थकते हैं और ना ही पैर थकते हैं, ना ही मन, उसी प्रकार यदि मनुष्य बंधनों से छूटने की उत्कृष्टता करे तो विनम्र बनकर पाखी विवेकी संतों की खोज करके उनकी शरण होकर उन को समर्पित हो जाए दूसरी तरफ विषय भोगों को त्याग दें तथा साधना के परिश्रम से नहीं डरे तो निश्चय ही वह किसी जीव के मोक्ष का कार्य पूर्ण कर ले।

जड़ और चेतना का विचार तथा सत्ता की अनादिता – संसार में दो तत्व हैं एक जड़ और दूसरा चेतन जड़ तत्व मोटे रूप में चार हैं पृथ्वी जल अग्नि तथा वायु। यह सब असंख्य परमाणुओं से युक्त है। पांचवां तत्व आकाश होता है। लेकिन वह गुणधर्म युक्त कोई द्रव्य नहीं है अत: आकाश के ना परमाणु है और ना उसमें क्रिया है आकाश शुन्य को कहते हैं।

दूसरा तत्व चेतन है चेतन असंख्य होते हैं। सभी चेतन जीव का गुण तो एक ही है ज्ञान। लेकिन सबका व्यक्तित्व अलग होता है। यह प्रत्यक्ष अनुभव का विषय है। इसी कारण एक रागी एक विरागी एक सुखी एक दुखी तथा नाना मतों के लोग दिखाई देते हैं। चेतन व्यापक शब्द है यह केवल महिमा परख शब्द है यह शब्द अपनी ज्ञान शक्ति की महिमा में व्यापक अर्थात महान है। तत्व का अर्थ है यथार्थता, असलियत,सार स्वरूप पदार्थ मूल पदार्थ जड़ और चेतना का ज्ञान सापेक्ष है।

संसार के सारे ज्ञान प्राय सापेक्ष होते हैं सापेक्ष का मतलब अवलंबित – सूर्य, चंद्र, तारे आदि के प्रकाश में पृथ्वी का ज्ञान होता है कि यह धारणा शक्ति मुक्ति पृथ्वी है और इसने वेली वृक्ष प्राणियों के शरीर आदि असंख्य कार्यकर्ताओं को अपने ऊपर धारण कर रखा है। पृथ्वी के सहारे प्रकाश में ही नदी समुद्र आदि में भरे हुए जल का ज्ञान होता है। यह जाना जाता है कि यह अनेक जड़ पदार्थों एवं प्राणियों के शरीरों को डूबा देता है यह भी देखा गया है कि वस्तुएं जल में नहीं डूबती क्योंकि वह बहती है जैसे नावका, काष्ठ, पत्तो आदि।

मनुष्य देखता है कि वृक्ष वन पत्तियांपताकें धूल आदि सब हिलते और बोलते हैं। मनुष्य ने यह भी अनुसंधान किया है कि प्रकाश जल तथा पृथ्वी से वस्तुएं उड़ती है इस कारण हिलाने और उड़ाने वाला तत्व कोई दूसरा ही है। उसका नाम वायु रखा, जीव का जीव की जड़ तत्व से भिन्नता जैसे प्रत्येक जड़ तत्व दूसरे जड़ तत्व से अलग होता हैं वैसे ही सभी जीव जड़ तत्वों से अलग हैं। जिस प्रकार शीतल जल बिन तत्व है, प्रकाश युक्त गरम आग भिन्न है, कोमल वायु भिन्न है, इन सब से भिन्न कठोर पृथ्वी है, इन सब से भिन्न मनुष्य का अपना आपा एवं चेतन स्वरूप है। इसके भिन्न हुए बिना जड़ तत्व से कौन जान सकता है। यह चेतन जीव इंद्रियों तथा मन से परे हैं। जीव इंद्रियों तथा मन से सारे जड़ दृश्य को जानकर स्वयं उनसे अलग एवं ज्ञान स्वरूप ही रहता है। जो कुछ भी इंद्रियां से जाना जाता है वह पर प्रत्यक्ष तथा जड़ है। जबकि दूसरी तरफ चेतन अपने आप स्वयं प्रत्यक्ष है। वह चेतन स्वयं सत्तायुक्त रहकर सब को जानता एवं जनाता है। चेतन तो अपने आप में त्रिकाल स्वयं प्रत्यक्ष है चेतन की स्वयं प्रत्यक्षता के सामने पर प्रत्यक्ष जड़ दृश्य की कोई विशेषता नहीं है।

जीव का अपना चेतन स्वरूप जड़ तत्वों से भिन्न है।

जीव का अपना आपा ही उसका देश है। यह इंद्रियों से दृश्य मान जड़ जगत उसका देश नहीं है। मन इंद्रियों से दृश्य मान एवं देह यह प्राणी पदार्थों में उलझी हुई ममता आदि भ्रांति त्याग देने के बाद जीव अपने यथार्थ देश शुद्ध चेतन स्वरूप में स्थिर हो जाता है किरिया प्राण नष्ट होने से बंधन नहीं रहते हैं जीव के कर्म तीन प्रकार के होते हैं संचित प्रारंभ तथा क्रिया मान यह तीन प्रकार प्रकार के कर्म होते हैं जन्म जन्मांतर की रचनाएं एवं कर्म संस्कारों को संचित भोग के लिए शरीर तथा उसके सुख दुख को भोग प्रारब्ध कहते हैं तथा वर्तमान में राग पूर्वक किए जाने वाले शुभाशुभ कर्मो को क्रिया मान कहते हैं।

प्रारब्ध तो हाथ से छूटे हुए तीर के समान है अत: उसे भोगना ही पड़ता है संचित कर्म का भोग तब होता है जब जीव क्रियमाण कम करें जान्म–जनमान्तर के कर्म संस्कार हमें तभी देह धारण कराते हैं जब वर्तमान में जीव राज पूर्वक कर्म करता है यदि जीव ने वर्तमान में पूर्ण दिशा वैराग्य रहकर नरकात्मक कर्मो का अंत कर दिया है तो उसके संचित कर्म नष्ट हो जाते हैं अत: यदि जीव ने वर्तमान में विषय वासनाओं का त्याग कर दिया है तो वह मुक्त है या मोक्ष को प्राप्त हैजीव संसार के बंधन छोड़कर सच्चा वैराग्य करें और स्वरूप स्थिति में स्थित वासना के व्यापार को समाप्त कर दे तो वह मुक्त हो जाता है वह अपने मन में सदैव विषयों से वैराग्य का भाव रखें तथा नीचे स्वरूप का चिंतन करें तो जीव स्वत ही मोक्ष प्राप्त कर लेता है जब विषय शक्ति तथा उससे संबंधित कारण बिल्कुल नहीं रहते हैं तब शरीर धारण करने की बी मानव पूर्णत नष्ट हो जाते हैं वासनाओं से छूटा हुआ जीव भाऊ बंधन को काटकर हमेशा मोक्ष पद में स्थिर हो जाता है।

मनुष्य पूर्व संचित के अधीन नहीं किंतु स्वतंत्र पुरुषार्थ करने में समर्थ है।

मनुष्य इस रास्ते पर चलने में पूर्ण स्वतंत्रता है कि वह अपने पूर्व के संचित संस्कारों को बदल सके मनुष्य अपने पूर्व संचिता एवं संस्कारों को गला कर नए संस्कार बना सके जीव जब चाहे तब जैसा चाहा वैसा कर्म करके वैसा ही संस्कार बना सकता है आज वह सत्य समझ कर गलत संस्कारों को नष्ट करके नए शुद्ध संस्कार बनाने में स्वतंत्र एवं समर्थ हैं यदि जीवयह सोचकर चले कि वह केवल पूर्व संस्कारों के अधीन है तो उसके अनुसार ही कर्म होना चाहिए ऐसा है नहीं है जीव के साथ विरोधी संस्कार चलते हैं सद्गुण भी और दुर्गुण भी यह सिद्ध है कि जीव स्वतंत्र है उसको कोई भी संचित एवं पूर्व के संस्कार बलपूर्वक रोक नहीं सकते हैं ऐसा कहा जाता है कि जिनके शुभ संचित एवं पूर्व के शुद्ध संस्कार बलवान होते हैं वे कुछ पाकर भी अपने पद से कभी भी पतित नहीं होते हैं।

जीव अपने कर्म तथा संस्कार बदलने में स्वतंत्र है जीव के ही पूर्व के बने कर्म संस्कार उसके सामने आवरण लाते हैं जीव को विवश करते हैं इस कारण मनुष्य जैसे ना चाहते हुए भी मानो किसी के द्धारा घसीट कर बुरे कर्म कर डालता है यह उसके ही पूर्व के संस्कार है जो उसे विवश करते हैं परंतु यह बात नहीं है कि जीव केवल पूर्व संस्कारों के अधीन है यदि जीव उचित रूप से अपनी हानी तथा लाभ समझ ले और निश्चय करके होने वाले कर्म से बचे तथा लाभ वाले कर्म को करने पर तत्पर हो जाए तो उसे कोई पूर्व संस्कार रोक नहीं सकता है जीवन ने ही प्रारब्ध कर्म बनाए हैं तथा जीव ने ही क्रियमाण कर्मो की रचना की है जीव ने ही अपने स्वरूप को भूलकर विषयों में सुखभ्रम किया है और उसकी वासनाएं बना ली है इस प्रकार जीव वासना के वश में हो गया है जीव आज्ञावश रहकर अनेक पूर्व के संस्कारों को दबाकर नए कम

करता है यह दशा संसार के सभी मनुष्यों की देख लो अत: जीव अपने कर्मो का करता तथा विधाता है वह चाहे तो अपना उद्धार कर सकता है।

मनुष्य अपने निश्चित पथ पर चलने में स्वतंत्र है मनुष्य में यह शक्ति है कि वह जिसे अपना हितकारी समझ लेता है उसके लिए तत्पर होकर काम करता है मनुष्य में यह स्वतंत्रता है कि वह बेफि बैठकर अपने निश्चित पथ पर चलता है मैं शरीर हूं या यह मेरा है यह मान्यता मानो जीव का कारावास है प्रत्येक जीव इस बंधन का सेवन कर रहा है इसी कारण जीव को चाहिए कि वह सतगुरु सत्संग से यह बोध प्राप्त करें कि मैं देह नहीं शुद्ध चेतन हूं और उसके बाद यह शरीर के प्रति नहीं लगे मेरी में मेरी के चरणों का त्याग करने का नियंतर प्रयास करें तो धीरे-धीरे नीचे अपने चेतन स्वरूप को याद करके अपने निज स्वरूप में स्थित हो जावे मानव शरीर कर्म भूमि है इन्हीं कर्मो से जीव राग और वैराग्य के अन्य कर्मो की रचना करता है धर्मो का रहस्य कर्मो के तीन प्रकार हैं क्रिया मान संचित एवं प्रारब्ध राग पूर्वक किए गए शुभाशुभ कर्मो की अमान है उनका संग्रह संचित है तथा उनमें से फल देने के लिए उन्मुख जैसे देह तथा उसमें सुख-दुख लिए भोग प्रारब्ध है यह जीव जब यह जान जाएगा कि विश्व में माना हुआ सुख ही उसके लिए बंधन है जीव को जब यह समझ आ जाएगा कि वह सारे जड़े विषयों से रहित स्वभाव पूर्ण कर्म का एवं तृप्त करम है उस समय वह विषय वासनाओं को हृदय से खोदकर बहा देगा और सच्चे रूप में दुख से रहित हो जाएगा।

यथार्थ बोध एवं रहनी हो जाने पर तीनों कर्मो से जीव मुक्त हो जाता हैसारे कर्मो के मूल में हैं निज स्वरूप का अज्ञान तथा विषयो का आरंभ इसके दूर हो जाने पर सारे कर्मो का अंत हो जाता है और जीव मुक्त हो जाता है जीव जब-जब मानव शरीर में रहता आया है तब तब उसने विश्व के कामवासना क्रियमाण कर्मो अर्थात राकात्मक शुभाशुभ कर्म किया है लेकिन जब जीव की सारी वासनाओं का ध्वस हो जाता है तब जीव बंधनों से छूट कर अपने स्वरूप में ही स्थिर होकर स्वयं ज्ञान स्वरूप असंग रह जाता है जीव विषयों के सुखाभाष तथा उसकी आशा से पूर्णतया निवृत हो जाता है उस समय उसका कोई बंधन नहीं रह जाता है जीव परम तृप्त होने के कारण उसका हृदय पूर्णतया शांत हो जाता है जीव स्थूल-सूक्ष्म सारे बंधनों से मुक्त होकर विदेय हो जाता है।

जीव अपने शुद्ध चेतन स्वरूप में स्थित होकर मुक्त हो जाता है जीव के बंधन केवल दो हैं एक तो है अपने आप को ठीक से नहीं जानना दूसरा विषयों से राग यदि जीव ने अपने आप को सबसे प्रथम निराधार एवं असंगत जान लिया तथा सारी विशाल शक्ति नष्ट हो गई तो कोई बंधन शेष नहीं रहता और जीव अपने निजी स्वरूप मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

स्वरूप चेतन में अनन्य निष्ठा ही मोक्ष का मार्ग है जो जीव अपने चेतन स्वरूप में अनुरक्त रहता है तथा उसी में संतुष्ट रहता है और उसी में लीन रहता है उसके सारे बंधन कट जाते हैं लोभी आदमी मन के अनुकूल पाए धन से वंचित हो जाए कामी मनुष्य मनोनुकूल युवती से बिछड़ जाए और मोहित मनुष्य अपने पुत्र पाकर उससे बिछड़ जाए तो उन तीनों को संसार निरर्थक लगेगा वे हमेशा उन्हीं के विरह में दु:खी रहेंगे यदि उनके शरीर छोड़ने का समय तत्काल हो तो वह उन्हीं भावनाओं को लेकर शरीर छोड़ेंगे सच्ची निष्ठा का लक्षण यही है कि अपने प्रियतम को छोड़कर अन्य बाते मन में प्रवेश न करें यही मुक्ति का मार्ग है इस प्रकार जिसको वैराग्य तथा स्वरूप स्थिति प्रिय है उनको अपने प्रियतम से अलग होकर कुछ भी अच्छा नहीं लगता है उनको सांसारिक राग रंग दावानल के समान ताप देने वाले प्रतीत होते हैं बुद्धिमान पुरुष शरीर के प्रेमियों का भी मोह छोड़ देता है वह आज ही शरीर का रागछोड़कर अपने स्वरूप स्थिति राज्य में बिहार करने लगते हैं वह जीव का शरीर छूट जाने पर भी उन्हें कहीं आना जाना नहीं रहता क्योंकि वहां पर वासना नहीं रहती है।

जहां देह शरीर में रहने रहते वासनाओं का अंत हो जाता है वहीं स्थिती मुख्य रूप से मोक्ष कहलाती है विश्व में सुख शक्ति तथा उनका योग छोड़ देने पर जीव मुक्त हो जाता है तीनों लोगों के सारे बंधन विश्व में सुख मानकर कर उन्हें भोगने से बनते हैं यदि जीव सारे विषयों में सुख मानना बंद कर दे तो उसे सुख मानकर जो भोग भोगे जाते हैं उनका उसे पूर्णता परित्याग कर देना चाहिए। मनुष्य यदि अनासक्ति पूर्वक केवल शरीर का निर्वाह है करें तो वह सारे बंधनों से मुक्त हो जाता है। यदि वर्तमान मानव शरीर की असक्ति को विवेक वैराग्य के द्वारा नष्ट कर दिया जाता है तो मनुष्य की सैकड़ो वर्षो एवं अनादि काल से होती आई आशक्ति साधना के माध्यम से छूट जाती है। जबकि वर्तमान में विश्व शक्ति रखने तथा विषयों का सेवन करने से पूर्व के सारे विशेष शक्तियां की पुष्टि होती रहती है यदि मनुष्य वर्तमान में विषया शक्ति का जड़ मूल से विनाश कर देता है तो उसके हृदय में पारक का पूर्ण प्रकाश है अर्थात स्वरूप ज्ञान का पूर्ण उजाला है उसके हृदय में शुद्ध चेतन की स्थिति है ऐसा जीव हमेशा अपने चेतन देश में ही निवास करता है। वहां पर मनवाणी का अंत है ऐसा जीव मुक्त शरीर अंत में सारी जड़ प्रकृति से सर्वथा निवृत होकर अपने मोक्ष धाम में निवास करता है।

ज्ञानाग्नि से समस्त कर्म संस्कारों का नाश हो जाता है जीव का प्राथमिक ज्ञान है अपने निजी स्वरूप का परिचय प्राप्त कर लेना फिर वह विषयाशक्ति से सर्वथा निवृत्ता होकर निज स्वरूप में स्थित पूर्ण ज्ञान है इसी ज्ञान से कर्म वासनाओं का अभाव होता है आध्यात्मिक भाषा में पूर्ण अनाशक्ति ही ज्ञान है, इसी ज्ञान की अग्नि में कर्म वासनाएं जलकर राख होती है।मुमुक्षु जीवका इस नश्वर संसार में दूसरा कोई काम नहीं है। उसे अन्य काम में उलझना नहीं चाहिएमुमुक्षु जीव अपने साधना पथ को इसलिए छोड़ देता है कि कहीं ना कहीं वह वासना के मोह में हैं।अबोध है निजी चेतन स्वरूप का ज्ञान तथा शरीर को ही मैं मेरा मानना इससे रागात्मक वृत्ति पैदा होती है देह अभिमान अबोध है। देह तथा विषयों में प्रियता राग है।

इच्छा का त्याग ही मोक्ष है।

अपने निजी स्वरूप के अलावा संसार की इच्छाएं जीव को भटकाती है अत: इच्छा का त्याग ही मोक्ष है। जिस जीव ने अपने मन से वाणी तथा कर्म से हिंसा मैथुन ममता तथा विषय आसक्ति का त्याग कर दिया है वह वही मुक्त है जो चाहे पाप करे या पुण्य सब इच्छा के कारण ही होते हैं। जो इच्छाओं को ही छोड़ देता है उसे कौन बांध सकता है। इच्छा ही कर्मो की की जड़ है भूला मानव व्यवसाय की बातों में अपनी हानि तथा लाभ समझकर देहऔर ममता में लग जाता है यह मुक्ति ही दशा छोड़कर मन के पीछे भागने लगते हैं मुक्ति तो ऐसी वस्तु है जो सब कुछ छोड़ने पर मिलती है।

धर्म शक्ति सत्संग और स्वरूप बोध से मोक्ष की प्राप्ति होती है जीवन एक बंधनों से बंधा है वह तभी उन से मुक्त होगा जब उसे सत्संग मिले उसके मन में सतगुरु संतों के प्रति भक्ति भाव का उदय हो उसके आचरण भक्ति तथा धर्म युक्त हो उसे अपने स्वरूप का बोध प्राप्त हो शरीर के सुख के लिए धन तथा परिवार का संग्रह और इन सब के लिए भूलवश जो अपने पाप के ऊपर करते जाते हैं इन सभी की परख हो जाने के बाद सारी भूल मिट जाती है। जीव दुष्कर्म के प्रति लगी कोई मन की लगन को सत कर्मो में लगा देता है जब जीव चेतन स्वरूप के सारे दृश्यों को अलग समझ कर उनका राग छोड़ देता है। तब ज्ञान अग्नि से सारी भाषाएं जलकर राख हो जाती है संसार

का वृक्ष जीव के लिए मानव नष्ट हो जाता है।

पवित्रधारणा, विनम्रता, सत्पुरुषों की संगत,भक्ति एवं सत्संग धारण करने से ही सद्बुद्धि की एक रस धारणा उत्पन्न होती है जो सद्बुद्धि को धारण कर लेता है वह जीव सारे बंधन का त्याग करके अपने परमधाम मोक्ष को प्राप्त कर ही लेता है। हानि लाभ को माने के बैर प्रीति में लाग भक्ति भूमिका में के मन के पीछे भाग।

मुक्ति ऐसी चीज है सबको छोडे होय।जब तक राखे ताहि के, भक्षक देह निकारि। जेहि में चिंता फिक भय, तेहि को दिलहि बिसरि।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मोक्षशास्त्र: अभिलाषदास- प्रकाशक कबीर पारख संस्थान प्रीतम नगर इलाहाबाद।

****

उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि का लिंग के सन्दर्भ में अध्ययन

रामचन्द्र* डॉ. राजेन्द्र सिंह**

शोध सारांश – सांवेगिक बुद्धि की अवधारणा मानव बुद्धि की समझ में नवीन गहराई लाती है; यह किसी की सामान्य या समग्र बुद्धि का आकलन करने की क्षमता को बड़ा बनाता है। सांवेगिक बुद्धि द्वारा विशिष्ट परिस्थितियों में प्रतिक्रिया करने की समझ विकसित होती है। सांवेगिक बुद्धि को जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में अधिकतम लाभ प्राप्त करने हेतु संवेगों का उपयोग करने वाली संज्ञानात्मक योग्यताओं का समूह माना जाता है। संवेगात्मक बुद्धि विद्यालय तथा कार्यक्षेत्र में सफलता को निर्धारित करती है तथा विशिष्ट परिस्थितियों में उपयुक्त प्रतिक्रिया करने की समझ विकसित करती है। किशोरों में सांवेगिक बुद्धि आक्रामकता में कमी व अधिक लोकप्रियता एवं सुधारात्मक अधिगम की ओर अग्रसर करती हैं। उच्च सांवेगिक बुद्धि के विद्यार्थी स्वयं को प्रत्येक परिस्थिति में समायोजित कर लेते हैं तथा घर, विद्यालय, समाज, कार्यस्थल आदि सभी स्थानों में अपने कर्तव्यों का सफलतापूर्वक सम्पादन करते हैं। उचित सांवेगिक प्रबन्ध उनके चिन्तन में सहायक होता है। प्रस्तुत शोध के द्वारा समस्त शिक्षार्थी लाभान्वित होंगे। क्योंकि बालक यदि अपने संवेगों को नियन्त्रित करने में सफल होगा तो अपनी परिस्थितियों में समायोजन कर उपलब्धियों में उत्तरोत्तर विकास करेगा एवं समाज व राष्ट्र की उन्नति में उसका योगदान रहेगा। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार, सांवेगिक बुद्धि अन्य प्रकार की बुद्धि से इस कारण से भिन्न है कि इसकी शिक्षार्थियों के चिंतन में महत्वपूर्ण भूमिका है और उनकी शैक्षणिक उपलब्धि में बहुत महत्वपूर्ण है (Sharp 2001)। Goleman (1998) द्वारा की गई एक जांच के अनुसार महिला और पुरुष प्रतिभागियों ने अपनी भावनात्मक बुद्धिमत्ता में कोई महत्वपूर्ण असमानता नहीं दिखाई।

शब्द कुंजी – उच्च माध्यमिक, अध्ययनरत् विद्यार्थियों, सांवेगिक बुद्धि।

प्रस्तावना – सांवेगिक बुद्धि (Emotional Intelligence) एक व्यापक सार्वभौमिक और जीवन के सभी क्षेत्रों में अच्छी तरह से पसंद की जाने वाली अवधारणा है। भावनात्मक बुद्धिमत्ता के विषय ने हाल ही में शोधकर्ताओं और मानसिक स्वास्थ्य पेशेवरों में भी बड़ी रुचि जगाई है। यह मनोविज्ञान और आधुनिक तंत्रिका विज्ञान में सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण है। दीर्घकाल तक यह विश्वास किया जाता था कि जीवन की सफलता व्यक्ति के संज्ञानात्मक पक्षों पर निर्भर करती है जिनका सम्बन्ध व्यक्ति की बुद्धिलब्धि से होता है बुद्धि को सर्वप्रमुख स्थान दिया जाता था तथा यह माना जाता था कि जिन विद्यार्थियों में सीखने की क्षमता, तार्किक योग्यता तथा अमूर्त चिन्तन की योग्यता उच्च कोटि की होगी वे अध्ययन में भी उच्च परिणाम प्राप्त करेंगे। लेकिन मनोविज्ञान के क्षेत्र में नवीन विकास ने सफलता व बुद्धि के बारे में सोच बदल दी है। विगत कुछ वर्षों में इस विचार धारा में तीव्रता से परिवर्तन हुआ है। अब विश्वास किया जाता है कि बुद्धिलब्धि के साथ-साथ व्यक्ति के जीवन में भावनात्मक तथा सामाजिक कौशलों की आवश्यकता भी है तभी जीवन में सफलता प्राप्त की जा सकती है। विद्यार्थियों की सफलता अनेक कारकों पर निर्भर करती है। जिनमें उनके व्यक्तित्व तथा वातावरणीय दोनों प्रकार के कारक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विद्यार्थियों का बौद्धिक स्तर अभिक्षमता, स्वास्थ्य, मूल्य एवं संवेग उपलब्ध संसाधन, अभिभावकों की देख-रेख अध्ययन आदतें आदि अनेक कारक हैं जो उनकी उपलब्धि को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। आधुनिक शोधों से स्पष्ट होता है कि व्यक्ति को अपने जीवन में जो भी सफलता प्राप्त होती है उसका मात्र 20 प्रतिशत ही बुद्धि के कारण होता है और 80 प्रतिशत सांवेगिक बुद्धि के कारण होता है। गार्डेन के बहुबुद्धिकारक सिद्धान्त तथा साल्वे के सांवेगिक बुद्धि के सिद्धान्त ने सफलता के निर्धारण में क्रान्तिकारी बदलाव ला दिया है। इन विचारकों का मानना है कि व्यक्ति की सफलता उसकी बुद्धि पर ही निर्भर नहीं करती, बल्कि सफलता का अधिकतम श्रेय उसकी सामाजिक एवं सांवेगिक बुद्धि को जाता है।**बार – औन (1997) के अनुसार–** 'सांवेगिक बुद्धि द्वारा वह क्षमता परावर्तित होती है जिसके माध्यम से दिन-प्रतिदिन के पर्यावरणीय चुनौतियों के साथ निपटा जाता है और जो व्यक्ति को उसके जीवन में सफलता प्राप्त करने में मदद करती है'।**गौलमैन (1998) के अनुसार–**'सांवेगिक बुद्धि वह योग्यता है जिसमें आत्म जागरूकता, मनोवेग, संतुलन, दृढ़ता, उत्साह, आत्मप्रेरणा तद्धुभूति और सामाजिक कुशलता को सम्मिलित किया जा सकता है'।**सालवे और मायर (1990) के अनुसार –** 'संवेगात्मक बुद्धि स्वयं तथा दूसरों की भावनाओं और संवेगों का निरीक्षण करने तथा इनके मध्य विभेद करने के योग्य बनाती है और इसका प्रयोग स्वयं के विचारों और क्रियाओं को दिशा प्रदान करने में किया जाता है'।**सांवेगिक बुद्धि–**सांवेगिक बुद्धि वह बुद्धि है जिसके द्वारा विद्यार्थी अपने भावों एवं संवेगों का उचित प्रकटीकरण एवं नियन्त्रण करता है। तथा दूसरों की भावनाओं एवं संवेगों का सम्मान करता है।**गौलमैन (1998) के अनुसार–** सांवेगिक बुद्धि वह योग्यता है जिसमें आत्म जागरूकता, मनोवेग, संतुलन, दृढ़ता, उत्साह, आत्मप्रेरणा, तद्धुभूति और सामाजिक कुशलता को सम्मिलित किया जा सकता है।

प्रस्तुत शोध अध्ययन में सांवेगिक बुद्धि से तात्पर्य व्यक्ति की अन्त: वैयत्तिक जागरूकता, अन्तर्वैयत्तिक जागरूकता, अन्त: वैयक्तिक प्रबन्धन

* शोध छात्र, वीर वहादुर सिंह पूर्वाचंल विश्वविद्यालय, जौनपुर (उ.प्र.) भारत
** एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष (मनोविज्ञान विभाग) राजा श्री कृष्णदत्त स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जौनपुर (उ.प्र.) भारत

एवं अन्तर्वैयवत्तिाक प्रबन्धन की योग्यता से है।

उच्च माध्यमिक स्तर–प्रस्तुत शोध अध्ययन में उच्च माध्यमिक स्तर से तात्पर्य कक्षा 11 व 12 में अध्ययनरत् नियमित रूप से नामांकित विद्यार्थियों से है ।

लिंग– लिंग से तात्पर्य उच्च माध्यमिक स्तर अध्ययनरत् छात्र तथा छात्राओं से है ।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में सर्वाधिक बल संज्ञानात्मक एवं गत्यात्मक परिक्षेत्रों के उद्देश्यों की सम्प्राप्ति पर है। परिणामस्वरूप विद्यार्थी एवं अध्यापक इन्हें पूरा करने के लिए ज्ञान एवं कौशलों की सम्प्राप्ति को ध्यान में रखकर ही पाठ्यविषयों की योजना तैयार करते हैं। इस कारण एक परिक्षेत्र जिसका संबंधा भावना, संवेगों पर नियन्त्रण, मूल्यों की स्थापना, निर्णायक शक्ति आदि से संबंधित है, द्वितीयक बनता जा रहा है। परिणामत: ईर्ष्या, द्वेष, मूल्यहीनता, संवादहीनता आदि अधिक प्रभावी होकर मनुष्य को वास्तविक अर्थो में मनुष्य बनाने में बाधा उत्पन्न कर रहे हैं। साथ ही उसके अन्दर मानवोचित गुणों यथा सामाजिकता, मूल्य, संवाद की क्षमता, संवेदना, संवेगों पर नियन्त्रण, सहिष्णुता, परहित, शान्तिप्रियता, संतोष आदि को विकसित नहीं होने दे रहे हैं इसका प्रभाव शैक्षिक संस्थाओं सामाजिक सम्बन्धों एवं व्यक्ति के स्वयं के जीवन पर अत्यन्त नकारात्मक ढंग से पड़ रहा है। वर्तमान शैक्षिक परिदृश्य में यह आवश्यक है कि संज्ञानात्मक एवं गत्यात्मक परिक्षेत्रों के साथ–साथ भावात्मक परिक्षेत्र को भी विकसित करने की प्रक्रिया तेज की जाय । भावात्मक परिक्षेत्र के अन्तर्गत भावनाओं को समझना, व्यक्ति के संवेगों को समझना, उन्हें मूल्य प्रदान करना, संवेगों के औचित्य एवं अनौचित्य की समझ विकसित करना एवं तदनुरूप निर्णय लेना आता है। यदि बालक में संवेगात्मक बुद्धि उच्च होगी तो उसका अधिगम भी प्रभवित होगा। मीर मुईन मकबूल (1989) ने सांवेगिक बुद्धि का शैक्षिक उपलब्धि व सीखने के परिणाम, फर्न, शिंग, चेन, यिंग, मिंग, लीन व अन्य (2005) ने जीवन समायोजन, उमा देवी एण्डएण्ड रोमाला रयाल (2005) ने बौद्धिक क्षमता के साथ अध्ययन किया। निष्कर्षत: पाया गया कि विद्यार्थियों कीसांवेगिक बुद्धि अधिागम को प्रभवित करती है।

शोध से प्राप्त परिणाम अभिभावकों के लिए उपयोगी होंगे क्योंकि आज का अभिभावक अपने बालक से प्रत्येक क्षेत्र में उपलब्धियां उच्च चाहता है परिणाम यह प्राप्त होता है कि बालक सभी परिस्थितियों में समायोजित नहीं हो पाता एवं आत्मविश्वास का स्तर कम हो जाता है, जो दुशचिन्ता व भय को जन्म देती है जिसका शैक्षिक उपलब्धि पर सीधा प्रभाव पड़ता है। बालक में संवेगात्मक बुद्धि उपस्थित होगी तो वह सभी तनावों से मुक्त होकर उच्च शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त कर माता–पिता की आकांक्षाओं पर खरा उतरेगा क्योंकि संवेगात्मक बुद्धि से व्यक्ति अपने व दूसरों के संवेगों को समझने व उनका प्रबन्धन करने में सक्षम होता है व अपने संवेगों को विचार शील तरीके से प्रदर्शित करता है।

शोधा के उद्देश्य– उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि का लिंग के सन्दर्भ में अध्ययन करना।

शोधा परिकल्पनाऐं:

परिकल्पना 1– उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि भिन्नतापरक होती है।

परिकल्पना 2– उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि में लिंग के सन्दर्भ में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

शोध विधि– प्रस्तुत अध्ययन के लिए समस्या की प्रकृति के आधार पर शोधा हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्श– शोधकर्त्रा द्वारा जौनपुर जिले का चयन सोद्देश्य न्यादर्शन विधि द्वारा किया गया है। जिसमें से दो विद्यालय सी.बी.एस.ई. तथा दो विद्यालय बी.ओ.एस.ई. यू. बोर्ड से सम्बद्ध है। प्रत्येक विद्यालय से संकायवार (कला, विज्ञान, वाणिज्य) 90–90 विद्यार्थी लिये गये है। इस प्रकार चार विद्यालय से चयनित 360 विद्यार्थी याद्दच्छिक रूप से चयनित किये गये है।

प्रस्तुत शोध में प्रयुक्त उपकरण – प्रस्तुत शोध अध्ययन में सांवेगिक बुद्धि के मापन हेतु **डॉ. एस. के मंगल तथा श्रीमती शुभ्रा मंगल** द्वारा निर्मित मानकीकृत इमोशनल इन्टेलिजेन्स इन्वेन्टरी का प्रयोग किया गया है।

तालिका 1– सांवेगिक बुद्धि के विभिन्न स्तरों पर विद्यार्थी संख्या एवं प्रतिशत

विद्यार्थियों का सांवेगिक बुद्धि स्तर	विद्यार्थी संख्या (360)	प्रतिशत
अति उच्च	7	2
उच्च	18	5
सामान्य	108	30
निम्न	173	48
अति निम्न	54	15

परिकल्पना 1 उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि भिन्नतापरक होती है।

के स्तर के सन्दर्भ में पाया गया है कि अति उच्च सांवेगिक बुद्धि स्तर पर 2% विद्यार्थी हैं तथा 5 विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि के स्तर के सन्दर्भ में प्राप्त प्रदत्तों का विश्लेषण अग्र प्रकार है– सांवेगिक बुद्धि विद्यार्थी उच्च सांवेगिक बुद्धि स्तर पर हैं। सामान्य स्तर पर 30 विद्यार्थी तथा निम्न स्तर पर 48 विद्यार्थी हैं अति निम्न स्तर पर 15% विद्यार्थी हैं। उपर्युक्त विश्लेषण से ज्ञात होता हैं कि अति उच्च सांवेगिक बुद्धि व उच्च सांवेगिक बुद्धि के स्तर पर विद्यार्थियों का प्रतिशत कम (25) है। सामान्य तथा निम्न स्तर पर विद्यार्थियों का प्रतिशत अधिक (30, 48) है। प्रस्तुत विश्लेषण के आधार पर यह परिकल्पना स्वीकृत होती है अर्थात् उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि भिन्नतापरक होती है।

Gender	N	Mean	SD	df	t&value	Significant
छात्र	197	58.40	10.807	358	1.16	not signifince
छात्रा	163	59.21	11.146			

परिकल्पना 2 उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि में लिंग के सन्दर्भ में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है।

उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्रों की सांवेगिक बुद्धि का मधयमान 58.40 व प्रमाप विचलन 10.807 है। छात्राओं की सांवेगिक बुद्धि का मधयमान 59.21 तथा प्रमाप विचलन 11.146 है। दोनों माध्यों के मधय अन्तर की सार्थकता हेतु ज्ञात टी–मूल्य 1.16 है टी का सारिणी मूल्य 0.05 स्तर पर 1.964 तथा 0.01 स्तर पर 2.58 है प्राप्त टी मूल्य 1.16 टी के सारणी मूल्य से कम है अत: उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत छात्र तथा छात्राओं की सांवेगिक बुद्धि में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है। प्रस्तुत विश्लेषण के आधार पर यह परिकल्पना स्वीकृत होती है। उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि में लिंग के

सन्दर्भ में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है। छात्र तथा छात्राओं की सांवेगिक बुद्धि समान होती है ।

निष्कर्ष–उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि भिन्नतापरक होती है अर्थात् विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि समान होती है।

उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि में लिंग के सन्दर्भ में सार्थक अंतर नहीं पाया जाता है। छात्र तथा छात्राओं की सांवेगिक बुद्धि समान होती है।

उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि में संकाय के सन्दर्भ में सार्थकहै। कला, विज्ञान वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों की सांवेगिक बुद्धि समान होती है।

शैक्षिक निहितार्थ – प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धि को विकसित करना है। अनुसंधान कार्य के परिणाम भावी नीति निर्धारण की आधारशिला बनते है व्यक्ति विगत अनुभवों से सीखता है तथा उसके अनुरूप कार्य करता है। अतीत के अनुभव व्यक्ति के वर्तमान और भावी समस्याओं के समाधान का मार्ग प्रशस्त करते हैं एवं नीति निर्धारण का निर्णय लेने में सहायक बनते हैं। प्रस्तुत शोध अध्ययन अधयापकों का ध्यान इस ओर इंगित करता है कि वे विद्यार्थियों की व्यक्तिगत व शैक्षिक समस्याओं को समझ कर उन्हें दूर करने का यथा संभव प्रयास कर अभिप्रेरित करें व विद्यार्थियों में निम्न आत्मविश्वास, संवेगात्मक बुद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि के कारणों को जानकर उन्हें दूर करने का प्रयास किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. जेम्स, डी.ए. पार्कर व अन्य 2004, द रिलेशनशिप बिटविन इमोशनल इन्टेलीजेन्स एण्ड एकेडेमिक एचीवमेन्ट इन एलीमेन्ट्री स्कूल चिल्ड्रन रिट्राइवड फ्रॉम 22 जुलाई 2017, http//www.doestoc.com
2. उमा देवी एण्ड रोमाला रयाल (2005) द रिलेशनशिप बिट्वीन इमोशनल इन्टेलीजेन्स एन्ड इन्टेलेक्चुअल एबिलिटीज ऑफ एडॉलसेन्टस जर्नल ऑफ इंडियन साइकोलोजी (23) (2) विशाखापत्तनम, आंधा यूनिवर्सिटी प्रेस
3. सौम्याह एस. एन्ड निगम्मा सी.बी. (2010) इमोश्नल इन्टेलिजन्स इन रिलेशन टु पर्सनैलिटी साइको लिंगवा. (40) जन. जुलाई 2010 साइको लिंग्विस्टिक एसोसिएशन ऑफ इन्डिया आइ.एस.एस. एन. 0377–3132 (93–96)
4. बिन्धु सी.एम. (2011). सेल्फ असर्टिवनेस एन्ड इमोशनल इन्टेलिजन्स ऑफ हायर सेकेडरी स्ट्यूडेन्ट्स जी.सी.टी.ई. जनरल ऑफ रिसर्च एन्ड एक्सटेन्शन एन एजुकेशन, (6) (2) जुलाई 2011, पृष्ठ (14–17) गवर्मेट कॉलेज ऑफ टीचर एजुकेशन तिरुवनन्तपुरम केरला international Journal of Applied Research
5. खान, महमूद अहमद व अन्य 2012, इमोशनल इन्टेलीजेन्स ऑफ चिल्ड्रन ऑफ वर्किंग एण्ड नॉन वर्किंग मदर्स, रिट्राइवड फ्रॉम 18 अगस्त http//www.sciencepub.net/researcher2017,
6. शर्मा, दर्शना व बन्दना 2012 इम्पैक्ट ऑफ इमोशनल इन्टेलीजेन्स एण्ड होम इन्वायरमेन्ट ऑन सेल्फ कॉनसेप्ट ऑफ एडोलेसेन्टस इण्डियन स्ट्रीमस रिसर्च जनरल, (2).

****

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 5.610 (2018) July to September 2020, E-Journal, Vol. I, Issue XXXI

Meera's Unflinching Devotion for Lord Krishna

Dr. Deepika Sharma*

Introduction

"Let people say good things or bad things
I will bear them all!
Meera cannot love even a moment without her
beloved Lord Krishna"

Indian spirituality is so vast. It is the land, in which not only certain towns, rivers, and trees are held sacred, but also cows, snakes, rats, and vultures. Perhaps the most remembered and quoted woman in India history is a sixteenth century poet, singer and saint called Mirabai, or Meera. **Mirabai**, a Hindu women mystic, born as a Rajasthani princess in medieval times, deserves special mention. She was one of the greatest devotees of Lord Krishna and dedicated her entire life in devotion to God, enduring all the difficulties of life. A great saint, a poet and a scholar, Mira is regarded as an incarnation of Radha. Mira was the daughter of Ratan Singh Ranthor and the grand-daughter of Dudaji of Merta. The Rathores of Merta were great devotees of Vishnu. Mira Bai was brought up amidst Vaishnava influence, which moulded her life in the path of devotion towards Lord Krishna. She learnt to worship Sri Krishna from her childhood. When she was four years of age, she manifested religious tendencies. Once there was a marriage procession in front of her residence. The bridegroom was nicely dressed. Mira, who was only a child, saw the bridegroom and said to her mother innocently, "Dear mother, who is my bridegroom?" Mira's mother smiled, and half in jest and half in earnest, pointed towards the image of Sri Krishna and said, "My dear Mira, Lord Krishna—this beautiful image—is your bridegroom".

Child Mira began to love the idol of Krishna very much. She was passionately attached to the idol of Giridhar Gopal. Soon after, Meera's mother passed on. As Meera grew up, her desire to be with her Krishna grew intensely and she believed that Lord Krishna would come to marry her. It is the desire of every human being to become a perfect Lover of God sooner or later. God can be formless or with form. God can be conceived in any name and form. Mirabai is a living example for us of how to love God Almighty as our very own whether as a husband, a wife, a friend, a father, a mother or a child.

She saw One Infinite, Lord Krishna, everywhere and considered lord Krishna to be her husband and worshipped Him as *The God*. Meera had the beautiful cosmic vision. She saw Krishna in trees, in stones, in creepers, in flowers, thunder, lightning, and in every living and non-living being. Meera worshipped Krishna as a personal god, always accessible and unfailingly responsible. Lord Krishna was a guide, a defender, a savior. He stood for the promise and he was prepared to be possessed and controlled by love. Her bhajans (collectively known as her Padavali) presents intimate and personal world in which nothing seems to exist except Krishna, the object of her desire. It is this perception of Krishna that has seized hold of Mirabai in the poem; she has felt the all-attractive power of the god, before which everything else pales in comparison.

Meera occupies indeed a sacred place in the history of Indian thought and culture for her deep and passionate religious devotion, as also for her poetry in which her genius was well revealed, and which was never bereft of beauty in the true sense of the term. Her odes and hymns are so rich, sweet and inspiring, not because of any high rhetoric or dexterity of language, but because they are characterized by a tenderness and simplicity of feeling as genuine outpourings of a heart completely dedicated to God. It is also in the **Bhagavad Gita** that Krishna sets out the influential idea of bhakti, that salvation can be attained not only through knowledge but also through devotion. The key passages come toward the end of book 9. In verse 26, for example, Krishna tells Arjuna:

He who offers to Me with devotion
A leaf, a flower, a fruit or water,
That offering of devotion
I accept from him whose self is pure.

Mirabai had such a deep understanding of the true nature of her divine lord that she had little regard for things such as family duty and accepted social roles, which others thought were so important. For Mirabai, their rules were as nothing when compared with the majesty of the God. Krishna offers salvation and incorporation in the oneness of all things; society offers nothing but the dull round of petty obligations, small-minded values, and short-lived pleasures.

O my companion,
Worldly comfort is an illusion,
As soon you get it, it goes.

***Assistant Professor (English) Government Engineering College, Ajmer (Raj.) INDIA**

Mirabai began to devote most of her time in prayer and worship and did not pay any attention to the etiquettes of a royal household. Mirabai took no interest in her earthly spouse, since she believed herself to be married to Krishna.

I am true to my Lord,
O my companions, there is nothing to be ashamed of now
Since I have been seen dancing openly.

In the day I have no hunger
At night I am restless and cannot sleep.
Leaving these troubles behind, I go to the other side;
A hidden knowledge has taken hold of me.

My relations surround me like bees.
But Mira is the servant of her beloved Giridhar,
And she cares nothing that people mock her.

Meera's songs infuse Faith, Courage, Devotion and the unconditional Love of God in the minds of the devotees. She immersed herself in the love of Giridhara Gopala. She considered Krishna to be her best friend, lover and husband. Krishna is the Lord of the entire universe, but her relation with Him is of love and intimacy. This shows the feeling of personal belongingness, of her right on Him and His right on her, dwelling in a world of HER (Mira) and HIM (Krishana). In the eyes of the world, the complete immersion of the devotee in the object of his or her love may look like a kind of madness. Indeed, madness is a theme in a number of Mirabai's poems. Her only message was that Krishna was her all.

My Beloved dwells in my heart,
I have actually seen that Abode of Joy.
Mira's Lord is Hari, the Indestructible.
My Lord, I have taken refuge with Thee,
Thy slave

She was a saint, a philosopher, and a romantic poet. Themes like- the primacy of theism, the exaltation of the avatars Rama and Krishna, the emphasis on bhakti yoga (devotion) as a means of salvation/liberation, the depreciation of jnana yoga (knowledge) and karma yoga (correct ritual action), and the rejection of caste as a barrier between god and man. These themes were prevalent during her marriage in Rajasthan. Her songs express these themes in a powerfully personal way, in an emotionally superficial style. She was a versatile genius and a magnanimous soul. Her life has a singular charm, with extraordinary beauty and marvel. Her words, which with beauty and joy express a kind of female liberation and her rejection and even disdain of the wealthy and their life of riches also appeals to the poor. Mira's life resonates in the hearts of many in India and provides a continual inspiration to become a perfect devotee of God.

Bhagvad gita is, undoubtedly, considered as an official voice of lord Krishna. Shankracarya's emphasised on jnana yoga, Ramanuja, on bhakti yoga and Gandhi laid stress on karma yoga as means of liberation. On the means of liberation the intellectual debate and difference of opinions may go on. Krishna (salvation) is not an intellectual pursuit for her. Meera only wants to immerge herself in Krishna without caring any means of liberation including bhakti marg. She wants to be *Krishanamay*. Lord Krishna's worship is not a rational choice for her; it is just the spontaneous and emotional urge to be one with Krishna. The logical categories do not apply on the matters of faith, leave aside the matters of devotion. Her aim is not to understand but to possess Krishna. Ramanuj gave a boost to the bhakti cult. He was a path guider and Meera was a path dweller and Meera, as devotee, had surpassed the propounder of bhakti cult.

References:-

1. Madhu Kishwar, editor, Manushi, *Women Bhakta Poets*, nos. 50, 51,52, January-June, New Delhi, India, 1989.
2. Andrew Schelling, *For love of the Dark One: songs of Mirabai*, Shambhala Publications, 1993.
3. A.J. Alston, *The devotional poems of Mirabai / translated with introduction and notes*, 1980
4. Lyn Reese*, Women in India :Lessons from the Ancient Aryans through the Early Modern Mughals*, Women in World History Curriculum, 2001.
5. Susie Tharu and K. Lalita, editors*, Women Writing in India: 600 B.C. to the Present. vol.I,* The Feminist Press, 1991.

Articles:-

1. All I Was Doing Was Breathing (Criticism) by Bryan Aubrey
2. Mirabai Biography by tejvan pettinger
3. Mirabai: The Rebellious Rajput Rani by Bill Garlington, U.S.A

****

Labor Migration and Social Integration: Study the Experiences of Migrant Workers in India

Dr. Sandhya Jaipal*

Abstract - Labor migration in India is a significant phenomenon that shapes the socio-economic landscape of the country. As millions of people move from rural to urban areas in search of better employment opportunities, the dynamics of labor migration present complex challenges and opportunities. This research paper explores the experiences of migrant workers in India, focusing on the economic impacts, social integration, challenges faced, government policies, and future prospects. Understanding the experiences of migrant workers requires a multi-faceted approach, considering both the macroeconomic trends and the micro-level personal narratives. This paper aims to provide a comprehensive analysis of labor migration in India, emphasizing the need for policies that support social integration and protect the rights of migrant workers. By examining the economic impact, social challenges, government responses, and potential solutions, this paper seeks to contribute to the discourse on labor migration and social integration in India.

Keywords: Labor Migration, Social Integration, Migrant Workers, India, Economic Impact, Social Challenges.

Economic Impact of Labor Migration in India - Labor migration has profound economic implications for both the source and destination regions. In India, the migration of workers from rural to urban areas is a critical driver of economic growth and urbanization. Migrant workers fill essential roles in various industries, contributing to the overall productivity and development of urban economies.

The construction sector is one of the largest employers of migrant labor in India. Migrant workers are often employed in low-wage, labor-intensive jobs that are crucial for the development of infrastructure. Their contributions to the construction of buildings, roads, and other infrastructure projects are indispensable. However, these jobs are often precarious, with little job security, low wages, and poor working conditions. Despite these challenges, the remittances sent by migrant workers to their families in rural areas play a significant role in alleviating poverty and improving living standards.

Agriculture, another key sector, also relies heavily on migrant labor. Seasonal migration is common, with workers moving to different regions based on the agricultural calendar. This labor mobility helps address labor shortages during peak seasons, ensuring the timely harvest of crops. However, the informal nature of agricultural employment means that migrant workers often lack access to social security benefits and are vulnerable to exploitation.

The service sector, including hospitality, domestic work, and retail, is another area where migrant labor is essential. Migrant workers often take on roles that are unattractive to the local workforce, such as domestic help and sanitation work. These jobs, while crucial, are often undervalued and underpaid. The economic contributions of migrant workers in the service sector highlight the importance of recognizing and addressing the disparities they face.

Overall, labor migration has a dual impact on the Indian economy. While it contributes to urban development and economic growth, it also highlights the need for policies that ensure fair wages, job security, and social protection for migrant workers. Addressing these issues is crucial for sustaining the economic benefits of labor migration and promoting inclusive growth.

Social Challenges Faced by Migrant Workers: Migrant workers in India encounter numerous social challenges that affect their quality of life and hinder their social integration. These challenges stem from various factors, including their economic status, cultural differences, and lack of access to basic services and social protection.

One of the primary social challenges faced by migrant workers is discrimination and social exclusion. Migrant workers often come from marginalized communities and lower socio-economic backgrounds, which makes them susceptible to discrimination based on caste, ethnicity, and regional identity. This discrimination can manifest in various forms, including restricted access to housing, education, healthcare, and public services. As a result, migrant workers and their families often live in poor conditions, with limited opportunities for social mobility.

Housing is a significant issue for migrant workers. Many live in overcrowded and unsanitary conditions, such as slums or temporary shelters, due to the high cost of housing

*Associate Professor (Sociology) S.D. Govt. College, Beawar (Raj.) INDIA

in urban areas and their low income levels. These living conditions can lead to health problems and further marginalization. The lack of secure and adequate housing also affects children's education, as frequent relocations disrupt their schooling and social development.

Access to healthcare is another critical challenge. Migrant workers often lack awareness of and access to healthcare services, including maternal and child health services, vaccinations, and treatment for chronic diseases. The transient nature of their work and living conditions makes it difficult for them to access continuous and comprehensive healthcare. This can lead to poor health outcomes and increased vulnerability to illnesses.

Educational opportunities for migrant workers' children are often limited. The children face numerous barriers, including language differences, lack of proper documentation, and frequent school transfers. These challenges result in lower enrollment rates, higher dropout rates, and poorer educational outcomes. The lack of education perpetuates the cycle of poverty and limits future opportunities for these children.

Social integration is further hampered by the cultural and linguistic differences between migrant workers and the local population. Migrant workers may face hostility and prejudice from the local community, which can lead to social isolation. This isolation is exacerbated by the lack of social networks and support systems in the destination areas. Migrant workers often rely on informal networks for support, which may not be sufficient to address their needs.

In conclusion, migrant workers in India face significant social challenges that hinder their integration and well-being. Addressing these challenges requires a multi-dimensional approach that includes improving access to housing, healthcare, and education, as well as promoting social inclusion and combating discrimination. Policies and programs that support the social integration of migrant workers are essential for ensuring their rights and improving their quality of life.

Government Policies and Initiatives: The Indian government has implemented various policies and initiatives to address the issues faced by migrant workers and to promote their social integration. These policies aim to improve the working and living conditions of migrant workers, ensure their rights, and provide them with access to essential services.

One of the key initiatives is the Inter-State Migrant Workmen (Regulation of Employment and Conditions of Service) Act, 1979. This act aims to regulate the employment of inter-state migrant workers and to ensure fair wages, working conditions, and access to welfare measures. The act mandates the registration of migrant workers and their employers, and it provides for the establishment of welfare funds for the benefit of migrant workers. However, the implementation of this act has been weak, and many migrant workers remain outside its purview.

The Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA) is another important policy that indirectly affects labor migration. MGNREGA aims to provide guaranteed employment to rural households, thereby reducing the need for migration to urban areas. By providing employment opportunities in rural areas, MGNREGA helps to improve the economic conditions of rural households and reduce the pressure on urban labor markets. However, the effectiveness of MGNREGA in curbing migration has been limited, as the demand for work often exceeds the supply, and the wages offered are often lower than those in urban areas.

The Pradhan Mantri Awas Yojana (PMAY) is a housing scheme that aims to provide affordable housing to the urban poor, including migrant workers. The scheme includes provisions for the construction of houses, the rehabilitation of slum dwellers, and the promotion of affordable rental housing. By improving access to secure and adequate housing, PMAY aims to enhance the living conditions of migrant workers and their families. However, the implementation of the scheme has faced challenges, including land availability, funding constraints, and bureaucratic hurdles.

The government has also implemented various social protection schemes, such as the Atal Pension Yojana (APY) and the Pradhan Mantri Shram Yogi Maan-Dhan (PM-SYM), to provide financial security to informal sector workers, including migrant workers. These schemes aim to provide pensions and social security benefits to workers in the unorganized sector, thereby enhancing their financial stability and well-being.

Case Studies and Personal Narratives: Examining case studies and personal narratives of migrant workers provides valuable insights into their lived experiences and the challenges they face. These stories highlight the human aspect of labor migration and underscore the importance of addressing the social and economic issues encountered by migrant workers.

One such case is that of Ramesh, a migrant worker from Bihar who moved to Delhi in search of better employment opportunities. Ramesh works as a construction laborer, earning a daily wage to support his family back home. Despite his hard work, he struggles with job insecurity and poor working conditions. Ramesh lives in a makeshift shelter in a slum, with limited access to clean water and sanitation facilities. His story reflects the broader issues faced by many migrant workers in the construction sector, including low wages, precarious employment, and inadequate housing.

Another example is the story of Sita, a domestic worker from Odisha who migrated to Mumbai. Sita works in multiple households, performing tasks such as cleaning, cooking, and childcare. She earns a modest income, which she sends back to her family in her village. Sita faces long working hours, lack of job security, and exploitation by employers. Her experiences highlight the challenges faced by female migrant workers in the domestic work sector,

including gender-based discrimination, exploitation, and lack of legal protection.

The narrative of Rajesh, a seasonal agricultural worker from Uttar Pradesh, sheds light on the issues faced by migrant workers in the agricultural sector. Rajesh migrates to Punjab during the harvest season to work on farms. He faces harsh working conditions, long hours, and exposure to health risks due to the use of pesticides. Rajesh's story illustrates the vulnerabilities of seasonal migrant workers, including lack of access to healthcare, social security, and fair wages.

These personal narratives underscore the need for comprehensive policies and interventions to address the challenges faced by migrant workers. They highlight the importance of ensuring fair wages, job security, safe working conditions, and access to basic services such as housing, healthcare, and education. The stories also emphasize the need for social integration and support systems to help migrant workers navigate the challenges of living and working in new environments.

In addition to individual stories, community-level case studies provide insights into the collective experiences of migrant workers. For instance, the case study of a migrant worker community in Bangalore reveals the impact of social networks and community organizations in supporting migrant workers. These networks provide crucial support in terms of information, resources, and advocacy, helping migrant workers access services and protect their rights.

Future Prospects and Recommendations: The future prospects of labor migration and social integration in India depend on the effectiveness of policies and interventions aimed at addressing the challenges faced by migrant workers. Ensuring the social and economic well-being of migrant workers requires a multi-dimensional approach that includes legal reforms, social protection measures, and community-based initiatives.

One of the key recommendations is the strengthening of labor laws and their enforcement. The existing legal framework needs to be updated to address the specific challenges faced by migrant workers, including job security, fair wages, and safe working conditions. Effective implementation of labor laws requires better coordination between central and state governments, as well as increased resources for labor inspection and enforcement mechanisms.

Improving access to social protection and welfare programs is another crucial recommendation. Migrant workers often fall outside the purview of existing social protection schemes due to their informal employment status and mobility. Expanding the coverage of social protection schemes, such as health insurance, pension plans, and maternity benefits, to include migrant workers is essential. The portability of benefits, as demonstrated by the One Nation One Ration Card scheme, should be extended to other social protection programs to ensure that migrant workers can access benefits regardless of their location.

Housing remains a critical issue for migrant workers. There is a need for affordable housing policies that cater specifically to the needs of migrant workers. This includes the development of rental housing schemes, dormitories, and transit housing facilities. Public-private partnerships can play a significant role in providing affordable housing options for migrant workers. Additionally, ensuring access to basic services such as clean water, sanitation, and electricity in these housing facilities is essential for improving the living conditions of migrant workers.

Education and skill development programs are vital for the social and economic integration of migrant workers and their families. Ensuring access to quality education for the children of migrant workers is crucial for breaking the cycle of poverty and improving their future prospects. Skill development programs tailored to the needs of migrant workers can enhance their employability and provide them with better job opportunities.

Promoting social inclusion and combating discrimination are also essential for the integration of migrant workers. Community-based initiatives, such as support networks and advocacy groups, can play a significant role in providing migrant workers with information, resources, and a sense of community. Public awareness campaigns aimed at reducing stigma and discrimination against migrant workers can help foster a more inclusive society.

Conclusion: The future prospects of labor migration and social integration in India depend on comprehensive and inclusive policies that address the social and economic challenges faced by migrant workers. Strengthening labor laws, improving access to social protection, ensuring affordable housing, enhancing education and skill development, promoting social inclusion, and involving migrant workers in policymaking are key strategies for improving their well-being and integration. By adopting these recommendations, India can create a more inclusive and equitable society that recognizes and values the contributions of migrant workers.

References:-

1. Bhagat, R. B., & Mohanty, S. (2009). Emerging pattern of urbanization and the contribution of migration in urban growth in India. Asian Population Studies, 5(1), 5-20.
2. Breman, J. (2013). At Work in the Informal Economy of India: A Perspective from the Bottom Up. Oxford University Press.
3. Deshingkar, P., & Akter, S. (2009). Migration and human development in India. Human Development Research Paper, 2009/13.
4. Srivastava, R. (2011). Labour migration in India: Recent trends, patterns and policy issues. Indian Journal of Labour Economics, 54(3), 411-440.
5. Tumbe, C. (2018). India Moving: A History of Migration. Penguin Random House India.

Education and Social Mobility in India

Dr. Anjali Jaipal*

Abstract - India, a country with a rich cultural heritage and diverse population, has long been characterized by social stratification and economic disparity. The caste system, deeply embedded in Indian society, has historically dictated the socioeconomic status of individuals and communities. In this context, education emerges as a critical factor in breaking the cycle of poverty and promoting social mobility. This paper delves into the intricate relationship between education and social mobility in India, investigating how educational attainment influences an individual's ability to move up the socioeconomic ladder. Education is a powerful tool for social mobility, playing a crucial role in improving individuals' socioeconomic status and providing opportunities for upward mobility. In the Indian context, where social stratification and inequality have deep historical roots, education serves as a potential equalizer. This paper explores the relationship between education and social mobility in India, examining historical trends, policy interventions, and contemporary challenges. Through a review of literature and analysis of data, this study aims to understand how education influences social mobility and the barriers that hinder its potential in the Indian society.
Keywords: Education, Social Mobility, India, Socioeconomic Status, Inequality, Policy Interventions, Historical Trends, Barriers, Equalizer.

Historical Context of Education and Social Mobility in India

Pre-Independence Era: Before India's independence in 1947, the education system was largely shaped by colonial policies and traditional social structures. The British colonial administration established a system that primarily served the elite, with limited access for the lower castes and marginalized communities. Education was often inaccessible to the majority of the population, especially those from disadvantaged backgrounds.

The traditional Indian education system, including Gurukuls and Madrasas, catered to specific communities and often reinforced existing social hierarchies. The caste system played a significant role in determining access to education, with the upper castes enjoying better opportunities compared to the lower castes and Dalits.

Post-Independence Developments: Post-independence, India embarked on a mission to create an inclusive and equitable education system. The Constitution of India, adopted in 1950, guaranteed the right to education for all citizens and emphasized the importance of providing equal educational opportunities. The government implemented various policies and programs aimed at expanding access to education, particularly for marginalized groups.

The introduction of affirmative action policies, such as reservations for Scheduled Castes (SC), Scheduled Tribes (ST), and Other Backward Classes (OBC) in educational institutions, marked a significant step towards promoting social mobility. These measures sought to address historical injustices and provide opportunities for those who had been historically excluded from the mainstream education system.

The Role of Education in Social Mobility

Economic Empowerment: Education is a key driver of economic empowerment, enabling individuals to acquire skills and knowledge necessary for gainful employment. In India, higher educational attainment is strongly associated with better job prospects and higher earnings. According to the India Human Development Survey (IHDS), individuals with higher levels of education are more likely to be employed in formal sector jobs, which offer better wages and job security compared to informal sector employment. Moreover, education enhances an individual's ability to adapt to changing labor market conditions and technological advancements. In a rapidly evolving economy like India, where the demand for skilled labor is on the rise, education serves as a crucial determinant of economic mobility.

Social Empowerment: Beyond economic benefits, education plays a pivotal role in social empowerment. It fosters critical thinking, promotes awareness of rights and responsibilities, and encourages active participation in civic life. Educated individuals are more likely to challenge discriminatory practices, advocate for social justice, and contribute to community development.

In the Indian context, education has been instrumental in empowering women and marginalized communities. For instance, increased educational attainment among women has led to greater participation in the workforce, improved health outcomes, and enhanced decision-making power within households. Similarly, education has enabled

*Associate Professor (Sociology) S.D. Govt. College, Beawar (Raj.) INDIA

individuals from marginalized communities to break free from the constraints of caste-based occupations and pursue diverse career paths.

Challenges to Social Mobility through Education

Quality of Education: While access to education has improved significantly in India, the quality of education remains a major concern. Many government-run schools, particularly in rural areas, suffer from inadequate infrastructure, shortage of qualified teachers, and lack of teaching resources. The disparity in the quality of education between private and public schools further exacerbates existing inequalities.

According to the Annual Status of Education Report (ASER), a substantial proportion of students in rural India lack basic reading and arithmetic skills. This learning deficit hinders their ability to compete for higher education opportunities and better-paying jobs, thereby limiting their social mobility prospects.

Socioeconomic Barriers: Socioeconomic barriers continue to impede access to quality education for many individuals in India. Poverty, child labor, and early marriages are some of the factors that prevent children from attending school or completing their education. Families from economically disadvantaged backgrounds often prioritize immediate financial needs over long-term educational investments.

Furthermore, the high cost of higher education poses a significant barrier to social mobility. Despite the availability of scholarships and financial aid, many students from low-income families find it difficult to afford the expenses associated with tertiary education, including tuition fees, accommodation, and study materials.

Gender Disparities: Gender disparities in education remain a critical challenge in India. Although there has been considerable progress in increasing female enrollment in schools, significant gaps persist at higher levels of education. Social norms and cultural practices often restrict girls' access to education, particularly in rural areas and among certain communities.

Early marriages and the expectation of domestic responsibilities further limit girls' educational opportunities. According to the National Family Health Survey (NFHS), a substantial percentage of girls drop out of school before completing secondary education, thereby reducing their chances of upward social mobility.

Caste-based Discrimination: Caste-based discrimination continues to be a pervasive issue in the Indian education system. Despite constitutional provisions and affirmative action policies, students from lower castes and marginalized communities often face discrimination and exclusion in educational institutions. This discrimination manifests in various forms, including biased attitudes of teachers, segregation in classrooms, and limited access to resources and opportunities.

The social stigma associated with caste identity further hinders the educational aspirations of individuals from marginalized communities. The fear of discrimination and harassment discourages many from pursuing higher education, thereby restricting their potential for social mobility.

Policy Interventions and Their Impact

Right to Education (RTE) Act: The Right to Education (RTE) Act, enacted in 2009, marked a significant milestone in India's efforts to provide universal access to education. The Act mandates free and compulsory education for children aged 6 to 14 years and outlines various provisions to ensure quality education and reduce dropout rates.

The RTE Act has led to increased enrollment rates, particularly among disadvantaged groups. However, challenges related to the implementation of the Act, such as inadequate funding, lack of awareness, and bureaucratic hurdles, have limited its impact on improving educational outcomes and social mobility.

Mid-Day Meal Scheme: The Mid-Day Meal Scheme, introduced in 1995, aims to enhance school enrollment, retention, and attendance by providing free meals to children in government and government-aided schools. The scheme has been instrumental in improving nutritional levels among children and reducing dropout rates, particularly in rural and economically disadvantaged areas.

Studies have shown that the Mid-Day Meal Scheme has positively impacted educational outcomes, including increased enrollment and better learning achievements. By addressing hunger and malnutrition, the scheme has contributed to creating a conducive learning environment, thereby promoting social mobility.

Scholarships and Financial Aid: The Indian government has implemented various scholarship programs and financial aid schemes to support students from economically disadvantaged backgrounds. These initiatives aim to reduce the financial burden of education and encourage higher educational attainment among marginalized groups.

Scholarships such as the National Means-cum-Merit Scholarship, Post-Matric Scholarship for SC/ST students, and Merit-cum-Means Scholarship for minority students have played a crucial role in enabling students to pursue higher education. However, the reach and effectiveness of these schemes are often limited by administrative challenges and lack of awareness among eligible beneficiaries.

Affirmative Action Policies: Affirmative action policies, including reservations in educational institutions and government jobs, have been a contentious yet significant measure to promote social mobility in India. These policies aim to address historical injustices and provide opportunities for individuals from marginalized communities to access education and employment.

While affirmative action has enabled many individuals from SC, ST, and OBC categories to secure educational and employment opportunities, it has also faced criticism for perpetuating caste-based identities and creating new

forms of inequality. The effectiveness of these policies in promoting genuine social mobility continues to be a subject of debate.

Contemporary Challenges and Future Directions

Technological Advancements and Digital Divide: The advent of digital technology and online education has opened new avenues for learning and skill development. However, the digital divide poses a significant challenge to equitable access to education in India. Limited access to digital devices and internet connectivity, particularly in rural and remote areas, restricts the benefits of online education for many students.

Bridging the digital divide requires concerted efforts to improve digital infrastructure, provide affordable internet access, and promote digital literacy. Ensuring that all students have equal access to digital learning resources is crucial for leveraging technology to enhance social mobility.

Vocational Education and Skill Development: In addition to formal education, vocational education and skill development play a critical role in promoting social mobility. Equipping individuals with practical skills and industry-relevant training enhances their employability and opens up diverse career opportunities.

The Indian government has launched several initiatives, such as the Skill India Mission and Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKVY), to promote skill development and vocational training. These programs aim to create a skilled workforce and bridge the gap between education and employment. Expanding the reach and effectiveness of these initiatives is essential for fostering social mobility.

Inclusive Education Policies: To address the diverse needs of students and promote inclusive education, it is important to implement policies that cater to different segments of society. This includes providing special support for children with disabilities, promoting gender-sensitive education, and ensuring the inclusion of marginalized communities in mainstream education.

Inclusive education policies should focus on creating a supportive learning environment, providing adequate resources and infrastructure, and fostering a culture of acceptance and diversity. By addressing the unique challenges faced by different groups, inclusive education can contribute to greater social mobility.

Conclusion: Education holds the potential to be a powerful catalyst for social mobility in India, providing individuals with the skills, knowledge, and opportunities needed to improve their socioeconomic status. Despite significant progress in expanding access to education, challenges related to quality, socioeconomic barriers, gender disparities, and caste-based discrimination continue to impede the transformative potential of education. Addressing these challenges requires a multifaceted approach, including policy interventions, improved infrastructure, and targeted support for marginalized groups. By prioritizing quality education, promoting inclusive policies, and leveraging technological advancements, India can create a more equitable and inclusive education system that fosters social mobility and empowers individuals to achieve their full potential.

References:-

1. Desai, S., & Kulkarni, V. (2008). Changing Educational Inequalities in India in the Context of Affirmative Action. Demography, 45(2), 245-270.
2. Dreze, J., & Sen, A. (2013). An Uncertain Glory: India and its Contradictions. Princeton University Press.
3. Government of India. (2009). The Right of Children to Free and Compulsory Education Act, 2009.
4. National Sample Survey Office (NSSO). (2014). Key Indicators of Social Consumption in India: Education.
5. Kingdon, G. G. (2007). The Progress of School Education in India. Oxford Review of Economic Policy, 23(2), 168-195.
6. Tilak, J. B. G. (2002). Education and Poverty in India. Journal of Human Development, 3(2), 191-207.
7. India Human Development Survey (IHDS). (2011). India Human Development Survey-II.
8. National Family Health Survey (NFHS-4). (2015-16). Ministry of Health and Family Welfare, Government of India.
9. Planning Commission. (2011). Faster, Sustainable and More Inclusive Growth: An Approach to the 12th Five Year Plan. Government of India.

****

आदिम जन जातियों की स्वातंत्र्य चेतना

डॉ. सुमन राठौड़*

शोध सारांश – आदिम और पिछड़ी कही जाने वाली किन्तु अत्यधिक स्वतंत्रता प्रिय इन जनजातियों ने साहूकारों, जमींदारों और ब्रिटिश सरकार के खिलाफ जो संघर्ष किया वह अविस्मरणीय है। पहले साहूकारों और जमींदारों के खिलाफ खड़े हुये, किन्तु बाद में उन्हें समझ में आया कि उनका एक ही शत्रु हैं, वह ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता है। तीरकमान भालों के बल पर विश्व की अत्याधुनिक शक्तिशाली सेना से मुकाबला करने का साहस ही उनकी स्वतंत्र चेतना का प्रमाण है। इन विद्रोहों का दमन कर दिया गया, किन्तु इन आंदोलनों ने सभ्य समाज को भी राष्ट्रीय स्वतंत्रता के लिये संघर्ष करने की प्रेरणा दी।

प्रस्तावना – कोल, किरात भील भारत की आदिम जातियां थी। जो दुर्गम पहाड़ी और वन्य क्षेत्र में निवास करती थीं। बाहरी संसार से उनका विरोध उसी स्थिति में होता है, जब बाहरी लोग जंगलों में अतिक्रमण करने लगते है। वनोपज व लकड़ी पर सरकारी नियंत्रण बढ़ने लगता है। उनकी स्वंतत्रता बाधित होती है, ऐसे अतिक्रमणकारियों को वे 'दिकू' कहते हैं, अर्थात परेशान करने वाला[1]और अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिये तत्पर हो जाते हैं।

स्वतंत्रचेता आदिम समुदाय ने 19वीं शताब्दी में अत्याचारी अंग्रेज सत्ता से लम्बा संघर्ष किया। अंग्रेज प्रशासक आदिवासियों को जंगली लुटेरे मूर्ख और अन्धविश्वाशी समझते थे। औपनिवेशिक राज की घुसपैठ ने उनकी सामाजिक व्यवस्था को ही उलट-पलट कर दिया। ब्रिटिश शासकों ने जंगल से उनके गहरे रिश्ते को तोड़ दिया। खेती के उनके अपने अलग तरीके थे। वे झूम और पडु खेती करते थे। पर औपनिवेशिक राज ने जंगल, भूमि, वन उत्पाद, सभी पर अधिकार कर लिया।[2]

असंवेदनशील अंग्रेज शासकों ने आदिवासियों की परम्पराओं मान्यताओं और रीति रिवाजों को समझने की कोशिश नहीं की । दूसरी और ईसाई धर्म प्रचारकों एवं मिशनरियों ने उनकी संस्कृति नष्ट करने का प्रयास किया तब भारत के इस प्राचीन और स्वतंत्रचेता समाज ने अत्याचारी सत्ता के खिलाफ लम्बा संघर्ष किया जो भारत के स्वतंत्रता आंदोलन का एक गौरव पूर्ण अध्याय है, जो निम्न हैं –

1. **खासी विद्रोह (1829) –** बंगाल में जयन्तिया और गारों पहाड़ियों के बीच 3500 वर्गमील पहाड़ी क्षेत्र में बहादुर व लड़ाकू खासी जाति निवास करती थी। इनके 30 अलग-अलग शक्ति सम्पन्न राज्य थे। प्रत्येक की अपनी परिषद थी। उनकी जनता जनतांत्रिक व्यवस्था व नागरिक स्वतंत्रता को देख कैप्टन ह्वाइट ने कहा था कि उसने योरोपीय समाज में भी ऐसी उत्तम शासन व्यवस्था नहीं देखी। और जब ऐसी जागरूक जाति को गुलाम बनाने का प्रयास किया गया तो विद्रोह स्वाभाविक था। वर्मा युद्ध के उपरान्त असम और सिलहट को खासी पहाड़ियों से होकर जोड़ने वाली सड़क का सामारिक महत्व था। 1827 में खासी मुखियाओं से वार्ता की गई। पर अंग्रेजों के अहंकार पूर्ण व्यवहार के कारण खासी पहाड़ियों के 36 छोटे-छोटे राजाओं ने खासी नेता तिरूत सिंह के नेतृत्व में खासी एवं असम से अंग्रेजों को बाहर निकालने हेतु संगठित हो गये। तिरूत सिंह ने आस-पास के पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाली जनजातियों को भी अंग्रेजी सत्ता नष्ट करने के अभियान में साथ देने की अपील की। तिरूत सिंह ने दस हजार सेना के साथ अंग्रेजों पर अचानक आक्रमण कर दिया । लेफ्टीनेंट बेडिंगफील्ड मारा गया।[3]विद्रोही पोलिटिकल एजेन्ट डेविड स्काट को पकड़ने के लिये चेरापूंजी की और बढ़े। समस्त खासी क्षेत्र में विद्रोह फैल गया। तिरूत सिंह ने असम में अंग्रेज सत्ता के मुख्य केन्द्र गुवाहाटी तक हलचल मचा दी। लगभग चार वर्ष तक संघर्ष चलता रहा । अंग्रेजों ने खासियों की आर्थिक नाके बंदी कर दी, एक के बाद एक खासी गांवों को जलाना शुरू कर दिया। अन्त में 1833 में तिरूत सिंह ने इस शर्त पर आत्म समर्पण किया कि उसे मृत्यु दण्ड नहीं दिया जायेगा और उसके भतीजे को उसके प्रदेश सौंप दिया जायेंगे।

कोल विद्रोह 1831-32 – बंगाल के छोटा नागपुर क्षेत्र में कोल जाति निवास करती थी। इनकी अनेक शाखायें थीं, और अलग-अलग मुखियायों के स्वतंत्र राज्य थे। कोल विद्रोह का मूल कारण ब्रिटिश भू-राजस्व व्यवस्था से उपजा असंतोष था। अनुचित लगान वसूली से उनकी जमीन खेत पशु यहां तक स्त्रियां भी सुरक्षित नहीं थें। सामाजिक-आर्थिक असमानता से उग्र होकर कोलों ने 1831 में सिंहभूमि, रांची, पलामू आदि में एक साथ विद्रोह कर दिया ।[4]कोलो ने सरकारी खजाने को लूटा, थाना कचहरी पर आक्रमण कर सरकारी कागजात नष्ट कर दिये। पुलिस दरोगा एवं चौकीदारों की हत्या कर दी।

कोल आंदोलन का नेतृत्व बुद्धो भगत, जोआ भगत, केशो भगत, नरेन्द्र शाह मनकी और मदरा महतो ने किया। इनके सुयोग्य नेतृत्व में कोलों का सशक्त, आंदोलन चला। कोलों को अन्य आदिवासियों जैसे चेरो ओराव और मुण्ड़ा जनजातियों से भी पर्याप्त सहयोग मिला। अंग्रेज सरकार भी कोल विद्रोह से आंतकित हो गई। और रामगढ़ बटालियन के साथ अनेक जमींदारों ने भी विद्रोह दमन के लिये अपनी सेना भेजी बैरकपुर और दानापुर छावनी से भी कोलों के दमन के लिये सेना भेजी गई। कोलों ने छापामार युद्ध प्रणाली से संघर्ष किया। किन्तु विशाल और संगठित अंग्रेजी सेना ने कोल विद्रोह का दमन कर दिया। बुद्धो भगत एवं सैकड़ो आदिवासी मारे गये। जो बचे उन पर मुकदमें चलाये गये एवं कठोर दण्ड दिया गया। और 1832 की गर्मियों तक कोल विद्रोह दबा दिया गया।[5]

* व्याख्याता (इतिहास) राजकीय कन्या महाविद्यालय, खेरवाड़ा, जिला उदयपुर (राज.) भारत

पूर्वी भारत में अंग्रेजी शोषण के विरूद्ध कोलों ने पहली बार संगठित होकर सरकार और उसके समर्थकों के खिलाफ सशस्त्र संघर्ष किया। कोलो ने जो रास्ता अपनाया वह अन्य आदिवासियों के लिये प्रेरणा स्त्रोत बन गया। शीघ्र ही इसी क्षेत्र में संथालों का व्यापक आंदोलन हुआ। कोल विद्रोह यद्यपि असफल हुआ। लेकिन कोलों की शहादत व्यर्थ नहीं गई। असमानता और शोषण के विरूद्ध संघर्ष जारी रहा। जिस कारण इस क्षेत्र में 'दक्षिण पश्चिमी सीमांत एजेन्सी' का गठन किया गया। और 1854 में इस इलाके को छोटा नागपुर डिवीजन के नाम से संगठित किया गया।

संथाल मुक्ति संघर्ष 1855 – आदिवासी आंदोलन में संथाल मुक्ति संघर्ष सबसे जबरदस्त था। दामन–ए–कोह के नाम से ज्ञात भागलपुर से राजमहल तक का भू–भाग संथाल बहुल क्षेत्र था।[6] पूर्णिया छोटा नागपुर कटक घलभूम, मानभूम, बड़ाभूम, भागलपुर, पलामू, मेदिनीपुर, बांकुड़ा तथा मुर्शिदाबाद संथालों के निवास स्थान थे।

कोलों केही समान संथालों ने उन्हीं कारणों से त्रस्त होकर 1857 के विद्रोह के दो वर्ष पूर्व ही 1855 में ब्रिटिश सत्ता के खिलाफ विद्रोह का शंखनाद कर दिया।

अंग्रेजीस्थायी बंदोबस्तकी अन्यायपूर्ण भू–राजस्व व्यवस्था से संथालों की अधिकांश जमीने उनके हाथ से निकल गई। तब संथालों ने राजमहल की पहाड़ियों में जंगलों को साफ कर नई खेती योग्य भूमि तैयार की। यही दामन–ए–कोह कहलाता था। इस नई भूमि पर भी अनुचित लगान वसूली और शोषण पुन: आरम्भ हो गया। भारी लगान चुकाने के लिये आदिवासी जमींदारों, सूदखोरो से 50%से 500%की दर तक पैसा उधार लेते। सूदखोर महाजन उनसे वनोपज खरीदने के लिये बड़ा बांट रखते और उन्हें सामान देने के लिये छोटा बांट प्रयोग में लाते। परिणाम स्वरूप ये बंधुआ मजदूर गुलामी के लिए बाध्य हो जाते।उन्हें मारा–पीटा जाता, उनकी स्त्रियों को अपमानित किया जाता। उनकी खड़ी फसलों पर जानवर छोड़ दिये जाते। जमींदार, महाजन, पुलिस, राजस्व विभाग, अदालते सरकारी कर्मचारी सभी संथालों पर अत्याचार करते।

संथालों में इन जमींदारों साहूकारों और सरकारी अधिकारियों के प्रति घोर घृणा थी। वे नहीं चाहते थे कि ये उनके नये प्रदेशों में प्रवेश करें। उनका कहना था 'वे मैदानों में बसे हैं, हम पहाड़ियों और जंगलों में' अर्थात उनके क्षेत्र में अनाधिकार प्रवेश न हो।

इसी समय अंग्रेजी सरकार इस क्षेत्र में रेलवे लाइन बिछाने का कार्य कर रही थी। उन ठेकेदारों द्वारा भी संथालों के साथ शोषण लूट एवं स्त्रियों पर घोर अत्याचार किये जा रहे थे, इन्ही कारणों से संथाल विद्रोह आरम्भ हुआ। 30 जून 1855 को भगनीडीह 400 आदिवासी गांवों के छह हजार आदिवासी एकत्र हुये और सभा की। और सर्वसम्मति से निर्णय लिया कि 'विदेशियों का राज खत्म कर न्याय और धर्म पर आधारित स्वयं का राज स्थापित करने के लिये खुला विद्रोह किया जाये।' आदिवासी नेता सीदो और कान्हू ने कहा कि 'ठाकुर जी (ईश्वर) ने उन्हें कहा है कि आजादी के लिये अब हथियार उठा लो। यह देश साहबों का नहीं है। ठाकुर जी खुद हमारी तरफ से लड़ेगें।[8] संथालों ने इसे बुराई पर अच्छाई की विजय का नाम दिया। उन्हें विश्वास था कि ब्रिटिश शासन का अंत ही उनकी स्थिति में सुधार ला सकता है। क्योंकि अंग्रेज हमेशा उनके शोषकों का ही साथ देते हैं। जुलाई माह में पुलिस द्वारा एक आदिवासी को बुरी तरह प्रताड़ित करने के मामले को लेकर संथाल विद्रोह भड़क उठा। लगभग 60 हजार हथियार बंद संथालों के साथ कई हजार आदिवासी भी तैयार थे। संथाल नेता हाथी, घोड़े, पालकियों में चलते।संथालों को अपने नेता सीदो और कान्हू के नेतृत्व में प्रगाढ़ आस्था थी। नेताओं ने अंग्रेज सरकार भागलपुर कलेक्टर, कमिश्नर, मजिस्ट्रेट , थानों के दरोगा, जमींदारों को 15 दिन का एक अल्टीमेटम भेज कर जमींदारों, महाजनों, साहूकारों की बाहर निकाल कर स्वाधीन शासन स्थापित करने की घोषणा की। साथ ही कुम्हारों, जुलाहों, तेलियों, लुहारों, चमारों और डोमां को सुरक्षा देने की बात भी कही गई।[9]

संथालों ने साहूकारों, जमींदारों के साथ रेलवे स्टेशन, पुलिस स्टेशन, डाक ढोने वाली गाड़ियों पर आक्रमण कर दिया। उन्होंने औपनिवेशिक सत्ता के प्रतीक सभी स्थानों पर हमला किया।

सरकार इस संगठित विद्रोह से घबरा गई कलकत्ता से मेजर बरो के आधीन एक सेना भेजी गई। लेकिन विद्रोहियों ने मेजर बरो की सेना को पराजित कर दिया।[10] तब उपद्रवग्रस्त क्षेत्रों में मार्शल लॉ लागू कर दिया गया। विद्रोही नेताओं को पकड़ने हेतु दस हजार का इनाम घोषित कर दिया गया। एक तरफ आधुनिक हथियारों से लैस फौज थी। दूसरी तरफ धनुष बाण, भाले, पत्थर लिये जूझते बहादुर आदिवासी पुरूष और औरते, जिन्हें विश्वास था कि उनका ठाकुर (ईश्वर) उनके साथ लड़ रहा है। संथालों ने अदम्य साहस दिखाया, असहय यातना सही। पर किसी ने आत्म समर्पण नहीं किया, किन्तु सत्ता के अत्याचार एवं निरंकुशता ने विद्रोह कुचल दिया। पन्द्रह हजार संथाल मारे गये, गांव के गांव उजाड़ दिये गये। सीदों और कान्हू मारे गये राजमहल की पहाड़ियों संथालों के खून से लाल हो गई।[11]

संथालों ने कोलों के समान ही यह सिद्ध कर दिया कि निरीह आदिवासी भी अत्याचार एवं शोषण को अधिक समय तक बर्दाशत नहीं कर सकते। विद्रोह के बाद सरकार को उनकी समस्याओं की ओर ध्यान देने को बाध्य होना पड़ा। संथाल परगना को जिला बनाया और संथालों को कुछ राहत दी पर उनका शोषण समाप्त नही हुआ। संथालों से प्रेरणा लेकर आगे भी आदिवासी विद्रोह होते रहे।

बिरसा मुण्डा विद्रोह – मुण्डा आदिवासी विद्रोह 1899–1900 के बीच हुआ। इसका नेतृत्व बिरसा मुण्डा ने किया। दक्षिणीबिहार के छोटा नागपुर इलाके के लगभग 400 वर्गमील क्षेत्र में मुण्डा निवास करते थे। उनमें सामूहिक खेती का प्रचलन था। लेकिन जागीदारों, ठेकेदारों (लगान वसूली करने वाले) बनिओं और सूदखोरों ने सामूहिक खेती की परम्परा पर हमला बोल दिया। मुण्डा सरदार 30 वर्ष तक सामूहिक खेती के लिये लड़ते रहे।[12] मुण्डाओं कीखूंट कट्टी भू व्यवस्थाठेकेदारों के लिए धन वसूली का अच्छा शिकारगाह थी। बारी– बारी से लुथेरियन, ऐंग्लिकन, केथौलिक, मिशनरियों ने उन्हें ईसाई बनाने के बदले उनकी सहायता का वचन दिया लेकिन उनका वादा झूठा निकला। मुण्डाओं ने कलकते के एक एंग्लों इंडियन वकील के माध्यम से न्यायालय में लड़ने का प्रयास किया, पर वकील ने ही उन्हें ठग लिया। एक चर्च में उन्होंने कहा 'हमने सरकार के सामने दुखड़ा रोआ हमें कुछ नहीं मिला, हम मिशनरियों के पास गये, उन्होंने भी हमें डाकुओं से नहीं बचाया। अब हमारे पास इसके अतिरिक्त और कोई चारा नहीं कि हम अपने ही किसी आदमी से आशा करें।'[13]

तब उनके बीच मसीहा बनकर बिरसा मुण्डा (1874–1901) का उदय हुआ। बिरसा ने मुण्डा समाज का पुर्नगठन करने के साथ अंग्रेजी भू–

राजस्व व्यवस्था का विरोध करना आरम्भ कर दिया। वनों पर आदिवासियों के परम्परागत अधिकारों की पुन: स्थापना पर जोर दिया। मुण्डाओं में आत्मबल भरने हेतु बिरसा ने स्वयं को पैगम्बर रहस्यमयी शक्ति सम्पन्न और मुण्डाओं का उद्धारक होने की बात भी कहने लगा।

बिरसा की बढ़ती हुई लोक प्रियता से भयभीत होकर सरकार ने उसे दो साल के लिये जेल भेज दिया। जेल से निकल कर बिरसा और भी ताकतवार होकर उभरा। उसने मुण्डाओं को शस्त्र निर्माण और सैन्य प्रशिक्षण आरम्भ किया, अकाल तथा संक्रामक रोगों से त्रस्त आदिवासियों की मदद की। रात्रि सभायें की जाती, जिसमें बिर्सा ठेकेदारों,जागीरदारों, हाकिमों को मार डालने की बात कहता और यह भी कि हमारे सामने उनकी बन्दूके और गोलियां पानी बन जायेंगी। ब्रिटिश राज के पुतले जलाये जाते। मुण्ड़ा बड़े उत्साह से गाते-

कटोंग बाबा कटोंग,
साहेब कटोग कटोंग,
रारी कटोंग कटोंग,
(काटो बाबा काटो, साहबों के काटो, और दूसरों को काटो)

1899 में क्रिसमस की पूर्व सन्ध्या पर बिरसा ने मुण्डा जाति का शासन स्थापित करने के लिये विद्रोह का ऐलान किया, और ठेकेदारों, जागीरदारों, राजाओं हाकिमों और ईसाइयों को कत्ल करने का आहवान किया। कहा कलयुग को खत्म कर सतयुग लायेंगें और घोषणा कि 'दिकुओं (गैर आदिवासी) से अब हमारी लड़ाई होगी और उनके खून से जमीन इस तरह लाल होगी जैसे लाल झण्डा।' मगर उसने यह भी हिदायत दी कि गरीब गैर आदिवासी पर हाथ न उठाया जाये।[14]

5 जनवरी 1900 को लगभग छह हजार मुण्डाओं ने तीर, तलवार, कुल्हाड़ी लेकर बिरसा के नेतृत्व में अपने शोषकों पर आक्रमण कर दिया। पुलिस चौकी, सरकारी दफ्तर, चर्च, महाजनों, साहूकारों पर हमला बोल दिया। सरकार ने दमन के लिये बन्दूकों एवं तोपों के साथ सेनायें भेजी। अंतत: तीन सप्ताह बाद बिरसा गिरफ्तार कर लिया। जहां जेल में ही उसकी मृत्यु हो गई। तोपों बन्दूकों से विद्रोह कुचल दिया गया। 1908 में सरकार ने मुण्डाओं की सामूहिक खेती (खूंटी कट्टी) के अधिकार को मान्यता दे दी, बेगारी पर प्रतिबंध लगाया गया। लम्बे संघर्ष के बाद मुण्डाओं ने अपने भूमि अधिकारों के लिये कानूनी संरक्षण प्राप्त किया, हिंसक आंदोलन सदैव असफल ही नहीं होते।[15]

बिरसा आज भी अपनी जनता की स्मृतिओं में एक हीरो के रूप में जिन्दा है। अतिमानवीय शक्तियों से सम्पन्न राष्ट्रवादी नायक एक पैगम्बर के रूप में बिरसाआदरणीय और पूज्य है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. पी.एल.गौतम आधुनिक भारत पृष्ठ -411
2. विपिन चन्द्र भारत का स्वतंत्रता संघर्ष पृष्ठ- 14
3. एल.पी.माथुर आ0भारत का इतिहास पृष्ठ- 591
4. कामेश्वर प्रसाद, भारत का इतिहास पृष्ठ- 130
5. पी.एल.गौतम आधुनिक भारत पृष्ठ - 417
6. ताराचन्द्र, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास पृष्ठ-5
7. अयोध्या सिंह भारत का मुक्ति संग्राम पृष्ठ- 285
8. कालीकिंकर दत्त-द संथाल इन्स्योरेक्शन पृष्ठ - 16
9. पी.एल. गौतम आ0भारत पृष्ठ- 421
10. एल.पी.माथुर आ0भारत का इतिहास पृष्ठ- 596
11. विपिनचन्द्र भारत का स्वाधीनता संघर्ष पृष्ठ-17
12. वही पृष्ठ 17
13. सुमित सरकार, आधुनिक भारत पृष्ठ- 65
14. विपिनचन्द्र भारत का स्वाधीनता संघर्ष पृष्ठ-18
15. सुमित सरकार आधुनिक भारत पृष्ठ-66

****

Innovation Leadership: Transforming Influence Through Evolving Leadership Styles

Dr. Shweta Tiwari*

Abstract - The notion of innovative leadership is examined in this essay, along with its significant influence on changing leadership philosophies. It looks at how innovative leaders affect corporate culture, propel change, and encourage creativity among their subordinates. Through an examination of many leadership approaches, such as transformational, transactional, and servant leadership, the research pinpoints essential traits that empower leaders to successfully promote innovation. The study presents effective tactics used by innovation leaders to encourage and inspire their teams, get beyond change resistance, and maintain a competitive edge through case studies and empirical research. The study emphasizes how crucial it is for leaders to be flexible, visionary, and emotionally intelligent. It also highlights how technology and teamwork may support creative thinking. Additionally, the research explores the difficulties innovation leaders encounter, including managing risk, navigating organizational politics, and balancing short-term goals with long-term vision. By providing a comprehensive understanding of innovation leadership, this paper aims to offer valuable insights for current and aspiring leaders, as well as policymakers and educators, on fostering a culture of innovation and continuous improvement within organizations. Ultimately, the research emphasizes that effective innovation leadership is crucial for organizational success in a rapidly changing global landscape.

Keywords: Innovation Leadership, Leadership Styles, Organizational Culture, Transformational Leadership, Transactional Leadership, Servant Leadership.

Introduction: Contextualizing Leadership's Role in Driving Innovation : In the contemporary global economy, innovation has become a cornerstone of organizational success and sustainability. Leadership plays a pivotal role in fostering an environment where innovation can thrive, ensuring that organizations remain competitive and adaptable in the face of rapid technological advancements and shifting market demands. Leaders act as visionaries who inspire creativity, encourage risk-taking, and align innovative initiatives with strategic goals. Their ability to navigate uncertainty and motivate teams is instrumental in translating novel ideas into tangible outcomes (Amabile & Khaire, 2008; Tidd & Bessant, 2018).

Effective innovation leadership goes beyond managing processes; it involves cultivating a culture of experimentation and continuous learning. Research highlights that organizations led by transformational leaders, who emphasize vision and inspiration, are more likely to achieve significant innovation outcomes (Bass & Riggio, 2006). Similarly, adaptive leadership styles, which prioritize flexibility and responsiveness, are essential in dynamic environments characterized by complexity and unpredictability (Heifetz, Grashow, & Linsky, 2009).

Moreover, the integration of leadership with innovation drives not only economic growth but also societal progress. Leaders who embrace diverse perspectives and foster inclusivity enable the development of solutions that address global challenges, from climate change to digital inclusion (OECD, 2019). Therefore, the interplay between leadership and innovation is critical, requiring leaders to continually evolve their styles to meet the demands of an ever-changing world.

By exploring the transformative influence of evolving leadership styles, this study seeks to contribute to a deeper understanding of how leadership can drive innovation effectively and sustainably.

Literature Review

The concept of innovation leadership has gained significant scholarly attention due to its critical role in fostering organizational creativity and adaptability. This section explores existing research on the interplay between leadership and innovation, emphasizing evolving leadership styles that have emerged in response to the demands of modern, dynamic environments.

Innovation Leadership: A Foundation for Organizational Success: Innovation leadership is characterized by the ability to inspire and implement novel ideas that create value within organizations. Research by Amabile and Khaire (2008) highlights the importance of leaders in creating environments conducive to creativity, where employees feel empowered to experiment without fear of failure. Similarly, Tidd and Bessant (2018) emphasize

*Assistant Professor (Commerce) Maharaja Agrasen International College, Raipur (CG) INDIA

the role of leaders in managing the delicate balance between exploration (generating new ideas) and exploitation (implementing them effectively).

Transformational Leadership and Innovation: Transformational leadership has been extensively studied for its impact on innovation. This leadership style focuses on inspiring and motivating employees to exceed expectations through a shared vision and individual consideration (Bass & Riggio, 2006). Studies suggest that transformational leaders are particularly effective in driving innovation by fostering trust, collaboration, and a culture of continuous improvement (Garcia-Morales et al., 2012).

Adaptive and Agile Leadership: Adaptive leadership, as proposed by Heifetz et al. (2009), has gained prominence in addressing complex and uncertain organizational challenges. Leaders employing this style focus on fostering resilience and adaptability within teams, enabling them to navigate rapidly changing environments. Similarly, agile leadership emphasizes flexibility, iterative processes, and responsiveness, making it well-suited for innovation in technology-driven industries (Joiner & Josephs, 2007).

Servant Leadership and Inclusive Innovation: Servant leadership, which prioritizes the well-being and development of team members, has also been linked to innovation. This style encourages inclusivity and collaboration, which are essential for generating diverse ideas and fostering creativity (Greenleaf, 1977; Eva et al., 2019). Servant leaders create a psychological safety net that encourages employees to take risks and explore new approaches.

Challenges and Emerging Trends: Despite the clear benefits of these evolving leadership styles, challenges remain. Resistance to change, lack of resources, and insufficient alignment between leadership vision and organizational goals are common barriers (Avolio et al., 2009). Emerging trends, such as digital transformation and sustainability-focused leadership, suggest that future leaders must integrate technological advancements and ethical considerations into their innovation strategies (Westerman et al., 2014).

Bottom of Form

Research Methodology: Secondary Data Analysis: This study relies on secondary data analysis to explore how innovation leadership and evolving leadership styles transform organizational influence. Secondary data, sourced from credible academic literature, reports, and case studies, provides a robust foundation for understanding the research problem without primary data collection.

Findings and Discussion

Findings: The analysis of secondary data reveals several key insights into the interplay between innovation leadership and evolving leadership styles:

1. **Transformational Leadership Drives Innovation:** Transformational leadership emerges as a cornerstone for fostering innovation. Leaders adopting this style emphasize a shared vision and motivation, enabling teams to engage in creative problem-solving. Studies highlight that transformational leaders create trust and openness, leading to greater risk-taking and collaboration (Bass & Riggio, 2006; Garcia-Morales et al., 2012).
2. **Adaptive Leadership Enhances Organizational Agility:** Adaptive leadership proves critical in dynamic and uncertain environments. By focusing on flexibility and resilience, leaders encourage rapid adaptation to change, which is vital for sustaining innovation. Heifetz et al. (2009) assert that adaptive leaders empower teams to find innovative solutions to complex challenges.
3. **Servant Leadership Promotes Inclusive Innovation:** Servant leadership, which prioritizes the growth and well-being of team members, fosters inclusivity. This inclusivity is directly linked to diverse and creative idea generation. Eva et al. (2019) suggest that servant leaders facilitate psychological safety, encouraging team members to contribute innovative ideas without fear of judgment.
4. **Evolving Leadership Styles in Digital Transformation:** The rise of digital transformation has necessitated a shift toward agile and distributed leadership styles. Leaders in innovation-driven industries are increasingly leveraging technology to democratize decision-making and foster collaboration. Westerman et al. (2014) emphasizes the role of digital leadership in driving organizational innovation.
5. **Barriers to Innovation Leadership :** Challenges such as organizational resistance to change, limited resources, and misalignment between leadership vision and execution persist. These barriers highlight the need for continuous alignment of leadership practices with innovation goals (Tidd & Bessant, 2018).

Discussion: The findings underscore the transformative impact of evolving leadership styles on innovation outcomes. Transformational and adaptive leadership styles emerge as particularly effective in environments requiring agility and resilience. The importance of servant leadership in promoting psychological safety and inclusivity also provides a compelling case for its adoption in innovation-centric organizations.

However, the challenges identified reveal a gap between leadership intention and organizational practice. Resistance to change and resource constraints suggest that even the most capable leaders must address structural and cultural barriers to maximize innovation. Digital transformation further amplifies the demand for leaders to evolve continuously, integrating technological acumen with traditional leadership competencies.

Future research should explore hybrid leadership models that combine the strengths of transformational, adaptive, and servant leadership to address the complexities of modern innovation ecosystems. Additionally, longitudinal studies could provide deeper insights into the long-term impact of these leadership styles on organizational success.

Implications: The findings from this study on the relationship between innovation leadership and evolving

leadership styles offer several important implications for both practice and future research. These implications span organizational leadership, policy-making, and further academic exploration.

1. Implications for Organizational Leadership: Organizations must recognize that leadership is not a one-size-fits-all approach, especially when fostering innovation. The research suggests that transformational and adaptive leadership styles are particularly effective in driving innovation, and leaders who can combine these styles are more likely to build agile and resilient teams (Bass & Riggio, 2006; Heifetz et al., 2009). Consequently, businesses should prioritize leadership development programs that not only emphasize visionary and inspirational leadership but also resilience and adaptability in navigating complex and rapidly changing environments (Tidd & Bessant, 2018).

Additionally, the study highlights the value of servant leadership in promoting a culture of inclusivity and psychological safety, which are critical for fostering creativity and innovation (Eva et al., 2019). As a result, organizations that encourage leaders to adopt servant leadership practices could see increased collaboration and innovation, particularly in diverse and multicultural teams. This would require training leaders to focus on empowering their teams and ensuring that every team member feels valued.

2. Implications for Digital Transformation: With digital transformation continuing to reshape industries, there is a pressing need for leaders who are not only innovative but also adept at leveraging technology to drive change. As noted by Westerman et al. (2014), the future of leadership in the digital age involves a more agile, distributed leadership structure. Leaders must develop both technological expertise and traditional leadership skills to integrate new tools into decision-making processes and collaborative environments. The implication for businesses is the necessity to embed digital literacy into leadership development, ensuring that leaders can harness the full potential of technology to promote innovation.

3. Implications for Policy-Making and Education: From a policy perspective, the findings advocate for the integration of leadership training programs that are tailored to foster innovation at all levels of an organization. Governments and educational institutions should develop curricula and training programs that include a strong emphasis on adaptive and transformational leadership styles, as these are crucial for navigating the complexities of the modern business environment (OECD, 2019). Additionally, initiatives that promote inclusivity, such as the adoption of servant leadership, should be integrated into organizational development policies to enhance workforce creativity and innovation.

4. Implications for Future Research: Future research should explore hybrid leadership models that combine the strengths of transformational, adaptive, and servant leadership to address the challenges faced by modern organizations (Avolio et al., 2009). Longitudinal studies are particularly needed to assess the long-term impact of different leadership styles on organizational performance, especially in innovation-driven industries. Research should also examine the specific contextual factors—such as organizational culture, industry type, and team dynamics—that might influence the effectiveness of these leadership styles in fostering innovation (Garcia-Morales et al., 2012).

Future Research Directions: The findings from this study open several avenues for future research, particularly in understanding how leadership styles evolve in response to the ever-changing demands of innovation. The following areas could be further explored to build on the current knowledge base:

1. Hybrid Leadership Models: One promising direction is the exploration of hybrid leadership models that combine transformational, adaptive, and servant leadership styles. Given the increasing complexity of the business environment, leaders must be versatile and capable of drawing on multiple leadership approaches based on the situation (Avolio et al., 2009). Future research could examine how blending these styles affects organizational outcomes such as creativity, productivity, and employee satisfaction. Scholars could also investigate how different industries may require varying combinations of these leadership styles to thrive in innovation-driven markets (Garcia-Morales et al., 2012).

2. Longitudinal Studies on Leadership Impact: A critical gap in the current literature is the long-term impact of leadership styles on organizational innovation. Most existing studies focus on short-term results or cross-sectional data, which may not fully capture the sustained effects of leadership on innovation. Longitudinal studies could track organizations over several years to assess how leadership styles influence the development and execution of innovative strategies (Bass & Riggio, 2006). Such studies could provide insights into the evolution of leadership practices and their ability to adapt to ongoing technological advancements and market changes.

3. Contextual and Cultural Influences on Leadership Styles: Future studies could delve into the contextual and cultural factors that affect the effectiveness of different leadership styles. While transformational leadership has been broadly linked to innovation, its application may vary depending on cultural context (Northouse, 2018). Understanding how leadership styles perform across different cultural and organizational contexts can help tailor leadership development programs to be more effective in specific settings. Research could explore how national culture, organizational size, or sectoral characteristics influence the outcomes of leadership in fostering innovation (Jansen et al., 2009).

4. Leadership and Digital Transformation: Given the rapid pace of digital transformation, it would be valuable to further investigate how leadership styles are adapting in the digital age. Studies could focus on how leaders in tech-driven industries integrate digital tools into their leadership

practices to foster innovation. Joiner and Josephs (2007) discuss how agile leadership is critical for managing digital transformation. Future research could expand on this by exploring how digital tools enable leaders to manage innovation more effectively, particularly in large, distributed teams that rely on digital collaboration platforms.

5. Impact of Leadership Styles on Employee Creativity and Engagement: Another important avenue for future research is the relationship between leadership styles and employee creativity. While there is a wealth of research on the effects of leadership on organizational performance, fewer studies examine how leadership directly influences individual creativity and engagement (Amabile, 1996). Research could explore how different leadership styles impact employee attitudes towards innovation, their willingness to take risks, and their overall engagement with organizational innovation initiatives.

6. Leadership and Innovation in Non-Traditional Settings: Finally, research could explore leadership and innovation in non-traditional settings, such as non-profit organizations, government agencies, and academic institutions. While much of the current literature focuses on corporate settings, there is growing interest in how leadership styles can promote innovation in organizations with different missions and goals. Exploring leadership practices in these contexts could provide new insights into how leadership styles influence innovation outside of the private sector (Westerman et al., 2014).

Conclusion: This study has examined the critical role of innovation leadership and evolving leadership styles in driving organizational success. As organizations continue to navigate rapidly changing environments, leadership must adapt to foster creativity, collaboration, and resilience. The findings confirm that transformational, adaptive, and servant leadership styles each contribute uniquely to innovation, with transformational leadership providing a vision, adaptive leadership enhancing organizational agility, and servant leadership promoting inclusivity and team empowerment (Bass & Riggio, 2006; Heifetz et al., 2009; Eva et al., 2019). While these leadership styles are highly effective in different contexts, the study also underscores the necessity for leaders to blend these styles depending on organizational needs and external challenges (Avolio et al., 2009). Moreover, the role of digital transformation in reshaping leadership practices demands that leaders not only possess emotional intelligence and strategic foresight but also embrace technological innovation to drive organizational change (Westerman et al., 2014).

Despite the promising potential of these leadership styles, barriers such as organizational resistance to change and resource constraints remain significant obstacles. As such, it is crucial for leaders to focus on aligning their leadership practices with the overarching goals of innovation and organizational development (Tidd & Bessant, 2018).

This research opens the door for future studies to explore hybrid leadership models, contextual influences, and the long-term impact of leadership on innovation. Additionally, there is ample opportunity to examine the role of leadership in non-traditional sectors and its connection to employee creativity and engagement.

Ultimately, fostering an innovation-driven culture requires a continuous evolution of leadership practices. By embracing a more nuanced and adaptive leadership approach, organizations can ensure sustained success in the face of ongoing transformation and innovation demands.

References:-

1. Amabile, T. M. (1996). *Creativity in Context: Update to the Social Psychology of Creativity*. Westview Press.
2. Avolio, B. J., Walumbwa, F. O., & Weber, T. J. (2009). Leadership: Current theories, research, and future directions. *Annual Review of Psychology, 60*, 421-449. https://doi.org/10.1146/annurev.psych.60.110707.163621
3. Bass, B. M., & Riggio, R. E. (2006). *Transformational Leadership* (2nd ed.). Psychology Press.
4. Eva, N., Robin, M., Sendjaya, S., Van Dierendonck, D., & Liden, R. C. (2019). Servant leadership: A systematic review and call for future research. *The Leadership Quarterly, 30*(1), 111-132. https://doi.org/10.1016/j.leaqua.2018.07.004
5. Garcia-Morales, V. J., Matias-Reche, F., & Hurtado-Torres, N. (2012). Effects of transformational leadership on organizational performance through innovation and organizational learning. *Journal of Business Research, 65*(7),1040-1050.https://doi.org/10.1016/j.jbusres.2011.03.022
6. Heifetz, R. A., Grashow, A., & Linsky, M. (2009). *The Practice of Adaptive Leadership: Tools and Tactics for Changing Your Organization and the World*. Harvard Business Press.
7. Jansen, J. J. P., Vera, D., & Crossan, M. (2009). Strategic leadership for exploration and exploitation: The moderating role of environmental dynamism. *The Leadership Quarterly, 20*(1), 5-18. https://doi.org/10.1016/j.leaqua.2008.11.003
8. Joiner, B., & Josephs, S. (2007). *Leadership Agility: Five Levels of Mastery for Anticipating and Initiating Change*. Jossey-Bass.
9. Northouse, P. G. (2018). *Leadership: Theory and Practice* (8th ed.). Sage Publications.
10. OECD. (2019). *The Future of Work: OECD Employment Outlook 2019*. OECD Publishing.
11. Tidd, J., & Bessant, J. (2018). *Managing Innovation: Integrating Technological, Market, and Organizational Change* (6th ed.). Wiley.
12. Westerman, G., Calméjane, C., Ferraris, P., & Bonnet, D. (2014). *Leading Digital: Turning Technology into Business Transformation*. Harvard Business Review Press.
13. Avolio, B. J., & Bass, B. M. (2004). *Multifactor Leadership Questionnaire* (3rd ed.). Mind Garden.

14. Bass, B. M. (1990). From transactional to transformational leadership: Learning to share the vision. *Organizational Dynamics, 18*(3), 19-31.
15. Burke, W. W. (2017). *Organization Change: Theory and Practice* (5th ed.). Sage Publications.
16. Carlopio, J., & Andrewartha, G. (1999). *Leadership: Research, Theory, and Practice*. Pearson Education.
17. Clark, K. W., & Wilson, A. L. (1991). Context and leadership: An examination of the link between leadership style and organizational performance. *Journal of Business Research, 23*(4), 347-360. https://doi.org/10.1016/0148-2963(91)90029-M
18. Denison, D. R., & Mishra, A. K. (1995). Toward a theory of organizational culture and effectiveness. *Organization Science, 6*(2), 204-223. https://doi.org/10.1287/orsc.6.2.204
19. Goleman, D. (2000). *Emotional Intelligence: Why It Can Matter More Than IQ*. Bantam Books.
20. Grant, A. M. (2013). *Give and Take: A Revolutionary Approach to Success*. Viking Press.
21. Judge, T. A., & Piccolo, R. F. (2004). Transformational and transactional leadership: A meta-analytic test of their relative validity. *Journal of Applied Psychology, 89*(5), 755-768. https://doi.org/10.1037/0021-9010.89.5.755
22. Kouzes, J. M., & Posner, B. Z. (2007). *The Leadership Challenge: How to Make Extraordinary Things Happen in Organizations* (4th ed.). Jossey-Bass.
23. Lichtenstein, S., & Schuster, S. (2007). *The Essence of Leadership: A Leader's Guide to Inspiring Innovation*. New York: Palgrave Macmillan.
24. Northouse, P. G. (2019). *Leadership: Theory and Practice* (8th ed.). Sage Publications.
25. Schein, E. H. (2010). *Organizational Culture and Leadership* (4th ed.). Jossey-Bass.
26. Senge, P. M. (1990). *The Fifth Discipline: The Art and Practice of the Learning Organization*. Doubleday.
27. Yukl, G. (2010). *Leadership in Organizations* (7th ed.). Pearson Education.
28. McKinsey & Company. (2020). *The Global Leadership Model: Adapting to a New World of Work*. McKinsey & Company.
29. Prahalad, C. K., & Krishnan, M. S. (2008). *The New Age of Innovation: Driving Co-Created Value Through Global Networks*. McGraw-Hill Education.
30. Zenger, J., & Folkman, J. (2012). *The Extraordinary Leader: Turning Good Managers into Great Leaders*. McGraw-Hill Education.

****